मक़ालात-ए-मक़बूल

(शैख़ मक़बूल अहमद सलफ़ी हाफ़िज़ाहुल्लाह के मकालात का हिंदी मजमूआ)

तहरीर:

शैख़ मक़बूल अहमद सलफ़ी हाफ़िज़ाहुल्लाह

हिंदी मुतर्जिम: हसन फ़ुज़ैल

Maqubool Ahmed salafi Maquboolahmad.blogspot.com
SheikhMaquboolAhmedFatawa islamiceducon@gmail.com
Sheikh Maqbool Ahmed salafi Off page 00966531437827

मक़ालात-ए-मक़बूल

(शैख़ मक़बूल अहमद सलफ़ी हाफ़िज़ाहुल्लाह के मक़ालात का हिंदी मजमूआ)

तहरीर: शैख़ मक़बूल अहमद सलफ़ी हाफ़िज़ाहुल्लाह

दाई जेद्दा दावा सेंटर, अल सलामाह, सऊदी अरब

हिंदी मुतर्जिम: हसन फ़ुज़ैल



V1.2-10-2024



सूची

{1}.अक़ीक़ा का जानवर और उसकी उम्र

अक़ीक़ा "अक़ عق" से मुश्तक़ है जिसका लुग़वी मआनी "फाड़ने के" हैं और शरई इस्तिलाह में उस जानवर को कहा जाता है जो नौ-मौलूद (newborn) की पैदाइश पर 7वें दिन इस ने'मत के इज़हार के तौर पर ज़बह किया जाए। अक़ीक़ा बेहतर नाम नसीका या ज़बीहा है। यहाँ यह बात भी जान लें कि अक़ीक़ा करना दलाइल की रोशनी में सुन्नत-ए-मुवक्किदा है।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

من ولد له ولد فأحب ان ينسك عنه فلينسك. (صحيح ابي داؤد: 2842)

तर्जुमा: "जिसके यहाँ बच्चे की विलादत हो और वह उसकी तरफ़ से क़ुर्बानी (अक़ीक़ा) करना चाहता हो तो करे।"

अक़ीक़ा छोटे जानवर यानी बकरा/बकरी और भेड़ और दुंबा से देना चाहिए, बड़े जानवर में अक़ीक़ा देने से बचना चाहिए मगर यह कि मजबूरी हो। हदीस में अक़ीक़ा के लिए "शा'तुन" का लफ़्ज़ आया है जो भेड़ और बकरी दोनों पर इतलाक़ किया जाता है।

इब्ने हज़म ने लिखा है:

واسم الشاة يقع الضائنة والماعز بلا خوف.(المحلي 234/6)

तर्जुमा: "और 'शा'तुन' का लफ़्ज़ भेड़ और बकरी दोनों पर बिला इख़्तिलाफ़ इतलाक़ होता है।"

कुछ अहले इल्म बड़े जानवर में भी अक़ीक़ा के क़ाइल हैं। बहरहाल, अम्र वासे है जिसे मैं इस तरह बयान करना चाहता हूँ कि पहले छोटे जानवर में अक़ीक़ा करने की कोशिश करें, अगर यह मुमकिन न हो सके तो मजबूरी में बड़े जानवर में अक़ीक़ा दे सकते हैं। मगर वाज़ेह रहे, अक़ीक़ा में मुकम्मल जानवर ज़बह करना है क्योंकि ख़ून बहाने का हुक्म है और इसमें इश्तिराक (साझेदारी) जाइज़ नहीं है। रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

مع الغلام عقيقة فاهريقوا عنه دما واميطوا عنه الاذى.(صحيح الترمذي:1515)

तर्जुमाा: "लड़के की पैदाइश पर अक़ीक़ा है लिहाज़ा जानवर ज़बह कर के उसकी तरफ़ से खून बहाओ और उसकी गंदगी दूर करो।"

अक्सर मुसलमानों के यहाँ ईद-ए-क़ुर्बान के मौक़े पर एक बड़े जानवर में क़ुर्बानी के साथ बच्चे का अक़ीक़ा भी हिस्सा लिया जाता है, जो

कि सुन्नत की खुली मुख़ालिफ़त है। अगर ताक़त है तो बच्चे की तरफ़ से मुअय्यन जानवर का अक़ीक़ा दे, ऐसा करने से सुन्नत पूरी होगी और ताक़त न हो तो न दे, इस पर अल्लाह पकड़ नहीं करेगा।

अक़ीक़ा के जानवर की उम्र के सिलसिले में बसराहत कुछ मंक़ूल नहीं है, इस लिए कुछ उलमा ने कहा कि किसी भी उम्र का जानवर अक़ीक़ा किया जा सकता है चाहे 3 माह का हो, 5 महीने का हो, मगर यह क़वी क़ौल नहीं मालूम होता है क्योंकि अमूमन लोग ऐसे जानवर को ज़बह करते हैं जो कम से कम ज़बह करने और खाने के लाइक़ हो। ऐसे में 1 साल की बकरी ही मुनासिब मालूम होती है और ऊपर गुज़र चुकी अबू दाऊद की हदीस में नुस्क का लफ़्ज़ आया है जो हादी (हज का जानवर) के लिए इस्तेमाल होता है, गोया अक़ीक़ा भी हादी के क़ायम-मक़ाम है और इस बाबत इमाम मालिक रहिमहुल्लाह का क़ौल भी जो आगे आ रहा है, इस लिए इसमें भी हादी के शराइत बजा लानी चाहिए।

इमाम अहमद बिन हंबल रहिमहुल्लाह ने अबू दाऊद की इस हदीस से इस्तिदलाल करते हुए कहा है कि इसमें दलील है कि अक़ीक़ा में वही किफ़ायत करेगा जो नुस्क में किफ़ायत करता है, चाहे अज़हिया (ईद की क़ुर्बानी) हो या हादी (हज की क़ुर्बानी)। आगे लिखते हैं कि इसमें उस उम्र का एतिबार किया गया है जो क़ुर्बानी और अक़ीक़ा में

किफ़ायत करता है और मुकम्मल वस्फ़ मशरू है जो दोनों बराबर हों, उनमें से किसी में कमी न हो तो यहाँ साल का एतिबार किया गया है जो ज़बह के लिए मामूर ब साल है (तोहफतुल मवदूद:63)

इस सिलसिले में जमहूर का यही मौक़िफ़ है कि अक़ीक़ा में क़ुर्बानी की शराइत मलहूज़ रखी जाएं, गोया कि बाज़ मसाइल में अक़ीक़ा और क़ुर्बानी मुख़्तलिफ़ भी हैं, मसलन क़ुर्बानी में इश्तिराक जाइज़ है, जबकि अक़ीक़ा में नहीं है।

नीचे अहले इल्म के कुछ अक़वाल ज़िक्र किए जाते हैं जो अक़ीक़ा को क़ुर्बानी के हुक्म में मानते हैं, जिसका मतलब यह है कि अक़ीक़ा के जानवर में बकरी के लिए एक साल की उम्र चाहिए।

(1) इब्ने क़ुदामा लिखते हैं:

ويجتنب فيها من العيب ما يجتنب في الضحية وجملته ان حكم العقيقة حكم الضحية في سنها وانه يمنع فيها من العيب ما يمنع فيها.(المغني: 366/7)

तर्जुमा: और अक़ीक़ा में उस ऐब से इज्तिनाब किया जाएगा जिससे क़ुर्बानी में इज्तिनाब करते हैं और मिन-जुमला अक़ीक़ा का हुक्म उम्र

में क़ुर्बानी का ही हुक्म है और इसमें ऐसे ऐब से भी मना किया जाएगा जो क़ुर्बानी में ममनू है।

(2) इमाम मालिक रहिमहुल्लाह ने कहा:

وانما هي اي العقيقة بمنزلة النسك والضحايا.(الموطا: 400/2)

तर्जुमा: और अक़ीक़ा हदी हदी (वह जानवर जो अल्लाह की रज़ा के लिए ज़ब्ह किया जाए) और क़ुर्बानी के दर्जे में है।

(3) और इमाम नववी रहिमहुल्लाह ने भी इसी तरफ़ इशारा किया है। (अलमुग़नी: 9/436)

(4) इमाम तिर्मिज़ी ने उलमा का क़ौल नक़ल करते हुए लिखा है:

لا يجزى في العقيقة من الشاة ما يجزى فى الاصحية.(جامع الترمذي: 86/4)

तर्जुमा: बकरी के अक़ीक़ा में वही किफ़ायत करेगा जो क़ुर्बानी में किफ़ायत करता है।

(5) इब्नुल हाज मालिकी कहते हैं:

وحكمها حكم الاضحية في السن والسلامة من العيوب.(المدخل 277/3)

तर्जुमा: और अक़ीक़ा का हुक्म उम्र के सिलसिले में और ऐब से पाक होने के सिलसिले में कुर्बानी के हुक्म की तरह है।

(6) इब्ने हबीबुल मालिकी कहते हैं:

سنها واجتناب عيوبها ومنع بيع شئ منها مثل الاضحية الحكم واحد(التاج والاكليل:390/4)

तर्जुमा: अक़ीक़ा की उम्र और उसका ऐब से पाक होना और उसमें से कुछ बेचना कुर्बानी की तरह है, हुक्म एक ही है।

(7) अरब के उलमा मसलन शैख़ इब्ने उसैमीन, शैख़ मुहम्मद सालेह मुनज्जिद, अब्दुर रहमान बिन नासिर अलबर्राक, शैख़ सालेह फौज़ान, शैख़ बकर अबू ज़ैद, शैख़ अब्दुल्लाह बिन गद्'यान और शैख़ अब्दुल अज़ीज़ बिन अब्दुल्लाह आले शैख़ वग़ैरह की यही राय है। यही वजह है कि जम्हूर फ़ुक़हा का क़ौल है कि अक़ीक़ा में उन ऐबों से बचा जाएगा जिनसे कुर्बानी में बचा जाता है। (अलइस्तिज़कार 15/384)

मज़्कूरा बाला लाइन्स की रोशनी में ख़ुलासा के तौर पर यह कहा जाएगा कि अक़ीक़ा के जानवर की उम्र के बारे में सरीह दलील मौजूद

नहीं है ताहम अक़ीक़ा से मुतल्लिक़ नुसूस और मज़्कूरा बाला अक़वाल अहले इल्म की रोशनी में मालूम होता है कि अक़ीक़ा में जानवर की शराइत को लाज़िम क़रार नहीं दिया जाएगा मगर एहतियात के तौर पर क़ुर्बानी की शराइत को अक़ीक़ा में मलहूज़ रखा जाएगा। क्योंकि हदीस में वारिद लफ्ज़ "शा'तुन" का इतलाक़ बच्चा देने वाली बकरी पर होता है, "नुस्क" से हज की क़ुर्बानी का हुक्म निकलता है, "कबश" का लफ्ज़ भी वारिद है इससे जवान मेंढा मुराद होता है और "शातान मुकाफ़ातान" से ब-ऐब और मोतबर उम्र की तरफ़ इशारा है। हाँ, क़ुर्बानी की तरह अक़ीक़ा में शराइत मलहूज़ रखना मुश्किल हो तो साल से कम बकरी या बिला ज़रर ऐब वाला जानवर अक़ीक़ा कर सकते हैं।

यहाँ यह बात बतलाना भी मुनासिब मालूम होता है कि अक़ीक़ा में बहुत वुसअत है, इसलिए वुसअत में ज़्यादा सख़्ती करना ठीक नहीं है। मुनदरजा ज़ैल लाइनों में वुसअत से मुतअल्लिक़ चंद मसाइल बयान किए जाते हैं।

(1) अगर छोटा जानवर ना मिले या उस से आजिज़ हो तो बड़े जानवर में भी अक़ीक़ा कर सकते हैं, अलबत्ता क़ुर्बानी की तरह मुशारकत जाइज़ नहीं है।

(2) क़ुर्बानी की तरह शराइत पूरे ना कर सकते हो तो जिस उम्र का जानवर अक़ीक़ा करना मयस्सर हो कर सकते हैं।

(3) अगर सातवें दिन मयस्सर ना हो तो बाद में भी अक़ीक़ा दे सकते हैं यहाँ तक कि बड़ी उम्र में भी।

(4) बग़ैर अक़ीक़ा के कोई बच्चा वफ़ात पा गया या किसी ऐसे शख़्स का इंतिक़ाल हो गया जिसका अक़ीक़ा नहीं हुआ था तो उसकी तरफ़ से वफ़ात के बाद भी अक़ीक़ा दे सकते हैं, फ़ौत शुदा बच्चे की तरफ़ से अक़ीक़ा के लिए ज़रूरी है कि वह सातवें दिन के बाद इंतिकाल किया हो।

(5) लड़के की तरफ़ से 2 जानवर अक़ीक़ा करना है मगर बरवक्त सिर्फ़ एक जानवर अक़ीक़ा करने की ताक़त हो तो एक भी दे सकते हैं और एक दूसरा बाद में ताक़त होने पर अक़ीक़ा करें।

(6) अगर किसी को यह मालूम हो कि उसका अक़ीक़ा नहीं हुआ है तो ख़ुद अपना अक़ीक़ा भी कर सकते हैं।

(7) अगर कोई ऐसे ऐबों से पाक जानवर का अक़ीक़ा करने से आजिज़ हो जिनका कुर्बानी में एतिबार किया जाता है तो फिर ऐबदार का अक़ीक़ा भी कर सकते हैं बशर्त यह कि ऐसा ऐब न हो जो नुक़सान पहुँचाने वाला हो।

{2}.अपने अंदर फ़िक्र-ए-आख़िरत कैसे पैदा करें?

आए दिन हम देखते हैं कि हज़ारों की तादाद में लोग पैदा हो रहे हैं और हज़ारों की तादाद में वफ़ात पा रहे हैं दुनिया में हर आने वाला यहां से जा रहा है इस लिए इस बात में किसी को शक और इख़्तिलाफ़ नहीं कि मौत एक अटल हक़ीक़त है और हर किसी को दुनिया से जाना है जैसा के फ़रमान ए रसूल है हर नफ़्स को मौत का मज़ा चखना है। जब इस दुनिया में आने के बाद हम मर ही जाना चाहते हैं तो फिर इस दुनिया की क्या हक़ीक़त है यहां हम क्यों आए हैं और हमें दुनिया में क्या करना चाहिए?

यह दुनिया अमल करने की जगह है यानी हमें अल्लाह ने दुनिया में इस लिए भेजा है के ताकि हम उसकी बंदगी करे और उसने जो सिरात-ए-मुस्तक़ीम दिया है उस पर चलते हुए जिंदगी बसर करे अल्लाह के सिवा किसी को बक़ा नहीं है यहां हर किसी की जिंदगी मुत'अय्यन (मुक़र्रर) और महदूद है जब उसकी जिंदगी का मुत'अय्यन दिन आ जाता है वो उस दिन यहां से कुछ कर जाता है। मतलब यह हुआ कि दुनिया ठहरने की जगह नहीं है बल्कि मुसाफ़िर की तरह

चंद लम्हा बसाने की जगह है हमारा असल ठिकाना आख़िरत है और हमेशा रहने वाली है। अल्लाह का फ़रमान है:

يَا قَوْمِ إِنَّمَا هَٰذِهِ الْحَيَاةُ الدُّنْيَا مَتَاعٌ وَإِنَّ الْآخِرَةَ هِيَ دَارُ الْقَرَارِ.

तर्जुमा:- "ऐ मेरी क़ौम यह हयात दुनिया मता-ए-फ़ानी है यक़ीन मानो के क़रार और हमेशा का घर तो आख़िरत ही है बल्कि आख़िरत के मुक़ाबले में दुनिया की ज़िन्दगी घड़ी भर का ठिकाना है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَيَوْمَ يَحْشُرُهُمْ كَأَن لَّمْ يَلْبَثُوا إِلَّا سَاعَةً مِّنَ النَّهَارِ يَتَعَارَفُونَ بَيْنَهُمْ ۚ قَدْ خَسِرَ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِلِقَاءِ اللَّهِ وَمَا كَانُوا مهتدين۔ (يونس:45

तर्जमा:- और उन को वो दिन याद दिलाइये जिस दिन अल्लाह उनको अपने हुज़ूर जमा करेगा तो उनको ऐसा मेहसूस होगा के गोया वो दुनिया में सारे दिन की एक आधी घड़ी रहें होंगे और आपस में एक दूसरे को पहचानने को ठहरे होंगे वाक़ई ख़सारे में पड़े वो लोग जिन्होनें अल्लाह के पास जाने को झुठलाया और वो हिदायत पाने वाले ना थे।

क्या हम नहीं देखते के दुनिया में एक से बढ़कर एक दुनियादार आया, क़ारून आया, फ़िरौन आया, हम्मान और शद्दाद आया मगर किसी को

अपनी फौज, ताक़त, सल्तनत, और दुनिया ने नहीं बचाया आख़िरकार दुनिया छोड़ कर सब को जाना ही पड़ा इस लिए काफ़िर लोग भी मौत से इंकार नहीं करते मगर वो मौत से हिदायत नहीं लेते और मरने के बाद दुबारा ज़िंदा किये जाने का इंकार करते हैं अल्लाह का फ़रमान है:

زَعَمَ الَّذِينَ كَفَرُوا أَنْ لَنْ يُبْعَثُوا ۚ قُلْ بَلَىٰ وَرَبِّي لَتُبْعَثُنَّ ثُمَّ لَتُنَبَّؤُنَّ بِمَا عَمِلْتُمْ ۚ وَذَٰلِكَ عَلَى اللَّهِ يَسِيرٌ. (التغابن:7)

तर्जमा:- काफ़िरों का ख़याल ये है कि उनको दोबारा ज़िंदा नहीं किया जाए गा आप कह दीजिए क्यो नहीं अल्लाह की क़सम! उन्हें ज़रूर-बिज़्ज़रूर उठाया जाएगा फिर जो कुछ तुम ने किया है उसकी तुम्हें ख़बर दी जाएगी और यह काम अल्लाह पर इंतिहा आसान है।

हर मुसलमान आख़िरत पर ईमान रखता है क्योंकि ईमान के 6 अरकान में से एक रुकन आख़िरत पर ईमान लाना है बल्कि इस आयत की रोशनी में सब से पहले हमारे ऊपर लाज़िम है के हम यह पुख़्ता अक़ीदा बनाएं कि इस दुनिया से वफ़ात पा जाने के बाद अल्लाह सारे इंसानों को क़यामत के दिन दोबारा ज़िंदा करेगा और सबके अमलो का हिसाब और किताब होगी फिर आख़िरत से मुताल्लिक़

क़ुरआन और हदीस में जितनी बाते ज़िक्र की गई है उन सब पर ईमान लाना है मसलन बरज़ख़ की ज़िंदगी, क़ब्र की नेमतें , क़ब्र का अज़ाब, इसराफ़ील अलैहिस्सलाम का सूर फूंकना, क़ब्रो से दोबारा ज़िंदा हो कर खड़ा होना, महशर में सब का जमा होना, अल्लाह की अदालत क़ाइम होना, हिसाब और किताब, हौज़ ए कौसर, पुल सीरत और जन्नत और जहन्नम में दाख़िला वग़ैरह

आख़िरत बरहक़ है और इस दुनिया की ज़िंदगी में दर असल आख़िरत की तैयारी के लिए ही आए इस लिए अल्लाह ने क़ुरआन में जा-ब-जा (जगह जगह) आख़िरत की तैयारी का हुक्म दिया है अल्लाह का फ़रमान है:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ وَلْتَنظُرْ نَفْسٌ مَا قَدَّمَتْ لِغَدٍ ۖ وَاتَّقُوا اللَّهَ ۚ إِنَّ اللَّهَ خَبِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ. (الحشر:18)

तर्जमाः- ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरते रहो और हर शख़्स देख ले के कल क़यामत के वास्ते उसने आमाल का क्या ज़ख़ीरा भेजा है और हर वक़्त अल्लाह से डरते रहो अल्लाह तुम्हारे सब आमाल से बा ख़बर है।

सूरह इसरा की एक आयत में अल्लाह ने आख़िरत की फ़िक्र करने के साथ उसकी बेहतर तैयारी करने वालो को क़दर की जाने वाली तैय्यारी

कह कर ख़ुशख़बरी भी दी है गोया वहाँ फ़िक्र ए आख़िरत, तैय्यारी और नतीजा तीनो बयान हुआ है अल्लाह फ़रमाता है:

وَمَنْ أَرَادَ الْآخِرَةَ وَسَعَىٰ لَهَا سَعْيَهَا وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَأُولَٰئِكَ كَانَ سَعْيُهُمْ مَشْكُورًا. (الاسراء:19)

तर्जमा:- जिस ने आख़िरत की फ़िक्र की और जैसी कोशिश उसके लिए होनी चाहिए वो करता भी हो और वो बा ईमान भी हो पस यही लोग हैं जिन की कोशिश की अल्लाह के यहां पूरी क़दर दानी की जाएगी।

एक दूसरी जगह अल्लाह का फ़रमान है:

وَمَا تُقَدِّمُوا لِأَنْفُسِكُمْ مِنْ خَيْرٍ تَجِدُوهُ عِنْدَ اللَّهِ هُوَ خَيْرًا وَأَعْظَمَ أَجْرًا ۚ (المزمل:20)

तर्जमा:- और जो नेकी तुम अपने लिए आगे भेजोगे उसे अल्लाह के यहां बेहतर से बेहतर और सवाब में बहुत ज़्यादा पाओगे।

इस आयत से सबक़ मिलता है के कल के लिए ख़र्च करना और किसी क़िस्म की क़ुर्बानी देने से गुरेज़ नहीं करना चाहिए बल्कि आख़िरत में बेहतर बदला पाने की उम्मीद में हर क़िस्म की ख़ैर और भलाई करते रहना चाहिए।

यहां एक अफ़सोस नाक पहलू ज़िक्र कर के मज़मून के असल हदफ़ की तरफ आऊंगा। हमारे दीन की असल और उसका लबे लुबाब

आख़िरत की तैयारी और उसकी ज़रिये आख़िरत की कामयाबी हासिल करना है यहाँ कि तमाम दीनी कारगुज़ारियों का असल हदफ़ आख़िरत की तैयारी है मगर अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि आज मुसलमानों की अक्सरियत फ़िक्र ए आख़िरत से हद दर्जा ग़ाफ़िल है जिस से कभी-कभी ऐसा महसूस होता है कि मुसलमान भी दोबारा ज़िंदा होने रब से मुलाक़ात करने और आख़िरत के हिसाब किताब के मुनकिर हो गये? इंसानों की गफ़लत की तरफ़ अल्लाह ने भी इशारा किया है रब्बुल आलमीन का फ़रमान है:

اقْتَرَبَ لِلنَّاسِ حِسَابُهُمْ وَهُمْ فِي غَفْلَةٍ مُعْرِضُونَ. (الانبیاء:1)

तर्जमा:- लोगो के हिसाब का वक्त क़रीब आ गया है फिर भी वो बेख़बरी में मुंह फैरे हुए हैं।

मज़कूरा तमाम बातों को मद्दे नज़र रखते हुए हमें आख़िरत पर ईमान पुख़्ता करने के साथ अपने अंदर फ़िक्र ए आख़िरत पैदा करने की सच ज़रूरी है आख़िर इसी बात से हम और काफ़िरों की दुनिया ज़िन्दगी के मक़सद में फ़र्क़ है वो आख़िरत से ग़ाफ़िल दुनिया को ही रहने की जगह समझ बैठे हैं जब के हमारे नज़दीक असल रहने की जगह आख़िरत है चुनांचे में नीचे कुछ लाइन में चंद अहम नुक्ते ज़िक्र

करना चाहता हूं जो फ़िक्र ए आख़िरत पैदा करने में मददगार होंगे इन शा अल्लाह।

(1) फ़िक्र ए आख़िरत पैदा करने में अहम रोल उस अहसास का है के हम हमा-वक़्त (हमेशा) उस श'ऊर और अहसास के साथ जिए कि अल्लाह देख रहा है वो हमारे आमालो से बा ख़बर है उससे छुपा कर हम कोई भी काम अंजाम नहीं दे सकते हैं. अल्लाह का फ़रमान है:

أَلَمْ يَعْلَمْ بِأَنَّ اللَّهَ يَرَىٰ. (العلق:14)

तर्जमा:- किया उसे नहीं मालूम कि अल्लाह उसे ख़ूब देख रहा है।

उस एहसास के साथ जीने वाला मुसलमान ईमान की हिफ़ाज़त करेगा, नेक अमल की तरफ़ गामज़न रहेगा और बुराइयों के अंजाम से ख़ौफ़ खाते हुए उससे बचने की कोशिश करते रहेगा गोया वो हमेशा फ़िक्र ए आख़िरत और उसकी तैय्यारी में लगा रहेगा।

(2) तक़्वा इख़्तियार करने वाला आख़िरत के लिए फ़िक्र मंद रहता है इस लिए अल्लाह ने सफ़र ए आख़िरत के लिए तक़्वा का तौशा लेने का हुक्म दिया है फ़रमान ए इलाही है:

وَتَزَوَّدُوا فَإِنَّ خَيْرَ الزَّادِ التَّقْوَىٰ (البقرة:197)

तर्जमा:- और अपने साथ सफ़र-ए-ख़र्च ले लिया करो सब से बेहतर तौशा तक़्वा यानि अल्लाह का डर है।

यानी तक़्वा अल्लाह से डरने, उसके हुक्म पर अमल करने, थोड़ी चीज़ों पर क़नात करने और आख़िरत की तैयारी करने का नाम है।

आज इंसान अमल से कोरा और गुनाहों का रसिया अल्लाह से बेख़ौफ़ हो जाने की वजह से है जिसके दिल में ख़ौफ़ ए इलाही हो वो आख़िरत की फ़िक्र और उसकी तैयारी करता है।

(3) मौत को कसरत से याद करना अपने अंदर फ़िक्र ए आख़िरत पैदा करने के लिए बड़ा मददगार ज़रिया है मौत दुनिया ज़िन्दगी के ख़त्म का नाम है फिर उसके बाद आख़िरत की मंज़िल शुरू हो जाती है इस लिए नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मौत को बकसरत याद करने का हुकम दिया है आप का फ़रमान है:

اکثروا ذکر ھاذم اللذات یعنی الموت۔ (صحيح الترمذي:2307)

तर्जमा:- लज़्ज़तो को तोड़ने वाली चीज़ यानी मौत को कसरत से याद करो।

आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इस फ़रमान का मक़सद है कि हम दुनिया की आर्ज़ी लज़्ज़तो और शहवतो से किनारा कशी इख़्तियार करे, अल्लाह से ताल्लुक़ जोड़े, और मौत को कसरत से याद कर के मौत के बाद की जिंदगी की तैयारी करे, इसी के लिए मुत'अद्दिद असलाफ़ से मंक़ूल है कि हिदायत के लिए मौत ही काफ़ी है वैसे तो अल्लाह ने बड़े-बड़े ज़ालिम को इबरतनाक मौत दी है लेकिन उन सब में फ़िरौन की मौत को ख़ुसूसी तौर पर निशान ए इबरत बनाया है।

(4) फ़िक्र ए आख़िरत पैदा करने में क़ब्रो की ज़ियारत भी अहम ज़रिया है किसी की मौत से बिल-फ़र्ज़ नसीहत मिलती ही है साथ गाहे-ब-गाहे (बीच बीच में) क़ब्रिस्तान जा कर उन मरने वालो की क़ब्र से भी नसीहत हासिल करने का हुक्म दिया गया है ताकी इंसान में ख़ौफ़ ए इलाही, नर्म दिली और फ़िक्र ए आख़िरत पैदा हो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

كنتُ نهيتُكم عن زيارَةِ القبورِ ألا فزورُوها ، فإنَّها تُرِقُّ القلْبَ ، وتُدْمِعُ العينَ ، وتُذَكِّرُ الآخرةَ ، ولا تقولوا هُجْرًا (صحيح الجامع: 4584)

तर्जमा:- मैंने तुम्हें क़ब्रो की ज़ियारत से मना किया था अब तुम क़ब्रो की ज़ियारत करो क्योंकि यह दिलो को नर्म करती है आँखों से ख़ुशी के आँसू बहाती है और आख़िरत याद दिलाती है और तुम वहाँ लग़्व बात ना करो।

इस हदीस के पसमंज़र में उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु की हालत पर ग़ौर करे आप रज़ियल्लाहु अन्हु जब किसी क़ब्र पर जाते तो इतना रोते दाढ़ी तर हो जाती आप से पूछा जाता कि जन्नत और जहन्नम के ज़िक्र पर आप नहीं रोते इस पर क्यो रोते है? तो वो जवाब देते हैं नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

إنَّ القبرَ أوَّلُ مَنازلِ الآخرةِ، فإن نجا منهُ، فما بعدَهُ أيسرُ منهُ، وإن لم يَنجُ منهُ، فما بعدَهُ أشدُّ منهُ قالَ: وقالَ رسولُ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ عليَهِ وسلَّمَ: ما رأيتُ مَنظرًا قطُّ إلَّا والقَبرُ أفظَعُ منهُ(صحيح ابن ماجه:3461)

तर्जमा:- आख़िरत के मनाज़िल में से क़ब्र पहली मंज़िल है पस अगर किसी ने क़ब्र के अज़ाब से निजात पाई तो उसके बाद के मराहिल आसान होंगे और अगर जिसे अज़ाब ए क़ब्र से निजात ना मिल सके तो उसके बाद के मनाज़िल सख़्त तर होंगे उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु ने मज़ीद कहा कि रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इरशाद

फ़रमाया: घबराहट और सख़्ती के एतिबार से क़ब्र की तरह किसी और मंज़र को नहीं देखा।

क़ब्र और क़ब्रिस्तान एक भयानक जगह है वहा अपने उन दोस्त और अहबाब, रिश्ते दार और अ'इज़्ज़ा अक़ारिब की क़ब्रों को पाते है जिनके साथ जिंदगी के यादगार लम्हात गुज़ारे हुए हैं क्या उनके बिछड़ने का ग़म नहीं होता और उनकी जगह ख़ुद भी जाने की फ़िक्र पैदा नहीं होती?

(5) मौत के बाद जितने भयानक मरहले और होलनाक मनाज़िर हैं उन सब पर ग़ौर किया करे उन अस्बाक़ को किताबों से और उलमा के बयान से दोहराया करे इस अमल से आख़िरत की तज़्कीर होती रहींगी और उसकी फिक्र पैदा होने में मदद मिलती रहीगी। मौत की ताक़त, अज़ाब ए क़ब्र, महशर की होलनाकी, नफ़सा नफ़सी का आलम, हिसाब की सख़्ती, पुल सिरात की हक़ीक़त, और जहन्नमियों की भूख और तड़प और शदीद से शदीद अज़ाब का मुताल'अ कर के यक़ीनन एक मुसलमान तड़प उठेगा और आख़िरत की परेशानियों और सख़्तीयो से बचने की फ़िक्र करेगा।

(6) आख़िरत की फ़िक्र और उसकी तैयारी में सब से बड़ी रुकावट दुनिया की मुहब्बत या दुनिया तलबी है या हक़ीक़त भी है के जिस की दुनिया जिस क़द्र वसी और कुशादा है उसके अंदर दीनदारी की उतनी ही क़िल्लत है और जिस की दुनिया छोटी होती है उसके पास दीन ज़्यादा होता है। इस बात को दूसरे अल्फ़ाज़ में यह कह सकते हैं कि जिस ने दीन पर दुनिया को तर्जीह दे दी उसने आख़िरत को भुला दिया इस हक़ीक़त को अल्लाह क़ुरआन में ज़िक्र कर रहा है।

بَلْ تُؤْثِرُونَ الْحَيَاةَ الدُّنْيَا وَالْآخِرَةُ خَيْرٌ وَأَبْقَىٰ (الاعلى:1716)

तर्जमा:-बल्कि तुम दुनियावी जिंदगी को तर्जीह देते हो जब के आख़िरत बेहतर और बाक़ी रहने वाली है।

हमारे अमलो पर ताज्जुब है के हम दार फ़ानी और उसके लम्हे भर की लज़्ज़तो को अब्दी ज़िंदगी और अब्दी सुकून और राहत पर तरजीह देते हैं जब कि अल्लाह इस दुनिया को मच्छर के पर के बराबर भी नहीं अहमियत देता सहल बिन साद रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

لو كانتِ الدُّنيا تعدلُ عندَ اللهِ جناحَ بعوضةٍ ما سقى كافرًا منها شربةَ ماءٍ(صحيح الترمذي:2320)

तर्जमा:- अल्लाह के नज़दीक दुनिया की वक़'अत (क़दर/क़ीमत) अगर एक मच्छर के पर के बराबर भी होती तो वो किसी काफ़िर को उसमें से एक घूंट पानी नहीं पिलाता।

(7) आख़िरत की फ़िक्र और उसकी तैयारी में एक बड़ी रुकावट दिलो की ताक़त और उनमें कुफ़्र और नफ़रमानी की आलूदगी का होना भी है अगर हम अपने नफ़्स का तज़किया और दिलो को कुफ़्र और नफ़रमानी और अख़लाक़ ए रज़ीला से पाक और साफ़ कर लेते हैं तो इबरत हासिल करने वाली चीज़ो से हमेशा इबरत हासिल कर सकेंगे वर्ना दिलो की ताक़त इबरत रोकने के अलावा वाजिबात और मुनकिर काम का सबब भी है और अल्लाह के यहाँ वही लोग कामयाब होंगे जो अपने नफ़्स को अख़लाक़ ए रज़ीला से और दिलो को शिर्क और नाफ़रमानी की आलूदगियो से पाक करेगे जैसा के अल्लाह का फ़रमान है:

قد افلح من تزکی۔

तर्जुमा:-बेशक उसने फलाह पाली जो पाक हो गया।

(8) दुनिया की जिंदगी को मुसाफ़िर की तरह गुज़ारे इस से हमारे अंदर से यहां ज़्यादा देर तक रहने और پرتعیش ज़िंदगी गुज़ारने का

ख़्याल जाता रहे गा उसकी जगह दिल में ज़िक्र-ए-इलाही और फ़िक्र ए आख़िरत पैदा होगी यह हक़ीक़त भी है कि दुनिया में हर आने वाला आख़िरत के सफ़र का मुसाफ़िर है इस हक़ीक़त को जो समझ लेता है वो ख़ुद को दुनिया में मुसाफ़िर ही समझता है और दुनिया का एक मुसाफ़िर जिस तरह अपना सामान ए सफ़र तैयार रखता है ना जाने कब कुछ करना चाहता है उस तरह आख़िरत का मुसाफ़िर दीन और ईमान और अमल और अक़ीदा के साथ तैयार रहता है कि ना जाने कब मौत की सवारी आ जाए और आख़िरत की तरफ़ कूच कर जाना पड़े। फ़िक्र ए आख़िरत के इसी तनाज़ुर में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का यह फ़रमान भी है:

كن فی الدنیا كانک غریب او عابر سبیل وعد نفسک فی اهل القبور۔(صحيح الترمذي:2333)

तर्जमा:- तुम दुनिया में ऐसे रहो गोया तुम एक मुसाफ़िर या राहगीर हो और अपना शुमार क़ब्र वालो में करो।

जाहिद कहते हैं इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने मुझसे कहा जब तुम सुबह करो तो शाम का यक़ीन मत रखो और जब शाम करो तो सुबह का यक़ीन ना रखो और बीमारी से पहले साथी और तंदुरुस्ती की हालत में और मौत से पहले जिंदगी की हालत में कुछ कर लो इस लिए के अल्लाह के बंदे तुम्हें नहीं मालूम के कल तुम्हारा नाम क्या होगा।

इस हदीस में दुनिया से बे-रग़बती और दुनिया की आरज़ू कम रखने का बयान है मफ़हूम यह है के जिस तरह एक मुसाफ़िर दौरन ए सफ़र कुछ वक़्त के लिए किसी जगह क़ियाम करता है तुम दुनिया को अपने लिए ऐसा ही समझो बल्कि अपना शुमार क़ब्र वालो में करो गोया तुम दुनिया से जा चुके इसी लिए आगे फ़रमाया: सुबह पा लेने के बाद शाम का इंतज़ार मत करो और शाम पा लेने के बाद सुबह का इंतज़ार मत करो बल्कि अपनी मदद और तंदुरुस्ती के वक्त मरने के बाद कुछ तय्यारी कर लो क्योंकि के तुम्हें कुछ ख़बर नहीं के कल तुम्हारा शुमार मुर्दो में होगा या ज़िंदो में। (मंक़ूल अज़ शरह तिर्मिज़ी उर्दू)

(9) क़ुरआन को तफ़क्कुर (फ़िक्र) और तदब्बुर के साथ पढ़ना अपने अंदर फ़िक्र ए आख़िरत पैदा करने का ज़रिया है अल्लाह की किताब ही तो हिदायत का सरचश्मा और दुनिया और आख़िरत में कामयाबी का ज़ामिन है क़ुरआन को समझ कर पढ़ने से एक तरफ़ ईमान में ज़्यादती पैदा होती है और आमाल सालिहा (नेक कमो) का दइया पैदा होता है तो दूसरी तरफ़ अल्लाह का ख़ौफ़, नियतो की इस्लाह और जहन्नम से बचने की फ़िक्र दामन-गीर है या दोनों कैफ़ियत क़ुरआन के अंदाज़ और ख़ुशख़बरी से पैदा होती है जब मोमिन ईमान और

अमल और उसके बदले जन्नत और नेमत की बशारत शुरू होती है तो वो शौक जन्नत में उसके हुसूल की तरफ़ आता है और जब अल्लाह के अज़ाब जहन्नम और नाफ़रमान की हालत ख़राब है तो मारे ख़ौफ़ के जहन्नम से बचने की फिक्र करता है इस लिए हमेशा समझ कर क़ुरआन की तिलावत जारी रखे ताकी जन्नत का शौक़ और जहन्नम का ख़ौफ़ लगा रहे।

(10) आख़िरी प्वाइंट इस बात का सदा अहसास रहे कि हम मुसलमान हैं और मरते दम तक इस एहसास की हिफ़ाज़त करते रहे ताकी मौत आ जाए एक मुसलमान के सामने मक़सद तख़लीक़ यानी इबादत इलाही रहना चाहिए और ख़ुलूस के साथ सुन्नत के मुताबिक़ अल्लाह की बंदगी करते रहना चाहिए ताकि मौत आ जाए इन दोनो बातो का अल्लाह ने हमे हुक्म दिया है अल्लाह का फ़रमान है:

أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ حَقَّ تُقَاتِهِ وَلَا تَمُوتُنَّ إِلَّا وَأَنتُم مُّسْلِمُونَ(آل عمران:102)

तर्जमा:- ऐ ईमान वालो! अल्लाह से उतना डरो जितना हमें डरना चाहिए और देखो मरते दम तक मुसलमान ही रहना।

और फ़रमान रब्बुल आलमीन है:

وَاعْبُدْ رَبَّكَ حَتَّىٰ يَأْتِيَكَ الْيَقِينُ (الحجر:99)

तर्जमा:- और अपने रब की इबादत करते रहो यहाँ तक कि आप को मौत आ जाए।

यह चंद निकात थे जो फ़िक्र ए आख़िरत पैदा करने में मददगार होंगे इनके अलावा भी बहुत सारे निकात इनमे दाख़िल किए जा सकते हैं मसलन दिलों को नरम करने वाले और उन्हें ख़ौफ़ पैदा करने वाले सारे अमलो से फ़िक्र ए आख़िरत की तर्ग़ीब मिले गी यहां तक कि आख़िरत में मिलने वाले हर क़िस्म के ऐशो आराम से भी आख़िरत की फ़िक्र अदा होगी।

अल्लाह हमारे अंदर फ़िक्र ए आख़िरत पैदा कर दे ताकि हम उस की जैसी तैयारी होनी चाहिए कर सके और आख़िरत में निजात पा सके।

[3].अलविदा जुमा का तसव्वुर और क़ज़ा-ए-उमरी की हक़ीक़त

रमज़ान-उल-मुबारक का आख़िरी जुमा अवाम में अलविदाई के नाम से मशहूर है और इस जुमा को वह अहमियत दी जाती है, जो अहमियत ईद को हासिल है। वक्त से पहले अमल करके उम्दा से उम्दा लिबास में सज-धज कर और ख़ुशबू लगाकर बड़े तज़क और एहतिशाम से जुमा में हाज़िरी दी जाती है।

हक़ीक़त यह है कि रमज़ान का आख़िरी जुमा को अलविदाई जुमा कहना कहीं से साबित नहीं है, हत्ता कि इस बारे में कोई ज़ईफ़ हदीस भी मर्वी नहीं है और अक़्ल के भी यह बात ग़लत है क्योंकि साल के 12 महीने हैं और हर हफ़्ते जुमा का दिन आता है और हर माह के इख़्तिताम पर भी जुमा आता है, फिर रमज़ान का आख़िरी जुमा ही अलविदाई जुमा क्यों कहलाएगा?

दरअसल इस आख़िरी जुमा को मशहूर करने का सबब यह है कि लोगों ने जिंदगी भर की छोड़ी हुई नमाज़ माफ़ कराने का बिदअती

तरीक़ा ईजाद किया हुआ है जिसको कज़ा-ए-उमरी का नाम दिया जाता है। कज़ा-ए-उमरी से मुताल्लिक़ चंद क़िस्म की झूठी बातें गढ़ी गई हैं:

कज़ा-ए-उमरी से मुताल्लिक़ एक बात यह फैलाई गई है कि रमज़ान में आख़िरी जुमा को एक दिन 5 नमाज़ें वितर के साथ पढ़ ली जाए तो उमर भर की छोड़ी हुई नमाज़ें अदा हो जाएंगी, यह लोगों का झूठ है, इस बात का शरियत से कोई ताल्लुक़ नहीं है।

कज़ा-ए-उमरी से मुताल्लिक़ एक दूसरी बात यह फैलाई गई है कि रमज़ान के आख़िरी जुमा में 4 नफ़िल एक सलाम से पढ़ ले। नमाज़ की हर रकात में सूरह फ़ातिहा के बाद 7 मर्तबा आयतुल कुर्सी और 15 मर्तबा सूरह इख़लास पढ़ ले (किसी ने सूरह इख़लास की बजाए सूरह क़ौसर भी बताया है) तो तमाम उम्र की कज़ाओ का कफ़्फ़ारा हो जाएगा। अगर 7 साल की नमाज़ कज़ा हो तब भी यह 4 रकात नमाज़ कफ़्फ़ारा के लिए काफ़ी है।

हक़ीक़त यह है कि ऐसी कोई रिवायत मुस्तनद हदीस की किताब में नहीं है। अलबत्ता एक झूटी और बातिल रिवायत का तज़किरा मुल्ला

अली क़ारी ने अपनी किताब अलमौज़ुआतुल कुबरा में किया है कि जो शख़्स रमज़ान के आख़िरी जुमा में एक फ़र्ज़ नमाज़ बतौर ए कज़ा पढ़ ले तो इसकी साल की छूटी हुई नमाज़ो की तिलाफ़ी हो जाएगी। इस रिवायत का ज़िक्र करके मुल्ला अली क़ारी ख़ुद फ़रमाते हैं कि यह बातिल रिवायत है, बल्कि इस वक्त उलमा ए अहनाफ़ भी कज़ा-ए-उमरी के नाम से इस मुरव्वजा 4 रकात वाली नमाज़ को बातिल क़रार देते हैं। बरेलवी उलमा भी इस मुरव्वजा कज़ा-ए-उमरी को बे असल और बिद'अत क़रार देते हैं।

जब हक़ीक़त यह है कि रमज़ान के आख़िरी जुमा में कज़ा-ए-उमरी की नियत से पढ़ी जाने वाली नमाज़ को देवबंदी और बरेलवी दोनों तबक़ात में बेमूल और बिद'अत है, तो फिर इनके मानने वालों में यह नमाज़ अभी भी क्यों राइज है? और इस जुमा को क्यों दूसरे जुमा पर फौक़ियत दी जाती है, सोचने वाली बात है।

और कलाम के तौर पर तीन बातें अर्ज़ करता हूँ:

1. यह है कि रमज़ान-उल-मुबारक के आख़िरी जुमा को अलविदाई कहना ग़लत है, इस जुमा का भी वही नाम है जो रमज़ान के पहले,

दूसरे और तीसरे जुमा का नाम है। यह अलग बात है कि रमज़ान का आख़िरी अश्रा ख़ुसूसन उसकी रातें पहले दोनों अश्रो से अफ़ज़ल हैं क्योंकि इसमें शबे क़द्र है मगर आख़िरी अश्रे के सिर्फ़ एक दिन यानी जुमा को फ़ौक़ियत देना किसी दलील से साबित नहीं है।

2. यह है कि रमज़ान का आख़िरी जुमा को कज़ा-ए-उमरी की नियत से कोई नमाज़ पढ़ना बिद'अत और मर्दूद है। इस नमाज़ से उम्र भर क्या, एक दिन की नमाज़ की तलाफ़ी नहीं होगी और दीन में बिद'अत अंजाम देने की वजह से गुनाह अलग से होगा।

3. यह कि मैं उलमा-ए-अहनाफ़ से भी गुज़ारिश करता हूँ कि आप लोग ज़ोर और शोर से मुरव्वजा कज़ा-ए-उमरी की बिद'अत को अवाम में वाज़ेह करें, बल्कि अमली शक्ल में पूरी क़ुव्वत से इसको मिटाने की कोशिश करें क्योंकि यह बिद'अत आपके यहाँ पाई जाती है।

[4].अल्लाह का ख़ौफ़ और उसके समरात और ज़राए हुसूल

ख़ौफ़-ए-दिल बेचैनी का नाम है। जब इंसान हराम काम और म'आसीयात (बहुत से गुनाह) का इर्तिकाब करता है तो उसका दिल अल्लाह के ख़ौफ़ से लरज़ जाता है। इसी तरह अल्लाह ने जिन कामों के करने का हुक्म दिया उसे छोड़ने से भी दिल बेचैन हो जाता है या उन पर अमल करके अदम-ए-क़बूलियत का ख़द्शा महसूस करता रहता है इसी का नाम ख़ौफ़-ए-इलाही है। एक मोमिन से यह ख़ौफ़ मतलूब है क्यूंकि अल्लाह का ख़ौफ़ इबादत है और तौहीद में शामिल है।

क़ुरआन में ख़ौफ़ से मुताल्लिक़ मुतअद्दिद क़िस्म के अल्फ़ाज़ और कलमे आए हैं:

اتقوا : فَاتَّقُوا اللّٰهَ مَا اسْتَطَعْتُمْ (التغابن : 16)

तर्जुमा: जितनी ताक़त रखते हो अल्लाह से डरो।

نذیر: يَا أَيُّهَا النَّبِيُّ إِنَّا أَرْسَلْنَاكَ شَاهِدًا وَمُبَشِّرًا وَنَذِيرًا (الاحزاب:45)

तर्जुमा: ऐ नबी, हम ने आप को गवाह, बशारत देने वाला और डराने वाला बनाकर भेजा है।

خوف: إِنَّمَا ذَٰلِكُمُ الشَّيْطَانُ يُخَوِّفُ أَوْلِيَاءَهُ فَلَا تَخَافُوهُمْ وَخَافُونِ إِن كُنتُم مُّؤْمِنِينَ (آل عمران:175)

तर्जुमा: यह ख़बर देने वाला शैतान ही है जो अपने दोस्तों से डराता है। तुम उन काफ़िरों से न डरो और मेरा ख़ौफ़ रखो अगर तुम मोमिन हो।

وجلت: إِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ الَّذِينَ إِذَا ذُكِرَ اللَّهُ وَجِلَتْ قُلُوبُهُمْ (الانفال:2)

तर्जुमा: बस ईमान वाले तो ऐसे होते हैं कि जब अल्लाह का ज़िक्र आता है तो उनके दिल डर जाते हैं।

خشیه: إِنَّ الَّذِينَ هُم مِّنْ خَشْيَةِ رَبِّهِم مُّشْفِقُونَ (المومنون:57)

तर्जुमा: यक़ीनन जो लोग अपने रब की हैबत से डरते हैं।

رہبت :وَإِيَّايَ فَارْهَبُونِ (البقرة:40)

तर्जुमा: और मुझ ही से डरो।

رہق: وَأَنَّهُ كَانَ رِجَالٌ مِّنَ الْإِنسِ يَعُوذُونَ بِرِجَالٍ مِّنَ الْجِنِّ فَزَادُوهُمْ رَهَقًا (الجن:6)

तर्जुमा: बात यह है कि चंद इंसान कुछ जिन्नात से पनाह तलब किया करते थे जिससे जिन्नात अपनी सर्कशी में और बढ़ गए, कुछ ने कहा जिन्नात ने उन्हें मज़ीद ख़ौफ़ में मुब्तिला कर दिया।

इन आयतों से मालूम होता है कि सिर्फ़ अल्लाह से डरना चाहिए। यहां एक बात की वज़ाहत करते हुए आगे चलता हूं ताकि टॉपिक बिल्कुल साफ़ हो जाए।

ख़ौफ़ की क़िस्में:

डरने का मुस्तहिक़ सिर्फ़ अल्लाह ही है, उसके मुक़ाबले में किसी से डरना इबादत में शिर्क कहलाएगा। इसकी 2 सूरतें बन सकती हैं:

(1) बंदों से डरकर दीन पर अमल करना छोड़ दे। इसकी मिसाल जैसे आप यहां सऊदी में आमीन ज़ोर से बोलते हैं जब अपने मुल्क में जाते हैं तो लोगों के डर से यह अमल छोड़ देते हैं।

(2) ग़ैरुल्लाह से इस तरह डरना या डरने का अक़ीदा रखना कि वह अल्लाह के बग़ैर ख़ुद से नुक़सान पहुंचा सकता है, मसलन बुत, वली, जिन, मय्यत और ख़्याली भटकती रूहें वग़ैरह। इस बात का ज़िक्र अल्लाह ने क़ुरआन में किया है:

إِنَّمَا ذَٰلِكُمُ الشَّيْطَانُ يُخَوِّفُ أَوْلِيَاءَهُ فَلَا تَخَافُوهُمْ وَخَافُونِ إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ[آل عمران: 175]

तर्जुमा: यह ख़बर देने वाला शैतान ही है जो अपने दोस्तों से डराता है। तुम उन काफ़िरों से न डरो और मेरा ख़ौफ़ रखो अगर तुम मोमिन हो।

इसलिए किसी सूरत में अल्लाह के अलावा दिल में दूसरों का डर नहीं पैदा किया जाएगा, फ़ायदा, नुक़सान का मालिक सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह ही है। अल्लाह के हुक्म के बग़ैर कोई हमारा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता। फ़रमाने इलाही है:

وَإِن يَمْسَسْكَ اللَّهُ بِضُرٍّ فَلَا كَاشِفَ لَهُ إِلَّا هُوَ ۖ وَإِن يَمْسَسْكَ بِخَيْرٍ فَهُوَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ(سورة الأنعام:17)

तर्जुमा: अगर अल्लाह तुम्हें किसी क़िस्म का नुक़सान पहुंचाए तो उसके सिवा कोई नहीं जो तुम्हें उस नुक़सान से बचा सके और अगर वह तुम्हें किसी भलाई से बहरा-मंद करे तो वह हर चीज़ पर क़ादिर है।

फ़ितरी ख़ौफ़ इस ख़ौफ़ से अलग है, वह फ़ितरी चीज़ है, सांप को देखकर, दरिंदों को देखकर इंसान डर जाता है। यह डर अल्लाह के मुक़ाबले में नहीं होता है, यह सिर्फ़ फ़ितरतन ऐसा होता है जैसा कि मूसा अलैहिस्सलाम सांप से डर गए। अल्लाह का फ़रमान है:

وَأَلْقِ عَصَاكَ ۚ فَلَمَّا رَآهَا تَهْتَزُّ كَأَنَّهَا جَانٌّ وَلَّىٰ مُدْبِرًا وَلَمْ يُعَقِّبْ ۚ يَا مُوسَىٰ لَا تَخَفْ إِنِّي لَا يَخَافُ لَدَيَّ الْمُرْسَلُونَ (النمل: 10)

तर्जुमा: तू अपनी लाठी डाल दे, मूसा ने जब उसे हिलता-जुलता देखा इस तरह कि गोया वह एक सांप है तो मुंह मोड़े हुए पीठ फेरकर भागे और पलटकर भी न देखा, ऐ मूसा ख़ौफ़ न खा, मेरे हुज़ूर में पैग़म्बर डरा नहीं करते।

अल्लाह का फ़रमान है:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ حَقَّ تُقَاتِهِ وَلَا تَمُوتُنَّ إِلَّا وَأَنْتُمْ مُسْلِمُونَ [آل عمران: 102]

तर्जुमा: ऐ ईमान वालों, अल्लाह से उतना डरो जितना उससे डरना चाहिए, देखो मरते दम तक मुसलमान ही रहना।

बाज़ उल्मा ने इस आयत को "فاتقوا الله ما استطعتم " (जितनी ताक़त हो अल्लाह से डरो) से मंसूख क़रार दिया है, हालांकि जमहूर मुहक़्क़िक़ीन का कहना है कि यहां हक़्क़ा तक़ातहु में अपनी ताक़त भर डरने का ही हुक्म है, क्यूंकि अल्लाह बंदों को ताक़त से ज़्यादा मुकल्लफ़ नहीं बनाता। अल्लाह का फ़रमान है:

لَا يُكَلِّفُ اللَّهُ نَفْسًا إِلَّا وُسْعَهَا(البقرة: 286)

तर्जुमा: अल्लाह किसी जान को उसकी ताक़त से ज़्यादा तकलीफ़ नहीं देता।

एक हदीस में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मुआज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अन्हु से पूछते हैं:

هل تدرِي ما حقُّ اللهِ على العبادِ ؟ قال قلت : اللهُ ورسولُه أعلمُ . قال : فإن حقَّ اللهِ على العبادِ أن يعبدوه ولا يشركوا به شيئًا .(صحيح مسلم:30)

तर्जुमा: क्या तुम जानते हो कि अल्लाह का हक़ बंदों पर क्या है? तो उन्होंने कहा कि अल्लाह और उसके रसूल बेहतर जानते हैं। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: अल्लाह का हक़ बंदों पर

यह है कि वे सिर्फ़ उसी की इबादत करें और उसके साथ किसी दूसरे को शरीक न करें।

जिस बंदे ने सिर्फ़ अल्लाह की इबादत की और उसके साथ किसी को शरीक नहीं ठहराया तो उसने अल्लाह का हक़ अदा कर दिया।

हम जहां भी रहें, तन्हाई हो या जमात, सफ़र हो या हज़र (घर मे रहना) , रात हो या दिन हमेशा अल्लाह का तक़्वा इख़्तियार करना है, उसका ख़ौफ़ खाना है और उससे डरते रहना है। तिर्मिज़ी में हसन दर्जे की रिवायत है, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

اتَّقِ اللَّهِ حيثُ ما كنتَ ، وأتبِعِ السَّيِّئةَ الحسنةَ تمحُها ، وخالقِ النَّاسَ بخلقٍ حسنٍ(صحيح الترمذي:1987)

तर्जुमा: जहां भी रहो अल्लाह से डरो, बुराई के बाद (जो तुमसे हो जाए) भलाई करो, वह बुराई को मिटा देगी और लोगों के साथ हुस्न-ए-अख़लाक़ से पेश आओ।

"اتَّقِ اللَّهِ حيثُ ما كنتَ"

बहुत ही जामे कलमा है। हम तन्हाई में होते हैं साथ में नेट वाला मोबाइल होता है इसमें ख़्वाहिशाते नफ़स का हर सामान मौजुद है अल्लाह का ख़ौफ़ नहीं होगा तो यहां बुराई करने से नहीं रुक सकते।

किसी के ज़िम्मे कंपनी का हिसाब और किताब हो तो इस मामले में वही अमीन होगा जो अल्लाह से डरने वाला होगा लेकिन अक्सर लोग अल्लाह से निडर हैं। आज बुराइयों का ज़माना है मामुली पैसो में जीना करने को मिल जाता है शैतान बहका कर शैतानी काम करवाता है बचता वही है जो अल्लाह का ख़ौफ़ खाता है। कहाँ है कोई कह दे "إني أخاف الله" मैं अल्लाह से डरता हूँ।

आज हमारे पास हर क़िस्म का ख़ौफ़ है, ग़रीबी का ख़ौफ़ है, दुश्मन का ख़ौफ़ है, नौकरी चले जाने का ख़ौफ़ है, सैलरी कट

जाने का ख़ौफ़ है, बीमारी का ख़ौफ़ है। अगर ख़ौफ़ नहीं तो अल्लाह का ख़ौफ़ नहीं है जबकि सिर्फ़ अल्लाह का ख़ौफ़ खाना चाहिए था। अल्लाह का फ़रमान है:

وَإِيَّايَ فَارْهَبُونِ (البقرة:40)

तर्जुमा: और मुझसे ही डरो।

इस ख़ौफ़ को दिल में पैवस्त करने के लिए अल्लाह ने पैगंबरों को भेजा, नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बारे में फ़रमाया:

يَا أَيُّهَا النَّبِيُّ إِنَّا أَرْسَلْنَاكَ شَاهِدًا وَمُبَشِّرًا وَنَذِيرًا (الأحزاب:45)

तर्जुमा: ऐ नबी, हमने आपको गवाही देने वाला, ख़ुशख़बरी देने वाला और डराने वाला बना कर भेजा है।

अल्लाह ने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ सारे नबियों को बशीर और नज़ीर बना कर भेजा। सूरह निसा में अल्लाह का फ़रमान है:

رُسُلًا مُبَشِّرِينَ وَمُنذِرِينَ) 165)

तर्जुमा: हमने रसूल बनाए हैं ख़ुशख़बरी सुनाने वाला और डराने वाला।

मुबश्शीर का मतलब ईमान लाने वालों को जन्नत और उसकी नेमतों की ख़ुशख़बरी देने वाला और नज़ीर का मतलब ईमान से मुकरने वालों को जहन्नम और उसके ख़ौफ़नाक अज़ाब से डराने वाला।

अल्लाह का ख़ौफ़ खाना यानी अल्लाह की अज़मत और जलाल का अहसास करना, उसके सामने खड़े होने का तसव्वुर करना और इस बात की फ़िक्र करना कि वह खुली छुपी तमाम बातों को जानता है:

وَأَسِرُّوا قَوْلَكُمْ أَوِ اجْهَرُوا بِهِ إِنَّهُ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ (الملك:13)

तर्जुमा: अपनी बातों को ज़ाहिर करो या छुपाओ, वह तो सीनों के भेद को भी जानता है।

सलफ़-ए-सालिहीन का अल्लाह से ख़ौफ़ खाना और उस ख़ौफ़ से रोना

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम सहाबा किराम और असलाफ़ - ए-उज़्ज़ाम से अल्लाह से बेपनाह डरने का ज़िक्र मिलता है। ये लोग अल्लाह के ख़ौफ़ से रात-रात भर रोया करते थे, महीनों बीमार रहते थे। जिस तरह हांडी में पानी उबालता है, वैसे ही रोने का ज़िक्र मिलता है। इसकी बेशुमार मिसालें हैं जिन पर उलमा ने मुकम्मल किताबें लिखी हैं। ख़ौफ़-ए-इलाही और रोने की चंद एक मिसालें देता हूँ।

1. अबू बकर रज़ियल्लाहु अन्हु ने एक चिड़ीया को पेड़ पर बैठे देखा तो बोले, ऐ चिड़ीया तुम्हारे लिए ख़ुशख़बरी है, तुम पेड़ पर बैठी हो, फल खाती हो और उड़ जाती हो, न कोई हिसाब है न कोई अज़ाब, ऐ काश मैं भी तुम्हारे जैसा होता।

2. उमर रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि काश मैं मेढ़ा होता, उसे मोटा ताज़ा कर ज़िब्ह कर के खा लिया जाता, लेकिन इंसान नहीं होता। एक बार जब उन्होंने सूरह तूर की यह आयत पढ़ी:

إِنَّ عَذَابَ رَبِّكَ لَوَاقِعٌ

तर्जुमा: बेशक आपके रब का अज़ाब होने वाला है।

तो बहुत रोने लगे यहाँ तक कि बीमार पड़ गए। बुख़ारी शरीफ़ में है, उमर रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं:

والله لو أن لي طلاع الأرض ذهبا لافتديت به من عذاب الله عز وجل قبل أن أراه (صحيح البخاري:3692)

तर्जुमा: अल्लाह की क़स्म, अगर मेरे पास ज़मीन भर सोना होता तो अल्लाह के अज़ाब का सामना करने से पहले उसका फ़िदिया देकर उससे निजात की कोशिश करता।

3. अबू ज़र ग़फ़्फ़ारी रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा:

يَا لَيْتَنِي كُنتُ شَجَرَةً تُعْضَدُ

ऐ काश मैं एक पेड़ होता जो काट दिया जाता।

4. अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं:

لَوْ تَعْلَمُونَ مَا أَعْلَمُ لَضَحِكْتُمْ قَلِيلًا وَلَبَكَيْتُمْ كَثِيرًا (صحيح البخاري:6486)

ऐ मेरे सहाबा, अगर लोग वह जान लें जो मैं जानता हूँ, तो वे बहुत कम हँसेंगे और ज़्यादा रोएंगे।

5. उसमान रज़ियल्लाहु अन्हु जब किसी क़ब्र पर जाते तो इतना रोते कि दाढ़ी भीग जाती। आपसे पूछा जाता कि जन्नत और जहन्नम के ज़िक्र पर आप नहीं रोते, इस पर क्यों रोते हैं? तो वह जवाब देते कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

إِنَّ الْقَبْرَ أَوَّلُ مَنَازِلِ الْآخِرَةِ فَإِن نَّجَا مِنْهُ فَمَا بَعْدَهُ أَيْسَرُ مِنْهُ وَإِن لَمْ يَنْجُ مِنْهُ فَمَا بَعْدَهُ أَشَدُّ مِنْهُ

(ابن ماجه: 3461)

तर्जुमा: क़ब्र आख़िरत की पहली मंज़िल है। अगर किसी ने क़ब्र के अज़ाब से निजात पा ली, तो उसके बाद के मराहिल आसान होंगे और अगर क़ब्र के अज़ाब से निजात नहीं मिली, तो उसके बाद के मराहिल और भी कड़े होंगे। उसमान रज़ियल्लाहु अन्हु ने और कहा कि रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया: घबराहट और सख़्ती के लिहाज़ से क़ब्र की तरह कोई और मंज़र नहीं देखा।

6. ख़लीफ़ा-ए-आदिल उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ की बीवी फ़ातिमा से आपकी इबादत के मुताल्लिक़ पूछा गया, तो उन्होंने जवाब दिया कि वह बहुत ज़्यादा नफ़ली इबादत और बहुत ज्यादा नफ़ली रोज़ा नहीं रखते थे, लेकिन उनसे ज़्यादा अल्लाह से डरने वाला किसी को नहीं देखा। जब वह बिस्तर पर अल्लाह को याद करते तो उनके ख़ौफ़ से

इस तरह कांपते जैसे ख़ौफ़ की शिद्दत से परिंदा फड़फड़ाता है (शज़ा अर-रिहायिन मीन अख़बार अस-सालेहीन)

7. इब्ने अबी हातिम ने अब्दुल अज़ीज बिन अबी दाऊद से रिवायत की है कि जब रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह आयत पढ़ी:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا قُوا أَنفُسَكُمْ وَأَهْلِيكُمْ نَارًا وَقُودُهَا النَّاسُ وَالْحِجَارَةُ (التحريم:6)

तर्जुमा: ऐ ईमान लाने वालों, तुम अपने आपको और अपने घरवालों को उस आग से बचाओ जिसका ईंधन इंसान और पत्थर हैं।

एक बुज़ुर्ग ने सवाल किया कि ऐ अल्लाह के रसूल! जहन्नम के पत्थर दुनिया की तरह है? तो आपने फ़रमाया: जहन्नम का एक पत्थर दुनिया के तमाम पहाड़ों से बड़ा है। इतना सुनना था कि वह बुज़ुर्ग बेहोश होकर गिर पड़े। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उनके दिल पर हाथ रखा, तो वह ज़िंदा थे। आपने कहा, कलिमा पढ़ो, उन्होंने कलिमा पढ़ ली। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसे जन्नत की बशारत (ख़ुशख़बरी) दी।

अल्लाह से डरने का इनाम:

(1) अल्लाह का फ़रमान है:

وَلِمَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهِ جَنَّتَانِ ، فَبِأَيِّ آلَاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ، ذَوَاتَا أَفْنَانٍ (الرحمن:4846)

तर्जुमा: और उस शख़्स के लिए जो अपने रब के सामने खड़ा होने से डरा, दो जन्नतें हैं, फिर तुम अपने रब की कौन-कौन सी नेमत को झुटलाओगे? (दोनों जन्नतें) बहुत सी टहनियों और शाख़ो वाली हैं।

(2) अल्लाह का फ़रमान है:

وَأَمَّا مَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهِ وَنَهَى النَّفْسَ عَنِ الْهَوَىٰ ، فَإِنَّ الْجَنَّةَ هِيَ الْمَأْوَىٰ (النازعات:40،41)

तर्जुमा: हां, जो शख़्स अपने रब के सामने खड़ा होने से डरता रहा और अपने नफ़्स को ख़्वाहिश से रोका रहा, तो उसका ठिकाना जन्नत ही है।

(3) अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

لا يلِجُ النَّارَ رجُلٌ بَكَى مِن خشيَةِ اللَّهِ حتَّى يَعودَ اللَّبنُ في الضَّرعِ ، ولا يجتَمِعُ غبارٌ في سبيلِ اللَّهِ ودخانُ جَهنَّمَ (صحيح الترمذي:1633)

तर्जुमा: अल्लाह के डर से रोने वाला जहन्नुम में दाख़िल नहीं होगा यहां तक कि दूध थन में वापस लौट जाए (और यह नामुमकिन है),

और जिहाद का गुबार और जहन्नुम का धुआं एक साथ जमा नहीं होंगे।

अल्लाह का ख़ौफ़ हासिल करने के असबाब:

(1) इख़लास से इल्म हासिल करना: अल्लाह का फ़रमान है:

إِنَّمَا يَخْشَى اللَّهَ مِنْ عِبَادِهِ الْعُلَمَاءُ (فاطر :28)

तर्जुमा: अल्लाह से डरने वाले इल्म वाले लोग हैं। अल्लामा इब्ने क़य्यिम रहिमहुल्लाह ने लिखा है कि बंदे को रब की जितनी पहचान होगी, उतना ही वह उससे डरने वाला होगा और इब्ने मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि अल्लाह से डरने के लिए इल्म काफ़ी है, ख़ौफ़ की कमी बंदों की रब की पहचान में कमी के सबब है।

आज इल्म वालों की कमी नहीं है, कमी है तो अल्लाह से डरने वालों की। क्या वजह है कि इल्म वाले अल्लाह से बेख़ौफ़ हो गए जब कि उन्हें अल्लाह से डरना चाहिए था? उसकी वजह यह है कि उन्होंने इख़लास से इल्म हासिल नहीं किया। इल्म को दुनिया तलबी और शोहरत का ज़रिया बना लिया, इसलिए अल्लाह से बेख़ौफ़ हो गए।

(2) तदब्बुर के साथ क़ुरआन की तिलावत: अल्लाह का फ़रमान है:

إِذَا تُتْلَىٰ عَلَيْهِمْ آيَاتُ الرَّحْمَٰنِ خَرُّوا سُجَّدًا وَبُكِيًّا(مريم: 58)

तर्जुमा: उनके सामने जब रहमान की आयात की तिलावत की जाती है, तो यह सजदा करते और रोते-गिड़गिड़ाते गिर पड़ते हैं।

अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह्या से बयान किया कि हदीस का कुछ हिस्सा अमर बिन मुर्राह से है (ब-वास्ता इब्राहीम) कि अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान किया कि मुझसे नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: मुझे क़ुरआन पढ़ कर सुनाओ। मैंने अर्ज़ किया, आपको मैं पढ़ कर सुनाऊं? वह तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ही नाज़िल होता है। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं दूसरे से सुनना चाहता हूं। चुनांचे मैंने आपको सूरह अन-निसा सुनानी शुरू की। जब मैं فكيف اذا جئنا من كل امة بشهيد وجئنا بك على هولاء شهيدا. पर पहुंचा तो आपने फ़रमाया ठहर जाओ। मैंने देखा तो आप (सल्ल.) की आंखों से आंसू बह रहे थे। (बुख़ारी:4582)

(3) अल्लाह का ज़िक्र और उन मोमिनों का हाल मालूम करना जो अल्लाह से डरने वाले थे कि कैसे उस दर्जे ईमान पर फ़ाइज़ हुए? अल्लाह का फ़रमान है:

إِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ الَّذِينَ إِذَا ذُكِرَ اللَّهُ وَجِلَتْ قُلُوبُهُمْ (الانفال:2)

तर्जुमा: बस ईमान वाले तो ऐसे होते हैं कि जब अल्लाह का ज़िक्र आता है, तो उनके दिल डर जाते हैं।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अर्शे इलाही के मुस्तहिक़ 7 सायेदार का ज़िक्र करते हुए फ़रमाया:

ورجلٌ ذكر اللهَ في خلاءٍ ففاضت عيناه (صحيح البخاري:6806)

तर्जुमा: और एक वह आदमी जिसने तन्हाई में अल्लाह को याद किया, पस उसकी आंखें अश्कबार हो गईं।

अल्लाह से डरने वाले मोमिन अल्लाह का ज़िक्र करने वाले, मज़बूत ईमान वाले, मुत्तक़ी और परहेज़गार, दिन में रोज़ा रखने वाले, रात में क़ियाम-उल-लैल करने वाले, और इबादत और भलाई के कामों में सबक़त ले जाने वाले लोग थे। अल्लाह का फ़रमान है:

إِنَّهُمْ كَانُوا يُسَارِعُونَ فِي الْخَيْرَاتِ وَيَدْعُونَنَا رَغَبًا وَرَهَبًا ۖ وَكَانُوا لَنَا خَاشِعِينَ (الانبياء:90)

तर्जुमा: यह लोग नेक कामों की तरफ़ जल्दी करते थे, और लालच और ख़ौफ़ से पुकारा करते थे, और हमारे सामने आजिज़ी करने वाले थे।

(4) मा'सियत का इर्तिकाब इंसान को अल्लाह से बेख़ौफ़ कर देता है, इसलिए गुनाहों से तौबा, मा'सियत और नाफ़रमानी से बचना, और फ़िस्क़ और फुजूर से दूरी, अल्लाह की मुहब्बत, रज़ा, ख़ौफ़ और क़ुर्बत का ज़रिया है।

(5) अज़ाब की आयतों पर ग़ौर और फ़िक्र करना, जहन्नम और उसकी हौलनाकी की फ़िक्र करते हुए, जहन्नम में ले जाने वाले असबाब से परहेज़ किया जाए।

(6) उन ज़ालिमों और नाफ़रमानों का हाल जिन्होंने अल्लाह से बेख़ौफ़ होकर दुनिया में ज़ुल्म और फ़साद किया, तो अल्लाह ने उनके साथ कैसा सलूक किया? अल्लाह का फ़रमान है:

وَكَمْ أَهْلَكْنَا قَبْلَهُم مِّن قَرْنٍ هُمْ أَشَدُّ مِنْهُم بَطْشًا فَنَقَّبُوا فِي الْبِلَادِ هَلْ مِن مَّحِيصٍ (ق:36)

तर्जुमा: और उनसे पहले भी हम बहुत सी उम्मतों को हलाक कर चुके हैं, जो उनसे ताक़त में बहुत ज़्यादा थे। वह शहरों में ढूंढते ही रह गए कि कोई भागने का ठिकाना है?

(7) क़यामत की हौलनाक घड़ी याद करे, जब सारे लोग नफ़्सा-नफ़्सी के आलम में होंगे, और उस दिन की हौलनाकी से सबके होश उड़ गए होंगे। अल्लाह ने इसकी मंज़रकशी की है:

يَا أَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوا رَبَّكُمْ ۚ إِنَّ زَلْزَلَةَ السَّاعَةِ شَيْءٌ عَظِيمٌ، يَوْمَ تَرَوْنَهَا تَذْهَلُ كُلُّ مُرْضِعَةٍ عَمَّا أَرْضَعَتْ وَتَضَعُ كُلُّ ذَاتِ حَمْلٍ حَمْلَهَا وَتَرَى النَّاسَ سُكَارَىٰ وَمَا هُم بِسُكَارَىٰ وَلَٰكِنَّ عَذَابَ اللَّهِ شَدِيدٌ

(الحج:1،2)

तर्जुमा: लोगो, अपने परवरदिगार से डरो। बिना शक़ क़यामत का ज़लज़ला बहुत ही बड़ी चीज़ है। जिस दिन तुम उसे देखोगे, हर दूध पिलाने वाली अपने दूध पीते बच्चों को भूल जाएगी और तमाम गर्भवती महिलाओं के गर्भ गिर जाएंगे। तुम देखोगे कि लोग मदहोश दिखाई देंगे, हालाँकि दरअसल वे नशे में नहीं होंगे, लेकिन अल्लाह का अज़ाब बहुत ही सख़्त होगा।

(8) नसीहत आमोज़ सच्चे वाक़िआत और दिलों को मोम करने वाले और वाज़ और नसीहत से पुर-बयानात सुनो। इससे दिल नरम होता है और अल्लाह का ख़ौफ़ पैदा होता है।

इरबाज़ बिन सारियाह रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं:

وعظَنا رسولُ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ عليْهِ وسلَّمَ يومًا بعدَ صلاةِ الغداةِ موعِظةً بليغةً ذرِفَت منْها العيونُ ووجِلَت منْها القلوبُ [صحيح الترمذي:2676]

तर्जुमा: रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने एक दिन हमें फ़ज्र कि नमाज़ के बाद एक मुअस्सर नसीहत फ़रमाई जिससे लोगों की आँखें आँसूओं से भीग गईं और दिल कांप उठे।

इन तरीक़ों से हम अल्लाह का ख़ौफ़ अपने दिल में पैदा कर सकते हैं और हमारे लिए ज़रूरी भी है कि अल्लाह का ख़ौफ़ अपने अंदर पैदा करें ताकि उसके दीन पर सही से चल सकें। फ़राइज़ और वाजिबात में कोताही करने पर दिल बेचैन हो सके और मुहर्रमात (हराम चीज़ों) के क़रीब जाते वक्त ख़ौफ़ ए इलाही रोक दे। 'उमूमन ख़ौफ़ और ख़शियत ही मारूफ़ बजा-आवरी और मुनकिरात से बचने की बड़ी वजह बनती है। जो अल्लाह का ख़ौफ़ खाएगा, फिर उसे किसी का ख़ौफ़ नहीं होगा। ख़ौफ़ ए इलाही तकमील ए ईमान और अच्छे इस्लाम की दलील है। अल्लाह के ख़ौफ़ से दिल में नर्मी, पाकीज़गी (पवित्रता), उल्फ़त और मोहब्बत पैदा होती है और औसाफ़ ए रज़ीला, मसलन तकब्बुर, बुग्ज़, 'इनाद, सरकशी का ख़त्मा होता है। ख़ौफ़ ए रहमान का सबसे

बड़ा फ़ायदा आख़िरत में मिलेगा कि वह ऐसे बंदों को अल्लाह अमन नसीब करेगा और जहन्नम से निकालकर जन्नत में दाख़िल करेगा।

अल्लाह से दुआ है कि हमें ख़ौफ़ और ख़शियत की सिफ़त से मुत्तसिफ़ करे, मुहर्रमात से बचाए और अवामिर (अहकाम इलाही) की बजा आवरी की तौफ़ीक़ बख़्शे। आमीन।

====================

[5].अहल-ए-बैत और उनका मक़ाम-ओ-मर्तबा

काइनात (दुनिया-जहाँ) की सबसे अफज़ल हस्ती, सय्यदुल बशर और इमामुल अंबिया के घराने वालों को अहले बैत कहा जाता है। इस नसब और ख़ानदान से होना दुनिया का सबसे बड़ा एज़ाज़ (सम्मान) और इकराम है, यही वजह है कि बहुत से अरबी और अजमी मुसलमान इस ए'ज़ाज़ और इकराम को पाने के लिए बिना सबूत के ख़ुद को सय्यदी, हाशमी और सादाती लिखते और बतलाते हैं। अहले बैत के नाम पर सिर्फ़ ए'ज़ाज़ और इकराम पाने की बात नहीं है बल्कि मुस्लिम समाज को बड़े अफ़सोसनाक मसाइल भी दरपेश हैं, आपस में ख़लफ़शार, तनाज़ो, सब-ओ-शत्म और तकफ़ीर-ओ-तज़लील के भयानक असरात पाए जाते हैं। मैंने इस मज़मून में इख़्तिसार के साथ अहले बैत के मक़ाम और मर्तबा को उजागर करने की कोशिश की है, दिल में एक छोटी सी निय्यत ये रखी है कि लोग अहले बैत को जानें और उनको सही मक़ाम दें और इस बाबत नासबिय्यत और राफज़िय्यत से परहेज़ करें। नासबिय्यत क्या है, अहले बैत को तकलीफ़ पहुंचाना, उनको सब-ओ-शत्म करना और उनके शान में गुस्ताख़ी करना और राफज़िय्यत नाम है अहले बैत के नाम पर चंद अफ़राद की मोहब्बत

में हद से ज़्यादा ग़ुलू करना और दीगर अहले बैत और बहुत सारे सहाबा को लान-ओ-त'अन करना।

अहले बैत कौन हैं, पहले ये बात जान लेते हैं क्योंकि आम अवाम की अक्सरियत को अहले बैत का भी सही इल्म नहीं है। अहले बैत का मतलब घराने वाले, इससे मुराद नबी ﷺ के वो तमाम घर वाले जिन पर सदक़ा हराम है। इनमें आपकी औलाद (ज़ैनब, रुक़ैया, उम्मे कुलसूम और फ़ातिमा), नाती-नातिन, आपके चाचा (हमज़ा और अब्बास), आपकी फूफी (सफ़िया), आपकी तमाम बीवियाँ (ख़दीजा, आयशा, सऊदा, हफ़्सा, उम्मे सलमा, ज़ैनब बिन्त ख़ुज़ैमा, जुवैरिया, सफ़िया, उम्मे हबीबा, मैमूना और ज़ैनब बिन्त जहश) और बनू हाशिम के सारे मुसलमान मर्द और औरत शामिल हैं।

नबी ﷺ की बेटियाँ अहले बैत में हैं, इसकी दलील की ज़रूरत नहीं है। हालांकि चाचा भी अहले बैत में से हैं, इसकी ख़ास दलील ज़िक्र करता हूँ। नबी ﷺ के चाचा हारिस के बेटे रबीआ और रबीआ के बेटे अब्दुल मुत्तलिब जो कि सहाबी हैं और उनसे हदीस भी मरवी है। ये (अब्दुल मुत्तलिब बिन रबीआ) और नबी ﷺ के चाचा अब्बास रज़ी अल्लाहु अन्हु के बेटे फ़ज़्ल, दोनों आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुए और कहा कि

हमें माल सदक़ा पर आमिल/मज़दूर मुक़र्रर करलें ताकि इस कमाई से शादी की तैयारी कर सकें तो आप ﷺ ने फ़रमाया:

إِنَّ الصَّدَقَةَ لا تَنْبَغِي لِآلِ مُحَمَّدٍ إِنَّما هي أَوْسَاخُ النَّاسِ(صحيح مسلم:1072)

तर्जमा: आल-ए-मुहम्मद के लिए सदक़ा हलाल नही, यह तो लोगों (के माल) का मेल-कुचैल हैं।

सहीह बुख़ारी में है कि ख़ैबर के ख़ुमुस में से नबी ﷺ ने बनू हाशिम और बनू मुत्तलिब को दिया और दूसरे क़ुरैश को न दिया। तो ज़ुबैर बिन मुत्तिम और उस्मान बिन अफ़्फ़ान रज़ियल्लाहु अन्हुमा नबी ﷺ के पास आए और अर्ज़ की कि आपने बनू मुत्तलिब को तो माल दिया मगर हमें नज़रअंदाज़ कर दिया जबकि हम और वो आपसे एक ही दर्जे की क़राबत रखते हैं। इस पर आप ﷺ ने फ़रमाया:

«إِنَّمَا بَنُو المُطَّلِبِ، وَبَنُو هَاشِمٍ شَيْءٌ وَاحِدٌ»(صحيح البخارى:3140)

तर्जमा: बनू मुत्तलिब और बनू हाशिम तो एक ही चीज़ है।

एक रिवायत में यह इज़ाफ़ा है कि हज़रत ज़ुबैर बिन मुत्तिम रज़ियल्लाहु तआला अन्हु ने कहा कि नबी करीम ﷺ ने बनू शम्स और बनू नौफल को नहीं दिया था।

बनू हाशिम, बनू मुत्तलिब, बनू शम्स और बनू नौफल ये आपस में चार भाई थे मगर आपने सिर्फ़ दो को ख़ुमुस दिया और इन दोनों को एक क़रार दिया। इस वजह से कुछ अहले इल्म ने यह इस्तिदलाल किया है कि अहले बैत में जिन पर सदक़ा हराम है, उनमें बनू हाशिम के साथ बनू मुत्तलिब भी हैं, यानी बनू हाशिम की तरह बनू मुत्तलिब भी अहले बैत में शामिल हैं।

मुस्लिम शरीफ़ में एक रिवायत है जिससे शिया, अवाम को यह धोखा देते हैं कि अज़्वाज मुतह्हरात आल-ए-बैत में से नहीं हैं। वह रिवायत इस तरह से आई है।

فَقُلْنَا: مَنْ أَهْلُ بَيْتِهِ؟ نِسَاؤُهُ؟ قَالَ: لَا (مسلم: 2408)

इस टुकड़े का तर्जमा (अनुवाद) किया जाता है "हमने कहा आल-ए-बैत कौन लोग हैं, नबी ﷺ की बीवियाँ? तो उन्होंने कहा कि नहीं।

इसका असल तर्जमा और मतलब इस तरह है कि हमने उनसे पूछा: आपके अहले बैत कौन हैं? (सिर्फ़) आपकी अज़्वाज? तो उन्होंने कहा कि (सिर्फ़ आपकी अज़्वाज) नहीं। यानी आपकी ﷺ की अज़्वाज के

अलावा और दूसरे भी आल-ए-बैत में शामिल हैं। चुनांचे सहीह मुस्लिम में ही इससे पहले वाली हदीस के अल्फ़ाज़ हैं।

"فَقَالَ لَهُ حُصَيْنٌ: وَمَنْ أَهْلُ بَيْتِهِ؟ يَا زَيْدُ أَلَيْسَ نِسَاؤُهُ مِنْ أَهْلِ بَيْتِهِ؟ قَالَ: نِسَاؤُهُ مِنْ أَهْلِ بَيْتِهِ"

यानि और हुसैन ने कहा कि ऐ ज़ैद! आप ﷺ के अहले बैत कौन हैं, क्या आप ﷺ की अज़्वाज-ए-मुतह्हरात अहले बैत नहीं हैं? सय्यदना ज़ैद रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा कि अज़्वाज-ए-मुतह्हरात भी अहले बैत में दाख़िल हैं।

सहीह मुस्लिम की एक और रिवायत से धोखा दिया जाता है कि क़ुरआन में मज़कूर अहले बैत की तफ़सीर में सिर्फ़ चार लोग ही शामिल हैं, वो अली, फ़ातिमा और हसन-हुसैन हैं। रिवायत इस तरह से है: उम्मुल मोमिनीन आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अन्हा कहती हैं:

خَرَجَ النَّبِيُّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ غَدَاةً وَعَلَيْهِ مِرْطٌ مُرَحَّلٌ، مِنْ شَعْرٍ أَسْوَدَ، فَجَاءَ الْحَسَنُ بْنُ عَلِيٍّ فَأَدْخَلَهُ، ثُمَّ جَاءَ الْحُسَيْنُ فَدَخَلَ مَعَهُ، ثُمَّ جَاءَتْ فَاطِمَةُ فَأَدْخَلَهَا، ثُمَّ جَاءَ عَلِيٌّ فَأَدْخَلَهُ، ثُمَّ قَالَ: " {إِنَّمَا يُرِيدُ اللهُ لِيُذْهِبَ عَنْكُمُ الرِّجْسَ أَهْلَ الْبَيْتِ وَيُطَهِّرَكُمْ تَطْهِيرًا} [الأحزاب: 33] "(صحيح مسلم:2424)

तर्जमा: रसूलुल्लाह ﷺ सुबह को निकले और आप ﷺ एक चादर ओढ़े हुए थे जिस पर कजावों की सूरतें या हांडियों की सूरतें बनी हुई थीं। इतने में सय्यदना हसन रज़ियल्लाहु अन्हु आए तो आप ﷺ ने उनको इस चादर के अंदर कर लिया। फिर सय्यदना हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु आए तो उनको भी इसमें शामिल कर लिया। फिर सय्यदा फातिमातुज़्ज़हरा रज़ियल्लाहु अन्हा आईं तो उनको भी इन्हीं के साथ शामिल कर लिया। फिर सय्यदना अली रज़ियल्लाहु अन्हु आए तो उनको भी शामिल करके फ़रमाया कि "अल्लाह तआला चाहता है कि तुमसे नापाकी को दूर करे और तुम्हें पाक करे, ऐ घर वालो।"

इस हदीस में चार अफ़राद के ज़िक्र का हरगिज़ मतलब नहीं कि अहले बैत में इन चार के अलावा दूसरे अफ़राद शामिल नहीं हैं। आयत में असल ख़िताब अज़वाज मुतह्हरात को है, इस वजह से वो क़तई तौर पर अहले बैत में शामिल हैं जैसा कि ऊपर सहीह मुस्लिम की सरीह हदीस भी गुज़री है और भी दीगर दलाइल-ओ-शवाहिद हैं कि आप ﷺ की बीवियां और चाचा सब भी अहले बैत में हैं। सय्यदा आयशा के पास ख़ालिद बिन सईद ने सदक़े के तौर पर गाय भेजी तो उन्होंने कहा कि बेशक हम आल-ए-मुहम्मद के लिए सदक़ा हलाल नहीं है। (मुसन्निफ़ इब्न अबी शैबा: 10708) और अब्बास और रबीआ के बेटों

को नबी ﷺ ने सदक़ा की कमाई से निकाह न करके माल ख़ुमुस से निकाह कराया था जिसका ज़िक्र भी ऊपर हो चुका है।

अहले बैत के मक़ाम-ओ-मर्तबा को उजागर करते हुए अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने इर्शाद फ़रमाया:

إِنَّمَا يُرِيدُ اللَّهُ لِيُذْهِبَ عَنكُمُ الرِّجْسَ أَهْلَ الْبَيْتِ وَيُطَهِّرَكُمْ تَطْهِيرًا (الأحزاب:33)

तर्जमा: अल्लाह तआला यही चाहता है कि ऐ नबी के घरवालियो! तुमसे हर क़िस्म की गंदगी को दूर कर दे और तुम्हें ख़ूब पाक कर दे।

इस आयत की रोशनी में अहले बैत, ख़ासकर अज़वाज मुतह्हरात की पाकीज़गी, आला फ़ज़ीलत और बुलंद मक़ाम-ओ-मर्तबा का पता चलता है। हज़रत वासिला बिन अस्क़ा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु बयान करते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह ﷺ को यह फ़रमाते हुए सुना:

إنَّ اللَّهَ اصْطَفَى كِنانَةَ مِن ولَدِ إسْماعِيلَ، واصْطَفَى قُرَيْشًا مِن كِنانَةَ، واصْطَفَى مِن قُرَيْشٍ بَنِي هاشِمٍ، واصْطَفانِي مِن بَنِي هاشِمٍ. (صحيح مسلم:2276)

तर्जमा: अल्लाह तआला ने हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम की औलाद में से क़िनानाह को चुन लिया और क़िनानाह में से क़ुरैश को चुना

और क़ुरैश में से बनू हाशिम को चुना और बनू हाशिम में से मुझे चुना।

ग़दीर ख़ुम के मक़ाम पर अपने ख़िताब में किताबुल्लाह की तर्ग़ीब और तमस्सुक के बाद आप ﷺ का तीन बार यह कहना बड़ी अहमियत का हामिल है।

أُذَكِّرُكُمُ اللّٰهَ فِي أَهْلِ بَيْتِي، أُذَكِّرُكُمُ اللّٰهَ فِي أَهْلِ بَيْتِي، أُذَكِّرُكُمُ اللّٰهَ فِي أَهْلِ بَيْتِي(صحيح مسلم:2408)

तर्जमा: मैं अल्लाह की याद दिलाता हूँ तुमको अपने अहले बैत के बाब में, मैं अल्लाह की याद दिलाता हूँ तुमको अपने अहले बैत के बाब में, मैं अल्लाह की याद दिलाता हूँ तुमको अपने अहले बैत के बाब में।

सहीह मुस्लिम में सआद बिन वक़ास से मरवी है:

وَلَمَّا نَزَلَتْ هٰذِهِ الآيَةُ: {فَقُلْ تَعَالَوْا نَدْعُ أَبْنَاءَنَا وَأَبْنَاءَكُمْ} دَعَا رَسولُ اللهِ صَلَّى اللّٰهُ عليه وَسَلَّمَ عَلِيًّا وَفَاطِمَةَ وَحَسَنًا وَحُسَيْنًا فقالَ: اللَّهُمَّ هَؤُلَاءِ أَهْلِي.(صحيح مسلم:2404)

तर्जमा: और जब यह आयत उतरी «نَدْعُ أَبْنَاءَنَا وَأَبْنَاءَكُمْ» "हम अपने बेटों को और तुम अपने बेटों को बुलाओ।" (यानि आयत मुबाहिला) तो आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सय्यदना अली रज़ियल्लाहु अन्हु और सय्यदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा और हसन और हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हुमा को बुलाया, फिर फ़रमाया: या अल्लाह! ये मेरे अहल हैं।

नबी ﷺ का फ़रमान है:

كلُّ سَبَبٍ و نَسَبٍ مُنْقَطِعٌ يومَ القيامةِ ، إلَّا سَبَبِي و نَسَبِي(السلسلة الصحيحة:2036)

तर्जमा: क़यामत के दिन हर वास्ता और नसबी ताल्लुक़ ख़त्म हो जायेगा अलबत्ता मेरा वास्ता और नसबी ताल्लुक़ क़ाइम रहेगा।

क़ुरआन की आयत से भी यह मफ़हूम वाज़ेह होता है, अल्लाह का फ़रमान है:

فَإِذَا نُفِخَ فِي الصُّورِ فَلَا أَنسَابَ بَيْنَهُمْ يَوْمَئِذٍ وَلَا يَتَسَاءَلُونَ (المومنون:101)

तर्जमा: पस जब सूर फूंक दिया जाएगा उस दिन न तो आपसी रिश्ते ही रहेंगे, न आपसी पूछताछ।

अहले बैत के बड़े फ़ज़ाइल मिलते हैं, ये अहले बैत से मुताल्लिक़ कुछ फ़ज़ाइल थे। अगर फ़र्दा-फ़र्दा रसूल के अहले बैत के फ़ज़ाइल बयान किए जाएं तो कई किताबें तैयार हो जाएंगी। अहले इल्म ने अलग-अलग तरीक़ों से फ़ज़ाइल बयान किए हैं। मुहद्दिसीन ने किताबुल हदीस में नामों से बाब क़ाइम किया है जबकि सीरत निगारों ने अलग-अलग मुस्तक़िल किताबें भी तर्तीब दी हैं।

बहर-कैफ़ (बहरहाल)! अहले बैत ज़मीन पर पाक हस्तियों का नाम है, उनकी इज़्ज़त-ओ-तौक़ीर, उनका इज़्ज़त-ओ-तक़द्दुस और उनसे मोहब्बत-ओ-अक़ीदत मुसलमानों का हिस्सा-ईमान है और जो अहले बैत में से किसी भी फ़र्द से भी अदावत रखता है, वो मुनाफ़िक़ और नासबी है।

قالَ عَلِيٌّ: والذي فَلَقَ الحَبَّةَ، وبَرَأَ النَّسَمَةَ، إنَّه لَعَهْدُ النبيِّ الأُمِّيِّ صَلَّى اللَّهُ عليه وسلَّمَ إلَيَّ: أنْ لا يُحِبَّنِي إلَّا مُؤْمِنٌ، ولا يُبْغِضَنِي إلَّا مُنافِقٌ.(صحيح مسلم: 78)

तर्जमा: सय्यदना अली रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया: क़स्म है उस पर जिसने दाना चीर दिया (फिर उसने घास उगाई) और जान बनाई। रसूलुल्लाह सलल्लाहु अल्लैही व ने मुझसे अहद किया था कि मुझसे मोहब्बत नहीं रखेगा मगर मोमिन और मुझसे दुश्मनी नहीं रखेगा

मगर मुनाफ़िक़ यह मज़मून जिस मक़सद के तहत लिखा हूँ वो यह है कि लोग अहले बैत को जानें कि कौन-कौन लोग इसमें शामिल हैं फिर उन नुफ़ूस क़ुद्सिया की तौक़ीर उसी तरह अदा करें जैसे कि क़ुरआन और हदीस में हमारी रहनुमाई की गई है। न तो उनकी शान में गुस्ताख़ी करें जैसे नवासिब और ख़्वारिज करते हैं और न ही ग़ुलू करें जैसे शिआ और राफ़िज़ करते हैं। उम्मत मोहम्मदीया में रसूलुल्लाह ﷺ के बाद सबसे अफ़ज़ल हस्ती अबू बक्र फिर उमर फिर उस्मान हैं जैसा कि सय्यदना अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है:

كنا نقولُ ورسولُ اللهِ صلَّى اللهُ عليهِ وسلَّم حَيٌّ : أفضلُ أمةِ النبيِّ صلَّى اللهُ عليهِ وسلَّم بعدَه أبو بكرٍ، ثم عمرُ، ثم عثمانُ(صحيح أبي داود:4628)

तर्जमा: हम कहा करते थे जबकि रसूलुल्लाह ﷺ ज़िन्दा थे: नबी करीम ﷺ की उम्मत में आप ﷺ के बाद सबसे अफ़ज़ल अबू बक्र हैं, फिर उमर और फिर उस्मान रज़ी अल्लाहु अन्हु।

यह अक़ीदा न सिर्फ़ आम सहाबा का था बल्कि हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु भी यही मानते और अक़ीदा रखते थे। चुनांचे

सय्यदना अली रज़ियल्लाहु अन्हु के बेटे मोहम्मद बिन हनफ़िय्या से मरवी है कि वह कहते हैं कि मैंने अपने वालिद से पूछा:

أَيُّ الناسِ خيرٌ بعد رسولِ اللهِ صلَّى اللهُ عليهِ وسلَّم ؟ قال : أبو بكرٍ ، قال : قلتُ : ثُمَّ مَن ؟ قال : ثم عمرُ ، قال : ثم خَشِيتُ أن أقولَ : ثُمَّ مَن فيقولُ : عثمانُ . فقلتُ : ثم أَنْتَ يا أَبَةِ ؟ قال : ما أنَا إلا رجلٌ من المسلمينَ(صحيح أبي داود:4629)

तर्जमा: रसूलुल्लाह ﷺ के बाद सबसे अफ़ज़ल कौन है? उन्होंने कहा हज़रत अबू बकर रज़ियल्लाहु अन्हु। मैंने कहा: फिर कौन? कहा हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु। फिर मुझे डर हुआ कि अगर मैंने पूछा कि उनके बाद कौन है तो वे कहेंगे हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु। तो मैंने ख़ुद ही कह दिया: फिर तो आप ही हो अब्बा जान! वे कहने लगे कि मैं तो मुसलमानों में से एक आम आदमी हूँ।

शिआ के यहाँ यह तर्तीब नहीं है। वे अली रज़ियल्लाहु अन्हु को ही पहला नंबर देते हैं और ख़ुलफ़ा-ए-सोलासा अबू बक्र, उमर, और उस्मान के ख़िलाफ़ बदज़बानी करते हैं, गालियाँ देते हैं, इस क़दर अदावत है कि इन नामों पर अपने बच्चों का नाम भी नहीं रखते, और चार लोग (अली, फ़ातिमा, हसन, हुसैन) के अलावा अहले बैत में किसी को तस्लीम नहीं करते।

अमीरुल मोमिनीन सय्यदना अबू बक्र सिद्दीक़ की अहले बैत से मोहब्बत देखें:

والذي نَفْسِي بيَدِهِ لَقَرابَةُ رَسولِ اللَّهِ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ أحَبُّ إلَيَّ أنْ أصِلَ مِن قَرابَتِي(صحيح البخاري:4240)

तर्जमा: उस ज़ात की क़स्म! जिसकी हाथ में मेरी जान है, रसूलुल्लाह सलल्लाहु अल्लैही व सल्लम की क़राबत के साथ सिला-ए-रहिमी मुझे अपनी क़राबत से सिला-ए-रहिमी से ज़्यादा अज़ीज़ है।

उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु, अल्लाह से दुआ करते हुए कहते हैं:

اللَّهُمَّ إنَّا كُنَّا نَتَوَسَّلُ إلَيْكَ بنَبِيِّنَا صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ فَتَسْقِينَا، وإنَّا نَتَوَسَّلُ إلَيْكَ بعَمِّ نَبِيِّنَا فَاسْقِنَا۔(صحيح البخاري:3710)

तर्जमा: ऐ अल्लाह, पहले हम अपने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बारिश की दुआ कराते थे तू हमें सैराबी अता करता था और अब हम अपने नबी के चाचा (अब्दुल्लाह बिन अब्दुल मुत्तलिब) के ज़रिए बारिश की दुआ करते हैं।

और सय्यदना उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु का हाल देखें, जब वे अपने घर में घेर लिए गए थे तो उस वक्त वहां हसन आपकी हिफ़ाज़त

(रक्षा) के लिए तलवार के साथ मौजूद थे और लड़ना चाहते थे, मगर हज़रत उस्मान ने अल्लाह का वास्ता देकर उन्हें अपने घर भेज दिया ताकि उन्हें कोई तकलीफ़ न पहुंचे और हज़रत अली को भी कोई तकलीफ़ न पहुंचे। (अल-बिदाया वल-निहाया 11/193)

बिलकुल सही, ये लोग अहले बैत से मोहब्बत करते थे और अहले बैत भी इनसे मोहब्बत करते थे। हज़रत अली के बेटों में हसन और हुसैन के अलावा अबू बक्र, उमर और उस्मान भी हैं। हसन और हुसैन की औलाद में भी अबू बक्र और उमर मौजूद हैं, बल्कि कर्बला में हुसैन के साथ अली के बेटे अबू बक्र और उस्मान, हसन के बेटे अबू बक्र और उमर और हुसैन के बेटे उमर भी शहीद हुए।

शिया की तो बात छोड़ें, मुसलमानों का एक मख़सूस तबक़ा (विशेष वर्ग) भी शिआ की तरह अली और हुसैन की मोहब्बत में ग़ुलू करता है और दूसरे मुसलमानों को, ख़ुसूसन अहले हदीस को अहले बैत का गुस्ताख़ कहता है और अहले हदीस उलेमा को नासबी कहकर पुकारता है। अहले हदीस जमात मन्हज सलफ़ पर गामज़न है, वे न ग़ुलू करती है और न ही अहले बैत, औलिया, सालिहीन और इमामों की शान में

गुस्ताख़ी करती है। यह जमात उन लोगों को वही मक़ाम देती है जो अल्लाह और उसके रसूल ने दिया है।

हज़रत अली का मक़ाम अबू बक्र, उमर और उस्मान के बाद है, अहले हदीस वही मक़ाम देते हैं। ये एक इंसान थे, इंसान ही मानते हैं, जबकि गुलू करने वाले अली को मुश्किल कुशा कहते हैं और उलूहियत के मक़ाम पर फ़ाइज़ कर देते हैं, यह सरासर शिर्क है, ऐसा अक़ीदा रखने वाला मुशरिक हो जाता है।

सहीह हदीसों में हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु के बेनज़ीर फ़ज़ाइल हैं, मगर गुलू करने वालों ने, विशेषकर रवाफ़िज़ ने आपकी शान में इस क़दर झूठी हदीसें गढ़ी हैं कि इस क़दर झूठी हदीसें किसी और सहाबी के बारे में नहीं गढ़ी गईं। इस वजह से फ़ज़ाइल अली में हमें जब भी कोई हदीस मिले तो पहले उसकी सेहत जानें कि क्या यह हदीस सही है या ज़ईफ़ है?

हज़रत हुज़ैफा रज़ियल्लाहु अन्हु को मुख़ातिब करते हुए हज़रत फ़ातिमा और हसन और हुसैन के बारे में नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

إنَّ هذا ملَكٌ لم ينزلِ الأرضَ قطُّ قبلَ اللَّيلةِ استأذنَ ربَّهُ أن يسلِّمَ عليَّ ويبشِّرَني بأنَّ فاطمةَ سيِّدةُ نساءِ أَهْلِ الجنَّةِ وأنَّ الحسَنَ والحُسَيْنَ سيِّدا شبابِ أَهْلِ الجنَّةِ(صحيح الترمذي:3781)

तर्जमा: यह एक फ़रिश्ता था जो इस रात से पहले ज़मीन पर कभी नहीं उतरा था। उसने अपने रब से मुझे सलाम करने और यह ख़ुशख़बरी देने की इजाज़त मांगी कि फ़ातिमा जन्नती औरतो की सरदार हैं और हसन और हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हुमा जन्नत के नौजवानों (यानि जो दुनिया में जवान थे) के सरदार हैं।

माँ की तरह उनके दोनों बेटे भी जन्नतियों के सरदार हैं। यह बहुत बड़ी फ़ज़ीलत है। इसके अलावा, हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि पैगंबर ﷺ ने मुसलमानों को हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु, हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा, और हसन और हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हुमा से मोहब्बत की तरग़ीब दी है। अली से मुताल्लिक़ मोहब्बत वाली हदीस ऊपर गुज़र चुकी है, फ़ातिमा से मुताल्लिक़ आपका फ़रमान है:

إنَّما فاطِمةُ بَضعَةٌ منِّي يؤذيني ما آذاها وينصِبني ما أنصبَها(صحيح الترمذي:3869)

तर्जमा: फ़ातिमा मेरे जिस्म (शरीर) का टुकड़ा है, मुझे तकलीफ़ देती है वह चीज़ जो उसे तकलीफ़ देती है, और "तअब" में डालती है मुझे वह चीज़ जो उसे "तअब" में डालती है।

औसामा बिन ज़ैद रज़ियल्लाहु अन्हुमा कहते हैं कि मैं एक रात किसी ज़रूरत से नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास आया, आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम निकले तो आप एक ऐसी चीज़ लपेटे हुए थे जिसे मैं नहीं पहचान पा रहा था कि क्या है। फिर जब मैं अपनी ज़रूरत से फ़ारिग़ हुआ तो मैंने पूछा: यह क्या है जिसे आप लपेटे हुए हैं? तो आपने उसे खोला, तो

वह हसन और हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हुमा थे, आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के कुल्हे से चिपके हुए थे, फिर आपने फ़रमाया:

هذانِ ابنايَ وابنا ابنتِيَ ، اللَّهمَّ إنِّي أحبُّهما فأحبَّهما وأحبَّ مَن يحبُّهما(صحيح الترمذي:3769)

तर्जमा: ये दोनों मेरे बेटे और मेरे नवासे हैं। ऐ अल्लाह! मैं इन दोनों से मोहब्बत करता हूँ, तू भी इनसे मोहब्बत कर और उससे भी मोहब्बत कर जो इनसे मोहब्बत करे।

इन चारों (अली, फ़ातिमा, हसन, हुसैन) से जिस तरह हम मोहब्बत करेंगे, उसी तरह अहले बैत के दीगर अफ़राद (अन्य व्यक्तियों) से भी मोहब्बत करना ईमान कहलाएगा। ऐसा नहीं है कि इनसे मोहब्बत के

इज़हार में ज़मीन और आसमान को मिला दें और फ़ातिमा के अलावा दीगर बेटियाँ, उम्मुल मोमिनीन और बनु हाशिम और बनु मुत्तलिब के दीगर मुसलमानों के लिए दिल में तंगगी महसूस करें।

और आज ऐसा ही हो रहा है, रवाफ़िज़ उम्मुल मोमिनीन सय्यदा आयशा को गंदी गालियाँ देते हैं, फ़ातिमा के अलावा दूसरी बेटियों की तौहीन करते हैं, अबू बक्र, उमर, उस्मान और अमीर मुआविया रज़ियल्लाहु ताअला अन्हुम अजमईन पर लानत और गालियाँ देते हैं। इनसे मुतास्सिर (प्रभावित) होकर बहुत से मुसलमान भी अहले बैत की आड़ में सहाबा-ए-किराम को निशाना बनाते हैं। उनके बारे में नाजायज़ और गुस्ताख़ाना अल्फ़ाज़ इस्तेमाल करते हैं। अल्लाह ताआला सभी सहाबा से राज़ी हो गया तो हमें भी सभी सहाबा से मोहब्बत करनी चाहिए चाहे वे अहले बैत में से हों या नहीं।

सहाबा से मोहब्बत करना ईमान की निशानी और पहचान है और उन्हें गाली देने वाला अल्लाह की लानत का हक़दार है।

अनस बिन मालिक रज़ी अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

آيَةُ الإيمانِ حُبُّ الأنْصارِ، وآيَةُ النِّفاقِ بُغْضُ الأنْصارِ.(صحيح البخاري:17)

तर्जमा: अंसार से मोहब्बत रखना ईमान की निशानी है और अंसार से दुश्मनी रखना निफ़ाक़ की निशानी है।

अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह सलल्लाहु अल्लैही व सल्लम ने फ़रमाया:

لا تسبوا أصحابي ، فوالذي نفسي بيدِه ، لو أنفقَ أحدُكم مثلَ أُحُدٍ ذهبًا ما بلغَ مدَّ أحدِهم ولا نَصِيفَه(صحيح أبي داود:4658)

तर्जमा: मेरे सहाबा को बुरा-भला न कहो, उस ज़ात की क़स्म! जिसके हाथ में मेरी जान है, अगर तुम में से कोई उहुद (पहाड़) के बराबर सोना ख़र्च कर दे तो वह उनके एक मद या आधे मद के बराबर भी नहीं होगा।

नबी ﷺ का फ़रमान है:

لعَنَ اللهُ مَنْ سبَّ أصحابِي(صحيح الجامع:5111)

तर्जमा: अल्लाह तआला की लानत हो उस शख़्स पर जो मेरे सहाबा को बुरा-भला कहे।

कर्बला एक हादसा है, बेशक हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु को शहीद करने वाले लानत के हक़दार हैं लेकिन बिना सबूत के और तख़सीस करके किसी मुसलमान पर लानत भेजना जायज़ नहीं है। यज़ीद एक मुसलमान था, उस पर भी लानत नहीं भेजेंगे क्योंकि वह क़ातिल था या हुसैन के क़त्ल का किसी को हुक्म (आदेश) दिया था ऐसा कोई सबूत नहीं है। हां, इस तरह लानत भेज सकते हैं कि क़ातिलो (हत्यारों) पर अल्लाह की लानत हो, ज़ालिमों पर अल्लाह की लानत हो।

इस सिलसिले में आख़िरी बात यह है कि बहुत से मुसलमान बिना सबूत के ख़ुद को हाशमी मानते हैं और अहले बैत से होने का दावा करते हैं। ऐसे लोगों को नबी ﷺ के इस फ़रमान से सबक़ लेना चाहिए। अबू ज़र रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि उन्होंने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सुना, आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमा रहे थे:

مَنِ ادَّعَى قَوْمًا ليسَ له فيهم، فَلْيَتَبَوَّأْ مَقْعَدَهُ مِنَ النَّارِ.(صحيح البخاري:3508)

तर्जमा: जिस शख़्स ने भी अपने नसब (ख़ानदान) को ऐसी क़ौम से जोड़ा जिसका उससे कोई (नसबी) त'अल्लुक़ नहीं है, तो वह अपनी जगह जहन्नम में बना ले।

अहल-ए-बैत की फ़ज़ीलत

आप ﷺ मेम्बर पर तशरीफ़ फ़रमा थे और हसन (रज़ि०) आप के पहलू में थे आप कभी लोगों की तरफ़ मुतवज्जेह होते और फिर हसन (रज़ि०) की तरफ़ और फ़रमाते : मेरा ये बेटा सरदार है और उम्मीद है कि अल्लाह तआला उसके ज़रिए मुसलमानों की दो जमाअतों मैं सुलह कराएगा।

(सहीह बुख़ारी: 3746)

रसूलुल्लाह ﷺ की तमाम बीवियों मैं जितनी ग़ैरत मुझे ख़दीजा (रज़ि०) से आती थी इतनी किसी और से नहीं आती थी हालाँकि उन्हें मैंने देखा भी नहीं था लेकिन नबी करीम ﷺ उन का ज़िक्र कसरत से फ़रमाया करते थे और अगर कोई बकरी ज़बह करते तो उसके टुकड़े-टुकड़े करके ख़दीजा (रज़ि०) की मिलने वालियों को भेजते थे। मैंने अक्सर नबी करीम (सल्ल०) से कहा जैसे दुनिया में ख़दीजा (रज़ि०) के सिवा कोई औरत है ही नहीं ! इस पर आप ﷺ फ़रमाते कि वो ऐसी थीं और ऐसी थीं और उन से मेरे औलाद है।

(सहीह बुख़ारी: 3818)

मैं इब्ने-उमर (रज़ि०) की ख़िदमत में मौजूद था उन से एक शख़्स ने (हालते-एहराम में) मच्छर के मारने के मुताल्लिक़ पूछा (कि उसका क्या कफ़्फ़ारा होगा) इब्ने-उमर (रज़ि०) ने पूछा कि तुम कहाँ के हो? उसने बताया कि इराक़ का; फ़रमाया कि इस शख़्स को देखो मच्छर की जान लेने के तावान (जुर्माना) का मसला पूछता है, हालाँकि उसके मुल्क वालों ने रसूलुल्लाह ﷺ के नवासे को बे-तकल्लुफ़ क़त्ल कर डाला। मैंने नबी करीम ﷺ से सुना आप ﷺ फ़रमा रहे थे कि ये दोनों (हसन और हुसैन (रज़ि०)) दुनिया में मेरे दो फूल हैं।

(सहीह बुख़ारी: 5994)

जब इब्राहीम (नबी करीम ﷺ के साहिबज़ादे) का इंतिक़ाल हुआ तो रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि जन्नत में उन के लिये एक दूध पिलाने वाली है।

(सहीह बुख़ारी: 1382)

उम्महात-उल-मोमिनीन की फ़ज़ीलत

जिबरील अलैहिस्सलाम ने कहा: ऐ अल्लाह के रसूल! ये ख़दीजा (रज़ि०) जो आपके पास बर्तन में खाना या पानी लेकर आती हैं उन्हें

उनके रब की तरफ़ से सलाम कहें और उन्हें ख़ोलदार मोती के एक महल की जन्नत में ख़ुशख़बरी सुनाएँ जिसमें न शोर होगा और न कोई तकलीफ़ होगी।

(सहीह बुख़ारी: 7497)

रसूलुल्लाह ﷺ ने एक दिन फ़रमाया : ऐ आइश ये जिब्राईल (अलैहि०) तशरीफ़ फ़रमा हैं और तुम्हें सलाम कहते हैं, "मैंने इस पर जवाब दिया व-अलैहिस-सलाम वरहमतुल्लाह व-बर-कातुहू; आप वो चीज़ देखते हैं जो मुझको नज़र नहीं आती (आपकी मुराद नबी करीम (सल्ल०) से थी)।

(सहीह बुख़ारी: 3768)

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, "मर्दों मैं तो बहुत से कामिल लोग उठे लेकिन औरतों में फ़िरऔन की बीवी आसिया और मरयम -बिन्ते-इमरान (अलैहि०) के सिवा और कोई कामिल नहीं पैदा हुई, हाँ औरतों पर आयशा (रज़ि०) की फ़ज़ीलत ऐसी है जैसे तमाम खानों पर सरीद की फ़ज़ीलत है।"

(सहीह बुख़ारी: 3411)

रसूलुल्लाह ﷺ (अपनी बीवियों से) फ़रमाते थे : तुम लोगों का मामला मुझे परेशान किये रहता है कि मेरे बाद तुम्हारा क्या होगा? तुम्हारे हुक़ूक़ की अदायगी के मामले में सिर्फ़ सब्र करने वाले ही सब्र कर सकेंगे। फिर आयशा (रज़ि०) ने (अबू-सलमा से) कहा : अल्लाह तुम्हारे वालिद यानी अब्दुर-रहमान-बिन-औफ़ को जन्नत की नहर सलसबील से सैराब करे उन्होंने आप ﷺ की बीवियों के साथ एक ऐसे माल के ज़रिए जो चालीस हज़ार (दीनार) में बिका अच्छे सुलूक का मज़ाहिरा किया।इमाम तिरमिज़ी कहते हैं : ये हदीस हसन सही ग़रीब है।

(तिर्मिज़ी: 3749)

ऐ अल्लाह मैं उससे मुहब्बत करता हूँ मैं मदीना के बाज़ारों में से एक बाज़ार में रसूलुल्लाह ﷺ के साथ था। नबी करीम ﷺ वापस हुए तो मैं फिर आप के साथ वापस हुआ फिर आप ﷺ ने फ़रमाया, बच्चा कहाँ है।

ये आप ने तीन मर्तबा फ़रमाया।

हसन-बिन-अली को बुलाओ।

हसन-बिन-अली (रज़ि०) आ रहे थे।

और उन की गर्दन में हार पड़ा था।

नबी करीम ﷺ ने अपना हाथ इस तरह फैलाया कि (आप हसन (रज़ि०) को गले से लगाने के लिये) और हसन (रज़ि०) ने भी अपना हाथ फैलाया और वो नबी करीम (सल्ल०) से लिपट गए।

फिर आप ﷺ ने फ़रमाया: ऐ अल्लाह! मैं इससे मुहब्बत करता हूँ तू भी इस से मुहब्बत कर और उन से भी मुहब्बत कर जो उस से मुहब्बत रखें। अबू-हुरैरा (रज़ि०) ने बयान किया कि नबी करीम ﷺ के इस इरशाद के बाद कोई शख़्स भी हसन-बिन-अली (रज़ि०) से ज़्यादा मुझे प्यारा नहीं था।

(सहीह बुख़ारी: 5884)

अहल-ए-बैत के हुक़ूक़

हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल ﷺ ने फ़रमाया : जिसने हसन और हुसैन (रज़ि०) से मुहब्बत की उसने मुझ से मुहब्बत की और जिसने उन से बुग़्ज़ रखा उसने मुझ से बुग़्ज़ रखा।

(सुनन इब्न माजाह: 143)

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि फ़ातिमा मेरे जिस्म का एक टुकड़ा है जिसने उसे नाराज़ किया उसने मुझे नाराज़ किया।

(सहीह बुख़ारी: 3767)

ज़ुहैर-बिन-हर्ब और बहादुर-बिन-मख़लद ने इस्माईल-बिन-इब्राहीम (इब्ने-उलैह) से रिवायत की, उन्होंने कहा : मुझे अबू-हयान ने हदीस बयान की, कहा : यज़ीद-बिन-हय्यान ने मुझ से बयान किया कि मैं, हुसैन-बिन-सबरा और उमर-बिन-मुस्लिम (तीनों) हज़रत ज़ैद-बिन-अरक़म (रज़ि०) के पास गए। जब हम उनके क़रीब बैठ गए तो हुसैन ने उनसे कहा : ज़ैद ! आपको ख़ैर कसीर हासिल हुई, आपने रसूलुल्लाह (सल्ल०) कि ज़ियारत की, उनकी बात सुनी, उनके साथ मिलकर जिहाद किया और उनकी पैरवी में नमाज़ें पढ़ीं। ज़ैद ! आप को ख़ैर कसीर हासिल हुई। ज़ैद ! हमें रसूलुल्लाह (सल्ल०) से सुनी हुई (कोई) हदीस सुनाइये। (हज़रत ज़ैद (रज़ि०) ने) कहा : भतीजे ! मेरी उम्र ज़्यादा हो गई, ज़माना घर गया, रसूलुल्लाह (सल्ल०) की जो हदीसें याद थीं उनमें से कुछ भूल गया हूँ, अब जो मैं बयान करूँ उसे क़बूल करो और जो (बयान) न कर सकूँ तो उसका मुझे मुकल्लफ़ न ठहराव। फिर कहा कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) एक दिन मक्का और मदीना के बीच एक पानी के किनारे जिसे ख़ुम कहा जाता था, हमें ख़ुतबा सुनाने

को खड़े हुए। आप (सल्ल०) ने अल्लाह की हम्द की और उसकी तारीफ़ को बयान किया और वाज़ और नसीहत की। फिर फ़रमाया कि इस के बाद ऐ लोगो! मैं आदमी हूँ, क़रीब है कि मेरे रब का भेजा हुआ (मौत का फ़रिश्ता) पैग़ाम मौत लाए और मैं क़बूल कर लूँ। मैं तुम में दो बड़ी चीज़ें छोड़के जा रहा हूँ। पहले तो अल्लाह कि किताब है और इसमें हिदायत है और नूर है, तो अल्लाह की किताब को थामे रहो और इस को मज़बूत पकड़े रहो। ग़रज़ कि आप (सल्ल०) ने अल्लाह की किताब कि तरफ़ दिलचस्पी दिलाई। फिर फ़रमाया कि दूसरी चीज़ मेरे अहले-बैत है। मैं तुम्हें अपने अहले-बैत के बारे में अल्लाह याद दिलाता हूँ, तीन बार फ़रमाया। और हुसैन ने कहा कि ऐ ज़ैद ! आप (सल्ल०) के अहले-बैत कौन से हैं, क्या आप (सल्ल०) कि पाक बीवियां अहले-बैत नहीं हैं? हज़रत ज़ैद (रज़ि०) ने कहा कि पाक बीवियां भी अहले-बैत में दाख़िल हैं लेकिन अहले-बैत वो हैं जिन पर ज़कात हराम है। हुसैन ने कहा कि वो कौन लोग हैं? हज़रत ज़ैद (रज़ि०) ने कहा कि वो अली, अक़ील, जाफ़र और अब्बास (रज़ि०) कि औलाद हैं। हुसैन ने कहा कि उन सब पर सदक़ा हराम है? सैयदना ज़ैद (रज़ि०) ने कहा कि हाँ।

(सहीह मुस्लिम: 6225)

अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: "तुम में बेहतरीन शख़्स वह है जो मेरे बाद मेरे अहल-ए-ख़ाना के साथ अच्छा सुलूक करने वाला हो"

अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि अब्दुर्रहमान बिन औफ़ ने अपना एक बाग़ चार लाख में फ़रोख्त किया और उसकी रक़म नबी करीम ﷺ की बीवियों में तक़सीम कर दी।

हसन - इसे इब्न-ए-अबी आसिम ने रिवायत किया है।

[अल-सुन्ना अबि आसिम, पेज (616) हदीस नंबर (1414)]

मुहम्मद ﷺ की तमाम अज़्वाज-ए-मुतह्हरात रज़ियल्लाहु अन्हा अहल-ए-बैत मे शामिल हैं।

(अल-अहज़ाब: 28-33)

जिसके दिल मे रत्ती बराबर भी अहल-ए-बैत और सहाबा-ए-किराम के बारे में बुग़्ज़ है वह जन्नत तो क्या जन्नत की ख़ुशबू भी नही पा सकता।

किसने कह दिया आपसे ये ????

अहले बैत तुम्हारे हैं

और असहाब हमारे हैं

ख़ुशफ़हमी है फ़क़त वरना

अबूबकर भी हमारे हैं

अली भी हमारे हैं

उमर भी हमारे हैं

हुसैन भी हमारे हैं

उस्मान भी हमारे हैं

हसन भी हमारे हैं

अम्मा आयशा भी हमारी हैं

सय्यदा फ़ातिमा भी हमारी हैं

हाँ

अहले बैत भी हमारे हैं और...

असहाब-ए-मुहम्मद (ﷺ) भी हमारे हैं...

हाँ अबूबकर की अलिफ़ से लेकर अली की या तक तमाम सहाबा हमारे हैं हमारे थे हमारे रहेंगे इन शा अल्लाह

रिज़वानुल्लाही अलैहिम अजमईन

[6].अहले तक़लीद को सलफ़ियत से ख़ौफ़ क्यों?

सलफ़ियत रसूलुल्लाह ﷺ और आप के असहाब का तरीक़ा और मनहज है। सलफ़ी हज़रात इसी मनहज और तरीक़े के ऐन मुताबिक़ अपनी ज़िन्दगी गुज़ारते हैं। उम्मत-ए-मुस्लिमा में सलफ़ी के अलावा तमाम फ़िरक़े, जमाअतें और मसालिक अहकाम और मसाइल में मनहज-ए-नबवी और मनहज-ए-सहाबा से मुन्हरिफ़ हैं बल्कि बहुत सारे फ़िरकों में अक़ाइद की गुमराहियाँ भी पाई जाती हैं और शिर्क और बिदअत से तो सिर्फ़ सलफ़ी ही पाक और साफ़ हैं। कोई माने या न माने मगर मेरा यह मानना है कि अगर कोई जमाअत दीन इस्लाम के लिए मुख़्लिस है, वह क़ुरआन और हदीस पर चलने का दावा करती है और वह अपने दावे में सच्ची और पक्की है तो इस जमाअत को भी सलफ़ी, अहले हदीस और मुहम्मदी कह सकते हैं। मगर क्या आपको मालूम है कि अहले तक़लीद और ख़ास मस्लक की तक़लीद करने वाले ख़ुद को मुहम्मद ﷺ की तरफ़, सहाबा की तरफ़ और मुहद्दिसीन की तरफ़ निस्बत करके मुहम्मदी, सलफ़ी और अहले हदीस क्यों नहीं कहलवाते? क्यों कि वह क़ुरआन और हदीस की तालीमात से दूर हैं। अगर वह दावा भी करें कि हम क़ुरआन और हदीस के मानने वाले हैं

तो वह अपने दावा में झूठे हैं। सभी जानते हैं कि दावा बग़ैर दलील के बातिल है।

इस्लाम का एक अहम उसूल है कि कोई दावा हम बग़ैर दलील के तस्लीम नहीं करेंगे क्योंकि हमारा दीन दलील और सबूत पर क़ाइम है। अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं कि नबी ﷺ ने फ़रमाया:

لو يعطي الناس بدعواهم لادعى ناس دماء رجال وأموالهم ولكن اليمين على المدعى عليه.(صحيح مسلم:1711)

तर्जुमा: अगर सिर्फ़ दावा की वजह से लोगों के मुतालबे मान लिए जाने लगे तो बहुतों का ख़ून और माल बर्बाद हो जाएगा, लेकिन क़सम मुद्दआ अलैह पर है।

यह हदीस हमें बतलाती है कि दावा करने वाले पर लाज़िमन दलील देनी है, बग़ैर दलील के कोई दावा तस्लीम नहीं किया जाएगा और जो किसी मामले में इंकार करे तो उसे क़सम खानी है। मुदआ के ज़िम्मा दलील और बुरहान देना है। इसकी एक वाज़ेह हदीस यह है।

البينة على المدعي واليمين على من أنكر.(ارواه الغليل:2685)

तर्जुमा: दलील देना उसके ऊपर है जो दावा करे और क़सम खाना उसके ऊपर है जो इंकार करे।

अल-मुहिम, यह बात साफ़ हो गई कि अहले तक़लीद ख़ुद को सलफ़ी, अहले हदीस और मुहम्मदी नहीं कह सकते। वजह साफ़ ज़ाहिर है। एक अदना और मामूली जगह की तरफ़ निस्बत करके देवबंदी और बरेलवी कहलाने पर फ़ख़्र करते हैं मगर सलफ़ी और मुहम्मदी कहलाने में ख़ौफ़ क्यों है? दरअसल सलफ़ियत से उन्हें दुश्मनी है। सलफ़ की तालीमात से कोसों दूर हैं और क़ुरआन और हदीस के नाम पर ख़ुद साख़्ता मलफ़ूज़ात पर कारबंद हैं।

सलफ़ियत एक साफ़ और शफ़्फ़ाफ़ मनहज है जो हमें रसूलुल्लाह ﷺ ने अता फ़रमाया है और जिस पर ख़ैरुल क़ुरून के मुसलमान चलकर दिखाए हैं। रही नसीब जो ख़ैरुल क़ुरून का मनहज इख़्तियार करते हैं और वाए बदनसीबी जो बाद के ज़माने वालों की तक़लीद करते हैं। नबी ﷺ का फ़रमान सादिक़ आ रहा है:

اتخذ الناس رؤوسا جهالا فسئلوا فافتوا بغير علم فضلوا واضلوا.(صحيح مسلم :2673)

तर्जुमा: लोग जाहिलों को सरदार बना लेंगे। उनसे सवालात किए जाएंगे और ये बग़ैर इल्म के जवाब देंगे, इसलिए ख़ुद भी गुमराह होंगे और लोगों को भी गुमराह करेंगे।

आज के ज़माने में अहले तक़लीद के सलफ़ियों के साथ मुत'अस्सबाना (तास्सुब से भरा हुआ) सुलूक, जाहिलाना रवैया, पुर तशद्दुद मामला और मुजरिमाना किरदार से एक बात तो रोज़-ए-रोशन की तरह ज़ाहिर होकर हर कस-ओ-ना-कस (हर आदमी) पर वाशिगाफ़ (साफ़) हो गई है कि उनके दिल में मनहज-ए-सलफ़ पर चलने वालों के लिए वही नफ़रत और दुश्मनी है जो काफ़िरों को इस्लाम के लिए होती है।

अहले हदीस मसाजिद का इंहिदाम (ढाना), अल्लाह के पाकीज़ा घरों पर कब्ज़ा, मसाजिद और मदरिस में मुवह्हिद के ख़िलाफ़ नापाक मंसूबे हैं। बस्ती के सलफ़ी मुसलमानों के साथ ज़ुल्म और ज़्यादती, दिन और रात 'वहाबी' का ताना, उनका सोशल बहिष्कार, हुकूमत के नापाक अजाइम में इमदाद, मासूमों पर फ़र्ज़ी मुकद्दमात, अहले हदीस के ख़िलाफ़ अवाम को मुश्त'इल करना, काफ़िरों से जिहाद की तरह अपने तलबा को मुनाज़रा बाज़ी का फ़न सिखाना, सलफ़ियों से लेन-देन, शादी-ब्याह, यहाँ तक कि उनके मसाजिद और मदारिस और उनकी

किताबों से कुल्ली तौर पर अवाम और ख़वास को दूर रहने की तालीम देना, सलफ़ी मुसलमानों और सलफ़ी तंज़ीम की तरफ़ दहशतगर्दी का इन्तिसाब करना, ख़ास किताब और सुन्नत की तालीम, उनकी नश्र-ओ-इशाअत और दावत और तबलीग़ में रुकावट डालना - यह सारे घिनौने काम अगर काफ़िर करते तो इस क़दर हैरानी नहीं होती, जितनी हैरानी उन लोगों पर है जो इकराम मुस्लिम का दर्स देने वाले, नबवी मिशन तबलीग़ के नाम पर दिन-रात गली-कूचे घूमने वाले हैं।

डॉक्टर ज़ाकिर नाइक को दावत और तबलीग़ से रोकने, हिंदुस्तान में उन पर अर्सा-ए-हयात तंग करने, उन्हें दहशतगर्द क़रार देने, उनकी मिशन की दहशतगर्दी से जोड़ने और ख़ालिस किताब और सुन्नत की तालीम आम होने से रोकने वाले अहले तक़लीद ही हैं। उन्होंने न किसी पर डाका डाला, न किसी की दुकान बंद की, न किसी पर ज़ुल्म और सितम किए, न किसी का घर उजाड़ा, न किसी का क़त्ल किया। तौहीद की दावत देना अगर जुर्म है तो बस एक यही जुर्म किया जो अंबिया ने भी किया। ख़ालिस तौहीद की दावत दी, लोगों को एक अल्लाह का सजदा करने की तरफ़ बुलाया। उस काम की सज़ा जिस तरह अंबिया को काफ़िरों ने दी, उसी तरह डॉक्टर ज़ाकिर नाइक को हिंदुस्तान के सलफ़ियों से ख़ाइफ़ मुसलमानों ने दी। किस क़दर काफ़िरों

के अतवार (तौर तरीक़े) और आज के झूठे मुसलमानों के किरदार में मुसावात पाया जाता है?

ख़ैर, अल्लाह का दीन किसी का मोहताज नहीं है। किसी एक को दावत से रोक देने पर यह दीन मिटेगा भी नहीं। अल्लाह जिस से चाहता है, अपने दीन का काम लेता है और यह दीन ग़ालिब हो कर रहेगा, हालांकि लोग दीन-ए-हक़ और मनहज-ए-सलफ़ से दुश्मनी करते रहें।

अंग्रेज़ों ने वतन का सच्चा पासबान और सही माने में असली मुसलमान सलफ़ियों को ही समझा। इसी लिए उन्हें ही अपना सबसे बड़ा दुश्मन समझकर ख़ास निशाना बनाया और 'वहाबी' कहकर पुकारा। इस वक़्त न सिर्फ़ हिंदुस्तान में बल्कि चारों ओर आलम में सलफ़ियों से काफ़िरों की और तमाम मसालिक के मुसलमानों की खुली और सख़्त दुश्मनी ज़ाहिर करती है कि हम सलफ़ी ही सच्चे पाक मुसलमान हैं जो हक़ीक़ी तौर पर सिरात-ए-मुस्तक़ीम पर ग़ामज़न हैं। हमारी ख़ालिस तौहीद की दावत से जहाँ काफ़िर ख़ाइफ़ (ख़ौफ़ज़दा) हैं, वहीं ख़ुद सख़्ता मसलक पर भी ख़ौफ़ का घेरा असर है।

एक तरफ़ कलमा तौहीद पढ़कर नए-नए मुसलमान इस्लाम में जौक़-दर-जौक़ (गिरोह के गिरोह) दाख़िल हो रहे हैं, तो दूसरी तरफ़ तक़लीद और शिर्क और बिदअत से तौबा करके बहुत सारे लोग सच्चे पाक सलफ़ी बन रहे हैं। क्यों न काफ़िरों को सलफ़ी से ख़ौफ़ हो और क्यों न हम अहले तक़लीद की नज़र में दहशतगर्द क़रार पाए?

अपने साथ इस क़दर ज़ुल्म और ज़्यादती होने के बावजूद हमने अहले तक़लीद को दुश्मन कहकर नहीं पुकारा, न कोई इल्ज़ाम लगाया और न कभी ताना कशी की। किसी मस्जिद या मदरसा पर क़ब्ज़ा नहीं किया, कोर्ट-कचहरी में फ़र्ज़ी केस दर्ज नहीं किया, हुकूमत के लिए किसी मासूम को आला कार नहीं बनाया। हमने हमेशा अपने सब्र का दामन वसी रखा, ताना कशी के बावजूद ज़बान पर हरूफ़-ए-शिकायत नहीं आने दिए।

तथापि आज जब हिंदुस्तानी पार्लियामेंट में मदरसा से फ़ारिग़ तहसील सलफ़ी ममालिक के रियालो से बदन का गोश्त और पोस्ट बढ़ाने वाला अपने चेहरे पर दाढ़ी की सुन्नत को सजाने वाला बदरुद्दीन अजमल ने सर बुरहान-ए-मुल्क के सामने सलफ़ियों को दहशतगर्द क़रार दे कर अपने मसलकी बुग़ज़ और अना की दो टोक अंदाज़ में ज़ाहिर कर

दिया। हम तो जानते ही हैं कि उन्हें सलफ़ियत से ख़ुदा के वास्ते का बेर है। काफ़िरों ने भी इसका नज़ारा देखा। मुसलमानों के ऐसे ही ख़ूबसूरत नज़ारों से काफ़िरों को समझने में आसानी होती है और ज़मीर-फ़रोश मुल्लाओं के ज़मीर का सौदा करके फिर सच्चे मुसलमानों का क़त्ल-ए-आम करते हैं।

मैं आख़िर में सलफ़ियत से बुग़्ज़ रखने वालों को यह पैग़ाम देना चाहता हूँ कि एक दिन तुम्हारा सामना अल्लाह से होगा। इस्लाम का दावेदार हो कर मुसलमानों की ज़िल्लत और रुस्वाई का सामान बहम पहुँचाने वाले इस दीन की याद करो। जब तुम्हारे काले करतूत शर्मिंदगी के बोझ तले तुम्हें दबा देंगे, कुछ तो रब से मुलाक़ात का ख़ौफ़ खाओ। अपने भाइयों की गर्दन पर कब तक चाकू चलाते रहोगे?

कब तक मुसलमानों को मुसलमानों से जुदा करते रहोगे? कब तक अपने भाइयों को काफ़िरों के ज़ुल्म के हवाले करते रहोगे? कब तक मनहज-ए-सलफ़ से दुश्मनी निभाते रहोगे? अल्लाह ने तुम्हें एक उम्मत बना कर भेजा है, अपने भाइयों की मदद करने के लिए भेजा है, काफ़िरों से जिहाद करने और उन पर दीन-ए-हक़ पेश करने के लिए भेजा है। किताबुल्लाह और सुन्नत-ए-रसूल को मज़बूती से थामने के

लिए भेजा है। ज़रा अपने पैदा होने का मक़सद भी याद करो, जिसे तुम भूल बैठे हो। दीन में अपने ही भाइयों के ख़िलाफ़ सियासी बाज़ीगरी करने से बाज़ आ जाओ। किताबुल्लाह और सुन्नत-ए-रसूल को हमारी तरह अपना मेयारी ज़िंदगी बना लो। फिर देखो हमारी ताक़त कितनी मज़बूत बन जाती है और कैसे काफ़िर सरकार हमसे थर्राती है। ऐ काश, के तुम जिस तरह मुहम्मद ﷺ से मुहब्बत का नारा लगाते हो, उनसे सच्ची मुहब्बत करते और उनके पैग़ाम को अपनी ज़िंदगी में नाफ़िज़ (लागू) करते।

हम अल्लाह से दुआ करते हैं कि तमाम मुसलमानों को दीन-ए-हक़ की समझ दे, उन्हें मस्लकी मुनाफ़रत (घृणा/द्वेष) से दूर करे, अक़ाइद और आमाल की इस्लाह फ़रमा दे और सबको एक प्लेटफॉर्म पर जमा कर के काफ़िरों और मुशरिकों पर ग़लबा अता फ़रमाए। आमीन।

[7].अहले हदीस मे मुख़्तलिफ़ जमाते कौन हक़ पर?

लोगों के ज़हन व दिमाग़ में आजकल यह शुब्ह डाला जाता है कि अहले हदीस में भी मुख़्तलिफ़ जमातें हैं, इसलिए यहाँ सवाल पैदा होता है कि अहले हदीस की कौन सी जमात हक़ पर है?

इस बात को समझने के लिए पहले यह जानना होगा कि अहले हदीस किसे कहते हैं और इनकी क्या पहचान है?

अहले हदीस क़ुरआन व हदीस पर अमल करने वाले को कहते हैं यानी असलाफ़ की फ़हम को सामने रखते हुए क़ुरआन व हदीस की रोशनी में दीन-ए-मुहम्मदी की हक़ीक़ी शक्ल पेश करते हैं। इसमें शख़्सियत परस्ती या ज़ातियात का कोई दख़ल नहीं। जो क़ुरआन व हदीस से साबित हो, उसे मान लेने वाला अहलुल हदीस है, चाहे वह किसी रोज़गार से जुड़ा हो, किसी दीन के नशरीयाती इदारे से जुड़ा हो या किसी जमाती तंज़ीम से वाबस्ता हो। असल चीज़ है उसका मनहज।

इसीलिए अहले हदीस को मुख़्तलिफ़ नामों से जाना जाता है, मसलन सलफ़ी, मुहम्मदी, अहलुस सुन्नाह, असर्री और ताइफ़ा मंसूरा वग़ैरह।

अहले हदीस जमात क़ुरआन व हदीस की रोशनी में दीन-ए-मुहम्मदी की सच्ची तस्वीर अवाम के सामने पेश करने के लिए मुख़्तलिफ़ मोर्चों पर दीनी काम करती है।

दीन-ए-मुहम्मदी की सच्ची तस्वीर पेश करने का सबसे मज़बूत ज़रिया मदरसे हैं, जहां से उलमा व फ़ुज़ला निकल कर फिर नए-नए ज़राए से दीन-ए-मुहम्मदी की असल सूरत पेश करते हैं।

जमाती तंजीम जो विभिन्न इलाकों में विभिन्न नामों से बनाई जाती हैं, यही अहले मदरसे इन तंज़ीमों के ज़रिए अवामुन्नास को तरह-तरह के वसाइल अपना कर दीन-ए-मुहम्मदी से रू-शनास (जान पहचान) कराते हैं। ये तंज़ीम जितनी फैलेंगी, उतनी ही दीन की नश्र-ओ-इशाअत भी होगी।

लिहाज़ा जमात की मुख़्तलिफ़ तंज़ीमों से अहले हदीस की फ़ा'आलिय्यत (गतिविधि) और इनकी सरगर्मियों का पता चलता है। हिंदुस्तान में जमीयत अहले हदीस के नाम से जमाती तंज़ीम चलती है, पूरे हिंदुस्तान

में इसका जाल बिछा है। इसका मतलब यह हुआ कि अहले हदीस जमात हिंदुस्तान की पूरी अवाम को सही दीन से रू-शनास करा रही है, तभी तो आज दिन-ब-दिन अवाम इस जमात की तरफ़ तवज्जोह बढ़ाती जा रही है।

इस जमीयत के अलावा अहले हदीस की कुछ दूसरी जमीयत और तंज़ीम भी हैं, इनका भी मिशन और मनहज वही है जो मरकज़ी जमीयत अहले हदीस हिंद का है, तो इसमें कोई हरज नहीं। जैसे कहा जाता है जितने मदरसे होंगे उतनी तालीम बढ़ेगी, वैसे ही जितनी मज़हबी तंज़ीम होगी, अवाम उतना फ़ायदा उठाएगी।

यहां एक बात वाज़ेह रहे कि अगर कोई मज़हबी तंज़ीम क़ुरआन व हदीस की राह से हटी हुई है या वह क़ुरआन व हदीस के नाम पर तक़लीद परस्ती या शख़्सियत परस्ती फैलाती है या फिर क़ुरआन व हदीस की तालीम सलफ़-ए-सालिहीन की फ़हम की रोशनी में नहीं पेश करती, तो वह अहले हदीस, सलफ़ी, मुहम्मदी, अहलुस सुन्नाह, असरीं और ताइफ़ा मंसूरा से हटी हुई तंज़ीम है।

===============

[8]आख़िरी अश्रे से मुताल्लिक़ चंद उमूर पर इंतिबाह (चेतावनी)

रमज़ान-उल-मुबारक का आख़िरी अश्रे फ़ज़ीलत के लिहाज़ से ज़्यादा अहमियत रखता है, इसमें एतिकाफ़ है और इसी में शब-ए-क़द्र है जो हज़ार रातों से बेहतर है। क़ुरआन का नुज़ूल भी इसी मुबारक रात में हुआ। रसूल करीम ﷺ इस अश्रे में ता'आत (इबादात) पर ज़्यादा मेहनत करते और अपने अहल-ओ-अयाल (घरवालो) को भी इसकी दावत देते। हम भी अपने प्यारे नबी की प्यारी सुन्नत पर अमल करते हुए आख़िरी अश्रे में भलाई के कामों पर ज़्यादा से ज़्यादा मेहनत करें और शबे क़द्र पाने के लिए ख़ूब ख़ूब इज्तिहाद (कोशिश) करें, इसके लिए अल्लाह से तौफ़ीक़ तलब करें और क़सरत से शबे क़द्र की दुआ पढ़ा करें।

मुंदरिजा-ज़ेल सुतूर में आख़िरी अश्रे से मुताल्लिक़ कुछ ऐसे उमूर हैं जिनके बारे में सवाल पूछे जाते हैं या बेदीनी को दीन समझकर अंजाम दिया जाता है।

(1) आख़िरी अश्रे में तसाहुली (सुस्ती):

मुशाहदे मे बात आयी है कि है कि शुरुआत में लोगों में इबादत और भलाई का जज़्बा ज़्यादा होता है, लेकिन इस जज़्बे की कमी आख़िरी अश्रे के साथ कम होती जाती है जबकि आख़िरी अश्रा सबसे ज़्यादा अहमियत का हामिल है।

(2) अलविदा जुमा का हुक्म:

जवाब: आख़िरी अश्रे से मुताल्लिक़ एक बात यह है कि लोगों के बीच अलविदा जुमा के मुताल्लिक़ राइज है जो असल में आवाम की मशहूर ग़लतफ़हमी है, इसका उलमा से और किताब और सुन्नत से कोई ताल्लुक़ नहीं है, लेकिन अब आवाम के साथ कुछ उलमा भी इससे मुतासिर (प्रभावित) हो गए हैं। रमज़ान के आख़िरी जुमे को अलविदा जुमा कहना, ख़ुत्बे में या महफ़िल का आयोजन करके उसकी गुज़रने का मर्सिया (Elegy) पढ़ना बिलकुल दीन में ज़्यादती और नई ईजाद है। किताब और सुन्नत से इसकी कोई दलील नहीं है और न ही इस तरह के अल्फ़ाज़ सलफ़ सालिहीन के यहाँ मिलते हैं। हर हफ़्ते जुमा का दिन आता है तो फिर किसी एक महीने के आख़िरी जुमे को अलविदा जुमा कहना बात में भी ठीक नहीं है और जुमा तोहफ़े की ईद है जो कि रमज़ान का जुमा होने पर बेहद ख़ुशी होनी चाहिए, चाहे

पहला जुमा हो या आख़िरी जुम्मा। याद रखें, रमज़ान के आख़िरी अश्रे में ही शबे क़दर है, हमें एतिकाफ़ और शब-ए-बेदारी और इज्तिहाद के ज़रिए उसे पाने की कोशिश करनी चाहिए और उन दिनों में ख़ास तौर पर फ़ुज़ूल काम और वक़्त की बर्बादी से बचना चाहिए।

इस मुनास्बत से एक पैग़ाम (संदेश) उम्मत-ए-मुस्लिमा के नाम देना चाहता हूँ कि रमज़ान का आख़िरी जुमा रुख़सत होते ही रमज़ान भी हमसे क़रीब रुख़सत हो जाएगा, तो अलविदा जुमा मनाने की बजाय मा दीन और अच्छे कामों पर उसी तरह क़ाइम रहने की तल्क़ीन करता हूँ जिस तरह रमज़ान में बने रहे थे। नेकी सिर्फ़ रमज़ान के साथ ख़ास नहीं है। जैसे ईसार (sacrifice) और कुर्बानी, अच्छे काम, इबादतें और भलाई, सद्क़ात और ख़ैरात, इबादत और याद-ए-इलाही, और दावत इलाही की तरफ़ रमज़ान में माइल थे, उसी तरह रमज़ान के बाद भी करते रहें ताकि दीन पर इस्तक़ामत हासिल रहे और इसी हाल में मौत आए। ऐसे लोग अल्लाह के पसंदीदा बंदे हैं और दीन पर ही वफ़ात पाने से उसके फ़ज़ल और एहसान से जन्नत में दाख़िल किये जाएँगे।

(3) मो'तकिफ़ का दर्स देना कैसा है?

जवाब: अगर मस्जिद में मौजूद लोगों को तालिम की ज़रूरत हो और मो'तकिफ़ (एतिकाफ करने वाला) उनकी ज़रूरत को पूरा करने के क़ाबिल है तो उन्हें दर्स देने में कोई हर्ज नहीं है। हाँ, पाबंदी के साथ एतिकाफ़ के अपने क़ीमती वक़्त को दर्स पर ही सर्फ़ न करें, एतिकाफ़ दरअसल इबादत के लिए फ़राग़त का नाम है लिहज़ा इस मक़सद की तकमील में कोशिश करें।

शैख़ मुहम्मद सालेह उसैमीन रहिमहुल्लाह से सवाल किया गया कि क्या मो'तकिफ़ का किसी को तालीम देना या दर्स देना सही है तो शैख़ का जवाब था:

الأفضل للمعتكف أن يشتغل بالعبادات الخاصة كالذكر والصلاة وقراءة القرآن وما أشبه ذلك ، لكن إذا دعت الحاجة إلى تعليم أحد أو التعلم فلا بأس ، لأن هذا من ذكر الله عز وجل(فتاوى الشيخ محمد صالح العثيمين 549/1)

तर्जुमा: मो'तकिफ़ के लिए अफ़ज़ल है कि वह इबादत मे मशग़ूल रहे मसलन ज़िक्र, नमाज़, क़ुरआन की तिलावत और जो उसके क़बील से हो लेकिन अगर किसी शख़्स को तालीम देने और सिखाने की ज़रूरत हो तो इसमे कोई हर्ज नही है क्योंकि यह भी अल्लाह के ज़िक्र मे से है।

(4) घर में औरतों का एतिकाफ़:

ऐतिकाफ़ मर्द और औरत दोनों के लिए सुन्नत है और दोनों के लिए एतिकाफ़ की जगह सिर्फ़ मस्जिद है, लेकिन मज़हबी उलमा इख़्तिलात (sexual Intercourse) और फ़ितने के ख़ौफ से औरतों को घरों में एतिकाफ़ की तालीम देते हैं, यह सुन्नत के ख़िलाफ है। यहां मैं इतना कहना चाहता हूँ कि जहां मस्जिद में औरतो के एतिकाफ़ के लिए अलहदा जगह न हो वहाँ औरते एतिकाफ़ न करें और जहां औरतो के लिए जगह मख़सूस हो वहां एतिकाफ़ करें, इससे इख़्तिलात और फ़ितने का ख़ौफ दूर होगा।

(5) शब-ए-क़द्र में वाइ'ज़ और नसीहत का हुक्म:

जवाब: शुरू रमज़ान से ही अक्सर मसाजिद में तरावीह के बाद दर्स और मुहाज़रात और तफ़सीर-ए-क़ुरआन का लंबा-लंबा सिलसिला चलता रहता है जो नमाज़ियों के लिए बाइस मुश्किल है। हालांकि यह जाइज़ और नाज़िज़ या बिदअत का मसअला नहीं है, यह भी मिन-जुमला रमज़ान के नेक आमालों में से है, लेकिन तरावीह के बाद कोई सिलसिला तिवालत का लोगों के लिए और मुश्किल का सबब है। मेरे ख़्याल से तरावीह के बाद मुख़्तसर दर्स और मुख़्तसर तफ़सीर पर ही इक्तिफ़ा (satisfaction) करना चाहिए, या लंबे दर्स और तफ़सीर के लिए कोई और मुनासिब वक़्त मु'अय्यन करना चाहिए जिसमें लोग

बिना मुश्किल और निशात के साथ दर्स और तफ़सीर से फ़ायदा उठा सकें। इस वक़्त दर्स और मुहाज़रात का सिलसिला आख़िरी अश्रे और इसकी ताक़ रातों में भी शुरू किया जाने लगा है। कुछ लोग चार-चार रक'आत के बाद वाइ'ज़ करते हैं तो कुछ लोग तरावीह के आख़िर में। यहां सवाल यह पैदा होता है कि क्या आख़िरी अश्रे में दर्स देना लोगों के लिए मुनासिब है और शर'अन से इस काम की कहां तक गुंजाइश है?

इस सिलसिले में अर्ज़ यह है कि दीनी दुरूस बहरहाल मुफ़ीद होते हैं, मगर इसके लिए मुनासिब वक़्त का त'अय्युन ज़रूर है, इस अमल के क़बील लोगों में जवाज़ और अदम-जवाज़ के मुताल्लिक़ दो क़िस्म की राय सामने आ रही हैं। जवाज़ वालों का कहना है कि यह भी ख़ैर के कामों में से है और क्योंकि नबी ﷺ से किसी ख़ैर की उन रातों में मनाही नहीं है और न ही रसूल अल्लाह ﷺ ने आख़िरी अश्रे के लिए ख़ैर के कामों को मख़सूस किया है बल्कि आज़ादी है जिस क़िस्म का भी कारख़ैर करे। इस बात पर अर्ज़ है कि बिलाशुबाह दर्स देना दावत इल्लाह और ख़ैर का काम है और बड़े अज्र का बाइस है मगर इस क़द्र अज्र व सवाब वाला काम होने के बावजूद सलफ़ से आख़िरी अश्रे में यह काम मन्क़ूल नहीं है।

हां कोई इन दिनों की फ़ज़ीलत के ताल्लुक़ से एक आधा मर्तबा लोगों को कुछ नसीहत करना चाहे तो मुझे इसमें कोई हर्ज नहीं महसूस होता लेकिन बाक़ी इन रातों में इजलास या दर्स का सिलसिला क़ायम करना महल-ए-नज़र है। अगर जवाज़ वाले इन रातों में पाबंदी से दर्स के क़ाइल हैं जो कि कार-ख़ैर हैं तो फिर उन के नज़र में दसयो उलमा को बला-बला जलसा मुन'अक़िद करने में भी कोई हर्ज नहीं होना चाहिए जबकि इस बात के वो भी क़ायम नहीं होंगे तो मालूम हुआ कि ये रातें इबादत के लिए फारिग़ होनी चाहिए। आइये एक हदीस की रौशनी में नबी ﷺ का उस्वा देखते हैं कि आख़िरी अश्रे में आप ﷺ क्या करते थे?

عنْ عَائِشَةَ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهَا قَالَتْ كَانَ النَّبِيُّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِذَا دَخَلَ الْعَشْرُ شَدَّ مِئْزَرَهُ وَأَحْيَا لَيْلَهُ وَأَيْقَظَ أَهْلَهُ(صحيح البخاري:2024)

तर्जुमा: आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा बयान करती हैं कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब आख़िरी दस दिनों में दाख़िल होते तो (इबादत के लिए) कमर कस लेते, ख़ुद भी शब बेदारी करते और घरवालों को भी जगाते थे। इस हदीस में तीन बातें मज़कूर हैं । (1) शद्मिज़राह : कमर कस लेते यानी इबादत के लिए बालिग़ इज्तिहाद करते । औरतों से किनारा कशी के भी मतलब में आया है । (2) अह्यालेला : शब बेदारी करते रात में इबादत के लिए ख़ुद को बेदार रखते । (3) एक़्ज़ुज़

आहला : अपने अहल-ओ-अयाल को भी जगाते क्योंकि यह अहम रात होती है । नबी ﷺ के उस्वा (अख़लाक़ और क़िरदार) को अपनाते हुए आख़िरी अश्रे में हमारा भी यही तर्ज़-ए-अमल होना चाहिए ताकि शब-ए-क़द्र और उसकी फ़ज़ीलत को पा सकें ।

(6) शब-ए-क़द्र की मख़्सूस नमाज़:

जब आख़िरी अश्रा शुरू होने लगता हैं तो मुसलमानों के कुछ तबक़ों में आमतौर पर शब-ए-क़द्र की मख़्सूस नमाज़ से मुताल्लिक़ रिसाला तक़सीम किया जाता है जिसमें 21, 23, 25, 27, और 29 की रातों के लिए अलग-अलग तरीक़े से पढ़ी जाने वाली शब-ए-क़द्र की नमाज़ का मख़्सूस तरीका मा-अज़्क़ार लिखा होता है। रसूल करीम ﷺ की सुन्नत में शब-ए-क़द्र की कोई मख़्सूस नमाज़ नहीं है और जब शब-ए-क़द्र ही मख़्सूस नहीं तो इसकी नमाज़ कैसे मख़्सूस हो सकती है, असल में यह सूफ़ीयों का तरीक़ा है इस से बचा जाए और दूसरों को भी बचाया जाए।

(7) आख़िरी अश्रे की मख़्सूस दुआ:

एक ज़ईफ़ हदीस की बुनियाद पर लोगों ने तीनों अशरों की मख़्सूस दुआ ईजाद कर दी है। पहले अश्रे में रब्बि-ग़फ़िर वरहम वअन्ता ख़ैरुर्-

राहिमीन, दूसरे में अस्तग़फ़िरुल्लाहा रब्बी मिन कुल्ली ज़म्बिन व अतूबु इलैह और तीसरे में अल्लहुम्म इन्नक आफ़ुवुन तुहिब्बुल अफ़वा फ़ाअफ़ु अन्नी। इनमें पहले और दूसरे अश्रे की मख़्सूस दुआ का कोई सबूत नहीं है अलबत्ता तीसरे अश्रे की जो दुआ है वो शब-ए-क़द्र के लिए है लिहाज़ा इसलिए हम आख़िरी अश्रे में तमाम दिन पढ़ सकते क्योंकि शब-ए-क़द्र उसी आख़िरी अश्रे में है।

(8) आख़िरी अश्रे में दो मर्तबा क़ियाम-उल-लैल करने का हुक़्म:

जवाब: आम तौर पर रमज़ान में ईशा की नमाज़ के बाद तरावीह की नमाज़ पढ़ ली जाती है और कुछ जगहों पर आधी रात के बाद दोबारा जमात से क़ियाम-उल-लैल का इंतज़ाम किया जाता है, लोग पूछते हैं कि जब तरावीह आठ ही रक'अत है तो फिर दोबारा क़ियाम क्यों किया जाता है और इसकी शर'अन क्या हैसियत है?

तो उसका जवाब यह है कि रमज़ान के आख़िरी अश्रे र में नबी ﷺ दूसरे अश्रे की बनिस्बत अधिक इबादत करते थे बल्कि आख़िरी अश्रा तो इबादत के लिए बेदार रहने का नाम है। उन दिनों की रातों में जितना हो सके इबादत पर इज्तिहाद करना चाहिए, कोई रात भर इबादत करे, कोई दो तीन बार उठ कर इबादत करे इस में कोई हर्ज नहीं है। रात की नफ़ली नमाज़ दो दो रक'अत है ख़्वाह कोई फ़ज्र तक पढ़े। नबी ﷺ का फ़रमान है:

صلاةُ الليلِ مثنى مثنى، فإذا خشي أحدُكم الصبحَ صلى ركعةً واحدةً، توتِرُ له ما قد صلى. (صحيح البخاري: 990 و صحيح مسلم: 749)

तर्जुमा: रात की नमाज़ दो-दो रक'अत है, और अगर तुम में से किसी को सुबह हो जाने का अंदेशा हो, और वह एक रक'अत पढ़ ले, तो यह उसकी पढ़ी हुई नमाज़ के लिए वित्र हो जाएगी।

रमज़ान में कसरत से मुस्तहब आमाल अंजाम देना चाहिए और नफ़ली इबादतें मुस्तहब आमाल में से हैं, अगर कोई इमाम के साथ आठ रक'अत तरावीह की नमाज़ पढ़ लेता है तो उसके लिए दोबारा उठ कर क़ियाम करने की मुमान'अत (Prohibition) नहीं है, ख़्वाह पहला अश्रा हो या आख़िरी अश्रा और आख़िरी अश्रा इबादत पर इज्तिहाद के आइने में काफ़ी अहम है क्योंकि इसमें शब-ए-क़द्र है इसलिए आख़िरी अश्रे की सारी रातों में पूरी-पूरी रात जग कर इबादत करना मुस्तहब और मस्नून अमल है।

(9) ईद की एडवांस में मुबारकबाद देने का हुक्म:

जवाब: सुन्नत से ईद की मुबारकबाद देना साबित है। सहाबा-ए-किराम एक दूसरे को ईद के दिन ईद की मुबारकबाद देते थे। यह मुबारकबादी ईद की नमाज़ के बाद देनी चाहिए। मुबारकबादी के अल्फ़ाज़ हैं:

"तक़ब्बलल्लाहु मिन्ना व मिन्क" कोई ईद मुबारक के अल्फ़ाज़ कहता है तो भी सही है। जहाँ तक ईद की मुबारकबादी देना का पहले से पहले यह सुन्नत की ख़िलाफ़वर्ज़ी है, ईद की मुबारकबादी तो ईद के दिन, ईद की नमाज़ के बाद होनी चाहिए कि अल्लाह के फ़ज़ल के सबब हमें ईद व मसर्रत मयस्सर हुई। इस सिलसिले में कुछ उलमा एक दिन पहले तहनियत (मुबारकबाद) पेश करने के पक्ष में हैं मगर एहतियात का तक़ाज़ा है कि ईद से पहले मुबारकबादी पेश करने को सुन्नत की मुख़ालिफ़ कहा जाए क्योंकि लोग इस वक्त हर चीज़ के लिए मुबारक पेश करने लगे हैं और वह भी कितने दिनों पहले से ही। लोगों में दीन पर अमल करने का जज़्बा कम और मुबारकबादी पेश करने का रिवाज ज़्यादा होता नज़र आ रहा है।

शैख़ सालेह फ़ौजान हाफ़िज़ाहुल्लाह से ईद से एक दिन पहले मुबारकबादी पेश करने के मुताल्लिक़ से सवाल किया गया तो शैख़ ने जवाब दिया कि इसकी कोई असल नहीं है, मुबारकबादी तो ईद के दिन या ईद के बाद के दिन मुबाह है लेकिन ईद के दिन से पहले मुबारकबादी देने से मुताल्लिक़ मुझे नही मालूम की अस्लाफ़ से कुछ साबित है तो फिर लोग ईद से पहले कैसे तहनियत पेश करते हैं जिसके मुताल्लिक़ कुछ सबूत नही है।

(10) मस्जिदों की बजाय बाज़ारों में चहल पहल:

शुरू में कहा गया है कि लोगों में आख़िरी अश्रा की आमद पर इबादत के तैयारी में थोड़ी सुस्ती पैदा हो जाती है जबकि इसी में सबसे ज़्यादा चुस्ती फुरती चाहिए। रात तो जागते हैं मगर इबादत के लिए नहीं बात चीत, खेल-कूद, सैर-सपाट, ख़ासकर ईद की तैयारी के लिए बाज़ार में बकसरत से आमद-रफ़्त होती है। इस क़दर अहम रातें और हम बाज़ारों को रौनक़ बख़्शते हैं ये हमारी ग़फ़लत, रमज़ान की नाक़द्री और हर क़िस्म की भलाई से महरूमी की दलील है।

(11) फ़ित्राने की अदायगी में ग़लती:

कितने सारे मुस्लिम सदक़तुल फित्र शुरू रमज़ान से ही निकालना शुरू कर देते हैं, कितने लोग मुफ़्ती साहब से फिक्स फित्रा की रक़म मालूम करके घर के सारे अफ़राद की तरफ़ से रक़म इकट्ठा कर लेते हैं और रमज़ान में आने वाले साइलों में थोड़ा थोड़ा तक़सीम करते रहते हैं। सदक़तुल फित्र फिक्स ढाई किलो अनाज में अदा करना है और इसका अफ़ज़ल वक़्त (उत्तम समय) ईद का चाँद निकलने से नमाज़ ईद तक है। हाँ, एक दो दिन पहले भी अदा किया जा सकता है ताहम कई दिन पहले अदा करना जाइज़ नहीं है न ही अनाज को पैसा बनाकर दिया जा सकता है अला ये कि इसकी किसी को ज़रूरत हो।

(12) औरतों की बे-अमलीयाँ:

औरतों में शबे क़द्र की इबादत के तईं काफ़ी सुकूत पाया जाता है, वह ख़ुद को घर के इंतज़ामी उमूर का मलिका समझती हैं। नए कपड़ों का इंतिख़ाब, घरों की ज़ेबाइश (सजावट), उम्दा पकवान की तैयारी और मस्नूई (artificial) ज़ैब-ओ-ज़ीनत की मसरूफ़ियात मे रहती हैं। कुछ अल्लाह की बंदियाँ अच्छी भी हैं मगर नौजवान नस्ल तो अल्लाह की पनाह हैं। हद तो इस वक़्त हो जाती है जब अजनबी मर्दों से अपने हाथों पर मेहंदियाँ सजाती हैं। अल्लाह के लिए अपने मक़ाम को पहचानो, अपनी इज़्ज़त करो, दुनियावी मामलात पर दीन को तरजीह दो और आख़री अश्रा में शब-ए-बेदारी करके इबादत पर मेहनत करो।

अल्लाह तआला से दुआ है कि हमें आख़िरी अश्रा में सुन्नत-ए-नबवी की इक़्तिदा करने की तौफ़ीक़ दे और अपने फ़ज़ल-ओ-कर्म से शब-ए-क़द्र की तौफ़ीक़ दे कर इसकी हर भलाई से नवाज़ दे। आमीन

[9].आज के ज़ालिम मुसलमान

इस काइनात का ख़ालिक़-ए-अज़ीम, आदिल और मुंसिफ़ है। वह अपने अदल और इन्साफ़ से दुनिया वालों की निगरानी कर रहा है, बल्कि कायनात की सारी मख़्लूक़ात के साथ इन्साफ़ करता है। मगर इंसान है कि एक-दूसरे पर ज़ुल्म करके दुनिया का माहौल मुकद्दर (रंजीदा) बना दिया है। आजकल की सूरत-ए-हाल ऐसी है कि शरीफ़ इंसानों, नेक दिल मुसलमानों और अदल और इन्साफ़ करने वाले आदमियों का यहाँ जीना दुष्वार हो गया है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने मोमिन की सिफ़ात बयान करते हुए फ़रमाया है:

المؤمن غر كريم والفاجر خب لئيم.(صحيح ابي داؤد:4790)

तर्जुमा: मोमिन भोला भाला और शरीफ़ होता है और फ़ाजिर, फ़सादी और कमीना होता है।

आज अक्सर मुसलमान इस हदीस के ख़िलाफ़ और ज़ुल्म और उदवान (सितम) की राह इख़्तियार करते नज़र आते हैं। अल्लाह ने ज़ुल्म को अपने लिए और अपनी मख्लूक़ के लिए हराम ठहराया है। हदीस-ए-कुद्सी में ज़िक्र है:

يا عبادي إني حرمت الظلم على نفسي وجعلته بينكم محرما فلا تظالموا.(صحيح مسلم: 2577)

तर्जुमा: ऐ मेरे बंदो, मैंने ज़ुल्म को अपने ऊपर हराम किया है और तुम पर भी हराम किया है, सो तुम आपस में एक-दूसरे पर ज़ुल्म मत करो।

अल्लाह ने अपने ऊपर ज़ुल्म हराम कर लिया और अपनी ज़ात से बड़े ज़ुल्म की यक्सर नफ़ी कर दी। फ़रमान-ए-बारी तआला है:

ان الله لا يظلم مثقال ذرة(النساء:40)

तर्जुमा: अल्लाह ज़र्रा बराबर भी ज़ुल्म नहीं करता है।

ज़ुल्म कहते हैं किसी चीज़ को उसकी जगह से हटा कर दूसरी जगह रखना। इसका मतलब यह हुआ कि किसी को उसका हक़ न देना, नाहक़ तरीक़े से किसी का हक़ मारना, बिना कसूर के किसी पर ज़्यादती करना, मामलात में नाहक़ तरफ़दारी करना वग़ैरह ज़ुल्म कहलाएगा। यह हुक्म इस क़दर भयानक जुर्म है कि इसे क़यामत की

तारीख़ी से मौसूम किया गया है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का फ़रमान है:

اتقوا الظلم فإن الظلم ظلمات يوم القيامة.(صحيح مسلم: 2578)

तर्जुमा: तुम ज़ुल्म से बचो क्योंकि ज़ुल्म क़यामत के दिन अंधेरों का बाइस होगा।

मैं इस मज़मून में यह बताना चाहता हूँ कि आज दुनिया ज़ुल्मों से भर गई है और ज़ुल्म का अंजाम तबाही और बर्बादी है। यही वजह है कि लोग अल्लाह की तरफ़ से क़िस्म-क़िस्म के अज़ाब में मुब्तिला हैं। यहाँ एक सवाल पैदा होता है कि मुसलमान तो अल्लाह पर ईमान लाने वाले हैं फिर वह क्यों परेशान हाल हैं? इसका जवाब यह है कि आज के बहुत ज़्यादा मुसलमान ज़ालिम हैं और वह अपने करतूत की वजह से अल्लाह के अज़ाब में मुब्तिला हैं। जवाब कुछ हैरान करने वाला है मगर हक़ीक़त पर मबनी (आधारित) है। इस जवाब को अच्छे से समझने के लिए ज़ुल्म की तारीफ़ ज़हन में रखते हुए उसकी क़िस्मों को जानना होगा।

क़ुरआन ने ज़ुल्म को मुख़्तलिफ़ तरीक़े से बयान किया है और मुत'अद्दिद क़िस्म की नाफ़रमानीयों को ज़ुल्म क़रार दिया है। उन सब का ज़िक्र लंबा हो जाएगा। इख़्तिसार (संक्षेप) के साथ हम तमाम क़िस्म के ज़ुल्मों को 3 सिफ़ात में बयान कर सकते हैं:

(1) ज़ुल्म की पहली क़िस्म अल्लाह के साथ शरीक करना है। अल्लाह इस कायनात का तन्हा ख़ालिक़ और मालिक है, उसने सिर्फ़ अपनी इबादत के लिए इंसान और जिन्न को पैदा किया है। इस वजह से जो रब की बंदगी छोड़ कर ग़ैरुल्लाह की बंदगी करे या उसकी बंदगी में ग़ैरुल्लाह को शामिल करे, वह अल्लाह की नज़र में ज़ालिम ही नहीं बहुत बड़ा ज़ालिम है क्योंकि अल्लाह के साथ शरीक करना भारी ज़ुल्म है। अल्लाह का फ़रमान है:

وإذ قال لقمان لابنه وهو يعظه يا بني لا تشرك بالله ان الشرك لظلم عظيم.(لقمان:13)

तर्जुमा: और जब लुक़मान ने सलाह करते हुए अपने बेटे से कहा कि मेरे प्यारे बेटे, अल्लाह के साथ शरीक मत करो। बेशक शरीक करना बड़ा भारी ज़ुल्म है।

ज़ुल्म की इस क़िस्म को दुनिया के मुसलमानों में तलाश करें तो मालूम होगा कि अक्सर मुसलमान ज़ालिम हैं। गांव-गांव, शहर-शहर दरगाहों और मज़ारों पर ग़ैरुल्लाह के लिए सजदे हो रहे हैं। अल्लाह को छोड़कर ग़ैरुल्लाह से मदद माँगी जा रही है। उन मोहताज और कमज़ोर बंदों को मुशकिल-कुशा/ग़ौस/दाता और ग़रीब नवाज़ समझा जा रहा है। रब्बुल आलमीन ने सच फ़रमाया है कि अल्लाह पर ईमान लाने वाले अक्सर मुशरिक हैं। फ़रमान-ए-इलाही है:

وما يؤمن أكثرهم بالله إلا وهم مشركون.(يوسف:106)

तर्जुमा: उनमें से अक्सर लोग बवजूद अल्लाह पर ईमान रखने के भी मुशरिक ही हैं।

कुरआन की यह आयत साफ़-साफ़ बता रही है कि कलमा पढ़ने वाले भी शरीक में मुब्तिला हैं। बल्कि ऐसे लोगों की दुनिया में कसरत है। जब इस दर्जे के मुसलमानों की अधिकांशता होगी, फिर कैसे न इब्तिला (मुसीबत) और आज़माइश में होंगे?

(2) ज़ुल्म की दूसरी क़िस्म भी हुक़ूक़ुल्लाह से मुताल्लिक़ है। और यहाँ पर इससे मुराद अल्लाह की वह इम्यूनिटी है जो शरीक के अलावा

हो। उसे मिसाल से ऐसे समझें कि हमें अल्लाह ने आंख से जायज़ चीज़ देखने का हुक्म दिया, कान से अच्छी बात सुनने का हुकम दिया मगर हम अल्लाह की नाफ़रमानी करते हुए आंख से गंदी तस्वीरें देखते हैं और कान से गाना सुनते हैं। तो यह अपनी आंखों और कानों पर ज़ुल्म करना भी कहा जाता है। यानी जब भी इंसान अल्लाह की नाफ़रमानी का कोई काम करता है, तो वह अपने नफ़्स (आत्मा) पर ज़ुल्म करता है। इस बात को अल्लाह ने कुरआन-ए-मुबारक में कई जगह बयान किया है। पहले वह आयत देखें जिसमें अल्लाह बयान करता है कि इंसान अपने नफ़्स पर ख़ुद ही ज़ुल्म करता है। अल्लाह फ़रमाता है:

ان اللہ لا یظلم الناس شیئا ولکن الناس أنفسهم يظلمون.(یونس:44)

तर्जुमा: यह यक़ीनी बात है कि अल्लाह लोगों पर कुछ भी ज़ुल्म नहीं करता लेकिन लोग ख़ुद ही अपनी जानों पर ज़ुल्म करते हैं।

और अब वह आयत देखें जिसमें अल्लाह बता रहा है कि अल्लाह की नाफ़रमानी और उसके हुदूद से तजावुज़ करना अपने नफ़्स पर ज़ुल्म करना है। फ़रमान-ए-रब्बुल आलमीन है:

ومن يتعد حدود الله فقد ظلم نفسه.(الطلاق:44)

तर्जुमा: जो शख़्स अल्लाह की हुदूद से आगे बढ़ जाए, उसने यक़ीनन अपनी जान पर ज़ुल्म किया।

ज़ुल्म की इस क़िस्म को मुसलमानों में तलाश करते हैं तो घर-घर और अक्सर मुसलमानों में कूट-कूट कर भरा हुआ है।

इन दोनों क़िस्मों के ज़ुल्म का हुक्म यह है कि अल्लाह तौबा के ज़रिये शरीक और अपने हक़ में होने वाली तमाम मासियात जो माफ़ कर देता है। लेकिन शिर्क पर किसी का ख़ात्मा हो जाए तो फिर अल्लाह के दरबार से इस ज़ुल्म की माफ़ी नहीं मिलती है। हमेशा हमेशा के लिए इस ज़ुल्म के बदले जहन्नम में जाना पड़ेगा। हालांकि शरीक के अलावा गुनाह को अल्लाह चाहे तो माफ़ कर दे और चाहे तो सज़ा दे। अल्लाह फ़रमाता है:

ان اللہ لایغفر ان یشرك به ویغفر ما دون ذللك لمن یشاء ومن یشرك باللہ فقد افترى اثما عظیما.(النساء:48)

तर्जुमा: यक़ीनन अल्लाह अपने साथ किए जाने को नहीं बख़्शता और इसके सिवा जिसे चाहे बख़्श देता है। और जो अल्लाह के साथ शरीक मुक़र्रर करे, उसने बहुत बड़ा गुनाह और बोहतान बांधा।

(3) ज़ुल्म की तीसरी क़िस्म हुक़ूक़ुल इबाद से मुताल्लिक़ है यानी एक आदमी किसी दूसरे आदमी पर किसी क़िस्म का ज़ुल्म करे। जैसे लोगों का नाहक़ खून करना, बेतरीक़ा से किसी का हक़ मारना, किसी का सामान छीन लेना या चोरी कर लेना, बिना वजह किसी को गाली देना, मासूम आदमी पर बोहतान लगाना, लोगों का दिल दुखाना, किसी की ग़ीबत और चुग़ली करना, कमज़ोरों को परेशान करना, हक़ के दाइयों के लिए मुश्किलात पैदा करना और मज़लूम के ख़िलाफ़ ज़ालिम की मदद करना वग़ैरह।

ज़ालिम की इन तीनों क़िस्मों में यह एक भयानक जुर्म है जिसे अल्लाह माफ़ नहीं करता और न ही नमाज़, रोज़ा और हज और उमरा जैसी नेकी से तलब होती है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

"من كانت له مظلمة لأخيه من عرضه أو شيء فليتحلله منه اليوم قبل أن لا يكون دينار ولا درهم إن كان له عمل صالح أخذ منه بقدر مظلمته وإن لم تكن له حسنات أخذ من سيئات صاحبه فحمل عليه" (صحيحالبخاري:2449)

तर्जुमा: अगर किसी शख़्स का ज़ुल्म किसी दूसरे की इज़्ज़त पर हो या किसी तरीक़े से ज़ुल्म किया हो तो आज ही उस दिन के आने से पहले माफ़ करवा लो जिस दिन न तो दीनार होंगे, न दिरहम, बल्कि

अगर उसका कोई नेक अमल होगा तो उसमें ज़ुल्म के बदले में वही ले लिया जाएगा और अगर कोई नेक अमल उसके पास नहीं होगा तो उसके (मज़लूम) साथी की बुराइयां उस पर डाल दी जाएंगी।

इस मानी (मतलब) की एक विस्तृत रिवायत सहीह मुस्लिम में आई है, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

"اتدرون ما المفلس؟ قالوا: المفلس فينا من لا درهم له ولا متاع فقال ان المفلس من أمتي يأتي يوم القيامة بصلاة وصيام وزكاة ويأتي قد شتم هذا، وقذف هذا واكل مال هذا وسفك دم هذا وضرب هذا فيعطى هذا من حسناته وهذا من حسناته فإن فنيت حسناته قبل ان يقضى ما عليه اخذ من خطاياهم فطرحت عليه ثم طرح في النار" (صحيح مسلم: 2581)

तर्जुमा: तुम जानते हो कि मुफ़्लिस कौन है? लोगों ने कहा: हमारे बीच मुफ़्लिस वह है जिसके पास रुपये और सामान न हो। आपने फ़रमाया: मुफ़्लिस मेरी उम्मत में वह होगा जो क़यामत के दिन नमाज़, रोज़ा और ज़कात ले कर आएगा लेकिन उसने दुनिया में किसी को गाली दी होगी, किसी पर बदकारी की तोहमत लगाई होगी, किसी का माल खा लिया होगा, किसी का ख़ून किया होगा, किसी को मारा होगा। फिर उन लोगों को (जिन्हें उसने दुनिया में सताया) उसकी नेकी दे दी जाएगी और जो उसकी नेकी उसके गुनाह अदा होने से पहले ख़त्म

हो जाएगी, तो उन लोगों की बुराइयां उस पर डाल दी जाएंगी और आख़िर मे उसे जहन्नम में डाल दिया जाएगा।

ज़ुल्म की इस क़िस्म को मुसलमानों में तलाश करने पर पता चलता है कि हर घर में ज़ालिम है। हर कोई दूसरे के लिए ज़ालिम है और अफ़सोस की बात यह है कि तक़लीदी मसाइल पर आधारित मुसलमान एक दूसरे पर ज़ुल्म की इंतिहा कर चुके हैं। अंधी तक़लीद और जमाअती असबियत में इस क़दर डूबे हुए हैं कि दीन के सच्चे दाई और मासूम उलमा को दहशतगर्द क़रार दे कर काफ़िरों के हाथों में थमा रहे हैं ताकि काफ़िर उन्हें क़त्ल कर दे या जेल की सलाखों में बंद कर के उन्हें दावत-ए-दीन से रोक दे। अल-इयाज़ु बिल्लाह।

काश ख़ुद को मुसलमान कहने वाले इस हदीस को अमल में लाते तो आज हम काफ़िरों से मग़्लूब न होते और इस तरह के ज़माने में ज़लील और ख़्वार न होते। अबू हुरैरह (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"لا تحاسدوا ولا تناجسوا ولا تباغضوا ولا تدابروا ولا يبع بعضكم على بيع بعض وكونوا عباد الله إخوانا المسلم اخوا المسلم لا يظلمه ولا يخذله. ولا يحقره التقوى هاهنا ويبشر إلى صدره

ثلاث مرات بحسب امرئ من الشر ان يحقر أخاه المسلم كل المسلم على المسلم حرام دمه،

وماله، وعرضه(सहीह मुस्लिम: 2564) "

तर्जुमा: हसद मत करो, धोकेबाज़ी मत करो, बुग़्ज़ मत करो, दुश्मनी मत करो, कोई तुममें से दूसरे की बिक्री पर बिक्री न करे और अल्लाह के बन्दे एक दूसरे के भाई बन जाओ। मुसलमान मुसलमान का भाई है, न उस पर ज़ुल्म करे, न उसे ज़लील करे, न उसे हक़ीर समझे। तक़वा यहाँ है और आपने अपने सीने की ओर इशारा किया तीन बार (यानी ज़ाहिर में अच्छे आमाल करने से आदमी मुत्तक़ी नहीं होता जब तक सीना उसका साफ़ न हो) काफ़ी है आदमी को अपनी बुराई से उसके मुसलमान भाई को हक़ीर समझे। मुसलमान की सारी चीज़ें दूसरे मुसलमान पर हराम हैं - उसका ख़ून, माल, इज़्ज़त और आबरू। आज एक मुसलमान ख़ुद दूसरे मुसलमान के लिए मुसीबत बना हुआ है और एक जमाअत दूसरे का ख़ून पीने वाली है। यह सब कुछ दुश्मनाने इस्लाम को मालूम है और वे इसका ख़ूब फ़ायदा उठा रहे हैं। आज मुसलमानों को क्या हो गया है कि वे अपने भाइयों की मदद करने के बजाय उनकी पीठ में छुरा घोंप रहे हैं? अल्लाह ने हमें अपने भाइयों के झगड़े समाप्त करने और उनकी इस्लाह करने का हुकम दिया है जबकि हम इसके बरक्स आपस में मुसलमानों को लड़ाने और

अपने भाइयों को मिटाने पर तुले हुए हैं। क्या ज़ालिम मुसलमान इस आयत की तिलावत नहीं करते:

"انما المؤمنون اخوة فاصلحوا بین اخویکم واتقوا اللہ لعلکم ترحمون" (الحجرات: 10)

तर्जुमा: बेशक सारे मुसलमान भाई भाई हैं, फिर अपने दो भाइयों के बीच सुलह कर दिया करो और अल्लाह से डरते रहो ताकि तुम पर रहम किया जाए।

ज़ालिम लोग समझते हैं कि अल्लाह उनके कामो (कर्मों) से ग़ाफ़िल है, हरगिज़ नहीं, बल्कि वह ज़ालिम के आमाल से बख़ूबी वाक़िफ़ है। बस थोड़ी मोहलत देता है और जब तबाही का वक्त आ जाता है तो फिर कोई बचाने वाला नहीं होता।

"ولا تحسبن الله غافلا عما يعمل الظالمون انما يوخرهم ليوم تشخص فيه الأبصار" (ابراهيم: 42)

तर्जुमा: ज़ालिमों के आमाल से अल्लाह को ग़ाफ़िल न समझो, वह तो उन्हें उस दिन तक मोहलत दिए हुए है जिस दिन आंखें फटी की फटी रह जाएंगी।

और अल्लाह के नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फरमान है:

"ان الله ليملي للظالم حتى إذا اخذه لم يفلته" (صحيح البخاري:4686)

तर्जुमा: अल्लाह ज़ालिम को थोड़े समय तक दुनिया में मोहलत देता रहता है लेकिन जब पकड़ता है तो फिर नहीं छोड़ता।

क़ुरआन ज़ालिमों की बेहिसाब दास्तानें हमसे बयान करता है, बड़े बड़े ज़ालिम दुनिया से नस्त और तबाह किए गए। कहीं उनका अता-पता और नाम-निशान नहीं मिलता।

"نا غور سکندر نہ ہی قبر دارا "

"मिट गया नामों ناموں के निशान कैसे कैसे"

क्या नमरूद और क्या फ़िरौन? अल्लाह ने बस्ती की बस्ती हलाक कर दी, अल्लाह का फ़रमान है:

"وكم قصصنا من قرية كانت ظالمة وانشأنا بعدها قوما آخرين" (الانبياء:11)

तर्जुमा: और बहुत सी बस्तियाँ हम ने तबाह कर दीं जो ज़ालिम थीं और उनके बाद हम ने दूसरी क़ौम को पैदा कर दिया।

ज़ुल्म की होलनाकी देखे के मज़लूम की आह-ओ-बुका (रोना-धोना) और अल्लाह के बीच कोई रुकावट नहीं है और फिर मज़लूम फ़ासिक़ और फ़ाजिर हो यहाँ तक कि काफ़िर हो, तब भी उसकी बद्दुआ ज़ालिम के ख़िलाफ़ अल्लाह क़ुबूल कर लेता है। इस से मुताल्लिक़ तीन क़िस्म की अहादीस हाज़िर हैं। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

"اتـق دعوة المظلوم فإنها ليس بينها وبين الله حجاب" (صحيح البخاري:2448)

तर्जुमा: मज़लूम की बद्दुआ से बचो क्योंकि इसके और अल्लाह के बीच कोई पर्दा नहीं होता।

नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

"دعوة المظلوم المستجابة وإن كان فاجرا ففجوره على نفسه" (صحيح الترغيب: 2229)

तर्जुमा: मज़लूम की दुआ क़ुबूल कर ली जाती है, अगर वह फ़ाजिर हो तो उसकी बुराई उसी के नफ़्स पर होगी।

नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

"اتقوا دعوة المظلوم وإن كان كافرا فإنه ليس دونها حجاب" (صحيح الجامع: 119)

तर्जुमा: मज़लूम की बद्दुआ से बचो, हालांकि वह काफ़िर हो क्योंकि इसके लिए कोई रुकावट नहीं होती।

ज़ुल्म का सबसे भयानक अंजाम यह है कि ज़ालिमों को आख़िरत में सज़ा मिलनी ही मिलनी है, दुनिया में भी यक़ीनी तौर पर और हर हाल में अल्लाह के अज़ाब में गिरफ़्तार होते हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

"ما من ذنب اجدر ان يعجل الله لصاحبه العقوبة في الدنيا مع ما يدخر له في الاخرة من البغي وقطيعة الرحم" (صحيح ابن ماجه: 3413)

तर्जुमा: ज़ुल्म और रिश्तों की क़ता से बढ़कर कोई गुनाह नहीं है जिस का मुर्तकिब ज़्यादा लाइक़ है कि उसे अल्लाह की जानिब से दुनिया में भी जल्दी सज़ा दी जाए और आख़िरत के लिए भी उसे बाक़ी रखा जाए।

आख़िर में बयान करना चाहता हूँ कि बेशक हम सब अपनी जानों पर ज़ुल्म करने वाले हैं, इस गुनाह को अल्लाह माफ़ कर सकता है लेकिन जो गुनाह जहन्नम को वाजिब करने वाले हैं, उससे हर हाल में बचना

होगा। आइए अपने हिसाब किताब करें कि हमने किस-किस के हक़ में ज़ुल्म किया है - औलाद, रिश्तेदार, पड़ोसी, उलमा - इन सभी से अपने जुर्म की तलबि करवाएं और आगे मुसलमानों के हक़ में ज़ुल्म करने से बचें। यहाँ तक कि किसी काफ़िर या किसी जानवर पर भी ज़ुल्म न करें और मेरी बात का यक़ीन करें कि अगर मुसलमान अपनी ज़िंदगी से ज़ुल्म ख़त्म कर ले और आपस में ईमान वाले भाई बन जाएं तो दुश्मन पर फिर से ग़ालिब आ जाएंगे। अल्लाह का फ़रमान है:

"ولا تهنوا ولا تحزنوا وانتم الأعلون إن كنتم مؤمنين" (آل عمران:139)

तर्जुमा: और तुम सुस्ती न करो और न ही ग़मगीन हो, तुम ही ग़ालिब रहोगे अगर तुम ईमान वाले हो।

और एक आख़िरी बात आप सब से आदाब और इज़्ज़त के साथ कहना चाहता हूँ कि मज़लूम मुसलमान जो जेलों और काफ़िरों के निशाने पर हैं, उनकी मदद करें चाहे वे किसी तबक़े और मसलक से हों और मुसलमानों में जो ज़ालिम हैं, उन्हें ज़ुल्म से रोकें। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

"لنصر أخاك ظالما أو مظلوما" قالوا يا رسول الله هذا ننصره مظلوما فكيف ننصره ظالما قال: "تأخذ فوق يديه" (صحيح البخاري:2444)

तर्जुमा: अपने भाई की मदद करो चाहे वह ज़ालिम हो या मज़लूम। सहाबा ने पूछा, "या रसूलल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम), हम तो मज़लूम की मदद कर सकते हैं लेकिन ज़ालिम की मदद कैसे करें?" आपने फ़रमाया: "ज़ुल्म से उसका हाथ पकड़ लो।" (यही उसकी मदद है।)

===========

[10].इद्दत मे निकाह का हुक्म

औरतों में एक बुराई फैलती नज़र आ रही है वो ये के इद्दत में ही दूसरे मर्द से शादी कर लेती हैं जब कि अल्लाह ने इद्दत गुज़ारने वालीयो को अपनी इद्दत मुकम्मल करने और मर्दों को उनकी इद्दत गुज़र जाने के बाद उन से निकाह करने का हुक्म दिया है, फ़रमान ए इलाही है:

وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيمَا عَرَّضْتُمْ بِهِ مِنْ خِطْبَةِ النِّسَاءِ أَوْ أَكْنَنْتُمْ فِي أَنْفُسِكُمْ عَلِمَ اللهُ أَنَّكُمْ سَتَذْكُرُونَهُنَّ وَلَكِنْ لَا تُوَاعِدُوهُنَّ سِرًّا إِلَّا أَنْ تَقُولُوا قَوْلًا مَعْرُوفًا وَلَا تَعْزِمُوا عُقْدَةَ النِّكَاحِ حَتَّى يَبْلُغَ الْكِتَابُ أَجَلَهُ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا فِي أَنْفُسِكُمْ فَاحْذَرُوهُ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ غَفُورٌ حَلِيمٌ

तर्जुमा: तुम पर इसमें कोई गुनाह नहीं है कि तुम इशारतन या किनायतन (संकेत में) उन औरतों से निकाह के मुताल्लिक़ कहो, या अपने दिल में पोशीदा इरादा करो। अल्लाह तआला को इल्म है कि तुम ज़रूर उन्हें याद करोगे, लेकिन तुम उनसे पोशीदा वादा न कर लो। हाँ, यह और बात है कि तुम भली बात कहा करो और 'अक़्द-ए-निकाह जब तक कि इद्दत ख़त्म न हो जाए, पक्का न करो। जान

रखो कि अल्लाह तआला को तुम्हारे दिलों की बातों का भी इल्म है। तुम उससे ख़ौफ़ खाते रहो और यह भी जान रखो कि अल्लाह तआला बख़्शिश और इल्म वाला है। (सूरा अल-बक़रा: 235)

यह आयत उस औरत के बारे में है जिसकी शौहर (पति) का इंतकाल हो जाए, कि उस औरत से कोई मर्द उस वक्त तक निकाह न करे जब तक कि वह इंतकाल की इद्दत पूरी न कर ले। यहाँ तक कि इद्दत में निकाह का पैग़ाम देना भी जाइज़ नहीं है, अलबत्ता इशारा-किनाया में निकाह का इज़हार किया जा सकता है। मिसाल के तौर पर यह कहे कि मैं किसी औरत से शादी करना चाहता हूँ। यही हुक्म मुतल्लक़ा सलासा [जिसे 3 तलाक़, यानी तलाक़-ए-बाइन (तीन मर्तबा की तलाक़) दी गई हो] और ख़ुल (वो तलाक़ जो स्त्री धन या संतान देकर और मह्र माफ़ करके प्राप्त करे) वाली का है। पहली और दूसरी तलाक़ की इद्दत रज'ई होती है, इस वजह से इस इद्दत में न सराहतन निकाह का पैग़ाम देना जाइज़ है और न ही किनाया (इशारे) में, क्योंकि मुमकिन है कि शौहर रूजू कर ले। इस आयत से हमें मालूम हो गया कि हालात-ए-इद्दत में चाहे तलाक़ हो या इंतकाल या ख़ुला, निकाह का पैग़ाम देना जाइज़ नहीं है और शादी करना भी जाइज़ नहीं है, बल्कि इद्दत में निकाह की हुरमत पर अहल-ए-इल्म का

इत्तेफ़ाक़ है। मगर अपनी सोसाइटी में आजकल औरतों में इद्दत के ताल्लुक़ से लापरवाही देखी जा रही है। कुछ औरतें ऐसी देखने को मिलती हैं जो इद्दत को कोई मतलब नहीं देतीं, यानी इद्दत में जिन बातों का ख़्याल किया जाना चाहिए वह नहीं करतीं और कुछ औरतें इस क़दर दीन से दूर नज़र आती हैं कि इद्दत में भी दुसरे मर्द से शादी कर लेती हैं।

यहां इसी सवाल का जवाब देना मक़सद है कि अगर कोई औरत दौरान-ए-इद्दत निकाह कर लेती है तो उसका शरीअत में क्या हुक्म है?

एक तरफ़ निकाह के सही के लिए निकाह के मवाने (निकाह से रोकने वाली चीज़ों) का न पाया जाना ज़रूरी है और इद्दत निकाह के मवाने में से है। दूसरी तरफ़ हमने ऊपर क़ुरआन की रोशनी में यह जाना कि इद्दत में निकाह का पैग़ाम देना या निकाह करना जाइज़ नहीं है। अहल-ए-इल्म ने दौरान-ए-इद्दत निकाह करने को हराम क़रार दिया है। इस वजह से इद्दत में जो निकाह किया गया, वह निकाह बातिल है।

दौरान-ए-इद्दत निकाह हुआ ही नहीं तो फिर मर्द और औरत एक साथ नहीं रह सकते। उन्हें एक-दूसरे से अलग कर दिया जाएगा।

अलग करने के लिए तलाक़ की ज़रूरत नहीं है क्योंकि तलाक़ तो मियाँ बीवी (पति-पत्नी) के दरमियाँन होती है, जबकि यह दोनों मियाँ बीवी के हुक्म में नहीं हैं।

दोनों को अलग करने के बाद औरत पहले शौहर की बाक़ी की इद्दत मुकम्मल करेगी, फिर चाहे तो वली की रज़ामंदी के साथ मौजूदा मर्द के साथ निकाह कर सकती है। और इद्दत में निकाह करना गुनाह होने के सबब अल्लाह से सच्ची तौबा भी करनी चाहिए। दौरान-ए-इद्दत निकाह करने वाली औरत से मुताल्लिक़ उमर रज़ियल्लाहु अन्हु का फ़तवा यह है:

"उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा: जो औरत अपनी इद्दत में निकाह कर ले और उससे मर्द ने अभी हमबिस्त्री नहीं की है, तो दोनों को अलग कर दिया जाएगा, फिर औरत पहले पति की बाक़ी की इद्दत गुज़ारेगी। और चाहे तो दूसरा मर्द निकाह का पैग़ाम देने वालों की तरह पैग़ाम दे सकता है। और अगर दूसरे मर्द ने जिमा कर लिया, तो दोनों को अलग कर दिया जाएगा, फिर औरत पहले शौहर की इद्दत गुज़ारेगी और यह दूसरा मर्द उस औरत से ज़िंदगी में कभी निकाह नहीं कर सकेगा।" (उरवा अल-ग़लील: 2125, अल्बानी रहिमहुल्लाह ने सनदन सही कहा है।)

उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के फ़तवे में दो हालात का ज़िक्र है, एक यह है कि इद्दत में निकाह करने वाली औरत के साथ दूसरे मर्द ने जिमा नहीं किया हो तो अलग के बाद पहले शौहर की बाक़ी की इद्दत गुज़ार कर दूसरे मर्द से निकाह कर सकती है। दूसरी हालत यह है कि अगर दूसरे मर्द ने जिमा कर लिया तो फिर पहले शौहर की इद्दत गुज़ारेगी, उसके बाद दूसरे मर्द की भी इद्दत गुज़ारेगी और दूसरे मर्द से फिर कभी निकाह नहीं कर सकेगी।

ख़ुलासा यह है कि दौरान-ए-इद्दत निकाह करने वाली औरत को मर्द से अलग कर दिया जाएगा और पहले शौहर की बाक़ी की इद्दत गुज़ार कर दूसरे मर्द से निकाह करना जायज़ होगा। दूसरे शौहर की इद्दत गुज़ारना जरूरी नहीं है, हालांकि उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के फ़तवे की रोशनी में एहतियात यह है कि दूसरी इद्दत भी गुज़ारी जाए अगर जिमा हुआ है। और जहां तक उमर रज़ियल्लाहु अन्हु की बात है कि दूसरे मर्द से जिमा हुआ हो तो आपस में फिर निकाह नहीं होगा, उन्होंने रुजू' कर लिया था इस वजह से सही यह है कि इद्दत के बाद दूसरे मर्द से निकाह करना जाइज़ है, यही जम्हूर उलमा का मौक़िफ़ है।

[11].इस्क़ात ए हमल पर दियत और कफ़्फ़ारा का हुक्म

आज इंसानी जान की क़ीमत गाजर और मूली से कमतर मालूम होती है। यही वजह है कि क़त्ल जैसे संगीन अपराध अब खेल तमाशा बन गए हैं। क़ातिलों के ख़िलाफ़ कोई सख़्त इक़्दाम नहीं, बल्कि अक्सर क़ातिलों को पनाह दी जाती है। पनाह देने वाले सामाजिक व्यक्ति ही नहीं, अदालत और कचहरी भी हैं। एक क़ातिल को खुले आम घूमते देख कर दूसरों में भी क़त्ल और ग़ारतगिरी का 'उंसुर (अंदेशा) पैदा हो जाता है। इस तरह आज का समाज क़त्ल और ख़ून में लथपथ है, इंसानियत सिसक रही है और सरकार और अदालत के क़ानून काग़ज़ों की सिर्फ़ ज़ीनत बने हुए हैं।

मज़कूरा तम्हीद का उन्वान (शीर्षक) यह है कि माँ के पेट में पल रहे बच्चे का इस्क़ात (गर्भ गिराना) भी क़त्ल जैसा संगीन जुर्म है, बल्कि एक तरह से क़त्ल से भी भयानक जुर्म है। यह वह सफ़्फ़ाकाना (निर्दयी) क़त्ल है जो ज़माना-ए-जाहिलिय्यत में ज़िंदा दफ़्न होने वाली लड़कियों के समान है। कल क़यामत में उन सभी से सवाल किया जाएगा जिन्होंने किसी का क़त्ल किया या क़त्ल करने में मदद की, मासूम का ख़ून बहाया, हमल को तबाह किया और ज़िंदा दफ़्न किया।

आजकल हमल तबाह करना मामूली सी बात बन गई है, न डॉक्टर को शर्म और ख़ौफ़ है अबॉर्शन में और न ही शौहर या बीवी को। और इस ज़माने का क़ानून तो अंधा बहरा है ही। ऐसे पुर फ़ितना हालात में अल्लाह ही लोगों को हिदायत देने वाला है। अल्लाह ने अपने बंदों को फ़क्र और फ़ाक़ा के डर से औलाद का क़त्ल करने से मना किया है और आज उसी वजह से अक्सर अबॉर्शन हो रहा है। मुसलमान होने का मतलब अल्लाह का मुती (इताअत करने वाला) और फ़रमाबरदार होना है। अगर हम वाक़ई मुसलमान हैं तो माँ के पेट में पल रहे बच्चे की हिफ़ाज़त वालिदैन की ज़िम्मेदारी है। यह अल्लाह की अमानत है, उसे नुक़सान पहुंचाना या तबाह करना अमानत में ख़ियानत और इंसानी क़त्ल है।

हमल एक नफ़्स और एक जान है, हमल की अवधि जैसे-जैसे बढ़ती है उसमें ख़िल्क़त परवान चढ़ती है। हमल के पहले 40 दिन के बाद दूसरा 40वां दौर शुरू होता है, तो 42 दिन में इंसानी तख़लीक़ की शुरुआत हो जाती है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

إِذَا مَرَّ بِالنُّطْفَةِ ثِنْتَانِ وَأَرْبَعُونَ لَيْلَةً، بَعَثَ اللَّهُ إِلَيْهَا مَلَكًا، فَصَوَّرَهَا وَخَلَقَ سَمْعَهَا وَبَصَرَهَا وَجِلْدَهَا وَلَحْمَهَا وَعِظَامَهَا(صحيح مسلم :2645)

तर्जुमा: जब नुत्फ़ा पर 42 रातें गुज़र जाती हैं तो अल्लाह उसके पास एक फ़रिश्ता भेजता है, वह उसकी सूरत बनाता है, उसके कान, आँखें, त्वचा, मांस और हड्डियाँ बनाता है।

और सहीह मुस्लिम की रिवायत से मालूम होता है कि 120 दिन यानी 4 महीने की अवधि पर जनीन (गर्भ का बच्चा) में रूह फूंक दी जाती है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

إنَّ أَحَدَكُمْ يُجْمَعُ خَلْقُهُ في بَطْنِ أُمِّهِ أَرْبَعِينَ يَوْمًا، ثُمَّ يَكونُ في ذلكَ عَلَقَةً مِثْلَ ذلكَ، ثُمَّ يَكونُ في ذلكَ مُضْغَةً مِثْلَ ذلكَ، ثُمَّ يُرْسَلُ المَلَكُ فَيَنْفُخُ فيه الرُّوحَ(صحيح مسلم: 2643)

तर्जुमा: बेशक तुममें से हर एक आदमी का नुत्फ़ा उसकी माँ के पेट में 40 दिन रहता है, फिर 40 दिन में लहु की फुटकी हो जाती है, फिर 40 दिन में मांस की बोटी बन जाती है, फिर अल्लाह उसकी तरफ़ फ़रिश्ते को भेजता है, वह उसमें रूह फूंकता है।

इस हदीस से मालूम होता है कि जनीन (गर्भ का बच्चा) पर 4 दौर गुज़रते हैं, तब जाकर ख़िल्क़त मुकम्मल होती है। पहले दौर जो 40 दिनों पर मुहीत होता है, गसमें मनी पर मुख़्तलिफ़ मराहिल गुज़रते हैं, उस मरहले को नुत्फ़ा कहा जाता है। फिर दूसरे मरहले (40 दिन)

में नुत्फ़ा मुख़्तलिफ़ मराहिल से गुज़र कर मुंजमिद ख़ून की शक्ल इख़्तियार करता है, इस मरहले को 'अलक़ा (नुत्फ़े के बाद की हालत को) कहा जाता है। फिर तीसरे मरहले (40 दिन) में मुंजमिद ख़ून मांस के लोथड़े की शक्ल इख़्तियार करता है, उसे मुज़ग़ा कहा जाता है। इन तीन मराहिल से गुज़र कर जनीन में आज़ा (अंगों) की तशकील और हड्डियों की बनावट के आसार ज़ाहिर हो जाते हैं और जब 4 महीने बाद अंगों का ज़हूर हो जाता है तो उसमें रूह फूंक दी जाती है।

इन बातों से हमने यह जाना कि जब हमल ठहर जाता है तो फिर उसके पैदा होने का सिलसिला जारी रहता है। इस वजह से शुरू हमल में या दर्मियान या आख़िर में कभी भी इस्क़ात (गर्भ गिरना) जाइज़ नहीं है। जिन उलमा ने कहा कि बिना सबब भी पहले 40 दिन में अबॉर्शन कर सकते हैं, वह ग़लतफ़हमी पर हैं। हमल के मामले में असल यही है कि बिना उज़्र (सुसंगत कारण) के इसका इस्क़ात न तो पहले दौर में जाइज़ है और न ही दूसरे, तीसरे और आख़िरी दौर में। बल्कि 42 दिन के बाद जब कान, नाक, आँख के आसार पैदा हो जाते हैं, तब और भी सख़्त जुर्म है और उससे बड़ा जुर्म 120 दिन के बाद अबॉर्शन है, क्योंकि उस समय बच्चे में रूह फूंक दी जाती है।

अगर किसी औरत ने ख़ुद से या शौहर या किसी अन्य के बहकावे में आकर अबॉर्शन करवा दिया है, तो उस औरत पर लाज़िम है कि फ़ौरन अल्लाह के हुज़ूर गिड़गिड़ा कर सच्ची तौबा करे और कसरत से इस्तिग़फ़ार करे ताकि कहीं यह जुर्म उसकी हलाकत का मूजिब न बन जाए। सच्ची तौबा से मुमकिन है कि गुनाहगार को बख़्श दिया जाए।

अब यहाँ यह जानना है कि अगर किसी औरत ने बिना उज़्र आमदन (जानबूझ कर) अबॉर्शन करवाया है तो क्या उस पर तौबा के साथ कफ़्फ़ारा भी होगा?

इस सवाल का जवाब यह है कि अगर इस्क़ात पहले दौर यानी पहले 40 दिन में हुआ है तो इसमें औरत पर सिर्फ़ तौबा और इस्तिग़फ़ार लाज़िम है। और अगर दूसरे दौर में, 42 दिन के बाद और रूह फूंकने से पहले हुआ हो, तो दियत (खून का मुआवज़ा) देना होगा, क्योंकि इस मरहले में इंसानी पैदाइश की शुरुआत हो चुकी होती है, जैसा कि सहीह मुस्लिम की रिवायत से मालूम हुआ है। इस दियत की दलील मुंदरिजा-ज़ेल है:

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ، أَنَّ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَضَى فِي امْرَأَتَيْنِ مِنْ هُذَيْلٍ اقْتَتَلَتَا، فَرَمَتْ إِحْدَاهُمَا الأُخْرَى بِحَجَرٍ، فَأَصَابَ بَطْنَهَا وَهِيَ حَامِلٌ، فَقَتَلَتْ وَلَدَهَا الَّذِي فِي بَطْنِهَا، فَاخْتَصَمُوا إِلَى النَّبِيِّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، فَقَضَى: أَنَّ دِيَةَ مَا فِي بَطْنِهَا غُرَّةٌ عَبْدٌ أَوْ أَمَةٌ، فَقَالَ وَلِيُّ المَرْأَةِ الَّتِي غَرِمَتْ: كَيْفَ أَغْرَمُ، يَا رَسُولَ اللَّهِ، مَنْ لاَ شَرِبَ وَلاَ أَكَلَ، وَلاَ نَطَقَ وَلاَ اسْتَهَلَّ، فَمِثْلُ ذَلِكَ يُطَلُّ، فَقَالَ النَّبِيُّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: «إِنَّمَا هَذَا مِنْ إِخْوَانِ الكُهَّانِ»(صحيح البخاري:5758)

तर्जुमा: क़बीला हुज़ैल की दो औरतों के बारे में जिन्होंने झगड़ा किया था यहाँ तक कि उन में से एक औरत ने दूसरी को पत्थर फेंक कर मारा (जिसका नाम मुलैका-बिन्ते-उवैमिर था) वो पत्थर औरत के पेट में जा कर लगा। ये औरत हामला थी इसलिये उसके पेट का बच्चा (पत्थर की चोट से) मर गया। ये मामला दोनों फ़रीक़ नबी करीम (सल्ल०) के पास ले गए तो आप ने फ़ैसला किया कि औरत के पेट के बच्चे की दीयत एक ग़ुलाम या लौंडी आज़ाद करना है जिस औरत पर तावान (जुर्माना) वाजिब हुआ था उसके वली (हमल-बिन-मालिक-बिन-नाबग़ा) ने कहा, या रसूलुल्लाह! मैं ऐसी चीज़ की दीयत कैसे दे दूँ जिसने न खाया न पिया न बोला और न पैदाइश के वक़्त उसकी आवाज़ ही सुनाई दी? ऐसी सूरत में तो कुछ भी दीयत नहीं हो सकती। आप (सल्ल०) ने इस पर फ़रमाया कि ये शख़्स तो काहिनों का भाई मालूम होता है।

42 दिन से लेकर 120 दिन तक इस्क़ात (गर्भ गिराना) करवाने की स्थिति में दियत (ख़ून की क़ीमत) देना होगा। दियत को " غرة عبد أو أمة" से तआबीर किया गया है, यानी एक ग़ुलाम या लौंडी की शक्ल में बच्चे की दियत होगी। इससे मुराद माँ की दियत का दसवाँ हिस्सा है, जो 5 ऊंट बनता है। इस बाबत शैख़ इब्ने बाज़ रहिमहुल्लाह ने ज़िक्र किया कि "मर्द की दियत 100 ऊंट है, इसका आधा 50 ऊंट की दियत औरत की होगी। इस तरह औरत की दियत का दसवाँ हिस्सा 5 ऊंट बनता है और आजकल दियत की क़ीमत एक लाख रियाल है, इस तरह औरत की दियत का दसवाँ हिस्सा 5000 रियाल होगा। यह दियत जनीन के वारिसों में तक़सीम होगी, हालांकि जनीन के क़ातिल चाहे माँ हो या बाप या दोनों, उन्हें हिस्सा नहीं मिलेगा, क्योंकि रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

ليس للقاتلِ شيءٌ، وإن لمْ يكن لهُ وارثٌ، فوارثهُ أقربُ الناسِ إليه، ولا يرثُ القاتلُ شيئًا(صحيح أبي داود:4564)

तर्जुमा: "क़ातिल के लिए कुछ भी नहीं है, और अगर उसका कोई वारिस न हो तो उसका वारिस सबसे क़रीबी रिश्तेदार होगा, लेकिन क़ातिल किसी चीज़ का वारिस नहीं होगा।"

अगर इस्क़ात रूह फूंकने के बाद गिराया गया हो, जिसके नतीजे में जनीन (गर्भ का बच्चा) की मौत हो जाए, तो दियत के साथ कफ़्फ़ारा

भी देना पड़ेगा। और कफ़्फ़ारा यह है कि या तो एक मुसलमान गुलाम की गर्दन आज़ाद करे या फिर लगातार 2 महीने रोज़े रखे। मक्तूल के वारिस चाहें तो दियत माफ़ हो सकती है, लेकिन कफ़्फ़ारा माफ़ नहीं हो सकता, क्योंकि दिय्यात हुक़ूकुल इबाद (इंसानी अधिकार) है, जो बंदों के माफ़ करने से माफ़ हो जाएगा, लेकिन कफ़्फ़ारा अल्लाह का हक़ है, जिसे फ़र्ज़ कर दिया गया है, उसे हर हाल में अदा करना होगा। अल्लाह का फ़रमान है:

ومن قتل مؤمنا خطأ فتحرير رقبة مؤمنة ودية مسلمة إلى أهله إلا أن يصدقوا (النساء:92)

तर्जुमा: "जो शख़्स किसी मुसलमान को बिना क़सद (जानबूझ कर) मार डाले, उस पर एक मुसलमान गुलाम की गर्दन आज़ाद करना और मक्तूल के अज़ीज़ों को ख़ून बहा पहुँचाना है। हाँ, यह और बात है कि वह लोग दिय्यात (सदक़ा) माफ़ कर दें (तो कोई बात नहीं)।"

आख़िर में मुसलमान औरतों से गुज़ारिश करता हूँ कि मग़रिबी तहज़ीब की नक़ल और दूसरों की देखा-देखी में अपनी औलाद का क़त्ल न करें, न ही फ़क्र और तालीम का बहाना बना कर मासूम की जान लें। याद रखें, रोज़ी का मालिक अल्लाह है, जिस तरह वह आपको रोज़ी देता है, इसी तरह आने वाले बच्चों को भी उनके नसीब की रोज़ी देगा। अगर आपने यह बात ज़हन में न बिठाई और मनमानी करते हुए

हमल साक़ित कराते रहे, तो ऐन मुमकिन है कि बच्चे की रोज़ी का हिस्सा आपकी रोज़ी से कम कर दिया जाए, ज़िंदगी में आज़माइश बढ़ा दी जाए और मासूम बच्चे के क़त्ल के जुर्म में आख़िरत में दर्दनाक सज़ा से दो-चार किया जाए। अल-हिफ़्ज़ो वल-अमाँ

12].इस्ति'आनत के बाब मे बरेलवियो का एक फ़रेब

बरेलवियत एक ऐसे तरीक़े का नाम है जिसमें अल्लाह को छोड़कर ग़ैरुल्लाह से माँगा जाता है, ग़ैरुल्लाह को सज्दा किया जाता है, उसे मुश्किल कुशा और हाजत रवा माना जाता है। इसलिए बरेलवियों को जब औलाद चाहिए, या मुसीबत दूर करनी हो, या रोज़ी-रोटी का सवाल हो, ये लोग मरे हुए मुर्दों को पुकारते हैं और उनसे औलाद, बारिश, रोज़ी-रोटी बल्कि सब कुछ माँगते हैं और मुसीबत में भी ग़ैरुल्लाह को ही पुकारते हैं। यही वजह है कि इन बरेलवियों की तमाम तर भाग-दौड़ क़ब्रों-मज़ारों और मय्यत वग़ैरह ग़ैरुल्लाह की तरफ़ होती है। हालाँकि यह शिर्क का रास्ता है जो जहन्नम की तरफ़ ले जाता है।

जब इन क़ब्र परस्तो को फ़रमान-ए-इलाही और फ़रमान-ए-रसूल सुनाया जाता है तो हक़ तस्लीम करने के बजाय उल्टा हक़ बताने वाले को ही ग़लत बताते हैं और अपनी बात मनवाने के लिए बातिल इस्तिदलाल पेश करते हैं। इस तहरीर में इन लोगों के एक बातिल इस्तिदलाल की हक़ीक़त आपसे बयान करूँगा। वो मसला यह है कि जब हम बरेलवी से कहते हैं कि ग़ैरुल्लाह से मदद न माँगो, ग़ैरुल्लाह को न पुकारो, तो बरेलवी जवाब देता है कि फिर तुम माँ से रोटी कैसे माँगते हो,

बाप से पैसा क्यों माँगते हो, दर्ज़ी से कपड़ा क्यों सिलवाते हो? इस तरह कई बातें बयान करता है। बरेलवी का यह जवाब बिल्कुल बातिल है। आइये, इस बात की हक़ीक़त जानते हैं।

मदद तलब करना जिसे अरबी में इस्ति'आनत कहते हैं, इसकी दो क़िस्में हैं:

1. इस्ति'आनत (seeking help or assistance) की पहली क़िस्म "मा-तहत अल-असबाब" है। इससे मुराद यह है कि हम दूसरों से ऐसे उमूर में मदद हासिल कर सकते हैं जो असबाब व वसाइल के तहत हों या यह कह लें कि जो उसके इख़्तियार में हो, जैसे माँ से खाना माँगना, बाप से पैसे माँगना, दर्ज़ी से कपड़े सिलवाना वग़ैरह। इनके बस में ये इख़्तियारात हैं, इसलिए इन चीज़ों में दूसरे से मदद ले सकते हैं, लेकिन इनके बस में औलाद देना नहीं है तो उनसे औलाद नहीं माँगेंगे।

(2) इस्ति'आनत की दूसरी क़िस्म "मा-फ़ौक़ अल-असबाब" है। इससे मुराद यह है कि जो असबाब के तहत न हो, असबाब व वसाइल से ऊपर की चीज़ हो या यह कह लें कि जिस बात का इख़्तियार किसी

मख़लूक़ को न हो, वो चीज़ मख़लूक़ से माँगना शिर्क है। वो सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह से ही माँगी जाएगी।

गोया मदद हासिल करने की दो क़िस्में हैं मगर बरेलवी हज़रात इन दोनों क़िस्मों को ख़ल्त-मल्त (mixed) करके अवाम को धोका देते हैं और यह साबित करना चाहते हैं कि ग़ैरुल्लाह को मदद के लिए पुकारना जाइज़ है, जबकि हमें साफ़-साफ़ मालूम हो रहा है कि मख़लूक़ से हम वही चीज़ माँग सकते हैं जिसका अल्लाह ने उसे इख़्तियार दिया है, यानी जो इस्ति'आनत की पहली क़िस्म से ताल्लुक़ रखती है। और मख़लूक़ से हम वो चीज़ नहीं माँग सकते हैं जिसका इख़्तियार अल्लाह ने उसे दिया ही नहीं है। बतौर मिसाल, बुख़ारी की एक हदीस पर ग़ौर करें।

अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरवी है, नबी (ﷺ) अपनी बेटी सय्यदा फ़ातिमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से फ़रमाते हैं:

يَا فَاطِمَةُ بِنْتَ مُحَمَّدٍ، سَلِينِي ما شِئْتِ مِن مَالِي، لا أُغْنِي عَنْكِ مِنَ اللَّهِ شيئًا.(صحيح البخاري:4771)

तर्जुमा: "ऐ फ़ातिमा! मोहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की बेटी! मेरे माल में से जो चाहो मुझसे ले लो लेकिन अल्लाह की बारगाह में, मैं तुम्हें कोई फ़ायदा न पहुँचा सकूँगा।"

दुनिया में नबी (ﷺ) के पास माल देने का इख़्तियार था तो आपने अपनी बेटी से कहा कि अगर तुझे माल की ज़रूरत हो तो माँग सकती हो, मगर आख़िरत में अल्लाह के यहाँ मैं तुम्हें कुछ भी फ़ायदा नहीं पहुँचा सकूँगा।

इस बात को समझ लेने के बाद कि मख़लूक़ से हर चीज़ नहीं माँग सकते हैं, मख़लूक़ से सिर्फ़ "मा-तहत अल-असबाब" ही माँग सकते हैं और "मा-फ़ौक़ अल-असबाब" का मख़लूक़ से सवाल करना शिर्क है।

कोई आपसे सवाल करे कि ग़ैरुल्लाह को पुकारना शिर्क क्यों है तो इसका जवाब यह है कि पुकार और दुआ इबादत है और तमाम क़िस्म की इबादत सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह के लिए है।

नौ'मान बिन बशीर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) कहते हैं कि नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

الدُّعَاءُ هُوَ الْعِبَادَةُ". ثُمَّ قَرَأَ: وَقَالَ رَبُّكُمُ ادْعُونِي أَسْتَجِبْ لَكُمْ إِنَّ الَّذِينَ يَسْتَكْبِرُونَ عَنْ عِبَادَتِي سَيَدْخُلُونَ جَهَنَّمَ دَاخِرِينَ سورة غافر آية 60". (سنن ترمذی: 3372، صححه الألبانی)

तर्जुमा: "दुआ ही इबादत है," फिर आपने आयत पढ़ी: "और तुम्हारा रब कहता है, मुझे पुकारो, मैं तुम्हारी पुकार (दुआ) को क़बूल करूँगा, जो लोग मुझसे माँगने से घमंड करते हैं, वे जहन्नम में ज़लील व ख़्वार होकर दाख़िल होंगे (ग़ाफ़िर: 60) पढ़ी।

इसमें हदीस भी है और क़ुरआन की आयत भी। हदीस से मालूम होता है कि दुआ इबादत है और हमें मालूम है कि तमाम क़िस्म की इबादत सिर्फ़ अल्लाह के लिए है। इसका मतलब यह हुआ कि अल्लाह के अलावा ग़ैर को पुकारना इबादत के ख़िलाफ़ है जिसे शिर्क कहा जाता है। और क़ुरआनी आयत से मालूम होता है कि हम अल्लाह को ही पुकारेंगे, वह हमारी दुआ को क़बूल करता है और जो अल्लाह को नहीं पुकारता है वह जहन्नम में दाख़िल किया जाएगा। अल्लाहु अकबर। ग़ैरुल्लाह को पुकारने का अंजाम कितना भयानक है! इसी लिए तो कई जगहों पर अल्लाह ने हुक्म दिया है कि सिर्फ़ मेरी ही इबादत करो, जैसे अल्लाह का यह फ़रमान है:

وَقَضٰى رَبُّكَ اَلَّا تَعْبُدُوْۤا اِلَّاۤ اِيَّاهُ(الاسراء: 23)

तर्जुमा: "और तुम्हारा परवरदिगार साफ़-साफ़ हुक्म दे चुका है कि तुम उसके सिवा और किसी की इबादत न करना।"

कोई आपसे यह कहे कि फिर अल्लाह ने क़ुरआन में वसीला इख़्तियार करने या नमाज़ से मदद माँगने का हुक्म क्यों दिया है, नमाज़ भी तो ग़ैरुल्लाह है? बल्कि एक बरेलवी ने तो यहाँ तक कह दिया कि अल्लाह ने पचास वक्त की नमाज़ फर्ज़ की थी, मूसा (अलैहिस्सलाम) की वजह से पाँच वक्त की नमाज़ हुई, तो तुम लोग पाँच वक्त की नमाज़ क्यों पढ़ते हो, पचास वक्त की नमाज़ पढ़ो?

वाज़ेह रहे कि हम मूसा (अलैहिस्सलाम) की वजह से पाँच वक्त की नमाज़ नहीं पढ़ते हैं बल्कि अल्लाह ने ही नमाज़ का हुक्म दिया है और अल्लाह ने ही पाँच वक्त की नमाज़ फ़र्ज़ की है, इसलिए इसे अल्लाह का हुक्म मानकर इस पर अमल करते हैं।

दूसरी बात यह है कि अल्लाह को पुकारते हुए तीन क़िस्म के वसीले इख़्तियार कर सकते हैं, यानी हमारे लिए तीन क़िस्म के वसीले जाइज़ हैं:

पहला वसीला: अल्लाह के अस्मा-ए-हुस्ना का, हम अल्लाह के नामों का वसीला लगाकर अल्लाह को पुकार सकते हैं।

दूसरा वसीला: अपने नेक आमाल का, हम अपने नेक आमाल का वसीला देकर अल्लाह को पुकार सकते हैं जैसे ग़ार में फँसे तीन लोगों ने अपने-अपने नेक अमल का वसीला लगाया।

तीसरा वसीला: ज़िंदा लोगों का, हम ज़िंदा नेक और मुवह्हिद आदमी से दुआ करवा सकते हैं जैसे सहाबा-ए-किराम ने हयात-ए-रसूल में नबी (ﷺ) से दुआ करवाई, उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने आप (ﷺ) के चाचा अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से दुआ करवाई, और जैसे हम ज़िंदा लोगों को कहते हैं कि दुआ में याद रखना या मेरे लिए दुआ करना, यह वसीला जाइज़ है।

इन तीन सूरतों के अलावा कोई और सूरत में वसीला लगाता है तो यह जाइज़ नहीं है, जैसे किसी मख़लूक़ की ज़ात का वसीला लगाना जाइज़ नहीं है, किसी मय्यत का वसीला लगाना जाइज़ नहीं है। जो लोग इस तरह दुआ करते हैं कि "नबी के वसीले से दुआ क़बूल फ़रमा" या "फुलाँ पीर-ओ-मुर्शिद के सदक़ा तुफ़ैल दुआ क़बूल फ़रमा", यह जाइज़ नहीं है।

सूरह माइदा में अल्लाह का वसीला इख़्तियार करने का जो हुक्म है, उसका मतलब है कि नेक आमाल का वसीला अल्लाह के लिए इख़्तियार करो और इसी तरह नमाज़ से मदद तलब करना भी नेक अमल का वसीला लेना है जो वसीला की जाइज़ क़िस्म है।

ख़ुलासा-ए-कलाम यह है कि एक मोमिन को सिर्फ़ अल्लाह को ही मदद के लिए पुकारना चाहिए, इसी बात का हमें अल्लाह और उसके रसूल ने हुक्म दिया है। इस सिलसिले में चंद दलाइल मुआयना फ़रमाएं और अपने ईमान व आमाल की इस्लाह करें।

हम हर नमाज़ की हर रकअत में यह आयत तिलावत करते हैं: إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ (ऐ अल्लाह! हम सिर्फ़ तेरी ही इबादत करते हैं और तुझसे ही मदद चाहते हैं)। इस आयत में हम अल्लाह से वादा करते हैं कि तेरे सिवा किसी से मदद नहीं माँगेंगे, सिर्फ़ तुझसे ही मदद माँगेंगे, गोया यह आयत हमें ग़ैर-अल्लाह से मदद माँगने से रोकती है।

और अल्लाह तआला ने वाज़ेह तौर पर तमाम क़िस्म के ग़ैरुल्लाह को पुकारने से मना फ़रमाया है, फ़रमान-ए-इलाही है:

وَلَا تَدْعُ مِنْ دُونِ اللَّهِ مَا لَا يَنْفَعُكَ وَلَا يَضُرُّكَ فَإِنْ فَعَلْتَ فَإِنَّكَ إِذًا مِنَ الظَّالِمِينَ(يونس:106)

तर्जुमा: और अल्लाह के सिवा किसी को मत पुकारो जो न तुझे नफ़ा दे सकता है और न नुक़सान। अगर तू ने यह काम किया तो ज़ालिमों में शुमार होगा।

अल्लाह ने यहाँ तक बता दिया कि तुम जिन मुर्दों को मदद के लिए पुकारते हो, वे क़यामत तक तुम्हारी पुकार का जवाब नहीं दे सकते हैं। अल्लाह फ़रमाता है:

وَمَنْ أَضَلُّ مِمَّنْ يَدْعُو مِنْ دُونِ اللَّهِ مَنْ لَا يَسْتَجِيبُ لَهُ إِلَى يَوْمِ الْقِيَامَةِ وَهُمْ عَنْ دُعَائِهِمْ غَافِلُونَ
*وَإِذَا حُشِرَ النَّاسُ كَانُوا لَهُمْ أَعْدَاءً وَكَانُوا بِعِبَادَتِهِمْ كَافِرِينَ(الاحقاف:65)

तर्जुमा: और ऐसे लोगों से ज़्यादा कौन गुमराह हैं जो अल्लाह के सिवा ऐसे लोगों को पुकारते हैं जो क़यामत तक उनकी दुआ क़बूल नहीं कर सकते, बल्कि उनकी आवाज़ से भी बेख़बर हैं और जब सब लोग जमा किए जाएंगे तो वे उनके दुश्मन हो जाएंगे और उनकी इबादतों से इंकार कर देंगे।

इसी तरह नबी ﷺ ने भी तालीम दी है कि जब तुम सवाल करो तो अल्लाह से और जब मदद माँगो तो अल्लाह से। चुनांचे आपका ﷺ फ़रमान है:

إِذَا سَأَلْتَ فَاسْأَلِ اللّٰهَ وَإِذَا اسْتَعَنْتَ فَاسْتَعِنْ بِاللّٰهِ(ترمذی:2516، صححه البانی)

तर्जुमा: जब तुम कोई चीज़ माँगो तो सिर्फ़ अल्लाह से माँगो, जब तुम मदद चाहो तो सिर्फ़ अल्लाह से मदद तलब करो।

इस हदीस में नबी ﷺ ने हमें यहाँ तक तालीम दी है। आप ﷺ आगे फ़रमाते हैं:

وَاعْلَمْ أَنَّ الْأُمَّةَ لَوِ اجْتَمَعَتْ عَلَى أَنْ يَنْفَعُوكَ بِشَيْءٍ لَمْ يَنْفَعُوكَ إِلَّا بِشَيْءٍ قَدْ كَتَبَهُ اللّٰهُ لَكَ، وَلَوِ اجْتَمَعُوا عَلَى أَنْ يَضُرُّوكَ بِشَيْءٍ لَمْ يَضُرُّوكَ إِلَّا بِشَيْءٍ قَدْ كَتَبَهُ اللّٰهُ عَلَيْكَ۔

तर्जुमा: और यह बात जान लो कि अगर सारी उम्मत भी जमा होकर तुम्हें कुछ नफ़ा पहुँचाना चाहे तो वह तुम्हें उससे ज़्यादा कुछ भी नफ़ा नहीं पहुँचा सकती जो अल्लाह ने तुम्हारे लिए लिख दिया है, और अगर वे तुम्हें कुछ नुक़सान पहुँचाने के लिए जमा हो जाएँ तो उससे ज़्यादा कुछ नुक़सान नहीं पहुँचा सकती जो अल्लाह ने तुम्हारे लिए लिख दिया है।

एक मुसलमान का यह अक़ीदा होना चाहिए कि अल्लाह के अलावा ज़र्रा बराबर भी कोई दूसरा नफ़ा-नुक़सान का इख़्तियार नहीं रखता है, लिहाज़ा हर हाल में और हर काम के लिए हमें सिर्फ़ अल्लाह को

पुकारना चाहिए। और जो दीन या दुनिया के मामलात में "मातहत-उल-असबाब" के क़ायदे के तहत हम एक दूसरे का तआवुन (सहयोग) करते हैं, दरअसल यह मसला अलग है। हमें अल्लाह और उसके रसूल ने अच्छे कामों पर एक दूसरे का तआवुन करने का हुक्म दिया है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَتَعَاوَنُوا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوَىٰ ۖ وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَى الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ(المائدة:2)

तर्जुमा: और नेकी और तक़वा के कामों में आपस में तआवुन करो, और गुनाह और ज़्यादती के कामों में एक दूसरे का साथ न दो।

और नबी ﷺ का फ़रमान है:

ما أَرَى بأْسًا مَنِ اسْتَطَاعَ مِنكُم أَنْ يَنْفَعَ أَخَاهُ فَلْيَنْفَعْهُ.(صحيح مسلم:2199)

तर्जुमा: तुम में से जो शख़्स अपने भाई को फ़ायदा पहुँचा सकता हो तो उसे ऐसा करना चाहिए, इसमें कोई हरज नहीं है।

आख़िर में, अल्लाह तआला से दुआ करता हूँ कि वह हमें तौहीद पर क़ायम रखे, शिर्क और बिद'अत से बचाए और भटके हुए मुसलमानों को सीधे रास्ते की हिदायत फ़रमाये।

13].इस्लाम का हिफ़्ज़ान-ए-सेहत कोरोना वायरस के तनाज़ुर में

इस्लाम अपनी साफ़-सुथरी और पाकीज़ा तालीमात के ज़रिए अपने मानने वालों को हर चीज़ में पाकीज़गी का एहतिमाम करने का हुक्म देता है। ऐसी कोई चीज़ खाने-पीने से मना करता है जिससे इंसानी जिस्म और सेहत को तकलीफ़ और नुक़सान पहुंचे, बल्कि ऐसा कोई काम भी करने से रोकता है जो हलाकत के दहाने तक पहुंचाता है। आज जब के 200 के क़रीब मुल्क कोरोना वायरस की चपेट में हैं और हज़ारों की तादाद में मौतें हो चुकी हैं, हर मुल्क इस मोहलिक (हलाक कर देने वाली) वबा से बचाव की मुख़्तलिफ़ तदबीर अपनाने में लगा हुआ है। ऐसे में इस्लाम किस क़दर सेहत-ए-इंसानी का ख़्याल करता है, हमें जानने की कोशिश करनी चाहिए। यह बात तो हर कोई जानता है कि किसी का क़तल करना या क़तल और मौत का कोई तरीक़ा अपनाना इस्लाम में बहुत बड़ा जुर्म है। इस वजह से इस आम बात को ज़ेरे बहस ना ला कर हम इस मज़मून में उन पहलुओं पर रोशनी डालना चाहेंगे जो सीधे तौर पर इंसानी क़त्ल नहीं कहे जा सकते, लेकिन बड़े नुक़सान और कभी-कभी हलाकत का सबब बनते हैं। नीचे की लाइनों में हिफ़ाज़त-ए-सेहत से मुताल्लिक़ इस्लाम के 10

सुनहरे उसूल ज़िक्र कर रहे हैं जिनसे अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि इस्लाम की तालीमात किस क़दर पाकीज़ा हैं और वह इंसानी जान की किस क़दर परवाह करता है।

(1) किसी को नहीं मालूम कि नजासत से बीमारी फैलती है और इंसानों की हलाकत होती है। इसीलिए इस्लाम की सबसे सुनहरी तालीम यह है कि वह अपने मानने वालों को हमेशा सफ़ाई-सुथराई का हुक्म देता है, बल्कि तहारत और पाकीज़गी को ईमान का हिस्सा क़रार देता है ताकि मुसलमान ईमान की हिफ़ाज़त के साथ तहारत का बख़ूबी इंतिज़ाम करे। अलहम्दुलिल्लाह मुसलमान पैदाइश से लेकर मौत तक अपना कपड़ा, अपना बदन और रहने-सहन की जगह पाक रखता है। पाक कपड़ों में और पाक जगह पर वज़ू करके दिन और रात में 5 बार नमाज़ पढ़ना इसकी बड़ी दलील है।

5 बार वज़ू करना और वज़ू में नाक और मुँह में पानी दाख़िल करके जरासीम से जिस्म की हिफ़ाज़त करना, यहाँ तक जुमा के अलावा नापाक होने पर गुस्ल तहारत का हुक्म देना इस्लाम की पाकीज़ा तालीम है। बल्कि पेशाब के बाद इस्तिंजा की तालीम देना बीमारी से बचाव की उम्दा तालीम है। देखा जाए तो मुसलमानों का ख़तना

करना, नाख़ून वग़ैरह ज़रूरी बाल कटना भी सफ़ाई के साथ मुख़्तलिफ़ क़िस्म की बीमारियों से हिफ़ाज़त होती है। इस्लाम में सफ़ाई से मुताल्लिक़ (संबंधित) इसके अलावा बहुत सारी तालीमात मौजूद हैं।

(2) इस्लाम की एक उम्दा तालीम यह भी है कि बीमारी लाहिक़ होने से पहले अल्लाह ने जो सेहत और तंदुरस्ती दी है, उसे ग़नीमत जाने। इस तालीम का एक मतलब तो यह है कि करने के काम जल्दी से निपटा लें और एक मतलब यह भी है कि सेहत को ग़नीमत जानकर ऐसा कोई काम न करें जो उसे बीमार कर दे या उसकी सेहत को नुक़सान पहुंचा दे और फिर वह किसी काम के लाहिक़ न बचे।

(3) इस्लाम जिस तरह पाकीज़ा है, उसी तरह पाकीज़ा तालीम भी देता है कि पाक जानवरों को अल्लाह का नाम लेकर खाओ और जो जानवर नापाक है, उनमें नजासत है या ज़हर है और इंसानी सेहत को उससे नुक़सान पहुंचने का डर है, ऐसे जानवर न खाओ। इस्लाम की यह पाकीज़ा तालीम जानवरों तक ही महदूद नहीं है, बल्कि किसी भी क़िस्म की चीज़ में ज़हर, नजासत या नुक़सान हो तो इंसान के लिए उस चीज़ का इस्तेमाल करना इस्लामी तालीमात की रोशनी में हराम है। मिसाल के तौर पर शराब में बीमारी है और जान का नुक़सान है,

तो शराब पीना हराम है। लिहाज़ा, नशीली चीज़ें, ज़हरीली चीज़ें, हानिकारक पदार्थ और नुक़सान देने वाला सामान और जरासीम सब मना है। एक मुसलमान इनमें से किसी का भी इस्तेमाल नहीं कर सकता।

(4) आप अंदाज़ा लगाएं कि इस्लाम ने बर्तन में फूंक मारने से मना किया है ताकि फूंक मारने से जो जरासीम निकलते हैं, कहीं उसके सबब खाने-पीने से सेहत को कोई बीमारी न लग जाए। कोई ज़रूरी नहीं है कि फूंक मार कर पीने वाला फ़ौरन बीमार हो जाए; कितने लोग तो गर्म चीज़, मसलन चाय, अक्सर फूंक मार कर पीते हैं और बग़ैर किसी नुक़सान के रहते हैं। मगर इस्लाम ने एहतियाती तदबीर के तहत ऐसा करने से मना किया है ताकि फ़ौरन या बाद में कभी कोई नुक़सान न लाहिक़ हो।

(5) ना खाना या ज़्यादा खाना, यह दोनों ही सेहत के लिए नुक़सानदायक हैं, इसलिए इस्लाम ने हमें पेट के एक हिस्से में खाने का हुक्म दिया और दूसरे हिस्से में पानी और तीसरे हिस्से को ख़ाली रखने का हुक्म दिया ताकि आसानी से सांस ले सकें। हिफ़ाज़त-ए-सेहत के लिए यह तालीम निहायत ही उम्दा है।

(6) ऐसा कोई बीमार जिसकी बीमारी अल्लाह के हुक्म से दूसरों को मुंतक़िल (संक्रामक) हो सकती है, उस बीमार को तंदुरस्त आदमी से अलग रखने का हुक्म है ताकि कोई सेहतमंद बीमार न हो जाए। यह सिर्फ़ एहतियाती तदबीर है।

(7) इसी तरह यह भी इस्लामी तालीम है कि जहाँ महमारी वाली कोई बीमारी फैली हो, तो उस जगह कोई जाकर सुकूनत न इख़्तियार करे और न ही बीमारी वाली जगह से कोई बीमार या सेहतमंद दूसरी जगह सफ़र करे। इससे बीमारी दूसरों में और दूसरी जगह भी फैलने का अंदेशा है।

(8) मौत की तमन्ना और आरज़ू से भी इस्लाम मना करता है क्योंकि मौत अपने वक्त पर ही आएगी। अल्लाह मौत को याद करने का इसलिए हुक्म देता है ताकि इंसान आख़िरत की तैयारी करे, ग़लत कामों से बचे, ख़ुद को या दूसरों को तकलीफ़ न दे, अल्लाह का ख़ौफ़ खाए और नेक अमल करने की फ़िक्र करता रहे।

(9) इस्लाम ने सेहत का इस क़दर ख़्याल रखा है कि नमाज़ जैसी अज़ीम इबादत के वक्त अगर किसी को पेशाब या पाख़ाना लगे तो

वह पहले अपनी ज़रूरत पूरी कर ले, चाहे उसकी नमाज़ जामात के साथ ही छुट जाए। फिर वह नमाज़ अदा करे। हम जानते हैं कि पेशाब और पाख़ाना को रोकना तकलीफ़ देने और बीमारी का सबब भी बन सकता है। जो इस्लाम इंसानी सेहत का इस क़दर ख़्याल रखता है, उसकी नज़र में इंसानी क़त्ल कितना बड़ा जुर्म होगा?

(10) एक आख़िरी अहम नुक्ता अर्ज़ करना चाहता हूँ कि ज़िंदगी और मौत को पैदा करने वाला, बीमारी और सेहत देने वाला, मुसीबत देने और टालने वाला अकेला अल्लाह ही है। उसके हुक्म के बिना दुनिया में कुछ भी नहीं हो सकता है। इसलिए हमारे प्यारे रसूल मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने तालीम दी है कि अल्लाह से सेहत और आफ़ियत की दुआ मांगते रहो और ज़माने के शर और फ़साद, बीमारी और तकलीफ़ से उसकी पनाह तलब करते रहो। जो लोग अपने ख़ालिक़ पर भरोसा करते हैं, उसी से मांगते हैं, उसके साथ किसी को शरीक नहीं करते, वही अल्लाह उस मोमिन की हिफ़ाज़त करता है।

मैंने हिफ़ाज़त-ए-सेहत से मुताल्लिक़ इस्लाम की 10 सुनहरी बातें आपकी ख़िदमत में पेश की हैं और साथ ही यह इशारा भी कर दिया कि इस्लाम क़त्ल से सख़्ती के साथ मना करता है, चाहे कोई ख़ुद का क़त्ल करे या किसी मासूम का। इस्लाम की नज़र में क़त्ल एक गंभीर

जुर्म है और वह तमाम काम भी जुर्म में शामिल है जो क़त्ल तक पहुंचाने वाले हैं। इसलिए जानबूझकर कोई मुसलमान ऐसा काम करता है जिससे ख़ुद की या किसी दूसरे की मौत वाक़े हो जाती है, तो वह इस्लाम की नज़र में मुजरिम और गुनहगार है। मुझे यक़ीन है कि उपर ज़िक्र की गई बातों पर मुसलमान अमल करें या ग़ैर-मुस्लिम इन सब की जिस्मानी हिफ़ाज़त होगी और वे बीमारी और अचानक हलाकत से बच सकेंगे। इस्लाम की मज़कूरा 10 बातों की रोशनी में, ख़ुलासा के तौर पर, कुछ फ़ायदे ज़िक्र करना चाहता हूँ ताकि आज के ख़ौफ़नाक माहौल में काम आ सके।

चूंकि इस्लाम हमें पाकीज़गी का हुक्म देता है और हम इस्लाम को मानने वाले हैं, लिहाज़ा अपने किरदार से अमली नमूना पेश करें कि हम वाक़ई इस्लाम की पाकीज़ा तालीमात पर अमल करने वाले हैं। इसलिए हमारा घर, पेश, बदन और कपड़ा पाक, साफ़ और सुथरा हो।

ख़ौफ और मुसीबत के वक्त इबादत की अहमियत और बढ़ जाती है, इसलिए ऐसे वक्त में फ़र्ज़ों पर सख़्ती से काम करें और तौबा और इस्तग़फ़ार की कसरत करें।

कुछ दिनों पहले सऊदी अरब के सुप्रीम उलेमा के काउंसिल ने बहुत ही ग़ौर और ख़ौज़ के बाद फ़तवा जारी किया कि सऊदी अरब वालों

को उस वक्त अपने घरों में नमाज़ पढ़नी चाहिए, यहाँ तक कि जुमे के दिन भी अपने घरों में ही ज़ुह्र की नमाज़ अदा करें। उस वक्त कुछ अजमी उलमा ने इस फ़तवे पर हंगामा मचाया और इसे शरियत के ख़िलाफ़ क़रार दिया। और आज जब हालात नाज़ुक हो चुके हैं और मुख़्तलिफ़ शहरों में लॉकडाउन की नौबत आ चुकी है, तो समझ में आ गया कि घरों में नमाज़ पढ़ना ही हालात का तक़ाज़ा है।

सऊदी अरब का फ़तवा कल भी इस्लाम के ख़िलाफ़ नहीं था और आज भी नहीं है क्योंकि इस्लाम हमें न केवल मरने से रोकता है बल्कि मौत की तरफ़ जाने वाले तमाम रास्तों पर चलने से भी मना करता है। आवाम, इमाम और उलमा से मेरी पुरख़ुलूस गुज़ारिश है कि चंद दिनों के लिए घरों को लाज़िम पकड़े और घर पर ही 5 वक़्त नमाज़ अदा करें, इसी में सब की आफ़ियत है।

कुछ नादान कोरोना को हल्के अंदाज़ में ले रहे हैं, वो एहतियात क्या करेंगे, उसका मज़ाक उड़ा रहे हैं, जबकि यह संगीन बीमारी और अल्लाह का अज़ाब है। एक मुसलमान अल्लाह के अज़ाब से कैसे बेख़ौफ हो सकता है और उसका मज़ाक उड़ा सकता है?

ख़ुदारा होश के नाख़ून लें, अब अपनी और पूरे अहल-ए-ख़ाना की हिफ़ाज़त करें, एहतियाती तदाबीर अपनाएं और उन लोगों को सीधी राह दिखाएं जो कोरोना का मज़ाक उड़ा रहे हैं या बद-एहतियाती कर रहे हैं।

अल्लाह से दुआ मांगना मोमिन की ज़िंदगी का अहम वसीला है। उसे अमली जामा पहनाएं, अल्लाह से दुआ करें कि वह हम से अज़ाब टाल दे, हमारे ऊपर से ख़ौफ़ का बादल हटा दे, हमें अमन और राहत दे और उम्मत-ए-मुसलिमा की हिफाज़त फ़रमाए। आमीन

[14].इस्लाम मे औरत का ख़त्ना अहकाम और -मसाइल

इस्लाम में ख़त्ना एक फ़ितरी अमल है, लेकिन ग़ैर-मुस्लिमों की तरफ़ से इस पर मुख़्तलिफ़ सवालात उठाए जाते हैं। वजह इस्लाम दुश्मनी है। वे समझते हैं कि ख़त्ना एक इम्तियाज़ी-मज़हबी (विशिष्ट धार्मिक) पहचान है जिसकी वजह से किसी मुसलमान का दूसरे धर्मों में दाख़िल होना बहुत मुश्किल है। हालांकि इसके तिब्बी फ़वाइद (चिकित्सीय लाभों) की वजह से बहुत सारे ग़ैर-मुस्लिम लोग भी अपना ख़त्ना करवाते हैं। जहाँ तक औरतों के ख़त्ना का मामला है तो इस मामले को ग़ैर-मुस्लिम कुछ ज़्यादा ही उछालते हैं ताकि लोगों को इस्लाम से नफ़रत दिला सकें। उनके ग़लत प्रोपेगंडों की वजह से कुछ सादा दिमाग़ के कम पढ़े लिखे या यूँ कह लें दीन की तालीम से नावाकिफ़ मॉडर्न मुसलमान ग़ैर-मुस्लिमों की मुख़ालफ़त को सही समझने लगते हैं और औरतों के ख़त्ना को इस्लाम मुख़ालिफ़ और इंसानियत मुख़ालिफ़ (विरोधी) क़रार देते हैं।

मैं अपने मज़मून में अपने मुसलमान भाइयों की मालूमात के लिए औरत के ख़त्ना से मुतालिक़ अहकाम व मसाइल बयान कर रहा हूँ

ताकि वे इसे पढ़कर हक़ बात को जान सकें और किसी ग़लतफ़हमी का शिकार न हों। औरतों के ख़त्ना से मुताल्लिक़ कई हदीसें आई हैं बल्कि इस बारे में सहीहैन की भी रिवायतों से रहनुमाई मिलती है। इन दलाइल को आपके सामने ज़िक्र कर रहा हूँ जिनसे मालूम होता है कि औरतों के लिए ख़त्ना का सबूत मिलता है।

सहीह बुख़ारी की हदीस है, हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं: नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

الفِطْرَةُ خَمْسٌ: الخِتَانُ، وَالِاسْتِحْدَادُ، وَقَصُّ الشَّارِبِ، وَتَقْلِيمُ الأَظْفَارِ، وَنَتْفُ الآبَاطِ (صحيح البخاري:5891)

तर्जुमा: पाँच चीज़ें ख़त्ना कराना, ज़ेर-नाफ़ मुँडवाना, मूंछ कतराना, नाख़ून तराशना और बगल के बाल नोचना पैदाइशी सुन्नतें हैं।

इस हदीस में पाँच चीज़ों को फ़ितरत क़रार दिया गया है यानी इंसानी फ़ितरत इन चीज़ों का तक़ाज़ा करती है, गोया यह इंसानी फ़ितरत के ख़िलाफ़ नहीं बल्कि मुवाफ़िक़ है। और चूँकि इन पाँच चीज़ों में औरत को अलग नहीं किया गया है, इस वजह से इस हुक्म में औरत भी शामिल है सिवाय मूंछ के, जो मर्दों के ख़साइस में से है।

इसी तरह सहीह मुस्लिम में सय्यदा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा से मरवी है कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

إذا جَلَسَ بيْنَ شُعَبِها الأرْبَعِ ومَسَّ الخِتانُ الخِتانَ فقَدْ وجَبَ الغُسْلُ(صحيح مسلم:349)

तर्जुमा: जब मर्द औरत के चारों कोनों में बैठे और ख़त्ना ख़त्ना से मिल जाए, तो गुस्ल वाजिब हो जाता है।

यह जिमा से मुताल्लिक़ हदीस है, इसमें शरमगाह का ज़िक्र नहीं, ख़त्ना का लफ़्ज़ आया है जो इस बात पर दलालत करता है कि अहद-ए-रसूल की ख़वातीन ख़त्ना कराती थीं। इमाम अहमद बिन हंबल रहमतुल्लाह अलैह ने मुसनद के इस मआनी की हदीस के बारे में यही कहा है।

إذا الْتَقَى الخِتانانِ وجَبَ الغُسلُ(تخريج المسند:26025)

तर्जुमा: जब एक ख़त्ना दूसरे ख़त्ना से मिल जाए तो गुस्ल वाजिब हो जाता है।

अहद-ए-रसूल में अरबों की ख़वातीन में ख़त्ना का रिवाज भी सहीह बुख़ारी की हदीस से मालूम होता है। एक लंबी सी हदीस है, इसमें

मज़कूर है कि ग़ज़वा-ए-उहद के मौक़े पर जब (दोनों फौजें आमने-सामने) लड़ने के लिए सफ़ आरास्ता हो गईं तो (क़ुरैश की सफ़ में से) सबा बिन अब्दुलुज़्ज़ा निकला और उसने आवाज़ दी, है कोई लड़ने वाला? बयान किया कि (उसकी इस दावत-ए-मुबाज़रत पर) अमीर हम्ज़ा बिन अब्दुल मुत्तलिब रज़ियल्लाहु अन्हु निकलकर आए और फ़रमाया:

يا سِبَاعُ، يا ابْنَ أُمِّ أَنْمَارٍ مُقَطِّعَةِ البُظُورِ، أَتُحَادُّ اللَّهَ ورَسولَه صلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ؟! قَالَ: ثُمَّ شَدَّ عليه، فَكانَ كَأَمْسِ الذَّاهِبِ(صحيح البخاري:4072)

तर्जुमा: ए सिबाअ! ए उम्मे-अनमार के बेटे! जो औरतों के ख़तने किया करती थी तू अल्लाह और उसके रसूल से लड़ने आया है? बयान किया कि फिर हमज़ा (रज़ि०) ने इस पर हमला किया (और उसे क़त्ल कर दिया) अब वो वाक़िआ गुज़रे हुए दिन की तरह हो चुका था।

इसी लिए अरब के यहाँ गाली-गलौच के वक्त "या बिनुल कुल्फ़ा" कहा जाता है, जिसका मतलब है बिना ख़त्ना के ज़्यादा शहवत वाली के बेटे।

औरतों के ख़त्ना से मुताल्लिक़ एक मशहूर हदीस इस तरह वारिद है। उम्मे अतिया अंसारिया रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है:

أنَّ امرأةً كانت تختِنُ بالمدينةِ فقال لها النبيُّ صلَّى اللهُ عليهِ وسلَّمَ لا تُنهِكي فإنَّ ذلك أحظَى للمرأةِ وأحبُّ إلى البَعلِ(صحيح أبي داود:5271)

तर्जुमा: मदीना में एक औरत औरतों का ख़त्ना किया करती थी तो रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उससे फ़रमाया: नीचा कर ख़त्ना मत करो यानी बहुत नीचे से मत काटो क्योंकि यह औरत के लिए ज़्यादा लुत्फ़ व लज़्ज़त की चीज़ है और शोहर के लिए ज़्यादा पसंदीदा।

इस हदीस की सनद में एक रावी मुहम्मद बिन हस्सान मजहूल है जिसकी वजह से सनद ज़ईफ़ है लेकिन मुताबि'आत और शवाहिद की बुनियाद पर शैख़ अलबानी ने इसे सहीह क़रार दिया है।

अनस बिन मालिक बयान करते हैं कि उम्मे अयमन नाम की एक औरत मदीना में ख़त्ना किया करती थी, उससे रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

إذا خفضْتِ فأَشِمِّي ولا تُنهِكي فإنه أسرى للوجهِ وأحظى للزوجِ(السلسلة الصحيحة:344/2)

तर्जुमा: जब तू (किसी लड़की का) ख़त्ना करे तो कुछ चमड़ी छोड़ दिया कर और (काटने में) मुबालग़ा-आमेज़ी (अतिशयोक्ति) न किया कर, क्योंकि यह चीज़ चेहरे को सुंदर बनाने वाली और उसे ख़ाविंद के लिए मक़बूल बनाने वाली है।

उम्म अ'लक़मा रहिमहुल्लाह से रिवायत है:

أَنَّ بناتَ أخي عائشةَ [خُتِنَّ] ، فَقيل لعائشةَ : ألا نَدعو لهنَّ من يُلهِيهِنَّ ؟ قالَت : بلَى ، فأَرسَلتُ إلى عَدِيّ فأتاهُنَّ فمرَّتْ عائشةُ في البَيتِ فرأَتْه يتغنَّى ويُحرِّكُ رأسَه طرَبًا وكانَ ذا شَعرٍ كثيرٍ فقالَت : أُفٍّ ، شَيطانٌ ! أخرِجُوهُ ، أخرِجُوهُ (صحيح الأدب المفرد:945)

तर्जुमा: सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की भतीजियों का ख़त्ना किया गया तो सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से अर्ज़ की गई: क्या हम उन्हें बहलाने के लिए किसी शख़्स को न बुलाएँ? उन्होंने कहा: ठीक है। फिर उसने अदी की तरफ़ पैग़ाम भेजा, तो वह आया। सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा घर से गुज़रीं तो देखा कि वह गा रहा है और झूम रहा है। वह बहुत बालों वाला था। सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने फ़रमाया: उफ़! इस शैतान को निकालो, निकालो इसे।

इन दलीलों के ज़िक्र के बाद, मैं 'साहिब 'औन अल-म'बूद' का क़ौल ज़िक्र करना अमानतदारी समझता हूँ। उन्होंने औरत के ख़त्ना पर हदीसों को जमा किया है और फ़ैसला करते हुए आख़िर में लिखा है: "और औरत के ख़त्ना की हदीस कई सनदों से मरवी है जो सब ज़ईफ़ मा'लूल (वह हदीस जिसमें किसी तरह की इल्लत पौशीदा हो जो सेहत हदीस मे क़द्ह करती हो) और मख़्दूश (ख़तरनाक) हैं, उनसे हुज्जत पकड़ना सही नहीं है जैसा कि आप जान गए हैं। और इब्न मुनज़िर ने कहा, ख़त्ना में कोई हदीस नहीं जिसकी तरफ़ रुजू किया जाए और न कोई सुन्नत है जिसकी पैरवी की जाए। और इब्न 'अब्दुल बर ने 'तम्हीद' में कहा, वह चीज़ जिस पर मुसलमानों का इज्मा है कि ख़त्ना मर्दों के लिए है।" (औन अल-म'बूद: 4/ 543)

हक़ीक़त यह है कि जिन हदीसों पर ज़ईफ़ का हुक्म लगाया जाता है, उनसे सर्फ़-ए-नज़र (इग्नोर) किया जाए, तब भी सहीहैन की रिवायतें औरतों के ख़त्ना पर दलालत करती हैं, बल्कि सहीह मुस्लिम की रिवायत जिसमें ख़त्ना का लफ़्ज़ आया है, वह औरतों के ख़त्ना की मशरू'इय्यत पर वाज़ेह बुरहान है।

औरत के ख़त्ना का हुक्म: ख़त्ना के हुक्म के बारे में इख़्तिलाफ़ है।

एक क़ौल तो यह है कि मर्द और औरत दोनों के हक़ में वाजिब है।

दूसरा क़ौल यह है कि दोनों के हक़ में मसनून है।

तीसरा क़ौल यह है कि मर्द के हक़ में वाजिब और औरत के हक़ में मसनून और मुस्तहब है।

तीसरा क़ौल क़वी और राजेह है यानी औरतों के हक़ में ख़त्ना मुस्तहब है और इसी जानिब अक्सर अहल-ए-इल्म गए हैं। इस बुनियाद पर हम यह कहेंगे कि कोई मुस्लिम औरत ख़त्ना कराए तो इसमें क़बाहत नहीं है और कोई न कराए तो इसमें कोई गुनाह भी नहीं है।

ख़त्ना की जगह, इसका तरीक़ा और इसका वक़्त: पेशाब निकलने वाली जगह के ऊपर मुर्ग़ी की क़लगी की तरह जो चमड़ी होती है, उसका कुछ हिस्सा काटा जाएगा मगर इसमें मुबालग़ा नहीं की जाएगी यानी इस हिस्से को जड़ से नहीं काटा जाएगा, इसका कुछ हिस्सा काटा जाएगा जैसा कि ऊपर अबू दाऊद और सिलसिला सहीहा की रिवायत में मज़कूर है।

मुख़्तलिफ़ मुमालिक में इससे हटकर मुख़्तलिफ़ तरीक़ों पर ख़त्ना किया जाता है जो ख़िलाफ़-ए-सुन्नत है, बल्कि कुछ तरीक़े अज़ीयत नाक हैं। इस वजह से माहिर और सहीह म'अरिफ़त रखने वाली मुस्लिम औरत से ही ख़त्ना कराया जाए। ख़त्ना के लिए मुनासिब और बेहतर वक़्त बचपन है कि इस वक़्त ज़ख़्म आसानी से मुंदमिल (ठीक) भी हो जाता है और तकलीफ़ का एहसास भी कम होता है।

औरतों के ख़त्ना की हिकमत और फ़वाइद: ख़त्ना से औरतों की शहवत ए'तिदाल पर आ जाती है और मियाँ बीवी दोनों के लिए ज़्यादा लज़्ज़त का बाइस है। तिब्बी नुक्ता-ए-नज़र से मुस्लिम अतिब्बा (डॉक्टर) और अहल-ए-इल्म ने मुख़्तलिफ़ क़िस्म के फ़वाइद बयान किए हैं। मसलन कभी वह कलग़ी बड़ी होने के सबब अदम लज़्ज़त या शौहर के लिए तश्वीश का सबब बन जाती है। इस कलग़ी के हटने से इसके नीचे गन्दगी जमा होने, इसमें बदबू होने और किसी तरह का इंफ़ेक्शन पैदा होने का ख़तरा नहीं रहता। एक बड़ा फ़ायदा पेशाब में आसानी का है क्योंकि यह चमड़ी उसी के ऊपर होती है जिससे पेशाब में दिक़्क़त पैदा होती है। इसी तरह बहुत से जिन्सी अमराज़, पेशाब की नाली की जलन, पेशाब की नाली और रहम के कैंसर से हिफ़ाज़त होती है।

इंसानी सेहत और औरतों का ख़त्ना: सुतूर-ए-बाला से हमें मालूम हो चला है कि अरब की ख़वातीन में ख़त्ना का आम रिवाज था। अगर इससे हलाकत का ख़तरा होता या यह अमल औरत के हक़ में ज़ालिमाना होता, तो नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस अमल से ख़वातीन को ज़रूर मना फ़रमाते, मगर इस तरह की मुमान'अत की कोई दलील नहीं मिलती। इस वजह से हमारे लिए नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़रमान ही इस तौर काफ़ी है कि इस अमल में औरतों पर न ज़ुल्म है और न ही उन्हें हलाकत में डालने का सबब है। इस्लामी तालीमात फ़ितरत के ऐन मुताबिक़ और इंसानियत के हक़ में हैं। तलब-ए-कमाल और बड़े फ़वाइद के लिए ख़तना की मामूली तकलीफ़ क़ाबिल-ए-ए'तिराज़ हरगिज़ नहीं है। कुछ तिब्बी इदारों ने औरतों के ख़तना को ज़ुल्म व ज़रर से ताबीर किया है, जिसके नतीजे में मुख़्तलिफ़ ममालिक में औरतों के ख़त्ना पर पाबंदी लगाई गई है, बल्कि कुछ ममालिक में बहुत सख़्ती से इस पर अमल किया जाता है और पकड़े जाने पर सज़ा दी जाती है। हक़ीक़त में इन तिब्बी इदारों की रिपोर्ट पर ग़ौर किया जाए, तो मालूम होगा कि यह रिपोर्ट मज़हबी अदावत में इस्लाम मुख़ालिफ़ भी हो सकती है, किसी शरारती औरत की अदालती या तिब्बी तौर पर झूठी शिकायत का नतीजा भी हो सकती है, सुन्नत से हटकर ज़ालिमाना तरीक़ा ख़त्ना

के सबब भी हो सकती है (जैसा कि मुख़्तलिफ़ ख़त्ने ग़लत और तकलीफ़ देह होते हैं, इसका इस्लाम से तअल्लुक़ नहीं), ख़त्ना की माहिर दाई न होने के सबब ख़त्ना से होने वाले कुछ नुक़सानात की वजह भी हो सकती है या एक-आध क़ुदरती बीमारी को ख़त्ना से जोड़कर इस्लाम को बदनाम करने की साज़िश भी हो सकती है, मुसलमानों के अलावा दूसरे अदयान में भी ख़त्ना का रिवाज है, हो सकता है उनके यहाँ ज़ालिमाना तरीक़ा हो, उसके सबब मुसलमानों पर भी ए'तिराज़ किया जाता हो। इस लिहाज़ से अलल-इत्लात तिब्बी रिपोर्ट की बुनियाद पर यह कहना कि औरतों का ख़त्ना उन पर ज़ुल्म और हलाकत का बाइस है, ग़लत है। आप जिस्मानी सर्जरी पर ग़ौर करें, तो हर क़िस्म की सर्जरी में कम या ज़्यादा तकलीफ़ होती है और उससे इंसान को ख़तरा लाहिक़ रहता है। बल्कि ज़रूरत के वक़्त बड़ी से बड़ी सर्जरी की जाती है और उसे मामूली तसव्वुर किया जाता है, क्योंकि सर्जरी के वास्ते जदीद से जदीद आलात व सहूलतें मयस्सर हैं, फिर ख़त्ना जैसी मामूली सर्जरी पर वावेला क्यों?

ख़त्ना पर उजरत लेना: ख़त्ना के लिए माहिर दाई होनी चाहिए या इस काम के लिए मख़सूस तबीबा (प्रशिक्षित महिला चिकित्सक) हो जो इस अमल को बहुत ही अच्छे तरीक़े से सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम

दे। इसलिए इस अमल (काम) को पेशे के रूप में इख़्तियार किया जा सकता है और इसके लिए मेहनताना लिया जा सकता है, इसमें कोई हर्ज नहीं है।

==========

[15].इस्लाम में ख़ादिमों के हुक़ूक़ और नबी ﷺ का उन से बर्ताव

अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त ने मुहम्मद ﷺ की ज़ात-ए-गिरामी को सारी इंसानियत के लिए रहमत बना कर भेजा है। आप ﷺ की मुकम्मल ज़िन्दगी रहमत-ओ-शफ़क़त से 'इबारत है। आप ﷺ बात-चीत, लेन-देन, काम-काज और सभी क़िस्म के मामलात में हुस्न-ए-तआमुल से पेश आते थे। आप ﷺ की ज़िन्दगी में अल्लाह तआला ने बेहतरीन "उसवा" रखा है। इस उस्वा का अक्स-ओ-परतव हमें मक्की-ओ-मदनी दोनों दोर मे ब-दर्जा अतम (जिसमें किसी प्रकार की कमी न हो) व-बा-इंतिहा-ए-कमाल नज़र आता है।

इस तहरीर में नबी करीम ﷺ की ज़ात-ए-गिरामी के उस पहलू को जानेंगे कि अपने ख़ादिमों के साथ आप ﷺ का बर्ताव कैसा था? इस

मौज़ू (मुद्दे) से मुताल्लिक़ किताब-ओ-सुन्नत में तीन क़िस्म के लोगों का तज़किरा है जिनमें कई क़िस्म के फ़र्क़ हैं, ताहम उन तीनों का ताल्लुक़ काम-ओ-ख़िदमत से है, इस लिए तीनों क़िस्म के नुसूस को मिंजुमला इस मज़मून में दर्ज करूंगा, ताकि ख़िदमतगारों के साथ हुस्न-ए-तआमुल का 'उंसुर आपके सामने आ सके।

एक है ग़ुलाम-ओ-लौंडी जो जंगों में माल-ए-ग़नीमत के तौर पर मुसलमानों के हाथ आते हैं, ये आज़ाद नहीं होते बल्कि अपने मालिक के ग़ुलाम होते हैं। दूसरा है ख़ादिम जो उजरत (मेहनत/मज़दूरी) या बतौर एहसान बग़ैर ग़ुलामी के किसी की ख़िदमत पर मामूर हो। तीसरा है मज़दूर जो महदूद मुद्दत के लिए उजरत पर किसी का कोई काम या कोई ख़िदमत अंजाम देता है।

इन तीनों का समाज के ख़िदमतगारों में शुमार होता है और इस वक़्त ग़ुलामी का दौर नहीं है जबकि दो क़िस्म के ख़िदमतगार (ख़ादिम-ओ-मज़दूर) तो हमेशा रहेंगे।

इनके ताल्लुक़ से पहले आप के सामने तालीमात-ए-मुहम्मदीया ﷺ की रौशनी में से ख़िदमात के हुक़ूक़ पेश करता हूँ फिर आप ﷺ का अमली नमूना पेश करूंगा।

(1) जो ख़ादिम उजरत पर मामूर हो उसकी तयशुदा उजरत की अदायगी में ताख़ीर न की जाए बल्कि वक़्त पर अदा कर दी जाए। अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

أعطوا الأجيرَ أجرَهُ قبلَ أن يجفَّ عرقُهُ(صحيح ابن ماجه:1995)

तर्जुमा: मजदूर को उसका पसीना सूखने से पहले उसकी मज़दूरी दे दो।

(2) ख़िदमतगारों की तयशुदा उजरत न देना या उसमें कमी करना क़यामत में अल्लाह की नाराज़गी का सबब है, अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु ने रिवायत किया है कि नबी करीम ﷺ ने बताया:

قالَ اللَّهُ تَعالَى: ثَلاثَةٌ أنا خَصْمُهُمْ يَومَ القِيامَةِ، رَجُلٌ أعْطَى بي ثُمَّ غَدَرَ، ورَجُلٌ باعَ حُرًّا فأكَلَ ثَمَنَهُ، ورَجُلٌ اسْتَأْجَرَ أجِيرًا فاسْتَوْفَى منه ولَمْ يُعْطِهِ أجْرَهُ.(صحيح البخاري:2270)

तर्जुमा: नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बतलाया कि अल्लाह तआला का फ़रमान है कि तीन क़िस्म के लोग ऐसे हैं कि जिन का क़ियामत में मैं ख़ुद मुद्दई बनूँगा। एक तो वो शख़्स जिसने मेरे नाम पे अहद किया और फिर वादा ख़िलाफ़ी की। दूसरा वो

जिसने किसी आज़ाद आदमी को बेचकर उसकी क़ीमत खाई और तीसरा वो शख़्स जिसने किसी को मज़दूर किया फिर काम तो उस से पूरा लिया लेकिन उसकी मज़दूरी न दी।

(3) कुछ ख़िदमतगारों का काम तयशुदा होता है, कुछ का काम तयशुदा नहीं होता, ताहम इस्लाम हमें हुक्म देता है कि ख़िदमतगारों को उनकी ताक़त से ज़्यादा बोझ वाला काम न दें, अगर बोझिल काम अपने नौकरों के ज़िम्मे देते हैं तो हमें उनकी मदद करनी चाहिए। अबू ज़र रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

إخوانُكم جعلَهمُ اللَّهُ فتيةً تحتَ أيديكم فمن كانَ أخوهُ تحتَ يدِهِ فليطعمْهُ من طعامِهِ وليلبسْهُ من لباسِهِ ولاَ يُكلِّفْهُ ما يغلبُهُ فإن كلَّفَهُ ما يغلبُهُ فليعنْهُ(صحيح الترمذي:1945)

तर्जुमा: तुम्हारे ख़ादिम तुम्हारे भाई हैं अल्लाह तआला ने उनको तुम्हारे मातहत कर दिया है। इसलिये जिसके मातहत उसका भाई (ख़ादिम) हो वो उसे अपने खाने में से खिलाए अपने कपड़ों में से पहनाए और उसे किसी ऐसे काम का मुकल्लफ़ न बनाए जो उसे मजबूर कर दे और अगर उसे किसी ऐसे काम का मुकल्लफ़ बनाता है। जो उसे मजबूर कर दे तो उसकी मदद करे।

(4) मज़कूरा बाला हदीस से एक अहम बात यह मालूम होती है कि ख़िदमतगार-ओ-नौकर हमारे भाई हैं, उनके साथ हमें भाईचारगी का मामला करना चाहिए और ऐसे बर्ताव-ओ-सुलूक से बचना चाहिए जो मातहतों को नागवार गुज़रे।

(5) हमें अपने ख़िदमतगारों के साथ हुस्न-ए-तआमुल से पेश आना चाहिए, यानी उनके साथ मामला करते वक्त अख़लाक़-ओ-किरदार आला रखना चाहिए, यहां तक कि ख़िदमतगार-ओ-नौकर का सुलूक बुरा हो तब भी हमें अपना अख़लाक़ बुलंद रखना चाहिए और अफ़्व (दरगुज़र) से काम लेना चाहिए। नबी ﷺ का फ़रमान है:

إنْ أحسَنوا فاقبَلوا ، وإنْ أساؤوا فاعفُوا ، وإنْ غلَبوكُم فَبيعوا (صحيح الترغيب:2283)

तर्जुमा: अगर गुलाम तुम्हारे साथ अच्छा सुलूक करे तो उसे क़बूल करो और बुरा सुलूक करे तो माफ़ कर दो और वह तुम पर ग़ालिब आ जाए तो बेच दो।

(6) जब गुलाम-ओ-ख़ादिम से किसी काम में ग़लती हो जाए तो उसे माफ़ कर देना चाहिए, माफ़ करने के लिए हमारा दिल इस क़दर खुला हो कि दिन में सत्तर-सत्तर बार भी माफ़ कर सके। अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं:

جاءَ رجلٌ إلى النَّبيِّ صلى الله عليه وسلم فقالَ: يا رسولَ اللَّهِ كم أعفو عنِ الخادمِ فصمتَ عنه رسولُ اللَّهِ صلى الله عليه وسلم ثمَّ قالَ يا رسولَ اللَّهِ كم أعفو عنِ الخادمِ فقالَ: كلَّ يومٍ سبعينَ مرَّةً(صحيح الترمذي:1948)

तर्जुमा: नबी अकरम ﷺ के पास एक आदमी आया और पूछा: ऐ अल्लाह के रसूल ﷺ! मैं अपने ख़ादिम की ग़लतियों को कितनी बार माफ़ करूँ? आप ﷺ उस शख़्स के उस सवाल पर ख़ामोश रहे, उसने फिर पूछा: अल्लाह के रसूल ﷺ! मैं अपने ख़ादिम की ग़लतियों को कितनी बार माफ़ करूँ? आप ﷺ ने फ़रमाया: 'हर दिन 70 (सत्तर) बार माफ़ करो।'"

"गुलाम-ओ-ख़ादिम को मारने और सताने से भी रसूलुल्लाह ﷺ ने मना फ़रमाया:

من لاءَمَكم مِن مملوكيكم فأطعِموه مما تأكلون، واكسُوه مما تَلْبَسون، ومَن لم يلائمْكم منهم فبِيعوه ولا تعذِّبوا خلقَ اللهِ(صحيح أبي داود:5161)

तर्जुमा: तुम्हारे लौंडी गुलामों में से जो तुम्हारे मुवाफ़िक़ हो (तुम्हारी पसन्द के मुताबिक़ तुम्हारी ख़िदमत करता हो) तो उसको उसी से खिलाओ जो तुम खाते हो और उसको उसी से पहनाओ जो तुम

पहनते हो। और जो तुम्हारे मुवाफ़िक़ न हो तो उसे बेच डालो और अल्लाह की मख़लूक़ को अज़ाब न दो।

और इसी तरह सही मुस्लिम (1659) में है कि हज़रत अबू मस'ऊद बदरी रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपने गुलाम को मारा, तो आप ﷺ ने उन्हें तंबीह किया और फ़रमाया:

أَنَّ اللَّهَ أَقْدَرُ عَلَيْكَ مِنْكَ علی هذا الغُلَامِ، قَالَ: فَقُلْتُ: لا أَضْرِبُ مَمْلُوكًا بَعْدَهُ أَبَدًا۔

(इस गुलाम पर तुम्हें जितना इख़्तियार है, उसकी निस्बत अल्लाह तुम पर ज़्यादा इख़्तियार रखता है) इस के बाद मस'ऊद ने कभी गुलाम को नहीं मारा। बल्कि एक दूसरी रिवायत में आप ﷺ ने यहां तक फ़रमाया:

"अगर तुम उस गुलाम को आज़ाद नहीं करते तो आग तुम्हें लपेट लेती या आग तुम्हें छू लेती।"

(सहीह अबू दाऊद: 5159)

यहाँ यह भी याद रहे कि गुलाम को मारने का कफ़्फ़ारा उसे आज़ाद करना है। अगर जायज़ मौक़े पर गुलाम को मारने की नौबत आ जाए तो चेहरे को छोड़कर मारा जाए, नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

إذا ضرب أحدُكم خادمَه ، فلْجَتَنِبِ الوجْه(صحيح الأدب المفرد:130)

तर्जुमा: अगर किसी को अपने ख़िदमतगार को मारने की नौबत आ जाए तो चेहरे पर न मारे।

(7) ख़िदमतगारों के साथ हुस्न-ए-मुआमला तो करना ही है, इसके अलावा उन्हें पुकारने में भी हक़ारत वाले अल्फ़ाज़ से बचने की तालीम देता है। इससे पहले इस्लाम में ग़ुलाम अपने मालिक को 'मेरा रब' और 'आक़ा' कहता था, जिस से इस्लाम ने मना कर दिया। हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फरमाया:

لا يَقُولَنَّ أحَدُكُمْ : عَبْدِي، فَكُلُّكُمْ عَبِيدُ اللهِ، ولَكِنْ لِيَقُلْ: فَتايَ، ولا يَقُلِ العَبْدُ: رَبِّي، ولَكِنْ لِيَقُلْ: سَيِّدِي.(صحيح مسلم:2249)

तर्जुमा: तुममें से कोई शख़्स (किसी को) मेरा बन्दा और मेरी बन्दी न कहे, तुम सब अल्लाह के बन्दे हो और तुम्हारी सभी औरतें अल्लाह की बन्दियाँ हैं। अलबत्ता इस तरह कहा जा सकता है: मेरा लड़का, मेरी लड़की, मेरा जवान\ख़ादिम, मेरी ख़ादिमा।

(8) इससे बढ़कर इस्लाम का हुस्न क्या होगा कि वह हमें अपने ख़िदमतगारों के साथ बैठकर खाने की तालीम देता है। हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

إذا صَنَعَ لأَحَدِكُمْ خادِمُهُ طَعامَهُ، ثُمَّ جاءَهُ به، وقدْ ولِيَ حَرَّهُ ودُخانَهُ، فَلْيُقْعِدْهُ معهُ، فَلْيَأْكُلْ، فإنْ كانَ الطَّعامُ مَشْفُوهًا قَلِيلًا، فَلْيَضَعْ في يَدِهِ منه أُكْلَةً، أوْ أُكْلَتَيْنِ.(صحيح مسلم :1663)

तर्जुमा: जब तुम में से किसी का ख़ादिम उसके लिये खाना तैयार करे, फिर उसके सामने पेश करे और उसी ने (आग की) तपिश और धुँआँ बर्दाश्त किया है। तो वो उसे अपने साथ बिठाए और वो (ग़ुलाम भी उसके साथ) खाए और अगर खाना बहुत से लोगों ने खाना लिया हो, (यानी) कम हो तो उसके हाथ में एक या दो लुक़मे (ज़रूर) दे।

"ख़ादिमो के साथ खाना मुतवाज़े' होने की अलामत है, चूंकि सैय्यदना अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

ما اسْتَكْبَرَ مَنْ أكلَ مَعَهُ خَادِمُهُ ، و رَكِبَ الحِمارَ بِالأَسْوَاقِ ، و اعْتَقَلَ الشَّاةَ فَاحْتَلَبَها(السلسلة الصحيحة:2218)

तर्जुमा: वह शख़्स मुतकब्बिर नहीं है, जिसके साथ उसके ख़िदमतगार ने खाना खाया और जो बाजारों में गधे पर सवार हुआ और बकरी की टांगों को बांधकर उसे दोहा।

(9) नौकर-ओ-ख़ादिम पर इल्ज़ाम लगाना बहुत आसान होता है क्योंकि वह समाज का कमज़ोर तबक़ा और मालिक के ज़ेरे-निगरानी होता है, मगर इस्लाम ने ग़ुलाम-ओ-ख़ादिम की तहफ़्फ़ुज़-ए-इज़्ज़त के तहत उस पर इल्ज़ाम तराशी के ताल्लुक़ से सख़्त हुक्म दिया है। अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान फ़रमाया है कि मैंने अबुल-क़ासिम रज़ियल्लाहु अन्हु से सुना, आप ﷺ ने फ़रमाया:

مَن قَذَفَ مَمْلُوكَهُ، وَهو بَرِيءٌ ممَّا قالَ، جُلِدَ يَومَ القِيَامَةِ، إِلَّا أَنْ يَكونَ كما قالَ(صحيح البخاري:6858)

तर्जुमा: जिसने अपने ग़ुलाम पर तोहमत लगाई, जबकि ग़ुलाम उस तोहमत से बरी था, तो क़यामत के दिन उसे कोड़े लगाये जाएंगे, सिवाय इसके कि उसकी बात सही हो।

(10) ख़ादिमों के हुक़ूक़ में से एक हक़ यह भी है कि उन पर सदक़ा किया जाए। अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं:

أمرَ النَّبيُّ صلَّى اللَّهُ علَيهِ وسلَّمَ بالصَّدقةِ ، فقالَ رجلٌ : يا رسولَ اللَّهِ ، عِندي دينارٌ ، فقالَ : تصدَّق بِهِ على نفسِكَ ، قالَ : عِندي آخرُ ، قالَ : تصدَّق بِهِ على ولدِكَ ، قالَ : عندي آخرُ ، قالَ : تصدَّق بِهِ على زوجتِكَ أو قالَ : زوجِكَ ، قالَ : عندي آخرُ ، قالَ : تصدَّق بِهِ على خادمِكَ ، قالَ : عندي آخرُ ، قالَ : أنتَ أبصَرُ(صحيح أبي داود:1691)

तर्जुमा: नबी ﷺ ने सदक़ा करने का हुक्म दिया तो एक शख़्स ने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! मेरे पास एक दीनार है, आपने फ़रमाया : अपनी जान पर सदक़ा कर। कहने लगा : मेरे पास दूसरा है। फ़रमाया : अपने बच्चे पर सदक़ा कर। कहने लगा : मेरे पास एक और है। फ़रमाया : अपनी बीवी पर सदक़ा कर। लफ़्ज़ (زوجتك) या (زوجك) फ़रमाया, कहने लगा : मेरे पास एक और है। फ़रमाया : अपने ख़ादिम पर सदक़ा कर। कहने लगा मेरे पास एक और है। फ़रमाया : तू उसके बारे में बेहतर जानता है। (कि कहाँ और किस पर ख़र्च करना है।)

एक दूसरी हदीस मे मिक़दाम-बिन-मअदी-करिब ज़ुबैदी रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

ما كسبَ الرَّجلُ كَسبًا أطيبُ من عملِ يدِه وما أنفقَ الرَّجلُ على نفسِه وأهلِه وولدِه وخادِمِه فهو صدَقةٌ(صحيح ابن ماجه:2138)

तर्जुमा: कोई आदमी अपने हाथ की कमाई से ज़्यादा पाकीज़ा (और उम्दा) रोज़ी हासिल नहीं कर सकता। और आदमी अपनी ज़ात पर अपने बीवी-बच्चों पर और अपने ख़ादिमों पर जो कुछ भी ख़र्च करता है वो सदक़ा होता है।.

(11) जिस तरह हमारे घर के अपने बच्चे हैं उनको बद्दुआ नहीं देना चाहिए, इसी तरह ख़ादिमों को भी बद्दुआ नहीं देना चाहिए। जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

لا تَدعوا علَى أنفسِكُم ولا تَدعوا علَى أولادِكُم ولا تَدعوا علَى خدَمِكم ولا تَدعوا علَى أموالِكُم لا تُوافقوا منَ اللَّهِ تبارَك وتعالى ساعةَ نَيلٍ فيها عَطاءٌ فيَستجيبَ لَكُم (صحيح أبي داود:1532)

तर्जुमा: तुम लोग ना अपने लिए बद्दुआ करो, ना अपनी औलाद के लिए, ना अपने ख़ादिमों के लिए और ना ही अपने अमवाल के लिए, कहीं ऐसा न हो कि वो घड़ी ऐसी हो जिसमें दुआ क़बूल होती हो और अल्लाह तुम्हारी बद्दुआ क़बूल कर ले। एक मर्तबा का वाक़िआ है कि जब अब्दुल मलिक बिन मरवान ने ख़ादिम से मामूली देर होने पर उसे लानत-मलामत किया, तो सुनकर उम्म-ए-दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हा ने कहा कि मैंने हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु को यह कहते हुए सुना था कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

لَا يَكُونُ اللَّعَّانُونَ شُفَعَاءَ وَلَا شُهَدَاءَ يَوْمَ الْقِيَامَةِ (صحيح مسلم :2598)

तर्जुमा: ज़्यादा लानत करने वाले क़यामत के दिन न शफ़ा'अत करने वाले होंगे, न गवाह बनेंगे।

(12) नबी ﷺ जब दुनिया से रुख़्सत हो रहे थे तो आपने आख़िरी वसीयत के तौर पर गुलाम के साथ हुस्न-ए-मुआमला से पेश आने का हुक्म दिया था, जिससे गुलामों और ख़ादिमों का इस्लाम में मक़ाम-ओ-मर्तबा वाज़ेह होता है। अली रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं:

كَانَ آخِرُ كَلَامِ رَسُولِ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ الصَّلَاةَ الصَّلَاةَ اتَّقُوا اللَّهَ فِيمَا مَلَكَتْ أَيْمَانُكُمْ.)
صحيح أبي داود:5156)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह ﷺ की आख़िरी बात (इन्तिक़ाल के मौक़े पर) यह थी कि नमाज़ का ख़याल रखना, नमाज़ का ख़याल रखना, और जो तुम्हारी मिलकियत में (गुलाम और लौंडी) हैं उनके मुआमलात में अल्लाह से डरते रहना।

ख़ादिमों के ताल्लुक़ से यह चंद अहम हुक़ूक़ बयान किए गए, और यह सारे बयान किए गए हुक़ूक़ मुहम्मद ﷺ के फ़र्मूदात (हुक्म) में से हैं, गोया ख़ादिमों के इन सुनहरे और पाकीज़ा हुक़ूक़ से मालूम होता है कि हमारे रसूल हज़रत मुहम्मद ﷺ अपने ख़ादिमों के साथ ऐसा ही बर्ताव भी करते थे, क्योंकि आप ﷺ की ज़िंदगी में हमारे लिए बेहतरीन नमूना है। आप ﷺ जो फ़रमाते थे, उस पर ख़ुद अमल कर के दिखाते थे। अब बाक़ायदा आप ﷺ की ज़िंदगी से ख़ादिमों के साथ हुस्न-ए-

सुलूक और बेहतरीन बर्ताव के अमली नमूने भी पेश करता हूँ ताकि मौज़ू की अच्छी तरह वज़ाहत हो सके।

क़बल इस के कि मैं ख़ादिमों के साथ नबी ﷺ का बर्ताव लिखूं, शैखुल-इस्लाम इब्न उल-क़य्यिम रहिमहुल्लाह की किताब "ज़ादुल-मआद" से रसूलुल्लाह ﷺ के ख़ादिम के नाम पेश करना मुनासिब समझता हूँ, न कि ग़ुलाम-ओ-कनीज़ का ज़िक्र कर रहा हूँ क्योंकि असल मौज़ू ख़ादिम से मुताल्लिक़ है। आप ﷺ के ख़ादिमों में अनस बिन मलिक, अब्दुल्लाह बिन मसऊद, उक़बा बिन आमिर जोहनी, अस्ला बिन शरीक, अबू ज़र गफ़्फ़ारी, ऐमन बिन उबैद, उम्मे ऐमन, बिलाल बिन रबाह और साद थे।

दूसरे सीरत निगारों ने और भी नाम बताए हैं, उनमें से एक अहम नाम जिनसे मुताल्लिक़ आगे हदीस भी आएगी, वह राबिया बिन काब अस्लमी हैं।

अब हम रसूलुल्लाह ﷺ का अपने ख़ादिमों के साथ बर्ताव देखते हैं

(1) आप ﷺ अपने ख़ादिमों का इस क़दर ख़्याल करते थे कि ख़िदमत करने वाला आप ﷺ को छोड़कर जाना पसंद नहीं करता, इस सिलसिले में एक वाक़ि'आ मुलाहिज़ा फरमाएँ। ज़ैद बिन हारिसा रज़ियल्लाहु अन्हु के भाई जब्ला बिन हारिसा रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है:

قَدِمْتُ على رسولِ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ علَيهِ وسلَّمَ فقُلتُ: يا رسولَ اللَّهِ ابعَث معي أخي زيدًا قالَ: هوَ ذا، فإن انطلقَ معَكَ لم أمنَعهُ. قالَ زيدٌ: يا رسولَ اللَّهِ، واللَّهِ لا أختارُ عليكَ أحدًا، قالَ: فرأيتُ رأيَ أخي أفضلَ مِن رأيي(صحيح الترمذي:3815)

तर्जुमा: मैं रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास आया और मैंने कहा: अल्लाह के रसूल! मेरे भाई ज़ैद को मेरे साथ भेज दीजिये, आपने फ़रमाया: वो मौजूद हैं, अगर तुम्हारे साथ जाना चाह रहे हैं तो मैं उन्हें नहीं रोकूँगा, ये सुनकर ज़ैद ने कहा: अल्लाह के रसूल! क़सम अल्लाह की! मैं आपके मुक़ाबले में किसी और को इख़्तियार नहीं कर सकता, जबला कहते हैं: तो मैंने देखा कि मेरे भाई की राय मेरी राय से बेहतर थी।

(2) आप ﷺ जो खाते पीते, उसमें से अपने ख़ादिम को भी देते। सही मुस्लिम में है कि आप ﷺ के लिए जो नबीज़ बनाई जाती, आप ﷺ उसमें से अपने ख़ादिम को भी पिलाते। (सही मुस्लिम: 2004)

(3) आप ﷺ ने अपने ख़ादिम को न कभी डांटा और न कभी मारा। उम्मुल-मोमिनीन हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा कहती हैं:

ما ضربَ رسولُ اللہِ صلی اللہ علیہ وسلم، خادمًا، ولا امرأةً قطُّ.(صحیح أبي داود:4786)

तर्जुमा: "रसूलुल्लाह ﷺ ने न किसी ख़ादिम को मारा और न कभी किसी औरत को।"

(4) आप ﷺ अपने ख़ादिमों को दुआ देते थे। अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है:

قَالَتْ أُمِّي: يا رَسولَ اللَّهِ، خَادِمُكَ أَنَسٌ، ادْعُ اللَّهَ له، قَالَ: اللَّهُمَّ أَكْثِرْ مَالَهُ، ووَلَدَهُ، وبَارِكْ له فِيما أَعْطَيْتَهُ(صحيح البخاری:6344)

तर्जुमा: "मेरी वालिदा (उम्म-ए-सुलैम रज़ियल्लाहु अन्हा) ने कहा: ऐ रसूलुल्लाह ﷺ! अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) आपके ख़ादिम हैं, उनके लिए दुआ फ़रमा दें। नबी करीम ﷺ ने दुआ की कि ऐ अल्लाह! इसके माल-ओ-औलाद को ज़्यादा कर और जो कुछ तूने इसे दिया है, उसमें बरकत अता फ़रमा।"

(5) आप ﷺ ख़ादिमों की ज़रूरतों का ख़्याल रखते और उनके बारे में पूछा करते थे। नबी करीम ﷺ के ख़ादिम या ख़ादिमा से रिवायत है, वह कहते हैं:

كان ممَّا يقولُ للخادمِ : ألكَ حاجةٌ ؟ قال : حتى كان ذاتَ يومٍ فقال : يا رسولَ اللهِ ! حاجتي ، قال : و ما حاجتك ؟ قال : حاجَتي أن تشفعَ لي يومَ القيامةِ قال : و من دلَّكَ على هذا ؟ قال : ربِّي ، قال : أما لا ، فأعنِّي بكثرةِ السجودِ(السلسلة الصحيحة:2102)

तर्जुमा: आप ﷺ ख़ादिम को जो कुछ कहा करते थे, उसमें से एक बात यह थी: (आप ﷺ पूछते) क्या तेरी कोई ज़रूरत है? बिलआख़िर एक दिन ख़ादिम ने कहा: ऐ अल्लाह के रसूल ﷺ! मेरी एक हाजत है। आप ﷺ ने पूछा: तेरी क्या हाजत है? उसने कहा: मेरी हाजत यह है कि आप ﷺ रोज़-ए-क़यामत मेरी

शफ़ाअत फरमाएं। आप ﷺ ने फ़रमाया: इस (मुतालबे पर) तेरी रहनुमाई किस ने की? उसने कहा: मेरे परवरदिगार ने। आप ﷺ ने फ़रमाया: क्यों नहीं! फिर तू सज्दों की कसरत से मेरी मदद कर।

पहले के ख़ादिम भी कितने अच्छे होते कि दुनिया की फ़िक्र न करते बल्कि आख़िरत के लिए सोचते, फिर आप ﷺ की रिफ़ाकत भी तो

नसीब हुई थी। इस मानी की एक हदीस यूँ आई है। हज़रत राबीआ बिन काब (बिन मलिक) असलमी रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा:

كُنْتُ أَبِيتُ مع رَسولِ اللهِ صَلَّى اللَّهُ عليه وسلَّمَ فأتَيْتُهُ بوَضُوئِهِ وحَاجَتِهِ فَقالَ لِي: سَلْ فَقُلتُ: أَسْأَلُكَ مُرَافَقَتَكَ في الجَنَّةِ. قالَ: أَوْ غيرَ ذلكَ قُلتُ: هو ذَاكَ. قالَ: فأعِنِّي علَى نَفْسِكَ بكَثْرَةِ السُّجُودِ.(صحيح مسلم:489)

तर्जुमा: मैं (ख़िदमत के लिये) रसूलुल्लाह ﷺ के साथ (सुफ़्फ़ा में आप के क़रीब) रात गुज़ारा करता था, (जब आप तहज्जुद के लिये उठते तो) मैं वुज़ू का पानी और दूसरी ज़रूरतों का सामान लेकर आप की ख़िदमत में हाज़िर होता। (एक बार) आपने मुझे फ़रमाया : (कुछ) माँगो। तो मैंने कहा कि मैं आप से ये चाहता हूँ कि जन्नत में भी आप का क़रीब नसीब हो। आपने फ़रमाया : या इस के सिवा कुछ और? मैंने कहा कि बस यही। तो आपने फ़रमाया : तुम अपने मामले में सजदों की कसरत से मेरा मदद करो।

राबीआ किस तरह आप ﷺ की ख़िदमत करते, ज़रा इसकी तफ़सील दूसरी हदीस से जान लें, ताकि हमारे अंदर भी मोहब्बत-ए-रसूल ﷺ का जज़्बा बेदार हो। राबिया बयान करते हैं:

كُنتُ أخدُمُ رَسولَ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ وأقومُ له في حَوائِجِه نَهاري أجمَعَ، حتى يُصلِّيَ رَسولُ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ العِشاءَ الآخِرةَ، فأجلِسَ ببابِه إذا دَخَلَ بَيتَه، أقولُ: لَعَلَّها أنْ تَحدُثَ لِرسولِ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ حاجةٌ؛ فما أزالُ أسمَعُه يَقولُ رَسولُ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ: سُبحانَ اللهِ، سُبحانَ اللهِ، سُبحانَ اللهِ وبَحمْدِه، حتى أمَلَّ فأرجِعَ، أو تَغلِبَني عَينيَّ، فأرقُدَ(إرواء الغليل :208/2 وقال البانی اسنادہ حسن)

तर्जुमा: मैं नबी करीम ﷺ की ख़िदमत किया करता था और सारा-सारा दिन आप ﷺ की ज़रूरतें पूरी किया करता था, यहां तक कि रसूलुल्लाह ﷺ इशा की नमाज़ अदा फ़रमा लेते। नमाज़-ए-इशा के बाद आप ﷺ अपने घर तशरीफ़ ले जाते तो मैं आप ﷺ के दरवाज़े पर बैठा रहता। मैं सोचता कि हो सकता है कि आप ﷺ को कोई ज़रूरत पेश आ जाए। मैं काफ़ी देर तक आप ﷺ की आवाज़ सुनता रहता कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम "سُبْحَانَ اللهِ، سُبْحَانَ اللهِ، سُبْحَانَ اللهِ وَبِحَمْدِهِ" के अल्फ़ाज़ अदा करते रहते, यहां तक कि मैं ही थककर वापस आ जाता, या मुझ पर आंखे ग़ल्बा पा लेती और मैं सो जाता।

(6) हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु ने दस साल आप ﷺ की ख़िदमत की और आपने दस साल की ख़िदमत का तजुर्बा बताया कि मुहम्मद ﷺ ने हमें कभी यह न कहा कि यह काम ऐसे क्यों किया या यह

काम क्यों नहीं किया? ख़ादिम-ए-रसूल अनस रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान ख़ुद उनकी ज़ुबानी सुनें, आप बयान करते हैं:

قَدِمَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ الْمَدِينَةَ لَيْسَ لَهُ خَادِمٌ، فَأَخَذَ أَبُو طَلْحَةَ بِيَدِي، فَانْطَلَقَ بِي إِلَى رَسُولِ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، فَقَالَ: يَا رَسُولَ اللَّهِ، إِنَّ أَنَسًا غُلَامٌ كَيِّسٌ فَلْيَخْدُمْكَ، قَالَ: فَخَدَمْتُهُ فِي السَّفَرِ وَالْحَضَرِ، مَا قَالَ لِي لِشَيْءٍ صَنَعْتُهُ لِمَ صَنَعْتَ هَذَا هَكَذَا، وَلَا لِشَيْءٍ لَمْ أَصْنَعْهُ لِمَ، لَمْ تَصْنَعْ هَذَا هَكَذَا(صحیح البخاری:2768)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह (सल्ल०) मदीने तशरीफ़ लाए तो उनके साथ कोई ख़ादिम नहीं था। इसलिये अबू-तलहा (जो मेरे सौतेले बाप थे) मेरा हाथ पकड़कर रसूलुल्लाह की ख़िदमत में ले गए और कहा ऐ अल्लाह के रसूल अनस एक समझदार बच्चा है, ये आपकी ख़िदमत किया करेगा। हज़रत अनस कहते हैं कि मैंने आपके साथ सफ़र और क़ियाम दोनों में ख़िदमत की, आपने मुझसे कभी किसी काम के बारे में जिसे मैंने कर दिया हो, ये नहीं फ़रमाया कि ये काम तुमने इस तरह क्यों किया? इसी तरह किसी ऐसे काम के बारे में जिसे मैं न कर सका हूँ आपने ये नहीं फ़रमाया कि तू ने ये काम इस तरह क्यों नहीं किया?

उसवा-ए-रसूल ﷺ से सय्यदना अनस रज़ियल्लाहु अन्हु के बारे में एक वाक़ि'आ से भी अंदाज़ा लगाएँ कि आप ﷺ अपने ख़ादिम से काम लेने

में किस क़दर हसीन-ओ-जमील अख़लाक़ वाला, मेहरबान, नर्म दिल और शफ़ीक़ थे, हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं:

كانَ رَسولُ اللهِ صلَّى اللَّهُ عليه وسلَّمَ مِن أَحْسَنِ النَّاسِ خُلُقًا، فأرْسَلَنِي يَوْمًا لِحَاجَةٍ، فَقُلتُ: وَاللَّهِ لا أَذْهَبُ، وفي نَفْسِي أَنْ أَذْهَبَ لِما أَمَرَنِي به نَبِيُّ اللهِ صلَّى اللَّهُ عليه وسلَّمَ، فَخَرَجْتُ حتَّى أَمُرَّ علَى صِبْيَانٍ وَهُمْ يَلْعَبُونَ في السُّوقِ، فَإِذَا رَسولُ اللهِ صلَّى اللَّهُ عليه وسلَّمَ قدْ قَبَضَ بقَفَايَ مِن وَرَائِي، قالَ: فَنَظَرْتُ إِلَيْهِ وَهو يَضْحَكُ، فَقالَ: يا أُنَيْسُ، أَذَهَبْتَ حَيْثُ أَمَرْتُكَ؟ قالَ: قُلتُ: نَعَمْ، أَنَا أَذْهَبُ يا رَسولَ اللهِ.(صحيح مسلم: 2310)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह (सल्ल०) सभी इन्सानों में अख़लाक़ के सबसे अच्छे थे, आपने एक दिन मुझे किसी काम से भेजा, मैं ने कहा : अल्लाह की क़सम! मैं नहीं जाऊँगा। हालाँकि मेरे दिल में ये था कि नबी (सल्ल०) ने मुझे जिस काम का हुक्म दिया है मैं उस के लिये ज़रूर जाऊँगा। तो मैं चला गया यहाँ तक कि मैं कुछ लड़कों के पास से गुज़रा, वो बाज़ार में खेल रहे थे, फिर अचानक (मैं ने देखा) रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने पीछे से मेरी गुद्दी से मुझे पकड़ लिया, मैं ने आप की तरफ़ देखा तो आप हँस रहे थे। आपने फ़रमाया : ऐ छोटे अनस ! क्या तुम वहाँ गए थे जहाँ (जाने को) मैं ने कहा था? मैं ने कहा जी हाँ, अल्लाह के रसूल! मैं जा रहा हूँ।

(7) कभी आप ﷺ अपने ख़ादिम के घर भी जाते, अगर कोई ख़ादिम बीमार पड़ जाता तो उसकी इयादत को भी जाते, अनस बिन मलिक रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान किया:

كانَ غُلَامٌ يَهُودِيٌّ يَخْدُمُ النبيَّ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ، فَمَرِضَ، فأتَاهُ النبيُّ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ يَعُودُهُ، فَقَعَدَ عِنْدَ رَأْسِهِ، فَقالَ له: أسْلِمْ، فَنَظَرَ إلى أبِيهِ وهو عِنْدَهُ فَقالَ له: أطِعْ أبَا القَاسِمِ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ، فأسْلَمَ، فَخَرَجَ النبيُّ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ وهو يقولُ: الحَمْدُ لِلَّهِ الذي أنْقَذَهُ مِنَ النَّارِ.(صحيح البخاري:1356)

तर्जुमा: एक यहूदी लड़का (अब्दुल-क़ुद्दूस) नबी करीम (सल्ल०) की ख़िदमत किया करता था। एक दिन वो बीमार हो गया। आप (सल्ल०) उसका मिज़ाज मालूम करने के लिये तशरीफ़ लाए और उसके सिरहाने बैठ गए और फ़रमाया कि मुसलमान हो जा। उसने अपने बाप की तरफ़ देखा। बाप वहीं मौजूद था। उसने कहा कि (क्या हरज है) अबुल-क़ासिम (सल्ल०) जो कुछ कहते हैं, मान ले। चुनांचे वो बच्चा इस्लाम ले आया। जब नबी करीम (सल्ल०) बाहर निकले तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि शुक्र है अल्लाह पाक का जिसने इस बच्चे को जहन्नम से बचा लिया।

(8) आप ﷺ ख़ादिम के साथ आदल-ओ-मुरुवत से पेश आते, एक बार का वाक़ि'आ है कि नबी ﷺ आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा के घर थे। उस

दौरान ख़ादिम ज़ैनब बिन्त-ए-जहश रज़ियल्लाहु अन्हा के घर से एक प्याले में कोई चीज़ लाया, सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने गुस्से में ख़ादिम के हाथ पर मारा जिससे प्याला टूट गया। नबी ﷺ ने ख़ुद से कटोरे का टुकड़ा और जो खाना गिरा था, उसे जमा किया। फिर जिस घर में कटोरा टूटा, उस घर से नया कटोरा मंगवाया और उस घर को भिजवा दिया जहाँ से आया था और टूटा हुआ उसी घर में रहने दिया। (बुख़ारी: 5225)

(9) नौकर चाकर भी समाज का एक हिस्सा है, आप ﷺ उन्हें भी इज़्ज़त-ओ-एहतिराम से देखते और क़दर किया करते थे।

كَانَ رَسولُ اللهِ صَلَّى اللَّهُ عليه وسلَّمَ إِذَا صَلَّى الغَدَاةَ جَاءَ خَدَمُ المَدِينَةِ بآنِيَتِهِمْ فِيهَا المَاءُ، فَما يُؤْتَى بإِنَاءٍ إِلَّا غَمَسَ يَدَهُ فِيهَا، فَرُبَّما جَاؤُوهُ فِي الغَدَاةِ البَارِدَةِ، فَيَغْمِسُ يَدَهُ فِيهَا.(صحيح مسلم: 2324)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह (सल्ल०) जब सुबह की नमाज़ से फ़ारिग़ होते तो मदीना के ख़ादिम (गुलाम) अपने बर्तन ले आते जिन में पानी होता, जो भी बर्तन आप के सामने लाया जाता आप (सल्ल०) अपना हाथ मुबारक उस में डुबोते कभी-कभी सख़्त ठण्डी सुबह में बर्तन लाए जाते तो आप (फिर भी) उन में अपना हाथ डुबो देते।

इसी तरह एक दूसरी हदीस में है, अनस बिन मलिक रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ के अख़लाक़-ए-फ़ज़ीला का यह हाल था:

إِنْ كَانَتِ الأَمَةُ مِن إِمَاءِ أَهْلِ المَدِينَةِ، لَتَأْخُذُ بِيَدِ رَسولِ اللَّهِ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ فَتَنْطَلِقُ به حَيْثُ شَاءَتْ.(صحيح البخاري:6072)

एक लोंडी मदीना की लोंडियों में से आप ﷺ के हाथ को पकड़ लेती और अपने किसी भी काम के लिए जहाँ चाहती आपको ले जाती।

गुज़िश्ता कलाम का लब्ब-ए-लुबाब यह है कि ख़ादिम भी समाज का एक हिस्सा है, उसे भी वही मक़ाम मिलना चाहिए जो दूसरे तबक़ों को हासिल है। यही वजह है कि इस्लाम ने ख़ादिमों को भी आला मक़ाम अता किया है, उनके हुक़ूक़ मुत'अय्यन किए हैं और आप ﷺ ने ख़ादिमों के साथ अच्छा बरताव कर के दुनिया वालों के लिए एक बेहतरीन मिसाल क़ाइम की है। इंसान की ख़ूबी का उस वक़्त पता चलता है जब वह कमज़ोरों और मातहतों के साथ अच्छा सुलूक करे, और मातहत जब अपने मालिक की ख़ूबी बयान करें तो यह और भी बड़ी बात होती है। नबी ﷺ बुलंद अख़लाक़ के मेयार पर फ़ाइज़ थे और आप ﷺ तो अख़लाक़ी क़दरों की तकमील के लिए आए थे, इसी वजह

से जहाँ आप ﷺ ने अपने घर वालों और अपने सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम के साथ अच्छा सुलूक किया, वहीं आपने अपने ख़ादिमों के साथ भी बेहतर से बेहतर सुलूक पेश किया। इस जगह ठहरकर हमें यह भी सोचना है कि हम अपने मातहतों के साथ कैसा सुलूक करते हैं? नबी ﷺ के उस्वा-ए-हसना से हमारा किरदार किस क़दर मेल खाता है? अगर हमारे किरदार में खोट है और यक़ीनन होगा तो अपनी इस्लाह करें और उस्वा-ए-रसूल ﷺ को अपनाएँ। ख़ादिम-ओ-गुलाम के साथ, घर के तमाम अफ़राद, सभी रिश्तेदार, दोस्त-ओ-आहबाब, समाज-ओ-मुहल्ला, साहिब-ए-इल्म-ओ-फन, बीमार-ओ-मुहताज, फ़क़ीर-ओ-मिस्कीन, सबके साथ अच्छे सुलूक से पेश आएँ। यहाँ तक कि ग़ैर-मुसलमानों के साथ भी हमारा रवैया इंसानियत नवाज़ी का हो, ताकि हमारे अच्छे अख़लाक़ और बुलंद किरदार से उनके दिलों में इस्लाम की जोत जाग सके।

आख़िर में ख़ादिमों से मुताल्लिक़ अवाम में फैली कुछ ज़ईफ़ अहादीस का ज़िक्र किया जा रहा है ताकि हम इन ज़ईफ़ अहादीस के बयान करने से बच सकें।

(1) अबू सईद खुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

إذا ضربَ أحدُكُم خادمَهُ فذَكَرَ اللَّهَ فارفَعوا أيديَكُم (ضعيف الترمذي:1950)

तर्जुमा: जब तुम में से कोई अपने ख़ादिम को मारे और वह (ख़ादिम) अल्लाह का नाम ले ले तो तुम अपने हाथ रोक लो।"

(2)

نهَى عن استئجارِ الأجيرِ حتَّى يبيِّنَ لهُ أجرُهُ (ضعيف الجامع:6030)

तर्जुमा: मज़दूरों से उसकी मज़दूरी के त'अय्युन से पहले काम लेने से मना फ़रमाया।

(3)

لا تضرِبوا إماءَكم على كسرِ إنَّائكم ، فإنَّ لها آجالًا كآجالِ الناسِ (ضعيف الجامع:6240)

तर्जुमा: बर्तन के टूटने पर मुलाज़िमों-और-ख़ादिमों को मत मारो! क्योंकि लोगों की तरह बर्तनों का भी एक वक़्त मुक़र्रर है।

अल्बानी ने इसे मौज़ू कहा है।

(4) हज़रत अम्र बिन हारिस रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं कि नबी अकरम ﷺ ने फ़रमाया:

ما خفَّفتَ عن خادمِك من عملِهِ ؛ فهو أجرٌ لك في موازينِك يومَ القيامةِ (السلسلة الضعيفة:4437)

तर्जुमा: तुम अपने ख़ादिम की ज़िम्मेदारियों में जितनी कमियाँ करोगे, उसके बदले में तुम्हारा नाम-ए-अमल के पलड़े में उसका अज्र होगा।

(5) नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

حسن الملكة يمن، وسوء الخلق شؤم (ضعيف أبي داود:5163)

तर्जुमा: ख़ादिम और दासी के साथ अच्छा बर्ताव करना बरकत है, और बुरा सुलूक करना नहूसत है।"

(6) अबू बकर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी अकरम ﷺ ने फ़रमाया:

لَا يَدْخُلُ الْجَنَّةَ سَيِّئُ الْمَلَكَةِ (ضعيف الترمذي: 1946)

तर्जुमा: वह शख़्स जन्नत में दाख़िल नहीं होगा जो ख़ादिमों के साथ बुरा सुलूक करता है।"

(7)

الأكلُ مع الخادمِ من التواضُعِ(ضعيف الجامع:2291) قال البانی :موضوع

तर्जुमा: ख़ादिम के साथ खाना तवाज़ो में से है।

(8)

الخادمُ في أمانِ اللهِ عزَّ وجلَّ ، ما دامَ الخادمُ في خدمةِ المؤمنِ(لسان الميزان:191/4) قال ابن حجر العسقلانی :موضوع

तर्जुमा: जब तक ख़ादिम मोमिन की ख़िदमत में होता है, वह अल्लाह के अमान में होता है।

(9)

الأكلُ مع الخادِمِ من التواضعِ. فمن أكل معه اشتاقت إليه الجنةُ(السلسلة الضعيفة:612) قال البانی : موضوع

तर्जुमा: ख़ादिम के साथ खाना तवाज़ो में से है, इसलिए जिस ने उसके साथ खाया, जन्नत उसके लिए मुश्ताक़ (आरज़ूमंद) हो जाती है।

(10)

إذا ابتاعَ أحدُكُم الخادِمَ ، فليكُن أوَّلُ شيءٍ يُطعِمُهُ الحلوَى ، فإنَّهُ أطيَبُ لنفسِهِ(ضعيف الجامع:272)

तर्जुमा: जब तुम में से कोई ख़ादिम (गुलाम) ख़रीदे तो उसे सबसे पहले मीठी चीज़ खिलाओ क्योंकि यह नफ़्स के लिए पाकीज़ा है।

एक दूसरी ज़ईफ़ रिवायत में है:

إذا اشْتَرَى أحدُكُمُ الجارِيةَ ، فلْيكُنْ أوَّلَ مايُطعِمُها الحُلْوُ ، أطْيبُ لنفْسِها(ضعيف الجامع:369)

तर्जुमा: तुम में से जो लोंडी ख़रीदे, तो पहले पहल उसे मीठी चीज़ खिलाओ क्योंकि यह नफ़्स के लिए पसंदीदा है।

[16].इस्लाम में ज़ौजैन (मियाँ-बीवी) के हुक़ूक़

निकाह शौहर और बीवी के दरमियाँन एक मज़बूत रिश्ते का नाम है जो आपसी मोहब्बत और हमदर्दी पर क़ाइम है, एक-दूसरे को सुकून पहुँचाने का बाइस है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَمِنْ آيَاتِهِ أَنْ خَلَقَ لَكُم مِّنْ أَنفُسِكُمْ أَزْوَاجًا لِّتَسْكُنُوا إِلَيْهَا وَجَعَلَ بَيْنَكُم مَّوَدَّةً وَرَحْمَةً ۚ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَآيَاتٍ لِّقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ (الروم :21)

तर्जुमा: और उसकी निशानियों में से है कि उसने तुम्हारी ही जिन्स से बीवियां पैदा कीं ताकि तुम उनसे आराम पाओ, और उसने तुम्हारे दरमियाँन मोहब्बत और हमदर्दी क़ाइम कर दी। यक़ीनन ग़ौर और फिक्र करने वालों के लिए इसमें बहुत निशानियाँ हैं।

ज़िन्दगी में सब कुछ हो मगर सुकून मयस्सर ना हो तो ज़िन्दगी किसी काम की नहीं। अल्लाह अपने बंदों पर रहम फ़रमाते हुए उनको सुकून पहुँचाने के बाइस उसी की जिन्स से उसके लिए बीवी पैदा की, जिससे शादी करके इंसान ज़िन्दगी को ख़ुशगवार और पुरसुकून बनाता है। मगर आजकल मियां बीवी के दरमियाँन उल्फ़त और हमदर्दी का माहौल नज़र नहीं आता है। अक्सर घरों में बेसुकूनी, झगड़े, और नफ़रत

और अदावत का माहौल है, यही वजह है कि मुस्लिम समाज में कसरत से तलाक़ दी जाती है और मियां बीवी का घर उजड़ता है।

सवाल पैदा होता है कि निकाह तो उल्फ़त और सुकून और घर बसाने के लिए किया जाता है, फिर आज ऐसे बुरे मंज़र देखने को क्यों मिलते हैं?

इसी सवाल ने मुझे यह तहरीर लिखने पर मजबूर किया, शायद किसी का घर बस जाए, किसी की नफ़रत आपसी मोहब्बत में तब्दील हो जाए और सुकून और क़रार से दोबारा ज़िन्दगी गुज़ारने लगे। अल्लाह का फ़रमान है:

وَذَكِّرْ فَإِنَّ الذِّكْرَىٰ تَنفَعُ الْمُؤْمِنِينَ (الذاريات:55)

तर्जुमा: और नसीहत करते रहो, यकीनन यह नसीहत ईमानदारों को फ़ायदा देगी।

जो लोग निकाह को मामूली बात समझते हैं और उसके तकाज़े से बेख़बर हैं वही अक्सर बेख़बरी में बड़ी आसानी से इस रिश्ते को तोड़ देते हैं। इसके अलावा भी दूसरे कारण पाए जाते हैं, जैसे ग़लतफ़हमी, गुस्सा, अनानियत (खुदी/घमंड) , तास्सुब, ज़ुल्म और मजबूरी वग़ैरह।

ताहम हुक़ूक़े ज़ौजैन से ना-वाक़िफ़ियत और अल्लाह से बेख़ौफी, इज़दिवाजी (शादी संबन्धी) ज़िन्दगी की बर्बादी का अहम सबब (कारण) है।

ज़ौजैन (मियाँ-बीवी) के हुक़ूक़ बयान करने से पहले 5 अहम तरीन बातों को जान लेना बेहद फ़ायदेमंद होगा।

पहली बात यह है कि अक़्द-ए-निकाह करने से पहले ही बल्कि लड़की का रिश्ता तलाशते वक्त ही अपनी नीयत की इस्लाह कर लेनी चाहिए और यह नियत बना लेनी चाहिए कि मैं इफ़्फ़त और इस्मत की हिफ़ाज़त, ज़िन्दगी में सुकून, नेक औलाद के हासिल और दीनी काम पर मदद हासिल करने के लिए शादी कर रहा हूँ। जब नियत अच्छी होगी तो अल्लाह अच्छे रिश्ते की तौफ़ीक़ देगा और निकाह के बाद रिश्ते में पायेदार होगी और निकाह के पाकीज़ा मक़ासिद भी हासिल होंगे। इमाम बुख़ारी रहिमहुल्लाह सहीह बुख़ारी में सबसे पहले नियत वाली हदीस दर्ज करते हैं जिसमें बताया गया है कि तमाम कामों का दारोमदार नियत पर है, शादी भी एक अहम काम है, इसके लिए अच्छी नियत करते हैं तो ज़िन्दगी पर अच्छा असर होगा और बुरी नियत करते हैं तो ज़िन्दगी पर बुरा असर होगा।

आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

إِنَّما الأَعْمالُ بالنِّيّاتِ، وإِنَّما لِكُلِّ امْرِئٍ ما نَوَى، فمَن كانَتْ هِجْرَتُهُ إلى دُنْيا يُصِيبُها، أوْ إلى امْرَأَةٍ يَنْكِحُها، فَهِجْرَتُهُ إلى ما هاجَرَ إلَيْهِ(صحيح البخاري:1)

तर्जुमा: तमाम आमाल का दारोमदार नियत पर है और हर अमल का नतीजा हर इंसान को उसकी नियत के मुताबिक़ ही मिलेगा। पस जिसकी हिजरत (वतन छोड़ने की) दौलत-ए-दुनिया हासिल करने के लिए हो या किसी औरत से शादी की गरज़ से हो, पस उसकी हिजरत उन्हीं चीज़ों के लिए होगी जिनके हासिल करने की नियत से उसने हिजरत की है।

दूसरी बात यह है कि बुनियादी तौर पर मर्दों को यह समझाना है कि जिन औरतों को हम ब्याह कर घर लाते हैं उनसे हमारे अहद और पैमान होते हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

وَأَخَذْنَ مِنكُم مِّيثَاقًا غَلِيظًا(النساء:21)

तर्जुमा: और उन औरतों ने तुमसे मज़बूत अहद ओ पैमान ले रखा है।

यहाँ मज़बूत अहद ओ पैमान से मुराद यह है कि मर्द अच्छे तरीक़े से बीवी को साथ रखने का उससे मज़बूत वादा करता है।

तीसरी बात यह है कि निकाह से हमारा घर आबाद होता है और एक नई ज़िन्दगी का आगाज़ होता है, यह आगाज़ जिस क़दर बेहतर होगा उसका गहरा असर आइंदा की ज़िन्दगी पर पड़ता है। बाअस सबब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने नेक औरत से शादी करने और कामयाब होने का हुक्म दिया है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

تُنْكَحُ الْمَرْأَةُ لِأَرْبَعٍ: لِمَالِهَا، وَلِحَسَبِهَا، وَجَمَالِهَا، وَلِدِينِهَا، فَاظْفَرْ بِذَاتِ الدِّينِ تَرِبَتْ يَدَاكَ(صحيح البخاري:5090)

तर्जुमा: औरत से निकाह चार चीज़ों की बुनियाद पर किया जाता है उसके माल की वजह से, और उसके ख़ानदानी शरफ़ की वजह से, और उसकी ख़ूबसूरती की वजह से, और उसके दीन की वजह से। और तू दींदार औरत से निकाह कर के कामयाबी हासिल कर। अगर ऐसा ना करे तो तेरे हाथों को मिट्टी लगेगी (यानि आख़िर में तुझे नदामत होगी)।

आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने दुनियादार लोगों का हाल बताया कि वो लोग माल-ओ-मनाल, हसब-ओ-नसब, और हुस्न-ओ-जमाल की वजह से शादी करते हैं। तुम ईमान वाले दीन की बुनियाद पर दींदार लड़की से शादी करो, अगर तुम दींदार लड़की से शादी करोगे तो

कामयाब रहोगे, और अगर तुमने इसकी मुख़ालिफ़त की तो अफ़सोस करना पड़ेगा। आज हमारी बर्बादी की बड़ी वजह निकाह में दीन को मे'यार ना बनाना है। यह हदीस इस बात की दलील है। इससे भी वाज़ेह ज़िक्र एक दूसरी हदीस में मिलता है, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

إِذَا خَطَبَ إِلَيْكُمْ مَنْ تَرْضَوْنَ دِينَهُ وَخُلُقَهُ فَزَوِّجُوهُ، إِلَّا تَفْعَلُوا تَكُنْ فِتْنَةٌ فِي الأَرْضِ، وَفَسَادٌ عَرِيضٌ.(الترکي:1084)

तर्जुमा: अगर तुम्हारे यहाँ कोई ऐसा आदमी निकाह का पैग़ाम भेजे जिसकी दीन और अख़लाक़ से तुम मुतमईन हो, तो उसके साथ (अपनी वलिया) की शादी कर दो। अगर तुमने ऐसा न किया तो ज़मीन में बड़ा फ़ितना और फ़साद फैलेगा।

इसलिए मेरे भाइयों! अगर अपने घरों को बचाना हो, ज़िंदगी में सुकून लाना हो और अपना रिश्ता मज़बूती से क़ाइम रखना हो, तो निकाह में दीन को मेयार बनाएँ। दींदार और नेक बीवी दुनिया की अज़ीम दौलत है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

الدنيا متاع، وخير متاع الدنيا: المراة الصالحة(صحيح مسلم:3649)

तर्जुमा: दुनिया 'मता' है (चंद रोज़ा सामान है) और दुनिया का बेहतरीन 'मता' (फ़ायदा बख़्श सामान) नेक औरत है।

नेक बीवी दुनिया की अज़ीम दौलत इसलिए है कि वह शौहर की क़दर करती है, उसके हुक़ूक़ अदा करती है, घर का माहौल दीनी बना कर रखती है, औलाद की दीनी तर्बियत करती है और शौहर को भी दीन और ईमान पर मदद करती है।

सौबान रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि एक सफ़र में थे, आपके कुछ सहाबा ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से कहा कि अगर हम जानते कि कौन सा माल बेहतर है, तो उसी को अपनाते। तो आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

أَفْضَلُهُ لِسَانٌ ذَاكِرٌ، وَقَلْبٌ شَاكِرٌ، وَزَوْجَةٌ مُؤْمِنَةٌ تُعِينُهُ عَلَى إِيمَانِهِ(صحيح الترمذي:3094)

तर्जुमा: बेहतरीन माल यह है कि आदमी के पास अल्लाह को याद करने वाली ज़बान हो, शुक्रगुज़ार दिल हो, और उसकी बीवी ऐसी मोमिना औरत हो जो उसके ईमान को पुख़्ता तर बनाने में मददगार हो।

चौथी बात यह है कि अल्लाह ने मर्द को औरत का हाकिम बनाया है, वह घर चलाता, संभालता और बीवी बच्चों की किफ़ालत करता है। यही वजह है कि मर्द को अल्लाह ने बीवी पर फ़ज़ीलत दी है। लेकिन हुक़ूक़ दोनों के लिए मुत'अय्यन फ़रमाए हैं। अल्लाह फ़रमाता है:

وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذِي عَلَيْهِنَّ بِالْمَعْرُوفِ وَلِلرِّجَالِ عَلَيْهِنَّ دَرَجَةٌ والله عزيز حكيم ﴾ [البقرة: 228].

तर्जुमा: और औरतों के भी वैसे ही हक़ हैं जैसे उन पर मर्दों के हैं अच्छाई के साथ, हाँ मर्दों को औरतों पर फ़ज़ीलत है। अल्लाह ग़ालिब है हिकमत वाला है।

इसलिए शौहर यह न समझे कि इस्लाम ने बीवी को कोई मक़ाम नहीं दिया, इसके लिए कोई हक़ नहीं है, उसको जैसे चाहो रखो, बिला वजह ज़द-ओ-कोब (मारपीट) करो, घर में रखो या निकाल दो, इस्तेमाल करो और तलाक़ दे दो कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। हरगिज़ नहीं। बीवी के भी वैसे ही हक़ हैं जैसे शौहर के हुक़ूक़ हैं।

पाँचवीं बात यह है कि बंदों के हुक़ूक़ का मुकम्मल बहुत ही अहम है। जो भी मुसलमान मर्द या औरत किसी की हक़ तलफ़ी करे और उस हाल में मर जाए तो अल्लाह के यहाँ उसकी सख़्त पूछ होगी और

मज़लूम को पूरा-पूरा इंसाफ़ दिया जाएगा। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: मुफ़लिस मेरी उम्मत में क़यामत के दिन वह होगा जो नमाज़ लाएगा, रोज़ा और ज़कात लेकर आएगा लेकिन उसने दुनिया में एक को गाली दी होगी, दूसरे को बदकारी की तोहमत लगाई होगी, तीसरे का माल खा लिया होगा, चौथे का ख़ून किया होगा, पाँचवे को मारा होगा। फिर उन लोगों को (यानी जिन्हें उसने दुनिया में सताया) उसकी नेकियाँ मिल जाएँगी और जो उसकी नेकियाँ उसके गुनाह अदा होने से पहले ख़त्म हो जाएँगी तो उन लोगों की बुराइयाँ उस पर डाल दी जाएँगी। आख़िर वह जहन्नम में डाल दिया जाएगा।

इसलिए मियाँ-बीवी में से हर एक को अपना-अपना हक़ अदा करना चाहिए और हक़ तलफ़ी करने से अल्लाह का ख़ौफ़ खाना चाहिए।

अब आपके सामने मियाँ-बीवी के हुक़ूक़ बयान करेंगे। यहाँ 3 क़िस्म के हुक़ूक़ हैं, कुछ हुक़ूक़ ज़ौजैन के दरमियाँन मुश्तरका (कॉमन) हैं यानी दोनों को एक-दूसरे के लिए अदा करना है, कुछ मख़्सूस हुक़ूक़ शौहर के हैं और कुछ मख़्सूस हुक़ूक़ बीवी के हैं। तवालत के खौफ़ से उन तीनों क़िस्म के हुक़ूक़ में से अहम हुक़ूक़ को बयान करने पर इक्तिफा करूँगा।

मियाँ बीवी के दरमियाँन मुश्तरका हुक़ूक़

(1) इताअत-ए-इलाही के लिए एक-दूसरे का तआवुन:

निकाह की बुनियाद ही कुफ़ू यानी दींदारी पर क़ाइम है। इस दीन की हिफ़ाज़त और दीन पर अमल करने के लिए मियाँ-बीवी एक-दूसरे का तआवुन करें। अल्लाह का फ़रमान है:

وَتَعَاوَنُوا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوَىٰ ۖ وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَى الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ ۖ إِنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ۔

(المائدہ:)

तर्जुमा: नेकी और परहेज़गारी में एक-दूसरे की इमदाद करते रहो और गुनाह, ज़ुल्म और ज़्यादती में मदद न करो और अल्लाह से डरते रहो, बेशक अल्लाह सख़्त सज़ा देने वाला है।

अल्लाह का यह हुक्म आम है कि हर कोई एक-दूसरे को नेकी के काम पर मदद करे और बुराई के काम पर कोई किसी की मदद न करे। जब यह आम लोगों के लिए हुक्म है, तो मियाँ-बीवी के लिए बदर्जा-ए-औला हुक्म होगा क्योंकि इन्हीं दोनों से पहले घर बनता है

और फिर मुतअद्दिद घरों से समाज और मुआशरा तशकील पाता है। इस मामले में एक अहम हदीस मुलाहिज़ा फ़रमाएँ, अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

رحِمَ اللَّه رَجُلا قَامَ مِنَ اللَّيْلِ، فصلىَّ وأيُقَظَ امرأَتهُ، فإنْ أَبَتْ نَضحَ في وجُهِهَا الماءَ، رَحِمَ اللَّهُ امَرَأَةً قَامت مِن اللَّيْلِ فَصلَّتْ، وأَيُقَظَتْ زَوْجَهَا فإِن أَبِي نَضَحَتْ فِي وجُهِهِ الماءَ. (صحيح ابي داؤد:٠)

तर्जुमा: अल्लाह उस शख़्स पर रहम फ़रमाए जो रात को उठे और नमाज़ पढ़े और अपनी बीवी को भी जगाए। अगर वह न उठे तो उसके चेहरे पर पानी के छींटे मारे। अल्लाह उस औरत पर रहम फ़रमाए जो रात को उठकर नमाज़ पढ़े और अपने शौहर (पति) को भी जगाए। अगर वह न उठे तो उसके चेहरे पर पानी के छींटे मारे।

इस हदीस में दीन के काम पर मियां-बीवी में से हर एक को दूसरे का तआवुन करने की तरग़ीब दी गई है। शौहर कोई दीनी काम करे तो उसकी तरफ़ बीवी को बुलाए और बीवी कोई नेक काम करे तो उसमें शौहर को भी शरीक करे।

कुछ लोग यह समझते हैं कि बीवी को नेक काम का हुक्म देना सिर्फ़ शौहर का काम है, बीवी का काम नहीं है। यह लोगों की ग़लतफ़हमी है। याद रखें जितना मियाँ बीवी के लिए ज़िम्मेदार है उतना बीवी भी शौहर की ज़िम्मेदार है। शौहर (पति) बे-दीनी, बे-नमाज़ी, शराबी, जुआरी, बेहया और कुफ़्र और मासियत करने वाला हो तो बीवी का दीनी फरीज़ा है कि अपने शौहर की दीनी इस्लाह करे। अगर शौहर अपनी इस्लाह कर लेता है और दीन पर आ जाता है तो ठीक है वरना बीवी ऐसे शौहर से अलग हो सकती है। यही ज़िम्मेदारी मर्द की भी है।

(2) हुस्न-ए-मु'आशरत के साथ ज़िंदगी गुज़ारना:

मियां-बीवी में से दोनों का फ़रीज़ा है कि एक दूसरे से मोहब्बत करें, एक दूसरे का साथ दें, एक दूसरे से हुस्न-ए-सुलूक से पेश आएं, नरमी और हमदर्दी का मामला करें, एक दूसरे की बशरी ग़लतियों को नज़र अंदाज़ करें (दीनी मामले में ग़लती की इस्लाह की जाएगी) और 'अफ़्व और दर्गुज़र से काम लें। सुख-दुख में एक दूसरे का ग़म-गुसार (दुःख दर्द बांटने वाले) बनें और घर में ख़ुशगवार माहौल और पुर सुकून फ़िज़ा क़ाइम करने में एक दूसरे का हर तरह से साथ दें।

अल्लाह ने हुक्म दिया है:

وَعَاشِرُوهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ(النساء:19)

तर्जुमा: तुम उनके साथ अच्छे से बूद-ओ-बाश (रहन-सहन का ढंग) रखो।

यह हुक्म तो असल मर्दों को है क्योंकि वही शादी करके बीवी को घर लाए हैं, हालांकि बीवी भी इस क़दर हुस्न-ए-मु'आशरत से शौहर के साथ ज़िंदगी गुज़ारने की पाबंद है।

मर्द औरत का हाकिम और घर का निगरान और मुंतज़िम है। इस लिहाज़ से उसकी बड़ी ज़िम्मेदारी है कि अपने अहल-ए-ख़ाना के साथ अच्छे तरीक़े से रहन-सहन करे। शौहर बेहतर तरीक़े से रहेगा तो यक़ीनन बीवी पर उसका अच्छा असर पड़ेगा और बीवी भी अच्छाई का मामला करेगी। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

خَيْرُكُمْ خَيْرُكُمْ لِأَهْلِهِ، وَأَنَا خَيْرُكُمْ لِأَهْلِي(صحيح الترمذي:3895)

तर्जुमा: तुम में से बेहतर वह है जो अपने घर वालों के लिए बेहतर हो और मैं अपने घर वालों के लिए सबसे बेहतर हूं।

नबी सल्लल्लाहु अलेही वसल्लम ने जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाया:

فَهَلَّا جَارِيَةً تُلَاعِبُهَا وَتُلَاعِبُكَ وَتُضَاحِكُهَا وَتُضَاحِكُكَ؟(صحيح البخارى:5367)

तर्जुमा: तुम ने किसी कुँवारी लड़की से शादी क्यों नहीं की, तुम उसके साथ खेलते और वह तुम्हारे साथ खेलती, तुम उसके साथ हंसी-मज़ाक करते और वह तुम्हारे साथ हंसी करती।

हुस्न-ए-मु'आशरत के लिए दोनों तरफ़ बराबर मोहब्बत, तआवुन, हुस्न-ए-सुलूक, और शफ़क़त और हमदर्दी होनी चाहिए जैसा कि मज़कूरा बाला हदीस में दोनों के लिए फ़ितरी मोहब्बत की तरग़ीब मिलती है। एक दूसरी हदीस से नबी सल्लल्लाहु अलेही वसल्लम का अपनी बीवी से हुस्न-ए-मु'आशरत का एक नमूना देखिए। उम्मुल मोमिनीन आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि वह नबी ए अकरम सल्लल्लाहु अलेही वसल्लम के साथ एक सफ़र में थी, कहती हैं कि मैंने आप सल्लल्लाहु अलेही वसल्लम से रेस का मुक़ाबला किया तो मैं जीत गई, फिर जब मेरा शरीर भारी हो गया तो मैंने आप से (दुबारा) मुक़ाबला किया तो आप जीत गए। इस पर आप सल्लल्लाहु अलेही वसल्लम ने फ़रमाया: यह जीत उस जीत के बदले है। (सहीह अबू दाऊद: 2578)

रेस एक तरह का खेल है, मियां-बीवी के बीच इस तरह का मामला आपसी मोहब्बत और हमदर्दी और ख़ुशगवार ज़िंदगी की दलील है।

आप भी अपने घर को ख़ुशगवार, पुर सुकून और ज़िंदगी को बेहतरीन बनाना चाहते हैं तो 3 बुनियादी बातें अमल में लाना ज़रूरी है। उन 3 बातों से निकाह के रिश्ते में पायेदारी होगी।

(1) निकाह के बाद रिश्ता क़ाइम और मज़बूत रहे और घर का माहौल पुर सुकून हो इसके लिए ज़रूरी है कि आपसी इत्तिहाद हो यानी दोनों मिल-जुल कर रहें इख़्तिलाफ़ से बचें।

(2) दूसरी बात यह है कि आपसी इत्तिहाद के लिए आपसी मोहब्बत और मोहब्बत ज़रूरी है, एक दूसरे से बे-लौस मोहब्बत हो।

(3) तीसरी बात यह है कि आपसी मोहब्बत के लिए एक दूसरे के लिए नरमी, हमदर्दी, ख़ैर ख़्वाही और शफ़क़त चाहिए ताकि आप एक दूसरे की ग़लतियों से दर्गुज़र करें और सिर्फ़ मुफ़ीद और पॉज़िटिव पहलू को मद्दे नज़र रखें। ये बुनियादी तीन बातें रिश्ते की पायेदारी और घर के अच्छे माहौल और हुस्न-ए-मु'आशरत के लिए ज़रूरी हैं, इन तीन बातों का ज़िक्र सूरह रूम की 21वीं आयत में हुआ है।

जिसमें लितस्कुनू (सुकून), मवद्दत (मोहब्बत) और रहमा (हमदर्दी) के अल्फ़ाज़ वारिद हैं।

3) पाकदामनी:

नबी सल्लल्लाहु अलेही वसल्लम ने ताक़तवर नौजवानों को निकाह का हुक्म देते हुए इर्शाद फ़रमाया:

يَا مَعْشَرَ الشَّبَابِ، مَنِ اسْتَطَاعَ مِنْكُمُ الْبَاءَةَ فَلْيَتَزَوَّجْ، فَإِنَّهُ أَغَضُّ لِلْبَصَرِ، وَأَحْصَنُ لِلْفَرْجِ، وَمَنْ لَمْ يَسْتَطِعْ فَعَلَيْهِ بِالصَّوْمِ؛ فَإِنَّهُ لَهُ وِجَاءٌ. (البخاري:٠،مسلم:٠٠)

तर्जुमा: ऐ नौजवानों की जमाअत! तुम में से जो कोई इस्तिता'अत रखता हो, वह ज़रूर शादी करे क्योंकि यह (शादी) निगाहों को बहुत झुकाने वाली और शर्मगाह की ख़ूब हिफ़ाज़त करने वाली है। और जो शादी की ताक़त नहीं रखता, वह रोज़ा रखे, क्योंकि यह उसके लिए ढाल होगा।

इसमें निकाह का मक़सद निगाहों और शर्मगाहों की हिफ़ाज़त बताया गया है। इस लिए निकाह के बाद मियाँ-बीवी में से हर एक अपनी नज़र और शर्मगाह की हिफ़ाज़त करे और जाइज़ तरीक़े से अपनी शहवत पूरी करे। बीवी से किसी भी तरह इस्तिमता' कर सकते हैं, वे

मर्दों के लिए खेतियाँ हैं, सिवाय उन बाज़ कामों के जिनसे इस्लाम ने मना किया है, जैसे पीछे के रास्ते में और हैज़ व निफ़ास में वती करना। मियाँ-बीवी में हर एक दूसरे की शहवत का ख़्याल रखे और जब जिसे ज़रूरत महसूस हो, दूसरा उसकी मदद करे। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

إذا الرَّجلُ دعا زوجتَهُ لحاجتِهِ فلتأْتِهِ ، وإن كانت علَى التَّنُّورِ(صحيح الترمذي:1160)

तर्जुमा: जब ख़ाविंद अपनी बीवी को अपनी हाजत पूरी करने के लिए बुलाए, तो उसे आना चाहिए, चाहे वह तन्नूर पर ही क्यों न हो।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

إذا دعا الرجلُ امرأتَهُ إلى فراشِهِ فأَبَتْ ، فبات غضبانَ عليها ، لعنتها الملائكةُ حتى تُصبحَ(صحيح البخاري:3237)

तर्जुमा: जब कोई शख़्स अपनी बीवी को अपने बिस्तर पर बुलाए और बीवी आने से इनकार कर दे और ख़ाविंद उस पर नाराज़गी की हालत में ही रात बसर कर दे, तो उस औरत पर सुबह होने तक फ़रिश्ते लानत करते रहते हैं।

इन अहादीस का यह मतलब नहीं है कि बीवी शौहर की ख़्वाहिश पूरी न करे तो उसी पर लानत है। शौहर की भी ज़िम्मेदारी है कि उसकी ख़्वाहिश का पूरा ख़्याल करे और जो भी इस मामले में कोताही करेगा, वह हक़तलफ़ी के मामले में सवालदेह होगा।

इस्लाम में किस क़दर भलाई है कि जाइज़ तरीक़े से शहवत पूरी करने पर सवाब दिया जाता है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

وَفِي بُضْعِ أَحَدِكُمْ صَدَقَةٌ، قَالُوا: يَا رَسُولَ اللَّهِ أَيَأْتِي أَحَدُنَا شَهْوَتَهُ، وَيَكُونُ لَهُ فِيهَا أَجْرٌ؟، قَالَ: أَرَأَيْتُمْ لَوْ وَضَعَهَا فِي حَرَامٍ أَكَانَ عَلَيْهِ فِيهَا وِزْرٌ، فَكَذَلِكَ إِذَا وَضَعَهَا فِي الْحَلَالِ كَانَ لَهُ أَجْرٌ(صحيح مسلم: 2329)

तर्जुमा: और हर शख़्स के बदन के टुकड़े में सदक़ा है। लोगों ने अर्ज़ की: "या रसूलुल्लाह! हम में से कोई शख़्स अपने बदन से अपनी शहवत निकालता है (यानी अपनी बीवी से सोहबत करता है), तो क्या इसमें सवाब है?" आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "क्यों नहीं, देखो तो अगर उसे हराम में सर्फ़ कर ले, तो वबाल हुआ कि नहीं? इसी तरह जब हलाल में सर्फ़ करता है, तो सवाब होता है।"

इसलिए ज़ौजैन को फ़ित्री और जाइज़ तरीक़े से शहवत पूरी करनी चाहिए, इससे सवाब भी मिलेगा और इफ्फ़त और इस्मत की हिफ़ाज़त

भी होगी, और तकमील-ए-शहवत के ग़ैर-फ़ित्री और मग़रिबी तरीक़ों से मियाँ-बीवी को बचना चाहिए।

जिमा के आदाब और अहकाम जानने के लिए मेरे ब्लॉग पर "जिमा का तरीक़ा और उसके चंद आदाब और मसाइल" का मुताल'अ फ़रमाएं।

(4) अज़दवाजी इसरार की हिफ़ाज़त:

अल्लाह फ़रमाता है:

هُنَّ لِبَاسٌ لَّكُمْ وَأَنتُمْ لِبَاسٌ لَّهُنَّ(البقرة:187)

तर्जुमा: "वो तुम्हारा लिबास हैं और तुम उनके लिबास हो।"

अल्लाह ने मियाँ-बीवी में से हर एक को दूसरे का लिबास क़रार दिया है। इसका मतलब यह है कि जैसे लिबास और जिस्म के दरमियाँन कोई चीज़ हाइल नहीं होती, वैसे ही मियाँ-बीवी के ताल्लुकात होते हैं। उन दोनों के दरमियाँन किसी क़िस्म का कोई पर्दा नहीं होता है, ये एक-दूसरे के राज़दां और पर्दापोश होते हैं। लिहाज़ा मियाँ-बीवी में से कोई अपनी मख़सूस बातें, चाहे जिमा से मुताल्लिक हों, बशरी ग़लती या फ़ित्री कमज़ोरी से मुताल्लिक़ हों, यहाँ तक कि आपस के राज़ो-

नियाज़ की बातें हों, किसी से बयान नहीं करना चाहिए, न ससुराल में किसी से, न मायके में किसी से। मियाँ-बीवी की आपसी लुत्फ़-ओ-अंदोज़ी की बात से ख़ुसूसियत के साथ मना किया गया है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

إِنَّ مِنْ أَشَرِّ النَّاسِ، عَنْدَ اللّٰهِ مَنْزِلَةً يَوْمَ الْقِيَامَةِ الرَّجُلَ يُفْضِي إِلَى امْرَأَتِهِ وَتُفْضِي إِلَيْهِ، ثُمَّ يَنْشُرُ سِرَّهَا(صحيح مسلم :3542)

तर्जुमा: "सबसे ज़्यादा बुरा लोगों में अल्लाह के नज़दीक क़यामत के दिन वह शख़्स है जो अपनी बीवी के पास जाए और औरत उसके पास आए (यानी सोहबत करे) और फिर उसका भेद ज़ाहिर कर दे।"

सहीह मुस्लिम में इस हदीस पर इस तरह बाब क़ाइम किया गया है:

((باب تَحْرِيمِ إِفْشَاءِ سِرِّ الْمَرْأَةِ))

यानी बाब: औरत का भेद खोलना हराम है।

आजकल तो शौहर मर्दों में और बीवी औरतों में न सिर्फ़ आपसी बातें शेयर करते हैं, बल्कि एक-दूसरे से बोस-ओ-कनार (चूमा-चाटी) और लुत्फ़ के मनाज़िर पिक्चर और वीडियो की शक्ल में शेयर करते हैं। मग़रिबी तहज़ीब में इश्क़ करने वाले लड़के और लड़की को कपल यानी जोड़ा का नाम दिया जाता है, जबकि हम मुसलमान सिर्फ़ शरई

तौर पर निकाह के ज़रिए एक होने वाले लड़के और लड़की को जोड़ा कहेंगे।

बहरहाल! मग़रिबी हराम जोड़ो की फ़हाश चीज़ों की कसरत-ए-इशाअत की वजह से मुस्लिम जोड़े मुतास्सिर होते हैं और वे भी फ़हाश मनाज़िर शेयर करते हैं। ऐसे लोगों को अल्लाह से डरना चाहिए। एक हदीस-ए-पाक से इबरत हासिल करते चलें।

एक जगह मर्द और औरत जमा थे, तो आप पहले मर्दों की जानिब मुतवज्जोह हुए और फ़रमाया: क्या तुम में कोई ऐसा है जो अपनी बीवी के पास आकर, दरवाज़ा बंद कर लेता है और पर्दा डाल लेता है और अल्लाह के पर्दे में छुप जाता है? लोगों ने जवाब दिया: हाँ, फिर आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: उसके बाद वो लोगों में बैठता है और कहता है: मैंने ऐसा किया, मैंने ऐसा किया। यह सुनकर लोग ख़ामोश रहे। मर्दों के बाद आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) औरतों की जानिब मुतवज्जह हुए और उनसे भी पूछा कि: क्या कोई तुम में ऐसी है, जो ऐसी बात करती है? तो वो भी ख़ामोश रही। लेकिन एक जवान औरत अपने एक घुटने के बल खड़ी होकर ऊँची हो गई ताकि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) उसे देख सकें

और उसकी बातें सुन सकें। उसने कहा: ऐ अल्लाह के रसूल! इस क़िस्म की बातें मर्द भी करते हैं और औरतें भी करती हैं। आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: जानते हो ऐसे शख़्स की मिसाल कैसी है? फिर ख़ुद ही फ़रमाया: इसकी मिसाल उस शैतान औरत की सी है जो गली में किसी शैतान मर्द से मिले और उससे अपनी ख़्वाहिश पूरी करे, और लोग उसे देख रहे हों।

(सहीहुल जामे 7037, इरवाउल गलील: 2011)

बीवी के हुक़ूक़ (शौहर के ज़िम्मे)

(1) मह्र की अदायगी: बीवी के हुक़ूक़ में से सबसे अहम शौहर के ज़िम्मे तयशुदा मह्र की अदायगी है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَآتُوا النِّسَاءَ صَدُقَاتِهِنَّ نِحْلَةً(النساء؛4)

तर्जुमा: और औरतों को उनका मह्र राज़ी ख़ुशी से दे दो।"

उनके लिए सख़्त वईद है जो बीवी से फ़ायदा उठाकर छोड़ देते हैं और मेहर खा लेते हैं। अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि.) से मरफ़ुअन मरवी है:

إِنَّ أَعْظَمَ الذُّنوبِ عندَ اللهِ رجلٌ تَزَوَّجَ امرأةً فلمَّا قَضَى حاجَتَهُ مِنْها طَلَّقَها و ذهب بِمَهْرِها(السلسلة الصحيحة:999)

तर्जुमा: अल्लाह के नज़दीक सबसे बड़ा गुनाह वाला वो शख़्स है जिसने किसी औरत से शादी की, फिर जब उससे अपनी ज़रूरत पूरी कर ली तो उसे तलाक़ देकर उसका मह्र हथिया लिया। बीवियों का मह्र खाने की एक क़िस्म निकाह-शिग़ार है। निकाह-शिग़ार (सट्टा वट्टा की शादी) यह है कि कोई आदमी अपनी बेटी, बहन या वलिया की शादी इस शर्त पर किसी से करे कि वह उसके साथ अपनी किसी अज़ीज़ा की शादी करे और दोनों निकाह में मेहर ख़त्म कर दिया जाए। यह हराम निकाह है और अगर इस क़िस्म के शर्तिया निकाह में मेहर तय भी कर दिया जाए, तब भी सट्टा वट्टा की शादी बातिल है। हाँ, दो खांदानों के दरमियाँन आपस में दो अलग-अलग निकाह इत्तेफ़ाक़न और बग़ैर शर्तिया शादी के हों, तो इस शादी में कोई हरज नहीं है।

बहरहाल! निकाह में मेहर शादी के वक्त ही दे देना बेहतर है लेकिन अगर शादी के वक्त न दे सके तो शादी के बाद जितनी जल्दी हो बीवी को उसका मेहर दे देना चाहिए ताकि मर्द के ज़िम्मे से यह हक़ साकित हो जाए वरना क़यामत में वह जवाबदेह होगा।

मह्र कितना होना चाहिए?

नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने अपनी अज़वाज को 500 दिरहम मेहर दिया करते थे। एक दिरहम (2.975) ग्राम चांदी होती है। जिसे 500 से गुना करते हैं तो (500×2.975=1487.5) यानी तकरीबन डेढ़ किलो चांदी बनती है। अब्दुर्रहमान बिन औफ़ (रज़ि.) ने अपनी बीवी को मेहर में खजूर की गुठली के बराबर सोने की डली दी थी जिसका वजन 5 दिरहम के बराबर था, जो तक़रीबन (5× 2.975=14.875) डेढ़ तोला सोना बनता है।

एक सहाबी ने ख़ैबर की ज़मीन मेहर में दी थी, साबित बिन क़ैस (रज़ि.) ने अपनी बीवी को मेहर में एक बाग़ दिया था। एक सहाबी को मेहर के तौर पर कुछ देने को नहीं था तो उन्होंने बीवी को क़ुरआन सिखाया जो बतौर मेहर था। सईद बिन मुसैय्यब (रज़ि.) किबार ए ताबेईन में से हैं। उन्होंने अपनी बेटी का रिश्ता अपने एक शागिर्द से किया था और मेहर में 2 दिरहम मुताय्यिन किया था।

(2) नफ़क़ा: शौहर के ज़िम्मे बीवी के बुनियादी तमाम क़िस्म के अख़राजात हैं, जिनमें खाने का ख़र्च, रिहाइश, या उसका ख़र्च और बीमारी और इलाज का ख़र्च। सहीह मुस्लिम (2950) में मज़कूर है कि

नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हुज्जतुल विदा के मौक़े पर दीन के बहुत सारे अहकाम बताए। उनमें औरतों के बारे में भी कई वसीयतें फ़रमाईं। पहले तक़वा की वसीयत की: "فَاتَّقُوا اللَّهَ فِي النِّسَاءِ"

तर्जुमा: औरतों के मामले में अल्लाह से डरते रहो।

ज़ाहिर सी बात है कि बग़ैर तक़वा के एक मर्द बीवी के मामले में अमानतदार नहीं हो सकता। आगे आप ये भी इर्शाद फ़रमाते हैं:

"وَلَهُنَّ عَلَيْكُمْ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ"

तर्जुमा: और उनका हक़ तुम्हारे ऊपर ये है कि दस्तूर के मुताबिक़ उन्हें खाना खिलाओ और कपड़े पहनाओ।

यह बात अल्लाह ने भी कुरआन में ज़िक्र फ़रमाई है। इर्शाद ए रब्बानी है:

وَعَلَى الْمَوْلُودِ لَهُ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ(البقرة:233)

तर्जुमा: और जिनके बच्चे हैं, उनके (वालिद) के ज़िम्मे उनका रोटी कपड़ा है, जो मुताबिक़ दस्तूर के हो।

(3) कपड़ा: शौहर के ज़िम्मे बीवी की ख़ुराक़ के साथ उसकी पोशाक भी है, वो भी अपनी हैसियत के मुताबिक़ यानी जैसे वह पहनता है, अपनी बीवी के लिए कपड़े की ज़रूरत पूरी करेगा। उसकी दलील नफ़क़ा (बीबी-बच्चों का रोटी-कपड़ा) के साथ मज़कूर है।

(4) रिहाइश: मर्द पर वाजिब है कि बीवी के लिए कुशादा मकान या किफ़ायत करने वाली रिहाइश का इंतज़ाम करे। अल्लाह तआला का फ़रमान है:

أَسْكِنُوهُنَّ مِنْ حَيْثُ سَكَنتُم مِّن وُجْدِكُمْ (الطلاق:6)

तर्जुमा : तुम अपनी ताक़त के मुताबिक़ जहाँ तुम रहते हो वहाँ उन औरतों को रखो।

इस आयत में मुतल्लक़ा-ए-रज'इया (ऐसी तलाक़ जिसकी मुद्दत इद्दत मे ख़ाविंद अपनी औरत को बिला तजदीद निकाह के बीवी बना सकता है) के बारे में बताया गया है कि इसके लिए अपनी हैसियत के मुताबिक़ रिहाइश का इंतज़ाम करो। जब मुतल्लक़ा के लिए रहने की ज़िम्मेदारी शौहर पर वाजिब है तो बीवी के लिए भी प्राथमिकता के साथ रिहाइश ज़रूरी है।

मुश्तरका फैमिली में बीवी की रिहाइश का मसला:

यहाँ एक मसला यह वाज़ेह रहे कि आम तौर पर बड़े परिवार में मुश्तरका (जॉइंट) फैमिली सिस्टम चलता है जहाँ मियां बीवी

(पति पत्नी) को अपने वालिद (पिता) के बनाए हुए घर में रखता है और वहाँ मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) लोगों के साथ रहने की वजह से बीवी को तरह-तरह की मुश्किलात का सामना करना पड़ता है। मामूली मामूली बात पर घर के दूसरे लोग उसे घर से भी भगाते रहते हैं, यह औरत की तौहीन है। ऐसे में अगर बीवी अलग रिहाइश का मुतालबा करे तो शौहर पर वाजिब है कि वह हस्बे इस्तिता'अत उसके लिए रिहाइश मुहैया करे।

रिहाइश की ज़िम्मेदारी ससुर पर नहीं, शौहर पर है, इसलिए बीवी मुश्तरका (जॉइंट) फैमिली में दिक़्क़त होने पर अलग रिहाइश जो शौहर की तरफ़ से हो, मुतालबा कर सकती है, चाहे उसी जगह रिहाइश क्यों न हो मगर वह रिहाइश शौहर की तरफ़ से हो ताकि दूसरा कोई इस जगह से न भगाए। बस अक्सर बीवी निजी मकान का मुतालबा करने लगती है तो ऐसे में शौहर की इस्तिता'अत और रग़बत को देख

कर बीवी मुतालबा करे। बतौर हक़ बीवी सिर्फ़ रिहाइश का मुतालबा कर सकती है मकान का नहीं।

बीवी को छोड़ कर ख़ारिजी मुल्क (विदेशी देश) में रहना:

कभी-कभी शौहर रोज़गार या किसी दूसरे काम की वजह से बीवी से अलग किसी दूसरे मुल्क में रहता है। ऐसे में एक सवाल पैदा होता है कि क्या मियां बीवी को छोड़ कर विदेशी मुल्क में रह सकता है जबकि शादी का मक़सद मियाँ बीवी (पति-पत्नी) का यकजा होना है?

उसका जवाब यह है कि अगर बीवी राज़ी हो और दोनों सब्र भी कर सकते हों यानी सब्र करते हुए इहसान की हिफ़ाज़त करें तो मियां बीवी से दूर किसी दूसरे मुल्क में रह सकता है। उसकी मुददत तय नहीं है कि कब तक वतन वापस आए? जब ज़रूरत हो साल दो साल बाद आए इसमें शरई हरज नहीं है लेकिन इजाज़त न दे तो बाहर नहीं जा सकता है ऐसे में मियां बीवी के साथ रहे या अपने साथ बाहर ले जाए।

इसी तरह एक दूसरे से दूर रहते हुए गुनाह में पड़ने का ख़तरा महसूस हो रहा हो तो फ़िर पति बीवी के पास रहे चाहे बीवी इजाज़त ही क्यों

न दे, क्योंकि निकाह का असल मक़सद निगाहों और शर्मगाहों की हिफ़ाज़त है।

बीवी के लिए शौहर की ग़ैरत:

शौहर अपनी बीवी के लिए ग़ैरतमंद बने, वह उसकी इज़्ज़त और आब्रू की हिफ़ाज़त करे जैसे उसकी ज़िम्मेदारी शरीर और जान की हिफ़ाज़त है। शौहर की वाजिब ज़िम्मेदारी है कि बीवी के घर में अजनबी मर्दों को दाख़िल न होने दे, यहाँ तक कि ऐसी औरतों और लोगों को भी रोके जो मियां बीवी में फूट और घर बिगाड़ने का काम करने वाले हों।

उक्बा बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

إِيَّاكُمْ وَالدُّخُولَ عَلَى النِّسَاءِ، فَقَالَ رَجُلٌ مِنَ الْأَنْصَارِ: يَا رَسُولَ اللَّهِ، أَفَرَأَيْتَ الْحَمْوَ، قَالَ: الْحَمْوُ الْمَوْتُ(صحيح مسلم:5674)

तरजुम: बचो तुम औरतों के पास जाने से। एक शख़्स अंसारी बोला: या रसूलुल्लाह! अगर देवर जाए? आपने फ़रमाया: देवर तो मौत है।

इब्ने वहाब ने कहा: सुना मैंने लैस बिन साद रज़ियल्लाहु अन्हु से, कहते थे: हदीस में जो आया है कि "हामू" मौत है तो "हामू" से मुराद

शौहर के अज़ीज़ और अक़रिबा हैं जैसे शौहर का भाई या उसके चाचा का बेटा (शौहर के जिन अज़ीज़ो से औरत का निकाह करना सही है तो वे सब "हामू" में दाख़िल हैं। उनसे पर्दा करना चाहिए सिवा शौहर के बाप या दादा या उसके बेटे के क्योंकि वे महराम हैं, उनसे पर्दा ज़रूरी नहीं है)। (सहीह मुस्लिम: 5676)

इस हदीस से मालूम हुआ कि मियां बीवी को उस तरह और ऐसी जगह रखे कि उसके कमरे में औरत के महरम के अलावा कोई दाख़िल न हो। मुश्तरका फैमिली में बतौर ख़ास देवर भाभी के घर बहुत ज़्यादा आता जाता है बल्कि हंसी मज़ाक़ करता है और भाभी देवर से पर्दा नहीं करती, जबकि यह सब हराम काम है। कोई अजनबी मर्द औरत के साथ तन्हाई में न करे (चाहे देवर ही क्यों न हो) और भाभी का देवर से हंसी मज़ाक़ करना हराम है। उससे पर्दा करें, घर में उससे अकेले हरगिज़ बात न करें बल्कि उसको घर में भी दाख़िल न होने दें और अल्लाह का ख़ौफ़ खाएं। ज़ाहिर सी बात है कि इन बातों पर अमल करने के लिए शौहर की ज़रूरत है। मियां बीवी के लिए ग़ैरतमंद बने और अपने घर में बेहयाई को दाख़िल न होने दे।

ज़रा सआद रज़ियल्लाहु अन्हु की ग़ैरत देखें, मुग़ीरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि सआद बिन उबादा रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा:

لَوْ رَأَيْتُ رَجُلًا مَعَ امْرَأَتِي لَضَرَبْتُهُ بِالسَّيْفِ غَيْرَ مُصْفَحٍ، فَبَلَغَ ذَلِكَ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، فَقَالَ: أَتَعْجَبُونَ مِنْ غَيْرَةِ سَعْدٍ، لَأَنَا أَغْيَرُ مِنْهُ، وَاللَّهُ أَغْيَرُ مِنِّي (صحيح البخاری:6846)

तर्जुमा: अगर मैं अपनी बीवी के साथ किसी ग़ैर मर्द को देख लूं तो सीधी तलवार की धार से उसे मार डालूं। यह बात नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तक पहुँची तो आपने फ़रमाया कि क्या तुम सआद की ग़ैरत पर हैरान हो? मैं उनसे भी ज़्यादा ग़ैरतमंद हूं और अल्लाह मुझसे भी ज़्यादा ग़ैरतमंद है।

यही ग़ैरत मर्द में अपनी बीवी के लिए होनी चाहिए क्योंकि बे-ग़ैरती दय्युसियत है जो बदी सिफ़त है और जहन्नम में ले जाने वाली है।

अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

ثلاثةٌ قد حرَّم اللهُ عليهم الجنةَ : مُدمنُ الخمرِ ، و العاقُّ ، و الدَّيُّوثُ الذي يُقِرُّ في أهلِه الخُبْثَ (صحيح الجامع:3052)

तर्जुमा: तीन क़िस्म के आदमी पर अल्लाह ने जन्नत को हराम कर दिया है, एक शराब पीने वाला, दूसरा वालिदैन की नाफ़रमानी करने वाला, और तीसरा दय्युस (बग़ैरत) जो अपने घर वालों (अहल ओ अयाल) में बेहयाई और ख़बासत को बर्दाश्त करे।

अहल ओ अयाल में बग़ैरत को बर्दाश्त करने का मतलब यह है कि घर की औरतें बेहयाई का काम करें, 'उर्यां (फ़हश) लिबास लगाकर घूमें, अजनबी मर्दों से राब्ता रखें, उनसे हंसी मज़ाक़ करें, ग़ैर मर्दों के साथ घूमें और लोगों के सामने नाच गाना करें वग़ैरह, मर्द इन बेहयाई को देख कर कुछ न बोले। ऐसा मर्द दय्युस है।

इसलिए मोमिन मर्द और मोमिन औरत दोनों को ग़ैरतमंद होना चाहिए और अपने अंदर और अपने घर में बेहयाई को बर्दाश्त नहीं करना चाहिए बल्कि जिन असबाब से घर में बेहयाई पैदा होती है उनसे भी दूर रहना चाहिए जैसे औरत के घर में अजनबी मर्दों का दाख़िल होना, और ज़ेवर और ज़ीनत कर के या 'उर्यां लिबास लगाकर औरतों का बाज़ार जाना वग़ैरह। औरत ख़ुद भी घर में किसी अजनबी मर्द को दाख़िल न होने दे, कोई ज़बरदस्ती घुसा तो शौहर को उसकी इत्तिला दे और घर से बाहर निकलते वक्त शरीअत के पर्दे का पालन करे और फ़ितने की जगहों से दूर रहे।

बिलाशुबा मर्द को ग़ैरतमंद होना चाहिए मगर बीवी पर बिना वजह शक़ भी नहीं करना चाहिए, इसी तरह औरत को भी बिन वजह अपने शौहर पर शक़ नहीं करना चाहिए। यहां तक कि एक दूसरे के बारे में किसी से बेहयाई की बात सुने तो उस वक्त तक उस पर यक़ीन न

करे जब तक उस बात की तहक़ीक़ न कर ले और उसका ठोस सबूत न मिल जाए।

(6) एक से ज़्यादा बीवीयों के दरमियान इंसाफ और बराबरी क़ाइम करना: इस्लाम ने मर्दों को एक से ज़्यादा शादी करने की इजाज़त दी है मगर वो इजाज़त इंसाफ़ से मशरूत है। अल्लाह का फ़रमान है:

فَانكِحُوا مَا طَابَ لَكُم مِّنَ النِّسَاءِ مَثْنَىٰ وَثُلَاثَ وَرُبَاعَ ۖ فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تَعْدِلُوا فَوَاحِدَةً (النساء؛4)

तर्जुमा: औरतों में से जो भी तुम्हें अच्छी लगे तुम उनसे शादी कर लो, दो-दो, तीन-तीन, चार-चार से, लेकिन अगर तुमको इंसाफ़ न कर पाने का डर हो तो एक ही काफ़ी है।

एक से ज़्यादा शादी करने की तीन शर्तें हैं। पहली शर्त तो इंसाफ़ है, यानी शौहर तमाम बीवियों के दरमियाँन बराबरी से इंसाफ़ कर सके।

दूसरी शर्त यह है कि सबको नान-ओ-नफ़क़ा (बाल-बच्चों का ख़र्च), सकनी (रिहाइश) , कपड़ा और ज़रूरतें पूरी करने की ताक़त रखता हो।

तीसरी शर्त यह है कि उसके पास सब बीवियों से जिमा करने की ताक़त हो। यानी अपनी बीवियों के हुक़ूक़, ज़रूरतें, मोहब्बत, जिमा,

गिफ्ट, सहूलत और आराम और सुकून देने में इंसाफ़ करने और नान-ओ-नफ़क़ा के साथ जिमा की ताक़त रखता हो तब ही वह दूसरी शादी करेगा वरना दूसरी शादी नहीं करेगा। इसलिए अनानीयत को तसकीन पहुँचाने या शौक़ पूरा करने या दिखावा करने के लिए दूसरी शादी न करे बल्कि ज़रूरत के तहत और इंसाफ़ करने की ताक़त रखने पर दूसरी शादी करे। जो लोग अपनी बीवियों में इंसाफ़ नहीं करते उनको अल्लाह की पकड़ से डरना चाहिए और यह हदीस याद रखनी चाहिए। अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

مَن كانت لَهُ امرأتانِ فمالَ إلى إحداهما، جاءَ يومَ القيامةِ وشقُّهُ مائلٌ(صحيح أبي داود:2133)

तर्जुमा: जिस के पास दो बीवियां हों और उसका झुकाव एक की ओर हो तो वह क़ियामत के दिन इस हाल में आएगा कि उसका एक कंधा झुका हुआ होगा।

एक से ज़्यादा बीवियों के हुक़ूक़ और आदाब में से है कि बीवियों को एक कमरे में न रखें बल्कि सब के लिए अलग-अलग कमरे या अलग-अलग रहने की जगह का इंतज़ाम करें, सब के यहाँ रात गुज़ारने में इंसाफ़ के साथ पूरी तरह से न्याय करें, सब को बराबर तौर पर खिलाएं, पहनाएं, गिफ्ट दें, और इलाज और मुआलिजा का ख़्याल रखें, एक बीवी

के सामने दूसरी बीवी को न डांटें, न मारें, उनके बीच कोई फ़र्क़ न करें, सब के साथ एक जैसी मोहब्बत करें और सब के साथ नर्मी और हमदर्दी के साथ पेश आएं। मियां बीवियों में इंसाफ़ करेगा तो बीवियां आपस में ज़रूर मिल कर रहेंगी।

(7) उज़्र के सबब ख़ुल तलब करने पर ख़ुल दे:

बसा औक़ात मियां बीवी में एक दूसरे की नहीं बनती है और एक साथ रहना मुश्किल हो जाता है तो मियां को तलाक़ देने का इख़्तियार है। वह जब बीवी को अलग करना चाहे तो तलाक़ दे कर अलग कर सकता है, लेकिन बीवी का मामला अलग है, उसे मियां से अलग होना हो तो मियां से ख़ुल (मुसलमान स्त्री का अपने पति से तलाक़ चाहना/वो तलाक़ जो स्त्री धन या संतान देकर और मह्र माफ़ करके प्राप्त करे) तलब करेगी, मियां ख़ुल देगा तो अलग होगी, या फिर नाज़ुक हालात में क़ाज़ी निकाह-ए-फ़स्ख़ कर देता है। यहां ख़ुल के ज़िक्र का मक़सद यह है कि अगर बीवी मियां से ख़ुल तलब करे तो मियां बीवी के मामले में ग़ौर करे, अगर उसके पास उज़्र है और अलग होना चाहती है तो ख़ुल दे दे।

इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान किया कि साबित बिन क़ैस बिन शमास रज़ियल्लाहु अन्हु की बीवी नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास आई और अर्ज़ किया:

أَيُّمَا امْرَأَةٍ سَأَلَتْ زَوْجَهَا طَلَاقًا مِنْ غَيْرِ بَأْسٍ فَحَرَامٌ عَلَيْهَا رَائِحَةُ الْجَنَّةِ(صحیح الترمذی:1187)

या रसूलुल्लाह! साबित के दीन और उनके अख़लाक़ से मुझे कोई शिकायत नहीं है लेकिन मुझे ख़तरा है कि (मैं साबित रज़ियल्लाहु अन्हु की नाशुक्रई में न फंस जाऊं)। इस पर नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनसे पूछा कि क्या तुम उनका बाग़ (जो उन्होंने महर में दिया था) वापस कर सकती हो? उन्होंने अर्ज़ किया जी हां। चूंकि उन्होंने वह बाग़ वापस कर दिया और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक्म से साबित रज़ियल्लाहु अन्हु ने उन्हें अपने से जुदा कर दिया।

बहुत सारे मर्द ऐसे हैं जो शादी करके न बीवी का हक़ अदा करते हैं, न उसे तलाक़ देते हैं और न ख़ुल तलब करने पर ख़ुल देते हैं। ऐसे मर्दों को भी हक़ तलफ़ी की वजह से अल्लाह का ख़ौफ़ खाना चाहिए और उन बहनों को भी अल्लाह से डरना चाहिए जो बिन उज़्र के मियां (शौहर) से जुदाई तलब करें।

सौबान रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

أَيُّمَا امْرَأَةٍ سَأَلَتْ زَوْجَهَا طَلَاقًا مِنْ غَيْرِ بَأْسٍ فَحَرَامٌ عَلَيْهَا رَائِحَةُ الْجَنَّةِ(صحيح الترمذى:1187)

तर्जुमा: जिस औरत ने बिन किसी बात के अपने शौहर से तलाक़ तलब किया तो उस पर जन्नत की ख़ुशबू हराम है।

(8) निकाह के शराइत पूरे करना: उक़्बा बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान किया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

أَحَقُّ الشُّرُوطِ أَنْ تُوفُوا بِهِ مَا اسْتَحْلَلْتُمْ بِهِ الْفُرُوجَ(صحيح البخاري:2721)

तर्जुमा: वह शर्तें जिनके ज़रिये तुमने औरतों की शर्मगाहों को हलाल किया है पूरी की जाने की सबसे ज़्यादा हक़दार हैं।

निकाह ख़ुद एक मु'आहदा है जो मियां बीवी के दरमियाँन होता है और उसकी वजह से दोनों के ज़िम्मा कुछ अलग और कुछ मुश्तरका हुक़ूक़ वाजिब होते हैं जिनका पूरा करना दोनों पर वाजिब है। साथ ही इस हदीस से मालूम होता है कि निकाह के वक्त शराइत तय करना जाइज़ है और जो शराइत तय की जाएं वो निकाह के बाद पूरी करनी

पड़ेंगी। निकाह के शराइत में से एक तो मह्र है जिसके ज़रिये शर्मगाह हलाल की जाती है, उसका अदा करना मर्द पर लाज़िम है, मह्र के अलावा भी अगर लड़की कोई शर्त लगाती है जैसे मुझे अलग मकान चाहिए या मेरी ज़िन्दगी में लड़का दूसरी शादी नहीं करेगा या लड़का नमाज़ और रोज़ा की पाबंदी करेगा या लड़का ख़ुद कहे लड़की से कि मुझसे शादी करोगी तो एक मकान दूंगा या 10 तोला सोना दूंगा वग़ैरह तो निकाह के बाद तय की गई शर्त मर्द को पूरी करनी वाजिब है।

यहां इस बात का खयाल रहे कि नाजाइज़ मुतालबत न लड़की की तरफ़ से क़ाबिल ए क़बूल है और न लड़के की तरफ़ से क़ाबिल ए क़बूल है। जैसे लड़की शर्त लगाए कि पहली बीवी को तलाक़ देना पड़ेगा या लड़का शर्त लगाए कि तुमको घर वालों से पर्दा नहीं करना है, ऐसी शर्तें नहीं मानी जाएंगी। ए'तिदाल में रहते हुए लड़का और लड़की के दरमियाँन अक़्द निकाह के वक्त जो जाइज़ शर्तें तय की जाएं, शादी के बाद उनका पूरा करना ज़रूरी है।

शौहर के हुक़ूक़ (बीवी के ज़िम्मा)

(1) भलाई के काम में शौहर की इताअत: यहाँ एक क़ायदा अच्छे से समझ लें, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

الطَّاعَةُ فِي الْمَعْرُوفِ.(صحيح البخارى:4340)

तर्जुमा: इन्कार का हुक्म केवल नेक कामों के लिए है।

इस हदीस को सामने रखते हुए यह बात अच्छे से समझ लें कि बीवी शौहर का वही हुक्म मानेगी जो जाइज़ हो और भलाई से मुताल्लिक़ हो, लेकिन शौहर का जो हुक्म नाजाइज़ हो, उसे नहीं मानेगी चाहे खाने-पीने के मामले में हो, या लिबास के मामले में, जिस्मानी संबंध के मामले में हो, मामलात के सिलसिले में हो या इबादत और अहकाम से मुताल्लिक़ हो।

बीवी के ज़िम्मे शौहर के हुक़ूक़ की अदा करने के साथ अच्छी बातों का हुक्म मानना है और जो बुरी बात हो उससे इंकार करना है।

शौहर बिस्तर पर बुलाए, तुरंत लब्बैक कहे और उसकी आवश्यकता पूरी करे। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

إذا الرَّجلُ دعا زوجتَهُ لحاجتِهِ فلتأتِهِ ، وإن كانت علَى التَّنُّورِ(صحيح الترمذي:1160)

तर्जुमा: जब शौहर अपनी बीवी को अपनी आवश्यकता पूरी करने के लिए बुलाए तो उसे आना चाहिए, भले ही वह तंदूर पर ही क्यों न हो।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

إذا دعا الرجلُ امرأتَهُ إلى فراشِهِ فأَبَتْ ، فبات غضبانَ عليها ، لعنتها الملائكةُ حتى تُصبحَ(صحيح البخاري: 3237)

तर्जुमा: जब कोई शख़्स अपनी बीवी को अपने बिस्तर पर बुलाए और बीवी आने से इंकार कर दे और शौहर नाराज़गी की हालत में रात बिताए, तो उस औरत पर सुबह तक फ़रिश्ते लानत करते रहते हैं।

शौहर घर पर मौजूद हो और नफ़िल रोज़े से मना करे तो रुक जाए, घर से बाहर बिना इजाज़त जाने से मना करे तो रुक जाए, बेपर्दगी से मना करे तो हुक्म की इन्कार करे, ग़ैर महरम से बात करने से मना करे तो बात माने, इस तरह जो भी अहकाम शौहर की तरफ़ से हों, बीवी उन में शौहर की बात माने। यहाँ औरतों के लिए एक अहम और मशहूर हदीस बयान करना चाहता हूँ जिसे याद कर लें और अमल ज़िंदगी में उतार लें, इन शा अल्लाह दुनियावी ज़िंदगी भी बेहतर गुज़रेगी और आख़िरत की ज़िंदगी भी बेहतर रहेगी।

अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

إذا صلَّتِ المرأةُ خَمْسَها ، و صامَت شهرَها ، و حَفِظَت فرْجَها ، وأطاعَت زَوجَها ، دخَلتِ الجنَّةَ(صحيح الجامع:661)

तर्जुमा: जब औरत पाँच नमाज़ें पढ़ती हो, रमज़ान के रोज़े रखती हो, अपनी शर्मगाह की हिफ़ाज़त करती हो और अपने शौहर की इताअत करती हो, तो उससे कहा जाएगा कि जन्नत के जिस दरवाज़े से चाहती हो, दाख़िल हो जाओ।

इस हदीस में बयान की गई चार बातों को बीवी को ज़रूरी पकड़ लेना चाहिए।

बीवी की नाफ़रमानी का मसला:

बीवी की कभी-कभार की नाफ़रमानी को शौहर नज़र अंदाज़ करे, लेकिन अगर लगातार नाफ़रमानी करे, नाफ़रमानी पर अडिग रहे, तो आमतौर पर शौहर जज़्बात में आकर तुरंत तलाक़ दे देता है, यह बिल्कुल ग़लत तरीक़ा है। इस्लाम ने हमें इस्लाह की नियत से एक

लंबा प्रोसेस दिया है, पहले इस पर अमल करना है, जब इस्लाह की गुंजाइश न रहे तब जुदाई का रास्ता इख़्तियार करना है। मियां बीवी में इस्लाह का प्रोसेस क्या है:

وَاللَّاتِي تَخَافُونَ نُشُوزَهُنَّ فَعِظُوهُنَّ وَاهْجُرُوهُنَّ فِي الْمَضَاجِعِ وَاضْرِبُوهُنَّ ۖ فَإِنْ أَطَعْنَكُمْ فَلَا تَبْغُوا عَلَيْهِنَّ سَبِيلًا ۗ إِنَّ اللَّهَ كَانَ عَلِيًّا كَبِيرًا وَإِنْ خِفْتُمْ شِقَاقَ بَيْنِهِمَا فَابْعَثُوا حَكَمًا مِّنْ أَهْلِهِ وَحَكَمًا مِّنْ أَهْلِهَا إِن يُرِيدَا إِصْلَاحًا يُوَفِّقِ اللَّهُ بَيْنَهُمَا ۗ إِنَّ اللَّهَ كَانَ عَلِيمًا خَبِيرًا (النساء:34، 35)

तर्जुमा: और जिन औरतों की नाफ़रमानी और बुरे रवैये का तुम्हें डर हो, उन्हें नसीहत करो, और उन्हें अलग बिस्तरों पर छोड़ दो, और उन्हें मार की सज़ा दो। फिर अगर वे ताबेदार हो जाएं, तो उनके खिलाफ़ कोई रास्ता मत ढूंढो। बेशक अल्लाह तआला बड़ी बुलन्दी और बड़ाई वाला है। अगर तुम्हें मियां बीवी के बीच झगड़े का डर हो, तो एक इंसाफ़ करने वाला मर्द के परिवार से और एक औरत के घर वालों में से मुक़र्रर करो। अगर ये दोनों सुलह करना चाहेंगे, तो अल्लाह दोनों में मेल कर देगा। यक़ीनन, अल्लाह सब कुछ जानने वाला और पूरी ख़बर रखने वाला है।

सूरह निसा की इन 2 आयतों में अल्लाह शौहर को हुक्म देता है कि अगर बीवी बुरा व्यवहार और नाफ़रमानी करे तो सबसे पहले उसे नसीहत करो, यह पहला दर्जा है। नसीहत गुस्से में नहीं की जाती और

न ही डांट-फटकार को नसीहत कहते हैं। अल्लाह और उसके रसूल के अहकाम बयान करने और प्यार और मोहब्बत से नरम लहजे में बीवी को इताअत और फ़र्माबरदारी की दावत देने को नसीहत कहते हैं। अल्लाह फ़रमाता है, नसीहत करो, मोमिनों को नसीहत फ़ायदेमंद होती है।

इस्लाह का दूसरा मरहला: एक उचित समय तक शौहर बीवी को वाज़ और नसीहत करता रहे, मनाने और ख़ुश करने की कोशिश करता रहे, फिर भी नाफ़रमानी पर अडिग रहे तो दूसरे मरहले में बीवी का बिस्तर अलग करके मामूली नाराज़गी का इज़हार करे, यह नाराज़गी बीवी को तकलीफ़ पहुँचाने या घर से निकालने की गरज़ से न हो बल्कि इस्लाह की गरज़ से हो।

तीसरा मरहला: बिस्तर अलग करके, नाराज़ हो कर और बातचीत बंद कर के भी बीवी की इस्लाह न हो सके तो अब हल्की मार के ज़रिए उसे सुधारने की कोशिश करें। हल्की मार से मुराद यह है कि इससे शरीर में ज़ख्म न लगे, खून न निकले, हड्डी न टूटे या कोई हिस्सा प्रभावित न हो।

यह तीन मरहले घरेलू इस्लाह के थे जिनके ज़रिए बीवी की नाफ़रमानी को दूर करना है लेकिन इन तीन घरेलू नुस्ख़ो से भी इस्लाह न हो सके तब एक चौथा इस्लाही नुस्ख़ा यह है कि शौहर और बीवी दोनों की तरफ़ से घर के दूसरे लोगों को बतौर हकम (मुख़्लिस फ़ैसला) जमा कर के दोनों के बीच इस्लाह की हर संभव कोशिश की जाएगी। आयत बताती है कि हकम इख़लास के साथ दोनों में इस्लाह की कोशिश करें तो अल्लाह इस्लाह की राह हमवार कर देगा। कोशिश और सई तमाम के बावजूद मियां बीवी के बीच इस्लाह न हो सके तो ये लोग मियां बीवी की मंज़ूरी लेकर दोनों में जुदाई कर सकते हैं।

बहरहाल! मियां बीवी का मामला हुक़ूक़-उल-इबाद से मुताल्लिक़ है, जहाँ बीवी को शौहर की नाफ़रमानी से बचना है वहीं शौहर को भी बीवी के मामले में ज़्यादती और ज़ुल्म से बचना है।

अब्दुल्लाह इब्न हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

لَتُؤَدُّنَّ الْحُقُوقَ إِلَى أَهْلِهَا يَوْمَ الْقِيَامَةِ حَتَّى يُقَادَ لِلشَّاةِ الْجَلْحَاءِ مِنَ الشَّاةِ الْقَرْنَاءِ(صحيح مسلم:6580)

तर्जुमा: तुम हक़दारों के हक़ क़यामत के दिन अदा करोगे यहाँ तक कि बकरियों के बीच सिरहीन बकरी का बदला सींग वाली बकरी से लिया जाएगा।

(2) शौहर के घर रिहाइश इख़्तियार करना: शादी के बाद लड़की का अपना घर शौहर का घर होता है, अब उसी घर में सुकूनत इख़्तियार करनी है और शौहर की इजाज़त के बिना उस घर से बाहर क़दम नहीं निकालना है। अल्लाह तआला ने हुक्म दिया है:

وَقَرْنَ فِي بُيُوتِكُنَّ وَلَا تَبَرَّجْنَ تَبَرُّجَ الْجَاهِلِيَّةِ الْأُولَىٰ (الاحزاب:33)

तर्जुमा: और अपने घरों में क़रार से रहो और क़दीम जाहिलिय्यत के ज़माने की तरह अपने बनाओ का इज़हार ना करो। औरत घर की मालकिन है, उसे घर में रहना है और उमूर-ए-ख़ाना दारी निभाना है। बाहरी काम जैसे रोज़ी तलाश करना, घर के लिए ज़रूरी चीज़ें मुहैया करना और घर का इंतज़ाम संभालना ये मर्दों का काम है, इस लिए मर्द को औरत का हाकिम कहा गया है। गोया औरत की असल यही है कि घर में रहे और घरेलू ज़िम्मेदारी निभाए। ताहम बवक़्त ज़रूरत, शौहर की इजाज़त से घर से बाहर निकल सकती है और एक मुस्लिम औरत जब घर से बाहर निकले तो शर'ई अहकाम के साथ मुकम्मल पर्दा करते हुए निकले। यहाँ पर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का

यह फ़रमान मुलाहिज़ा फ़रमाइए। अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी-ए-अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

الْمَرْأَةُ عَوْرَةٌ فَإِذَا خَرَجَتِ اسْتَشْرَفَهَا الشَّيْطَانُ(صحيح الترمذی:1173)

तर्जुमा: औरत (सरापा) पर्दा है, जब वह बाहर निकलती है तो शैतान उसको ताकता है।

गोया औरत के घर से बाहर निकलने में शैतानी फ़ितना है, इसलिए जितना वह घर में रहे उसके लिए उतना ही अच्छा है। मर्दों के ऊपर भी लाज़िम है कि घर की ज़रूरी चीज़ें औरत के लिए मुहैया करे ताकि उसे बाहर निकलने की नौबत ना आए। इमाम ज़हबी ने लिखा है कि फ़ातिमा बिन्त अत्तार बग़दादिया ज़िन्दगी में सिर्फ़ 3 बार अपने घर से निकलीं, एक उस वक्त जब उनकी शादी हुई, दूसरा उस वक्त जब हज के लिए गईं और तीसरा उस वक्त जब उनकी वफ़ात हुई। (तारीख़े इस्लाम लिज़हबी)

(3) शौहर के लिए ज़ीनत इख़्तियार करना: शौहर के लिए ज़ीनत इख़्तियार करना बीवी की अहम ज़िम्मेदारियों में से है। अल्लाह ने औरत के कशिश के साथ ऐसा मलका रखा है कि वह सज-धज कर,

अपने नाज़-ओ-अदा (दिल रुबा अंदाज़) और मीठी बातों से शौहर की नफ़रत भी मोहब्बत में बदल सकती है।

जो औरत शौहर के लिए सजा करे, उसी के लिए ज़ीनत इख़्तियार करे और उसी के सामने हमेशा ज़ेब और ज़ीनत के साथ हंसती मुस्कुराती आया करे, कभी ऐसी बीवी से शौहर नफ़रत नहीं करेगा। आजकल औरतें बाज़ार जाने, घूमने और दूसरों के वास्ते तो ज़रूर सजा करती हैं मगर अपने शौहर के सामने वही फटा पुराना लिबास, मायूसी और गंदी सूरत लेकर आती हैं, जब मामला इस तरह का होता है तो धीरे-धीरे शौहर की रग़बत बीवी में ख़त्म होने लगती है। औरत शौहर के लिए फ़ायदा उठाने की चीज़ है, फिर उसको उसी तरह हमेशा रहना चाहिए ताकि शौहर सुकून पाए और फ़ायदा उठाता रहे।

अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

خيرُ النِّساءِ التي تَسُرُّهُ إذا نَظَرَ ، و تُطِيعُهُ إذا أمَرَ ، لا تُخالِفُهُ في نَفسِها و لا مالِها بِما يَكرَهُ(صحيح الجامع:3298)

तर्जुमा: वह औरत जब उसका शौहर उसकी तरफ़ देखे तो उसे ख़ुश कर दे, जब उसे कोई हुक्म दे तो फ़रमाबरदारी करे, शौहर को जो बात

नापसंद है, अपने नफ़्स और अपने माल के बारे में उसकी मुख़ालिफ़त ना करे।

जो बीवी नाक भौं चढ़ा कर और गंदी शक्ल बना कर रहती हो उसकी तरफ़ शौहर देखे तो कैसे ख़ुश होगा? इस लिए बीवी को शौहर के लिए ख़ूबसूरत बन कर सज-धज कर रहना है।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब एक जिहाद से वापिस आ रहे थे तो मदीना शहर में दाख़िल होते वक्त फ़रमाया:

أَمْهِلُوا حَتَّى تَدْخُلُوا لَيْلًا أَيْ عِشَاءً لِكَيْ تَمْتَشِطَ الشَّعِثَةُ وَتَسْتَحِدَّ الْمُغِيبَةُ(صحيح البخارى:5079)

तर्जुमा: थोड़ी देर ठहर जाओ और रात हो जाए तब दाख़िल हो ताकि परेशान बालों वाली कंघा कर ले और जिनके शौहर मौजूद नहीं थे वो अपने बाल साफ़ कर ले।

बीवी को शौहर के लिए ज़ीनत तो इख़्तियार करना है, शौहर भी बीवी के लिए ज़ीनत इख़्तियार करे, उम्दा लिबास पहने, ख़ुशबू लगाए, बदन या मुँह से बू आती हो तो उसको दूर करने के लिए ख़ुशबुदार चीज़ इस्तेमाल करे, ऑयल लगाए, माँग संवारें। गोया शौहर को भी बीवी के लिए उम्दा और साफ़-सुथरा रहना चाहिए। बहुत सारी औरतें शौहर के गंदा रहने की शिकायत करती हैं, यहाँ तक कि कितनी बीवियाँ ऐसे

मर्दों से अलग भी हो जाती हैं, इस लिए शौहर भी ज़ेब और ज़ीनत का ख़याल करे।

(4) शौहर की शुक्रगुज़ारी करना: शौहर बीवी के लिए एक अज़ीम मोहसिन है, वह बीवी की तमाम ज़रूरतों की तकमील करता और उसके लिए सुख-दुख का बेहतरीन साथी है, इस लिए बीवी को अपने शौहर का हमेशा शुक्रगुज़ार रहना चाहिए।

तबरानी की मु'अज्जम सग़ीर में किताबुल अदब के तहत यह हदीस मौजूद है। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

आइशा! जब क़यामत के रोज़ अल्लाह मख़लूक़ात को जमा करेगा तो अपने बंदों में से एक ऐसे बंदे से फ़रमाएगा जिस के साथ किसी ने नेकी की होगी के क्या तूने अपने मोहसिन का शुक्रिया अदा किया है? वह कहेगा: ऐ मेरे रब! मैंने यह समझ कर कि यह तेरी तरफ़ से है, मैंने तेरा शुक्रिया अदा कर दिया था।

अल्लाह फ़रमाएगा: तूने मेरा शुक्रिया भी अदा नहीं किया जिस के हाथों पर मैंने तुझ पर एहसान जारी किया।

एक दूसरी हदीस में है अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि नबी-ए-अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

لا يَشْكُرُ اللهَ مَن لا يَشْكُرُ النَاسَ(صحيح أبي داود:4811)

तर्जुमा: जो लोगों का शुक्रिया अदा नहीं करता अल्लाह का (भी) शुक्रिया अदा नहीं करता।

बीवी पर शौहर के बहुत सारे एहसानात होते हैं, इस लिए बीवी शौहर का शुक्रगुज़ार बने, मगर अकसर औरतें शौहर की नाशुक्री करती हैं, जो दुनिया में भी बसा औक़ात जिल्लत का सबब बन सकती है और उख़रवी अंजाम तो बहुत बुरा है, इस सिलसिले में चंद हदीस मुलाहिज़ा फ़रमाइए।

अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ईदुल अज़हा या ईदुल फ़ित्र के लिए ईदगाह की तरफ़ निकले और औरतों के पास गुज़रे तो फ़रमाने लगे:

يا معشر النساء تصدقن، فإني رأيتكن أكثر أهل النار . فقُلْن : وبم ذلك يا رسولَ اللهِ ؟ قال تكثرن اللعن، وتكفرن العشير(صحيح البخاري:1462)

तर्जुमा: ऐ औरतों की जमात! सदक़ा और ख़ैरात किया करो, बेशक मुझे दिखाया गया है कि जहन्नम में तुम्हारी अकसरियत है। तो वह कहने लगीं, ऐ अल्लाह के रसूल, वह क्यों? तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि

वसल्लम ने फ़रमाया: तुम गाली-गलौच बहुत ज़्यादा करती हो और ख़ाविंद की नाफ़रमानी करती हो।

असमा बिन्त यज़ीद बयान करती हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"इयाकुन्न व कुफ़रान अल-मुन'इमीन लअल्ला अहदकुन तुतवील इम'ताहा मिन अबवीहा सुम्मा युर्ज़ुक़हा अल्लाह ज़ौजहा व युर्ज़ुक़हा मिन्हु वलदा फ़तग़दब अल-ग़ज़ब फ़तकुफ़र फतक़ूल: मा रायतु मिनक ख़ैरन क़त्त" (सहीह अल-अदब अल-मुफ़रद: 800)

तर्जुमा: तुम अच्छे सुलूक करने वाले शोहरों की नाशुक्रगुज़ारी से बचो। फिर फ़रमाया: तुम औरतों में से किसी का हाल यह होता है कि अपने वालिदैन के घर लंबे अरसे तक कुंवारी बैठी रहती हो, फिर अल्लाह उसे शोहर देता है और उससे औलाद होती है। फिर किसी बात पर गुस्सा हो जाती हो और कुफ़्र करती हो और शोहर से कहती हो कि तुमने मेरे साथ कोई एहसान नहीं किया।

(5) शोहर की ख़िदमत करना:

बीवी के ज़िम्मे शोहर की ख़िदमत वाजिब है या नहीं, इस बारे में सही बात यह है कि मअरूफ़ तरीक़े से शोहर की ख़िदमत करना बीवी पर वाजिब है। शोहर की ख़िदमत में उसके लिए खाना पकाना, खिलाना-पिलाना, कपड़े धुलना, बिस्तर लगाना, घर और बर्तन की सफ़ाई करना, शोहर के बच्चों की देखभाल और उनकी अच्छी परवरिश करना वग़ैरह शामिल है।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़माने में घरेलू कामकाज की जो नौइय्यत थी, उसको बीवी अंजाम देती थी, जैसे फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हु चक्की चलातीं, रोटी पकातीं और घर का काम करतीं। अज़्वाज-ए-मुतह्हरात खाना पकाने का काम ख़ुद ही करतीं और ख़ुद से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को खिलातीं। वाक़िआ-ए-इफ़्क में मज़कूर है कि जब आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा पर इल्ज़ाम लगा तो आप ने बरीरा रज़ियल्लाहु अन्हा से आयशा के बारे में पूछा तो उन्होंने जवाब दिया:

مَا رَأَيْتُ أَمْرًا أَكْثَرَ مِنْ أَنَّهَا جَارِيَةٌ حَدِيثَةُ السِّنِّ تَنَامُ عَنْ عَجِينِ أَهْلِهَا، فَتَأْتِي الدَّاجِنُ، فَتَأْكُلُهُ(صحيح البخاري:7369)

तर्जुमा: मैंने इसके सिवा और कुछ नहीं देखा कि वह कम उम्र लड़की है, आटा गूंथ कर भी सो जाती है और पड़ोस की बकरी आकर उसे खा जाती है।

इसी तरह सहीह मुस्लिम (668) में है, आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि मैं रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के कपड़े से मनी छुड़ाती (यानि खुर्च देती क्योंकि वह गाढ़ी होती) फिर आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उस कपड़े को पहन कर नमाज़ पढ़ते।

इन दोनों हदीसों से मालूम हुआ कि आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा घर का खाना भी पकातीं और कपड़े भी साफ़ करतीं।

असमा बिन्त अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हा अपने शोहर ज़ुबैर बिन अवाम रज़ियल्लाहु अन्हु के घर का सारा काम करती थीं (सहीह बुखारी: 5234) की यह हदीस मुलाहिजा फ़रमाएं:

असमा बिन्त अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हा ने बयान किया कि ज़ुबैर बिन अवाम रज़ियल्लाहु अन्हु ने मुझसे शादी की तो उनके पास एक ऊंट और उनके घोड़े के सिवा ज़मीन पर कोई माल, कोई ग़ुलाम, कोई चीज़ नहीं थी। मैं ही उनका घोड़ा चराती, पानी पिलाती, उनका डोल सीती और आटा गूंधती। मैं अच्छी तरह रोटी नहीं पका सकती थी। अंसार की कुछ लड़कियाँ मेरी रोटी पका देती थीं। यह बड़ी सच्ची और बावफ़ा औरतें थीं।

ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु की वह ज़मीन जो रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन्हें दी थी, उससे मैं अपने सिर पर खजूर की गुठलियाँ

घर लाया करती थी, यह ज़मीन मेरे घर से 2 मील (तक़रीबन 4 किलोमीटर) दूर थी।

यह चंद नमूने इस बात का सबूत हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़माने में घर का काम जो हुआ करता था, उसको औरतें ही अंजाम देती थीं। इसी तरह आज भी औरतों को अपने शोहर और उसके घर की ख़िदमत अंजाम देना चाहिए। शोहर घर पर रहता हो और घर के कामकाज में हाथ बंटा सकता हो तो उसे चाहिए कि घरेलू कामों में बीवी की मदद करे, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम भी घरेलू कामों में बीवियों की मदद किया करते थे। और शोहर घर पर नहीं रहता हो, या काम की वजह से देर रात घर लौटता हो तो उसके लिए घरेलू काम में मदद करना मुमकिन नहीं है। हाँ, बीवी कमज़ोर या बीमार हो और घर के कामों के लिए लाज़िमन किसी की मदद चाहिए तो हसब ए इस्तिताअ'त खाद़िम का इंतिज़ाम कर दे या ख़ुद मदद करे।

मुश्तरका (जॉइंट) फ़ैमिली सिस्टम और सास-बहू की ख़िदमत:

हमारे लिए मुसवश्तरका फ़ैमिली में बड़े मसाइल हैं, उनमें से एक मसला यह है कि अमूमन मुश्तरका फ़ैमिली में बहू को ख़ादिमा समझा

जाता है, उसको पकाने, खिलाने, सफ़ाई-सुथराई से लेकर घर के हर फ़र्द की ख़ीदमत करना और उन सब को ख़ुश रखना बहू की ज़िम्मेदारी समझी जाती है। एक औरत सही से अपने शोहर की ख़िदमत नहीं कर सकती, घर के सारे अफ़राद बशमूल सास-ससुर, देवर, जेठ, ननद वग़ैरह की अकेले कैसे ख़िदमत कर सकती है, फिर सब को ख़ुश भी रखना है। इसी वजह से मुश्तरका फ़ैमिली सिस्टम में बहू पर अकसर ज़ुल्म होता है। बहू के ज़िम्मे शोहर और अपने बच्चों की ख़िदमत है, घर के बाक़ी अफ़राद की ख़िदमत नहीं है मगर सास-ससुर की ख़िदमत जबरन करवाई जाती है।

मुश्तरका निज़ाम सब को मदद से और मोहब्बत के माहौल में चल सके तो इसमें कोई हरज नहीं है, बहू इस निज़ाम में एहसान और सुलूक के तहत सास और ससुर की ख़िदमत करेगी, लेकिन जब वहाँ मोहब्बत की फिज़ा क़ाइम न हो, ज़ुल्म होता हो, हक़ मारा जाता हो, बेपर्दगी और बे-निज़ामी हो तो फिर मर्द को अपनी बीवी के साथ अलग रहना चाहिए ताकि बीवी शोहर की अच्छी तरह ख़िदमत कर सके और अपने बच्चों की अच्छी परवरिश कर सके।

बसा औक़ात बीवी शोहर की ख़ीदमत से इंकार करती है या मुश्तरका फ़ैमिली में वही मनमानी करती हो और दूसरों पर मज़ालिम ढाती है।

ऐसी बहू को अल्लाह का ख़ौफ़ खाना चाहिए और अमानतदारी से अपनी ज़िम्मेदारी अदा करनी चाहिए।

(6) शौहर के माल की हिफ़ाज़त करना: बीवी के ज़ाती माल, जो नक़द या ज़ेवरात की शक्ल में हो, उसी माल पर बीवी का मालिकाना हक़ है। इसमें जैसे चाहे तसर्रुफ़ करे लेकिन शौहर जो कमाता है वो माल शौहर का है। उस माल की हिफ़ाज़त करना बीवी की ज़िम्मेदारी है और उस माल में बग़ैर शौहर की इजाज़त के कुछ भी ख़र्च करना जाइज़ नहीं है।

अबू उमामा बाहिली रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि मैंने हज्जतुल विदा के साल रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अपने ख़ुत्बे में फ़रमाते हुए सुना:

لا تنفقُ امرأةٌ شيئًا من بيتِ زوجِها إلَّا بإذنِ زوجِها قيلَ يا رسولَ اللَّهِ ولا الطَّعامُ قالَ ذاكَ أفضلُ أموالِنا(صحيح الترمذي:670)

तर्जुमा: औरत अपने घर में से अपने शौहर की इजाज़त के बग़ैर कुछ ख़र्च न करे। लोगों ने अर्ज़ किया: अल्लाह के रसूल! खाना भी किसी को न दे? तो आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: हां, खाना भी न दे, यह तो हमारे मालों में सबसे बेहतर माल है।

इस हदीस से मालूम हुआ कि औरत शौहर के सामान में से मामूली चीज़ भी बग़ैर उसकी इजाज़त के किसी को नहीं दे सकती है। हां, अगर शौहर ने खाने-पीने की चीज़ें और मामूली सदक़ा और ख़ैरात के लिए इजाज़त दे रखी हो तो हर हर चीज़ के लिए इजाज़त लेने की ज़रूरत नहीं है। और जो अहम और बड़ी चीज़ हो या ज़्यादा माल ख़र्च करने की बात हो तो शौहर से इजाज़त लेकर उसके माल में से ख़र्च करे।

शौहर बुनियादी ख़र्च में कंजूसी करे तो बीवी बग़ैर इजाज़त और बग़ैर इल्म के भी शौहर के माल से ज़रूरत भर ले सकती है।

(7) बीवी की ज़िंदगी में शौहर की वफ़ात हो जाए तो 4 महीने 10 दिन सोग मनाए:

अल्लाह ने शौहर को बुलंद मक़ाम दिया है। नेक बीवी उसकी अज़मत का ख़याल करती है। बीवी पर शौहर के हुक़ूक़ में से एक हक़ यह है कि अगर उसकी ज़िंदगी में शौहर का इंतिक़ाल हो जाए तो उसके लिए 4 माह 10 दिन (130 दिन) शौहर के ही घर में इद्दत गुज़ारे और शौहर के लिए सोग करे। यह अल्लाह का हुक्म है, इसकी मुख़ालिफ़त करने वाली औरत को गुनाह मिलेगा। अल्लाह का फ़रमान है:

وَالَّذِينَ يُتَوَفَّوْنَ مِنكُمْ وَيَذَرُونَ أَزْوَاجًا يَتَرَبَّصْنَ بِأَنفُسِهِنَّ أَرْبَعَةَ أَشْهُرٍ وَعَشْرًا(البقرة: 234)

तर्जुमा: और तुम में से जो लोग फ़ौत हो जाएं और बीवियां छोड़ जाएं वो औरतें अपने आप को 4 महीने 10 दिन इद्दत में रखें।

और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

لا يحلُّ لامرأةٍ تؤمنُ باللهِ واليومِ الآخرِ أنْ تحدَّ على ميّتٍ فوقَ ثلاثِ ليالٍ ، إلَّا على زوجٍ أربعةَ أشهُرٍ وعشرًا (صحيح البخاري:5334)

तर्जुमा: किसी औरत के लिए जो अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखती हो यह जाइज़ नहीं कि किसी मय्यत पर 3 दिन से ज़्यादा सोग मनाए, सिर्फ़ शौहर के लिए 4 माह 10 दिन का सोग है।

सोग मनाने का मतलब ज़ीनत की चीज़ों को छोड़ देना और निकाह से मुताल्लिक़ बातों से बचना है। इद्दत शौहर के घर गुज़ारना है और इस दौरान बिला-ज़रूरत घर से बाहर नहीं निकलना है और दौरान-ए-सोग ज़ीनत की चीज़ें जैसे भड़किले कपड़े, ज़ेवर, बाली, चूड़ी, अंगूठी, पायल वग़ैरह इस्तेमाल नहीं करना है।

समाज में एक ग़लतफ़हमी पाई जाती है कि शौहर की वफ़ात से निकाह टूट जाता है, इसलिए बीवी शौहर का चेहरा नहीं देख सकती है, यह ग़लत बात है, इसका इस्लाम से कोई ताल्लुक़ नहीं है। शौहर

की वफ़ात पर बीवी उसका चेहरा देख सकती है, चाहे तो उसको ग़ुस्ल दे सकती है, शौहर के मीरास से उसको हिस्सा मिलेगा, और आख़िरत में मियाँ-बीवी दोनों जन्नत में गए तो एक साथ रहेंगे।

==============

[17].ईद-उल-अज़हा के बाज़ अहकाम-ओ-मसाइल

इस तहरीर (लेख) में इख़्तिसार (संक्षेप) के साथ आम लोगों के लिए ईद-उल-अज़हा के हुक्म और मसाइल बयान कर रहा हूँ, साथ ही इस मौक़े पर मु'आशरे (समाज) में पाई जाने वाली कुछ ग़लत बातों पर भी तंबीह (सावधान) भी करूंगा।

ईद-उल-अज़हा के मौक़े पर किए जाने वाले काम:

❶. गुस्ल, लिबास और ख़ुशबू : ईद के लिए फ़ज्र की नमाज़ के बाद ग़ुस्ल किया जाएगा, हालांकि ज़रूरत के हिसाब से फ़ज्र से पहले भी ग़ुस्ल कर सकते हैं। ग़ुस्ल के बाद नया या अच्छा लिबास पहने और बदन और कपड़े पर ख़ुशबू लगाएं।

❷. बिना खाए ईदगाह जाना: ईद-उल-अज़हा के मौक़े पर एक सुन्नत यह है कि आप बिना कुछ खाए ईद की नमाज़ के लिए जाएंगे और वापस लौटकर अपनी क़ुर्बानी से खाएंगे जैसा कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का मामूल (आदत) रहा है। हालांकि, जिसके यहाँ क़ुर्बानी न हो वह ईद से पहले भी खा सकता है या जिसकी क़ुर्बानी में देर हो वह क़ुर्बानी से पहले भी खा सकता है। ईद से पहले खाने की मुमानिअत (मनाही)

क़ुर्बानी करने वालों के साथ ख़ास है, जबकि कुछ अहल-ए-इल्म (विद्वान) ने कहा है कि जो क़ुर्बानी न दे वह भी कुछ न खाए क्योंकि उसका पड़ोसी कुछ न कुछ देगा ही।

❸. मर्द और औरते सब ईदगाह पैदल जाएं: ईदगाह पैदल जाना चाहिए और एक रास्ते से जाएं और दूसरे रास्ते से वापस आएं। मर्दों की तरह औरतों को भी ईदगाह जाना चाहिए क्योंकि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उन्हें भी ईदगाह जाने का हुक्म दिया है। अगर कोई अड़चन हो तो सवारी करके भी जा सकते हैं और कोई बिना अड़चन के भी सवारी करके जाए तो इसमें कोई गुनाह नहीं है क्योंकि पैदल जाना मसनून (सुन्नत) है।

❹. पहली ज़िलहिज्जा से तेरह ज़िलहिज्जा तक तकबीरात कहना: ज़िलहिज्जा के पहले अश्रे (दस दिन) की बहुत फज़ीलत (महत्त्व) है और इसमें तकबीरात कहना अफज़ल (श्रेष्ठ) आमाल (कार्यों) में से है, इसलिए पहली ज़िलहिज्जा से ही मुसलमानों को तकबीरात कहते रहना चाहिए और ईद-उल-अज़हा की नमाज़ को जाते हुए और नमाज़ से पहले ईदगाह में भी तकबीरात पढ़ते रहना चाहिए। और यह तकबीरात अय्याम-ए-तश्रीक (तश्रीक के दिन) के आख़िरी दिन यानी ज़िलहिज्जा की तेरह तारीख़ के मग़रिब (सूर्यास्त) तक कही जाएंगी। वाज़ेह रहे कि मर्दो की तरह औरते भी तकबीरात का एहतमाम (ध्यान) करेंगी। आप ईद से मुताल्लिक़ जमी (सभी) तरह के मसनून तकबीर कहते हैं जैसे...

(1) اللهُ أكبرُ اللهُ أكبرُ لا إلهَ إلا اللهُ واللهُ أكبرُ اللهُ أكبرُ وللهِ الحمدُ۔

(2) اللهُ أكبرُ كبيرًا . والحمدُ لله كثيرًا . وسبحانَ اللهِ بكرةً وأصيلًا۔

(3) اللهُ أكبرُ اللهُ أكبرُ ، اللهُ أكبرُ كبيرًا۔

(4) اللّٰهُ أَكبرُ كبيرًا، اللّٰهُ أَكبرُ كبيرًا، اللّٰهُ أَكبرُ كبيرًا۔

❺. ईदगाह: ईद की नमाज़ मैदान में पढ़नी चाहिए और ज़रूरत के वक्त मस्जिद में भी ईद की नमाज़ अदा की जा सकती है। जब मैदान में ईद की नमाज़ अदा करें तो ईद की नमाज़ से पहले या बाद में कोई नफ़्ल नमाज़ नहीं है, लेकिन अगर मस्जिद में ईद की नमाज़ पढ़ी जाए तो मस्जिद में दाख़िल होते वक्त बैठने से पहले दो रक'अत तहय्यतुल मस्जिद पढ़ी जाए।

❻. ईद की नमाज़ का तरीक़ा: ईद की नमाज़ का असल वक्त यह है कि जब सूरज तुलू होकर एक नेज़ा बराबर बुलन्द हो जाए, यानी जो नमाज़-ए-इशराक़ का वक्त है वही ईद की नमाज़ का वक्त है। इसलिए देरी से नमाज़ अदा करना बेहतर नहीं है, हालांकि यह जायज़ है। ईद की नमाज़ दो रक'अत है जो वाजिब के दर्जे में है।

ईद की दो रक'अत नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा यह है कि पहली रक'अत के शुरू में सात तकबीरात कही जाएंगी, फिर सूरह फ़ातिहा और दूसरी सूरह की तिलावत की जाएगी। फिर सज्दा से उठकर दूसरी रक'अत के शुरू में पाँच ज़्यादा तकबीरात कही जाएंगी और तशह्हुद करके सलाम फेर दिया जाएगा। इसी तरह औरतें भी ईद की नमाज़ अदा करेंगी।

❼. ख़ुत्बा सुनना मसनून है: ईद की नमाज़ के बाद ख़ुत्बा देना मसनून है और मुसल्ली को चाहिए कि ख़ुत्बा सुने फिर घर वापस लौटे।

❽. क़ुर्बानी और उसका तरीक़ा: ईदगाह से वापस लौटकर अपने हाथों से क़ुर्बानी का जानवर ज़बह करें, यहाँ तक कि औरत भी ज़बह कर सकती है और कोई दूसरा भी ज़बह करे तो हर्ज नहीं है। जानवर ज़बह करने का तरीक़ा यह है कि सबसे पहले तेज़ छुरी का इंतज़ाम करें, फिर जानवर को क़िबला रुख लिटाकर बिस्मिल्लाह वल्लाहु अकबर कहते हुए उसकी गर्दन पर तेज़ी से छुरी चलाएं, ज़बह करते हुए गला यानी सांस की नली और खाने की नसें काटें। बिस्मिल्लाह वल्लाहु अकबर कहकर क़ुर्बानी करना काफ़ी है, हालांकि चाहें तो इस जगह यह दुआ पढ़ सकते हैं:

"بِاسْمِ اللهِ وَاللهُ أَكْبَرُ أَللهُمَّ هذا مِنْكَ وَلَكَ اَللهُمَّ هذَا عَنِّيْ وَعَنْ أَهْلِ بَيْتِيْ"

या चाहें तो यह दुआ भी पढ़ सकते हैं, यह भी साबित है:

"إِنِّي وَجَّهْتُ وَجْهِيَ لِلَّذِي فَطَرَ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ حَنِيْفًا وَمَا أَنَا مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ، إِنَّ صَلَاتِيْ وَنُسُكِيْ وَمَحْيَايَ وَمَمَاتِيْ لِلهِ رَبِّ الْعَالَمِيْنَ، لَا شَرِيْكَ لَهُ وَبِذَالِكَ أُمِرْتُ وَأَنَا مِنَ الْمُسْلِمِيْنَ، بِاسْمِ اللهِ وَاللهُ أَكْبَرُ أَللهُمَّ هَذا مِنْكَ وَلَكَ أَللهُمَّ تَقَبَّلْ مِنِّيْ (وَمِنْ أَهْلِ بَيْتِيْ)"

❾. कुर्बानी का वक्त: कुर्बानी के पूरे चार दिन हैं, इसलिए आप यौम-उल-नहर (कुर्बानी के दिन) को ईद की नमाज़ के बाद से लेकर ज़िलहिज्जा की तेरह तारीख़ के मग़रिब (सूर्यास्त) से पहले तक कुर्बानी कर सकते हैं। अफज़ल (श्रेष्ठ) तो यही है कि हम यौम-उल-नहर को कुर्बानी दें क्योंकि वह दिन अश्रा ज़िलहिज्जा में दाख़िल है, हालांकि अय्याम-ए-तश्रीक (तश्रीक के दिन) में भी दिन हो या रात, किसी भी वक्त कुर्बानी कर सकते हैं।

❶⓿. बाल और नाख़ून काटना: कुर्बानी के बाद अब आप अपने बाल और नाख़ून काट सकते हैं और वे लोग जो दूसरे मुल्क में कुर्बानी देते हैं, उनको भी अपनी कुर्बानी होने के बाद ही बाल और नाख़ून काटना है, सिर्फ़ ईद की नमाज़ पढ़ना काफ़ी नहीं है। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो कुर्बानी की इस्तिताअत (सामर्थ्य) नहीं रखते, ऐसे लोग अश्रा ज़िलहिज्जा में बाल और नाख़ून काटने से रुकते हैं और ईद की नमाज़ के बाद काटते हैं, तो उन्हें कुर्बानी का अज्र (सवाब) मिलता है।

❶❶. नमाज़-ए-ईद के बाद मुबारकबादी देना: ईद के दिन सहाबा-ए-किराम एक दूसरे को ईद की मुबारकबादी देते थे, इसलिए हमें भी ईद

की नमाज़ के बाद एक दूसरे को इन अल्फ़ाज़ में "तकब्बलल्लाहु मिन्ना वा मिन्क" ईद की मुबारकबादी देना चाहिए।

❶❷. ईद के दिन ख़ुशी का इज़हार: ईद का दिन मुसलमानों के लिए एक ख़ुशी का दिन है। इस दिन हम जायज़ हदों में रहते हुए अपनी ख़ुशी का इज़हार कर सकते हैं।

ईद-उल-अज़हा के मौक़े पर कुछ ऐसे काम देखे जाते हैं जिनसे हमें बचना चाहिए। इन कुछ कामों का तज़किरा (ज़िक्र) मुंदरिजा-ज़ेल (निम्नलिखित) सुतूर में किया जा रहा है:

ईद-उल-अज़हा के मौक़े पर इज्तिनाब (बचने) करने वाले काम:

❶.अगर अल्लाह ने आपको माल की फ़रावानी दी है तो ईद के मौक़े पर अपने लिए और बीवी-बच्चों के लिए नया लिबास ख़रीदें। मगर आम तौर पर देखा जाता है कि औरतों का लिबास, ख़ासकर नौजवान लड़कियों का लिबास फ़ैशन वाला और बहुत भड़कीला होता है जिसमें पर्दे की बजाए बेपर्दगी होती है। लड़कियां खूब मेकअप करके ऐसे लिबास और ज़ीनत के साथ न सिर्फ़ इधर-उधर घूमती हैं बल्कि अपनी

तस्वीरें और वीडियो भी रिश्तेदारों के बीच फैलाती हैं। कितनी सारी लड़कियां तो सोशल मीडिया पर भी इसे पोस्ट करती हैं। इस मामले में घर के गार्जियन को चाहिए कि अल्लाह का ख़ौफ़ खाते हुए औरतों के लिए सही लिबास ख़रीदें और बेपर्दगी से उन्हें रोकें, वरना अल्लाह के यहाँ आप जवाबदेह होंगे।

❷. ईद की नमाज़ के लिए सजने-संवरने के चक्कर में कितने मर्द जिनकी क़ुर्बानी होती है, वे मूंछ और दाढ़ी तराशते हैं जबकि क़ुर्बानी करने वालों को अपनी क़ुर्बानी होने से पहले बाल और नाख़ून काटना मना है। लोग ममनूअत के इस हुक्म को बहुत हल्के में लेते हैं, जो कि एक बड़ी जुर्रत और ग़लती है। जिसने ऐसी ग़लती की हो वह सच्ची तौबा करे और आगे से इस अमल से परहेज़ करे।

❸. ईदगाह में नमाज़-ए-ईद से पहले मुसलमानों के कुछ तबक़े में तक़रीर की जाती है, यह सुन्नत की सरीह मुख़ालिफ़त है। नबी ﷺ ईद के लिए जाते तो पहले नमाज़ पढ़ते फिर ख़ुत्बा देते। इसी तरह ईदगाह में लाउडस्पीकर के ज़रिए इज्तिमाई ज़िक्र कराना भी ख़िलाफ़-ए-सुन्नत है। आप इंफिरादी तौर पर तकबीरात कहेंगे।

❹. बहुत से लोग ईद की नमाज़ ख़त्म होते ही और ख़ुत्बा सुने बिना फ़ौरन घर भागते हैं ताकि जल्दी से कुर्बानी करें। इस अमल से ख़ुत्बे की अहमियत जाती रहती है। गो कि ख़ुत्बा सुन्नत है मगर इसका मतलब यह नहीं कि लोग इसे सुने बिना चले जाएं जबकि कुर्बानी के दिनों में वुसअत है।

❺. ईद के दिन मुसलमानों का बदतरीन मज़हर उस वक्त होता है जब ईद की नमाज़ के बाद पार्कों, तफ़्रीही गाहों और साहिल-ए-समंदर पर जमा होते हैं जहां मर्द-ओ-ज़न का बदतरीन इख़तिलात होता है। वहां उर्यानियत (nudity) और नंगापन होता है और हम मुसलमान पूरी फ़ैमिली के साथ बेपर्दगी वाली जगह का नज़ारा करने जाते हैं। जबकि बहुत से लोग टोपी पहनकर फिल्मी हॉल में भी नज़र आते हैं। क्या हमारी इन हरकतों से ग़ैर-मुसलमानों को ग़लत पैग़ाम नहीं जाता और क्या एक मुसलमान के लिए ईद के मौक़े पर ऐसा करना जायज़ है? यह भी एक अफ़सोसनाक पहलू है कि मुस्लिम ख़्वातीन आजकल ऐसे बुर्का ज़ेब तन कर रही हैं जो बतौर हिजाब कम, फ़ितना ज़्यादा नज़र आता है। इस मामले में ज़िम्मेदार को होश के नाख़ून लेने की ज़रूरत है।

❻. भारत में कुछ राज्यों में गाय की कटाई की जाती है, लेकिन आमतौर पर अक्सर (अधिकांश) राज्यों में गाय को ज़बह करने पर पाबंदी है। इसलिए मुसलमानों को चाहिए कि मख़्दूश (संदिग्ध) और मम्नू (प्रतिबंधित) क्षेत्रों में गाय की कुर्बानी न दें क्योंकि कट्टर हिंदू मौक़े की तलाश में रहते हैं और ऐसे लोगों को क़त्ल करने में देर नहीं करते हैं। अगर आप एक जगह से दूसरी जगह मांस ले जाते हैं तो उसमें भी हद से ज़्यादा एहतियात (सावधानी) बरतें।

❼. कुर्बानी के गोश्त (मांस) में ग़रीबों को नजरअंदाज़ किया जाता है। हम उसे गोश्त देते हैं जो हमारे घर गोश्त भेजता है, जबकि गोश्त का असली हक़दार तो वह है जिसके यहाँ कुर्बानी नहीं हुई है। आप बेशक अपने रिश्तेदारों को भी गोश्त दें, लेकिन ग़रीबों को नजरअंदाज़ न करें। तय कर लें कि हमें कुछ फ़क़ीर और मिस्कीन लोगों को, जैसे आठ-दस लोग ही सही, कुर्बानी का गोश्त ज़रूर उनके घर पहुंचाना है।

❽. जिस क़ौम में सफ़ाई को ईमान का हिस्सा क़रार दिया गया है, उस क़ौम के ईद-उल-अज़हा के मौक़े पर मुस्लिम इलाक़ों में कुर्बानी की वजह से गंदगी का नापसंद नज़ारा देखने को मिलता है, यह बड़ी दुःख की बात है। आइए इस ग़लती की सुधार करते हैं और एक

पाकीज़ा क़ौम होने का सबूत देते हैं। जब हम क़ुर्बानी देंगे और गोश्त खाएंगे तो पास-पड़ोस में या जहां-तहां गंदगी नहीं फैलाएंगे बल्कि मुनासिब (उचित) जगह हड्डियों और फ़ुज़लात (बची कुची बेकार चीज़) को डालेंगे।

❾. ईद के दिन हम सबसे ख़ुश होकर मिलते हैं, लेकिन जिनसे रिश्ता तोड़ना इबादतों को भी मुतासिर (प्रभावित) करता है, उनसे ईद के दिन भी नहीं मिलते हैं क्योंकि हमने उनसे रिश्ता तोड़ रखा होता है। आइए इस ईद से नफ़रतों को भुलाकर सबसे ख़ुशी के साथ मिलें।

[18].ईद-ए-आशिक़ाँ और इस्लाम

14 फ़रवरी का मौजूदा इंग्लिश नाम वैलेंटाइन डे है, इसे उर्दू में ईद-ए-आशिक़ाँ और अरबी में ईद-उल-हुब्ब के नाम से जाना जाता है।

इसके तारीख़ी पस-मंज़र (ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य) में मुत'अद्दिद (बहुत ज़्यादा) बातें मंक़ूल हैं, उन तारीख़ों से यह बात तो बिलकुल ज़ाहिर है कि यह एक मज़हबी ईद है जिसका ताल्लुक़ ईसाईयत से है। इसकी तारीख़ में वैलेंटाइन नामी शख़्स का ज़िक्र है जो ईसाई राहिब था। यह दिन उसी की याद में इश्क़ और मोहब्बत के नाम पर मनाया जाता है।

Encyclopedia Book of Britannica में दर्ज है कि इसे आशिक़ो के त्योहार के तौर पर मनाया जाता है। और Encyclopedia Book of Null के हिसाब से वैलेंटाइन डे महबूबों के लिए ख़ास दिन है। यह दिन एक तरफ़ ईसाइयों की मज़हबी ईद है तो दूसरी तरफ़ आम लोगों के लिए इश्क़ और मोहब्बत के नाम पर फ़हाशी और उर्यानियत (नंगेपन) के इज़हार का सुनहरा मौक़ा है।

वैलेंटाइन डे मनाना हराम है इसके अलग-अलग असबाब और वुजूहात हैं

1. नई ईद की बिद'अत:

इस्लाम में सालाना 2 ईद का तसव्वुर है, जिसने किसी 3 ईद का एतिक़ाद रखा या मनाया उसने बिद'अत वाला काम किया।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़रमान है:

وقد ابدلكم الله بهما خيرا منهما: يوم الفطر ويوم الأضحى۔ (سنن النسائی: 1465)

तर्जुमा: अल्लाह ने तुम्हें इन दोनों त्योहारों के बदले में दो और त्योहार अता किए हैं जो उन से बेहतर हैं और वे हैं: ईद-उल-फ़ित्र, ईद-उल-अज़्हा।

और आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़रमान है:

من أحدث في أمرنا هذا ما ليس منه فهو رد. (صحيح البخاري: 2499، صحيح مسلم: 3242)

तर्जुमा: जिस शख़्स ने हमारे इस दीन में कोई ऐसा काम ईजाद किया जो इसमें से नहीं है, तो वह मर्दूद है।

2. गैर-क़ौम की मुशाबहत:

इस्लाम ने हमें हर उस काम से मना किया है जिसमें कुफ़्फ़ार की मज़हबी (धार्मिक) मुशाबहत होती हो, जैसा कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़रमान है:

من تشبه بقوم فهو منهم۔ (ابي داؤد: 4031، وصححه الباني)

तर्जुमा: जो शख़्स जिस क़ौम की मुशाबहत इख़्तियार करे, वह उन्हीं में से है।

बल्कि दूसरी हदीस में सराहत के साथ नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यहूद और नसारा (ईसाईयो) की मुख़ालिफ़त करने और उनकी मुशाबहत करने से बचने का हुक्म फ़रमाया है।

3. ज़िना का सबब:

वैलेंटाइन डे में नाच गाना, मर्द और औरत का इख़्तिलात, फ़हशी और उर्यानीyat, फ़िस्क़-ओ-फ़ुजूर (बदकारी), शराब और कबाब और शहवानिय्यत और हैवानियत का ऐसा मुज़ाहिरा देखने को मिलता है जो ज़िना के असबाब में से ही नहीं, बल्कि उसमें शामिल होगा। इस्लाम ने ज़ानी के लिए बड़ी सख्त सज़ा रखी है, समाज में अगर

किसी ज़ानी को ऐसी सज़ा दी जाए तो पूरा समाज ज़िना की बुराई से पाक रहेगा। इस्लाम ने न सिर्फ़ ज़िना की सज़ा तय की है, बल्कि ज़िना में वुक़ू के असबाब का भी सद्द-ए-बाब (दरवाज़ा बन्द) किया है।

चुनांचे अल्लाह का फ़रमान है:

ولا تقربوا الزنی انہ کان فاحشۃ وساء سبیلا۔ (سورہ اسرائیل:32)

तर्जुमा: ख़बरदार ज़िना के क़रीब भी न जाना, क्यूंकि यह बड़ी बेहयाई है और बहुत ही बुरी राह है।

इस आयत में ज़िना के क़रीब न जाने का मतलब ज़िना के असबाब से बचो।

यहाँ यह भी जान लें कि वैलेंटाइन डे मनाने का मतलब:

☆ अजनबी मर्द और औरत का आज़ादाना रब्त तस्लीम करना है।

☆ ख़ातून (औरत) की इफ़्फ़त और अस्तमत की कोई ज़मानत नहीं।

☆ हमें मर्द और औरत का वही इख़्तिलात पसंद है जो मग़रिब वालों की पसंद है।

यह बातें इस्लामी एतिबार से हराम और गुनाह-ए-कबीरा हैं, इन बातों से मुस्लिम समाज बिल्कुल मग़रिबी समाज बन जाएगा।

4. हराम लहव-ओ-ल'अब:

वैलेंटाइन डे दो जोड़ों का घिनौना खेल है, इस खेल में आशिक़ और माशूक़ के लिए कुछ भी रवा है। फ़िस्क़-ओ-फ़ुजूर से लेकर ज़िनाकारी और शराब-नशी तक, और नाच-गाने से लेकर हर क़िस्म की मोज-मस्ती तक। इसमें जहाँ हराम काम होते हैं, वहीं बेहिसाब फ़िज़ूलख़र्ची भी की जाती है। सच्ची बात तो यह है कि अल्लाह ने कहा कि फ़िज़ूलख़र्ची करने वाले शैतान के भाई हैं:

ان المبذرين كانوا اخوان الشياطين وكان الشيطان لربه كفورا۔ (إسراء: 27)

तर्जुमा: बेवजह ख़र्च करने वाले शैतान के भाई हैं और शैतान अपने परवरदिगार का बड़ा ही नाशुक्रा है।

ग़ौर कीजिए ऐसे लोग शैतान और उनका अमल शैतानी है। अल्लाह हमें शैतान और शैतानी कामों दोनों से बचाए। आमीन।

इन असबाब के अलावा दूसरे ग़ैर-शरई काम अंजाम दिए जाते हैं, जैसे:

☆ इस मौक़े से मोहब्बत वाला कार्ड आशिक़ और माशूक़ के बीच तबादला किया जाता है, वैलेंटाइन डे की बुराई की शुरुआत इसी कार्ड से होती है।

☆ एक दूसरे को रेड रोज़ पेश करते हैं, जो बुत परस्तों के यहाँ प्रेम की निशानी मानी जाती है।

☆ रेड रोज़ की निस्बत से रेड मिठाइयों की तक़सीम होती है।

☆ कार्ड पर बसा औक़ात ख़ुदाए मोहब्बत की तस्वीर बनाई जाती है और कभी गंदे अल्फ़ाज़ तो कभी बेहूदा तस्वीरें बनी होती हैं।

☆ इस मौक़े से यूरोप में जिन्स परस्त अपनी जिंस परस्ती का इज़हार करते हैं।

☆ यह भी देखा गया है कि अहले यूरोप के यहाँ मख़सूस अज़ा (बॉडी पार्ट) पर महबूब का नाम लिखा होता है।

बहरहाल! हम इस्लामी भाइयों और बहनों से कुरआन की एक आयत की रोशनी में उससे किनारा करने की नसीहत करते हैं। जो न माने उसे अल्लाह की सख़्त वईद भी बता देते हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

ان الذين يحبون أن تشيع الفاحشة في الذين آمنوا لهم عذاب اليم في الدنيا والآخرة۔ (النور: 19)

तर्जुमा: यक़ीनन जो लोग चाहते हैं कि ईमान लाने वालों के ग्रुप में फ़हशी (और बेहयाई) फैल जाए, वे दुनिया और आख़िरत में दर्दनाक सज़ा के मुस्तहिक़ हैं।

[19]...एक मज़लूमा मुतल्लक़ा का घर दोबारा कैसे बसा?

सोशल मीडिया ने फ़ासला कम किया, पैग़ाम रसानी बेहद आसान-तर कर दिया, राब्ता का दायरा वसी से वसीतर कर दिया। आज एक जगह तन्हाई में बैठा शख़्स कोने-कोने तक अपना पैग़ाम पहुंचा सकता है, जिससे चाहे लम्हों में राब्ता कर सकता है और उस तक अपनी बात बिजली जैसी तेज़ रफ़्तारी के साथ पहुंचा सकता है। यही सोशल मीडिया की हैरत अंगेज़ कुव्वत और ताक़त है। इससे सारी दुनिया फ़ायदा उठा रही है, सियासतदान से लेकर आम आदमी तक, अपने-अपने मक़सद के लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल कर रहा है। यही कमाल है कि एक मज़लूम जिसकी कोई सुनने वाला नहीं था, खासकर मज़लूम जब मिस्कीन और लाचार हो, तो उसकी आवाज़ सदा ब-सहरा साबित होती, मगर आज सोशल मीडिया ने मज़लूमों की आवाज़ दूर-दूर तक पहुंचाई, यहां तक कि अब उसकी गूंज सियासी ऐवानों (महलो) से लेकर आम हलक़ो में सुनी जाती है। एक ऐसी ही मज़लूम की दुःख भरी कहानी आपको सुनाने लगा हूँ, जिसका उजड़ा घर बसने में 3 साल लग गए। कहानी है पाकिस्तान की एक दुखियारी सुमेरा रहमान की, जिसका निकाह 24 मई 2015 को हुआ और तक़रीबन 5 महीने बाद अदालत के ज़रिये शौहर (पति) की तरफ़ से तलाक़ का एक

नोटिस मिला, जिस पर 15/10/2015 की तारीख़ मर्क़ूम है और इसमें लिखा है कि आज दिन झगड़े की वजह से मन-मुक़िर है इस फ़ैसले पर मजबूर है कि अपनी बीवी को जो शरीयत-ए-मुहम्मदी के मुताबिक़ तलाक़-ए-सुलासा (वह तलाक़ जो एक बार मे तीन बार दी जाए/तीन तलाक़) देता है।

तलाक़ के बाद बहुत कम लोग होंगे जो पछताते न हों। अक्सरियत अफ़सोस करती है मगर जिस के यहाँ इमाम मुत'अय्यन की अंधी तक़लीद हो और किसी ने अपनी बीवी को तलाक़-ए-सुलासा दे दी हो, उसके यहाँ पछताने और अफ़सोस करने के अलावा निजात का कोई रास्ता नहीं है। इसी सबब समाज पर तलाक़-ए-सलासा का क़हर मैंने अपने एक मज़मून में बयान किया। इस दास्तान-ए-ख़ूनचकाँ को पढ़ने वाला मेरे ब्लॉग में क़हर वाला मज़मून ज़रूर पढ़े।

यहाँ पर मुझे हिंदू क़ौम की क़दीम तहज़ीब सती याद आती है, जिस तहज़ीब में मज़लूम बेवा को पति की आग में ज़बरदस्ती झोंक दिया जाता है। बेवा तकलीफ़ दर तकलीफ़ पर रोती, बिलबिलाती, चीख़ती और चिल्लाती है और तहज़ीब के अलंबदार इस चीख़ को औरत की रस्म और आग में फेंकने को दीन और मज़हब समझते हैं। ठीक इसी

कैफ़ियत में मुतल्लक़ा (वह औरत जिसको तलाक़ दी गई हो) सुलासा पर हलाला का जबर होता है। औरत चीख़ती है, मदद की गुहार लगाती है मगर तक़लीद के अलंबरदार हलाला करके ही दम लेते हैं और तक़लीद पर किसी तरह आँच नहीं आने देते हैं। बल्कि ऐसे ही जबर से तो तक़लीद को ताक़त और हिफ़ाज़त नसीब होती है। वाह रे सती के अलंबरदार और हलाला के ठेकेदार और चौकीदार!

मेरी इस कहानी में शौहर (पति) को अपने किए पर अफ़सोस होता है और वह अपनी बीवी के पास लौटकर आना चाहता है। बीवी हद दर्जा अपने पति से मोहब्बत करती है और वह भी फिर से अपना घर बसाना चाहती है। पति नामदार हनफ़ी उलेमा से फ़तवा पूछते रहे, उनकी तरफ़ से जवाब आता रहा कि अब इस बीवी की तरफ़ लौटने का कोई रास्ता नहीं है। हाँ, एक हील-ए-इख़्तियार करो हलाला का तो फिर वापसी बीवी के पास जा सकते हो। वाक़ई हलाला एक बहाना है जिस से औरत की इज़्ज़त और नामूस तार-तार किया जाता है। ग़ैरत मन्द मर्द और ग़ैरत मन्द औरत कभी इस बहाने को इज़्ज़त नहीं मानते। उन्ही ग़ैरतमंदों में से इस कहानी का मर्द और इस कहानी की औरत भी है। शौहर अपने मस्लक के उलमा से फ़तवा पूछते, तलाक़ पर 3 साल का लंबा अर्सा गुज़र गया मगर घर बसने का किसी ने

रास्ता नहीं बताया। इधर मज़लूम मुतल्लक़ा (वह औरत जिसको तलाक़ दी गई हो) की दास्तान बड़ी दिलख़राश है। उसके पास एक शादीशुदा बहन है, कैंसर की मरीज़ माँ है, बचपन में वालिद फ़ौत हो गए, घर में न भाई और न कोई मर्द ख़ालू है जो कभी परेशानी में देख-सुन लेने आ जाते हैं। जब इस औरत को तलाक़ हुई तो मायके चली आई। इस लड़की की माँ ने शौहर की वफ़ात के बाद दूसरी शादी कर ली थी। जब तलाक़ के बाद जवान बेटी घर आई तो उस मर्द को जलन होने लगी, अपनी बीवी को बेइज़्ज़त करने लगा और उसे घर से निकालने की धमकी दी। माँ आख़िरकार माँ होती है, वह जवान बेटी को भला घर से कैसे भुगाएगी। और वह मज़लूम बेटी अब सहारे के क़ाबिल है न कि ज़ुल्म करने के। अफ़सोस कि मुआशरे में तलाक़ के बाद औरत घर का बोझ और समाज का तंज और मज़ाक़ बनकर रह जाती है। घर से लेकर बाहर तक तकलीफ़ देने वाली बातों से दिल चीर जाता है। औरत ही है कि इस क़दर कांटों भरे लम्हों में भी सब्र का पहाड़ बन जाती है, मर्दों से ऐसा सब्र मुहाल है।

हर हाल लड़की की माँ ने अपने दूसरे शौहर को दो टूक अल्फ़ाज़ में जवाब दिया कि मेरे साथ रहना हो तो रहो, वरना मेरे पास से चले जाओ। मेरी बेटी कहीं नहीं जाएगी, यहीं मेरे साथ रहेगी। शौहर कब

अपनी बेइज़्ज़ती बर्दाश्त कर सकता है, वो भी कमज़ोर सिफ़त वाली यानी औरत से। शदीद गुस्से का इज़हार करता है, आधी रात में बीवी को मारता है और बीवी एक ग़मख़्वार माँ बनकर दुखियारी बेटी के लिए ग़म कम करने का सामान मुहैय्या करती है। बुज़दिल मर्द ने बीवी को मारा, बेटी की तरफ़ चाकू ले कर दौड़ा और उसे भी मारा, बहुत लान तान किया और सारे रिश्ते तोड़कर घर से हमेशा के लिए निकल गया। क़ुर्बान जाएं माँ की ममता पर, एक माँ ने मज़लूम बेटी का सहारा बनने के लिए अपना घर उजाड़ लिया। अल्लाह ने माँ के दिल में रहम का जज़्बा किस क़दर मौजज़न (हिल्लोलित) किया है! सुब्हानल्लाह

दूसरे शौहर (पति) के जाने के बाद माँ ने बेटी को सहारा दिया, बेटी अपना घर बसाने के लिए दिन-रात अल्लाह से दुआएं करती रही। अल्लाह से नेक आदमी से मुलाक़ात की दुआ करती, जिसके ज़रिये उसका मामला सही हो जाए। वह देर तक माँ पर बोझ नहीं बनना चाहती और समाज के ताने से भी काफ़ी खौफ़ज़दा हो चली थी, बाप के चले जाने का ताना, माँ की तरह दूसरी शादी करने का ताना। लड़की कहती है कि वक्त इतना संगीन था, अगर वालिदा न होतीं तो मेरी बहन भी शायद मेरा सहारा न बन पाती।

वक्त गुज़रता रहा यहाँ तक कि 3 साल गुज़र गए। इत्तिफ़ाक से लड़की की हमनाम दोस्त के ज़रिये मेरा व्हाट्सएप नंबर मिला, उसने तलाक़ नामा भेजा और अपना मसला बयान किया और मुझसे इसका हल पूछा। मैंने बड़ी वज़ाहत के साथ ऑडियो में सिर्फ़ एक तलाक़ वाक़े होने का ज़िक्र किया और बताया कि वह अपने पहले पति से निकाह करके दोबारा उसके पास जा सकती है। मेरी बात पर बहुत ही इत्मिनान हुआ, जैसे अंधेरे के मुसाफ़िर को शमा मिल गई हो। जब अपने पहले शौहर (पति) से मिलने की उम्मीद जागी तो वालिदा से बात की, जिनके दिल में भी यह ख़्याल घर कर गयी था कि मेरी बेटी दोबारा अपना घर नहीं बसा सकती है।

लड़की ने अपनी माँ को मेरा ऑडियो मैसेज सुनाया तो उन्होंने मुझसे बात करने की ख़्वाहिश ज़ाहिर की। मैंने एक वक़्त तय किया और उस वक़्त लड़की की माँ ने व्हाट्सएप कॉल पर मुझसे राब्ता किया। आवाज़ में मदद की आह सुनाई दे रही थी, गोया मजबूर माँ पंजाबी ज़बान में अपनी दास्तान सुना रही थी और मैं समझने से क़ासिर था, मगर मेरी बातें पूरी समझ रही थी। मेरी बातों पर उनका दिल मुतमईन हो गया और अब माँ को भी अपनी बेटी का घर बसने की उम्मीद नज़र आई। फ़र्त-ए-मोहब्बत (प्रेम की झोंक) में बोली, बेटा अगर कुछ

लिख कर देते तो किसी को दिखा सकती। मेरी बात कौन मानेगा? मैंने भी उसी वक़्त अपने दावाह सेंटर के लेटरहेड पर फ़तवा तैयार किया और व्हाट्सएप पर भेज दिया। अब बच्चे थे, पहले पति जो 3 साल से उलमा-ए-अहनाफ़ के फ़तवों के तले थे, इस बोझ से ऊपर उठने की कोई सूरत नज़र नहीं आ रही थी। लड़की से हुई मेरी बात उसने पूरी सुनी और फ़तवा पर भी ग़ौर और ख़ौज़ किया। अब शौहर ने भी मुझसे बात करने का इरादा ज़ाहिर किया। एक दिन ज़ुहृ बाद की अज़ान के वक़्त मुझसे राब्ता किया, उसने मुझसे 3 सवाल किए:

(1) उसने कहा कि मैं हनफ़ी हूँ और 3 साल से इस मसले का हल अपने उलमा से पूछ रहा हूँ। सभी ने कहा कि अब इस बीवी के पास हम नहीं जा सकते हैं। उसकी क्या वजह है?

मैंने कहा कि उसकी एक ही वजह है, वह है उन उलमा का हनफ़ी होना। अगर वह हनफ़िय्यत से बाहर आकर किताब और सुन्नत की रोशनी में फ़तवा दें, तो फिर उनका भी वही फ़तवा होगा जो मैंने दिया है। और आप पाकिस्तान में किसी भी अहले हदीस आलिम के पास जाएँ, वह क़ुरआन और हदीस की रोशनी में वही जवाब देंगे जो मैंने दिया है।

(2) सवाल किया कि अगर मैंने अपनी बीवी से दोबारा निकाह कर लिया, तो आख़िरत में कोई पकड़ तो नहीं होगी?

मैंने कहा कि अगर क़ुरआन और हदीस पर अमल करने से आख़िरत में पकड़ होगी, तो उन सारे उलमा की पकड़ होगी जो ऐसा फ़तवा देते हैं, ख़ुद मेरी भी पकड़ होगी। अगर आपकी पकड़ हुई, तो मैं आख़िरत में आपके साथ हूँगा।

(3) सवाल यह था कि अगर मैं एक मसले में आपके मुताबिक़ अमल करता हूँ, तो क्या हनफ़िय्यत पर कोई फ़र्क़ पड़ेगा या मेरे ऊपर कोई पाबंदी होगी?

मैंने जवाब दिया कि मैंने आपको अल्लाह और उसके रसूल की बात की तरफ़ बुलाया है। अल्लाह और उसके रसूल की बात पर अमल करने वाला अल्लाह के नज़दीक बेहतरीन इंसान है। हाँ, आपको उलमा-ए-अहनाफ़ या हनफ़ी आवाम की तरफ़ से ताना सुनना पड़ सकता है, आप पर ज़ुल्म भी हो सकता है। आप लोगों से यह कहें कि जिस तरह इमाम अबू हनीफ़ा रहिमहुल्लाह के शागिर्द इमाम मुहम्मद रहिमहुल्लाह ने अपने उस्ताद के सैकड़ों मसाइल को नहीं माना और अपने उस्ताद के ख़िलाफ़ फ़तवा दिया, मैं भी उसी तरह अहनाफ़ की

एक बात पर मुतमईन नहीं हूँ और इस मसले में क़ुरआन और हदीस की पैरवी करता हूँ।

इतनी बातें हुईं और वह भी मुतमईन होते महसूस हुए। यह सारी बातें लड़की के ख़ालू को भी मालूम हुईं, उनको भी इस मामले में हल निकलता नज़र आया। आख़िरकार 11/03/2019 को लड़की के ख़ालू उसके शौहर के साथ उसके घर जमा हुए। सभी का दिल इस बात पर मुतमईन हो चुका था कि यह एक तलाक़ हुई है। ख़ालू ने भी कुछ जगह से बज़ात-ए-ख़ुद इस बात की तसदीक़ की, बल्कि शौहर (पति) ने साफ़ दिल होकर कहा कि मुझे तो इत्मिनान हो चुका है, इसी लिए तुम्हारे घर आया हूँ। इस बैठक में तय पा गया कि 21/22 मार्च को दोबारा निकाह हो जाएगा और लड़की अप्रैल में अपना घर बसाने ससुराल चली जाएगी। इं-शा-अल्लाह

इधर रात यह फ़ैसला हुआ, रात भर लड़की के घर ख़ुशी से किसी को नींद नहीं आई। लड़की सवेरा होने का इंतज़ार कर रही थी कि सबसे पहले वह मुझे इसकी खुशख़बरी सुनाए। सुबह जब मैं फ़ज्र की नमाज़ के बाद व्हाट्सएप खोलता हूँ, तो उसकी खुशख़बरी सुनकर आँखों से ख़ुशी के आंसू निकल पड़ते हैं। उसने दुआओं के साथ बैठक की और

बहुत सारी और बातें बयान की। यह भी कहा कि मेरे घर बसने का सबसे पहले क्रेडिट आपको जाता है, इसलिए अपनों में सबसे पहले आपको ख़बर दे रही हूँ। अब इस बहन को ख़बर देती हूँ, जिसने आपका नंबर दे कर मुझ पर न भूलने वाला एहसान किया है।

इस तरह अल्लाह की तौफ़ीक़ से एक मज़लूमा मुतल्लक़ा (वह औरत जिसको तलाक़ दी गई हो) का घर, जो 3 साल से सूना पड़ा रहा, अब आबाद और बसने जा रहा है। अलहम्दुलिल्लाह सुम्मा अलहम्दुलिल्लाह।

अल्लाह से दुआ है कि बग़ैर किसी रुकावट के जल्द से जल्द इस्लामी बहन का घर आबाद कर दे, मिया-बीवी (पति-पत्नी) में ज़िंदगी भर मोहब्बत क़ायम रखे, उन्हें दीन पर इस्तिक़ामत नसीब फ़रमाए, घर की सारी मुश्किलात दूर फ़रमाए। दुनिया में जहां भी ऐसी मज़लूम बहन है, उसकी ग़ैबी मदद फ़रमाए, उसकी वालिदा को सेहत और तंदुरस्ती दे और हम सब को सिरात-ए-मुस्तक़ीम पर क़ाइम रखे। आमीन।

आख़िरकार अल्लाह की तौफ़ीक़ से तलाक़ याफ़्ता बहन का घर बस गया।

पहली क़िस्त में ज़िक्र किया गया था कि 11/03/2019 को लड़की के घर में उसकी शादी के सिलसिले में बैठक हुई थी, जिसमें यह बात तय हो गई थी कि लड़की की शादी वापस उसी लड़के से होगी। लड़का इस बैठक में मौजूद था और शादी के फ़ैसले पर राज़ी था, बल्कि सख़्ती के साथ उससे बयान लिया गया कि अगर आपके मन में कोई बात हो तो अभी बता दें।

उन्होंने कहा कि मुझे जब इस मसले पर इत्मिनान हो गया है तभी आज आप लोगों के साथ बैठक कर रहा हूँ।

इस बैठक के बाद शादी के चर्चे लड़की के रिश्तेदारों में होने लगे, दूर और नज़दीक तक बातें फैल गईं। जो दोबारा निकाह नहीं चाह रहे थे, वे रिश्तेदार एक-दूसरे को उकसाने लगे और लड़की और उसकी माँ को बहकाने का काम करने लगे। लड़की की मामी का भाई आमिर उन दिनों सऊदी अरब से उमरा करके लौटा था, उसके कान भरे गए। उसने लड़की को बहकाने के लिए फोन किया और बहकाने वाली तरह-तरह की बातें की, जैसे कि यह शादी हराम है, इससे जो बच्चे पैदा होंगे वे हराम के होंगे, तुम अपनी आख़िरत ख़राब कर रही हो, इससे बहन, भाई और दूसरे रिश्तेदारों की नाक कट जाएगी। कई तरह के

बहकावे, बल्कि उसने यह भी कहा कि मैंने सुना है तुमने किसी सऊदी वाले से फ़तवा लिया है, अरे पता नहीं वह आलिम है या कोई शिया या सुन्नी?

बहुत देर तक बहकाता रहा, फिर आख़िर मैंने मशवरा दिया कि ऐसा करो, रावलपिंडी चल जाओ, वहाँ रावता में एक बड़े मुफ़्ती साहब हैं, बड़े पहुँचे हुए हैं। उनको सऊदी का फ़तवा भी दिखाना और वह जो फ़तवा पर मोहर लगाकर देंगे, उसके मुताबिक़ अमल करना। उसके बाद समाज को तुम्हारे बारे में बात करने का मौक़ा नहीं मिलेगा। उन बातों से लड़की ज़ेहनी तौर पर परेशान ज़रूर हुई, मगर उसके कुछ जुमलों ने आमिर की बोलती बंद कर दी।

लड़की ने कहा कि 3 साल जब मुश्किलात में खड़ी थी, उस वक्त तुम्हें मेरी याद नहीं आई। आज जब मैंने अपनी ज़िंदगी का ख़ुद फ़ैसला कर लिया और अलहम्दुलिल्लाह मुझे अपनी आख़िरत की फ़िक्र है, अपने फ़ैसले पर भरोसा है, तब तुम्हें मेरी याद आई। मैंने जहाँ से फ़तवा लिया है, वो पाक सरज़मीं पर बैठे नेक लोग हैं, अल्हम्दुलिल्लाह वहाँ दिन और रात अल्लाह की रहमत बरसती है। उन्होंने मुझे क़ुरआन और हदीस का हवाला देकर इस मसले का हल बताया है। मुझे उनके

फ़तवे पर भरोसा है, मगर तुम्हारे मुफ़्ती पर नहीं, क्योंकि 3 साल तुम्हारे मुफ़्तियों के चक्कर काटे और पता चला कि ये लोग ऐसे नाज़ुक वक़्त में सिर्फ़ अपनी हवस पूरी करते हैं।

फिर लड़की ने मुझसे सारा वाक़ि'आ बयान किया। मैंने उसे कहा, यक़ीनन अभी बरसाती मेंडक की तरह अपने-अपने बिलों से ग़मख़्वारी के बड़े-बड़े दावेदार निकलेंगे, उनसे अपना दामन बचाना है। किसी से इस मुद्दे पर बात नहीं करनी है।

मैंने कहा कि आपकी वालिदा कैंसर की मरीज़ हैं, हर 3 महीने पर उनके इलाज के लिए 50,000 रुपये चाहिए। जब कोई आपसे तलाक़ और शादी की बात करे, तो उनसे कहें कि मेरे पास तलाक़ और निकाह का मसला नहीं है, मेरे पास जो मसला है, वह वालिदा के इलाज का है। अगर उस काम में मेरी मदद कर सकते हैं, तो मदद कर दें। और जहां तक मशवरा का ताल्लुक़ है, तो जब मुझे उसकी ज़रूरत पड़ेगी और आपसे पूछा जाएगा, तब ही मशवरा दें।

मैंने पहले कहा था कि लड़की को बहन भाई नहीं हैं, यह मेरी अदम मालूमात थी। उसे बहन भाई भी हैं, जो अपनी अपनी ज़िंदगी अपने

तरीक़े से अलग-अलग बसर कर रहे हैं। बल्कि बहन और बहनोई ने तलाक़ के वक्त से लेकर अब तक सिवा तकलीफ़ और बदनामी के और कुछ नहीं दिया। आमिर को उकसाने वाले भी यही बहन थी।

3 साल की अलमनाक सूरत-ए-हाल लोगों से बयान किए जाने के क़ाबिल नहीं है। जाते-जाते सौतेले बाप ने रही-सही इज़्ज़त भी नीलाम कर दी थी। गली-गली लड़की की इज़्ज़त उछालते गए, तरह-तरह के इल्ज़ाम लोगों में आम करते गए। ऐसे हालात में लड़की ने इद्दत के दौरान बीमार मां और घर चलाने की ख़ातिर नौकरी जॉइन कर ली। मजबूरी में वह नौकरी भी छोड़नी पड़ी, बल्कि इल्ज़ाम के ख़ौफ़ से घर से क़दम निकालना दुष्वार हो गया। कई महीने बाद एक दिन वह सब्जी लेने बाहर गई, तो सब्ज़ी वाले ने कहा कि मैंने सुना है तुम्हारी तलाक़ हो गई है। इतना सुनना था, जैसे पांवों के नीचे से ज़मीन खिसक गई। इस तरह घुट-घुट कर जीती रही। हर कोई सोच सकता है कि जिस लड़की को तलाक़ हो जाए, तलाक़ के नाम से उस पर मनमानी इल्ज़ाम तराशी जाए, उस हाल में कि उसे दिलासा देने वाला न उसका बाप ही हो और न भाई-बहन, उसकी कैफ़ियत (स्थिति) क्या हो सकती है?

दिन गुज़रते रहे, 3 साल गुज़र गए। इत्तेफ़ाक़ से मुझसे राब्ता हुआ, सारा मसला वाज़ेह किया। फ़तवा लिख कर मैंने भेजा, शादी के लिए फ़तवा भेजा गया। लड़की को मां को समझाया गया, सब मुत्तफ़िक़ हो गए। तो एक दिन घर में जमा होकर लड़की की दोबारा उसी लड़के से शादी पर सबका इत्तेफ़ाक़ हो गया।

इस मीटिंग में 21/22 मार्च को निकाह करने का अंदाज़ा लगाया गया था, मगर लड़के की मसरूफियत और कुछ दीगर मसाइल की वजह से उन दिनों जमा होना मयस्सर नहीं हुआ।

बिल-आख़िर 25 मार्च 2019, पीर को लड़का, लड़की के ख़ालू और कई लोग जमा हुए और दिन के 12 बजे दूसरा निकाह हो गया। कमाल की बात यह है कि दोबारा निकाह उसी मौलवी ने पढ़ाया जिसने पहला निकाह पढ़ाया था। उनके सामने मेरा फ़तवा पेश किया गया, उन्होंने कहा कि अल्हम्दुलिल्लाह यह फ़तवा वहां से आया है जहां की बात काटी ही नहीं जा सकती। उन्होंने लड़के से भी ज़्यादा तफ़्तीश की कि तुमने कोर्ट से कितनी बार तलाक़ का नोटिस भेजा, तो उसने कहा कि मैंने एक बार नोटिस भेजा है। उस पर मौलवी साहब ने कहा कि ख़्वा-मख़्वाह तुमने 3 साल गवा दिए, पहले ही तुम दोनों मियां-बीवी इकट्ठा

हो सकते थे। उस मौलवी के निकाह पढ़ाने से एक बड़ा फायदा यह होगा कि पीछे बात करने वालों को वह जवाब दे सकेंगे या बहुत से लोग यह सोच कर भी बातें नहीं बनाएंगे कि फुलाँ मौलवी ने निकाह पढ़ाया है तो सही ही होगा।

बहरहाल, मैंने इस बहन की आँखों में आंसू तो नहीं देखे मगर आवाज़ में इंतिज़ार और इज़्तिराब महसूस किया। मुझे लगा उसे मेरी मदद की ज़रूरत है। मैंने हर मुमकिन तरीक़े से उसके मसले को सुलझाने की कोशिश की। उस काम की वजह से मुझे कुछ नुक़सान भी उठाना पड़ा, मगर कुछ नुक़सान के बदले किसी को बड़ा फ़ायदा होता हो तो मदद करने से पीछे नहीं हटना चाहिए। अल्लाह सब की सुनता और सब की मदद करता है। बहन की दुआ और कोशिश क़बूल हुई और उसका घर आबाद हो गया। इस तरह तलाक़-ए-सुलासा के नाम पर न जाने कितने घर बर्बाद हो गए, उन्हें भी इसी तरह आबाद करने की ज़रूरत है।

औलाद की ख़ुशी बाप से कहीं ज़्यादा माँ को होती है। आख़िर वह अपनी कोख में पालती है, शिद्दत-ए-आलम के साथ जन्म देती है और 2 साल तक अपने सीने से चिपकाए खाने का इंतज़ाम करती

रहती है। इस बहन ने लोगों से औलाद की दुआ की है, मैं उसके तवस्सुत (ज़रिये) से आप सब से उसकी सलामती और औलाद के लिए दुआ की दरख़्वास्त करता हूँ।

[20] एतिकाफ़ के मसाइल

एतिकाफ़ और इसका हुक्म:

ए'तिकाफ़ का ताल्लुक़ रमज़ान के आख़िरी दस दिनों से है। यह क़ुर्ब-ए-इलाही का अहम (महत्वपूर्ण) ज़रिया है। इससे मुताल्लिक़ मुत'अद्‌दिद फ़ज़ाइल वारिद हैं मगर सभी के सभी ज़ईफ़ हैं ताहम इसकी मशरू'इय्यत व तरग़ीब कई आयात व अहादीस से साबित है। हाँ, ए'तिकाफ़ इबादत है नीज़ मस्जिद में ए'तिकाफ़ की बदौलत मुख़्तलिफ़ क़िस्म की नेकियाँ करने का मौक़ा मिलता है इसलिए उन सभी की फ़ज़ीलत व अज्र अपनी जगह मुसल्लम (accepted) है।

अल्लाह का फ़रमान है:

وَعَهِدْنَا إِلَىٰ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ أَنْ طَهِّرَا بَيْتِيَ لِلطَّائِفِينَ وَالْعَاكِفِينَ وَالرُّكَّعِ السُّجُودِ (البقرة:125)

तर्जुमा: "और हमने इब्राहीम और इस्माईल (अलैहिस्सलाम) को ये नसीहत दी कि वे मेरे घर को तवाफ़ करने वालों, ए'तिकाफ़ करने वालों और रुकू और सजदे करने वालों के लिए सदा साफ़-सुतरा रखें।"

नीज़ अल्लाह का फ़रमान है:

وَلا تُبَاشِرُوهُنَّ وَأَنْتُمْ عَاكِفُونَ فِي الْمَسَاجِدِ (البقرة:187)

तर्जुमा: "और अगर तुम मस्जिदों में ए'तिकाफ़ में बैठे हो तो फिर बीवियों के साथ मुबाशरत न करो।"

और नबी ﷺ के मुताल्लिक़ आईशा रज़ियल्लाहु अन्हा का फ़रमान है:

أن النبيَّ صلَّى اللهُ عليه وسلَّم كان يعتكفُ العشرَ الأواخرَ من رمضانَ حتى توفاهُ اللهُ، ثم اعتكفَ أزواجُهُ من بعدِهِ. (صحيح البخاري:2026، صحيح مسلم:1172)

तर्जुमा: "अल्लाह के रसूल ﷺ रमज़ान के आख़िरी दस दिनों तक ए'तिकाफ़ करते रहे जब तक कि अल्लाह ने उन्हें वफ़ात न फ़रमाई, फिर उनकी बीवियों ने भी ए'तिकाफ़ किया।"

क़ुरआन और हदीस के अलावा इज्मा उम्मत से भी इसकी मशरू'इय्यत साबित है कि जैसा कि शैख़ उल इस्लाम इमाम इब्ने तैमिया रहिमहुल्लाह ने नक़ल किया है।

(وشرح العمدة :711/2)

दलाइल के रूप में ए'तिकाफ़ वाजिब नहीं बल्कि सुन्नत है जब तक कि कोई ए'तिकाफ़ की नज़र मान ले तो उसके लिए वाजिब होगा।

ए'तिकाफ़ की जगह:

जिस तरह मर्द के लिए ए'तिकाफ़ मस्नून है उसी तरह औरत के लिए भी ए'तिकाफ़ मशरू है। और यह भी वाज़ेह रहे कि ए'तिकाफ़ की जगह सिर्फ़ मस्जिद है। जैसा कि ऊपर क़ुरआन की आयत से वाज़ेह है और नबी ﷺ ने इस पर अमल करके दिखाया है। अगर औरत ए'तिकाफ़ करे तो उसे भी मस्जिद में ही ए'तिकाफ़ करना होगा ख़्वाह जामे'-मस्जिद हो या ग़ैर जामे। सिर्फ़ जामे'-मस्जिद में ए'तिकाफ़ वाली रिवायत (لاَ اعْتِكَافَ إِلاَّ فِى مَسْجِدٍ جَامِعٍ) पर कलाम है। अगर जामे'-मस्जिद में ए'तिकाफ़ करे तो ज़्यादा बेहतर है ताकि नमाज़ जुम्मा के लिए निकलने की ज़रूरत न पड़े।

ए'तिकाफ़ का वक़्त:

नबी ﷺ ने रमज़ान में अक्सर दस दिनों का ए'तिकाफ़ किया है इसलिए अफ़ज़ल है कि रमज़ान के आख़िरी दस दिनों में दस दिनों का ए'तिकाफ़ करे क्योंकि आख़िरी दस में बड़ी फ़ज़ीलत आई है। इस का

तरीक़ा ये है कि ए'तिकाफ़ की दिल से निय्यत करे और बीसवीं रमज़ान का सूरज डूबते ही मस्जिद में दाख़िल हो जाए। यह इक्कीसवीं की रात होगी। रात भर ज़िक्र-ओ-अज़्कार और नफ़ली इबादत में मसरूफ़ रहे और फ़ज्र की नमाज़ पढ़ के ए'तिकाफ़ की जगह पे चला जाए। ईद का चाँद होते ही ए'तिकाफ़ ख़त्म कर दे।

ए'तिकाफ़ के लिए मुबाहल उमूर:

ए'तिकाफ़ की हालत में मस्जिद में खाना पीना, नहाना, ज़रूरत के मुताबिक़ बात करना, तेल की ख़ुशबू का इस्तेमाल करना, बिना शहवत बीवी से बातचीत और उसे छूना, ज़रूरत के लिए बाहर जाना जैसे कि मस्जिद में बैत-उल-ख़ला न होतो क़ज़ा-ए-हाजत के लिए, जुमा वाली मस्जिद न होतो नमाज़ जुमा के लिए, खाना कोई लेने वाला न होतो खाना के लिए वग़ैरह।

ए'तिकाफ़ के मुनाफ़ी उमूर:

बेज़रूरत मस्जिद से बाहर जाना, जिमा या किसी अन्य तरह से जानबूझकर मनी ख़ारिज करना ए'तिकाफ़ के बातिल होने का सबब

है। इसी तरह हैज़ और निफ़ास भी औरत का ए'तिकाफ़ बातिल कर देगा। इन के अलावा बेज़रूरत बातचीत, बिना ज़रूरत के काम में तज़ईं' (व्यय) करना या इबादत के मुनाफ़ी काम, झूट और ग़ीबत से बचें। यह बातिल होने का सबब तो नहीं मगर इन से ए'तिकाफ़ का मक़सद फ़ौत हो जाता है। इसी तरह मरीज़ की इयादत, नमाज़ जनाज़ा और दफ़न के लिए मस्जिद से बाहर निकलना भी जाइज़ नहीं है।

ए'तिकाफ़ के मस्नून आमाल:

मो'तकिफ़ को चाहिए कि दस दिनों में कसरत से तदब्बुर के साथ तिलावत, ज़िक्र व अज़्कार, दुआ व इस्तग़फ़ार और नफ़ली इबादतें अंजाम दें। ख़ुशू व ख़ुज़ू और ख़ज़ूर-ए-क़ल्बी के साथ अल्लाह से ताल्लुक़ जोड़ने पर मेहनत और मशक़्क़त करें। रमज़ान तक़वा का मज़हर है, ए'तिकाफ़ से तक़वे को मज़ीद तक़वियत बख़्शे। इन ही दिनों में लैलत-उल-क़द्र भी आती है मो'तकिफ़ के लिए उसे पाने का सुनहरा मोक़ा है, आप ﷺ ने उसी ग़र्ज़ से तीनों अश्रे में ए'तिकाफ़ किया। जब आख़िरी अश्रे में शबे क़द्र की ख़बर मिली तो उस में ए'तिकाफ़ करने लगे।

मज़ीद चंद मसाइल :

ए'तिकाफ की इस तरह नियत करना

"نویت سنت الاعتکاف للہ تعالیٰ"

(मैंने अल्लाह तआला की रज़ा के लिए सुन्नत ए'तिकाफ की निय्यत की) बिदअत है। निय्यत महज़ दिल से करना है। ए'तिकाफ के लिए रोज़ा शर्त नहीं (لااعتکاف الابصوم) वाली रिवायत पर कलाम है मस्जिद में औरत के लिए जब तक मख़सूस व महफ़ूज़ जगह न हो तब तक उसे ए'तिकाफ में बैठना जाइज़ नहीं है सिर्फ तीन मसाजिद में ए'तिकाफ का ए'तिक़ाद भी सही नहीं है।

ए'तिकाफ़ की मुद्दत (अवधि) मुत'अय्यन नहीं है, इसलिए दस दिन से कम और ज़्यादा का भी ए'तिकाफ़ किया जा सकता है। हदीस में कम से कम एक दिन एक रात के ए'तिकाफ़ का ज़िक्र आया है।

रमज़ान के अलावा दूसरे महीने में भी ए'तिकाफ़ किया जा सकता है, जैसाकि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से साबित है।

अगर किसी ने ए'तिकाफ़ की निय्यत की (नज़र नहीं मानी) मगर हालात की वजह से ए'तिकाफ़ नहीं कर सका तो उस पर कुछ नहीं है।

इज्तिमाई ए'तिकाफ़ उस तरह कि एक मस्जिद में कई मो'तकिफ़ (ए'तिकाफ़ करने वाले) हों जाएं जाइज़ है, मगर इज्तिमाई सूरत से ज़िक्र या दुआ या इबादत करना सूफ़ियाओं की तरह जाइज़ नहीं है।

ए'तिकाफ़ से मुताल्लिक़ बाज़ ज़ईफ़ अहादीस:

(1)مِن اعتَكَفَ عشرًا في رمضانَ كانَ كحجَّتينِ وعُمرتينِ۔(السلسلة الضعيفة:518)

तर्जुमा: जिस शख़्स ने रमज़ान-उल-मुबारक मे दस दिन का ए'तिकाफ़ किया, उसका सवाब दो हज्ज और दो उमरे के बराबर है।"

(2)مَنِ اعتكف يومًا ابتِغاءَ وجهِ اللهِ ؛ جعل الله بينَه وبينَ النارِ ثلاثةَ خنادقَ ، كُلُّ خَندَقٍ أبْعدُ مِمَّا بينَ الخافِقَيْنِ .(السلسلة الضعيفة:5345)

तर्जुमा: "जो शख़्स अल्लाह की रज़ा के लिए एक दिन का ए'तिकाफ़ करता है; अल्लाह तआला उसके और जहन्नुम के

बीच तीन ख़नदक़ो का फ़ासला कर देता है। हर ख़नदक़ मश्रिक़-से मग़रिब के दरमियाँनी फ़ासले से ज़्यादा लंबी है।"

(3)أن رسول الله صلى الله عليه وسلم قال في المعتكف هو يعكف الذنوب ، ويجرى له من

الحسنات كعامل الحسنات كلها(ضعيف ابن ماجه:352).

तर्जुमा: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ए'तिकाफ़ करने वाले के बारे में फ़रमाया: "वह गुनाहों से बाज़ रहता है, और उसके लिए सभी नेकियाँ करने वाले की तरह नेकी लिखी जाती है।"

(4)مَنِ اعتكفَ إيمانًا واحتسابًا غُفِرَ لَهُ ما تَقَدَّمَ مِنْ ذَنْبِهِ (ضعيف الجامع (5452.)

तर्जुमा: "जिसने ईमान और इख़्लास की नियत से ए'तिकाफ़ किया, उसके पिछले सारे गुनाह माफ़ किए जाते हैं।"

(5)لا اعتكافَ إلا في المساجِدِ الثلاثةِ(ضعيف عندشيخ ابن باز،مجموع فتاوى ابن باز25/218)

तर्जुमा: "ए'तिकाफ़ तीन मसाजिद के अलावा किसी मे नही।"

==============

[21].औरत और मर्द की नमाज़ मे कोई फ़र्क़ नही

अवाम (आम जनता) में यह मशहूर हो गया है कि औरतों की नमाज़ मर्दों से अलग है जबकि हक़ीक़त यह है कि औरतों की नमाज़ हूबहू वैसी ही है जैसी मर्दों की है यानी औरतें भी उसी कैफ़ियत में नमाज़ अदा करें जिस कैफ़ियत में मर्द अदा करता है। इस बात को नुसूस की रोशनी में वाज़ेह करूँगा ताकि आपको यक़ीन हो सके कि वाक़ई औरतों को भी मर्दों की तरह ही नमाज़ अदा करना है।

इस बारे में सबसे पहले तजुर्बा और मुशाहिदा पेश करके अक़्ली तौर पर दलाईल को समझने के लिए तैयार करना चाहता हूँ। वह यह है कि हमारे समाज में औरतों की अलग नमाज़ का तसव्वुर और रिवाज बाद की पैदा-वार है, जब से लोगों ने मुहम्मद ﷺ को छोड़कर दूसरों को अपना इमाम बनाना और उनकी तक़लीद करना शुरू किया तब से तक़लीदी फ़िरक़ों की औरतें मर्दों से मुख़्तलिफ़ नमाज़ अदा करती हैं क्योंकि मुक़ल्लिद उलमा ने औरतों के लिए सिमट कर नमाज़ पढ़ने का मुकम्मल मुख़्तस मस्नूई तरीक़ा ईजाद कर रखा है। औरतों का हाथ उठाना, हाथ बांधना, रुकू करना, सजदा करना, क़ा'दा करना सब कुछ मर्दों से अलग बनाया है जबकि हम में से अक्सर लोगों ने हरमैन

शरीफ़ैन की ज़ियारत की है, वहाँ पर अरब ख़वातीन को मर्दों की तरह नमाज़ पढ़ते हुए देखा है।

ये अरब ख़वातीन ने पैगंबर 'अहद रसूल और अहद सहाबा से ही मर्दों की तरह नमाज़ पढ़ते हुए आ रही हैं। यहीं इस्लाम पहले आया और यहीं से इस्लाम दुनिया में फैला है। इसलिए यहाँ का तरीक़ा-ए-नमाज़ हमें यह शु'ऊर देता है कि औरतों के नमाज़ पढ़ने का सही और असली तरीक़ा वही है जिस तरह अरब की ख़वातीन पढ़ रही हैं। ऐसा नहीं है कि सिर्फ़ अरब की ख़वातीन ही मर्दों की तरह नमाज़ पढ़ रही हैं बल्कि दुनिया भर में जहाँ भी तक़लीद से हटकर क़ुरआन और हदीस पर अमल करने वाली बहनें रहती हैं, वो मर्दों की तरह नमाज़ अदा करती हैं क्योंकि शारे शरियत हज़रत मुहम्मद ﷺ ने नमाज़ का एक ही तरीक़ा बताया है। उन्होंने मर्दों के लिए अलग और औरतों के लिए अलग नमाज़ का तरीक़ा नहीं बताया है।

अब चलते हैं दलाइल की तरफ़, पहले क़ुरआन में ग़ौर करें कि अल्लाह तआला ने एक ही किताब क़ुरआन की शक्ल में नाज़िल फ़रमाई है। सारी आयात में मर्द और औरत दोनों शामिल हैं। ऐसा नहीं है कि औरतों का क़ुरआन अलग है और मर्दों का क़ुरआन अलग। अलबत्ता

क़ुरआन की जो आयत औरत या मर्द के लिए ख़ास है, वह औरत या मर्द के साथ ख़ास मानी जाएगी। मगर जो आयात ख़ास नहीं हैं, उनमें मर्दों के साथ औरतें भी शामिल हैं। ठीक यही मामला हदीस का भी है। हदीस की छह मशहूर और मोअतबर किताबों (बुख़ारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, नसाई, तिर्मिज़ी और इब्न माजा) में से हर एक किताब में किताब-उस-सलात का उनवान मौजूद है। इस किताब के तहत शुरू से लेकर आख़िर तक नमाज़ की मुकम्मल तफ़सीलात रकआत, कैफ़ियात और अज़कार व अद'इया से मुताल्लिक़ सारी हदीस मौजूद हैं। इन हदीस को जमा किया जाए तो सैकड़ों की तादाद में होंगी। मगर इन सैकड़ों हदीसों में एक भी हदीस ऐसी नहीं मिलती कि मर्द की नमाज़ अलग है और औरत की नमाज़ अलग है।

पाकिस्तान के मारूफ़ (मशहूर) हनफ़ी इदारे "अल-जामिया अल-बनूरिया अल-आलमिया" से एक ख़ातून ने सवाल किया कि मैं इस्लाम में औरत की नमाज़ के लिए हवाला जानना चाहती हूँ, जैसा कि मैं शुरू करने वाली हूँ। मैं हवाला सिर्फ़ सिहाह सित्ता (छह सहीह किताबें) से चाहती हूँ (सिर्फ़ सजदा और तशह्हुद के बारे में)। प्लीज़ सिर्फ़ इन्हीं किताबों से, दूसरी किताबों से नहीं। इस सवाल पर अहनाफ़ के आलमी इदारे ने जवाब दिया कि सिहाह सित्ता से हवाला तलब करना बड़ी

जुर्रत है। आगे लिखते हैं कि साइला को चाहिए कि बहिश्ती ज़ेवर से नमाज़ का तरीक़ा पढ़कर उस तरीक़े से नमाज़ अदा करे। बाइख़्तिसार। आप यह फ़तवा इदारे की वेबसाइट (www.onlinefatawa.com) पर आईडी 32164 के तहत देख सकते हैं। इस फ़तवे से आप यह जान सकते हैं कि जो लोग औरतों का अलग तरीक़ा-ए-नमाज़ बताते हैं, उनके पास हदीस की उम्म्हात-उल-कुतुब से एक भी दलील नहीं मिलती।

अब एक बुनियादी बात समझ लें कि औरतें भी शरई मसाइल में मर्दों की तरह ही हैं, यानी इस्लाम ने जिस चीज़ का भी हुक्म दिया है, उस हुक्म में औरतें भी शामिल हैं, सिवाय इस्तिस्नाई अहकाम के जो मर्द या औरत के साथ मुख़्तस हैं। नबी ﷺ का फ़रमान है:

إنما النساء شقائق الرجال(السلسلة الصحيحة:2863)

तर्जमा: औरते (शर'ई अहकाम मे) मर्दों की मानिन्द हैं।

नबी ﷺ के इस फ़रमान को ज़हन मे रखते हुए औरत व मर्द की नमाज़ से मुताल्लिक़ आप ﷺ का अहम तरीन फ़रमान मुलाहिज़ा फ़रमाएँ अबू सुलैमान मालिक बिन अल-हुवैरिस ने ब्यान किया:

أَتَيْنَا النبيَّ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ، ونَحْنُ شَبَبَةٌ مُتَقَارِبُونَ، فأقَمْنَا عِنْدَهُ عِشْرِينَ لَيْلَةً، فَظَنَّ أنَّا اشْتَقْنَا أهْلَنَا، وسَأَلَنَا عَمَّنْ تَرَكْنَا في أهْلِنَا، فأخْبَرْنَاهُ، وكانَ رَفِيقًا رَحِيمًا، فَقالَ: ارْجِعُوا إلى أهْلِيكُمْ، فَعَلِّمُوهُمْ ومُرُوهُمْ، وصَلُّوا كما رَأَيْتُمُونِي أُصَلِّي، وإذَا حَضَرَتِ الصَّلَاةُ، فَلْيُؤَذِّنْ لَكُمْ أحَدُكُمْ، ثُمَّ لِيَؤُمَّكُمْ أكْبَرُكُمْ (صحيح البخاري:6008، 7246، 631)

तर्जमा: हम नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में मदीना हाज़िर हुए और हम सब नौजवान और हम उम्र थे। हम नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ बीस दिनों तक रहे। फिर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को ख़्याल हुआ कि हमें अपने घर के लोग याद आ रहे होंगे और नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हमसे उनके मुताल्लिक़ पूछा जिन्हें हम अपने घरों पर छोड़कर आए थे। हमने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को सारा हाल सुना दिया। आप बड़े ही नरम-ख़ू और बड़े रहम करने वाले थे। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि तुम अपने घरों को वापस जाओ और अपने मुल्क वालों को दीन सिखाओ और बताओ और तुम इस तरह नमाज़ पढ़ो जिस तरह तुमने मुझे नमाज़ पढ़ते देखा है। और जब नमाज़ का वक्त आ जाए तो तुम में से एक शख़्स तुम्हारे लिए अज़ान दे फिर जो तुम में बड़ा हो वह इमामत कराए।

इस पूरी हदीस पर गहराई से नज़र डालिए तो पता चलता है कि कुछ सहाबा-ए-किराम नबी ﷺ से दीन और नमाज़ का तरीक़ा सीखकर घर

लौटे। आपने ﷺ उन्हें हुक्म दिया कि तुम जाओ, ये बातें अपने घरवालों को भी सिखाओ और नमाज़ उसी तरह पढ़ना जैसा तुमने मुझे बीस दिन तक नमाज़ पढ़ते हुए देखा है। घरवालों में बीवी भी शामिल है। अगर औरतों की नमाज़ का तरीक़ा अलग होता तो आपने ﷺ उन्हें वाज़ेह रूप से बता दिया होता कि तुम मर्द मेरी तरह नमाज़ पढ़ना और अपने घर की औरतों को मर्दों से अलग नमाज़ की तालीम देना। आपने ऐसा नहीं फ़रमाया, जैसे कि औरत की नमाज़ का तरीक़ा वही है जो मर्दों का है। इस बारे में यह हदीस "तुम उसी तरह नमाज़ पढ़ो जैसा तुमने मुझे पढ़ते हुए देखा है" फ़ैसला कुन (निर्णायक) है।

नीज़, यह हदीस आम है, आम हदीस के तहत औरतें भी शामिल होंगी क्योंकि औरतें शरई अहकाम में मर्दों की तरह हैं। इस बारे में आपने ऊपर दलील भी जान ली है।

मज़कूरा बाला हदीस "वसल्लू कमा राय्तुमूनी उसल्ली" सही बुख़ारी में तीन जगहों पर वारिद है। अब सहीह मुस्लिम से एक सरीह हदीस जो बयान करती है कि औरत और मर्द की नमाज़ बिल्कुल एक जैसी है। चुनांचे सय्यदना सहल बिन साद रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं:

ولقَدْ رَأَيْتُ رَسولَ اللهِ صَلَّى اللَّهُ عليه وسلَّمَ قَامَ عليه فَكَبَّرَ وكَبَّرَ النَّاسُ وراءَهُ، وهو علَى المِنْبَرِ، ثُمَّ رَفَعَ فَنَزَلَ القَهْقَرَى حتَّى سَجَدَ في أصْلِ المِنْبَرِ، ثُمَّ عَادَ، حتَّى فَرَغَ مِن آخِرِ صَلَاتِهِ، ثُمَّ أقْبَلَ علَى النَّاسِ فَقالَ: يا أيُّها النَّاسُ إنِّي صَنَعْتُ هذا لِتَأْتَمُّوا بي، ولِتَعَلَّمُوا صَلَاتِي(صحيح مسلم:1216)

तर्जमा: मैं ने रसूलुल्लाह ﷺ को देखा, आप उस पर खड़े हुए और तकबीर कही, लोगों ने भी आप के पीछे तकबीर कही जबकि आप मेम्बर ही पर थे, फिर आप (ने रुकूअ से सिर उठाया) उठे और उलटे पाँव नीचे उतरे और मेम्बर की जड़ में (जहाँ वो रखा हुआ था) सजदा किया, फिर दोबारा वही किया (मेम्बर पर खड़े हो गए) यहाँ तक कि नमाज़ पूरी कर के फ़ारिग़ हुए, फिर लोगों की तरफ़ मुतवज्जेह हुए और फ़रमाया : लोगो! मैंने ये काम इसलिये किया है। ताकि आप (मुझे देखते हुए) मेरी पैरवी करो और मेरी नमाज़ सीख लो।

इस हदीस से पता चलता है कि नबी ﷺ ने सहाबा को नमाज़ की तालीम देने के लिए मिम्बर पर चढ़कर नमाज़ पढ़ाई ताकि वाज़ेह रूप से नमाज़ की कैफ़ियत और अदायगी देखी जा सके। हमें यह भी पता है कि मस्जिदे नबवी में आपके पीछे मुक्तदी में औरते भी नमाज़ पढ़ती थीं। जब आपने ﷺ मिम्बर पर नमाज़ अदा कर ली तो आपने सहाबा को मुख़ातिब होकर फ़रमाया: "ऐ लोगों! मैंने यह इसलिए किया ताकि तुम मेरी पैरवी करो और मेरी तरह नमाज़ पढ़ना सीखो।" आपका

यह स्पष्ट फ़रमान औरतों के लिए नहीं था? और आपने जिस तरह नमाज़ पढ़ी वह औरतों के लिए नहीं थी? बिल्कुल थी। आपके मिम्बर पर अदा किया गया तरीक़ा-ए-नमाज़ और आपका स्पष्ट फ़रमान कि मुझसे नमाज़ का तरीक़ा सीखो, साफ़-साफ़ बताता है कि औरत और मर्द की नमाज़ का तरीक़ा बिल्कुल एक जैसा है। अगर औरतों के तरीक़े-ए-नमाज़ में फ़र्क़ होता तो जब आपने मस्जिदे नबवी में मिम्बर पर चढ़कर मर्दों को नमाज़ की तालीम दी, उसी वक्त औरतों को भी अलग से तालीम देते। मगर आपने ऐसा नहीं किया, जो इस बात की ठोस दलील है कि औरत भी मर्दों की तरह नमाज़ पढ़ेगी।

नमाज़ एक इबादती मामला है, जिब्रील अलैहिस्सलाम आसमान से नाज़िल होकर नबी ﷺ को नमाज़ पढ़ाते हैं और नमाज़ों के वक़्त से आगाह करते हैं। सही बुख़ारी में अबू मुसअद रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान किया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से सुना, आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमा रहे थे:

سَمِعْتُ رَسولَ اللَّهِ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ يقولُ: نَزَلَ جِبْرِيلُ فأمَّنِي، فَصَلَّيْتُ معهُ، ثُمَّ صَلَّيْتُ معهُ، ثُمَّ صَلَّيْتُ معهُ، ثُمَّ صَلَّيْتُ معهُ، ثُمَّ صَلَّيْتُ معهُ يَحْسُبُ بأَصَابِعِهِ خَمْسَ صَلَوَاتٍ(صحيح البخاري:3221)

तर्जमा: जिब्राईल अलैहिस्सलाम नाज़िल हुए और उन्होंने मुझे नमाज़ पढ़ाई। मैंने उनके साथ नमाज़ पढ़ी फिर (दूसरे वक़्त की) उन के साथ मैंने नमाज़ पढ़ी फिर उन के साथ मैंने नमाज़ पढ़ी फिर मैंने उन के साथ नमाज़ पढ़ी फिर मैंने उन के साथ नमाज़ पढ़ी अपनी उँगलियों पर आप ने पाँचों नमाज़ों को गिनकर बताया।

नमाज़ एक ऐसी इबादत है जिसमें अपनी मर्ज़ी से बाल बराबर भी कोई अमल अंजाम नहीं दिया जाएगा, यह अल्लाह की तरफ़ से नाज़िल की गई है। रसूलुल्लाह ﷺ की वफ़ात के सौ साल, दो सौ साल बाद किसी इमाम या आलिम को कैसे इख़्तियार मिलेगा कि वह औरतों की नमाज़ का अलग तरीक़ा बयान करे या किसी उम्मती को कैसे इजाज़त है कि वह हदीस रसूल को छोड़कर उलमा के अक़वाल के मुताबिक़ अल्लाह की इबादत करे? हम देखते हैं कि अहनाफ़ के यहाँ औरतों की नमाज़ मर्दों से बिल्कुल अलग बयान की जाती है। यह इबादत में मनमानी और अल्लाह के दीन को बदल देना है। अल-हिफ़्ज़ व अल-अमां।

मज़कूरा बाला सारी दलीलों से वाज़ेह है कि औरतों की नमाज़ मर्दों जैसी है, फिर भी एक ख़ास दलील जो औरतों से ही मुताल्लिक़ है, उसे भी ज़िक्र करना मुनासिब समझता हूँ।

जलील अल-क़दर सहाबी अबू दर्दा अंसारी रज़ियल्लाहु अन्हु की बीवी उम्म-ए-दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हा के बारे में फ़क़ीह उम्मत, अमीरुल मोमिनीन फ़ी हदीस इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाह अलैह ने अपनी तीन किताबों में ज़िक्र किया है कि उम्म-ए-दर्दा मर्दों की तरह नमाज़ अदा करती थीं। तीनों किताबों की इबारत के साथ इस दलील का इल्म हासिल करते हैं।

पहली किताब: क़ुरआन के बाद धरती की सबसे मोतबर किताब सही बुख़ारी में "بابُ سُنَّةِ الْجُلُوسِ فِي التَّشَهُّدِ" (बाब: तशह्हुद में बैठने का मस्नून तरीक़ा) के तहत इमाम बुख़ारी ने मुअल्लक़ा ज़िक्र किया है।

"وكانت ام الدرداء تجلس في صلاتها جلسة الرجل وكانت فقيهة."

तर्जमा: उम्म-ए-दर्दा रज़ियल्लाहु ताआला अन्हा फ़क़ीह थीं और वह नमाज़ में (तकबीर के दौरान) मर्दों की तरह बैठती थीं, यानी उम्म-ए-दर्दा एक आलिमा और फ़क़ीह थीं और वे नमाज में मर्दों की तरह तशह्हुद करती थीं।

दूसरी किताब: अब्द रबा बिन सुलैमान बिन उमैर शामी रहिमहुल्लाह कहते हैं:

رَأَيْتُ أُمَّ الدَّرْدَاءِ "تَرْفَعُ يَدَيْهَا فِي الصَّلَاةِ حَذْوَ مَنْكِبَيْهَا حِينَ تَفْتَتِحُ الصَّلَاةَ , وَحِينَ تَرْكَعُ وَإِذَا

قَالَ: «سَمِعَ اللَّهُ لِمَنْ حَمِدَهُ» رَفَعَتْ يَدَيْهَا, وَقَالَتْ: «رَبَّنَا وَلَكَ الْحَمْدُ» (جزء رفع اليدين للبخاري: 24)

तर्जमा: मैंने उम्म-ए-दर्दा रज़ियल्लाहु ताआला अन्हा को देखा, वह नमाज़ में कंधों तक रफ़-उल-यदैन करती थीं। जब नमाज़ शुरू करतीं और जब रुकू करतीं। और जब (इमाम) سمع اللَّهُ لِمَنْ حَمِدَهُ कहते तो रफ़'-उल-यदैन करतीं और फ़रमाती थीं "रब्बना वलाकल हम्द"।

तीसरी किताब: सही बुख़ारी की मुअल्लक़ हदीस को इमाम बुख़ारी ने इन्हीं अल्फाज़ के साथ अपनी किताब अल-तारीख़ अल-सग़ीर (906) में मक़हूल के वसीला से ज़िक्र किया है और शैख़ अल्बानी रहमतुल्लाह अलैह ने इसकी सनद को सफ़त सलात अल-नबी के सफ़ा 189 पर सही क़रार दिया है।

यह ख़ास हदीस औरतों के बाब में इस बात की ख़ास दलील है कि औरतें भी मर्दों की ही तरह नमाज़ अदा करेंगी। अगर इस हदीस के बारे में कोई यह कहता है कि सिर्फ़ एक औरत मर्दों जैसी नमाज़ पढ़ती थी और बाक़ी औरतें मर्दों जैसी नमाज़ नहीं पढ़ती थीं, तो यह बड़ी जाहिलिय्यत और कोताह-फ़हमी है। इस हदीस में क़तअन नहीं ज़िक्र किया गया कि सिर्फ़ एक औरत मर्दों जैसी नमाज़ पढ़ती थी

बल्कि रावी की नज़र जिस ख़ातून पर पड़ी, उन्होंने उस ख़ातून के बैठने की कैफ़ियत बयान की है। यहाँ एक बड़ा इल्मी नुक्ता यह भी समझ में आता है कि अगर इस सहाबी की नमाज़ सुन्नत के ख़िलाफ़ होती तो रावी ज़रूर टोके या यह ज़िक्र करते कि वह ख़ातून नमाज़ में सुन्नत की मुख़ालिफ़त कर रही थी। रावी का महज़ कैफ़ियत बताना इस बात की दलील है कि औरत की नमाज़ मर्दों की तरह है और इस दौर की आम औरतों ने भी मर्दों की तरह नमाज़ पढ़ी।

इस पस-मंज़र में सजदा से मुताल्लिक़ सहीहैन की एक हदीस पर भी ग़ौर करें, अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान किया कि नबी करीम ﷺ ने फरमाया:

اعْتَدِلُوا فِي السُّجُودِ، وَلاَ يَبْسُطْ أَحَدُكُمْ ذِرَاعَيْهِ انْبِسَاطَ الكَلْبِ(صحيح البخاري:822)

तर्जमा : सजदा मे एतिदाल को मलहूज़ रखो और तुम मे से कोई अपने बाज़ को कुत्ते की तरह न फैलाए।

इस हदीस में नबी ﷺ ने हर किसी को मुख़ातिब करके फ़रमाया है कि तुम में से कोई भी सजदा करते वक्त कुत्ते की तरह बाज़ू न फैलाए। क्या इस हुक्म में औरत शामिल नहीं है? बिलकुल शामिल है। इस

हदीस की बुनियाद पर औरतें भी उसी तरह सजदा करेंगी जैसे मर्द सजदा करते हैं और सजदा करते हुए कुत्तों की कैफ़ियत से बचेंगी।

ग़ौर से, पूरी बहस का ख़ुलासा यह हुआ कि एक औरत अपनी नमाज़ बिल्कुल वैसे ही पढ़े जैसे मर्द पढ़ते हैं और मर्दों में भी वह मर्द जो रसूलुल्लाह ﷺ की तरह नमाज़ अदा करता है। नियत, इक़ामत, तक़बीरा, रफ़-उल-यदैन, क़ियाम, रुकू, क़ौमा, सजदा, जल्सा, क़दा और सलाम सब कुछ हदीस की रौशनी में होना चाहिए और ये सारे अमल मर्दों और औरतों के लिए एक जैसे हैं, ठीक वैसे ही जैसे औरतें भी नमाज़ की रकअत उतनी ही अदा करेंगी जितनी रकअत मर्द अदा करते हैं और दौरान नमाज़ वही कलाम पढ़ेंगी जो मर्द पढ़ते हैं। यानी औरत और मर्द की नमाज़ में न रकअत में फ़र्क़ है, न अज़कार और दुआ में फ़र्क़ है, और न कैफ़ियत और औसाफ़ में फ़र्क़ है क्योंकि इनमें तफ़रीक़ की कोई सही दलील नहीं है।

आख़िर में मैं उन लोगों के गुमराहियों को भी दूर करना चाहता हूँ जो औरतों की इज़्ज़त और हया का नाम लेकर उनके लिए हया के आधार से नमाज़ का मसनूई तरीक़ा ईजाद करते हैं। मुक़ल्लिद लोग तो अपनी औरतों को मस्जिद में जाने से मना करते हैं, फिर भी नमाज़

का तरीक़ा औरतों के लिए अलग से तैयार करके बताते हैं जबकि नबी ﷺ के ज़माने में औरते मस्जिदे नबवी में हाज़िर होकर रसूल के पीछे नमाज़ अदा करती थीं। होना तो यह चाहिए था कि औरतों की हया के लिहाज़ से मस्जिद में हाज़िर होने वाली औरतों की नमाज़ अलग होती क्योंकि वे मर्दों के साथ एक ही मस्जिद में नमाज़ अदा करती थीं, जबकि रसूलुल्लाह ﷺ ने औरतों की अलग नमाज़ नहीं बताई।

बेशक, औरत औरत है, हया और पर्दे की चीज़ है, इसलिए नमाज़ के मुताल्लिक़ से औरतों के लिए जो मुनासिब अहकाम थे, वह रसूलुल्लाह ﷺ ने बयान कर दिए। इस बारे में कुछ हदीसें मुलाहिज़ा फ़रमाएँ:

(1) औरत (महिला) की नमाज़ मस्जिद के बजाय घर में बेहतर है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

صلاةُ المرأةِ في بيتِها أفضلُ من صلاتِها في حجرتِها وصلاتُها في مَخدعِها أفضلُ من صلاتِها في بيتِها(صحيح أبي داود:570)

तर्जमा: औरतों की नमाज़ उसके अपने घर में आंगन के बजाय कमरे के अंदर ज़्यादा बेहतर है, बल्कि कमरे के बजाय (अंदरूनी) कोठरी में ज़्यादा बेहतर है।

(2) औरत मस्जिद में भी नमाज़ पढ़ सकती है लेकिन ख़ुशबू लगाकर न आएं। ज़ैनब सक़फ़ीया रज़ियल्लाहु तआला अन्हा बयान करती हैं कि नबी करीम ﷺ ने फ़रमाया:

إذا خرجتْ إحداكنَّ إلى المسجدِ فلا تقْرَبنَّ طِيبًا(صحيح الجامع:501)

तर्जमा: जब तुम में से कोई औरत मस्जिद की तरफ़ जाए तो वह ख़ुशबू के क़रीब भी न जाए।

(3) बालिग़ा औरत बिना दुपट्टे के नमाज़ न पढ़े, उम्मुल मोमिनीन आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

لا يقبلُ اللّهُ صلاةَ حائضٍ إلّا بخِمارٍ(صحيح أبي داود:641)

तर्जमा: बालिग़ा औरत की नमाज़ बिना ओढ़नी के अल्लाह तआला क़बूल (स्वीकार) नहीं करता।

(4) मस्जिद में औरत और मर्द एक साथ नमाज़ पढ़ने पर औरतों की सफ़ मर्दो से पीछे होगी। सय्यदना अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

خَيْرُ صُفُوفِ الرِّجالِ أوَّلُها، وشَرُّها آخِرُها، وخَيْرُ صُفُوفِ النِّساءِ آخِرُها، وشَرُّها أوَّلُها (صحيح مسلم: 440)

तर्जमा: मर्दों की सफ़ो में सबसे बेहतर पहली सफ़ है और सबसे बुरी आख़िरी सफ़ है। और औरतों के लिए सबसे बुरी पहली सफ़ है (जबकि मर्दों की सफ़े उनके क़रीब हों) और अच्छी सफ़ पिछली सफ़ है। (जो कि मर्दों से दूर हो)।

(5) औरत मर्दों की इमामत नहीं कर सकती है, न मर्दों के साथ नमाज़ पढ़ते वक्त (समय) आवाज़ निकाल सकती है, अगर मर्द इमाम से ग़लती हो जाए तो भी उसे ज़बान से आवाज़ नहीं निकालनी चाहिए बल्कि एक हाथ को दूसरे हाथ पर मारकर इमाम को गलती पर तवज्जो देनी चाहिए। सुहैल बिन साद रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया:

التسبيحُ للرجالِ، والتصفيحُ للنساءِ (صحيح البخاري: 1204)

तर्जमा: तस्फ़ीक़ (ख़ास तरीक़े से एक हाथ को दूसरे हाथ पर मारना) औरतों के लिए है और तस्बीह (सुब्हानल्लाह कहना) मर्दों के लिए है।

ये सारे अहकाम औरतों को फ़ितने से बचाने, उनकी इज़्ज़त और पाकीज़गी की हिफ़ाज़त करने और उनकी शर्म और हया का ख़्याल

रखने से मुताल्लिक़ हैं। इन अहकाम का ये मतलब नहीं है कि औरतों की नमाज़ मर्दों से अलग है, बल्कि मतलब ये है कि औरतों की नमाज़ तो मर्दों की तरह ही है लेकिन उनकी इज़्ज़त का ध्यान रखते हुए उनके लिए कुछ ख़ास अहकाम भी बयान किए गए हैं।

कुछ लोग इन बातों से उम्मत को धोखा देते हुए कहते हैं कि देखो, औरतों को मर्दों से अलग हुक्म दिया जा रहा है, इसलिए उनकी नमाज़ मर्दों से अलग है। यह पूरी तरह से धोखा है। यहाँ पर औरतों की इज़्ज़त का ख़्याल रखते हुए उन्हें कुछ अलग अहकाम दिए जा रहे हैं, इन बातों का हरगिज़ ये मतलब नहीं है कि औरतों की नमाज़ का तरीक़ा मर्दों से अलग है।

इस बात को इस तरह समझें कि इमाम पहले तकबीर-ए-तहरीमा कहेगा और नमाज़ शुरू करेगा, उसके बाद मुक्तदी (अनुसरणकर्ता) चाहे वह मर्द हो या औरत, इमाम के बाद तकबीर कहकर नमाज़ में शामिल होगा, इमाम से पहले कोई मुक्तदी तकबीर नहीं कहेगा। फिर नमाज़ के सभी हालात में इमाम पहले होगा और मुक्तदी इमाम के पीछे उसकी अनुसरण करेगा। मुक्तदी में जो क़ुरआन का ज़्यादा जानकार होगा, वह इमाम बनेगा, मुक्तदी में जो ज़्यादा अक़्ल और समझ वाले

होंगे, वे इमाम के करीब खड़े होंगे, फिर उनके बाद वाले, फिर उनके बाद वाले। सफ़-बंदी में बड़े मर्द आगे होंगे और बच्चे बाद वाली सफ़ो में होंगे। क्या इन अहकाम और मसाइल का यह मतलब है कि मर्दो की नमाज़ भी मर्दो से मुख़्तलिफ़ (अलग) है? हरगिज़ नहीं। यह नमाज़ से मुताल्लिक़ कुछ अहकाम हैं, मगर तरीक़ा एक ही है। ठीक उसी तरह नमाज़ से मुताल्लिक़ औरतों के लिए कुछ ख़ास मसाइल हैं, मगर उनकी नमाज़ का तरीक़ा भी वही है जो मर्दो का है।

कुछ लोग उम्मत को इस तरह धोखा देते हैं कि हज भी नबी ﷺ के तरीक़े पर करना है, लेकिन तवाफ़ और सई में औरतों को रमल नहीं करना है बल्कि धीरे चलना है, और औरतों के धीरे चलने की कोई अलग से दलील नहीं है। उलमा औरतों की हया का ख़्याल रखते हुए धीरे चलने का हुक्म देते हैं, इसी तरह नमाज़ का मसला भी है। औरतों की हया के कारण उन्हें सिमटकर नमाज़ पढ़ने को कहा जाता है।

इस बात का जवाब यह है कि अव्वलन (पहला) : नमाज़ को हज के तवाफ़ और सई पर क़ियास करना ही ग़लत है। तवाफ़ और सई में आदमी बातें कर सकता है, खा पी सकता है, हंस सकता है, अगर थक जाए तो बैठ सकता है वग़ैरह, लेकिन ये बातें नमाज़ में मना हैं और

इनसे नमाज़ बातिल होती है। सानियन (दूसरा) : नमाज़ पढ़ने का पूरा तरीका हमें रसूलुल्लाह ﷺ ने बता दिया है, जिसमें औरत और मर्द दोनों शामिल हैं, इसलिए किसी बाहरी से नमाज़ का तरीक़ा लेने की बिल्कुल ज़रूरत नहीं है। और मैंने पहले भी बताया है कि इबादत में एक बाल बराबर भी कोई अपनी इच्छा से अमल नहीं करेगा, जबकि मुक़ल्लिदो के यहाँ औरतों की पूरी नमाज़ बनावटी है, वह कैसे सही हो सकती है? सालिसन (तीसरा): औरतों के रमल के मुताल्लिक़ में मरफ़ू हदीस भले ही नहीं है, लेकिन कई आसार से साबित है। बैहक़ी ने आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा, मुसनद इब्न अबी शैबा में इब्न उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से, इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा और हसन व अता से मरवी है। इब्न मुंज़िर ने इज्मा नक़ल किया है कि औरतों पर रमल नहीं है और दीन में इज्मा भी हुज्जत है, जबकि नमाज़ का मामला रमल से अलग है। यहाँ पर सब कुछ मरफ़ू हदीसों से, यानी मुकम्मल नमाज़ का तरीक़ा रसूलुल्लाह ﷺ से साबित है, और जहां मोहम्मद रसूलुल्लाह ﷺ का तरीक़ा मौजूद हो, वहां किसी और का तरीक़ा और क़ौल अपनाने की कोई गुंजाइश नहीं है। मतलब यह है कि जहां शरीयत चुप है, वहां उम्मत अगर किसी बात पर इज्मा कर ले तो यह दलील है, लेकिन जहां शरीयत मौजूद है, वहां किसी क़ौल और इज्मा की कोई ज़रूरत नहीं है।

कुछ लोग यह कहकर धोखा देते हैं कि औरतों को सिमट कर नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा अस्लाफ़ से मनक़ूल है, बल्कि मरफ़ू हदीसें भी मिलती हैं। इसलिए इससे मुताल्लिक़ कुछ मारूफ़ रिवायतें और कुछ आसार पेश किए जाते हैं। इन सब का ज़िक्र (उल्लेख) करने और तज्ज़िया (विश्लेषण) करने का यह मक़ाम नहीं है। एक शेर से इस बात को समझने की कोशिश करें: (होते हुए मुस्तफ़ा (ﷺ) की गुफ़्तार - मत देख किसी का क़ौल-ओ-किरदार)

अल्लाह ने कुरआन में कई जगहों पर अपनी और उसके रसूल की इत्तिबा करने का हुक्म दिया है, यानी दीन सिर्फ़ अल्लाह और उसके रसूल से लिया जाएगा। दूसरी बात यह है कि औरत और मर्द की नमाज़ के तरीक़े में फ़र्क़ से मुताल्लिक़ जो भी दलील दी जाती है, चाहे वह क़ौल हो या हदीस, कोई भी साबित और सही नहीं है।

जब कोई चीज़ साबित ही न हो तो उससे दलील पकड़ना बेकार है। बल्कि ऊपर जामिया बनुरिया का फ़तवा देखा जा चुका है, उनके हिसाब से सही सित्ता यानी सबसे मो'तबरीन (विश्वसनीय) हदीस की छः किताबों में औरत और मर्द की नमाज़ में फ़र्क़ की एक भी दलील मौजूद नहीं है, जबकि इन सभी छः किताबों में "किताब अल-सलात"

क़ाइम करके सभी मुहद्दिसीन ने नमाज़ की सभी मरफ़ू रिवायतें (रसूल अल्लाह का नमाज़ का तरीक़ा) ज़िक्र कर दिया है जिनमें नमाज़ की शुरुआत से लेकर अंत तक सारी कैफ़ियात मनक़ूल हैं, यहां तक कि नमाज़ का सबसे छोटा पहलू भी ज़िक्र से खाली नहीं है। बाक़ी जिन दलीलों से हनफ़ी इस्तिदलाल करके औरतों की नमाज़ अलग बताते हैं, वे सब नाक़ाबिल-ए-एतिबार हैं। उनकी हक़ीक़त जानने के लिए हाफ़िज़ सलाहुद्दीन यूसुफ़ रहिमहुल्लाह की मुख़्तसर किताब "क्या औरतों का तरीक़ा नमाज़ मर्दों से अलग है?" का मुताल'अ (अध्ययन) फ़ायदेमंद होगा। इस किताब को दारुस्सलाम ने शाए (प्रकाशित) किया है और किताब व-सेंट डॉट-कॉम पर दस्तियाब है।

अल्लाह तआला से दुआ है कि लोगों को हक़ पर चलने और मुसलमानों में से औरत और मर्द को रसूल अल्लाह ﷺ के तरीक़े के मुताबिक़ इबादत करने की तौफ़ीक़ बख़्शे। आमीन।

==========

[22]औरतो के लिए अज़ान और इक़ामत का हुक्म

नमाज़ में अज़ान व इक़ामत सिर्फ़ मर्दों के हक़ में मशरू है क्योंकि मर्दों पर जमात के साथ नमाज़ पढ़ना वाजिब है जबकि औरतों की नमाज़ अपने घर में अदा करना बेहतर है। यह अलग मसला है कि औरत अगर मर्दों के साथ जमात से नमाज़ पढ़ना चाहे तो पढ़ सकती है, शरियत ने इजाज़त दी है।

जब औरत को अकेले घर में नमाज़ पढ़ना है तो अज़ान की ज़रूरत ही नहीं और न ही इक़ामत की, जैसे ही किसी नमाज़ का वक़्त हो जाए बिना अज़ान का इंतज़ार किए अपनी नमाज़ इंफ़्रादी तौर पर पढ़ सकती है, बख़िलाफ़ मर्दों के कि उनके लिए अज़ान मशरू है, पहले अज़ान दे फिर इक़ामत कहकर जमात से नमाज़ अदा करे। आगे इस बात की दलील भी ज़िक्र की जाएगी।

अज़ान दूसरों को नमाज़ की इत्तिला देने और मस्जिद में हाज़िर होने के लिए दी जाती है और इक़ामत भी नमाज़ की जमात खड़ी होने की इत्तिला देने के लिए है। यहाँ यह मसला भी वाज़ेह रहे कि मर्दों के हक़ में भी अज़ान व इक़ामत फ़क़त मशरू है, यानी अगर किसी ने

बिना अज़ान के नमाज़ अदा कर लिया या किसी ने बिना इक़ामत के नमाज़ पढ़ लिया तो नमाज़ अपनी जगह सही है, इसे दोहराने की ज़रूरत नहीं है। हालांकि क़सदन (जानबूझकर) अज़ान या इक़ामत छोड़ कर नमाज़ नहीं अदा करना है।

हाँ, एक मसला यह भी है कि अगर कई औरतें मिलकर जमात से फ़र्ज़ नमाज़ अदा करें, तो इस सूरत में उनके हक़ में अज़ान व इक़ामत का क्या हुक्म है? मसलन, एक निसवाँ इदारा है जहाँ पाँच वक़्त की औरतों की जमात होती है, तो उस जगह औरतों को हर नमाज़ के लिए अज़ान देनी चाहिए और जमात खड़ी होने से पहले इक़ामत कहनी चाहिए या नहीं?

नमाज़ का मामला तौक़ीफ़ी है, हमें इस सिलसिले में अपने मन से कुछ नहीं कहना है और न ही लोगों के क़ौल या ज़ईफ़ और मौज़ू हदीसों से इस्तिदलाल किया जाएगा। जब हम औरतों की नमाज़ और उनकी जमात के सिलसिले में सही हदीसें तलाश करते हैं, तो यह सबूत ज़रूर मिलता है कि एक औरत दूसरी औरतों की जमात करा सकती है, चाहे फ़र्ज़ नमाज़ हो या नफ़्ल नमाज़। लेकिन औरतों के हक़ में अज़ान व इक़ामत की कोई सही मर्फ़ू हदीस नहीं मिलती है।

हालांकि सही दलीलों से इस बात का इशारा ज़रूर मिलता है कि औरतों के हक़ में अज़ान व इक़ामत नहीं है। सय्यदा उम्मे वर्क़ा बिन्त अब्दुल्लाह बिन हारिस से रिवायत है:

كانَ رسولُ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ علَيهِ وسلَّمَ يَزورُها في بَيتِها ، وجعلَ لَها مؤذِّنًا يؤذِّنُ لَها ، وأمرَها أن تؤمَّ أهلَ دارِها(صحيح أبي داود:592)

तर्जमा: रसूल अल्लाह ﷺ उनके घर में मिलने के लिए आया करते थे और उनके लिए एक मुअज़्ज़िन मुक़र्रर किया था जो उनके लिए अज़ान देता था और आपने उन्हें (उम्मे वर्क़ा को) हुक्म दिया था कि अपने घर वालों की इमामत करें।

इस हदीस से पता चलता है कि अगर औरतों का अज़ान देना मशरू होता तो आप ﷺ उम्मे वर्क़ा और उनके घर की औरतों के लिए मर्द मुअज़्ज़िन का इंतिख़ाब नहीं करते बल्कि उन्ही में से किसी एक औरत को या उम्मे वर्क़ा को अज़ान देने पर मामूर करते, मगर आप ﷺ ने ऐसा नहीं किया।

इसी तरह सय्यदना मालिक बिन हुवेरिस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है, उन्होंने फ़रमाया:

أتيتُ النَّبيَّ صلَّى اللَّهُ عليهِ وسلَّمَ أنا وصاحِبٌ لي فلمَّا أردنا الانصرافَ قالَ لنا إذا حضرَتِ الصَّلاةُ فأذِّنا وأقيما وليؤمَّكما أكبرُكُما(صحيح ابن ماجه:806)

तर्जमा: मैं और मेरा एक साथी नबी ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुए। जब हमने वापस (वतन) जाने का इरादा किया तो आप ﷺ ने हमसे फ़रमाया: जब नमाज़ का वक़्त हो जाए तो तुम लोग अज़ान और इक़ामत कहना और तुम्हारा इमाम वह बने जो तुम दोनों में से ज़्यादा बड़ा है।

इस हदीस में जिस तरह नबी ﷺ ने मर्दों को मुख़ातिब होकर अज़ान व इक़ामत और जमात का हुक्म दिया है, उस तरह किसी मर्फ़ू हदीस से औरतों के हक़ में अज़ान व इक़ामत का सबूत नहीं मिलता है। हालांकि यह असर "ليس على النِّساءِ أذانٌ ولا إقامةٌ" कि औरतों पर अज़ान व इक़ामत नहीं है, साबित नहीं है।

इस मसले में बाज़ उलमा ने औरतों के हक़ में अज़ान व इक़ामत दोनों और बाअज़ ने सिर्फ़ इक़ामत को मुबाह कहा है और इस्तिदलाल के तौर पर नबी ﷺ का यह एक फ़रमान पेश किया जाता है:

إنَّما النِّساءُ شقائقُ الرِّجالِ(صحيح أبي داود:236)

तर्जमा: हाँ! औरतें (भी) बेशक मर्दों ही की मानिंद हैं।

बेशक औरतें भी मर्दों की मानिंद हैं मगर तमाम चीज़ों में नहीं, जैसा कि हम उनकी फ़ितरत, जिन्स और ख़ल्क़त मर्दों से मुख़्तलिफ़ पाते हैं। जिस हदीस में औरतों को मर्दों की मानिंद क़रार दिया गया है, वहां मसला एहतिलाम का है कि एहतिलाम हो जाने पर मर्दों की तरह औरतों पर भी गुस्ल है।

ख़ुलासा कलाम यह हुआ कि औरतों के हक़ में अज़ान व इक़ामत मशरू नहीं है।

वल्लाहु आलम

[23].औरतों के लिए राह (रास्ते में) चलने के आदाब

एक बहन ने सवाल भेजा था कि एक औरत रास्ता चलते हुए किन बातों का ख़याल (ध्यान) करे और चलने का अंदाज़ (तरीक़ा) क्या हो या'नी (मतलब यह कि) वो आहिस्ता (धीरे) चले या तेज़ भी चल सकती है और चलते हुए अपने आप को सीधी रखे या कुछ झुका हुआ मज़ीद और किन बातों को ध्यान में रखना है ?

मुझे यह सवाल काफ़ी अहम मा'लूम हुआ इसलिए सोचा कि इस से मुत'अल्लिक़ (बारे में) अहम मा'लूमात (जानकारी) जमा (इकट्ठा) की जाए ताकि साइला (सवाल करने वाली) के 'अलावा दूसरी मुस्लिम बहनों को भी इस से फ़ाइदा हो चुनांचे मज़कूरा सवाल के तनाज़ुर में शरी'अत-ए-मुतहहरा से जो रहनुमाई मिलती हैं इस को इख़्तिसार (ख़ुलासे) के साथ मुंदरिजा-ज़ेल (नीचे लिखे हुए) सुतूर (lines) में बयान करता हूं एक औरत जब घर से बाहर निकलने का इरादा करती है तो उसे बुनियादी तौर पर पहले तीन बातों का ख़्याल रखना चाहिए।

(1) अल्लाह-त'आला ने एक औरत को अपने घर में सुकूनत इख़्तियार करने का हुक्म दिया है इसलिए औरत अपने घर को लाज़िम पकड़े

और घर से बिला-ज़रूरत बाहर क़दम न निकाले जब औरत को घर से बाहर जाने की ज़रूरत पेश आए तब ही घर से बाहर निकले अल्लाह-त'आला का फ़रमान है:

)وَقَرْنَ فِي بُيُوتِكُنَّ وَلَا تَبَرَّجْنَ تَبَرُّجَ الْجَاهِلِيَّةِ الْأُولَىٰ (الاحزاب:33)

तर्जमा: और अपने घरों में सुकूनत इख़्तियार करो और अगले ज़माना-ए-जाहिलियत की तरह बनाव-सिंगार के साथ न निकला करो।

इस आयत में अल्लाह ने एक तरफ़ औरत को घर में टिक कर रहने का हुक्म दिया है तो दूसरी तरफ़ यह भी मा'लूम होता है कि औरत ज़रूरत के तहत घर से बाहर जा सकती है जाहिली दौर (समय) की तरह ज़ेब-ओ-ज़ीनत (बनाव-सिंगार) का इज़हार कर के नहीं बल्कि बा-पर्दा हो कर।

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु को औरत के घर से निकलने पर बड़ा नागवार लगता था एक मर्तबा का वाक़ि'आ है कि उम्म-उल-मोमिनीन हज़रत सौदा रज़ियल्लाहु अन्हा (पर्दा का हुक्म नाज़िल होने के बाद) क़ज़ा-ए-हाजत (पाख़ाना) के इरादे से बाहर निकली हज़रत उमर आप को भारी-भरकम बदन से पहचान गए और कहा कि किस तरह बाहर

रही हैं ? वो वापस घर पलट गई आप के ही घर रसूलुल्लाह ﷺ थे उन्होंने माजरा (क़िस्सा) बयान किया उतने में वह्य (वही) नाज़िल हुई और आप ﷺ ने फ़रमाया:

(إِنَّهُ قَدْ أُذِنَ لَكُنَّ أَنْ تَخْرُجْنَ لِحَاجَتِكُنَّ)

(صحيح البخارى:4795)

तर्जमा: तुम्हें (अल्लाह की तरफ़ से) क़ज़ा-ए-हाजत (पाख़ाना) के लिए बाहर जाने की इजाज़त दे दी गई है।

इस हदीस से भी मा'लूम हुआ कि औरत ज़रूरत के पेश-ए-नज़र घर से बाहर जा सकती है और वो ज़रूरत क्या हो सकती है 'इलाज के लिए, ज़रूरी मुलाक़ात के लिए, नमाज़ के लिए 'उज़्र (मजबूरी) के तहत ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त (ख़रीदारी) के लिए, शर'ई हद में रहते हुए जाएज़ 'अमल (काम) की अंजाम-दिही (पूरा करने) के लिए और इस क़िस्म (प्रकार) की दूसरी ज़रूरत के लिए जिस के बग़ैर चारा न हो औरत को घर से बिला-ज़रूरत निकलने से क्यूं मना किया जाता है इस की एक बड़ी वजह (कारण) बयान करते हुए नबी ﷺ इरशाद फ़रमाते हैं:

(المرأةُ عورةٌ فإذا خرجتِ استشرفَها الشَّيطانُ)(صحيح الترمذي:1173]

तर्जमा: औरत (संपूर्ण) पर्दा है जब वो बाहर निकलती है तो शैतान उस को ताकता है।

एक दूसरी हदीस में इस तरह आता है नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

(إنَّ المرأةَ عورةٌ ، فإذا خَرَجَتْ استَشْرَفَها الشيطانُ ، وأَقْرَبُ ما تكونُ من وجهِ ربِّها وهي في قَعْرِ بيتِها)

(صحيح ابن خزيمة:1685 وقال الألباني إسناده صحيح)

तर्जमा: औरत तो पर्दा की चीज़ है जब वो घर से निकलती है तो शैतान उस की तरफ़ झाँकता है और औरत अल्लाह के सबसे ज़ियादा क़रीब उस वक़्त होती है जब वो अपने घर के किसी कोने और पोशीदा जगह में हो।

या'नी (मतलब यह कि) औरत शैतान के लिए एक ऐसा वसीला (माध्यम) है जिस के ज़री'आ (द्वारा) औरत और मर्द को गुनाह के रास्ता (मार्ग) पर लगा सकता है इसलिए इस्लाम ने गुनाह के सद्द-ए-बाब (रोक) के तौर पर औरत को बिला-ज़रूरत घर से निकलने पर पाबंदी लगाई है घर में रहने वाली औरत महफ़ूज़-ओ-मामून (सुरक्षित)

और रब से क़रीब होती है और घर से निकलने वाली औरत फ़ित्ना (बुराई) का बा'इस (कारण) बन सकती है।

(2) दूसरी बात यह है कि जब औरत अपने घर से ज़रूरत के तहत बाहर निकले तो मुकम्मल (पूरे तौर पर) हिजाब (नक़ाब) और पर्दा में निकले इस बात की दलील साबिक़ा (पहली) आयत अहज़ाब भी है इस आयत में अल्लाह ने ज़रूरत के तहत बाहर निकलते वक़्त "तबर्रुज" या'नी बनाव-सिंगार का इज़हार (ज़ाहिर) करने से मना

फ़रमाया है मौलाना अब्दुल रहमान किलानी रहिमहुल्लाह इस आयत के तहत "तबर्रुज" की शरह (व्याख्या) करते हुए लिखते हैं: "तबर्रुज" में क्या कुछ शामिल है ? तबर्रुज ब-मा'नी अपनी ज़ीनत (सुंदरता) जिस्मानी (शारीरिक) महासिन (गुण) और मेक-अप दूसरों को और बिल-ख़ुसूस (ख़ास तौर पर) मर्दों को दिखाने की कोशिश करना और इस में पांच चीज़ें शामिल हैं।

(1) अपने जिस्म (शरीर) के महासिन (गुण) की नुमाइश (दिखाना)

(2) ज़ेवरात की नुमाइश (दिखाना) और झंकार

(3) पहने हुए कपड़ों की नुमाइश

(4) रफ़्तार (चाल) में बाँकपन (टेढ़ापन) और नाज़-ओ-अदा (नख़रे)

(5) ख़ुशबू का इस्ते'माल जो ग़ैरों को अपनी तरफ़ मुतवज्जह (आकर्षित) करे।

(तफ़्सीर तैसीर उल-क़ुरआन)

यहां पर इस हदीस को भी मद्द-ए-नज़र (सामने) रखें जब नबी ﷺ ने औरतों को 'ईद-गाह निकलने का हुक्म दिया तो इस पर उम्मे अतिय्या रज़ियल्लाहु अन्हा आप ﷺ से पूछती हैं कि अगर किसी औरत के पास जिल्बाब (बड़ी चादर) न हो तो वो कैसे 'ईद-गाह निकले इस पर आप ने फ़रमाया कि उस की बहन उस को चादर उढ़ाए।

गोया (जैसा) कि हर हाल में औरत मुकम्मल पर्दा के साथ ही बाहर निकले और अगर किसी औरत के पास हिजाब (बुर्क़ा') न हो वो भी किसी दूसरे के हिजाब में ही घर से बाहर निकले 'अहद-ए-रसूल की ख़वातीन (औरतें) चेहरा, हाथ और पैर (पांव) समेत मुकम्मल (पूरे) जिस्म (शरीर) ढाँक कर बाहर निकलती थी कपड़े का दामन (पल्लू) ज़मीन से घसीटता था अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा कहते हैं:

(رَخَّصَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ لِأُمَّهَاتِ الْمُؤْمِنِينَ فِي الذَّيْلِ شِبْرًا ثُمَّ اسْتَزَدْنَهُ فَزَادَهُنَّ

شِبْرًا فَكُنَّ يُرْسِلْنَ إِلَيْنَا فَنَذْرَعُ لَهُنَّ ذِرَاعًا (ابوداؤد:4119، صححه البانى)

तर्जमा: रसूलुल्लाह ﷺ ने उम्महात-उल-मोमिनीन रज़ियल्लाहु अन्हुमा को एक बालिश्त दामन (पल्लू) लटकाने की रुख़्सत (इजाज़त) दी तो उन्होंने इस से ज़ियादा की ख़्वाहिश ज़ाहिर की तो आप ﷺ ने उन्हें मज़ीद (और भी) एक बालिश्त की रुख़्सत (इजाज़त) दे दी चुनांचे (इसलिए) उम्महात-उल-मोमिनीन हमारे पास कपड़े भेजती तो हम उन्हें एक हाथ नाप दिया करते थे।

यहां एक बालिश्त से मुराद निस्फ़ (आधी) पिंडली से एक बालिश्त है जिस की इजाज़त रसूल ﷺ ने दी सहाबियात में पर्दा का शौक़ देखे वो मज़ीद पर्दा का मुतालबा (अनुरोध) करती हैं फिर आप ﷺ ने मज़ीद (और भी) एक बालिश्त की इजाज़त दे दी इस तरह मर्दों के मुक़ाबला में औरत को अपना लिबास (कपड़े) निस्फ़ (आधी) पिंडली से दो बालिश्त नीचे तक रखना है दो बालिश्त बराबर एक हाथ होता है इसलिए इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा निस्फ़ साक़ (आधी पिंडली) से एक हाथ कपड़ा नापते थे यहां एक और हदीस मुलाहज़ा (अध्यन) करे एक ख़ातून (औरत) आप ﷺ से यह सवाल करती हैं कि मैंने 'अर्ज़ (अनुरोध) किया: अल्लाह के रसूल हमारा मस्जिद तक जाने का रास्ता

ग़लीज़ (गंदा) और गंदगियों वाला है तो जब बारिश हो जाए तो हम क्या करे ?

आप ﷺ ने फ़रमाया: क्या इस के आगे फिर कोई इस से बेहतर और पाक रास्ता नहीं है ? मैंने कहा: हां है आप ﷺ ने फ़रमाया:

तो यह इस का जवाब है।

इस हदीस से भी औरत का लिबास ज़मीन से घिसट कर चलने की दलील मिलती है और यहां पर्दा की इस तफ़्सील का मक़्सद है कि आज की ख़वातीन (औरतें) इन बातों से नसीहत हासिल करे और अपनी इस्लाह करे।

(3) तीसरी चीज़ यह है कि औरत ख़ुशबू लगा कर बाहर न निकले अबू मूसा अश'अरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी-ए-करीम ﷺ ने फ़रमाया:

(كلُّ عينٍ زانيةٌ ، والمرأةُ إذا استعطَرت فمرَّت بالمَجلسِ ، فَهيَ كذا وَكذا. يعني زانيةً) (صحيح الترمذي:2786)

तर्जमा: हर आंख ज़िना-कार है और औरत जब ख़ुशबू लगा कर मजलिस के पास से गुज़रे तो वो भी ऐसी-ऐसी है या'नी (मतलब यह कि) वो भी ज़ानिया है।

इस हदीस में ख़ुशबू लगा कर घर से बाहर निकलने वाली औरत के लिए किस-क़दर व'ईद (धमकी) है ऐसी औरत को ज़ानिया कहा गया है क्यूंकि (इसलिए कि) इस ख़ुशबू से लोग उस की तरफ़ माएल (आकर्षित) होगे या'नी वो लोगों को अपनी तरफ़ माएल (आकर्षित) करने का सबब (कारण) बन रही है इसलिए उसके वास्ते सख़्त व'ईद (धमकी) है यही वजह (कारण) है कि औरत को घर से मस्जिद के लिए आने की इजाज़त है लेकिन औरत ने ख़ुशबू लगाई हो तो इस सूरत (स्थिति) में उसे मस्जिद आने की इजाज़त नहीं है अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

(أَيُّما امرأةٍ أصابت بخورًا فلا تشهدنَّ معنا العشاءَ) (صحيح أبي داود:4175)

तर्जमा: जिस औरत ने ख़ुशबू की धूनी (धुआँ) ले रखी हो तो वो हमारे साथ 'इशा के लिए (मस्जिद में) न आए।

इस जगह यह भी ध्यान रहे कि चूड़ी या पाज़ेब (पायल) या कोई ऐसी चीज़ न लगा कर निकले जिससे चलते वक़्त झंकार और आवाज़ पैदा हो क्यूंकि लोग इस आवाज की तरफ़ माएल (आकर्षित) होगे हत्ता कि माएल (आकर्षित) करने वाले पुर-कशिश (खींचने वाले) लिबास (कपड़े) और माएल (आकर्षित) करने वाली कोई सिफ़त (गुण) भी न अपनाए नबी ﷺ ने माएल (आकर्षित) करने वाली औरत और माएल (आकर्षित) वाली औरत (सीधी राह से) के बारे में फ़रमाया:

(لَا يَدْخُلْنَ الْجَنَّةَ وَلَا يَجِدْنَ رِيحَهَا، وَإِنَّ رِيحَهَا لَيُوجَدُ مِنْ مَسِيرَةِ كَذَا وَكَذَا) (مسلم:2128)

तर्जमा: वो जन्नत में न जाएगी बल्कि (किंतु) उस की ख़ुशबू भी उन को न मिलेगी हालांकि जन्नत की ख़ुशबू इतनी दूर से आ रही होगी।

इन बुनियादी बातों को ज़ेहन (मन) में रखते हुए राह (रास्ते में) चलते वक़्त एक औरत को मुंदरिजा-ज़ेल (नीचे लिखी हुई) बातें ध्यान में रखनी चाहिए।

इस त'अल्लुक़ (संबंध) से सबसे पहली बात यह है कि औरत सड़क के किनारे से चले क्यूंकि (इसलिए कि) नबी ﷺ ने औरतों को दरमियान सड़क (रास्ते के बीच में) चलने से मना' फ़रमाया है:

सय्यदना अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

(ليس لِلنِّساءِ وسَطُ الطَّرِيقِ)(السلسلة الصحيحة:856)

तर्जमा: औरतों के लिए रास्ते के दरमियान में (बीच में) चलना दुरुस्त (सही) नहीं।

वैसे आजकल गाड़ियों की वजह (कारण) से 'उमूमन (आम तौर पर) दरमियान सड़क चलना सब के लिए मुश्किल है फिर भी मुख़्तलिफ़ रास्ते अभी भी ऐसे हैं जहां पूरे सड़क पर लोग चलते हैं ऐसे में औरतों को किनारे से चलना चाहिए।

अबू उसैद अंसारी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है:

(أنَّه سَمِعَ رسولَ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ يقولُ وهو خارِجٌ من المسجِدِ، فاختَلَطَ الرِّجالُ مع النِّساءِ في الطَّريقِ، فقال رسولُ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ للنِّساءِ: استأْخِرْنَ؛ فإنَّه ليس لَكُنَّ أنْ تَحقُقْنَ الطَّريقَ، عليكُنَّ بحافَاتِ الطَّريقِ. قال: فكانتِ المرأةُ تَلصَقُ بالجِدارِ حتى إنَّ ثَوبَها ليتعلَّقُ بالجِدارِ من لُصوقِها به) (سنن ابی داؤد:5272، حسنه البانی)

तर्जमा: उन्होंने रसूलुल्लाह ﷺ को उस वक़्त फ़रमाते हुए सुना जब आप ﷺ मस्जिद से बाहर निकल रहे थे और लोग रास्ते में औरतों में मिल जुल गए थे तो रसूलुल्लाह ﷺ ने औरतों से फ़रमाया: "तुम पीछे

हट जाओ तुम्हारे लिए रास्ते के दरमियान (बीच में) से चलना ठीक नहीं तुम्हारे लिए रास्ते के किनारे किनारे चलना मुनासिब (ठीक) है"

फिर तो ऐसा हो गया कि औरतें दीवार से चिपक कर चलने लगी यहां तक कि उनके कपड़े (दुपट्टे वग़ैरा) दीवार में फंस जाते थे।

ज़रा ग़ौर फ़रमाए कि जब नबी ﷺ की तरफ़ से कोई फ़रमान (हुक्म) आ जाता तो इस पर 'अमल करने में सहाबियात किस-क़दर (कितना) शौक़ दिखाती थी- सुब्हान-अल्लाह।

राह (रास्ते में) चलते हुए औरतों के लिए एक अहम (बहुत ज़रूरी) शर'ई हुक्म (शरी'अत हुक्म) निगाह (नजर) नीची कर के चलना है निगाह (नजर) नीची करने का हुक्म मर्दों को भी दिया गया है और ख़ुसूसियत (पाबंदी) के साथ औरतों को भी इस का हुक्म दिया गया अल्लाह-त'आला फ़रमान है:

(وَقُل لِّلْمُؤْمِنَاتِ يَغْضُضْنَ مِنْ أَبْصَارِهِنَّ وَيَحْفَظْنَ فُرُوجَهُنَّ وَلَا يُبْدِينَ زِينَتَهُنَّ إِلَّا مَا ظَهَرَ مِنْهَا ۖ وَلْيَضْرِبْنَ بِخُمُرِهِنَّ عَلَىٰ جُيُوبِهِنَّ) (النور:31)

तर्जमा: और मुसलमान औरतों से कहो कि वो भी अपनी निगाहें (नज़रें) नीची रखे और अपनी 'इस्मत (आबरू) में फ़र्क़ न आने दें और

अपनी ज़ीनत को ज़ाहिर न करे सिवाए इस के जो ज़ाहिर है और अपने गिरेबानों पर अपनी ओढ़नियां डाले रहे।

यह आयत 'आम हालात में भी जहां अजनबी मर्द हज़रात (लोग) हो या राह (रास्ता) चलते हुए या सफ़र करते हुए एक औरत को अपनी निगाहें (नज़रें) नीची कर के ज़ीनत (सुंदरता) को छुपाते हुए और अपने सीनों (छाती) पर ओढ़नी डाले हुए रखे गोया (जैसे) राह (रास्ता) चलते वक़्त एक औरत को बुनियादी तौर पर इन बातों को 'अमल (काम) में लाना है।

मज़कूरा आयत की रौशनी-में यह भी मा'लूम होता है कि औरत इधर-उधर नज़रें घुमाते हुए हर चीज़ को घूरते और देखते हुए और चारों तरफ़ इल्तिफ़ात (ध्यान) करते हुए न चले बल्कि (किंतु) सर झुका कर निगाहें (नज़रें) नीची कर के और सामने देखते हुए चले और ज़रूरत के वक़्त ही नज़र उठाए और इल्तिफ़ात (तवज्जोह) करे

अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु नबी ﷺ के चलने की कैफ़ियत (दशा) बताते हुए कहते हैं:

(اتَّبَعْتُ النبيَّ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ، وخَرَجَ لِحَاجَتِهِ، فَكانَ لا يَلْتَفِتُ، فَدَنَوْتُ منه) (صحيح البخاري:155)

तर्जमा: रसूलुल्लाह ﷺ (एक मर्तबा) रफ़ा'-ए-हाजत (पाख़ाना) के लिए तशरीफ़ ले गए आप ﷺ की 'आदत मुबारक थी कि आप ﷺ (चलते वक़्त) इधर-उधर नहीं देखा करते थे तो मैं भी आप ﷺ के पीछे-पीछे आप ﷺ के क़रीब पहुंच गया।

और भी अहादीस में है कि आप ﷺ चलते हुए इधर-उधर इल्तिफ़ात (तवज्जोह) नहीं करते जैसे ज़ाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत करते हैं:

(كان لا يَلْتَفِتُ ورَاءَهُ إذا مَشَى)(صحيح الجامع:4870)

तर्जमा: या'नी नबी ﷺ चलते वक़्त पीछे मुड़ कर नहीं देखा करते थे।

और एक रिवायत में इस तरह है:

(كان إذا مَشَى لَم يلتَفِت) (صحيح الجامع :4786)

तर्जमा: या'नी आप ﷺ जब चलते तो इधर-उधर इल्तिफ़ात (तवज्जोह) नहीं फ़रमाते।

जब मर्द की हैसियत से नबी ﷺ का यह हाल है तो एक औरत जो सरापा (सर से लेकर पांव तक) पर्दा है इस को और भी इस मु'आमला में हस्सास रहना चाहिए।

औरत के लिए पैर (पांव) मार कर या'नी पटख़ पटख़ कर चलने की मुमान'अत (मनाही) है अल्लाह-त'आला फ़रमाता है:

(وَلَا يَضْرِبْنَ بِأَرْجُلِهِنَّ لِيُعْلَمَ مَا يُخْفِينَ مِن زِينَتِهِنَّ) (النور: 31)

तर्जमा: और इस तरह ज़ोर-ज़ोर से पांव मार कर न चले कि उन की पोशीदा ज़ीनत मा'लूम हो जाए।

इस आयत में औरत की चाल पर पाबंदी लगाई जा रही है कि वो अपने पैरों को ज़मीन पर मार कर न चले जिस से उसके पैरों की ज़ीनत ज़ाहिर हो जाए या पाज़ेब (पायल) वग़ैरा की झंकार (आवाज़) सुनाई देने लगे औरत 'आम चाल जिस में संजीदगी (गंभीरता) और वक़ार (एहतिराम) हो इस तरह चले।

औरत का ज़ेवर उस की शर्म-ओ-हया है और यह ज़ेवर औरत के साथ हमेशा होना चाहिए जब घर से निकले तो राह (रास्ते में) चलते हुए हया (शर्म) के साथ चले और फ़ाहिशा (बद-कार) औरत की तरह मटक-

मटक कर नाज़-ओ-अदा (नख़रे) के साथ न चले आप ने मूसा अलैहिस्सलाम के मदयन सफ़र से मुत'अल्लिक़ (बारे में) दो बहनों का क़िस्सा पढ़ा होगा इस क़िस्सा में एक बहन के आने का ज़िक्र कुछ इस अंदाज़ में है:

(فَجَاءَتْهُ إِحْدَاهُمَا تَمْشِي عَلَى اسْتِحْيَاءٍ) (القصص:25)

तर्जमा: इतने-में उन दोनों औरतों में से एक उनकी तरफ़ शर्म-ओ-हया से चलती हुई आई।

मूसा अलैहिस्सलाम ने अल्लाह से ख़ैर-ओ-भलाई नाज़िल करने की दु'आ की थी अल्लाह ने दु'आ कुबूल फ़रमाईं और दो बहनों में एक हया के साथ मूसा अलैहिस्सलाम के पास आई और कहने लगी कि मेरे बाप आप को बुला रहे हैं ताकि आप ने हमारे (जानवरों) को जो पानी पिलाया है उसकी उजरत (मज़दूरी) दे।

अल्लाह ज़मीन में किसी के लिए ग़ुरूर-व-तकब्बुर (घमंड) से चलना रवा (जाएज़) नहीं है ख़्वाह (चाहे) औरत हो या मर्द और औरत तो सिंफ़-ए-नाज़ुक है उसे मर्द के मुक़ाबला और भी तवाज़ो' ('इज़्ज़त) के साथ चलना चाहिए और अल्लाह को अकड़ू वाली अदा हरगिज़ पसंद

नहीं है इसलिए इस ने अपने बंदों को ज़मीन में अकड़ कर चलने से मना फ़रमाया है और ब-तौर-ए-'इबरत बनी-इस्राईल का यह वाक़ि'आ भी मुलाहज़ा फ़रमाए अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से मर्वी (रिवायत) है उन्होंने बयान किया कि नबी ﷺ ने फ़रमाया:

(بيْنَما رَجُلٌ يَمْشِي في حُلَّةٍ، تُعْجِبُهُ نَفْسُهُ، مُرَجِّلٌ جُمَّتَهُ، إذْ خَسَفَ اللَّهُ بِهِ، فَهو يَتَجَلْجَلُ إلى يَومِ القِيَامَةِ(صحيح البخاري:5789)

तर्जमा: (बनी-इस्राईल में) एक शख़्स एक जोड़ा पहन कर किब्र-ओ-गुरूर (घमंड) में सर-मस्त (मदहोश) सर के बालों में कंघी किए हुए अकड़ कर इतराता जा रहा था कि अल्लाह-त'आला ने उसे ज़मीन में धँसा दिया अब वो क़ियामत तक इस में तड़पता रहेगा या धँसता रहेगा।

राह (रास्ते में) चलते हुए बहुत सारे लोगों के पास से औरत का गुज़र हो सकता है ऐसे में किसी अजनबी मर्द को सलाम करना या किसी मर्द का औसत को सलाम करना कैसा है ?

सहल रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है:

(كُنَّا نَفْرَحُ يومَ الجُمُعَةِ قُلتُ: ولِمَ؟ قالَ: كَانَتْ لَنَا عَجُوزٌ، تُرْسِلُ إلى بُضَاعَةَ قالَ ابنُ مَسْلَمَةَ: نَخْلٍ بالمَدِينَةِ فَتَأْخُذُ مِن أُصُولِ السِّلْقِ، فَتَطْرَحُهُ في قِدْرٍ، وتُكَرْكِرُ حَبَّاتٍ مِن شَعِيرٍ، فَإِذَا صَلَّيْنَا

الجُمُعَةَ انْصَرَفْنَا، ونُسَلِّمُ عَلَيْهَا فَتُقَدِّمُهُ إِلَيْنَا. فَنَفْرَحُ مِن أَجْلِهِ، وما كُنَّا نَقِيلُ ولَا نَتَغَدَّى إِلَّا بَعْدَ الجُمُعَةِ(صحيح البخاري:6248)

तर्जमा: हम जुम'आ के दिन ख़ुश हुआ करते थे मैंने 'अर्ज़ (गुज़ारिश) की किस लिए ? फ़रमाया कि हमारी एक बुढ़िया थी जो मक़ाम-ए-बूज़ाआ जाया करती थी इब्ने सलमा ने कहा कि बूज़ाआ मदीना-मुनव्वरा का खजूर का एक बाग़ था फिर वो वहां से चुक़ंदर (beet) लाया करती थी और उसे हाँडी में डालती थी और जौ के कुछ दाने पीस कर (उसमें मिलाती थी) जब हम जुम'आ की नमाज़ पढ़ कर वापस होते तो उन्हें सलाम करने आते और वो यह चुक़ंदर की जड़ में आटा मिली हुई दा'वत हमारे सामने रखती थी हम इस वजह (कारण) से जुम'आ के दिन ख़ुश हुआ करते थे और क़ैलूला या दोपहर का खाना हम जुम'आ के बाद करते थे।

इस हदीस से मा'लूम होता है कि मर्द हज़रात औरत को सलाम कर सकते है इसलिए इमाम बुख़ारी रहिमहुल्लाह ने बाब बाँधा है

(بَابُ تَسْلِيمِ الرِّجَالِ عَلَى النِّسَاءِ، وَالنِّسَاءِ عَلَى الرِّجَالِ)

(बाब: मर्दों का औरतों को सलाम करना और औरतों का मर्दों को)

नबी ﷺ भी औरतों को सलाम करते थे शहर बिन हौशब कहते हैं कि उन्हें असमा बिंत यज़ीद रज़ियल्लाहु अन्हा ने ख़बर दी है:

(مرَّ علينا النبيُّ صلَّى اللهُ عليهِ وسلَّمَ في نسوةٍ، فسلَّم علينا) صحيح أبي داود:5204]

तर्जमा: हम औरतों के पास से नबी-ए-करीम ﷺ गुज़रे तो आप ﷺ ने हमें सलाम किया।

उम्मे हानी बिंत अबू-तालिब जो नबी ﷺ की चचा-ज़ाद बहन थी रिश्ते में आप उनके लिए ग़ैर-महरम हुए इस के बावुजूद उन्होंने (फ़त्ह मक्का के मौक़ा' से) आप ﷺ को सलाम किया।

(देखें: सहीह बुख़ारी:6158)

इन तमाम बातों का ख़ुलासा (निचोड़) यह है कि औरत मर्द को और मर्द औरत को सलाम कर सकते है जब फ़ित्ना का ख़ौफ़ (डर) न हो मसलन (जैसे) 'उम्र-ए-दराज़ से या औरतों और मर्दों की जमा'अत में या महरम की मौजूदगी में (सामने) लेकिन फ़ित्ना का अंदेशा हो तो सलाम तर्क कर देना बेहतर है और यह हुक्म मा'लूम रहे कि सलाम करना वाजिब नहीं सुन्नत है।

आख़िरी कलाम (बात)

अल्लाह ने औरत को मर्दों से बिल्कुल अलग साख़्त (बनावट) और ख़ुसूसिय्यात दे कर पैदा फ़रमाया है इसलिए औरत सरापा (संपूर्ण) पर्दा कही जाती है और उस की ज़िंदगी में हमेशा पर्दा नुमायाँ रहना चाहिए यह पर्दा लिबास-व-पोशाक के साथ, चाल-चलन, मु'आमलात और गुफ़्तुगू (बात-चीत) में भी झलकना चाहिए मुंदरिजा-ए-बाला (ऊपर लिखी हुई) सुतूर (लकीरें) में औरत के राह (रास्ते में) चलने से मुत'अल्लिक़ (बारे में) चंद अहम-उमूर (महत्वपूर्ण बातें) बयान कर दिए गए हैं इन के 'अलावा (सिवा) भी मज़ीद (और भी) मसाइल हो सकते हैं

ताहम (फिर भी) बुनियादी चीज़ों का ज़िक्र हो चुका है इस के साथ सरसरी तौर पर यह बातें भी औरतों के 'इल्म में रहे कि वो फ़ैशन वाले लिबास, 'उर्यां लिबास (बे-पर्दा) शोहरत और फ़ुहश (बद-कार) औरतों के लिबास लगा कर बाहर न निकले इस से फ़ित्ना भी फैलेगा और औरत गुनाहगार भी होगी इसी तरह हील वाली सैंडल लगा कर बाहर न निकले, राह (रास्ते में) चलते हुए हँसी-मज़ाक़, बिला-ज़रूरत ज़ोर-ज़ोर से बातें करना, मोबाइल पर गुफ़्तुगू (बात-चीत) करते हुए चलना, लोगों की भीड़ में रुक कर बिला ज़रूरत सलाम-ओ-कलाम करना और मर्दों की तरफ़ बिला ज़रूरत नज़रें उठाना वग़ैरा औरतों के

हक़ में मुनासिब (ठीक) नहीं है औरत मर्द की मुशाबहत इख़्तियार न करे यह ला'नत का सबब (कारण) है।

(عَنِ ابْنِ عَبَّاسٍ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُمَا، قَالَ:" لَعَنَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ الْمُتَشَبِّهِينَ مِنَ الرِّجَالِ بِالنِّسَاءِ، وَالْمُتَشَبِّهَاتِ مِنَ النِّسَاءِ بِالرِّجَالِ)صحيح البخاري:5885]

तर्जमा: इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा ने बयान किया कि रसूलुल्लाह ﷺ ने उन मर्दों पर ला'नत भेजी जो औरतों जैसा चाल-चलन इख़्तियार करे और उन औरतों पर ला'नत भेजी जो मर्दों जैसा चाल-चलन इख़्तियार करे।

हत्ता कि मुसलमान औरत काफ़िरा और फ़ाहिशा औरत की कोई मज़्मूम (ख़राब) और फ़ुहश (अश्लील) चीज़ और बुरी सिफ़त (गुण) की नक़्क़ाली (अनुकरण) न करे और यह मा'लूम रहे कि औरत मा'मूली दूरी तक तो अकेले जा सकती है लेकिन कहीं दूसरी जगह का सफ़र करना हो तो बग़ैर महरम सफ़र करना जाएज़ नहीं है बल्कि ज़रूरत के वक़्त ग़ैर-मामून जगहों पर भी औरत अकेली न जाए ख़्वाह (चाहे) वो जगह नज़दीक ही क्यूं न हो आजकल (इस समय) मा'मूली दूरी भी लोग सवारी से तय करते हैं ऐसे में औरत को सवारी में मर्दों से हटकर बैठना चाहिए और बहुत अफ़सोस (दुःख) के साथ कहना पड़ता है कि

बा'ज़ (कुछ) औरतें ग़ैर-महरम के साथ मोटर-साइकिल पर सट कर बैठती हैं यह 'अमल (काम) जाएज़ नहीं है।

अल्लाह-त'आला से दु'आ करता हूं कि मुस्लिम मां बहनों को दीन पर चलने की तौफ़ीक़ दे उन्हें शर'ई हिजाब अपनाने और शर'ई हुदूद में रहते हुए आमद-ओ-रफ़्त करने (आने-जाने) की तौफ़ीक़ दे। आमीन

================

[24].क़मरी महीनो का ज़िक्र हदीस-ए-रसूल में

क़मरी महीने अल्लाह की तरफ़ से ज़मीन और आसमान की तख़लीक़ से ही मुक़र्रर हैं। जिनकी तादाद 12 है। इन महीनों का ताल्लुक़ सूरज और चाँद और उनकी आमद और रफ़अत से, लैल-ओ-नहार (रात और दिन) और गर्दिशे अय्याम (दिन) से, इबादात और मामलात से और हिसाब और किताब से लेकर मुत'अद्दिद अलग-अलग 'उलूम और म'आरिफ़ से मुतल्लिक़ है। यही वजह है कि अल्लाह ने शुरू से ही उन्हें मुक़र्रर कर रखा है। क़ुरआन में अल्लाह ने ज़िक्र फ़रमाया है कि कायनात की तख़लीक़ से ही 12 महीने मुक़र्रर हैं। फ़र्मान-ए-इलाही है:

إِنَّ عِدَّةَ الشُّهُورِ عِندَ اللَّهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا فِي كِتَابِ اللَّهِ يَوْمَ خَلَقَ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ مِنْهَا أَرْبَعَةٌ حُرُمٌ ۚ ذَٰلِكَ الدِّينُ الْقَيِّمُ ۚ فَلَا تَظْلِمُوا فِيهِنَّ أَنفُسَكُمْ ۚ وَقَاتِلُوا الْمُشْرِكِينَ كَافَّةً كَمَا يُقَاتِلُونَكُمْ كَافَّةً ۚ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ (التوبة:36)

तर्जुमा: महीनों की गिनती अल्लाह के नज़दीक किताबुल्लाह में 12 की है, उसी दिन से जब से उसने आसमान और ज़मीन को पैदा किया है। उनमें से 4 हुरमत और अदब के हैं। यही सही दीन है। तुम उन महीनों में अपनी जानों पर ज़ुल्म न करो और तुम तमाम मुशरिकों

से जिहाद करो जैसे वे तुमसे लड़ते हैं और जान लो कि अल्लाह मुत्तक़ियों के साथ है।

इस आयत से हमें यह मालूम हो गया कि महीनों की तादाद अल्लाह के नज़दीक 12 है। इन 12 महीनों में 4 महीने हुरमत के हैं। आदम अलैहिस्सलाम से लेकर अब तक जितने वाक़िआत और हादसात हुए हैं, वे सभी इन्हीं 12 महीनों के अंदर हुए हैं। यहाँ उनका दिरासत (सबक़ पढ़ाना) मक़सूद नहीं है बल्कि क़मरी महीनों का ज़िक्र हदीस ए रसूल में आया है, उनकी एक-एक दलील ज़िक्र करना मक़सूद है। क़मरी महीनों के नाम तर्तीब के साथ इस तरह हैं:

(1) मुहर्रम (2) सफ़र (3) रबीउल अव्वल (4) रबीउल आख़िर (5) जमादी-उल-अव्वल (6) जमादी-उल-आख़िर (7) रजब (8) शाबान (9) रमज़ान (10) शवाल (11) ज़ुल-क़ा'दा (12) ज़ुल-हिज्जा।

हुरमत वाले महीने ये हैं:

(1) ज़ुल क़ादा (2) ज़ुल हिज्जा (3) मुहर्रम (4) रजब

हुरमत वाले इन 4 महीनों के नाम भी हदीस से साबित हैं जिनका ज़िक्र आगे आएगा।

(1) मुहर्रम हदीस में: यह हुरमत वाले महीनों में से एक है। अहादीस में इस महीने की बड़ी अज़मत बयान हुई है। इसी में आशूरा का रोजा है और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इस महीने में रोज़ों की फ़ज़ीलत बयान करते हुए फ़रमाया:

أفضلُ الصيامِ ، بعد شهرِ رمضانَ ، صيامُ شهرِ اللهِ المُحرَّمِ (صحيح مسلم: 1163)

तर्जुमा: रमज़ान के बाद सबसे अफ़ज़ल रोज़े मुहर्रम के महीने के रोज़े हैं।

(2) सफ़र हदीस में: काफ़िर और मुशरिक सफ़र के महीने से नहूसत लिया करते थे जबकि नहूसत जाहिलाना और मुशरिकाना तसव्वुर है। इस्लाम में नहूसत का कोई तसव्वुर नहीं है। रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

لا عدوى ولا طيرة ولا هامة ولا صفر (सहीह बुखारी: 5707)

तर्जुमा: बीमारी का फैलना नहीं (यानि अल्लाह के हुक्म के बग़ैर कोई बीमारी किसी और को नहीं लगती) और न ही बदफ़ाली लेना सही है और न ही सफ़र का महीना मनहूस है।

(3) रबीउल अव्वल हदीस में: यही वह महीना है जिसमें रसूल-ए-रहमत की विलादत हुई है और इसी माह में आपकी वफ़ात भी हुई। इस तरह

इस्लामी तारीख़ और सीरत आपके ज़िक्र से महरूम और मुश्कबार नज़र आती है। इस महीने में मक्का से मदीना की हिजरत भी हुई। सहीह बुख़ारी में एक लंबी हदीस है, इसका एक टुकड़ा यह है।

فلم يَمْلِكِ اليهوديُّ أن قال بأعلى صوتِه : يا معاشرَ العربِ، هذا جَدُّكم الذي تنتظرون، فثار المسلمونَ إلى السلاحِ، فتَلَقَّوْا رسولَ اللهِ بظَهْرِ الحَرَّةِ، فعدَل بهم ذاتَ اليمينِ، حتى نزل بهم في بني عمرو بنِ عوفٍ، وذلك يومُ الاثنينِ من شهرِ ربيعٍ الأولِ(صحيح البخاري:3906)

तर्जुमा: यहूदी बे-इख़्तियार चिल्ला उठे, "ऐ अरब के लोगों, तुम्हारे यहाँ बुज़ुर्ग सरदार आ गए जिनका तुम्हें शिद्दत से इंतज़ार था।" यह सुनते ही मुसलमान हथियार ले कर आपके इस्तिक़बाल को दौड़े। चुनांचे, वह रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को मुक़ाम-ए-हर्रा के पीछे मिले। उन्हें साथ ले कर दाईं ओर मुड़े, फिर उन्होंने बनू अम्र बिन ओफ़ के यहाँ ठहरने का इरादा किया। यह वाक़िया रबीउल-अव्वल के पीर के दिन का है।

(4) रबी'उस्सानी हदीस में: जब रबीउल-अव्वल का ज़िक्र हदीस से मालूम हो गया, तो यह महीना ख़ुद बताता है कि रबी'उस्सानी भी होगा, क्योंकि अव्वल के ज़िक्र से सानी का ज़िक्र अब ख़ुद सामने आता है। अहादीस में ख़ासियत के साथ इस महीने का ज़िक्र बहुत ज़्यादा नहीं आया (तवारीख़ और सैर में तमाम महीनों का ग़ैर मामूली

ज़िक्र है)। एक जगह अली रज़ियल्लाहु अन्हु का मदीना से सफ़र पर निकलने का ज़िक्र है जिसे हाफ़िज़ इब्न हजर ने ज़िक्र किया है।

خرج عليٌّ في آخرِ شهرِ ربيعٍ الآخرِ سنةَ ستٍ وثلاثينَ(فتح الباري لابن حجر:59/13)

तर्जुमा: अली रज़ियल्लाहु अन्हु 36 हिजरी में रबीउल-आख़िर में निकले। सही बुख़ारी (6973) में उमर रज़ियल्लाहु अन्हु का शाम की तरफ़ निकलने का ज़िक्र है, वहाँ महीने का ज़िक्र नहीं है, मगर इस्लामी तारीख़ से रबीउस-सानी का महीना मालूम होता है।

(5) जमादी-उल-ऊला हदीस में: सहीहैन में जंग-ए-मुत्ता का ज़िक्र है जिसमें मुसलमानों के कई सिपाही शहीद हुए। आख़िर में ख़ालिद बिन वलीद ने कमान संभाली। उनका बयान है कि जंग-ए-मूता में मेरे हाथ से 9 तलवारें टूट गईं, एक यमनी ताईगा मेरे हाथ में बाक़ी रह गया। सहीहैन में महीने का ज़िक्र नहीं है मगर मज्मू ज़वाइद में महीने की सराहत है। इसका एक टुकड़ा देखो:

ثم اصطلح المسلمون بعد أمراء رسول الله صلى الله عليه وسلم على خالد بن وليد فهزم الله العدو واظهر المسلمين وبعثهم رسول الله صلى الله عليه وسلم في جمادى الأولى.(مجمع الزوائد:163/6،رجال ثقات)

तर्जुमा: फिर मुसलमानों ने रसूलल्लाह के सिपाहसलारों के बाद ख़ालिद बिन वलीद पर इत्तिफ़ाक़ किया। फिर अल्लाह ने दुश्मन को नाकाम बना दिया और मुसलमानों को जमादी-उल-ऊला में भेजा था।

(6) जमादी-उल-आख़िरा हदीस में: एक हदीस में ज़िक्र है कि साल के सारे महीने होते हैं। कुरआन में भी साल का ज़िक्र "سنہ" "عام" और "حول" के लफ़्ज़ से आया है। हदीस के अल्फ़ाज़ देखें जिसमें अशहरुल हुरूम (हुरमत वाले महीने) का नाम आया है।

السنةُ اثنا عشرَ شهرًا منها أربعةٌ حُرُمٌ : ثلاثةٌ مُتوالياتٌ : ذو القَعدةِ وذو الحَجَّةِ والمُحرَّمُ ، ورجبُ مُضرَ ، الذي بين جُمادَى وشعبانَ. (صحيح البخاري:4406)

तर्जुमा: साल 12 महीने का होता है। इसमें 4 महीने हुरमत वाले हैं– 3 तो मुसलसल हैं: ज़ुल-क़ादा, ज़ुल-हिज्जा, मुर्हरम। और एक रजब है जो जमादी-उल-आख़िरा और शाबान के बीच आता है। मज्मू ज़वाइद में है:

قُتِلَ الزُّبيرُ بنُ العَوّامِ يومَ الجَمَلِ في جُمادى لا أدري الأولى أو الآخرةِ سنةَ ستٍّ وثلاثين (مجمع الزوائد:9/155)

तर्जुमा: ज़ुबैर बिन अव्वाम जुमल के दिन जमादी में क़त्ल किए गए थे। मुझे नहीं पता जमादी उल-उला को या जमादी उल-आख़िरा को 36 हिजरी में।

(7) रजब हदीस में: इस महीने में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कोई उमरा नहीं की है, फिर भी बिदअती इस महीने में कसरत से उमरा करते हैं, हालांकि बतौर ए ख़ास इस महीने में उमरा करने का हुक्म नहीं आया है और न ही इस महीने में उमरा करने की कोई अलग फ़ज़ीलत साबित है। उमरा कभी भी कर सकते हैं और रमज़ान में उमरा करना हज के बराबर है।

عَنْ عُرْوَةَ بْنِ الزُّبَيْرِ قَالَ سَأَلْتُ عَائِشَةَ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهَا قَالَتْ مَا اعْتَمَرَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ فِي رَجَبٍ(صحيح البخاري:1777)

तर्जुमा: हज़रत उरवाह बिन ज़ुबैर से रिवायत है। उन्होंने कहा कि मैंने आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से पूछा तो उन्होंने फ़रमाया: रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने रजब में कोई उमरा नहीं किया।

(8) शाबान हदीस में: तिर्मिज़ी शरीफ़ में उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है:

ما رأيتُ النَّبِيَّ صلَّى اللَّهُ عليهِ وسلَّمَ يصومُ شَهرينِ متتابعينِ إلَّا شعبانَ ورمضانَ(صحيح الترمذي:736)

तर्जुमा: मैंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को लगातार 2 महीनों के रोज़े रखते नहीं देखा, सिवाय शाबान और रमज़ान के।

(9) रमज़ान हदीस में: अपनी फज़ीलत के बाइस (कारण) इस महीने-ए-मुबारक का कुरआन में भी ज़िक्र आया है और हदीस में बहुत ज़्यादा ज़िक्र है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

مَن صامَ رمضانَ إيمانًا واحتسابًا ، غُفِرَ لَهُ ما تقدَّمَ من ذنبِهِ (صحيح البخاري:2014)

तर्जुमा: जिस ने ईमान के साथ और सवाब की नियत से रमज़ान के रोज़े रखे, उसके पिछले गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।

(10) शावल हदीस में: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

مَن صامَ رمضانَ ثمَّ أتبعَه بستٍّ من شوَّالٍ فَكأنَّما صامَ الدَّهرَ (صحيح أبي داود:243पू

तर्जुमा: जिस ने रमज़ान के रोज़े रखे और उसके बाद शव्वाल के 6 रोज़े रखे, तो जैसे उसने पूरे साल के रोज़े रखे।

(11) ज़ुल-क़ादा हदीस में: अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है:

أَنَّ رَسُولَ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ اعْتَمَرَ أَرْبَعَ عُمَرٍ كُلُّهُنَّ فِي ذِي الْقَعْدَةِ إِلَّا الَّتِي مَعَ حَجَّتِهِ (صحيح مسلم:3033)

तर्जुमा: अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने (कुल) 4 उमरा किए और अपने हज वाले उमराह के सिवा सभी उमराह ज़ुल-क़ादा में किए।

(12) ज़ुल-हिज्जा हदीस में: यह महीना अलग-अलग इबादतों के ज़िक्र से बेहद मशहूर है। उन इबादतों में एक हज भी है जिसकी अदाइगी के लिए पूरी दुनिया के मुसलमान मक्का में जमा होते हैं। ज़ुल-हिज्जा से मुताल्लिक़ एक हदीस देखें। अबू बक़रह रज़ियल्लाहु अन्हु से रवायत है कि वह नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से बयान करते हैं कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

شهرانِ لا ينْقُصَانِ ، شهرَا عيدٍ : رمضانُ وذو الحَجَّةِ .(صحيح البخاري:1912)

तर्जुमा: ईद के दोनों महीने यानी रमज़ान और ज़ुल-हिज्जा कम नहीं होते।

इस हदीस का मतलब यह है कि हालांकि दिनों की तादाद के ऐतबार से कम हो सकते हैं, लेकिन इबादत के पूरे के पूरे हुक्म में दोनों का हुक्म एक है। अगर किसी ने 29 रोज़े रखे तो उसे सवाब 30 रोज़ों का ही मिलता है। उसके सवाब के बारे में किसी को शक नहीं होना

चाहिए। इसी तरह अर्फ़ात में ग़लती हो जाए तो उसका हज पूरा है, इसमें कोई कमी नहीं है। (फ़तहुल बारी: 4/161)

[25].क़ादयानियत के बढ़ते क़दम और हमारी ज़िम्मेदारियाँ

अक़ीदा-ए-ख़त्मे नबुव्वत, अक़ाइद के बाब में एक अहम तरीन अक़ीदा है। अहद ए रसूलुल्लाह ﷺ से ही इस अक़ीदे की हिफ़ाज़त की गई है और आज तक बल्कि यह कह लें कि क़यामत तक मनहजे सलफ़ पर चलने वाले कमा-हक़्क़हु (जैसा की उस का हक़ है) इसकी हिफ़ाज़त करते रहेंगे इस सिलसिले में मुनाज़िर ए इस्लाम मौलाना सनाउल्लाह अमरतसरी रहिमहुल्लाह का नाम हमेशा सर ए फ़ह्रिस्त रहेगा।

इस्लाम अल्लाह का निज़ाम और उसके दस्तूर का नाम है इस लिए अल्लाह के दुश्मन हमेशा से इस्लाम के ख़िलाफ़ साज़िश करते रहे मगर इस्लाम हमेशा फ़लता फुलता रहा और ज़माने में फैलता रहा अल्लाह ने इस दीन को तमाम दीन ए बातिला पर ग़ालिब करने का वादा कर लिया है और इन शा अल्लाह यह हो कर रहेगा चाहे कुफ़्फ़ार की सारी ख़ुदाई इसके ख़िलाफ़ आपस में दोस्त और मददगार ही क्यूँ ना बन जाएँ।

नबुव्वत के नाम पर जिस तरह अहद ए रिसालत में झूठे दावेदार पैदा होते रहे आज भी नए रंग रूप ले कर ज़ाहिर हो रहे हैं। उनके अहम मक़ासिद में मुसलमानों को इस्लाम से दूर करना, ग़ैरों को इस्लाम में दाख़िल होने से रोकना और दुनियावालों पर इस्लाम की इमेज बिगाड़ कर पेश करना है।

इस के बिल मुक़ाबिल ऐसे नज़रियात पेश करना है जिस से ज़ाहिर हो कि अमान इस्लाम में नहीं है बल्कि हमारे पास है या दूसरे अल्फ़ाज़ में ऐसा समझें के इस्लाम वो नहीं जो पुराने ख़याल के दक़ियानूस मुसलमान पेश कर रहे हैं बल्कि रोशन ख़याली, बैनल-अक़वामी अमान और सलामती, आलामी मरासिम और रवाबित (ताल्लुक़ात) और असल इस्लाम तो हमारे पास है।

यही वजह थी के इस्ते'मारी (colonial) क़ुव्वत के लिए हिंदुस्तान में जब मुसलमानों को जिहाद से रोकने का मसला आया तो मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद जैसा वफ़ादार ग़ुलाम मिला। इसने अंग्रेज़ वफ़ादारी में ना सिर्फ़ जिहाद का इंकार किया बल्कि धीरे धीरे नबुव्वत का दावा भी कर बैठा। मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद कल अंग्रेज़ों की ज़रूरत था और आज मुसलमानों के लिए बड़ा चैलेंज़ बन कर सामने आ गया है।

मौलाना सनाउल्लाह अमरतसरी रहिमहुल्लाह से मुबाहिला के बाद मिर्ज़ा बदतरीन मौत मर तो गया मगर पीछे छोड़ी गई दर्जनो नजिस किताब और पलीद आक़ाओं की मदद से मिर्ज़आई फ़िरक़ा ज़िंदा रहा जिस के मानने वाले हिंदुस्तान और पाकिस्तान में ज़्यादा तादाद में और छोटी छोटी टोलियो में दुनिया के अक्सर हिस्से में मौजूद हैं।

यह अरब ममालिक समेत अफ़रिक़ी और मग़रीबी ममालिक में भी पाए जाते हैं यहाँ तक के इसराइल से गहरे रवाबित (ताल्लुक़ात) हैं। जिस तरह हिंदुस्तान में अंग्रेज़ सरकार ने इस शजरा ए ख़बीसा की आबयारी की इसी तरह आज भी कर रही है। इस्राइल की तरफ़ से उसे बड़ा फंड मिलता है जिस के ज़रिए यह अपनी दावती मिशनरीज़, रिफ़ाही इदारे, तालीमी सेंटर चला रहे हैं। उन्हीं पैसों को मुबल्लिग़ीन और क़ादयानी कुतुब और उनकी नश्र-ओ-इशा'आत पर ख़र्च किया जाता है।

पाकिस्तान में रबवाह, हिंदुस्तान में क़ादयान और इस्राइल में हेफ़ा क़ादयानो का मरकज़ है। इस्राइल की तरह हिंद की संघी तांज़ीम आरएसएस से बड़े गहरे ताल्लुक़ात और एक दूसरे के दस्त और बाज़ू हैं। आरएसएस की ज़ीली संघी तांज़ीम 'राष्ट्रीय मुस्लिम मंच' में असल

किरदार मुसलमानों का नहीं क़ादयानों का है। बिल-आख़िर हमारे सामने जो नताइज है वो निहायत ही अफ़सोसनाक है। दिन बदिन यह फ़िरक़ा अपनी जड़े मज़बूत करता चला रहा है और इस्लाम के रास्ते में और अक़ीदा ख़त्मे नबुव्वत के बाब में हमारे लिए बड़ी मुश्किलात पैदा कर रहा है। सब से बड़ी फ़िक्रमंदी तो यह है के आज तक जितने भी लोग इसका आला बने या बन रहे हैं उनकी अक्सरीयत मुसलमानों की है। यह फ़िरक़ा मुसलमानों को गुमराह कर के क़ादयानी बना रहा है क्योंकि यह ख़ुद को मुसलमान ज़ाहिर करता है, अपना नाम अहमदी या अहमदी मुसलमान या अहमदिया मुस्लिम कम्युनिटी बतलाता है।

जिस मुल्क में भी यह फ़िरक़ा मौजूद है उस मुल्क में हुकूमती तौर पर ख़ुद को मुसलमान की लिस्ट में दाख़िल करवाने की कोशिश करता है। हिंदुस्तान में मुस्लिम प्रोफ़ेशनल लो बोर्ड में शिया की भी रुक्नियत है, आरएसएस के ज़ैर ए असर मक़ामात पर वक़्फ़ बोर्ड और हज कमेटी के असल ज़िम्मेदार होते हैं जब के अंग्रेज़ी दौर ए हुकूमत में मिर्ज़ा गुलाम अहमद ने ख़ुद को मुसलमानों से अलग एक मुस्तक़िल फ़िरका की हैसियत से ख़ुद को मुत'आरफ़ (परिचित) करवाया था लेकिन आज़ादी के बाद कांग्रेस पार्टी मुस्लिम दुश्मनी में 2011 की पहली बार

मर्दुम-शुमारी के वक़्त मुस्लिमों के साथ शुमार में लाई और बर-वक़्त तो भारतीय जनता पार्टी है जिस के मंशूर में मुस्लिम दुश्मनी के अलावा कुछ है ही नहीं।

पाकिस्तान में क़ादयानी अपना क़दम मज़बूत और हुकूमती सतह पर अपनी पकड़ बना लिया था इस वजह से वहां बतौर ए आईन ग़ैर मुस्लिम अक़ल्लियत (minority) क़रार देने में काफ़ी वक़्त लग रहा है,1953 की तहरीक ख़त्म-ए- नुबुव्वत में हज़ारों मुसल्मानों ने जाम ए शहादत नोश किया फ़िर भी क़ादयानी ग़ैर मुसलिम होने का मुतालबा पूरा न हो सका ताहम क़ादयानी वज़ीर ए ख़ारजा ज़ाफ़रुल्लाह ख़ान की बर-तरफ़ी (discharge) हो गई जिस की वजह से रब्वा में एक बड़ी अराज़ी क़ादयानी मरकज़ के लिए आलात की गई थी। 70,000 से ज़्यादा की आबादी वाले शहर रबवाह की 97% आबादी क़ादयानियों पर मुहीत है और इस जगह का इस्तेमाल क़ादयानियत की तबलीग़ में बड़े शुद्द और मद्द के साथ किया जा रहा है।

आज़ाद क़श्मीर की असेम्बली 1973 में क़ादयानियों को ग़ैर मुसलिम क़रार दिया जबके अप्रैल 1974 में रब्ता आलम इस्लामी ने मक्का मुकर्रमा में एक बड़ा इज्लास मुनक़िद किया जिस में दुनिया फिर से मुस्लिम तंज़ीमें और उलमा ए किराम ने शिरकत की और इस इज्लास में मिर्ज़ाई को ग़ैर मुस्लिम क़रार देकर तमाम मुसलिमों से इस का

बॉयकॉट करने उस से मुतनब्बे (aware) रहने और उसका डट कर मुक़ाबला करने की अपील की इसी साल 7 सितम्बर को मुसलमानों की मुश्तरिक कोशिश रंग लाई और पाकिस्तान में ज़ुल्फ़िकार अली भुट्टो के अहद ए हुकूमत में तवील बहस और मुनाज़रा के बाद क़ादयानी को दस्तूर तौर पर ग़ैर मुस्लिम अक़लियत क़रार देकर तारीख़ रक़म की गई। वहां आवामी तौर पर आज भी 7 सितम्बर को यौम ए ख़त्म-ए-नुबुव्वत के तौर पर मनाया जाता है।

तम्हीदी (preliminary) बातें कुछ लंबी हो गईं, अब आते हैं असल मक़सद की तरफ़ के मिर्ज़ाई तौला किस तरह अपना क़दम बढ़ा और जमा रहा है, उसे समझने की ज़रूरत है ताकि उसका बढ़ता क़दम रोका जा सके और फ़ितना इर्तिदाद का सद्द-ए-बाब किया जा सके। यह काम मुसलमानों के किसी मख़सूस फ़र्द या मख़सूस तंज़ीम का नहीं है बल्कि हर मुवह्हिद का है, तमाम मुसलमानों का है बिलख़ुसूस बा-असर मुस्लिम शख़्सियत, ज़ेर-ए-क़ियादत मुस्लिम हुक्मरान और 'आलमी पैमाने पर असर और नुफ़ूज़ वाली मुस्लिम तंज़ीमात का है।

क़ादयानी फ़िरक़ा अवाम में ख़ुद को मुसल्लम मुश्ताहिर करता है और सरकारी तौर पर मुसल्लम का ख़िताब पाने के लिए सियासी हथकंडे अपनाता है ज़रा सा कहीं मौक़ा मिला क़ादयानी मीडिया को ब-रू-ए-

कार (सक्रिय) लेते हुए दुनिया भर में इसका प्रचार करता है। इसकी एक बड़ी मिसाल 2017 में अबू धाबी में मुन'अक़िद होने वाले बैनुल अक़वामी कॉन्फ़्रेंस से लेले।

यह कॉन्फ़्रेंस शैख़ अब्दुल्लाह बिन बय्याह की क़ियादत में "تعزيز السلم فی المجتمع المسلم" के टॉपिक से हुई इसमें ना जाने कैसे दो क़ादयानी भी शारिक हो गए उन्होंने उसमें शिरकत की वीडियो बनाई और उसे क़ादयानी चैनल रबवाह टाइम्स को भेज दिया जिसने मुख़्तलिफ़ तरीक़े से कई दिन तक नमक मिर्च लगा कर इस ख़ैर की इशा'अत (तबलीग़) की, लोगों में ग़लत फ़हमिया फैलाता रहा यहाँ तक के एक शिया चैनल ने कह दिया के सउदी मुफ़्ती ने क़ादयानी को मुस्लिम क़रार दे दिया। इस वाक़ि'आ में हमारे लिए नसीहत यह है के अपनी मख़सूस मजालिस से उन्हें दूर रखें यह किसी भी भेस में भी हो सकते हैं और हमारे ही प्रोग्राम को हमारे ख़िलाफ़ मोर्चा बना सकते हैं।

सरकारी औहदों की हुसूल याबी अहम तरीन हथकंडा है, क़ियादत मिलने के बाद ज़ीला क़तरा समाज में गोलना शुरू कर देता है जिसके ज़ैर-ए-असर कमज़ोर ईमान वालों का दिल क़ादयानियत की वबा से बीमार हो जाता है। मुहम्मद ज़फ़रुल्लाह ख़ान के दौर में पाकिस्तानी हुकूमत की तरफ़ से रबवाह नामी जगह की फ़राहमी उसकी ज़िंदा मिसाल है।

1034 एकड़ पर मुश्तामिल यह जगह आज क़ादयानी की तबलीग़ का मरकज है और क़ादयानियों का सिटी कहलाता है। यहाँ क़ादयानी की इशात का कौन सा वसीला मौजूद नहीं है। तालिमी इदारे, तब्लीग़ी मराकिज़, इबादत गाहे, क़ादयानी मीडिया का बेहतर इंतज़ाम है और यह दुनिया भर के क़ादयानियों की तवज्जोह का ना सिर्फ़ मरकज़ है बल्कि उसके सालाना इज्तिमा में हिन्द-पाक के अलावा तमाम ममालिक से क़ादयानी शरीक होते हैं। माज़ी की इस ग़लती से हमें सबक़ लेना है और आइन्दा यह मंसूबा बनाना है के हुकूमत के ऐसे ओहदों पर किसी क़ादयानी को बर्दाश्त न किया जाए जिस से इस्लाम और मुसलमानों को ख़तरा लाहिक़ हो।

इंतिशार और बलवीर के मवाक़े से फ़ायदा उठाना भी क़ादयानी हथकन्डा है इसे हालात में ये लोग बड़ी अय्यारी से अपने अफ़कार और ख़यालात फ़ैलाने की कोशिश करते हैं। लोगों का ज़हन इंतिशार में मुब्तला होता है और क़ादयानी अपने मिशन में मसरूफ़ होते हैं ताकि ऐसे हालात में कोई उन पर शक भी न कर सके।

आप यह समझें के हर क़ादयानी मुबल्लिग़ है, स्टूडेंट के भेस में, रोज़गार की तलाश में, बीमार की शक्ल में, अख़बारी नुमाइंदगी होने

के बहाने से यानी वो जिस रूप में भी हो एक मुबल्लिग़ है। हमें हर क़ादयानी से बचना है और अपना ईमान बचाना है और दूसरों को उसका आला कार बनने से रोकना है।

क़ादयानी का ख़तरनाक जाल जिस में बड़े बड़े फ़ंस जाते हैं कलमा की तबलीग़, नर्म अख़लाक़ का मुज़हिरा, शाइर इस्लाम का इस्तेमाल और ख़ुद को मुसलमान बतलाना है। जब कोई क़ादयानी तबलीग़ करेगा तो कहेगा हम भी मुसलमान हैं। "ला इलाहा इल्लाल्लाह मुहम्मदुर रसूलुल्लाह" की तबलीग़ करते हैं मस्जिद में नमाज़ अदा करते हैं और मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद को सिर्फ़ एक मुबल्लिग़ और मुजद्दिद मानते हैं जबकि मिर्ज़ा को अपना नबी मानता है और कलमा में मुहम्मद से मुराद मिर्ज़ा ही लेता है। इस तरह शुरू में मीठा ज़हर देंगे फिर मौत के घाट उतार देंगे इसलिए कोई मुसलमान क़ादयानी से धोका न ख़ाए, न कलमा से, न उसके श'आइर से और न ही अच्छे अख़लाक से।

एक बड़े भयानक फ़रेब का पता चला है के क़ादयानियत की तश्हीर में एडीएस से भी काम लिया जाता है। इसका तरीक़ा कार यह है के दोस्ती के नाम पर लड़कियों के मोबाइल नंबर अख़बारात और ज़राइद के ज़रिया मशहूर कर दिए जाते हैं ये लड़कियाँ दोस्ती के बहाने लड़कों

को ज़िनाकारी के गिरोह में शामिल करती हैं जो एडीएस वाली होती है जब लड़कों को एडीएस का रोग लग जाता है तो उस गिरोह के लिए काम करना मजबूरी बन जाती है। क़ादयानियत की तश्हीर में लड़कियों का इस्तेमाल किसी भी तरह हो सकता है मिसालन रोज़गार, शादी, तालीम मामलात, तिजारत वग़ैरह।

क़ादयानी की तरफ़ से मुख़्तलिफ़ क़िस्म के मुहर्रिफ़ तर्जुमा और तफ़सीर मौजूद हैं 80 से ज़्यादा लैंग्वेज़ में क़ादयानी तराजिम (translations) और 200 से ज़्यादा ममालिक में उनकी तफ़्हीम इस फ़िर्क़े के बढ़ते वसी क़दम की तरफ़ इशारा कुनाँ है। अब तो एंड्रॉयड मोबाइल में क़ादयानियों की तरफ़ से मुख़्तलिफ़ ज़बानों में मुख़्तलिफ़ क़िस्म के क़ुरआनी ऐप्स भी डाल दिए गए हैं ऐसे भी ऐप हैं जिन की मदद से 24 घंटे उनकी मज़हबी नशरियत सुन सकते हैं। अब तो क़ादयानी घर-घर और हर इंसान तक पहुंच गया ऐसे में हमें क्या करना है सोचने का मक़ाम है? जानते हैं सोशल मीडिया यह क़ादयानी ग्रुप और पेज चलाने वाले सैलरी पर रखे गए हैं।

एक हथकन्डा जो हर बातिल मज़हब का है, माद्दियत (realism) का धोखा, उसने भी अपना रखा है। इस हथकन्डे से ना-ख़्वांदा (अनपढ़)

और मजबूर और हाजतमंद को तालीम, नौकरी, मकान, इलाज, पैसा, ख़रजी ममालिक का सफ़र और दूसरे ममालिक की नेशनैलिटी की ख़िदमत मुहैया कर के बदले में दीन का सौदा करता है।

हिंदुस्तान में आरएसएस और हिंदुत्व के मंसूबों की तकमील में शामिल और मुसलमानों के ख़िलाफ़ हर क़िस्म के मवाद फ़राहम करने वाला ख़तरनाक एजेंट क़ादयानी है। आप को हैरत होगी ग़ैर मुस्लिम को इस्लामी तालिमात में शक करने उन पर ऐतराज़ करने और मज़ाक़ उड़ाने का मक़ाम कैसे मिलता है? यही ग़द्दार है जो हमारी बातें उन तक पहुंचाते हैं और क़ुरआन और हदीस से मवाद तलाश कर देते हैं। क़ादयानी का यह हथियार न सिर्फ़ हिंदुस्तान में चलाया जा रहा है बल्कि हर जगह इसे आज़माया जा रहा है।

ख़ुद को सुन्नी मुसलमान कहने वाला नापाक इंसान तारीक़ फ़तह का किरदार आप के सामने है। दुनिया में क़ादयानियत के बढ़ते वसी क़दम और उनके अस्बाब आप के सामने हैं, एक मुसलमान होने के नाते इस फ़ितना का सद्द-ए-बाब (दरवाज़ा बंद करना) और अक़ीदा ख़त्म नबुव्वत का तहफ़्फ़ुज़ हर इंसान बशर की पहली ज़िम्मदारी है। आइये आज आज़मे मुसम्मम (मज़बूत इरादा) करते हैं के हम में से जो मुहर्रिर (तहरीर लिखने वाला) है वो तहरीर से, जो मुक़र्रिर है वो तक़रीर से, जो बा-असर है वो अपने असर से, जो साहिबे इक़्तिदार है

वो क़ुव्वत और इक़्तिदार से और जो मालदार है अपने माल से कलमा-ए-तौहीद को सरबुलंदी और अक़ीदा ख़त्म नबुव्वत का तहफ़्फ़ुज़ करते हुए फ़ितना-ए-इर्तिदाद को रोके गा।

हम में से हर पढ़ा लिखा जिस के गिर्द क़ादयानी को इस्लाम में दाख़िल करने की ख़ालिस नियत करे, मदद करने वाला अल्लाह है। आम आदमी कम अज़ कम इस ज़िम्मेदारी का अहसास करे के जब भी उसे किसी क़ादयानी मकर और फ़रेब की ख़बर हो तो फ़ौरान मुस्लिम शख़्सियात को इत्तिला (ख़बर) करे। इतना तो हर आदमी कर ही सकता है के अपने घर में क़ादयानी इल्हाद और कुफ़्र और उस की चाल बाज़ीयों से बाख़बर करे जिस का फ़ाइदा यह होगा के आप के घर का मुसलमान इस फ़िरक़ा का आला-ए-कार बनने से बच सके गा। गुफ़्त-ओ-शुनीद (बातचीत) से मालूम हुआ है के बहुत से वह मुसलमान जो किसी मजबूरी के तहत क़ादयानी का शिकार हो गए हैं और उन्हें अपनी ग़लती का अहसास हो गया है वो वापिस पलटना चाहते हैं मगर कोई मददगार नहीं मिलता।

ख़ुद में इतनी जुस्तुजू महसूस नहीं कर पाते के वो क़ादयानी चंगुल से निकल सके क्योकि इस फ़िरक़ा की तरफ़ से तशद्दुद या अपने क़ादयानी रिश्तेदारों से तकलीफ़ का सामना हो सकता है। एक अहम

काम जो समझ में आ रहा है, वो मख़सूस मुसलमान तंज़ीम ही कर सकती है उसकी तश्कील यह होगी के जहां जहां क़ादयानी उरूज पर है वहाँ हमारी भी एक मख़सूस टीम हो जिस में मुख़्तलिफ़ उलूम और फ़ुनून के माहिरीन शामिल हो और मुख़्तलिफ़ महाज़ पर काम की नौ'इय्यत (हालत/कैफ़ियत) तक़सीम कर के रद्दे क़ादयानियत पर मुख़लिसाना कोशिश करें। इस सिलसिले में साहिब-ए-सरवत (दौलतमंद) भी आगे आए और इस नौ'इय्यत (कैफ़ियत) का काम शुरू करवाए या जहां काम किया जा रहा है उसको स्पोर्ट करें। यह काम आप के हक़ में और उस में शामिल तमाम अफ़राद के हक़ में सद्क़ा जारिया होगा।

अल्लाह से दुआ है कि हमारे ईमान और अक़ीदा की हिफ़ाज़त फ़रमाए और हमें हक़ और इबताल बातिल की तौफ़ीक़ मरहमत (नवाज़िश) फ़रमाए। आमीन।

[26]काले यरक़ान का जंगली कबूतर से इलाज की शरई हैसियत

यरक़ान जिसे इंग्लिश में (हेपटाइटिस) कहते हैं, यह एक तरह की बीमारी है जो जिगर से मुताल्लिक़ (संबंधित) है और दरअसल वायरस है और दूसरों में मुंतक़िल भी होता है। इसकी 5 किस्में हैं:

❶ हेपटाइटिस A

❷ हेपटाइटिस B

❸ हेपटाइटिस C

❹ हेपटाइटिस D

❺ हेपटाइटिस E

हेपटाइटिस A को येलो यरक़ान और B, C को ब्लैक यरक़ान कहा जाता है। आजकल यह बीमारी दुनिया में आम है, हर देश में कसरत से इसके मरीज़ पाए जाते हैं, इस वजह से इलाज के मुख़्तलिफ़ तरीक़े लोगों में पाए जाते हैं बल्कि आए दिन इस बीमारी के ख़त्म करने के

लिए नए नए इलाज तलाश किए जाते हैं। मेडिकल और साइंस के यहां हेपटाइटिस की तमाम क़िस्मों का इलाज मौजूद है बल्कि अक्सर बड़े बड़े शहरों में इनका मुफ़्त इलाज होता है। घरेलू तौर पर लोगों ने भी मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) तरह के इलाज ईजाद कर रखे हैं। ब्लैक हेपटाइटिस से संबंधित लोगों के इलाज का एक नया तरीक़ा आजकल काफ़ी मशहूर होता जा रहा है और लोग उसकी शरई हैसियत जानना चाहते हैं

ताकि अगर इलाज सही हो तो उसे अमल में लाया जा सके वरना इस तरीक़े से इलाज से बचा जा सके। ब्लैक हेपटाइटिस (C) का इलाज आजकल जंगली कबूतर से किया जाता है। इसका तरीक़ा यह है कि जो इस बीमारी का शिकार हो उसकी नाभि पर जंगली कबूतर (Male) के पख़ाने की जगह मिलाकर रखी जाए, इससे मरीज़ का वायरस नाभि के रास्ते से कबूतर में मुंतक़िल हो जाएगा और कबूतर ख़ुद-ब-ख़ुद मर जाएगा, कबूतर वाला यह अमल उस वक्त तक जारी रखना है जब तक कबूतर नाभि से लग कर मरता रहे और अगर मरना बंद हो जाए तो इसका मतलब यह हुआ कि अब मरीज़ ठीक हो गया है, उस मरीज़ का टेस्ट किया जाए तो मालूम हो जाएगा कि ब्लैक हेपटाइटिस की बीमारी ख़त्म हो चुकी है। यह आम ख़्याल है।

वाब: इस बुनियाद पर दिया जा रहा है कि अगर यह आम ख़्याल सही हो तो इस इलाज की शरई हैसियत क्या होगी? इसके लिए हमें यह जानना होगा कि इस्लाम ने हमें जानवरों के साथ कैसा सुलूक करने का हुक्म दिया है और क्या इलाज के मक़सद से जानवर का क़त्ल जाइज़ हो सकता है?

हमारा यह अक़ीदा है कि तमाम काइनात का ख़ालिक़ अकेला अल्लाह है, वही इंसानों का भी और जानवरों का भी ख़ालिक़ है। वह अपनी तमाम मख़्लूक़ात पर शफ़ीक़ और मेहरबान है। फ़रमान-ए-इलाही है:

إِنَّ رَبَّكُمْ لَرَءُوفٌ رَّحِيمٌ (النحل:7)

तर्जुमा: यक़ीनन तुम्हारा रब बड़ा ही शफ़ीक़ और निहायत मेहरबान है।

जिस तरह वह अपनी मख़्लूक़ पर मेहरबान है उसी तरह अपने नबी मोहम्मद ﷺ के ज़रिए बंदो को भी ज़मीन पर रहने वाली तमाम मख़्लूक़ के साथ मेहरबानी करने का हुक्म दिया है, नबी ﷺ का फ़रमान है:

الراحمون يرحمهم الرحمن، ارحموا اهل الارض يرحمكم من في السماء(صحيح ابی داؤد:4941)

तर्जुमा: रहम करने वालों पर रहमान रहम करता है, तुम ज़मीन वालों पर रहम करो, आसमान वाला तुम पर रहम करेगा।

यह हदीस हमें तालीम देती है कि ज़मीन पर रहने वाली तमाम मख़्लूक़ के साथ प्यार, मोहब्बत और अच्छे सुलूक से पेश आना चाहिए और किसी मख़्लूक़ को बिना किसी वजह के तकलीफ़ देने से बचना चाहिए यहां तक कि चींटी (ant) का भी क़त्ल मना है।

कहा जाता है कि जंगली कबूतर से ब्लैक हेपटाइटिस का इलाज करने में कबूतर ख़ुद-ब-ख़ुद मर जाता है, उसका गला नहीं दबाया जाता है। यह भी बताया जाता है कि एक आदमी के इलाज में 80-80 और 40-40 कबूतर मरते हैं।

अगर यह बात सही मान ली जाती है तो इसका मतलब यह निकलता है कि कबूतर की मौत तकलीफ़ देह हालत में तड़प-तड़प कर होती होगी क्योंकि जब उसे तेज़ औज़ार से ज़बह नहीं किया गया तो कबूतर

की जान निकालने की स्थिति यही तकलीफ़ देह बनती है। इस बात को सामने रखते हुए ज़रा उस हदीस पर ग़ौर करें जिसमें हलाल जानवर को ज़िब्ह करने में तकलीफ़ से बचते हुए आराम पहुँचाने का हुक्म दिया गया है। नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

إن الله كتب الإحسان على كل شيء، فإذا قتلتم فأحسنوا القتلة، وإذا ذبحتم فأحسنوا الذبح وليحد احدكم شفرته، فليرح ذبيحته(صحيح مسلم:1955)

तर्जुमा:अल्लाह ने हर चीज़ के बारे में एहसान का हुक्म दिया है, लिहाज़ा जब तुम क़त्ल करो तो अच्छे तरीक़े से क़त्ल करो और जब ज़िब्ह करो तो अच्छे तरीक़े से ज़िब्ह करो, नीज़ तुम में से हर शख़्स को चाहिए कि अपनी छुरी (चाक़ू) तेज़ कर ले और ज़िब्ह होने वाले जानवर को आराम पहुँचाए।

इस हदीस में सबसे पहले एहसान का हुक्म देने का मतलब यह है कि तुम जानवर को ज़िब्ह करो तो वहाँ भी एहसान को सामने रखो यानी चाक़ू तेज़ कर के इस तरह जानवर ज़िब्ह करो कि उसे तकलीफ़ न हो। ज़रा अंदाज़ा लगाएं कि 80-80 कबूतर को एक आदमी के इलाज के लिए तड़पा तड़पा कर मारना किसी भी हालत में जाइज़ हो सकता है जबकि इस बीमारी के लिए कई तरह के इलाज मौजूद हैं? इसे ज़रूरत के तहत क़त्ल नहीं कहेंगे बल्कि यह सरासर जानवर का

नाहक़ क़त्ल है। यह क़त्ल हदीस में मौजूद उस जानवर के क़त्ल के जैसा है जिसे बांध कर क़त्ल करना कहा गया है, या निशाना लगाने के लिए क़त्ल कहा गया है, या टारगेट कर के क़त्ल करना कहा गया है। आइए उन हदीसों को एक नज़र देखते हैं।

عن سعيد بن جبير ، قال: مر ابن عمر بنفر قد نصبوا دجاجة يترامونها، فلما راوا ابن عمر تفرقوا عنها، فقال ابن عمر : من فعل هذا؟ إن رسول الله صلى الله عليه وسلم لعن من فعل هذا.(صحيح مسلم:1958)

सईद बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु कुछ लोगों के पास से गुज़रे जिन्होंने एक मुर्ग़ी को निशाना बनाया हुआ था और उस पर तीर चला रहे थे। जब उन लोगों ने इब्न उमर रज़ियल्लाहु अन्हु को देखा तो वहाँ से अलग हो गए। इब्न उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा कि यह काम किसने किया? रसूलुल्लाह ﷺ ने तो उस पर लानत की है जिसने ऐसा काम किया।

इसी तरह जबीर बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि:

نهى رسول الله صلى الله عليه وسلم ان يقتل شيء من الدواب صبرا(صحيح مسلم:1959)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह ﷺ ने किसी जानवर को बांध कर मारने से मना किया है।

एक दूसरी हदीस में अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से मर्वी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

عذبت امراۃ في هرة، سجنتها حتی ماتت فدخلت فیها النار، لا هي اطعمتها وسقتها إذ حبستها، ولا هي تركتها تاكل من خشاش الارض(صحیح مسلم:2242)

तर्जुमा: एक औरत को बिल्ली के मारने की वजह से अज़ाब हुआ। उसने बिल्ली को पकड़ कर रखा यहां तक कि वह मर गई, फिर उस बिल्ली की वजह से वह जहन्नम में गई, उसने बिल्ली को न खाना दिया और न पानी जब उसे क़ैद में रखा और न ही उसे छोड़कर ज़मीन के खाद्य से खाने दिया।

यह फ़रमान मज़ीद वाज़ेह है कि जिस में भी जान है उसे टारगेट और हदफ़ बनाना जाइज़ नहीं है क्योंकि नबी ﷺ का फ़रमान है:

لا تَتَّخِذُوا شَيْئًا فِيهِ الرُّوحُ غَرَضًا(صحیح مسلم:1957)

तर्जुमा: जिस चीज़ में भी रूह हो, उसे टारगेट मत बनाओ।

इन सभी हदीसों से मालूम हुआ कि ब्लैक हेपटाइटिस के इलाज के लिए कबूतर की जान लेना वाज़ेह तौर पर क़त्ल है बल्कि इस अमल के बारे में क़यामत के दिन पूछ हो सकती है और उस औरत का हाल भी जान लीजिए जो बिल्ली के क़त्ल के बाइस जहन्नम में दाख़िल हुई।

अब्दुल्लाह बिन अम्र रज़ियल्लाहु अन्हु से रवायत है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया:

ما من إنسانٍ يَقْتُلُ عُصفُورًا فما فَوْقَها بغيرِ حَقِّها ، إلَّا سَأَلَهُ اللهُ عَنْها يومَ القيامةِ قيل : يا رسولَ اللهِ ! وما حَقُّها ؟ قال : حَقُّها أنْ يذبحَها فيأكلَها ، ولا يَقْطَعَ رَأْسَها فيَرْمِيَ بِه(صحيح الترغيب:2266)

तर्जुमा: कोई इंसान अगर चिड़ीया या उससे भी छोटे जानवर को बिना हक़ के क़त्ल करता है, तो अल्लाह क़यामत के दिन उससे उसके बारे में पूछेगा। पूछा गया: ऐ अल्लाह के रसूल! उसका हक़ क्या है? आप ने फ़रमाया: उसे ज़िब्ह कर के खाए। उसका सिर काट कर ना फेंक दे।

इसी तरह रसूलुल्लाह ﷺ का यह भी फ़रमान है:

لتؤدن الحقوق إلى اهلها يوم القيامة حتى يقاد للشاة الجلحاء من الشاة القرناء(صحيح مسلم:2582)

तर्जुमा: क़यामत के दिन तुम हक़दारों के हक़ ज़रूर अदा करोगे यहां तक कि बिना सींग वाली बकरी से सींग वाली बकरी से क़िसास लिया जाएगा।

इन सारी हदीसों को सामने रखते हुए फ़ैसला करें कि जब एक बीमारी के लिए कई इलाज मौजूद हैं बल्कि सस्ते और मुफ़्त (Free) इलाज भी मौजूद हैं तो ऐसी स्थिति में एक आदमी के लिए दर्जनों कबूतर की तकलीफ़ देह स्थिति में जान लेना सही है? वैसे भी यह वैज्ञानिक तरीक़ा इलाज नहीं है, इसे लोगों ने बनाया और मशहूर कर रखा है। एक होशमंद आदमी को इलाज के लिए ख़ास तौर से ख़तरनाक बीमारी के वास्ते ऑथेंटिक डॉक्टर और ऑथेंटिक अस्पताल से रुजू करना चाहिए ना कि ऐरे ग़ैरे का नुस्ख़ा अपनाना चाहिए। साथ ही जिन लोगों ने भी बे-कसूर परिंदों का इलाज करने के लिए जान लिया है, उन्हें तौबा करनी चाहिए और आगे से इस अमल से बचना चाहिए। इस सिलसिले में एक आख़िरी बात यह है कि अगर मेडिकल और साइंस का माहिर इस तरीक़े को फ़ायदेमंद क़रार दे और कोई ब्लैक

हेपटाइटिस का ऐसा मरीज़ हो जिसकी जान को ख़तरा हो और उस बीमारी का कबूतर इलाज के अलावा कोई दूसरा इलाज न हो, तब जान बचाने के लिए इस तरीक़े को अपनाने में हरज नहीं है जबकि हमें मालूम है कि हेपटाइटिस C का ऐसा इलाज मौजूद है जिसमें कोई नुक़सान नहीं, तो फिर कबूतर के इलाज के लिए जान लेना गुनाह का बाइस है।



[27].किसकी दुआ क़बूल होती है?

दुआ मोमिन की ज़िंदगी का अहम तरीन हिस्सा है। मोमिन हर लम्हा (क्षण) उससे जुड़ा रहता है और ज़िंदगी के तमाम मसाइल अपने ख़ालिक़ और मालिक के सामने बयान करता रहता है। ख़ालिक़ अपने बंदों की पुकार से ख़ुश होता है और हर वो चीज़ अता करता है जिसके लिए उसके बंदे ने निदा (आवाज़) लगाई है। आज लोगों की अक्सरियत (अधिकांशता) ने ज़ईफ़ुल एतिक़ादी और ईमान में कमज़ोरी के बाइस (कारण) दुआ की अहमियत और उसकी क़बूलियत से अपना भरोसा उठा लिया है। दुआ तो लोग करते हैं मगर अदा-ए-क़बूलियत का रोना रोते हैं। अपनी दुआओं पर भरोसा करने के लिए फिर ग़ैरुल्लाह का वसीला लगाते हैं। पता नहीं लोगों को क्या हो गया है कि बराह-ए-रास्त (बग़ैर किसी ज़रिए के) अल्लाह को पुकारने में कोई फ़ायदा नज़र नहीं आता, मगर मज़ारात पर दुआ करके बड़े ख़ुश होते हैं, मुर्दे का वसीला लगाकर दुआओं की क़बूलियत पर भरोसा बांध लेते हैं।

इब्तिदा-ए-आफ़रीनिश से अल्लाह की मख़लूक़ ने हमेशा अल्लाह को पुकारा है, और नबियों के पैदा होने का अज़ीम मक़सद एक रब को पुकारने की तरफ़ बुलाना है। नबियों ने ख़ुद भी अल्लाह को पुकार

कर अपनी अपनी उम्मत को इसकी तालीम दी। क़ुरआन में कितने पैग़म्बरों का ज़िक्र है जो अपने रब को पुकारते हैं और हर मोमिन बल्कि अल्लाह का हर वली जो वाक़ई अल्लाह का वली हो, उन्होंने हमेशा अल्लाह को ही पुकारा।

दुआ ख़ालिस इबादत का नाम है। तमाम नबियों के सरदार, तमाम इंसानों में अशरफ़, तमाम औलिया में सब से मुकर्रम, हम सब के इमाम-ए-आज़म मोहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने इर्शाद फ़रमाया:

الدعاء هو العبادة ثم قرأ وقال ربكم ادعوني استجب لكم ان الذين يستكبرون عن عبادتي سيدخلون جهنم داخرين.(صحيح الترمذي:3372)

तर्जुमा: दुआ ही इबादत है। फिर आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने आयत : (وقال ربكم ادعوني أستجب لكم إن الذين يستكبرون عن عبادتي سيدخلون جهنم داخرين) तुम्हारा रब फ़रमाता है। तुम मुझे पुकारो मैं तुम्हारी पुकार (दुआ) को क़बूल करूँगा जो लोग मुझसे माँगने से घमण्ड करते हैं वो जहन्नम में ज़लील और ख़्वार हो कर दाख़िल होंगे (मोमिन : 60) पढ़ी।

आज मुसलमानों का ईमान किस क़दर गिर गया है कि जाली पीर और फ़क़ीर और ढोंगी बाबाओं की बातों पर तो शक नहीं होता, मगर उन्हें न तो अल्लाह के कलाम पर भरोसा है और न ही कायनात की सबसे अज़ीम हस्ती के फ़रमान पर भरोसा है। मज़कूरा बाला हदीस में रसूल-ए-अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बताया कि दुआ इबादत है और आपने दलील में क़ुरआन की आयत पेश की कि रब का फ़रमान है, तुम सिर्फ़ मुझे पुकारो, मैं तुम्हारी पुकार का जवाब देता हूँ। हाँ, अल्लाह ने और भी फ़रमाया कि लोगों सुन लो, अगर तुम ने मुझे छोड़ कर ग़ैर को पुकारा तो तुम्हारा ठिकाना जहन्नम होगा, वह भी ज़िल्लत और रसवाई के साथ। अल्हिफ़्ज़-वल-अमाँ बा'री-ए-तआला ने एक दूसरी जगह इर्शाद फ़रमाया:

واذا سألك عبادي عني فإني قريب أجيب دعوة الداع إذا دعان فليستجيبوا لي وليؤمنوا بي لعلهم يرشدون.(البقرة:186)

तर्जुमा: जब मेरे बंदे मेरे बारे में आप से सवाल करें तो आप कह दें कि मैं बहुत ही क़रीब हूँ, हर पुकारने वाले की पुकार को जब भी वह मुझे पुकारे, क़बूल करता हूँ। इसलिए लोगों को भी चाहिए कि वह मेरी बात मान लिया करें और मुझ पर ईमान रखें, यही उनकी भलाई का बाइस है।

अल्लाह ने इस कदर वाज़ेह कर दिया कि न समझने वालों को भी समझ आ जाए। अल्लाह क़रीब है और हमेशा आदमी क़रीब को ही पुकारता है। इसी तरह की मिसाल दे कर अल्लाह ने अपने बंदों को बताया कि मुझे ही पुकारो, मुझे जो भी पुकारता है, मैं उसकी पुकार सुनता हूँ। आगे अल्लाह ने निशानी भी ज़िक्र फ़रमाई है कि जो अपने हक़ीकी माबूद को पुकारते हैं, उनका शि'आर (पहचान) अपने रब पर सही मायने में ईमान लाना और अपने ख़ालिक़ की इताअत और फ़रमाबरदारी करना है। जो लोग अल्लाह को छोड़कर ग़ैरुल्लाह को पुकारते हैं, वे न तो रब पर सही ईमान लाने वाले हैं और न ही रब की इताअत बजा लाने वाले हैं।

अल्लाह हर जगह से और हर लम्हा बंदों की पुकार सुनता है, मगर उसकी शान-ए-करिमी और बंदों पर अज़ीम मेहरबानी देखे कि वह फ़रियाद सुनने हर रात आसमान-ए-दुनिया पर नुज़ूल फ़रमाता है:

يتنزل ربنا تبارك وتعالى كل ليلة إلى السماء الدنيا حين يبقى ثلث الليل الآخر يقول من يدعوني فأستجيب له من يسألني فأعطيه من يستغفرني فأغفر له.(صحيح البخاري:6321)

तर्जुमा: हमारा रब तबारक-व-तआला हर रात आसमान दुनिया की तरफ़ नुज़ूल फ़रमाता है उस वक़्त जब रात का आख़िरी तिहाई हिस्सा बाक़ी रह जाता है और फ़रमाता है कौन है जो मुझसे दुआ करता है

कि मैं उसकी दुआ क़बूल करूँ कौन है जो मुझसे माँगता है कि मैं उसे दूँ कौन है जो मुझसे बख़्शिश तलब करता है कि मैं उसकी बख़्शिश करूँ।

दुआ से मुताल्लिक़ कुरआन और हदीस में बहुत सारे नुसूस हैं जिनके ज़िक्र का यह मक़ाम नहीं है। यहाँ मेरा मक़सद उन लोगों का ज़िक्र करना है जिनकी दुआएं क़बूल होती हैं। मज़कूरा बातें बतौर तम्हीद थी ताकि अगर किसी को यह महसूस होता है कि हमारी दुआएं क़बूल नहीं होतीं तो वह अदम-ए-क़बूलियत की वजह से तलाश करें और अपनी इस्लाह कर लें।

3 क़िस्म के लोगों की दुआ कभी रद्द नहीं होती। रसूल-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इर्शाद फ़रमाया:

ثلاث دعوات مستجابات دعوة المظلوم ودعوة المسافر ودعوة الوالد على ولده.(صحيح الترمذي:3448)

तर्जुमा: तीन तरह की दुआएँ क़बूल होती हैं: मज़लूम की दुआ, मुसाफ़िर की दुआ और बाप की बद्द-दुआ अपने बेटे के हक़ में।

मज़लूम पर ज़ुल्म करने वाला अल्लाह से बेख़ौफ़ होता है या यह भी कह सकते हैं कि इस वक्त अपने ज़हन से ख़ालिक का तसव्वुर निकल चुका होता है। जिस के ज़हन में ख़ालिक़ का तसव्वुर होता है, वह कभी दूसरों पर ज़ुल्म नहीं कर सकता, क्योंकि ख़ालिक़ इस काइनात का ख़ालिक़ ही नहीं, मुन्सिफ़ भी है, उसकी अदलत में हक़ के साथ फ़ैसले होते हैं। अगर उसके यहाँ इंसाफ़ न होता तो फ़िरौन जैसे लोग कमज़ोरों को दुनिया में ज़िंदा नहीं छोड़ते। दुनिया में लोगों की अदलत सिर्फ़ धोखा है, इंसाफ़ तो अल्लाह की अदालत में है। जब कभी कोई किसी पर ज़ुल्म करता है और मज़लूम अपने ख़ालिक़ से उस ज़ालिम के ख़िलाफ़ फरियाद करता है, तो फिर दुनिया में ज़ालिम को बचाने वाला कोई नहीं होता। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने माज़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) को जब आमिल बना कर यमन भेजा, तो आपने उन्हें हिदायत फ़रमाई:

اتق دعوة المظلوم فإنها ليس بينها وبين الله حجاب.(صحيح البخاري:2448)

तर्जुमा : मज़लूम की बददुआ से डरते रहना चाहिए क्योंकि उस (दुआ) और अल्लाह के बीच कोई पर्दा नहीं होता।

मज़लूम काफ़िर भी हो तो उसकी दुआ रद्द नहीं की जाती है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

دعوة المظلوم المستجابة وان كان فاجرا ففجورة على نفسه.

(صحيح الترغيب:2229)

तर्जुमा: मज़लूम की दुआ क़बूल की जाती है, चाहे वह फ़ाजिर ही क्यों न हो, फुजूर (का ख़ामियाज़ा) उसी की जान पर होगा।

ज़ुल्म और ज़्यादती दरबार-ए-इलाही में इस क़दर संगीन जुर्म है कि इसकी सज़ा दुनिया में भी मिलती है और आख़िरत में भी दी जाएगी। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

ما من ذنب اجدر ان يعجل الله لصاحبه العقوبة في الدنيا مع ما يدخر له في الاخرة من البغي وقطيعة الرحم.

(صحيح ابن ماجه:3413)

तर्जुमा: ज़ुल्म और क़तअ-ए-रहमी से बढ़कर कोई गुनाह ऐसा नहीं है जिसको अल्लाह की ओर से दुनिया में भी जल्दी सज़ा दी जाए और आख़िरत के लिए भी उसे बाक़ी रखा जाए।

मज़लूम की तरह मुसाफ़िर की दुआ और वालिद की अपनी औलाद के हक़ में दुआ कभी रद्द नहीं होती।

इस पस-मंज़र (परिप्रेक्ष्य) में, आपसे यह अर्ज़ करना है कि ज़ुल्म का बदला लेने से कोई मज़लूम नहीं रह जाता, सफ़र में बुराई करने से दुआ बेअसर हो जाएगी और वालिद का नेक और सालेह न होना दुआ की ताक़त छीन लेता है।

इन तीन लोगों के अलावा हदीस में सालेह औलाद की दुआ का ज़िक्र है जो वालिद के हक़ में क़बूल की जाती है। एक रिवायत मुस्लिम में है जिसमें तीन चीज़ों के सदक़ा-ए-जारिया का ज़िक्र है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

إذا مات الإنسان انقطع عنه إلا من ثلاث إلا من صدقة جارية أو علم ينتفع به أو ولد صالح يدعوا له.(صحيح مسلم: 1631)

तर्जुमा: जब इंसान मर जाता है तो उसका अमल मु'अत्तल हो जाता है सिवाय तीन चीज़ों के (जिनका फ़ायदा उसे बराबर पहुँचता रहता है): 1. सदक़ा-ए-जारिया, 2. इल्म जिससे लोगों को फ़ायदा पहुंचे, 3. नेक औलाद जो उसके लिए दुआ करती रहे।

इब्न माजा की हसन दर्जे की रिवायत में है नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

ان الرجل لترفع درجته في الجنة فيقول انى هذا فيقال باستغفار ولدك لك.(صحيح ابن ماجه: 214/3)

तर्जुमा: आदमी का दर्जा जन्नत में बुलंद किया जाएगा, फिर वह कहेगा कि मेरा दर्जा कैसे बुलंद हो गया (हालांकि मुझे कोई अमल करने का मौक़ा नहीं रहा)। उसे जवाब दिया जाएगा कि तुम्हारे लिए तुम्हारी औलाद के दुआ और इस्तिग़फ़ार करने के सबब से।

बाप का अपने बेटे पर जिंदगी भर का एहसान होता है, बतौर-ए-ख़ास बच्चे से लेकर जवानी तक। औलाद के लिए वालिदैन की क़ुर्बानियाँ दुनिया में कोई सिला (बदला) मुमकिन नहीं है, ताहम उनकी क़ुर्बानियों और एहसान और सुलूक के बावजूद ज़्यादा से ज़्यादा उनके लिए दुआ और इस्तिग़फ़ार करना चाहिए।

एक हदीस में ग़ाज़ी, हाजी, और मो'तमिर (उम्राह करने वाले) तीन क़िस्म के आदमियों की दुआ क़बूल होने का ज़िक्र है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

الغازي في سبيل الله والحاج والمعتمر وفد الله دعاهم فاجابوه وسالوه فاعطاهم. (صحيح ابن ماجه:2357)

तर्जुमा: अल्लाह की राह में निकले हुए गाज़ी और हज्ज और उम्राह करने वाले अल्लाह के मेहमान हैं। अल्लाह ने उन्हें बुलाया, तो वे आ गए, लिहाजा अब वे अल्लाह से सवाल करेंगे तो अल्लाह उन्हें अता फरमाएगा।

अल्लाह जिन्हें गज़्वा या हज और उम्रा की सआदत बख़्शे, उन्हें अपने अमल में इख़लास पैदा करना चाहिए और कसरत से अल्लाह को पुकारना चाहिए, अल्लाह उनकी मुरादें पूरी फ़रमाएगा।

अपने भाइयों की पीठ पीछे दुआ करना भी क़बूलियत का सबब है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

دعوة المرء المسلم لأخيه بظهر الغيب مستجابة عند رأسه ملك موكل كلما دعا لأخيه بخير قال الملك الموكل به آمين ولك بمثل.(صحيح مسلم: 2733)

तर्जुमा: मुसलमान की अपने भाई के लिये उस की पीठ पीछे की गई दुआ सुनी जानेवाली होती है, उसके सिर के क़रीब एक फ़रिश्ता मुक़र्रर होता है, वो जब भी अपने भाई के लिये दुआए-ख़ैर करता है। तो मुक़र्रर किया हुआ फ़रिश्ता इस पर कहता है। : आमीन और तुम्हें भी इसी के जैसी (भलाई) अता हो।

अल्लाह त'आला तौबा करने वाले की भी दुआ क़बूल करता है, बल्कि तौबा करने वाला अल्लाह के नज़दीक महबूब और पसंदीदा बंदा होता है। फ़रमान-ए-इलाही है:

وهو الذي يقبل التوبة عن عباده ويعفو عن السيئات ويعلم ما تفعلون. (الشوري:25)

तर्जुमा: वही है जो अपने बंदों की तौबा क़बूल करता है और गुनाहों से दरगुज़र करता है और जो कुछ तुम कर रहे हो, सब जानता है।

और नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

ان عبدا أصاب ذنبا وربما قال اذنب ذنبا فقال رب اذنبت وربما قال اصبت فاغفر لي فقال ربه اعلم عبدي ان له ربا يغفر الذنب ويأخذ به؟غفرت لعبدي.(صحيح البخاري:7507)

तर्जुमा: एक बंदे ने बहुत गुनाह किए और कहा, "ऐ मेरे रब, मैं तेरा ही गुनाहगार बंदा हूँ, तू मुझे माफ़ कर दे।" अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने फ़रमाया: "मेरा बंदा जानता है कि उसका एक रब है जो गुनाह माफ़ करता है और गुनाह की वजह से सज़ा भी देता है। मैंने अपने बंदे को माफ़ कर दिया।" बल्कि इस हदीस में है कि बंदा बार-बार गुनाह करता है और बार-बार अल्लाह से तौबा करता है, और अल्लाह अपने बंदे को माफ़ कर देता है।

अल्लाह कभी-कभी गुनाहगार की भी दुआ क़बूल कर लेता है, यहाँ तक कि शिर्क करने वाले की दुआ भी क़बूल कर लेता है। यह अल्लाह की मेहरबानी है। मुमकिन है गुनाहगार अपने गुनाहों से पलट जाए, तौबा और इस्तिग़फ़ार कर ले। अल्लाह ताला मुशरिकों की दुआ के बारे में ज़िक्र करता है:

واذا مسكم الضر في البحر ضل من تدعون إلا أياه فلما نجاكم الى البر اعرضتم وكان الإنسان كفورا.[الإسراء:67]

तर्जुमा: और जब तुम्हें समुद्र में मुसीबत पहुंचती है, तो तुम्हारे द्वारा पुकारे जाने वाले सभी खो जाते हैं, सिर्फ़ वही अल्लाह बाक़ी रहता है। फिर जब वह तुम्हें सूखी ज़मीन की ओर निकालता है, तो तुम मुंह फेर लेते हो और इंसान बड़ा ही नाशुक्रा है।

अल्लाह ने शैतान की भी दुआ क़बूल की है। फ़रमान-ए-बारी तआला है:

قال انظرني إلى يوم يبعثون قال انك من المنظرين[.الاعراف:1514)

तर्जुमा: [शैतान ने] कहा: "मुझे उस दिन तक मोहलत दे जब लोग उठाए जाएंगे।" [तो अल्लाह ने] फ़रमाया: "तुझे मोहलत दी गई है।"

दुआ असल में मोमिन और मुत्तक़ी बंदों की क़बूल की जाती है। गुनाहगारों की दुआ कभी-कभी क़बूल हो जाती है, तो इसका मतलब नहीं कि गुनाह का दुआ पर कोई असर नहीं पड़ता। गुनाह का दुआ पर बहुत असर पड़ता है और हराम कमाई का तो बेहद असर पड़ता है, चुनांचे सही मुस्लिम में वारिद है:

ثم ذكر الرجل يطيل السفر اشعث اغبر يمد يديه إلى السماء يا رب يا رب ومطعمه حرام ومشربه حرام وملبسه حرام وغذي بالحرام فإنى يستجاب لذلك؟(صحيح مسلم: 1015)

तर्जुमा: फ़िर आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक ऐसे शख़्स का ज़िक्र किया जो लंबा सफ़र करता है, परेशानहाल और धूल-गर्द से ढका हुआ है। वह आसमान की ओर हाथ फैलाकर दुआ मांगता है, "मेरे रब, मेरे रब," और हाल यह है कि उसका खाना हराम का है, उसका पीना हराम का है, उसका पहनना हराम का है, और उसकी परवरिश ही हराम से हुई है।

फिर उसकी दुआ कैसे क़बूल होगी?

अगर कभी मज़ार पर दुआ करने से क़बूल हो जाए, अगर कभी ग़ैरुल्लाह को पुकारने से दुआ क़बूल हो जाए, अगर कभी औलिया के

वसीले से दुआ क़बूल हो जाए, तो मुसलमान को यह नहीं समझना चाहिए कि इस तरह दुआ करना सही है या ऐसे दुआ करने से जल्दी क़बूल होती है। हरगिज़ नहीं।

(1) हमारा अक़ीदा यह है कि देने वाला सिर्फ़ अल्लाह है, चाहे मांगने वाला कहीं भी जाकर मांगे।

(2) अल्लाह तआला बंदों को तरह-तरह से आज़माता है और आज़माइश में मुब्तला कर के गुनाह से पलटने और तौबा करने की मोहलत देता है। कोई मुसलमान यह अक़ीदा रखे कि क़ब्र वाला भी देता है, तो फिर हिंदुओं का अक़ीदा पत्थर से मांगना भी सही हो जाएगा, क्योंकि कभी-कभी उसकी भी मुराद पूरी हो जाती है, जबकि एक अदना मुसलमान भी कहेगा कि पत्थर फ़ायदा और नुक़सान का मालिक नहीं है। यही अक़ीदा क़ुरआन हमें सिखाता है। अल्लाह का फ़रमान है:

ولا تدع من دون الله ما لا ينفعك ولا يضرك فإن فعلت فإنك إذا من الظالمين.(يونس:106)

तर्जुमा: और अल्लाह को छोड़कर किसी ऐसे को मत पुकारो जो तुम्हें न कोई फ़ायदा पहुंचा सके और न कोई नुक़सान पहुंचा सके। फिर ऐसा किया तो तुम इस हालात में ज़ालिमों में से हो जाओगे। अपने

मोमिन और मुवह्हिद भाईयों से यह अर्ज़ करना चाहता हूँ कि अल्लाह से दुआ करते रहो, वह हर नेक बंदे की दुआ क़बूल करता है। दुआ की क़बूलियत पर यक़ीन भी रखो। क्या आपने शुरू में मौजूद अल्लाह का कलाम नहीं पढ़ा जिसमें ज़िक्र है कि अल्लाह हर पुकारने वाले की पुकार सुनता है, बशर्ते वह सही मायनों में उस पर ईमान लाने वाला हो और उसके अहकाम की ताबेदार करने वाला हो। अल्लाह के नज़दीक दुआ सबसे मु'अज़्ज़ज़ और मुक़र्रम चीज़ है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

ليس شيء اكرم على الله تعالى من الدعاء. (صحيح الترمذي:3370)

तर्जुमा: अल्लाह के नज़दीक दुआ से ज़्यादा मु'अज़्ज़ज़ और मुक़र्रम कोई चीज़ नहीं है।

इसलिए अल्लाह दुआ करने वालों को कभी मायूस नहीं करता। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

ان الله حی کریم یستحی إذا رفع الرجل اليه يديه ان يردهما صفرا خائبتين. (صحيح الترمذي:3556)

तर्जुमा: अल्लाह ज़िंदा और करीम है, यानी वह ज़िंदा और मौजूद है और शरीफ़ है। उसे इस बात से शर्म आती है कि जब कोई आदमी

उसके सामने हाथ फैलाए तो वह उसके दोनों हाथों को ख़ाली और नाकाम और नामुराद वापस कर दे।

हाँ, यह बात जानने की ज़रूरत है कि दुआ की क़बूलियत की शक्लें मुख़्तलिफ़ हो सकती हैं। चूँकि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का यह फ़रमान मुलाहिज़ा फ़रमाएँ:

ما من مسلم يدعوا بدعوة ليس فيها إثم ولا قطيعة رحم إلا أعطاه بها احدى ثلاث اما ان يعجل له دعوته واما ان يدخرها له في الاخرة واما ان يصرف عنه من السوء مثلها قالوا إذا نكثر قال الله أكثر. (صحيح الترغيب:1633)

तर्जुमा: जब भी कोई मुसलमान ऐसी दुआ करे जिसमें गुनाह या क़त'-ए-रहम न हो, तो अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त तीन बातों में से एक ज़रूर उसे नवाज़ते हैं: या तो उसकी दुआ को क़बूल फ़रमा लेते हैं, या उसके लिए आख़िरत में ज़ख़ीरा कर देते हैं, या उसकी जैसी कोई बुराई उससे टाल देते हैं। सहाबा ने कहा: फिर तो हम ब-क़स्रत दुआ करेंगे। तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: अल्लाह उससे भी ज़्यादा बख़्शने वाला है।

ग़ौर किया जाए, दुआ कभी रद्द नहीं की जाती, कभी तुरंत क़बूल कर ली जाती है, कभी उसकी क़बूलियत में देर हो सकती है, कभी उसे

आख़िरत के लिए ज़ख़ीरा बना दिया जाता है, और कभी उसके बदले बुराई दूर कर दी जाती है।

बहरहाल, दुआ इबादत है, इसलिए 'आजिज़ी और इख़्लास के साथ सिर्फ़ अपने ख़ालिक़ को पुकारें। दुआ करते हुए उसके साथ किसी को शरीक न करें, बराह-ए-रास्त उसी से मांगें, दुआ करते हुए ज़िंदा या मुर्दा किसी का वसीला न लगाएं, बल्कि अल्लाह के अस्मा-ए-हुसना और अपने आमाल-ए-सालिहा का वसीला लगाएं। गुनाहों से बचें, सही तौर पर अल्लाह पर ईमान लाएं, अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अहकाम की पासदारी करें, तौबा के साथ दुआ करें, हराम कमाई से बिल्कुल दूर रहें, लोगों का हक़ न मारें, और न ही किसी पर नाहक़ ज़ुल्म करें। दुआ में अफ़ज़ल औक़ात का ख़्याल रखें, इन बातों का पास और लिहाज़ होगा तो रब्बुल आलमीन बेशक हमारी दुआ क़बूल फ़रमाएगा।

==============

[28].कोरोना वायरस के ख़ौफ़ से घर में नमाज़ अदा करना

बाज़ ख़लीजी ममालिक, जिनमें सऊदी अरब भी शामिल है, वहां हुकूमत की जानिब से मसाजिद में 5 वक्ता और नमाज़-ए-जुमा पर पाबंदी लगाने से आवामी हल्क़े में अक्सर यह सवाल घूम रहा है कि क्या ऐसा करना ठीक है? क्या क़ुरआन और हदीस की रोशनी में मस्जिद बंद करने और फ़राइज़ घरों में अदा करने की गुंजाइश है?

अवाम (जनता) के दरमियाँन मज़कूरा सवाल का घूमना फ़ितरी काम है, क्योंकि यह इबादत का मामला है। इस सिलसिले में सोशल मीडिया पर मुख़्तलिफ़ क़िस्म की तहरीर पढ़ने को मिली। पाकिस्तान के चंद उलमा की मुत्तफिक़ा क़रार-दाद (प्रस्ताव) भी नज़र से गुज़री। उन सब बातों को सामने रखते हुए इस मसले को किताब और सुन्नत की रोशनी में वाज़ेह करने की कोशिश कर रहा हूँ। अल्लाह तआला मुझे हक़ की तौफ़ीक़ दे।

इस्लामी तालीमात में मशक़्क़त के वक्त आसानी इख़्तियार करने और ख़तरात और नुक़सानात के वक्त एहतियाती तदाबीर अपनाने का हुक्म दिया गया और अपनी जानों को हलाकत में डालने से मना

किया गया है। इस सिलसिले में बहुत सारी दलीलें हैं जो अमूमन मुसलमानों को मालूम हैं, बिलख़ुसूस ऐसा कोई भी रास्ता इख़्तियार करना जिससे हलाकत का अंदेशा भी हो, ममनू है। सऊदी अरब की फ़तवा कमेटी "هيئة كبار العلماء" ने मशवरा के बाद फ़तवा जारी किया है कि कोरोना वायरस के अंदेशे के पेश-ए-नज़र यहां की मसाजिद 5 वक्त और नमाज़-ए-जुमा के लिए बंद रखी जाएंगी।

इस फ़ैसले की वजह से अरब के मशाइख़ और हुकूमत-ए-अरब पर कुछ लोग वावेला और नामुनासिब बातें करते नज़र आ रहे हैं। इसका हिंदुस्तान और पाकिस्तान या दुनिया के किसी मुल्क से ताल्लुक़ नहीं है। फिर लोगों का इस फ़तवे पर वावेला करना, ख़ासकर मुक़ल्लिदों का (जिनके फ़तवे की बुनियाद अरब नहीं, अपने चुने हुए इमाम की बातें हैं) क़ाबिले अफ़सोस है। आप अपने इलाक़े में कोरोना वायरस से महफ़ूज़ हैं तो अपनी मसाजिद खुली रखें, सऊदी हुकूमत आपको अपनी मसाजिद बंद करने का हुक्म नहीं देती है।

रहा मसला, शरई नुक्ते-ए-नज़र से क्या वबाई बीमारियों के ख़ौफ़ से मसाजिद की बजाय घरों में फराइज़ अदा कर सकते हैं या नहीं?

उसका जवाब यह है कि अलग-अलग हदीसों से हमें मालूम होता है कि शदीद बारिश या तेज़ आंधी-तूफ़ान की वजह से लोगों को अपने

घरों में नमाज़ का हुक्म दिया जा सकता है। चुनांचे अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने एक ठंडी और बरसात की रात में अज़ान दी फिर ऐसे पुकार कर कह दिया 《ألا صلوا في رحال》 कि लोगों, अपनी क़ियामगाहों पर ही नमाज़ पढ़ लो। फिर फ़रमाया:

ان رسول الله صلى الله عليه وسلم كان يأمر المؤذن إذا كانت ليلة ذات برد ومطر يقول الا صلوا في الرحال.(صحيح البخاري:666)

तर्जुमा: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम सर्दी और बारिश की रातों में मुअज़्ज़िन को हुक्म देते थे कि वह ऐलान कर दे कि लोग अपनी क़ियामगाहों पर ही नमाज़ पढ़ लें।

इसी तरह सहीह बुख़ारी 668 में मज़कूर है कि एक मर्तबा अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने जुमा के दिन ख़ुत्बा सुनाया और बारिश और कीचड़ की वजह से मुअज़्ज़िन को यह हुक्म दिया कि अज़ान में आज 《حی علی الصلاة》 की जगह ऐसे पुकार दो 《 الصلاة في الرحال》 कि नमाज़ अपनी क़ियामगाहों पर ही अदा कर लो।

जब लोगों ने आपके इस अमल पर ताज्जुब किया तो उन्होंने कहा:

كانكم انكرتم هذا ان هذا فعله من هو خير مني يعني النبي صلى الله عليه وسلم انها عزمة واني كرهت ان اخرجكم.

तर्जुमा: ऐसा मालूम होता है कि तुमने शायद इसको बुरा जाना है। ऐसा तो मुझसे बेहतर ज़ात यानी रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने भी किया था। बेशक जुमा वाजिब है मगर मैंने यह पसंद नहीं किया कि 《حى على الصلاة》 कहकर तुम्हें बाहर निकालूं और तकलीफ़ में मुब्तिला करूं।

और हम्माद, आसिम से, वह अब्दुल्लाह बिन हारिस से, वह इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से इसी तरह रिवायत करते हैं, अलबत्ता उन्होंने इतना और कहा कि इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया:

كرهت ان أؤثمكم فتيجئون تدوسون الطين إلى ركبكم.

तर्जुमा: मुझे अच्छा मालूम नहीं हुआ कि तुम्हें गुनहगार करूं और तुम इस हालत में आओ कि तुम मिट्टी में घुटनों तक आलूदा हो गए हो।

सहीह बुख़ारी की इन दोनों हदीसों पर ग़ौर करें तो मालूम होता है कि बारिश और कीचड़ की वजह से बस्ती और मोहल्ले के सारे लोग

मस्जिद की बजाय अपने-अपने घरों में नमाज़ अदा कर सकते हैं। यह अल्लाह की तरफ़ से बंदों के लिए आसानी है ताकि मशक़्क़त से बचा जा सके।

इस्लाम आसानी का नाम है। इन अहादीस से एक अहम नुक्ता यह समझ में आ रहा है कि जब सिर्फ़ जिस्मानी मशक़्क़त की वजह से शरियत हमें शदीद बारिश के वक्त घरों में नमाज़ अदा करने की इजाज़त देती है, तो जहां जान का ख़तरा हो, वहां घरों में नमाज़ अदा करना बदर्ज़ औला जायज़ होगा। बल्कि हमने इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु के अमल को देखा कि उन्होंने बारिश की वजह से जुमा की नमाज़ से भी लोगों को रोका और अपने घरों में नमाज़ अदा करने का हुक्म दिया और इस अमल को सुन्नत-ए-रसूल बताया। जान तो बड़ी चीज़ है, उसको हलाकत में डालने से सख़्ती के साथ मना किया गया है और कोरोना वायरस से जान का ख़तरा है। इस वजह से सऊदी अरब का यह कदम सुन्नत के ख़िलाफ़ नहीं है।

और कुछ बातें नीचे दर्ज हैं:

कोरोना वायरस के ख़ौफ़ से सिर्फ उन ही माक़ामात के लोग अपने घरों में नमाज़ अदा करें जहां इसका ख़तरा है और जो इलाके महफ़ूज़ हैं, वहां वाले मसाजिद में फ़राइज़ का एहतिमाम करें।

जो लोग यह शक पैदा कर रहे हैं कि कोरोना वायरस के मरीज़ों को मसाजिद से दूर रखा जाए लेकिन मसाजिद बंद ना की जाए, वे प्याज़ खाकर मस्जिद आने वाले या बीमार ऊंट को सेहतमंद ऊंट से दूर रखने की दलील पेश करते हैं। इस बात के लिए मैं बयान करना चाहता हूँ कि कोरोना वायरस की शुरुआती तौर पर 14 दिन तक उसकी अलामत ज़ाहिर नहीं होती, ऐसे में एक मरीज़ भी ख़ुद को अच्छा ही समझेगा और 14 दिनों में कितनों को बीमारी की लपेटे में ले लेगा। इससे कुछ लोग जान-बूझकर वायरस फैला भी सकते हैं। इस लिए ख़ासकर सऊदी अरब जो पूरी दुनिया के मुसलमानों का मरकज़ है, उसे तमाम ख़तरात और ख़तरों से महफ़ूज़ रखना बेहद ज़रूरी है। एक शख़्स जिसके मुताल्लिक़ यक़ीनी तौर पर मालूम है कि उसे वबाई बीमारी है, उससे दूरी इख़्तियार की जा सकती है, जैसा कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक मज्ज़ूम (जिसे कोढ़ हो) से बैअत नहीं की। लेकिन जब लोगों के बारे में मालूम ही ना हो

कि कौन बीमार है और कौन नहीं, वहां मसले का हल यही है कि लोगों को जमात होने से रोका जाए।

जो लोग यह कहते हैं कि कोरोना के ख़ौफ़ से मसाजिद बंद करना और घरों में नमाज़ पढ़ना ईमान की कमज़ोरी है और यह अल्लाह पर भरोसा के ख़िलाफ़ है, उनसे अर्ज़ है कि जहां हलाकत का डर हो, वहां हलाकत से बचने के लिए एहतियाती तदाबीर अपनाना न तो ईमान की कमज़ोरी है और न ही भरोसे के ख़िलाफ़ है। इससे न तो नमाज़ की अहमियत घटती है और न ही यह फराइज़ साक़ित होता है। नमाज़ तो किसी हाल में माफ़ नहीं है। फिर नमाज़ पढ़ने वाला ख़ुद को कमज़ोर ईमान वाला कैसे कह सकता है और उसका भरोसा अल्लाह पर कैसे बरक़रार नहीं रह सकता? क्या तदबीर इख़्तियार करना भरोसे के मुनाफ़ी है और क्या वक़्ती तौर पर चंद दिन घरों में नमाज़ अदा करने से ईमान कमज़ोर हो जाएगा? हरगिज़ नहीं। डर से कोढ़ी से भागने का हुक्म-ए-नबवी तदबीर ही है जो भरोसे के ख़िलाफ़ नहीं है और 《صلوا في الرحال》 उज़्र के वक्त सहाबा का अमल है जो ईमान की कमज़ोरी नहीं है।

अल्लाह हमें हर क़िस्म की बीमारियों से बचाए, ख़ासकर आज के पुर-फ़ितन दौर में हमारे ईमान की हिफ़ाज़त करे और ईमान पर ही ख़ात्म नसीब करे। आमीन

[29].कोरोना वायरस से मुत'अल्लिक़ मसाइल और उनका शरई हल

एक वबा की वजह से पूरी दुनिया में ख़ौफ़ का माहौल बना हुआ है। लाखों लोग इसकी चपेट में हैं और हज़ारों की मौत भी हो चुकी है। रोज़-ब-रोज़ मौत का सिलसिला जारी है और वायरस की ख़तरनाकी बढ़ने का इमकान है। ऐसे में हर मुल्क एहतियाती तदाबीर अपना रहा है। मुसलमान मुल्क और मुसलमानों के लिए भी इस बीमारी की वजह से मामलात से लेकर इबादत तक में कई क़िस्म के मसाइल पैदा हो गए हैं। उनमें से इफ़ादा-ए-'आम के लिए कुछ मसाइल का शरई हल आपके ख़िदमत में पेश कर रहा हूँ।

सवाल (1) : यह कोरोना वायरस क्या है, अज़ाब है, बीमारी है या फिर गुनाहों की सज़ा है?

जवाब: कोरोना वायरस को हू ब हू ताऊन नहीं कहा जा सकता, मगर ताऊन की तरह यह भी एक क़िस्म की वबाई बीमारी है जो मेल-जोल से एक दूसरे में दाख़िल हो जाती है। ताऊन की हदीस मद्दे नज़र

रखने से मालूम होता है कि कोरोना वायरस भी ताऊन की तरह एक क़िस्म का अज़ाब है और अज़ाब गुनाहों की सज़ा ही होती है, लेकिन हक़ीक़ी मोमिनों के हक़ में रहमत है। आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि वह बयान करती हैं:

سالت رسول الله صلى الله عليه وسلم عن الطاعون فأخبرني أنه عذاب يبعثه الله على من يشاء وان الله جعله رحمة للمؤمنين ليس من أحد يقع الطاعون فيمكث في بلده صابرا محتسبا يعلم انه لا يصيبه إلا ما كتب الله له إلا كان له مثل أجر شهيد. (صحيح البخاري: 3674)

तर्जुमा: मैंने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से ताऊन के बारे में पूछा तो आपने सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया यह एक अज़ाब है जिसे अल्लाह जिस पर चाहता है भेजता है, लेकिन अल्लाह ने इसे मोमिनों के लिए रहमत बना दिया है। अगर किसी शख़्स की बस्ती में ताऊन फैल जाए और वह सब्र के साथ अल्लाह की रहमत से उम्मीद लगाए हुए वहीं ठहरा रहे कि होगा वही जो अल्लाह ने क़िस्मत में लिखा है, तो उसे शहीद के बराबर सवाब मिलेगा। इस दौर के मुसलमान अक्सर गुमराह और कमज़ोर ईमान वाले हैं, इसलिए यह भी मुमकिन है कि शिर्क और बिदअत में डूबे हुए लोगों, हराम कारोबार करने वालों, बेहयाई का इर्तिकाब करने वालों और गुमराह लोगों के ख़िलाफ़ तन्बीह और सज़ा हो।

सवाल: (2) वबाई मर्ज़ के ख़ौफ़ से जमात छोड़ना और घरों में नमाज़ पढ़ने का हुक्म क्या है?

जवाब: अलग-अलग हदीसों से हमें मालूम होता है कि शदीद बारिश या तेज़ आंधी और तूफ़ान की वजह से लोगों को अपने घरों में नमाज़ का हुक्म दिया जा सकता है। चूंकि अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने एक ठंडी और बारिश की रात में अज़ान दी फिर ऐसा पुकार कह दिया: «الا صلوا في الرحال» कि लोग अपनी क़ियाम गाहों पर ही नमाज़ पढ़ लो, फिर फ़रमाया:

ان رسول الله صلى الله عليه وسلم كان يأمر المؤذن إذا كانت ليلة ذات برد ومطر يقول إلا صلوا في الرحال.(صحيح البخاري:666)

तर्जुमा: नबी करीम (सल्ल०) सर्दी और बारिश की रातों में मुअज़्ज़न को हुक्म देते थे कि वो ऐलान कर दे कि लोगो अपने घरों पर ही नमाज़ पढ़ लो।

जब सिर्फ़ जिस्मानी मशक़्क़त की वजह से शरियत हमें शदीद बारिश के वक्त घरों में नमाज़ अदा करने की इजाज़त देती है, तो जहाँ जान का ख़तरा हो वहाँ घरों में नमाज़ अदा करना बाला-दर्जा औला जायज़

होगा। नीज़ वह तमाम अहादीस भी दलील हैं जिनमें नुक़सान से बचने और जान को हलाकत में डालने से मना किया गया है। बड़ी आसानी से यह बात समझ सकते हैं कि जान बचाने की गरज़ से सुअर का गोश्त खाना जायज़ होगा, तो कोरोना वायरस के ख़ौफ़ से जिसमें जान जाने का ख़तरा है, क्यों नहीं घर में नमाज़ पढ़ सकते हैं?

सवाल (3): क़ुरआन की रोशनी में क्या मस्जिद बंद करने का ज़ालिम नहीं ठहरा पाएगा?

जवाब: बतौर-ए-ज़रूरत और मस्लहत मसाजिद बंद करने में कोई हर्ज नहीं है, जैसा कि ख़ाना-ए-काबा रसूल के ज़माने से

बंद है, जब कि इसमें ख़ुद आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नमाज़ अदा की है। हर मुसलमान इसमें नमाज़ पढ़ने की ख़्वाहिश रखता है, मगर फ़ितना के सबब इसका दरवाज़ा बंद कर दिया गया है और वह रू ज़मीन की सबसे अज़ीम और पहली मस्जिद है। इसी तरह दुनिया की तमाम मसाजिद नमाज़ के बाद ग़ैर वक़्त में बंद रखी जाती है। सूरा अल-बक़रा आयत नं 114 में अल्लाह के ज़िक्र से रोकने और मस्जिद को ख़राब और बर्बाद करने वाले से मुराद या तो ईसाई हैं

जिन्होंने यहूदीयों को बैतुल मुक़द्दस में नमाज़ पढ़ने से रोका और मस्जिद को नुक़सान पहुंचाया या मुश्रिकीन मक्का हैं जो मुसलमानों को ख़ाना-ए-काबा में इबादत से रोकते हैं। इससे वह लोग भी मुराद हो सकते हैं जो मस्जिद में इबादत से रोकते हैं और मस्जिद को ढाने और नुक़सान पहुंचाने का काम करते हैं। लेकिन वक़्ती तौर पर ज़रूरत और मस्लहत के तहत मसाजिद बंद करने वाला हरगिज़ ज़ुल्म नहीं है।

सवाल (4): अहले ख़ाना मिल कर घर में जुम'आ की नमाज़ अदा कर सकते हैं?

जवाब: घर में जुम'आ की नमाज़ नहीं होगी क्योंकि शरियत में ऐसी कोई दलील नहीं है। शरियत कई मौक़ो से इस बात की इजाज़त देती है कि अगर जुम'आ के दिन किसी वजह से नमाज़-ए-जुम'आ अदा न कर सकें, तो उसके बदले ज़ुह्र की नमाज़ अदा कर लें। आजकल कोरोना वायरस की वजह से अक्सर मुल्कों में मस्जिद में बामजामात नमाज़ पढ़ने से मना कर दिया गया है। इस हाल में 5 वक़्त की नमाज़ घर में अदा करनी है और जुम'आ के दिन घर में नमाज़-ए-

जुम'आ नहीं पढ़नी है, बल्कि ज़ुह्र की नमाज़ अदा करनी है। और अहले ख़ाना एक साथ मिल कर नमाज़ अदा करें तो जमात का अज्र मिलेगा।

सवाल (5): जब मस्जिद में अज़ान हो और जमात की आवाज़ आए तो अपने घरों में इमामत कर सकते हैं?

जवाब: अगर मस्जिद में सिर्फ़ अज़ान हो रही है और लोग अपने-अपने घरों में नमाज़ अदा कर रहे हैं, जबकि केवल मुअज़्ज़िन, इमाम और दो-एक लोग मिल कर वहां नमाज़ पढ़ रहे हैं, तब भी अपने घरों में इस जमात की इमामत मस्जिद में ही करनी चाहिए।

सवाल (6): एक मैसेज घूम रहा है जिसमें कहा गया है कि कोरोना वायरस से हिफ़ाज़त के लिए रोज़ाना पूरी क़ौम ठीक 10 बजे अपने-अपने घरों की छत पर और मुअज़्ज़िन साहब मस्जिद में एक साथ अज़ान दें। इस पैग़ाम की क्या हक़ीक़त है?

जवाब: इसमें कोई शक नहीं है कि अज़ान बरकत और रहमत का सबब है, लेकिन हम किसी भी अमल में शरियत के पाबंद हैं। हमें इस्लाम ने जहाँ पर अज़ान देने का हुक्म दिया है, वहीं अज़ान देंगे।

अल्हम्दुलिल्लाह, आज भी जब लोग घरों में नमाज़ अदा कर रहे हैं, मसाजिद में 5 वक़्त अज़ान हो रही है। अल्लाह की रहमत और बरकत के हासिल के लिए यह अज़ानें काफ़ी हैं। बारिश की नमाज़, जनाज़ा की नमाज़, ईदैन की नमाज़, सूरज ग्रहण की नमाज़, चाँद ग्रहण की नमाज़–जब इन नमाज़ों के लिए अपनी तरफ़ से अज़ान नहीं दे सकते तो घर की छत से कैसे अज़ान दे सकते हैं? यह भी याद रहे कि मुसीबत दूर करने के लिए अज़ान देने से मुताल्लिक़ कोई सही हदीस नहीं है, इसलिए अपने घर की छत से अज़ान देना बिदअत है और बिदअत के काम से आप मुसीबत को दूर नहीं भगा सकते हैं, बल्कि और मुसीबत मोल ले सकते हैं।

सवाल (7): कोरोना वायरस से बचने की क्या दुआ है?

जवाब: सीधी बात सुन लें कि कोरोना वायरस से हिफाज़त के लिए कोई मख़सूस दुआ नहीं है, लेकिन हदीस में बीमारी से बचने के लिए कई सारी दुआएं हैं। आप उन दुआओं को पढ़ सकते हैं। कुछ लोगों ने यह मशहूर कर दिया है कि यह दुआ कोरोना वायरस की है, जबकि यह बात ग़लत है।

اللهم اني اعوذ بك من البرص والجنون والجذام ومن سيئ الاسقام .(صحيح ابي داود:1554)

तर्जुमा: ऐ अल्लाह, मैं तुझसे पनाह मांगता हूँ बुख़ार, दीवानेपन, गुस्सा और तमाम बुरी बीमारियों से। यह दुआ ख़ास कोरोना वायरस के लिए नहीं है, लेकिन बीमारियों से हिफ़ाज़त के लिए यह दुआ और दीगर मस्नून दुआएं पढ़ सकते हैं।

सवाल (7): अभी जो ख़ौफ़ और हिरास (डर) का माहौल है, ऐसे माहौल में हमें क्या करना चाहिए?

जवाब: इस वक्त अल्लाह की तरफ़ रुजू करने का मौक़ा है। हमने जिंदगी में किस क़दर गुनाह किए हैं, फ़राइज़ और वाजिबात से ग़फ़लत बरती है, अल्लाह और उसके रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की नाफ़रमानी की। इन तमाम गुनाहों से तौबा करने और अल्लाह पर भरोसा और ईमान मज़बूत करने का वक्त है।

सवाल (8): कोरोना वायरस से मरने वाले को शहीद कह सकते हैं?

जवाब: ता'ऊन वाली हदीस को मद्दे नज़र रखते हुए कहा जा सकता है कि किसी क़िस्म की वबा (बीमारी) से मरने वाला शहीद कहलाएगा, जैसा कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का फ़रमान है:

"من مات في الطاعون فهو شهيد"

तर्जुमा: जो ता'ऊन (वबा) में वफ़ात पा जाए, वह शहीद है। बल्कि अगर कोई वबा के इलाक़े में मौजूद हो, सब्र से काम ले और अल्लाह से अज्र की उम्मीद लगाए, तो उसे शहीद का अज्र मिलेगा, हालांकि उसकी मौत न हो।

सवाल (9): जो कोरोना वायरस से मरता है, उसका छूना या उसके क़रीब जाना मुज़िर (नुक़सान देह) है। ऐसे में उसे कैसे गुस्ल दिया जाएगा और कैसे जनाज़ा पढ़ा जाएगा और कैसे तदफ़ीन अमल में आएगी?

जवाब: मुसलमान मय्यत को गुस्ल देना, क़फ़न देना और नमाज़-ए-जनाज़ा पढ़कर मुसलमानों के क़ब्रिस्तान में दफ़न करना उनके हक़ों में से है। कोरोना वायरस के मय्यत के हक़ भी अदा किए जाएंगे। यह सही है कि इस मरीज़ से इख़्तिलात (संपर्क) नुक़सान है, तहाल जैसे मरीज़ को एहतियात से इलाज किया जाता है, उसी तरह एहतियात से गुस्ल भी दिया जाएगा, क़फ़न भी पहनाया जाएगा। और अगर ज़्यादा लोग जनाज़ा में हाज़िर न हो सकें तो कुछ लोग ही सही नमाज़-ए-जनाज़ा अदा कर के मुसलमानों के क़ब्रिस्तान में दफ़न

करेंगे। मुमकिन है कि किसी मुल्क में हुकूमत की तरफ़ से ग़ुस्ल (तयम्मुम भी) और क़फ़न देने पर पाबंदी हो, वहाँ मुसलमान माज़ूर है। जो लोग मय्यत के पास नमाज़-ए-जनाज़ा न अदा कर सकें, वे दूसरी जगह ग़ैबाना जनाज़ा अदा कर लें।

सवाल (10): पाकिस्तान के मुफ़्ती तक़ी उस्मानी की तरफ़ से एक मैसेज में कहा गया है कि उन्हें किसी ने कहा कि उन्हें नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की ज़ियारत नसीब हुई। आपने उन्हें कोरोना वायरस का इलाज बताया कि सुबह-शाम सूरह फ़ातिहा 3 मर्तबा, सूरह इख़लास 3 मर्तबा, और हस्बुनल्लाहु व नीमल वकील 313 मर्तबा पढ़ना है। इस ख़्वाब की शरई हैसियत क्या है?

जवाब: ख़्वाब में एक मोमिन को रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की ज़ियारत नसीब हो सकती है, मगर ख़्वाब से अब कोई रिसालत का पैग़ाम नहीं आ सकता है। क्योंकि अल्लाह ने आपकी हयात-ए-मुबारक में ही दीन-ए-इस्लाम को मुकम्मल कर दिया। इस लिए शरई नुसूस से साफ़ तौर पर मालूम होता है कि ख़्वाब देखने वाला और ख़्वाब बयान करने वाला सरासर झूठा है। अल्लाह उन सब को हिदायत दे और इस झूठ से तौबा करने की तौफ़ीक़ दे।

सवाल (11): सारा मुल्क जब कोरोना वायरस की हैबत (डर/ख़ौफ़) में है, ऐसे में लोग सोशल मीडिया पर दुरूद-ए-तनजीना कसरत से शेयर कर रहे हैं। क्या हमें उसे पढ़ना चाहिए और दूसरों में शेयर करना चाहिए?

जवाब: अवाम में दुरूद-ए-तनजीना को काफ़ी शोहरत हासिल है। बिदअतियों में मुख़्तलिफ़ मौक़ो पर कसरत से इसका विर्द किया जाता है, जैसे बीमारी से शिफ़ा, मुश्किलात से निजात और ज़रूरतों की पूर्ति के तौर पर। दरअसल, यह बनावटी दुरूद है, जिसे एक बुज़ुर्ग शैख़ मूसा की तरफ़ मंसूब किया गया है। जब वे एक काफ़िले के साथ एक समुंदर के जहाज़ में सफ़र कर रहे थे और जहाज़ तूफान की ज़द में आ गया। यह तूफ़ान अल्लाह का क़हर बनकर जहाज़ को हिलाने लगा। लोगों को यक़ीन हो गया कि जहाज़ डूबने वाला है और सभी मर जाएंगे। इसी अफरातफरी के आलम में उन पर नींद का ग़ल्बा हो गया और नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ख़्वाब में आए। बुज़ुर्ग और उनके साथियों को यह दुरूद हज़ार बार पढ़ने का हुक्म दिया। बेदार होकर अपने दोस्तों के साथ दुरूद पढ़ना शुरू किया। अभी 300 बार ही पढ़ा था कि तूफ़ान का ज़ोर कम होने लगा। आहिस्ता-आहिस्ता तूफ़ान रुक गया और थोड़े ही समय में आसमान साफ़ हो गया और

समुद्र की सतह पर अमन हो गया। इस दुरूद-ए-पाक की बरकत से पूरे जहाज़ वालों को निजात मिल गई।

यह सरासर झूठ है। इस वाक़ि'आ से ही झूठ पकड़ा जा सकता है कि इस बुज़ुर्ग को तूफ़ान के वक्त नींद कैसे आ गई? यानि जब लोग मरने वाले हैं और जहाज़ डूबने वाला है, उस वक्त किसे नींद आती है? और वैसे भी यह वाक़ि'आ वफ़ात-ए-रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के कई सदियों बाद का है, जब कि दीन नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के ज़माने में मुकम्मल हो चुका था। और फिर यह वाक़ि'आ ख़्वाब है और ख़्वाब से तो हरगिज़ दलील नहीं पकड़ी जाएगी। इसलिए ना आप लोग दुरूद-ए-तनजीना पढ़ें और ना ही सोशल मीडिया पर इसे शेयर करें, बल्कि जो लोग ऐसा कर रहे हैं उन्हें इसके झूठ होने की हक़ीक़त बताएं।

सवाल (12): हमने मुशाहिदा तो नहीं किया है, लेकिन बहुत सारे लोगों से, ख़ास तौर पर औरतों से सुना है कि सूरह बक़रा पढ़ने से क़ुरआन में बाल निकल आते हैं और इस बाल को पानी में डुबोकर पीने से कोरोना वायरस ख़त्म हो जाता है। क्या यह बात सच है?

जवाब: मुसलमानों को क्या हो गया है कि जब मुश्किलात का वक्त आता है तो ईमान और भी कमज़ोर हो जाता है और ग़लत तरीक़े से मुश्किलात को दूर करने की कोशिश करते हैं? क़ुरआन में बाल निकलने की कोई हक़ीक़त नहीं है। यह झूठ है जो किसी ने लोगों में फैला दिया है। हो सकता है कोई सूरह बक़रा की तिलावत कर रहा हो और उसके सर से बाल टूटकर क़ुरआन पर गिर गया हो, उसने समझ लिया कि क़ुरआन से ही बाल निकला है। यह बिल्कुल वैसे ही है जैसे एक बार एक औरत बच्चे की नजासत साफ़ कर रही थी और अचानक रमज़ान के चाँद निकलने का शोर हुआ। उसके हाथ में नजासत लगी थी, उसने उस हाथ को आंख के ऊपर रख लिया और चाँद देखने लगी। फिर लोगों ने शोर मचाना शुरू कर दिया कि हाँ, चाँद निकल गया है, मगर उससे बदबू आ रही है। दरअसल, उस औरत को अपने ही हाथ की बदबू महसूस हो रही थी। बेहरहाल, क़ुरआन से बाल निकलने वाली बात झूठ है। इस पर भरोसा न किया जाए। अगर ख़ुदा न ख़ास्ता किसी के क़ुरआन से बाल निकले तो समझें कि ख़ुद के या किसी दूसरे के सर से गिरा होगा।

सवाल (13): कुछ लोग कोरोना वायरस की ख़तरनाकी को नहीं समझ रहे हैं और कहते हैं कि मौत आनी है तो आकर रहेगी, इससे क्या

डरना? लिहाज़ा, वे न तो भीड़ से डरते हैं और न ही लोगों से मिलने-जुलने से बाज़ आते हैं। ऐसे हालात में यह सोचना कैसा है?

जवाब: यह हिमाक़त है। जिन चीज़ों में ख़तरा हो, इस्लाम उन ख़तरात से बचने का हुकम देता है। कोरोना वायरस एक वबा की बीमारी है जो इख़्तिलात की वजह से एक से दूसरे को लगती है। लिहाज़ा, जिस शख़्स को यह बीमारी लग गई हो या जहां जमा होने से मर्ज़ फैलने का ख़तरा हो, उससे दूर रहना कोई ग़लत बात नहीं है। यही वजह है कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने ताऊन फैलने की जगह जाने से मना किया है।

सवाल (14): क्या उलमा चीख़-चीख़ कर साफ तक़रीर ही करते रहेंगे या क़ुरआन में रिसर्च कर के कोई दवा इजाद करेंगे? क्योंकि क़ुरआन में हर मसला का हल मौजूद है। हम तो देख रहे हैं, आप हज़रात यहूदी और नसरानी के इंतज़ार में हैं कि वे कोई दवा ईजाद करें जिनकी मुख़ालफ़त में जिंदगी गुज़रती है?

जवाब: नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने उलमा को अंबिया का वारिस क़रार दिया है और अंबिया दाई-इलल्लाह होते हैं। बिना वजह

उलमा-ए-उम्मत भी क़ुरआन और हदीस की दावत लोगों में आम करते हैं। क़ुरआन करीम नूर और हिकमत की किताब है, यह अंग्रेज़ी दवाओं की किताब नहीं है कि उलमा इसमें रिसर्च करके दवा ईजाद करें। अगर यह बात आप उलमा से कह रहे हैं, तो क्या आप अल्लाह और उसके रसूल से भी शिकायत करेंगे कि उन्होंने क़ुरआन में क़यामत तक आने वाली बीमारियों का इलाज नहीं बताया? अल्लाह के रसूल ने कोढ़ और ताऊन से बचने की तालीम दी, मगर कोढ़ी और ताऊनज़दा शख़्स का इलाज नहीं बताया। उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने ताऊन अम्वास में हज़ारों मुसलमानों को मारा, लेकिन उन्होंने कोई दवा बनाकर मुसलमानों को नहीं बचाया।

यहां एक बात अहम है कि कोई चीन की तरह गंदा काम ही क्यों न करें कि यह ऐसी ख़तरनाक बीमारी फैल जाए और दूसरी बात यह कि अगर यह वायरस अज़ाब है, तो उसे अल्लाह ही टाल सकता है। और तीसरी बात यह है कि यहूदी और नसरानी की मुख़ालफ़त सिर्फ़ मज़हबी चीज़ों में है, दुनियावी मामलों में नहीं।

सवाल (15): कोरोना लगने के ख़ौफ़ से लोग मुख़्तलिफ़ क़िस्म के अज़कार और मुत'अय्यन सूरत जैसे सूरह नूह, सूरह बक़रा, सूरह यासीन

पढ़ रहे हैं। एक सही अक़ीदा मुसलमान को किस क़िस्म की दुआ और अज़कार पढ़ने चाहिए?

जवाब: एक बात अच्छी तरह समझ लें कि कोरोना वायरस को दूर करने के लिए इस्लाम में कोई मख़सूस ज़िक्र, मख़सूस सूरह, मख़सूस नमाज़ और कोई मख़सूस तरीक़ा नहीं है। जो लोग कोरोना वायरस भगाने के लिए सूरह नूह पढ़ रहे हैं या कोई मख़सूस ज़िक्र कर रहे हैं या मख़सूस नमाज़ पढ़ रहे हैं या छत पर अज़ान दे रहे हैं या दुरूद ए तंज़ीना पढ़ रहे हैं, सब बिद'अत और ख़ुराफ़ात में मुलव्विस हैं। यक़ीनन यह वक्त बड़ी मुश्किल का है। ऐसे वक्त में हमें अल्लाह की तरफ़ रुजू करना चाहिए, अपने गुनाहों को याद करके उससे माफ़ी मांगनी चाहिए और अल्लाह से दुआ करनी चाहिए।

सवाल (16): हदीस में ज़िक्र है कि मदीना में ताऊन दाख़िल नहीं होगा, मगर आजकल मदीना में वबा यानी कोरोना वायरस का ख़तरा है और लोगों को अपने घरों में महसूर कर दिया गया है। फिर हदीस का क्या जवाब होगा?

जवाब: वाक़ई यह पेशीन-गोई (Prediction) रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की सही हदीस में मौजूद है और हमें आपकी बात पर

100% यक़ीन है कि यह पेशीन-गोई सही है। आपकी पेशीन-गोई हर क़िस्म के वबा के बारे में नहीं है, बल्कि ख़ास ताऊन के बारे में है। यानी मदीना में कभी ताऊन नहीं फैलेगी। हालांकि दूसरी बीमारियां और दूसरी क़िस्म की वबा फैल सकती हैं, जैसा कि उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) के ज़माने में मदीना में ऐसी वबा फैली थी जिसमें बड़ी संख्या में लोग मर रहे थे।

सवाल (17): आज हम देखते हैं कि कोरोना वायरस की वजह से तवाफ़ रुक गया है, उमरा बंद है, मुमकिन है कि हज भी मुल्तवी हो जाए। क्या यह क़यामत की निशानी नहीं है, जैसा कि हदीस में है कि क़यामत उस वक्त तक क़ायम नहीं होगी जब तक बैतुल्लाह का हज न रुक जाए?

जवाब: अभी वक्ती तौर पर लोगों को तवाफ़ और उमरा से रोका गया है, फिर शुरू किया जाएगा। हज के बारे में अभी तक कोई क़तई फ़ैसला नहीं हुआ है कि इस साल होगा या नहीं। क़यामत के करीब जब हज बैतुल्लाह रोक दिया जाएगा, उस वक्त और भी क़यामत की निशानियाँ ज़ाहिर होंगी। मिसाल के तौर पर, सही बुख़ारी 1593 में है कि याजूज और माजूज के निकलने के बाद भी हज और उमरा होगा, जबकि अभी याजूज और माजूज का ज़ुहूर भी नहीं हुआ। फिर कोरोना

वायरस की वजह से वक्ती तौर पर उमरा और तवाफ़ बंद करने को क़यामत की निशानी कैसे क़रार दी जा सकती है? हमें यह भी मालूम है कि ज़माना-ए-माज़ी में कितनी बार हज और उमरा बंद हो चुका है। यह कोई पहली बार नहीं है कि तवाफ़े बैतुल्लाह बंद हुआ है।

सवाल (18): कुछ इलाक़ों में वायरस को भगाने के लिए लोग एक साथ रोज़ा रख रहे हैं और मख़सूस क़िस्म की नमाज़ पढ़ रहे हैं। क्या हमें उनके साथ ऐसा करना चाहिए?

जवाब: यह बिद'अत है। इस तरीक़े से वायरस भागेगा नहीं, बल्कि बढ़ सकता है, क्योंकि ग़लत तरीक़े से बीमारी का इलाज करने पर यक़ीनी है कि बीमारी में और इज़ाफा होगा। मुसीबत के वक्त हमें नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से रोज़ा रखने का सबूत नहीं मिलता है। हाँ, परेशानी और घबराहट के वक्त नमाज़ पढ़ सकते हैं, मगर मख़सूस तरीक़े पर नहीं, जैसे कि फुलाँ सूरह और नमाज़ बाद फुलाँ ज़िक्र इतनी दफ़ा और फुलाँ दुआ इतनी दफ़ा। इससे पहले फ़र्ज़ अदा करें, यानी 5 वक्त की फ़र्ज़ नमाज़ अदा करें, सिर्फ़ कुछ अज़कार पढ़ लें या एक वक्त की नफ़िल नमाज़ करें, तो इससे कुछ नहीं होगा।

सवाल (19): आपसे एक सवाल है कि आजकल जिस क़िस्म के हालात हैं, ऐसे में क़ुनूत-ए-नाज़िला पढ़ना सही है और दुआ में बीमारियों की दुआएं भी पढ़ सकते हैं?

जवाब: नाज़िला मुसीबत को कहते हैं और क़ुनूत दुआ का नाम है, यानी मुसीबत के वक्त दुआ करना क़ुनूत-ए-नाज़िला है। कोरोना वायरस ऐसी मुसीबत और बला है जिसकी लपेट में सारी दुनिया है। ऐसे में दुआ की गरज़ से फ़र्ज़ नमाज़ों में क़ुनूत-ए-नाज़िला पढ़ी जा सकती है और चूंकि क़ुनूत-ए-नाज़िला की दुआएं ख़ास नहीं हैं, इस वजह से तमाम क़िस्म की मसूरा दुआएं पढ़ सकते हैं। क़ुनूत-ए-नाज़िला के अलावा, दर्मियान नमाज़, नमाज़ के बाद और तमाम अफ़ज़ल वक़्त में बीमारियों से हिफ़ाज़त और दफ़ बला (बला दूर करने) की दुआ मांग सकते हैं।

सवाल (20): अज़ान में "صَلُّوا فِي الرِّحَالِكُمْ" कब कहना है और उसके जवाब में अज़ान सुनने वाला क्या कहेगा?

जवाब: जब शदीद बारिश हो या शदीद ठंडक हो और लोगों को मस्जिद पहुंचने में तकलीफ़ का सामना हो, तो मुअज़्ज़िन मस्जिद में अज़ान

" कहेगा صَلُّوا فِي الرِّحَالِكُمْ" की जगह दो बार "حَيَّ عَلَى الصَّلَاةِदेगा और " " لَا إِلَهَ إِلَّا اللهُ ،اللهُ أَكْبَرُ ،اللهُ أَكْبَرُ ،حَيَّ عَلَى الفَلَاحِ ،حَيَّ عَلَى الفَلَاحِऔर बाक़ी कलाम " " के जवाब में कुछ नहीं कहा صَلُّوا فِي الرِّحَالِكُمْतक मुकम्मल करेगा। " जाएगा क्योंकि यह अज़ान के कलिमात नहीं हैं।

सवाल (21): क्या मास्क लगाकर नमाज़ पढ़ सकते हैं?

जवाब: हालांकि आम तौर पर नमाज़ में मुँह ढकने से मना किया गया है, लेकिन इन दिनों कोरोना वायरस फ़ैलने के डर से मास्क लगाना ज़रूरी है। लिहाज़ा, ऐसी जगह जहां कुछ लोग इकट्ठा होकर नमाज़ पढ़ रहे हों, वहां मास्क लगाया जा सकता है और जहां आप अकेले नमाज़ पढ़ रहे हों, वहां मास्क की ज़रूरत नहीं रहती। वहां बिना मास्क के नमाज़ पढ़ सकते हैं।

सवाल (22): घर में जामात बनाने का तरीक़ा क्या होगा?

जवाब: घर में जब फ़र्ज़ नमाज़ पढ़े तो बेहतर है कि घर के तमाम अफ़राद एक साथ पढ़ें ताकि जामात का सवाब मिले। उसका तरीक़ा यह होगा कि मर्द इमाम के पीछे मर्द खड़े हों और मर्द के पीछे औरतें

खड़ी हों। यानी औरतें मर्द की सफ़ में खड़ी नहीं हो सकती, बल्कि मर्द के पीछे खड़ी होंगी। यहां तक कि बीवी भी शौहर के बग़ल में खड़ी नहीं हो सकती। मियां-बीवी मिलकर नमाज़ पढ़ें तब भी शौहर आगे और बीवी पीछे होगी। दो मर्द जामात से पढ़ें तो मुक्तदी इमाम के दायें खड़ा होगा। एक औरत दूसरी औरतों की इमामत करा सकती है, उनका इमाम दर्मियान में होगा। कोई औरत मर्द की इमामत नहीं करा सकती और औरतों की जामात में कोई मर्द शामिल नहीं हो सकता।

सवाल (23): आजकल लोग एहतियाती तौर पर एक-दूसरे से मुसाफ़ा करने से कतराते हैं। क्या इसमें कोई गुनाह तो नहीं है?

जवाब: इसमें कोई गुनाह नहीं है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने एक कोढ़ी से हाथ नहीं मिलाया। इसलिए हमें सुन्नत से भी दलील मिलती है कि मजबूरी में मुसाफ़ा छोड़ सकते हैं और इस्लाम में साथ मुसाफ़ा करना ज़रूरी नहीं है, यह मस्नून अमल है।

सवाल (24): कोरोना वायरस से दुनिया में हज़ारों लोग मर गए। अगर यह अल्लाह का अज़ाब है, तो इसमें हमारे लिए कोई नसीहत है?

जवाब: इसमें कोई शक नहीं कि कोरोना वायरस की वजह से आज पूरी दुनिया उसकी लपेट में है और हज़ारों की तादाद में मौतें वाक़े हो चुकी हैं और रोज़-बरोज़ अम्वात (मौत) का सिलसिला जारी है, जाने कब तक यह चलता रहेगा। इस महामारी से जहां दुनिया को बहुत कुछ जान और माली नुक़सान हुआ और हो रहा है, उससे अलग इसके कुछ फ़वाइद और समरात (नतीजे) भी नज़र आ रहे हैं। एक तरफ़ काफ़िर और ज़ालिम और ताक़तवर क़ौम का नशा चकना चूर होता और उसकी बेबसी का मंज़र देखने को मिल रहा है, तो वहीं मुसलमानों को अल्लाह की तरफ़ रुजू करने का, अपने गुनाहों से तौबा करने का और ईमान और भरोसा मज़बूत करने का मौक़ा मिल रहा है।

सवाल (25): इलियास क़ादरी लोगो कोरोना वायरस से हिफ़ाज़त के लिए कोई तावीज़ दे रहे हैं। क्या हम इस मौक़ा मौक़ा से तावीज़ लगा सकते हैं?

जवाब: तावीज़ लटकाना शिर्क है और शिर्क से बड़ा कोई गुनाह नहीं है। आप ज़रा सोचिए कि कोई बड़े गुनाह के ज़रिया मुसीबत टल सकती है? हरगिज़ नहीं। इसलिए ज़ाहिर है कि कोरोना वायरस के लिए

हम तावीज़ नहीं लटका सकते, बल्कि किसी भी मौक़ा पर तावीज़ लटकाना जायज़ नहीं है।

आख़िर में एक पैग़ाम देना चाहता हूँ कि आज हमारे मुल्कों में लॉकडाउन है। हम अपने घरों में महसूर हैं। दीन के मशाग़िल (बहुत से काम), दुनियावी कामकाज और हर क़िस्म की तिजारत मुत्तल है। ऐसे में एक तरफ़ घरों में क़ैद होने से फ़ारिग वक़्त काफ़ी मिल रहा है, दूसरी तरफ़ रोज़ाना कमाने-खाने वालों के घर खाने-पीने की कमी है। इस तनाज़ुर में हम सबको दो काम करने हैं। एक काम घरेलू है, वह यह कि अपने बच्चों को दीन सिखाएँ, दुआएं और क़ुरआन हिफ़्ज़ कराएँ और खुद भी मुताला करें, दीन के बयानात से फ़ायदा उठाएँ और फ़र्ज़ के साथ रात की इबादत करके अल्लाह से पनाह तलब करें। दूसरा काम सामाजी है, वह यह कि जिन लोगों के घरों में फ़ाक़े और मजबूरियाँ हैं, उनकी माली मदद करें। अल्लाह हम सबके ईमान और मुल्क और क़ौम की हिफ़ाज़त फ़रमाए। आमीन

नोट: मुसलमानों की भलाई के लिए यह सोशल मीडिया पर वायरल करें।

==========

[30].क्या ज़ेबरा हलाल है?

बर्रेसग़ीर के मुसलमानों में ज़ेबरा के मुताल्लिक़ शुब्हा (doubt) पाया जाता है कि यह जंगली गधा है या कोई और जानवर है? अगर कोई और जानवर है तो उसके खाने का क्या हुक्म है? मैंने कुछ उलमा को भी इस टॉपिक में मशकूक (शक में) पाया है, इस वजह से मुख़्तसरन मैं ज़ेबरे के मुताल्लिक़ मालूमात लिख कर अवाम और ख़ास का शुब्हा दूर करना चाहता हूँ।

ज़ेबरा घोड़े से मिलता-जुलता गधे की नस्ल का जानवर है। यह जंगल, घास-फूस वाले हरे-भरे मैदान, कांटेदार (काँटे वाले) इलाक़े, छत्तानी वादी और पहाड़ी स्थानों में रहता है। यह मालूम रहे कि गधे की 2 ही क़िस्में पाई जाती हैं। एक क़िस्म घरेलू गधा और दूसरी क़िस्म जंगली गधा है, गोया ज़ेबरा गधे की दूसरी क़िस्म है।

① जंगली गधा: इसे अरबी में "हिमार वह्शी" कहते हैं, इसका खाना हलाल है। इसके हलाल होने की दलील अबू क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु से मर्वी यह रिवायत है, वह कहते हैं:

أَنَّهُ كانَ معَ رسولِ اللهِ صلَّى اللهُ عليهِ وسلمَ ، حتى إذا كانَ ببعضِ طريقِ مكةَ ، تخَلَّفَ معَ أصحابٍ له مُحْرِمِينَ ، وهوَ غيرُ مُحْرِمٍ ، فَرَأَى حِمَارًا وحْشِيًّا ، فاستَوى على فرسِهِ ، فسألَ أصحابَهُ أنْ يُنَاوِلُوهُ سَوطَهُ فَأَبَوا ، فسألَهم رُمْحَهُ فَأَبَوا ، فَأَخذَهُ ثم شَدَّ على الحمَارِ فقَتَلَهُ ، فأكَلَ منهُ بعضُ أصحابِ النبيِّ صلَّى اللهُ عليهِ وسلَّم وأبَى بعضٌ ، فلمَّا أدْرَكوا رسولَ اللهِ صلَّى اللهُ عليهِ وسلمَ سألُوهُ عن ذلكَ ، قالَ : إنمَا هي طُعْمَةٌ أطعَمَكُمُوهَا اللهُ

तर्जुमा: हम आप रसूलुल्लाह (सल्ल०) के साथ थे (सुलह हुदैबिया के मौक़े पर) मक्का के रास्ते में आप (सल्ल०) अपने कुछ साथियों के साथ जो एहराम बाँधे हुए थे। लशकर से पीछे रह गए। ख़ुद क़तादा (रज़ि०) ने अभी एहराम नहीं बाँधा था। फिर उन्होंने एक गोर ख़र देखा और अपने घोड़े पर (शिकार करने की नीयत से) सवार हो गए उसके बाद उन्होंने अपने साथियों से (एहराम बाँधे हुए थे) कहा कि कोड़ा उठा दें उन्होंने उस से इनकार किया फिर उन्होंने अपना भाला माँगा उसके देने से उन्होंने इनकार किया आख़िर उन्होंने ख़ुद उसे उठाया और गोर ख़र पर झपट पड़े और उसे मार लिया। नबी करीम (सल्ल०) के सहाबा में से कुछ ने तो इस गोर ख़र का गोश्त खाया और कुछ ने उसके खाने से (एहराम के उज़्र की बिना पर) इनकार किया। फिर जब ये रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िदमत में पहुँचे, तो उसके मुताल्लिक़ मसला पूछा, आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि ये तो

एक खाने की चीज़ थी जो अल्लाह ने तुम्हें अता की। (सहीह बुख़ारी: 2914)

② पालतू/घरेलू गधा: इसे अरबी में “हिमार अहली” कहते हैं, इसका खाना हराम है। इसके हराम होने की दलील अबू सालिबा रज़ियल्लाहु अन्हु से मर्वी यह रिवायत है, वह बयान करते हैं:

حرَّم رسولُ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ لحومَ الحُمُرِ الأهليةِ

"रसूल ﷺ ने घरेलू गधे के गोश्त को हराम क़रार दिया।"

(सहीह मुस्लिम: 1936)

ज़ेबरे की कैफ़ियत और ख़ासियत:

इसमें कोई शक नहीं कि ज़ेबरा ही जंगली गधा है, हदीस में जिस “हिमार वहशी” का ज़िक्र है, ज़ेबरा वही जानवर है। रसूल ﷺ के ज़माने में यह जानवर मौजूद था, अबू क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु ने जिस जंगली गधे का शिकार किया वह यही ज़ेबरा है। यह बात भी सही है कि ज़ेबरा अफ़्रीकी नस्ल है, मशरिक़ (East) और जुनूबी अफ़्रीका

(South Africa) में कसरत से पाया जाता है। जब यूरोप और एशिया को मिलाने वाली मिस्र (Egypt) की नहर स्वेज़ (Suez Canal) बनी नहीं थी तो यह जानवर जज़ीरतुल अरब में भी आया करता था बल्कि अफ़्रीका के तमाम जानवर शेर, चीता, हिरन, नीलगाय वग़ैरह जज़ीरतुल अरब में पाए जाते थे। बात है उसी एक नहर की जो बहर-ए-रूम (Mediterranean Sea) को बहर-ए-क़ल्ज़ूम (Red Sea) से मिलाती है। शुरू से 10 साल पहले एशिया और यूरोप के दरमियाँन आने-जाने की आसानी के लिए नहर स्वेज़ (Suez Canal) का मनसब शुरू किया गया और 1869 में इस कैनाल का इफ़्तिताह हो गया। इस नहर की वजह से अफ़्रीका से हैवानात के आने का सिलसिला बंद हो गया। तभी से ज़ेबरा और दूसरे अफ़्रीकी जंगली जानवर जज़ीरतुल अरब से ख़त्म हो गए।

ज़ेबरा पुर्तगाली ज़बान (Portuguese Language) का लफ़्ज़ है। इसका तर्जुमा "हिमार वह्शी" यानी जंगली गधा होता है। इसका रंग सफ़ेद होता है और इसके जिस्म पर काली धारियाँ होती हैं। इन धारियों से ख़ुद को घास-फूस में छुपा लेता है। इस जानवर की बड़ी ख़ासियत है जिनके ज़िक्र का यह मक़ाम और महल नहीं है। इसके ख़ुराक की बात की जाए तो टहनियाँ, पत्ते, छाल, झाड़ी और घास खाने वाला जानवर है

मगर है हमलावर (हमला करने वाला), ग्रुप के साथ ज़िंदगी गुज़ारता है और कोई उस पर हमला करे तो सारे ग्रुप वाले मिलकर बचाव करते हैं। इसके अंदर वंशियत होने के सबब घरेलू नहीं बनाया जा सकता या ऐसा कहें कि यह इंसानों से मानूस नहीं हो सकता, जो "हिमार अहली" है वही इंसानों के घरेलू काम आता रहा है।

कुछ लोगों का कहना है कि ज़ेबरा अपनी गंदगी खाता है मगर यह बात मालूमात और तजुर्बे के ख़िलाफ़ है। इसलिए कि यह बात न उस जानवर की ख़ासियत बताने वाली किताब में मौजूद है और न ही ज़ू में उसकी ख़ुराक फ़राहम करने वालों ने ज़िक्र किया है।

ज़ेबरा ही जंगली गधा (हिमार वह्शी) है इस ताल्लुक़ से एक क़वी बात यह जान लें कि दुनिया में ज़ेबरा के अलावा और कोई जानवर "हिमार वह्शी" नहीं है। इसे अरबी में हिमार वह्शी के अलावा हिमार ज़र्द, हिमार मुखत्तत और हिमार उताबी भी कहते हैं। मौजूदा वक्त में इसकी 3 क़िस्में पाई जाती हैं जो आपस में रंग और जसामत (साइज़) में थोड़े बहुत मुख़्तलिफ़ होती हैं।

मैदानी ज़ेबरा, घरेलू ज़ेबरा और पहाड़ी ज़ेबरा जिन्हें इंग्लिश में प्लेन्स ज़ेबरा, ग्रेवीज़ ज़ेबरा, माउंटेन ज़ेबरा कहते हैं।

नील-गाय और जंगली गधे में फ़र्क़:

अहादिस में मौजूद लफ़्ज़ "अल-हिमार अल-वह्शी" का तर्जुमा आम तौर से नीलगाय से किया जाता है जबकि यह बड़ी ग़लती है। नीलगाय अलग जानवर है इसका "हिमार वह्शी" से कोई ताल्लुक़ नहीं है। बर्रेसग़ीर में नीलगाय के नाम से जो जानवर मशहूर है वह जज़ीरतुल अरब में भी पाया जाता था, उसे "बक़र वह्शी" और "अल-माहा" भी कहते हैं क्योंकि जिस तरह ज़ेबरा मुशाबिहत में गधे जैसा है उसी तरह नीलगाय, गाय के मुशाबेह है। गाय से मुशाबिहत रखने वाले जानवर को गधे की नस्ल कैसे क़रार दे सकते हैं और यह जानवर जज़ीरतुल अरब में मौजूद था नहर स्वेज़ (Suez Canal) के बनने के बाद ख़त्म हो गया लेकिन हैवानात की किताबों में इसकी हिस्ट्री देखी जा सकती है। बल्कि इंटरनेट पर इसकी फ़ोटो भी बाकसरत मौजूद है।

अब एक सवाल यह पैदा होता है कि अगर नीलगाय "बक़र वह्शी" में शुमार होता है तो उसका खाना कैसा है?

मौसुआ फिक़्हिया में लिखा है कि हर वह्शी जानवर जिसके पास कुचली (नुकीले दाँत जो मांसाहारियों के लिए प्राकृतिक साधन हैं) वाला

दांत न हो जिससे चीर-फाड़ करता है और वह हशरात में भी से न हो जैसे हिरण, वहशी गाय, वहशी गधा, वहशी ऊंट, तो इन तमाम क़िस्मों के जानवरों के हलाल होने पर तमाम मुसलमानों का इत्तिफ़ाक़ है क्योंकि यह पाकीज़ा जानवरों में से हैं।

(अल-मौसुआ अल-फिक़्हिया:5/134)

ख़ुलासा-ए-कलाम यह है कि ज़ेबरा खाना हलाल है, और उसको जंगली जानवर या हिमार वहशी कहते हैं और नीलगाय को अरबी में बक़र वहशी कहते हैं, यह भी जंगली गधे की तरह हलाल है।

=================

[31].क्या नबी ﷺ ने नुबुव्वत के बाद अपना अक़ीक़ा किया था?

इस मुख़्तसर मज़मून में जानने की कोशिश करेंगे कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपना अक़ीक़ा किया या नहीं? चुनाँचे अस सुनन अल-कुबरा लिल बैहक़ी की रिवायत सनद व मतन के साथ पेश है

اخبرنا أبو الحسن محمد بن الحسين بن داؤد العلوي رحمه الله أنبا حاجب بن أحمد بن سفيان الطوسي ثنا محمد بن حماد الابيوردي ثنا عبد الرزاق أنبا عبد الله بن محرر عن قتادة عن انس رضي الله عنه ان النبي صلى الله عليه وسلم عق عن نفسه بعد النبوة.(السنن الكبرى كتاب الضحايا جماع ابواب العقيقة باب العقيقة سنة رقم:18678)

तर्जुमा: अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि वह बयान करते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपना अक़ीक़ा नबूवत के बाद किया।

बैहक़ी की इस रिवायत पर बहुत सारे मुहद्दिसीन ने ज़ुअफ़ (कमज़ोरी) का हुक्म लगाया है क्योंकि इसमें एक रावी अब्दुल्लाह बिन मुहरीर की ज़ुअफ़ पर सब का इत्तिफ़ाक़ है।

बैहक़ी, नसा'ई, इब्न अबी हातिम (एक क़ौल), इब्न हजर, दार क़ुतनी (एक क़ौल), अली बिन जुनैद (राज़ी), अमर बिन अली फ़लास ने मतरूक-हदीस कहा है। अबू ज़र'अ राज़ी और इब्न अबी हातिम ज़ारी (दूसरा क़ौल) ने ज़ईफ़ुल हदीस कहा है। इमाम बुख़ारी, इब्न अबी हातिम राज़ी (तीसरा क़ौल) और हिलाल बिन अला राक़ी ने मुनकरुल हदीस कहा है। अबू नईम असबहानी, दार क़ुतनी (दूसरा क़ौल), मुहम्मद बिन साद क़ातिबुल वाक़दी, याह्या बिन मोइन और याक़ूब बिन सुफ़्यान अल-फ़सवाई ने ज़ईफ़ कहा है।

अब कुछ अहले इल्म के हुक्म बयान कर देना यहाँ काफ़ी होगा क्योंकि रावी के ज़ुअफ़ की तरफ़ इशारा कर दिया है।

बैहक़ी ने कहा कि यह हदीस मुंकर है और वह अब्दुर रज़्ज़ाक़ के तरीक़ से बयान करते हैं। वह कहते हैं कि यह हदीस दूसरे तरीक़ से भी मरवी है क़तादा के तरीक़ से और अनस के तरीक़ से। उन तमाम तुर्क़ से यह रिवायत बातिल है।

इमाम नववी ने बैहक़ी की रिवायत

عن عبداللہ بن محرر بالحاء المهملة والراء المكررة عن قتادة عن انس والى

रिवायत को बातिल क़रार दिया है। (अल-मज्मू: 8/431)

इमाम अहमद ने बैहक़ी की रिवायत अब्दुल्लाह बिन मुहरीर और अनस वाली रिवायत को मुंकर क़रार दिया है।

इब्नुल इराक़ी कहते हैं कि इसकी सनद में अब्दुल्लाह बिन मुहरीर है, जिसके मुताल्लिक़ इमाम नववी ने कहा कि इसके ज़ईफ़ होने पर अहले इल्म का इत्तिफ़ाक़ है। (तरहुत तस्रीब: 5/209)

हाफ़िज़ इब्न हजर ने इस रिवायत पर कलाम करते हुए लिखा है कि बज़ार ने कहा कि इसमें अब्दुल्लाह अकेला है और वह ज़ईफ़ है। (फ़तहुल बारी)

हाफ़िज़ इब्न हजर रहिमहुल्लाह ने ज़िक्र किया है कि अबुस शैख़ ने इस रिवायत जो ज़्यादा 2 सनदों के ज़िक्र किया है।

पहली सनद इस्माईल बिन मुस्लिम अन क़तादा से मरवी है और इस्माईल ज़ईफ़ है।

दूसरी सनद अबी बकर अल-मुस्तमली अनील हय्साम बिन जमील व दाऊद बिन मुहबिर कहला हदसना अब्दुल्लाह बिन मुसन्ना अन सुमामा अन अनस है। इस सनद में दाऊद ज़ईफ़ है मगर उनके साथ इसी तबक़ा में हय्साम बिन जमील सिक़ा है और अब्दुल्लाह बिन मुसन्ना से इमाम बुख़ारी ने इस्तिदलाल किया है। इस वजह से इस सनद से यह रिवायत सही है, इस रिवायत के अल्फ़ाज़ इस तरह हैं:

ان النبي صلى الله عليه وسلم عق عن نفسه بعد ما بعث نبيا.

तर्जुमा: नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बे'सत (रिसालत) के बाद अपनी तरफ़ से अक़ीक़ा किया।

हैसमी ने कहा कि इसके रिजाल सही के रिजाल हैं सिवा हयसाम बिन जमील के कि वह सिक़ा है यानी हैसमी की नज़र में यह सनद बिल्कुल सही है इसमें कोई ज़ईफ़ रावी नहीं है।

शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने अक़ीक़ा वाली रिवायत पर सिलसिला सहीहा में लंबी बहस की है उसका ख़ुलासा वही है जो ऊपर पेश किया गया है कि अब्दुल्लाह बिन मुहरीर के तरीक़ से आने वाली रिवायत ज़ईफ़ है। ताहम हयसाम बिन जमील के तरीक़ से आने वाली रिवायत

क़वील इस्नाद है और शैख़ ने इस सनद को हसन दर्जा दिया है। (अस सिलसिला सहीहा: 2726)

ख़ुलासा ए कलाम यह हुआ कि यह बात नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से साबित नहीं है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नुबूवत के बाद अपना अक़ीक़ा ख़ुद किया था। इस हदीस की बुनियाद पर हम यह मसला इस्तिंबात कर सकते हैं कि बड़ी उम्र में भी अक़ीक़ा दिया जा सकता है यानी 7वें दिन जिसका अक़ीक़ा न हो सके, बाद में जब सहूलत हो, उसकी तरफ़ से अक़ीक़ा दिया जा सकता है। इसी तरह यह मसला भी इस्तिंबात होता है कि आदमी अपनी जानिब से ख़ुद भी अक़ीक़ा कर सकता है यानी अगर किसी की जानिब से उसके बाप या सरपरस्त ने अक़ीक़ा न किया हो तो वह ख़ुद ही अपनी जानिब से अक़ीक़ा कर सकता है।

यहाँ दो इश्काल का जवाब भी जान लेना ज़रूरी है:

(1) इस हदीस से कुछ लोग मीलादुन्नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मनाने के दलील पकड़ते हैं जबकि यह हदीस अक़ीक़ा से मुताल्लिक़ है, मीलाद और अक़ीक़ा में ज़मीन और आसमान का फ़र्क़ है। यह

हदीस हरगिज़ मीलाद की दलील नहीं बन सकती है। अक़ीक़ा में नौमौलूद की जानिब से जानवर ज़ब्ह किया जाता है जबकि मीलादुन नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम में शिर्क और बिदअत के आमाल अंजाम दिए जाते हैं।

(2) कुछ अहले इल्म ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इस अमल को आपके साथ ख़ास माना है जबकि हमें मालूम है कि ख़ासियत की दलील चाहिए और नुबुव्वत के बाद आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अक़ीक़ा करना आपके साथ ख़ास होने की कोई दलील नहीं है।

[32].क्या फ़र्ज़ नमाज़ के सजदे में अपनी ज़बान में दुआ कर सकते हैं?

इस सवाल का जवाब यह है कि कुछ उलमा ने कहा है कि नमाज़ पढ़ने वाला फ़र्ज़ नमाज़ के सजदे में अपनी ज़बान में दुआ कर सकता है, मगर मैं उन उलमा की राय क़वी समझता हूँ जो यह कहते हैं कि फ़र्ज़ नमाज़ के सजदे में अपनी ज़बान में दुआ नहीं कर सकते हैं। हालांकि, मैं भी मानता हूँ कि सुन्नत और नफ़्ल नमाज़ के सजदों में आप अपनी ज़बान में दुआ कर सकते हैं।

इस सिलसिले में सहीह बुख़ारी 1200 की हदीस पर ग़ौर फ़रमाएं। ज़ैद बिन अरक़म रज़ि० से मरवी है कि हम नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़माने में नमाज़ पढ़ने में बातें कर लिया करते थे। कोई भी अपने क़रीब के नमाज़ी से अपनी ज़रूरत बयान कर देता। फिर आयत "حافظوا على الصلوات......." नाज़िल हुई और हमें नमाज़ में ख़ामोश रहने का हुक्म हुआ।

अपनी ज़बान में दुआ करना यह इंसानी कलाम और इंसानी गुफ़्तुगू (बात-चीत) है जो पहले नमाज़ में जाइज़ थी फिर बाद में मना कर दी गई इस के लिए इस हदीस की रोशनी में बेहतर और अफ़ज़ल यही मा'लूम होता है के आप फ़र्ज़ नमाज़ के सजदो में अगर तस्बीहात के बाद दुआ करना चाहे तो मसनूनी दुआ करे यानि वो दुआ जो क़ुरआन में वारिद हो या अहादीस में वारिद हो।

जहां तक सुन्नत और नफ़िल का मामला है तो इसमें उम्मीद-ए-वस्ल है। चुनांचे सही मुस्लिम 772 कि एक हदीस पर ग़ौर फ़रमाए हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है वो फ़रमाते हैं एक रात में ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ नमाज पढ़ी आप ने सूरह बक़रा शुरू फ़रमाई मेने दिल में कहा 100 आयत पर एक रुकू फ़रमाएंगे, लेकिन आप ने जारी रखा फिर मैंने ख़्याल किया के आप एक रकात में पूरी सूरत पड़ेगे लेकिन आप ने जारी रखा फिर मैंने ख़्याल किया के आप सूरह मुकम्मल कर के रुकू फ़रमाएंगे लेकिन आप ने सुरह आले इमरान शुरू कर दी और इसे भी मुकम्मल किया, आप ठहरे ठहर कर पढ़ रहे थे आप जब किसी ऐसी आयत से गुज़रते थे जिसकी मैं तस्बीह हो तो अल्लाह की पाकी बयान फ़रमाते और जब किसी

सवाल वाली आयत से गुज़रते तो अल्लाह से सवाल करते और जब पनाह वाली आयत से गुज़रते तो अल्लाह की पनाह तालाब करते।

आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की यह नमाज़ नफ़िल थी और नफ़िल नमाज में आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने क़ुरआनी आयत पढ़ते हुए कहीं अल्लाह की पाकी ब्यान की, कहीं अल्लाह से सवाल किया, कहीं अल्लाह से पनाह मांगी।

इससे यह समझा जा सकता है कि नफ़िल नमाज़ में कुछ वुसअत है इस वजह से नफ़िल नमाज़ के सजदो में आप अपनी ज़बान में दुआ कर सकते हैं।

आख़िर बात यह है कि दुआ के लिए कोई ज़रूरी नहीं है कि आप सजदे में ही दुआ करें, आप कभी भी दुआ कर सकते हैं और दुआ के मुख़्तलिफ़ अफ़ज़ल औक़ात हैं, इन सब औक़ात में दुआ का एहतिमाम करे

वल्लाहु आलम बिस्सावाब

===============

[33].क्या मय्यत को ग़ुस्ल देने वाला ग़ुस्ल करेगा या वुज़ू काफ़ी है?

मय्यत को ग़ुस्ल देने वाले से मुताल्लिक़ लोगों में 3 बातें हैं:

(1) वह ग़ुस्ल करे

(2) वह वुज़ू करे

(3) अगर वह पहले से वुज़ू कर चुका है तो सिर्फ़ हाथ धो ले

जो लोग मय्यत को ग़ुस्ल देने वालों के लिए ग़ुस्ल के वाजिब होने के क़ाइल हैं, उनकी दलील यह हदीस है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

مَنْ غَسَّلَ الْمَيِّتَ فَلْيَغْتَسِلْ، وَمَنْ حَمَلَهُ فَلْيَتَوَضَّأْ

तर्जुमा: जो शख़्स किसी मय्यत को नहलाए, ग़ुस्ल घुसल करे और जो उसे उठाए, वह वुज़ू करे।

(अबू दाऊद: 3161)

इसके अलावा एक और दलील मिलती है:

عَنْ عَائِشَةَ أَنَّهَا حَدَّثَتْهُ أَنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ كَانَ يَغْتَسِلُ مِنْ أَرْبَعٍ: مِنَ الْجَنَابَةِ، وَيَوْمَ الْجُمُعَةِ، وَمِنَ الْحِجَامَةِ، وَغُسْلِ الْمَيِّتِ

तर्जुमा: उम्मुल मोमिनीन आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने बयान किया कि नबी ﷺ चार चीज़ों से गुस्ल किया करते थे: जनाबत से, जुमे के दिन, हिजामा करवाने के बाद और मय्यत को गुस्ल देने के बाद।

(अबू दाऊद: 3160। इस हदीस को अल्लामा अल्बानी रहिमहुल्लाह ने ज़ईफ क़रार दिया है)

अज़ीम आबादी साहब ने भी इसे ज़ईफ क़रार दिया है।

(औनुल माबूद: 8/243)

तो यह रिवायत ज़ईफ है इससे दलील नहीं पकड़ी जा सकती। रही बात उपर वाली पहली रिवायत की, तो वह रिवायत ज़ाहिरी तौर पर वाजिब होने का तक़ाज़ा कर रही है, मगर सही आसार से पता चलता है कि यहाँ वाजिब होने का इस्तिदलाल करना सही नहीं है।

पहला असर:

ليس عليكم في غسل ميتكم غسل إذا غسلتموه فإن ميتكم ليس بنجس فحسبكم ان تغسلوا ايديكم

तर्जुमा: इब्न ए अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि मय्यत को गुस्ल देने से तुम्हारे लिए गुस्ल करना वाजिब नहीं है जब तक तुम

उसे गुस्ल दो क्योंकि तुम्हारा मय्यत नजिस (नापाक) नहीं होता तो तुम्हारा हाथ धो लेना ही काफ़ी है।

(सहीह उल जामी: 5408)

इमाम हाकिम, इमाम ज़हबी और अल्लामा अल्बानी रहिमहुल्लाह ने इसे सही क़रार दिया है और हाफिज़ इब्न ए हजर रहिमहुल्लाह ने हसन कहा है।

दूसरा असर:

عن ابن عمر كنا نغسل الميت فمنا من يغتسل ومنا من لا يغتسل

तर्जुमा: इब्न ए उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हम लोग मय्यत को गुस्ल देते थे, तो हम में से कुछ लोग गुस्ल करते और कुछ गुस्ल नहीं करते।

इस असर को अल्बानी रहिमहुल्लाह ने सही क़रार दिया है।

(अहकामुल जनाइज़: 72)

तीसरा असर :

इसी तरह असमा बिंत-ए-उमैस रज़ियल्लाहु अन्हा वाले असर से भी दलील मिलती है। जब उन्होंने अपने शौहर अबू बक्र सिद्धीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु को उनकी वफ़ात पर गुस्ल दिया, तो उन्होंने मुहाजिरीन से पूछा कि सख़्त सर्दी है और मैं रोज़े से हूँ, क्या मुझे गुस्ल करना पड़ेगा, तो सहाबा ने जवाब दिया कि नहीं।

(मुसन्नफ़ इब्न ए अबी शैबा: 6123, मुअत्ता इमाम मालिक: 521)

इन आसार को सामने रखते हुए यह साबित होता है कि मय्यत को गुस्ल देने वाले के लिए गुस्ल करना मुस्तहब है, अगर वह गुस्ल न करे तो कोई हरज नहीं। यही मौक़िफ़ मुबारकपुरी रहिमहुल्लाह का है और उन्होंने तोहफ़ा उल एहवज़ी में इमाम शौकानी रहिमहुल्लाह से भी इसी मौक़िफ़ को नक़ल किया है, जो सारे दलील में जमा और ततबीक़ की सूरत है।

अलबत्ता वुज़ू के मुताल्लिक शैख़ इब्न ए बाज़ रहिमहुल्लाह ने ज़िक्र किया है कि मय्यत को गुस्ल देने वाला वुज़ू ज़रूर करे, यह तमाम अहल ए इल्म का मौक़िफ़ है। यह वुज़ू नमाज़ ए जनाज़ा के लिए है जैसा कि हर नमाज़ के लिए करते हैं, बग़ैर वुज़ू के कोई नमाज़ नहीं होगी:

لا صلاةَ لِمَن لا وُضوءَ له

तर्जुमा: उसकी नमाज़ नहीं जिसकी वुज़ू नहीं है।

(सहीह उत तर्ग़ीब: 203)

अगर मय्यत को गुस्ल देने वाला पहले से वुज़ू किया हुआ है और उसका हाथ मय्यत की शर्मगाह को लग गया, तो फिर वुज़ू करना वाजिब होगा क्योंकि शर्मगाह को हाथ लगाने से वुज़ू टूट जाता है। लेकिन अगर मय्यत की शर्मगाह को हाथ न लगे (और गुस्ल देने में यही तरीक़ा अपनाए कि हाथ पर दस्ताना लगा ले और फिर मय्यत की गंदगी साफ़ करे) तो उसे वुज़ू करना ज़रूरी नहीं है लेकिन कम से कम हाथ धोना ज़रूरी है जैसा कि ऊपर सहीह उल जामे वाली रिवायत में ज़िक्र है।

मज़ीद चंद अहकाम व मसाइल:

अफ़ज़ल अमल: गुस्ल देने वाले के हक़ में अफ़ज़ल यह है कि वह गुस्ल कर ले ताकि इस्तिहबाब पर अमल भी हो जाए और मय्यत को गुस्ल देने, उसे बार-बार देखने और हरकत देने से ज़ेहन में जो फितूर पैदा हो गया है वह दूर हो जाए और ताज़गी और नशीता हो जाए।

एहतियाती अमल: अगर गुस्ल न कर सकें तो कम से कम वुज़ू कर लें, हालांकि उन्होंने पहले वुज़ू किया हुआ हो। अगर पहले वुज़ू नहीं किया तो नमाज़ ए जनाज़ा के लिए वुज़ू तो हर हाल में करना है।

जिसने मय्यत को गुस्ल दिया है, उसे अपना कपड़ा उतारने या साफ़ करने की कोई ज़रूरत नहीं है क्योंकि जब उसे अपना बदन धोना ज़रूरी नहीं तो कपड़ा धोना तो और भी ज़रूरी नहीं होगा।

जनाज़े की नमाज़ के लिए किए गए वुज़ू से दूसरे वक्त की नमाज़ पढ़ सकता है क्योंकि इस वुज़ू और दूसरी नमाज़ के वुज़ू में कोई फ़र्क़ नहीं है।

यह क़ौल "ومن حمله فليتوضأ"(जो मय्यत को उठाए वह वुज़ू करे) इसका मतलब यह नहीं है कि जो मय्यत को कंधा दे वह सब वुज़ू करें। इसका मतलब यह है कि जो मय्यत को हरकत दे, इधर से उधर उठाकर रखे, एक चादर से दूसरी चादर पर ले जाए, वह वुज़ू करे। और इसमें जो वुज़ू का ज़िक्र है वह नमाज़ ए जनाज़ा के लिए वुज़ू करना है।

==================

[34].क्या रोज़े का मक़सद जिस्म को तकलीफ़ पहुँचाना है?

एक भाई ने सवाल किया कि क्या ऐ-सी (AC) में रहते हुए रोज़ा रखने से रोज़ा में कोई ख़लल तो नहीं होता क्योंकि इसमें भूख और प्यास की तकलीफ़ महसूस नहीं होती है। दरअसल, यह सवाल इसलिए पैदा होता है कि कुछ लोग रोज़ा को जिस्मानी तकलीफ़ का सबब समझते हैं बल्कि रमज़ान में कुछ वा'इज़ीन (नसीहत ब्यान करने वाले लोग) भी बयान करते रहते हैं कि रोज़ा के ज़रिए ख़ुद को इतना थकाओ कि तुम्हें मुहताजो और ज़रूरतमंदों की याद आ जाए। और कुछ लोग इबादत में दुनियावी सुख से फ़ायदा उठाना भी मुज़िर इबादत समझते हैं जैसे गर्म पानी से वुज़ू, क़ालीन पर नमाज़ और ऐ-सी में रोज़ा वग़ैरह।

इस भाई के सवाल की वजह से मैंने सोचा कि इस बारे में तफ़सील और दलाइल से आम लोगों को आगाह करूं कि रोज़ा का मक़सद जिस्म को तकलीफ़ पहुँचाना नहीं बल्कि तक़वा का हुसूल है जिस से जिस्म और रूह दोनों को फ़ायदा पहुँचता है। इस्लाम हमें एक तरफ़ ख़ुद को तकलीफ़ पहुँचाने से रोकता है तो दूसरी तरफ़ जिस्म को

अज़ीयत और ज़रर (नुक़सान) लाहिक़ होने वाले अमल से मना है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَلَا تُلْقُوْا بِأَيْدِيْكُمْ إِلَى التَّهْلُكَةِ(البقرة: 195)

"और अपने हाथों से ख़ुद को हलाकत में न डालो।"

इस्लाम जिस्म और उसके मुकम्मल आ'ज़ा की हिफ़ाज़त करने और उनके हक़ूक़ अदा करने का हुक्म देता है ताकि जिस्म को तकलीफ़ और ज़रर लाहिक़ न हो यहां तक कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक सहाबी को जो रोज़ाना रोज़ा रखते थे रोज़ाना रखने से मना किया। अब्दुल्लाह बिन अम्रो बिन अल-आस रज़ियल्लाहु अन्हुमा से मरवी है उन्होंने ब्यान किया कि रसूलुल्लाह सलल्लाहु अल्लैही व सल्लम ने फ़रमाया:

يا عَبْدَ اللَّهِ، أَلَمْ أُخْبَرْ أَنَّكَ تَصُومُ النَّهارَ وتَقُومُ اللَّيْلَ؟ قُلتُ: بَلَى يا رَسولَ اللَّهِ، قالَ: فلا تَفْعَلْ، صُمْ وأَفْطِرْ، وقُمْ ونَمْ، فإنَّ لِجَسَدِكَ عَلَيْكَ حَقًّا، وإنَّ لِعَيْنِكَ عَلَيْكَ حَقًّا، وإنَّ لِزَوْجِكَ عَلَيْكَ حَقًّا. (صحيح البخارى:5199)

तर्जुमा: ऐ अब्दुल्लाह ! क्या मेरी ये इत्तिला सही है कि तुम (रोज़ाना) दिन में रोज़े रखते हो और रात भर इबादत करते हो? मैंने कहा : जी

हाँ या रसूलुल्लाह! नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया कि ऐसा न करो रोज़े भी रखो और बग़ैर रोज़े भी रहो। रात में इबादत भी करो और सोओ भी। क्योंकि तुम्हारे बदन का भी तुम पर हक़ है, तुम्हारी आँख का भी तुम पर हक़ है, और तुम्हारी बीवी का भी तुम पर हक़ है।

बहुत ज़्यादा खाना भी बाइस ज़रर (detriment) और मुज़िर (harmful) सेहत है, आज बड़ी तादाद मे लोग ज़्यादा और मुख़्तलिफ़ क़िस्म की ग़िज़ा खा कर बीमार हो रहे हैं और मर भी रहे हैं, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ज़्यादा खाने से भी मना फ़रमाया है ताकि जिस्म का निज़ाम दुरुस्त और बीमारी से महफ़ूज़ रहे।

मिक़दाम-बिन-मअदिकरिब कहते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को ये फ़रमाते हुए सुना :

ما ملأَ آدميٌّ وعاءً شرًّا مِن بطنٍ ، بحسبِ ابنِ آدمَ أُكُلاتٌ يُقمنَ صُلبَهُ ، فإن كانَ لا محالةَ فثُلثٌ لطعامِهِ وثُلثٌ لشرابِهِ وثُلثٌ لنفَسِهِ(صحيح الترمذي:2380)

तर्जुमा: किसी आदमी ने कोई बर्तन अपने पेट से ज़्यादा बुरा नहीं भरा। आदमी के लिये कुछ लुक़मे ही काफ़ी हैं जो उसकी पीठ को सीधा रखें और अगर ज़्यादा ही खाना ज़रूरी हो तो पेट का एक

तिहाई हिस्सा अपने खाने के लिये एक तिहाई पानी पीने के लिये और एक तिहाई साँस लेने के लिये बाक़ी रखे।

मज़कूरा बुनियादी बातो को सामने रखने से हमें पता चलता है कि इस्लाम ने हमें कोई ऐसा काम करने का हुक्म नहीं दिया है जो जिस्म को तकलीफ़ पहुंचाता है, बल्कि इस्लाम जिस्म की हिफ़ाज़त करने का हुक्म देता है और उसे ज़ख़्म पहुंचाने से रोकता है। रोज़ा भी जिस्म को तकलीफ़ देने का सबब (कारण) नहीं है, यह मुतनव्वे (विभिन्न) फायदों से भरपूर तक़लील-ए-ग़िज़ा का एक बेहतरीन निज़ाम है। आम दिनों में दुकानों में जो वक़्फ़ा होता है वहां इसकी अवधि कुछ अधिक होती है। साथ ही यह रूह की ग़िज़ा है, इससे नफ़स और दिल की पाकिज़गी हासिल होती है जिसके अच्छे असरात (प्रभाव) इंसानी जिस्म और किरदार पर मुरत्तब होते हैं, गोया रोज़ा से जिस्म को तकलीफ़ पहुंचाने की बजाय वह रूह को फ़ायदा पहुंचाने के साथ पूरे जिस्म को फ़ायदा पहुंचाता है। एक रोज़ेदार इतना नेक होता है कि न उसकी आँखों से ग़लती होती है, न उसके दिल से बुरा सोचता है और न ही उसके हाथ और ज़बान से तकलीफ़ और ज़रर (नुक़सान) का काम करता है।

रोज़ा की हिकमत और मसलहत पर ग़ौर करने से बख़ूबी इस बात का अंदाज़ा होता है कि रोज़ा ख़ुद को और दूसरों को फ़ायदा पहुँचाने के लिए रखा जाता है न कि शरीअत में इस से मक़सद ता'ज़ीब (तकलीफ़) जिस्म है जैसाकि कुछ लोग समझते हैं। मुसलमानों का एक ख़ास तबक़ा सूफ़ीयों के यहाँ भी ता'ज़ीब जिस्म इबादत शुमार की जाती है इसलिए वे रहबानियत इख़्तियार करते और जिस्म को तकलीफ़ पहुँचाने वाली इबादत करते मगर यहाँ आप को मालूम हो कि इस्लाम में न रहबानियत है और न ही इबादत के ज़रिए जिस्म को तकलीफ पहुँचाना है। ऊपर सहीह बुख़ारी की हदीस गुज़र चुकी है जिसमें मज़कूर है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक सहाबी को रोज़ा रखने को और रात रात इबादत करने से मना किया ताकि जिस्म को तकलीफ़ से बचाया जाए।

अल्लाह तआला क़ुरआन में रोज़ा का मक़सद बयान करते हुए इर्शाद फ़रमाता है:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِينَ مِن قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ

(البقرة:183)

तर्जुमा: "ऐ ईमान वालों! तुम पर रोज़े रखना फ़र्ज़ किया गया जिस तरह तुमसे पहले लोगों पर फ़र्ज़ किए गए थे ताकि तुम तक़्वा इख़्तियार करो।"

यहाँ अल्लाह त'आला रोज़े की फ़र्ज़ियत का मक़सद तक़्वा बताया है और रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने तक़्वा के बारे में बताते हुए इर्शाद फ़रमाया:

"التَّقْوَى هَاهُنَا وَيُشِيرُ إِلَى صَدْرِهِ ثَلَاثَ مَرَّاتٍ(صحيح مسلم :2564)

तक़्वा और परहेज़गारी यहाँ है और आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपने सीने की तरफ़ तीन बार इशारा किया यानी तक़्वा का ताल्लुक़ दिल से है ताकि जिस्मानी आमाल के साथ दिल भी साफ़ रहे।

अगली आयत में अल्लाह रोज़े की आसानी को ज़िक्र करता है, अल्लाह फ़रमाता है:

أَيَّامًا مَّعْدُودَاتٍ ۚ فَمَن كَانَ مِنكُم مَّرِيضًا أَوْ عَلَىٰ سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِّنْ أَيَّامٍ أُخَرَ ۚ وَعَلَى الَّذِينَ يُطِيقُونَهُ فِدْيَةٌ طَعَامُ مِسْكِينٍ ۖ فَمَن تَطَوَّعَ خَيْرًا فَهُوَ خَيْرٌ لَّهُ ۚ وَأَن تَصُومُوا خَيْرٌ لَّكُمْ ۖ إِن كُنتُمْ تَعْلَمُونَ)184(

तर्जुमा: गिनती के चंद ही दिन हैं लेकिन तुम में से जो शख़्स बीमार हो या सफ़र में हो तो वह और दिनों में गिनती को पूरा कर ले और उसकी ताक़त रखने वाले फ़िदया में एक मिस्कीन को खाना दें, फिर जो शख़्स नेकी में सबक़त करे वह उसी के लिए बेहतर है लेकिन तुम्हारे हक़ में बेहतर काम रोज़े रखना ही है अगर तुम बा-इल्म हो।

अल्लाह ताक़त से ज़्यादा किसी पर बोझ नहीं डालता, इसलिए रोज़ा रहमत है न कि ज़हमत। इस बात की वज़ाहत मज़कूरा आयत से हो रही है कि अव्वलन पूरे साल रोज़ा फ़र्ज़ नहीं है बल्कि रोज़े के महज़ चंद अय्याम मुक़र्रर है। सानियन (दूसरा) जो आक़िल-ओ-बालिग़ और सेहतमंद और मुक़ीम है उस पर रोज़ा फ़र्ज़ है। सालिसन (तीसरा) जो आक़िह नहीं, बालिग़ नहीं, सेहतमंद नहीं, मुक़ीम नहीं उस पर रोज़ा फ़र्ज़ नहीं है। इसमें मज़ीद कुछ तफ़सील है।

ग़ैर-आक़िल और ग़ैर बालिग़ पर रोज़ा फ़र्ज़ नहीं है, ताहम तरबिय्यती तौर पर बच्चे रखना चाहें तो रख सकते हैं।

बीमार, मुसाफ़िर, हैज़ा, नुफ़्सा, हामिला और मुर्ज़ि'आ (दूध पिलाने वाली स्त्री) के लिए उज़्र के सबब रोज़ा छोड़ने की इजाज़त है, बाद में जब सुविधा हो तो छोटे रोज़ों की क़ज़ा करलें। अगले रमज़ान तक कभी

भी क़ज़ा दे सकते हैं जैसाकि सय्यदा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं:

كَانَ يَكُونُ عَلَيَّ الصَّوْمُ مِنْ رَمَضَانَ، فَمَا أَسْتَطِيعُ أَنْ أَقْضِيَ إِلَّا فِي شَعْبَانَ(صحيح البخارى: 1950)

तर्ज़ुमा: मुझ पर रमज़ान के रोज़े बाक़ी रहते और मैं क़ज़ा रोज़े शाबान से पहले न रख पाती।

दाईमी मरीज़ और सिन-रसीदा (बूढ़ा) लोग जिन्हें रोज़ा रखने की सुविधा नहीं है वे हर रोज़ा के बज़ाय मिस्कीन को फ़िदया अदा करेंगे, उन्हें क़ज़ा की ज़रूरत नहीं है।

रोज़ा से मुताल्लिक़ मा'ज़ूरो के अहकाम रोज़ा की आसानी और रहमत पर दलील हैं।

इस आयत के बाद ख़ालिक़ इंस-ओ-जिन्न ने ख़ुद ही साफ़-साफ़ बतलाया कि रोज़ा के बारे में अल्लाह तुम्हारे लिए आसानी चाहता है सख़्ती नहीं, फ़रमान इलाही है:

شَهْرُ رَمَضَانَ الَّذِي أُنزِلَ فِيهِ الْقُرْآنُ هُدًى لِّلنَّاسِ وَبَيِّنَاتٍ مِّنَ الْهُدَىٰ وَالْفُرْقَانِ ۚ فَمَن شَهِدَ مِنكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ ۖ وَمَن كَانَ مَرِيضًا أَوْ عَلَىٰ سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِّنْ أَيَّامٍ أُخَرَ ۗ يُرِيدُ اللَّهُ بِكُمُ الْيُسْرَ وَلَا يُرِيدُ بِكُمُ الْعُسْرَ وَلِتُكْمِلُوا الْعِدَّةَ وَلِتُكَبِّرُوا اللَّهَ عَلَىٰ مَا هَدَاكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ (185)

तर्जुमा: माहे रमज़ान वह है जिसमें क़ुरआन उतारा गया जो लोगों को हिदायत करने वाला है और जिसमें हिदायत की हक़ व बातिल की तमीज़ की निशानियाँ हैं। तुम में से जो शख़्स इस महीने को पाए उसे रोज़ा रखना चाहिए। हाँ जो बीमार हो या मुसाफ़िर हो उसे दूसरे दिनों यह गिनती पूरी करनी चाहिए। अल्लाह तआला का इरादा तुम्हारे साथ आसानी का है, सख़्ती का नहीं। वह चाहता है तुम गिनती पूरी कर लो और अल्लाह तआला की दी हुई हिदायत पर इस तरह की बड़ाईयाँ बयान करो और उसका शुक्र अदा करो।

चूंकि रोज़ा का बुनियादी मक़सद तक़्वे का हुसूल है, बनायें सबब रोज़ा की हालत में ख़िलाफ़ तक़्वा काम ममनूअ है हत्ता कि कोई इससे लड़ाई करे या गाली भी दे तो वह कुछ भी न करे, बस यह कह दे मैं रोज़े से हूँ चुनांचे अबु हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

الصِّيَامُ جُنَّةٌ فلا يَرْفُثْ ولَا يَجْهلْ، وإنِ امْرُؤٌ قَاتَلَهُ أوْ شَاتَمَهُ فَلْيَقُلْ: إنِّي صَائِمٌ مَرَّتَيْنِ وَالَّذِي نَفْسِي بيَدِهِ لَخُلُوفُ فَمِ الصَّائِمِ أطْيَبُ عِنْدَ اللَّهِ تَعَالَى مِن رِيحِ المِسْكِ. يَتْرُكُ طَعَامَهُ وشَرَابَهُ وشَهْوَتَهُ مِن أجْلِي الصِّيَامُ لِي، وأَنَا أجْزِي به والحَسَنَةُ بعَشْرِ أمْثَالِهَا(صحيح البخاري:1894)

ज़रा ग़ौर करें कि जो इस्लाम रोज़ेदार को तकलीफ़ देने वालों से किनारा कशी करने का हुक्म दे वो जिस्म को तकलीफ़ पहुंचाने वाले काम का कैसे हुक्म दे सकता है? इस हदीस से मालूम हुआ कि अल्लाह की रज़ा के लिए रोज़ेदार खाने पीने के साथ शहवतों को भी छोड़ता है और दूसरी हदीस से यह मालूम होता है कि रोज़ा शहवतों को ख़त्म का अहम ज़रिया है इस बिना पर जो निकाह की ताक़त नहीं रखते उन को रोज़ा रखने का हुक्म दिया गया है। (हदीस देखिए बुख़ारी: 5065) हां यह अलग बात है कि तक़लील-ए-ग़िज़ा (कम खाना) या ग़िज़ाइया वक़्फ़ा आम दिनों से क़द्रे-तवील होने के सबब भूक और प्यास का एहसास होता है मगर इस भूक और प्यास से सेहत को नुक़सान नहीं पहुंचता बल्कि इस से बातनी बीमारियां कमज़ोर होकर नफ़स की पाकीज़गी और रूह का तज़क़ीया हासिल होता है, इसी का नाम तक़्वा है और इसी को हासिल करने के लिए रोज़ा फ़र्ज़ किया गया है।

सहरी (ताख़ीर से) खाकर रोज़ा रखने और सूरज ग़ुरूब होते ही इफ़्तार करने का मक़सद भी बन्दों के साथ आसानी है। इस के अलावा और भी रोज़ों की आसानियाँ हैं। यहाँ चंद मिसालों को बयान करने का

मक़सद रोज़ा बाइस ज़रूरत ओ मुश्किलात नहीं, बाइस रहमत ओ बरकत है।"

आख़िर में यह बात भी मालूम रहे कि शरीअत ने पहले से रोज़ेदारो के लिए जो आसानियाँ रखी हैं उन से हम फ़ायदा उठा सकते हैं, साथ ही मौजूदा ज़माने की सहूलियात जो अहकाम शरीअत से मुतसादिम न हों उन से भी फ़ायदा उठाने में कोई हरज नहीं है जैसा कि शुरू में ज़िक्र किया गया सवाल कि क्या ए-सी में रहने से रोज़ा में ख़लल वाक़े होता है? उस का जवाब यह है कि यह मौजूदा ज़माने की एसी सहूलियात है जिस से रोज़ेदार फ़ायदा उठाए तो रोज़ा में कोई ख़लल वाक़े नहीं होता है। इस मौक़े से रसूल अल्लाह ﷺ का एक अमल ज़िक्र करना मुफ़ीद होगा।

अबू-बक्र-बिन-अब्दुर्रहमान रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि उन से रसूल अल्लाह ﷺ के किसी सहाबी ने बयान किया:

لقد رأيتُ رسولَ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ علَيهِ وسلَّمَ بالعرجِ يصبُّ علَى رأسِهِ الماءَ ، وَهوَ صائمٌ منَ العطشِ ، أو منَ الحرِّ (صحيح أبي داود:2365)

तर्जुमा: मैंने मक़ाम अरज में रसूल अल्लाह ﷺ को अपने सिर पर प्यास से या गर्मी की वजह से पानी डालते हुए देखा और आप ﷺ रोज़े से थे।

अल्लाह तआला से दुआ करते हैं कि रमज़ान-उल-मुबारक की बरकतों और सआदतों से हमें माला माल फ़रमा, रोज़े को साबिक़ा तमाम सय्यिआत (बुराइयों) का कफ़्फ़ारा बना और तक़्वा का इस तरह ख़ूगर बना कि रमज़ान के बाद भी हम तेरी रज़ा के काम करते रहें। आमीन"



[35].क्या वतन से मोहब्बत ईमान का हिस्सा है?

लोगों में मशहूर है कि वतन से मोहब्बत ईमान का हिस्सा है इसलिए ईमान का तक़ाज़ा है कि वतन से मोहब्बत की जाए और जो वतन से मोहब्बत नहीं करता वह वतन की मुख़ालिफ़त करता है। दरअसल इस बात की बुनियाद एक हदीस पर है, वह हदीस इस तरह है: "حب الوطن من الإيمان" इसका मतलब है कि वतन से मोहब्बत करना ईमान में से है यानी ईमान का हिस्सा है।

यह हदीस आम लोगों में कसरत से फैली है और लोग इस हदीस को सही मानते हैं जबकि यह हदीस रसूलुल्लाह ﷺ से साबित नहीं है। इस हदीस पर मुहद्दिसीन के कुछ फ़रमान दर्ज करता हूँ जिससे अंदाज़ा हो जाएगा कि यह हदीस है या बनाई हुई बात?

(1) सघानी ने कहा कि यह हदीस मौज़ू (मनगढ़ंत) है। (मौज़ूआत सघानी: 53)

(2) सख़ावी ने कहा कि मैं इस हदीस पर मतला नहीं हूँ। (अल-मक़ासिदुल हसन: 218)

(3) स्यूती ने भी वही कहा जो सख़ावी ने कहा। (अल-दरर अल-मुन्तसिरा: 65)

(4) मुल्ला अली क़ारी ने कहा कि कहा गया है इसकी कोई असल नहीं या इसकी असल मौज़ू होना है। (अल-असरार अल-मरफ़ूआ: 189)

(5) मोहम्मद बिन मोहम्मद अल-ग़ज़ी ने कहा यह हदीस ही नहीं है। (इत्कान माए युहसन: 1/222)

(6) ज़रकानी ने कहा कि मैं इस हदीस को नहीं जानता। (मुख़्तसर अल-मक़ासिद: 361)

(7) वदाइी ने कहा कि यह नबी ﷺ से साबित नहीं है। (अल-फ़तावा अल-हदीसिया: 1/56)

(8) मोहम्मद जारुल्लाह अस्सादी ने कहा कि ऐसी हदीस नहीं आई है। (अल-नवाफ़िह अल-अत्रा: 120)

(9) शैख़ इब्न उसैमीन कहते हैं कि यह मशहूर है मगर इसकी कोई असल नहीं है। (शरह अल-नज़हत लिब्न उसैमीन: 55)

(10) शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह का भी हुक्म है कि यह हदीस मौज़ू है। (अस-सिलसिला अल-ज़ईफ़ा: 36)

इस हदीस पर इतनी लंबी बहस लिखने का मक़सद सिर्फ़ यही है कि लोग यह बात जान लें कि वतन से मोहब्बत करना ईमान नहीं है, अगर कोई वतन के लिए जान देता है तो ईमान और इस्लाम के लिए नहीं जान देता वह महज़ वतन के लिए जान देता है। इसलिए वतन के लिए जान देने वालों को वतन पर क़ुर्बान होने वाला या वतन के लिए जान देने वाला कहेंगे मगर उन्हें शहीद नहीं कहेंगे।

हाँ, वतन से मोहब्बत फ़ितरी चीज़ है, जो जहाँ पैदा होता है फ़ितरतन उससे मोहब्बत हो जाती है और यह मोहब्बत जाइज़ है। नबी ﷺ को भी अपने वतन से मोहब्बत थी और आपने मोहब्बत का इज़हार भी फ़रमाया है, आप दुआ करते थे:

اللهمَّ حَبِبْ إلينَا المدينةَ كحُبِّنَا مكةَ أو أَشَدَّ(صحيح البخاري:5654)

तर्जुमा: हमारे दिलों में मदीनें की मोहब्बत उसी तरह पैदा कर दे जैसे मक्का की मोहब्बत है बल्कि उससे भी ज़्यादा।

मक्का से मोहब्बत पर आपका यह फ़रमान भी दलालत करता है:

قالَ رسولُ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ عليهِ وسلَّمَ لمكَّةَ ما أطيبَكِ من بلدٍ وأحبَّكِ إليَّ، ولولا أنَّ قومي أخرجوني منكِ ما سَكَنتُ غيرَكِ (صحيح الترمذي:3926)

तर्जुमा: रसूल अल्लाह ﷺ ने मक्का को ख़िताब करते हुए फ़रमाया: तू कितना पाकिज़ा शहर है और तू कितना मुझे महबूब है, मेरी क़ौम ने मुझे तुझसे न निकाला होता तो मैं तेरे अलावा कहीं और न रहता।

इसी तरह आप ﷺ मदीनें से भी बेहद मोहब्बत करते थे। बुख़ारी शरीफ़ में है कि जब आप सफ़र से वापस आते और मदीनें पर नज़र पड़ती तो मदीनें से मोहब्बत में सवारी तेज़ कर देते, चूंकि अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा:

كان رسولُ اللهِ صلى الله عليه وسلم إذا قَدِمَ مِن سفرٍ ، فأَبْصَرَ درجاتِ المدينةِ ، أَوْضَعَ ناقتَه ، وإن كانت دابَّةً حرَّكَها .(صحيح البخاري:1802)

तर्जुमा: जब रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम सफ़र से मदीना वापस होते और मदीना के बालाई इलाक़ो पर नज़र पड़ती तो अपनी ऊँटनी को तेज़ कर देते, कोई दूसरा जानवर होता तो उसे भी एड़ लगाते। आगे अबू अब्दुल्लाह इमाम बुख़ारी ने कहा कि हारिस बिन उमैर ने हुमैद से ये लफ्ज़ ज़्यादा किए हैं कि मदीना से मोहब्बत की वजह से सवारी तेज़ कर देते थे। हाफ़िज़ इब्न हजर रहमतुल्लाह अलैह इस हदीस की शरह करते हुए आख़िर में लिखते हैं:

وفي الحديث دلالة على فضل المدينة ، وعلى مشروعية حب الوطن والحنين إليه . (فتح البارى)

तर्जुमा: यह हदीस मदीना की फज़ीलत पर दलालत करती है और इसी तरह यह वतन से मोहब्बत की मशरूइय्यत पर भी दलालत करती है। गोया यहाँ इस बात की सराहत होती है कि नबी ﷺ को मक्का और मदीना से बेहद मोहब्बत थी। शैख़ अल्बानी रहमतुल्लाह अलैह ने लिखा है कि मक्का से नबी ﷺ की मोहब्बत इस लिए थी कि मक्का अल्लाह के नज़दीक महबूब है, इस लिए नहीं कि ये आपका वतन था। यहाँ ये बात कही जा सकती है कि नबी ﷺ को मक्का वतन होने और अल्लाह को महबूब होने यानी दोनों हैसियत से महबूब था क्योंकि दलाइल से दोनों क़िस्म की मोहब्बत का पता चलता है। इंसान को जैसे अपनी जान से मोहब्बत है, अपने माल से मोहब्बत है, इसी तरह उस जगह से मोहब्बत होती है जहाँ पैदा होता और सुकूनत इख़्तियार करता है। इस मोहब्बत में शरअन कोई क़बाहत नहीं है क्योंकि इस मोहब्बत का ताल्लुक़ फ़ितरत है। हाँ ये फ़ितरी मोहब्बत, अल्लाह और उसके रसूल या उनके अहकाम की मोहब्बत पर ग़ालिब आ जाए तो इस पर सख़्त वईद है।

=================

[36].क्या सऊदी अरब में बुतपरस्ती है?

सवाल: एक वीडियो में देखा हूँ, उसमें बताया गया है कि सऊदी अरब में फिर से लात व उज़्ज़ा और मनात की पूजा शुरू हो चुकी है जिसका हदीस में भी ज़िक्र है कि क़यामत से पहले फिर से इन बुतों की पूजा होगी, क्या यह बात सच साबित हो गई है और क्या सऊदी में ऐसा कुछ हो रहा है?

जवाब: जिस वीडियो की आप बात कर रहे हैं वह वीडियो फेक और झूठी है, इसकी कोई हक़ीक़त नहीं है और आप जानते हैं कि सऊदी अरब से बहुत सारे लोग दुश्मनी करते हैं। जो भी शिर्क करने वाला, बिद'अत करने वाला और तक़लीद करने वाला मुसलमान है ये सब सऊदी अरब से दुश्मनी करते हैं और आए दिन सऊदी अरब के ख़िलाफ़ झूठी-झूठी ख़बरें फैलाते रहते हैं।

ख़ुद उनके अपने देश में क़दम-क़दम पर मज़ार का तवाफ़ होता है, क़ब्रों को सजदा और तवाफ़ किया जाता है, नंगे पीरों और जाली बाबाओं को सजदा किया जाता है, ख़ुराफ़ातियों को ये शिर्क नज़र नहीं आता है लेकिन सात समुंदर पार सऊदी अरब में उन्हें शिर्क नज़र आ रहा है।

हक़ीक़त यह है कि अल्हम्दुलिल्लाह सऊदी अरब आज भी तौहीद पर क़ायम है, यहां कहीं पर भी शिर्क का कोई शाइबा नहीं पाया जाता बल्कि हरमैन शरीफ़ैन से चौबीस घंटे सिर्फ़ एक अल्लाह की इबादत का मंज़र पूरी दुनिया में दिखाया जाता है, अरब की हक़ीक़त समझने के लिए यही मंज़र काफ़ी है। यह अलग बात है कि बहुत बाद में अरब में भी बुतों की इबादत शुरू होगी लेकिन यह क़ुर्ब-ए-क़यामत का मामला है और यह मामला सिर्फ़ सऊदी अरब के साथ ख़ास नहीं है बल्कि इस बारे में विभिन्न प्रकार की हदीसें आती हैं, कुछ में कहा गया है कि मेरी उम्मत के कई क़बीले बुतपरस्ती शुरू करेंगे और कुछ रिवायतों में यह आया है कि मेरी उम्मत के कई कबीले मुशरिकों से मिल जाएंगे और कुछ रिवायतों में अरब का भी ज़िक्र है ताहम यह क़यामत के क़रीब की निशानी है, अल्हम्दुलिल्लाह अभी सऊदी अरब बुतपरस्ती से पाक है जबकि हमारे देशों में अक्सर घरों में शिर्क पाया जाता है, लोग इसकी फ़िक्र और इसकी परवाह नहीं करते और जो अभी सऊदी अरब में वुक़ू'-पज़ीरी नहीं हुआ है उसको बयान कर रहे हैं, इससे साफ़ ज़ाहिर है कि ये लोग सऊदी अरब के दुश्मन और बद-ख़्वाह हैं। ऐसे ही बद-ख़्वाहो ने इस साल के हज के बारे में सऊदी हुकूमत के ख़िलाफ़ झूठा प्रोपेगेंडा किया जबकि सऊदी हुकूमत हाजियों की ख़िदमत करने में अपनी मिसाल आप है। हमारी दुआ है कि

अल्लाह हम सबको तौहीद पर क़ायम रखे और हमारे देशों में जो मुसलमान होकर भी बुतपरस्ती में मुलव्विस हैं, अल्लाह उन्हें सबको हिदायत दे।



Is there idol worship in Saudi Arabia?

Question: I saw a video claiming that idol worship of Lat, Uzza, and Manat has resumed in Saudi Arabia, which is mentioned in a hadith as something that will happen before the Day of Judgment. Has this been proven true, and is this happening in Saudi Arabia?

Answer: The video you are referring to is fake and false. There is no truth to it, and as you know, many people are hostile towards Saudi Arabia. Anyone who engages in shirk (associating partners with Allah), bid'ah (innovation in religious matters), or taqlid (blind following) often opposes Saudi Arabia and spreads false news against it regularly.

In their own countries, people perform tawaf (circumambulation) around shrines, prostrate to graves, and bow to barefoot and fake saints. These superstitions don't bother them, but they see shirk in Saudi Arabia across the seven seas.

The reality is that, alhamdulillah, Saudi Arabia is still firmly rooted in Tawhid (the oneness of Allah). There is no trace of shirk anywhere, and the scene of worship of one Allah alone from the Haramain (the two holy mosques) is broadcast to

the world 24/7. This alone is enough to understand the true state of affairs in Arabia. It is true that, much later, idol worship will start in Arabia as a sign of the approaching Day of Judgment, and this is not limited to Saudi Arabia alone. Various hadiths mention that several tribes from my Ummah (community) will start idol worship, some will join the polytheists, and some specifically mention Arabia. However, this is a sign of the nearing Day of Judgment. Alhamdulillah, as of now, Saudi Arabia is free from idol worship, while in our countries, shirk is prevalent in many homes. People neither care about nor are concerned with this, but they speak about something that hasn't even happened in Saudi Arabia yet. This clearly shows that these people are enemies of Saudi Arabia.

Similar enemies spread false propaganda against the Saudi government regarding this year's Hajj, whereas the Saudi government is exemplary in serving the pilgrims. We pray that Allah keeps us all firm on Tawhid and guides those in our countries who, despite being Muslims, are involved in idol worship.

============

[37].ख़वातीन ए इस्लाम रमज़ान-उल-मुबारक कैसे गुज़ारे?

अंक़रीब रमज़ान का मुबारक महीना साया-फ़िगन होने वाला है। चारों तरफ़ मुसलमानों में ख़ुशी ही ख़ुशी है। अल्लाह के नेक बंदों को इस महीने का शिद्दत से इंतज़ार होता है और क्यों ना हो कि यह नेकी, बरकत, बख्शिश, इनायत, तौफ़ीक़, इबादत, ज़ुहद, तक़वा, मुरुव्वत, ख़ाकसारी, मुसावात, सदक़ा और ख़ैरात, रज़ा-ए-मौला, जन्नत की बशारत, जहन्नम से ख़ुलासी का महीना है। रब ए करीम से दुआ है कि हमें इस माह ए मुबारक में उन सारी ने'मतों से मालामाल कर दे।

रमज़ान-उल-मुबारक का रोज़ा, तरावीह, सदक़ा, दुआ, ज़िक्र, तिलावत, मना'जात, उमराह और दूसरे नेक आमाल जहाँ मर्दों के लिए हैं वहीं औरतों के लिए भी हैं। उन आमाल का अज्र-ओ-सवाब जिस तरह मर्दों को नसीब करता है वैसे ही अल्लाह औरतों को भी इनायत करता है। औरतों में आम तसव्वुर यह होता है कि रमज़ान तो सिर्फ़ मर्दों का है, हमारा काम सिर्फ़ सेहरी पकाना और इफ़्तार तैयार करना है। औरतें रोज़ा रखती हैं मगर दूसरे आमाल ए ख़ैर में पीछे रहती हैं। उसकी बुनियादी वजह रमज़ान-उल-मुबारक के अहकाम-ओ-मसाइल से अदम

वाक़फ़ियत है। जिस तरह मर्दों पर रोज़ा रखना फ़र्ज़ है वैसे औरतों पर भी फ़र्ज़ है और जिस तरह मर्दों को रमज़ान-उल-मुबारक में ज़्यादा आमाल ए ख़ैर अंजाम देना चाहिए वैसे ही औरतों को भी अंजाम देना चाहिए।

यहाँ रमज़ान से मुताल्लिक़ उन उमूर का ज़िक्र किया जाता है जो मुसलमान औरत के लिए अंजाम देना मुस्तहब और पसंदीदा है।

☆ तमाम क़िस्म की ता'अत और भलाई पर मेहनत करना: मसलन तिलावत-ए-कुरआन करीम और उसमें तदब्बुर और तफ़क्कुर, बकसरत सदक़ा और ख़ैरात, ज़िक्र-ए-इलाही और फ़राइज़ और वाजिबात के अलावा नफ़ली इबादत पर मेहनत करना।

☆ इफ़्तार में जल्दी करना:

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

لا يزال الناس بخير ما عجلوا الفطر .(بخاري)

उस वक़्त तक लोग भलाई के ऊपर ग़ामज़न रहेंगे जब तक कि इफ़्तार में जल्दी करते रहेंगे।

और उससे यहूद और नसारा की मुख़ालिफ़त मक़सूद है।

"لان الیهود والنصاری یوخرون."

तर्जुमा:- क्योंकि यहूद और नसारा इफ़्तार में ताख़ीर करते हैं।

☆ ताज़ा खजूर से इफ़्तार करना:

عن أنس كان النبي صلى الله عليه وسلم يفطر على رطبات قبل أن يصلي فإن لم يكن فيصلى تمرات فإن لم تكن تمرات حسا حسوات من ماء .(أحمد، ابو داؤد، وحسنه البانى)

तर्जुमा:- अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) नमाज़-ए-मग़रिब से पहले ताज़ा खजूरों से इफ़्तार किया करते थे। अगर ताज़ा खजूरें ना मिलतीं तो सूखी खजूरों से इफ़्तार कर लिया करते थे और अगर सूखी खजूरें मयस्सर ना होतीं तो पानी के चंद घूंटों पर ही रोज़ा इफ़्तार कर लिया करते थे।

☆ इफ्तार के वक़्त दुआ करना: वैसे दुआ हर वक़्त मशरू है और दुआ इबादत है मगर कुछ वक़्त दुआ के लिए बहुत अहम हैं। उनमें एक इफ़्तार का वक़्त भी शुमार किया जाता है। उसकी मुत'अद्दिद दलीलें हैं, उनमें से एक यह है।

ثلاث من لا دعوتهم: الإمام العادل، والصائم حين يفطر ودعوة المظلوم .(صحيح الترمذي:)

तर्जुमा:- तीन क़िस्म के लोगों की दुआ रद्द नहीं की जाती है: एक मुंसिफ़ इमाम की, दूसरे रोज़ेदार की जब वह इफ़्तार करे, तीसरे मज़लूम की।

☆ सेहरी में ताख़ीर करना: बिना सेहरी के भी रोज़ा सही है मगर नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने ख़ुद भी सेहरी खाई है और दूसरों को भी सेहरी की तर्ग़ीब दी है और फ़रमाया है सेहरी खाओ क्योंकि उसमें बरकत है। मुस्लिम शरीफ की रिवायत में है।

فصل ما بين صيامنا وصيام أهل الكتاب اكله السحر .(صحيح مسلم:٠)

तर्जुमा: हमारे और अहले किताब के रोज़े के बीच सहरी का फ़र्क़ है।

☆ रोज़े की हालत में गंदे अख़लाक़ और बुरी बातों से बचना:

अगर कोई गाली दे तो कह दो कि मैं रोज़े से हूँ।

إذا اصبح أحدكم يوما صائما فلا يرفث ولا يجهل فإن امرو شاتمه اؤ قاتله. فليقل انى صائم. انى صائم .(صحيح مسلم:)

तर्जुमा: जब तुम में से कोई रोज़े की हालत में हो तो गंदी बातों और नादानियों से परहेज़ करे। अगर कोई तुम्हारे साथ गाली-गलौच या झगड़ा करे तो कह दो कि मैं रोज़े से हूँ, मैं रोज़े से हूँ।

من لم يدع قول الزور والعمل به. فليس لله حاجة فى أن يدع طعامه و شرابه.(صحيح البخارى:٠)

तर्जुमा: अगर कोई शख़्स झूठ बोलना और धोखाधड़ी करना (रोज़े रख कर भी) न छोड़े, तो अल्लाह को उसकी कोई ज़रूरत नहीं है कि वह अपना खाना-पीना छोड़ दे।

औरतों में गाली-गलौच और लानत-मलानत बहुत ज़्यादा होती है, रोज़े की हालत में उसका ख़ास ख़्याल रखना चाहिए कि ज़बान से कोई गंदी बातें न निकलें। रोज़ा सिर्फ़ भूख और प्यास सहने का नाम नहीं है। आदाब-ए-सियाम में है कि हम हाथ, पैर, दिल और दिमाग़ और ज़बान सभी अंगों को मुन'किरात से दूर रखें।

☆ लोगों को इफ़्तार कराना: नबी पाक सल्लल्लाहु अलेहि वसल्लम ने फ़रमाया:

من فطر صائما كان له مثل أجره غير أنه لا نقص من أجر الصائما شيئا.(صحيح الترمذي)

तर्जुमा: जिस शख़्स ने किसी रोज़ेदार को इफ़्तार कराया, तो उस शख़्स को भी उतना ही सवाब मिलेगा जितना सवाब रोज़ेदार के लिए होगा और रोज़ेदार के अपने सवाब में से कुछ भी कमी नहीं की जाएगी।

औरत चाहे तो अपने ज़ाती पैसे से दूसरी महिलाओं को इफ़्तार करा सकती है, और अगर बीवी अपने पति की ओर से इफ़्तार की दावत पर मदद करती है, तो उसे भी अज्र मिलेगा।

☆ उमरा करना: रमज़ान में मर्द की तरह औरत भी उमरा कर सकती है। इस महीने मुबारक में उमरा का सवाब हज के बराबर है, और एक दूसरी रिवायत में नबी सल्लल्लाहु अलेहि वसल्लम के साथ हज करने के बराबर कहा गया है।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलेहि वसल्लम ने एक अंसारिया औरत से फ़रमाया था:

فإذا جاء رمضان فاعتمري فإن عمرة فيه تعدل حجة. (صحيح مسلم :)

तर्जुमा: जब रमज़ान आए तो तुम उमरा कर लेना क्योंकि इसमें उमरा करना हज के बराबर है।

यहां एक बात वाज़ेह रहे कि औरत के लिए उमरा के सफ़र में महरम का होना ज़रूरी है। बिना महरम के सफ़र करने और उमरा करने से

गुनहगार होगी। दूसरी बात यह है कि औरत हो या मर्द, दूसरे मुल्क से सफ़र करके सऊदी अरब आना और उमरा करना मशक़्क़त का बाइस (कारण) है और रमज़ान जैसे मुबारक महीने में एक अज्र के हुसूल के लिए अज्र वाले काम छूटने का इमकान है। इसलिए जो सऊदी अरब में मौजूद हैं, उनके लिए तो आसानी है; बाहरी लोगों के लिए कठिनाई के बाइस अपने-अपने मुल्क में रमज़ान गुज़ारना ज़्यादा बेहतर है। हां, सऊदी अरब में पूरा रमज़ान गुज़ारने की अगर इरादा (इच्छा) है तो यह बात अलग है।

☆ मिस्वाक करना: आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का दस्तूर हमेशा मिस्वाक करना था और रमज़ान शरीफ़ में बहुत ज़्यादा किया करते थे। अम्मार बिन राबी'अ फ़रमाते हैं:

رأيت النبي صلى الله عليه وسلم يستاك وهو صائم ما لا احس اؤ اعدا. (رواه البخاري معلقا.)

तर्जुमा: मैंने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को रोज़े की हालत में शुमार करने से ज़्यादा मिस्वाक करते देखा।

इसे इमाम बुख़ारी ने ता'लीक़न रिवायत किया है।

☆ बच्चों की तरबियत के तौर पर रोज़ा रखना: अगर बच्चा रोज़ा रखने की ताक़त रखता हो तो उसे आदतन रोज़ा रखना चाहिए। राबी'अ बिन्त मुअविज रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाती हैं कि हम अपने बच्चों से रोज़ा रखवाते थे और उनके लिए खिलौने रखते थे। जब बच्चा खाने के लिए रोता तो हम उन्हें वो खिलौने पेश कर देते, यहां तक कि इफ़्तार का वक्त हो जाता। (बुख़ारी शरीफ़)

☆ एतिकाफ़: जिस तरह मर्द के लिए एतिकाफ़ मस्नून है, उसी तरह औरत के लिए भी एतिकाफ़ मशरू है। और यह भी वाज़ेह रहे कि एतिकाफ़ की जगह सिर्फ़ मस्जिद है, जैसा कि ऊपर क़ुरआन की आयत से वाज़ेह है और नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उस पर अमल कर के दिखाया है। अगर औरत एतिकाफ़ करे तो उसे भी मस्जिद में ही एतिकाफ़ करना होगा, चाहे जामा मस्जिद हो या ग़ैर-जामा। सिर्फ़ जामा मस्जिद में एतिकाफ़ वाली रिवायत

الاعتكاف الا في مسجد جامع

पर कलाम है। अगर जामा मस्जिद में एतिकाफ़ करे तो ज़्यादा बेहतर है ताकि नमाज़-ए-जुम'आ के लिए निकलने की ज़रूरत ना पड़े।

एतिकाफ़ रमज़ान में किए जाने वाले उन अमल में से है जिसकी तअकीद आई है और यह उन सुन्नतें मुवक्किदा में है जिनमें नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हमेशगी बरती है और आख़िरी अश्रे में उसकी तअकीद की है। इसकी दलील हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हर साल रमज़ान में दिन का एतिकाफ़ किया करते थे। इंतकाल के साल आपने 20 दिन का एतिकाफ़ किया। (बुख़ारी शरीफ़)

☆ नमाज़-ए-तरावीह: सऊदी अरब में तो औरतें मस्जिद में आकर जमात से तारावीह की नमाज़ अदा करती हैं। तारावीह जिसे क़ियाम-उल-लैल और तहज्जुद भी कहते हैं, रमज़ान-उल-मुबारक में इसका सवाब बहुत बढ़ जाता है। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

من قام رمضان ایمانا واحتسابا غفر له ما تقدم من ذنبه.(صحیح مسلم:)

तर्जुमा: जिसने रमज़ान की रातों में ईमान और सवाब की नियत के साथ क़ियाम करे, उसके पिछले सारे गुनाह माफ़ कर दिए जाएंगे।

इसलिए औरतों को भी तारावीह की नमाज़ का एहतिमाम करना चाहिए। अगर मस्जिद में औरतों के लिए अलग इंतज़ाम न हो तो घर पर ही जमात से या अकेले तरावीह की 8 रकात नमाज़ पढ़े फिर 3 रकात वित्र पढ़े।

☆ शब-ए-क़द्र में इज्तिहाद: लैलत-उल-क़द्र की अहमियत और फ़ज़ीलत पर एक मुकम्मल सूरत नाज़िल हुई है जिससे उसकी फ़ज़ीलत का बख़ूबी अंदाज़ा लगाया जा सकता है। इस रात क़ियाम का सवाब पिछले सारे गुनाहों का कफ़्फ़ारा है।

من قام ليلة القدر ايمانا واحتسابا غفر له ما تقدم من ذنبه.(صحيح البخاري: ٠)

तर्जुमा:- जो लैलत-उल-क़द्र में ईमान और अहितसाब के साथ क़ियाम करे, उसके पिछले तमाम गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।

जहाँ तक इस रात की त'अय्युन का मसला है, तो इस सिलसिले में उलमा के मुख़्तलिफ़ अक़वाल हैं, मगर राजेह क़ौल यह है कि लैलत-उल-क़द्र रमज़ान के आख़िरी अश्रे की ताक़ रातों (21, 23, 25, 27, 29) में से कोई एक है। इसकी दलील नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

تحروا ليلة القدر في الوتر من العشر الاواخر من رمضان.(صحيح البخاري:٠)

तर्जुमा: लैलत-उल-क़द्र को रमज़ान के आख़िरी अश्रे की ताक़ रातों में तलाश करो।

इसलिए औरतों को भी ताक़ रातों में शबे बेदारी करनी चाहिए और खूब-खूब ताअत और भलाई का काम करना चाहिए। जब जागना ही मकसद नहीं बल्कि जागकर भलाई का काम करना मक़सद है।

रमज़ान-उल-मुबारक से मुताल्लिक़ औरतों के बारे में कुछ और मसाइल (मुद्दे):

(1) बीमार औरत का हुक्म: बीमार औरत की दो क़िस्में हैं। एक वह बीमार औरत जो रोज़ा रखने की वजह से कठिनाई या शारीरिक तकलीफ़ महसूस करे, या ऐसी गंभीर बीमारी की वजह से दवा लेने पर मजबूर हो, तो वह अपना रोज़ा छोड़ सकती है। नुक़सान की वजह से जितने रोज़े छोड़ेगी, उतने बाद में क़ज़ा करेगी। अल्लाह का फ़रमान है:

فمن كان منكم مريضا أو على سفر فعدة من ايام اخر .(البقرة:)

तर्जुमा: और जो कोई बीमार हो या फिर मुसाफ़िर हो तो दूसरे दिनों में गिनती पूरी करे।

दूसरी वह बीमार जिनकी शिफ़ा की उम्मीद न हो और ऐसे ही बूढ़े मर्द और औरते जो रोज़ा रखने की ताक़त नहीं रखते, उनके लिए रोज़ा छोड़ना जायज़ है। और हर रोज़ा के बदले रोज़ाना एक ग़रीब को आधा सा (लगभग डेढ़ किलो) गेहूं, चावल, या खाने वाली दूसरी चीज़ दे दे। अल्लाह का फ़रमान है:

وعلى الذين يطيقون فدية طعام مسكين.(البقرة:)

तर्जुमा: और उसकी ताक़त रखने वाले फ़िदया में एक ग़रीब को खाना दे।

यहाँ ध्यान रहे कि मामूली परेशानियाँ जैसे कि ज़ुकाम, सिरदर्द वग़ैरह की वजह से रोज़ा तोड़ना जायज़ नहीं है।

(2) मुसाफ़िर औरत का हुक्म: रमज़ान में मुसाफ़िर के लिए रोज़ा छोड़ना जायज़ है, जैसा कि अल्लाह का फ़रमान है:

فمن كان منكم مريضا أؤ على سفر فعدة من ايام اخر .(البقرة:)

तर्जुमा: और जो कोई मरीज़ (बीमार) हो या फिर मुसाफ़िर हो तो दूसरे दिनों में गिनती पूरी करे। अगर सफ़र (यात्रा) में रोज़ा रखने में कठिनाई न हो तो मुसाफ़िर सफ़र की हालत में भी रोज़ा रख सकती है। इसकी बहुत सी दलाइल (प्रमाण) हैं। मिसाल के लिए- एक सहाबी ने नबी करीम ﷺ से सफ़र में रोज़ा के बारे में पूछा, तो आपने ﷺ फ़रमाया:

إن شئت صمت وإن شئت افطرت. (صحيح النسائى:)

तर्जुमा: अगर तुम चाहो तो रोज़ा रखो और अगर चाहो तो छोड़ दो। मुसाफ़िर छोड़े हुए रोज़ों की क़ज़ा बाद में करेगा।

(3) हैज़ और निफ़ास वाली औरत का हुक्म: हैज़ वाली और बच्चा जनने वाली औरत के लिए ख़ून आने तक रोज़ा छोड़ने का हुक्म है और जैसे ही ख़ून बंद हो जाए तो रोज़ा रखना शुरू कर दे। कभी-कभी निफ़ास वाली औरत 40 दिनों से पहले ही पाक हो जाती है तो पाक होने पर रोज़ा रखे। औरत के लिए ख़ून रोकने की दवा इस्तेमाल करने से बेहतर है कि तबीयत के अनुसार रोज़ा रखें। हैज़ और निफ़ास के अलावा ख़ून आए तो उस से रोज़ा नहीं तोड़ना है, बल्कि रोज़ा जारी रखना है।

(4) दूध पिलाने वाली और हमल वाली (गर्भवती) औरत का हुक्म: दूध पिलाने वाली औरत और गर्भवती औरत को जब अपनी या अपने बच्चे की वजह से रोज़ा रखने में ख़तरा हो, तो रोज़ा छोड़ सकती है। बिना कठिनाई के रोज़ा छोड़ना जायज़ नहीं है। नबी करीम ﷺ के इस फ़रमान का यही मतलब है:

إن الله عزوجل وضع للمسافر الصوم وشطر الصلاة وعن الحبلى والمرضع .(صحيح النسائى:)

तर्जुमा: अल्लाह ने मुसाफ़िर के लिए आधी नमाज़ माफ़ कर दी और मुसाफ़िर और गर्भवती और दूध पिलाने वाली को रोज़ा माफ़ फ़रमा दिया। जब उज़्र की वजह से औरत रोज़ा छोड़ दे तो बाद में उसकी क़ज़ा करे। गर्भवती और दूध पिलाने वाली के बारे में फ़िदया का ज़िक्र मिलता है जो कि सही नहीं है।

(5) छोटी बच्ची के रोज़ा का हुक्म: ऊपर ज़िक्र किया गया है कि तर्बियत के तौर पर बच्चों से रोज़ा रखना चाहिए अगर वे ताक़त रखते हों, चाहे लड़का हो या लड़की। लेकिन जब बालिग़ हो जाए तो फिर उस पर रोज़ा फ़र्ज़ हो जाता है। नबी करीम ﷺ का फ़रमान है:

رُفِعَ الْقَلَمُ عن ثلاثة: عن النائم حتى يَسْتَيْقِظَ، وعن الصبي حتى يَحْتَلِمَ، وعن المجنون حتى

يَعْقِلَ". (صحيح ابي داؤد:٠)

तर्जुमा: मेरी उम्मत में से 3 क़िस्म (प्रकार) के लोगों से क़लम हटा लिया गया है, पागल और बे-आक़िल से जब तक कि वह होश में न आ जाए, सोए हुए से जब तक कि वह जाग न जाए, और बच्चे से जब तक कि वह बालिग़ न हो जाए।

कुछ उलमा ने रोज़ा के लिए बच्चों की उचित उम्र 10 साल बताई है क्योंकि हदीस में 10 साल की उम्र पर नमाज़ छोड़ने पर मारने का हुक्म है। हालांकि, अगर 10 साल की उम्र से पहले बच्चा रोज़ा रख सकता है तो सरपरस्त की ज़िम्मेदारी है कि उसे रोज़ा रखवाए।

(6) क़ज़ा रोज़ा तोड़ने वाली औरत का हुक्म: रमज़ान में बिना वजह के जानबूझकर रोज़ा छोड़ने वाली औरत gunah-ए-कबीरा की मुर्तकिब है। उसे पहले अपने गुनाह से सच्ची तौबा करनी चाहिए और जो रोज़ा छोड़ा है, उसकी बाद में क़ज़ा भी करनी चाहिए। और अगर कोई रोज़ा की हालत में जिमा (मुबाशरत) कर लेती है, तो उसे क़ज़ा के साथ कफ़्फारा भी अदा करना होगा। कफ़्फारा में या तो एक लौंडी (दासी) को आज़ाद करना होगा या लगातार दो महीने का रोज़ा रखना होगा

या 60 मिस्कीनों को खाना खिलाना होगा। याद रहे कि बिना उज़्र (वजह) रोज़ा छोड़ने का भयानक अंजाम है।

(7) बे-नमाज़ी औरत के रोज़े का हुक्म: जैसे रोज़ा इस्लाम के अरकान में से एक रुक्न है, वैसे ही नमाज़ भी एक रुक्न है। नमाज़ के बिना रोज़ा का कोई फ़ायदा नहीं है। जो नमाज़ का इन्कार करता है, वह इस्लाम के दायरे से बाहर हो जाता है। नबी करीम ﷺ का फ़रमान है:

العهد الذي بيننا وبينهم الصلاة فمن ترك فقد كفر .(صحيح الترمذي):

तर्जुमा: हमारे और उनके दरमियाँन नमाज़ का वादा है। जिसने नमाज़ छोड़ा, उसने कुफ्र किया।

इस वजह से नमाज़ छोड़ने वाले का रोज़ा क़बूल नहीं होगा, बल्कि नमाज़ छोड़ने के कारण उसका कोई भी अमल क़बूल नहीं किया जाएगा, जब तक कि वह तौबा न कर ले।

अल्लाह रमज़ान की बरकत और हसनात से हम सब का दामन भर दे और इस माहे मुबारक को हमारी निजात का ज़रिया बना दे। आमीन

==============

[38].ख़वातीन और रमज़ान का आख़िरी अश्रा

रमज़ान-उल-मुबारक का आख़िरी अश्रे फ़ज़ीलत के लिहाज़ से ज़्यादा अहमियत रखता है, इसमें एतिकाफ़ है और इसी में शब-ए-क़द्र है जो हज़ार रातों से बेहतर है। कुरआन का नुज़ूल भी इसी मुबारक रात में हुआ। रसूल करीम ﷺ इस अश्रे में ता'आत (इबादात) पर ज़्यादा मेहनत करते और अपने अहल-ओ-अयाल (घरवालो) को भी इसकी दावत देते। हम भी अपने प्यारे नबी की प्यारी सुन्नत पर अमल करते हुए आख़िरी अश्रे में भलाई के कामों पर ज़्यादा से ज़्यादा मेहनत करें और शबे क़द्र पाने के लिए ख़ूब ख़ूब इज्तिहाद (कोशिश) करें, इसके लिए अल्लाह से तौफ़ीक़ तलब करें और क़सरत से शबे क़द्र की दुआ पढ़ा करें।

मुशाहिदे में बात आती है कि शुरू रमज़ान में लोगों में इबादत और भलाई का ज़ौक़ और शौक़ बहुत न ज़्यादा होता है और ये शौक़ अश्रा गुज़रने के साथ कम होता चला जाता है जबकि आख़िरी अश्रा सबसे ज़्यादा अहमियत का हामिल होता है।

आख़िरी अश्रे में औरतों (महिलाओं) की ग़फ़लत बेहद अफ़सोसनाक (दुखदायक) है। जिस अश्रे में औरतों को सब कुछ छोड़कर इबादत की

तरफ़ मुतवज्जह रहना चाहिए और हर दिन हर रात नमाज़, तिलावत, ज़िक्र, दुआ, तौबा इस्तग़फ़ार और इबादत के सभी अमलों को अच्छे से बजा लाना चाहिए, ख़ासकर ताक़ रातों (21,23,25,27,29) में, मगर उन दिनों और उन रातों को ख़रीद-फरोख़ के लिए बाज़ारों में और घरेलू उमूर की तर्तीब-तज़ईन पर ही सरफ़ करती हैं।

नये कपड़ों का इंतिख़ाब, घरों की सजावट, उमदा पकवान की तैयारी और मसनूई ज़ैब-ओ-ज़ीनत की मसरूफ़ियत मे ग़र्क़ रहती हैं। कुछ अल्लाह की बंदियाँ अच्छी भी हैं मगर नौजवान नस्ल तो अल्लाह की पनाह। हद तो इस वक्त हो जाती है जब अजनबी मर्दों से अपने हाथों पर मेहंदियाँ सजाती हैं। मेरी बहनों! अल्लाह के लिए अपने मक़ाम को पहचानो, अपनी इज़्ज़त करो, दुनियावी मामलों पर दीन को तरजीह दो और आख़िरी अश्रे को इबादत के कामों में लगाओ ख़ासकर ताक़ रातों और उनमें शब-ए-बेदारी कर के इबादत पर अच्छे से मेहनत करो।

=================

[39].ख़वातीन में पाए जाने वाले शिर्किया आमाल

मुसलमानों के एक तबक़े ने मुसलमानों के अंदर शिर्क के वजूद का इनकार किया है इस लिए मैं पहले इस बात की गवाही पेश कर देता हूँ कि मुसलमानों के अंदर भी शिर्क पाया जाता है ताकि टॉपिक की वज़ाहत हो सके।

क़ुरआन की बहुत सी आयत और बहुत सारी अहादीस इस बात पर दलालत करती हैं कि उम्मत-ए-मुहम्मदिया भी शिर्क करेगी।

मिसाल के तौर पर एक आयत और एक हदीस देखते हैं:

क़ुरआन:

وَمَا يُؤْمِنُ أَكْثَرُهُم بِاللَّهِ إِلَّا وَهُم مُّشْرِكُونَ۔ (سورة يوسف:106)

तर्जुमा: और उनमें से अक्सर लोग अल्लाह पर ईमान लाने के बावजूद भी शिर्क ही करते हैं।

हदीस:

لولا تقومُ الساعةُ حتى تَلحقَ قبائلُ من أُمتي بالمشركينَ ، وحتى تعبدَ قبائلُ من أمتي الأوثانِ ۔(صحیح ابوداؤد:4252)

तर्जुमा: क़यामत क़ाइम नहीं होगी जब तक मेरी उम्मत के क़बीलें मुशरिकीन से न मिल जाएं और यहाँ तक कि मेरी उम्मत के क़बीलें बुतों की इबादत न करने लगें।

इन दोनों नुसूस से ज़ाहिर है कि इस उम्मत में भी शिर्क का वजूद रहेगा, इसीलिए नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अबू बकर सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु को छोटे बड़े तमाम क़िस्म के शिर्क से महफ़ूज़ रहने के लिए दुआ सिखाई है:

"اللهم إني أعوذ بك أن أشرك بك و أنا أعلم ، و استغفرك لما لا أعلم"۔ (صحیح الادب المفرد:551)

इस हदीस को अल्लामा अल्बानी रहिमहुल्लाह ने सहीह क़रार दिया है।

जब हम मुसलमान समाज का जाइज़ा लेते हैं तो पता चलता है कि जहाँ मर्दों में शिर्किया आमाल पाए जाते हैं वहीं ख़वातीन के अंदर भी शिर्क का वजूद मिलता है बल्कि बाज़ नाहिया से औरत में मर्द से

ज़्यादा शिर्किया अक़वाल और अफ़आल पाए जाते हैं। इस बात को सच मानना हो तो किसी मज़ार पर चले जाएं। शिर्क का यह मंज़र मुसलमानों के ख़ास तबक़े बरेलवियों में पाया जाता है।

मर्द की तरह औरत भी समाज का एक हिस्सा है, अगर समाज में मर्द शिर्क का इर्तिक़ाब करेगा तो उसका असर औरत समेत समाज के तमाम तबक़ो पर पड़ेगा। यही वजह है कि समाज को शिर्किया कामों ने खोखला कर दिया है।

औरतों में शिर्क का वजूद:

औरतें कमज़ोर दिल और कमज़ोर अक़्ल होने की वजह से उनमें ज़ा'ईफ़-उल-ए'तिक़ादी (अंधविश्वास) बहुत पाई जाती है। यही वजह है कि औरत की बात-बात से शिर्क की बू आती रहती है। बचपन से लेकर बुढ़ापे तक ज़िंदगी के तमाम मराहिल में ऐतिक़ाद का ज़ोफ़ बहुत कम ही ख़ातून से दूर हो पाता है।

घर में अकेली हो तो जिन भूत से डर कर चिल्लाना, किसी को बीमार देखे तो बुरा फ़ाल लेना, किसी का बच्चा मर जाए तो नहूसत लेना, कोई ऐक्सीडेंट से या जल कर या लटक कर फ़ौत हो जाए तो उसकी

रूह भटकती हुई तसव्वुर करना और उस रूह से डरना, इश्क़ और मुहब्बत, बीमारी और वबा, ख़ौफ़ और तरद्दुद, रंज और ग़म, यास (नाउम्मीद) और क़ुनूत तमाम हालात में इमाम ज़ामिन बांधना औरतों में आम है।

मुस्लिम औरतों को रब पर भरोसा करना चाहिए और किसी चीज़ से बदफ़ाली नहीं लेना चाहिए, और न ही अल्लाह से ज़्यादा किसी से डरना चाहिए, और न ही अपनी ज़बान से कोई शिर्किया कलाम निकालना चाहिए।

औरतों में शिर्क की तमाम क़िस्में पाई जाती हैं:

(1) शिर्क-ए-अकबर: यह सबसे बड़ा शिर्क है, इसके इर्तिक़ाब से आदमी दीने इस्लाम से ख़ारिज हो जाता है। ख़वातीन में भी यह शिर्क पाया जाता है। जब बच्चा न हो, बीमारी की हालत हो, घरेलू परेशानियां हो वग़ैरह-वग़ैरह हालात में ख़ातून रब को छोड़कर मुर्दों से मदद मांगती है और उनसे हाजत रवाई करती है जो कि शिर्क-ए-अकबर है। अगर उसी अमल पर औरत का ख़ात्मा हो जाए तो हमेशा जहन्नम में रहेगी।

अल्लाह का फ़रमान है:

إِنَّهُ مَن يُشْرِكْ بِاللَّهِ فَقَدْ حَرَّمَ اللَّهُ عَلَيْهِ الْجَنَّةَ وَمَأْوَاهُ النَّارُ ۖ وَمَا لِلظَّالِمِينَ مِنْ أَنصَارٍ (المائدة: 72)

तर्जुमा: जो शख़्स अल्लाह के साथ शिर्क करता है, अल्लाह ने उस पर जन्नत हराम कर दी है, उसका ठिकाना जहन्नम है और ज़ालिमों का कोई मददगार नहीं।

(2) शिर्क-ए-असग़र: चूंकि औरत झूठ बहुत बोलती है और अपनी झूठी क़सम पर क़सम खाती है। औरतों का बात-बात पर ग़ैरुल्लाह की क़सम खाना शिर्क-ए-असग़र के क़बील से है। इस क़सम से वह इस्लाम से ख़ारिज नहीं होती मगर तौहीद में कमी पैदा होती है।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

مَن حلفَ بغيرِ اللَّهِ فقد كفرَ أو أشرَكَ۔ (صحيح الترمذى: 1535)

तर्जुमा: जिसने भी ग़ैरुल्लाह की क़सम खाई, उसने या तो शिर्क किया या कुफ़्र किया।

(3) शिर्क-ए-ख़फ़ी: हदीस में रियाकारी को शिर्क-ए-ख़फ़ी बतलाया गया है।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

أَلَا أُخبركم بما هو أخوفُ عليكم عندي من المسيحِ الدجالِ قال قلنا بلى فقال الشركُ الخفيُّ أن يقومَ الرجلُ يُصلي فيُزيِّنُ صلاتَه لما يرى من نظرِ رجلٍ (صحيح ابن ماجة : 3408)

तर्जुमा: क्या मैं तुम्हें उस चीज़ की ख़बर न दूँ जो मेरे नज़दीक मसीह दज्जाल से भी ज्यादा तुम्हारे ऊपर ख़ौफ़ खाने वाली बात है? सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज़ किया, ऐ अल्लाह के रसूल! ज़रूर बतलाइए। आपने फ़रमाया: वो शिर्क-ए-ख़फ़ी है। एक आदमी नमाज़ को मुअय्यन करके इस लिए पढ़ता है ताकि लोग उसकी तरफ़ देखें।

औरतों के आमाल में भी दिखावा है, वो ख़ुद को अच्छा बनाने के लिए रियाकारी से काम लेती है। ऐसी औरत को अपने आमाल में इख़लास पैदा करना चाहिए और बंदों की तारीफ़ हासिल करने या उनकी नज़र में अच्छा बनने के लिए नुमाइश से बचना चाहिए।

अल्लाह से दुआ है कि तमाम मुसलमान मर्द और औरत को हर क़िस्म के शिर्क से बचा और तौहीद के रास्ते पर चलाए।

आमीन।

===============

[40].गुल मंजन और रमज़ान-उल-मुबारक का रोज़ा।

गुल का इस्तेमाल बहुत से लोग मंजन के तौर पर करते हैं और चूंकि इस मे नशा पाया जाता है इस वजह से लोगो मैं इस बात के मुताल्लिक़ तशवीश पाई जाती है वह कहीं यह मुफ़सिद ए सौम तो नहीं चुनांचे मुत'अद्दिद (बहुत से) मुत'आरिफ़ीन (परिचित) और ग़ैर मुत'आरिफ़ीन ने मुझ से इस बाबत राबता किया उसी का जवाब मैने मुख़्तसर तौर पर यहां देने की कोशिश की है, पहले इस के गुल-ए-मंजन का रोज़े पर असर और उसका हुक्म जानते हैं पहले इस बात की तहक़ीक़ ज़रूरी है कि गुल-ए-मंजन किया है?

गुल मंजन क्या हे?

गुल तंबाकू से तैयार किया हुआ एक क़िस्म का नशीला मवाद हे और उसमें तकलीफ़ देने वाले कीमियाई मवाद निकोटीन की भी मिलावट होती है इस वजह से इसका वही नुक़सान हे जो सूरती (ख़ुशक पत्तो की सूरत मे खाने का तंबाकू), गुटका और सिगरेट वग़ैरह का है। तिब्बी रिपोर्ट के मुताबिक़ मूसी गुल में 0.14% निकोटीन मिला होता हे जो बीमार ही नहीं मौत का सबब बनने वाला हे गोया

हम यह समझेंगे और वाज़ेह तौर पर कह भी सकते हैं के अगर सिगरेट धुवे वाला तम्बाकू है तो गुले मंजन बिना धुंवे वाला तम्बाकू।

मैने इंटरनेट पर गुल की अनवा'-ओ-अक़साम (क़िस्म) का पता लगाया है तो मुख़्तलिफ़ क़िस्म की कंपनी मिली मसलन चांदतारा गुल, मोसी का गुल, नूर का गुल, एस एस गुल, ताइगी गुल सुलेमान गुल, शकूरल्लाह गुल, वग़ैरह। इन तमाम कंपनी के डब्बे पर हिंदी में लिखा हे के तंबाकू से कैंसर होता है साथ ही यहां हिंदी जुमले का अंग्रेज़ी तर्जुमा भी दर्ज है: (Tobacco causes Cancer) बल्कि वो तो पैसे दे कर झूठी तारीफ़ करवाती हे लेकिन गुले मंजन डिब्बे पर यह लिखा हुआ होना के तंबाकू से कैंसर होता है मजबूरी में लिखा गया है और हक़ीक़त पर मबनी हे। इस जुमले से एक हक़ीक़त तो यह मालूम होती है कि गुले मंजन भी तंबाकू की ही एक क़िस्म है दूसरी बात यह मालूम हुई के गुले मंजन नशा पैदा करने वाला हे,तीसरा बात यह मालूम हुई के गुले मंजन का इस्तेमाल जानी नुक़सान का बाइस है।

हैरानी की बात हे के इस गुल का इस्तेमाल छोटी उमर से ले कर बड़ी उमर तक के लोग करते हैं औरते मैं भी इस का इस्तेमाल आम है इन सब से ज़्यादा हेरानी की बात यह हे के गुले मंजन तैयार करने

वाले अक्सर मुसलमान नज़र आते हैं इसी लिए इन मंजनो का नाम भी मुसलमानी होता है। इन तमाम हैरानियों में एक अफ़सोसनाक पहलू उलमा का गुले मंजन करना हे। जब मैं इस मसले में मुख़्तलिफ़ मसालिक के फ़िक़्ही नज़रियात का मुताल'अ कर रहा था तो एक और चोंकने वाली बात मालूम हुई जिस का ताल्लुक़ बरेलवी मकतब ए फ़िक्र के फ़िक़्ही सेमिनार से है। वह यह है कि अगर किसी को गुल का इस्तेमाल किये बिना पख़ाना नहीं होता तो उस उज़्र की वजह से उसके लिए हुक्म में इस क़दर तख़्फ़ीफ़ होगी के वो गुल पहले हथेली वग़ैरह पर निकल कर पानी से भीगो दे फिर उसे अहतियात के साथ दांतो पर मले और जल्दी ही कुल्ली कर के अच्छी तरह अपना मुंह साफ़ कर ले (फ़तवा मरकज़ तरबियत इफ़्ता जिल्द 1 पेज नंबर:470, मतबुआ फ़क़ीहा मिल्लत एकेडेमी ओझा गंज बस्ती) इस फ़तवे से एक बात सामने आई के गुल का इस्तेमाल करने वाले इस्मे मौजुद नशा से बढ़ कर जुनून की हद तक इस्तेमाल करते हैं के इस के बिना क़ज़ाए हाजात नहीं होती दूसरी बात यह सामने आई के मुसलमानों में कुछ तबक़ात ऐसे भी है जो बहाने बनाकर हराम चीज़ को भी हलाल कर लेते हैं कि किसी को शराब पिए बाथरूम ना लगे या नींद ना आए तो उसके लिए शराब हलाल हो जाएगी? हरगिज़ नहीं गुल-ए-मंजन के इस्तेमाल की हुरमत:

गुल का ताल्लुक़ मुनश्शियात (मादक पदार्थों) से है और मुनश्शियात हर क़िस्म की नशाआवर चीज़ों के लिए इस्तेमाल होता है जिसके लिए अरबी ज़बान में "ख़म्र" का लफ़्ज़ आमतौर पर इस्तेमाल किया जाता है। उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने ख़म्र की वज़ाहत इन अल्फ़ाज़ में की है:

والخمرُ ما خامر العقلَ(صحيح البخاري:5581،صحيح مسلم:3032)

यानि ख़म्र का इतलाक़ हर नशाआवर चीज़ पर होता है। इसकी ताईद मुस्लिम शरीफ़ की एक और रिवायत से होती है।

كلُّ مُسكِرٍ خَمرٌوَكُلُّ خَمرٍ حرامٌ(صحيح مسلم:2003)

तर्जुमा: हर नशाआवर चीज़ ख़म्र कहलाती है और हर क़िस्म का ख़म्र हराम कर दिया गया है।

यहां यह एतिराज़ पैदा करना जो होगा कि गर कम मिक़दार में नशा वाली अश्या इस्तेमाल करने से नशा ना पैदा होने पर इतनी मिक़दार पीना जायज़ ठहरेगा। इस एतराज़ की गुंजाइश इस तौर नहीं है कि नशा के सिलसिले में इस्लाम का दूसरा उसूल यह है:

ما أسكرَ كثيرُهُ فقليلُهُ حرامٌ(صحيح الترمذي:1865)

तर्जुमा: जिसका ज़्यादा हिस्सा नशा-आवर और मुफ़त्तिर हो उसका कम मिक़दार में भी इस्तेमाल करना हराम है।

मज़कूरा तअरीफ़ को उसूल बनाने से मुनश्शियात (मादक पदार्थों) के ज़ुमरे में शराब, तंबाकू, बीड़ी, सूरत, गुटखा, गांजा, भांग, चरस, कोकीन, हुक्का, अफ़ीम, हीरोइन, विस्की, बीयर, शैमपैन, एल.एस.डी, हशीश (सूखी घास/भंग) और मख़द्रात की तमाम अश्या शामिल हैं।

एक तरफ़ हमें यह मालूम होता है कि गुल नशीली चीज़ है और नशीली चीज़ें जानलेवा होती हैं जैसा कि गुल-ए-मंजन के डिब्बे पर कैंसर होने का सबब लिखा है। दूसरी तरफ़ इस्लाम ने हिफ़्ज़ान-ए-सेहत (तन्दुरुस्ती की हिफाज़त) का बहुत बेहतरीन निज़ाम पेश किया है। इसकी रोशनी में जिस्म को नुक़सान पहुंचाने वाली तमाम चीज़ें मना हैं: अल्लाह का फ़रमान है:

لا تُلْقُواْ بِأَيْدِيكُمْ إِلَى التَّهْلُكَةِ۔ (البقرة: 195)

तर्जुमा: अपने आप को हलाकत में मत डालो। इस वजह से गुल-ए-मंजन का इस्तेमाल इस्लाम की रौशनी में हराम है।

गुल-ए-मंजन दांतों की दवा नहीं, बीमारी है:

गुल का इस्तेमाल करने वाले उसे मंजन समझकर इस्तेमाल करते हैं और दांतों की सफ़ाई का सामान ख़्याल करते हैं। ऐसे लोगों को यह हदीस सुनाना चाहता हूँ कि:

एक सहाबी तारीक़ बिन सुवेद अलजुफ़ी (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने शराब को बतौर-ए-दवा इस्तेमाल करने के लिए रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से इजाज़त तलब की तो आप ने उनसे फ़रमाया:

إنه ليس بدواءٍ ولكنه داءٌ (صحيح مسلم: 1984)

तर्जुमा: कि शराब दवा तो नहीं है मगर बीमारी ज़रूर है। यानी यह बीमारी का सबब बनती है। इस हदीस से मालूम होता है कि नशा आवर चीज़ों में फ़ायदा नहीं, नुक़सान है लिहाज़ा जो गुल को दांतों की सफ़ाई का ज़रिया समझते हैं उन्हें समझ लेना चाहिए कि आप अपने जिस्म में बीमारी दाख़िल कर रहे हैं जो रफ़्ता-रफ़्ता आपके वजूद को ख़त्म कर देगी। आप से गुज़ारिश है कि दांतों की सफ़ाई के लिए गुल-ए-मंजन के बजाय मिस्वाक इस्तेमाल करें जो ना सिर्फ़ मुँह की सफ़ाई का सबब है बल्कि उससे रब की रज़ा भी हासिल होती है। सहीह बुख़ारी में आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) फ़रमाती हैं कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

السواک مطهرة للفم مرضاة للرب

तर्जुमा: कि मिस्वाक से मुँह साफ़ होता है और अल्लाह की रज़ामंदी हासिल होती है।

दांतों की सफ़ाई के लिए मिस्वाक ही ज़रूरी नहीं है, कोई भी मंजन इस्तेमाल कर सकते हैं लेकिन हराम चीज़ को दांतों की सफ़ाई का ज़रिया नहीं बना सकते।

गुल-ए-मंजन का रोज़े पर असर:

चूंकि लोग गुल का इस्तेमाल मंजन की शक्ल में कर रहे हैं, इस लिए अक्सर यह सवाल पूछा जा रहा है कि क्या रोज़े की हालत में गुल-ए-मंजन करने से रोज़ा टूट जाता है? इस सिलसिले में बरेलवी मस्लक के यहाँ गुल-ए-मंजन को मुफ़सिद-ए-सौम लिखा पाया हो और दारुल उलूम देवबंद का फ़तवा है कि गुल या मंजन करने से रोज़ा टूटता नहीं है, मकरूह होता है अलबत्ता अगर गुल-ए-मंजन करने से गुल या मंजन के ज़र्रात हलक़ में चले गए तो रोज़ा बिलाशुबहा टूट जाएगा। (दारुल इफ़्ता देवबंदी, जवाब 60211)

मैं जब गुल-ए-मंजन को रोज़ा और रमज़ान से जोड़ कर देखता हूँ तो मुझे लगता है कि सवाल यह नहीं होना चाहिए कि गुल-ए-मंजन से

रोज़ा टूटता है या नहीं टूटता बल्कि असल सवाल यह होना चाहिए कि रोज़ा की हालत में या रमज़ानुल मुबारक में गुल-ए-मंजन का इस्तेमाल कैसा है? इस सवाल पर मेरा जवाब यह होगा कि गुल-ए-मंजन का इस्तेमाल आम दिनों में हराम है और रोज़ा या रमज़ानुल मुबारक में इसकी हुरमत में ज़्यादती पैदा हो जाती है क्यूंकि रमज़ानुल मुबारक में जिस तरह नेकियों का अज्र कई गुना बढ़ जाता है उसी तरह बुराइयों का गुनाह भी ज़्यादा हो जाता है।

जहां तक गुल-ए-मंजन से रोज़ा टूटने या ना टूटने का मसला है, इस सिलसिले में मेरा मानना है कि गुल-ए-मंजन ज़र्रात का मजमूआ है। उसको मुंह में लेने से हलक से नीचे उतरने का ख़तरा है, हालांकि अगर मुंह की अच्छी सफ़ाई की गई हो, तो गुल-ए-मंजन को मुफ़्तिर (रोज़ तोड़ने वाला) नहीं माना जाएगा क्योंकि महलूल और रेशे तो मिस्वाक में भी पाए जाते हैं, बल्कि रुताब मिस्वाक में महलूल के साथ ज़ाइका भी तेज़ होता है। इसके बावजूद हम ख़ुश्क और रुताब दोनों क़िस्म की मिस्वाक रोज़ा की हालत में इस्तेमाल कर सकते हैं। ख़ुलासा यह है कि गुल-ए-मंजन से रोज़ा नहीं टूटता, बशर्ते कि मुंह की अच्छी सफ़ाई की गई हो। ताहम उससे ज़्यादा अहम सवाल यही है कि क्या एक मुसलमान रोज़ा रखते हुए गुल-ए-मंजन का इस्तेमाल

कर सकता है, जिस के बारे में कोई शक नहीं है कि यह हराम भी है और जानलेवा भी?

इसे मिसाल से समझें कि रोज़ा की हालत में फ़हाश फिल्में देख लेने से रोज़ा नहीं टूटता, मगर यहां भी वही सवाल पैदा होता है कि क्या मुसलमान रोज़ा की हालत में गंदी फिल्में देख सकता है? बिल्कुल नहीं। रमज़ान के अलावा दूसरे महीनों में भी ऐसी चीज़ें देखना हराम है, तो रोज़ा की हालत में देखना बदर्जा-ए-ऊला हराम होगा। यही हाल रोज़ा की हालत में गुल-ए-मंजन के इस्तेमाल का है।

गुल-ए-मंजन से मुताल्लिक़ चंद बातों की वज़ाहत:

गुल-ए-मंजन से मुताल्लिक़ मजमून की इशाअत के बाद कुछ भाइयों ने मुख़्तलिफ़ जगहों पर एतिराज़ किया था और कुछ शुब्हात का इज़्हार किया था, इसलिए मैंने उन एतिराज़ को सामने रखते हुए चंद नुक्तों के ज़रिये अपनी बात वाज़ेह कर रहा हूँ।

सबसे पहले बात तो यह है कि मैंने अपने मजमून में गुल के इस्तेमाल को रोज़ा और ग़ैर-रोज़ा दोनों सूरतों में हराम साबित किया है, जैसा

कि आपने पढ़कर अंदाज़ा लगाया है और हमेशा के लिए इससे बचने की नसीहत की है। इसलिए मुफ़्सिद-ए-सौम ना होने का मतलब यह नहीं है कि रोज़ा की हालत में उसे इस्तेमाल किया जाए। यह ठीक उसी तरह है कि कोई आलिम कहे कि फिल्म देखने से रोज़ा नहीं टूटता, उसका मतलब भी यही है कि फिल्म बनी हराम है और रोज़ा में हराम कामों से बचना चाहिए।

दूसरी बात यह है कि गुल-ए-मंजन को दांतों के लिए बीमारी बताया है, ना कि सफ़ाई का ज़रिया। साथ-साथ नशा होने के सबब उसका इस्तेमाल हराम भी है, फिर वह कैसा मुसलमान होगा जो रोज़ा भी रखे और हराम काम का इर्तिकाब भी करे? इस बात की जानकारी के साथ रोज़ा की हालत में हर क़िस्म के हराम का इर्तिकाब करने से रोज़ा फ़ासिद नहीं होता सिवाए उसके जो शरीयत में मंसूस हो, मसलन रोज़ा की हालत में कोई झूठ बोले, ग़ीबत करे, या फ़हाश फिल्म देख ले, यह सब हराम काम हैं, मगर उन कामों की वजह से रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा, ताहम गुनाह-ए-कबीरा होने के सबब तौबा करना पड़ेगा।

तीसरी बात यह है कि यहां एक बड़ा अहम सवाल यह है कि अगर किसी ने हालत-ए-रोज़ा गुल से मंजन कर लिया, तो क्या उसका रोज़ा टूट जाएगा और जिन्होंने यह अमल कई रोज़ों में अंजाम दिया है,

उन्हें अपने गुज़िश्ता रोज़ों की क़ज़ा करने की ज़रूरत है? ज़ाहिर सी बात है कोई भी आलिम यह नहीं कहेगा कि पिछले अहवाल में हालत-ए-रोज़ा गुल मंजन करने वाला अपने रोज़ों की क़ज़ा करेगा। हां, यह अमल हराम के ज़ुमरे में है, इसलिए आइंदा के लिए तौबा करना पड़ेगा।

छोटी बात यह है कि गुल बिला शुब्हा तंबाकू की एक क़िस्म है और नशा भी है और इस बारे में दो बातें अहम हैं: पहली ज़र्रात मुंह में जाने वाली और दूसरी नशा होने वाली। तो मुंह की अच्छी सफ़ाई पर मुफ़्तिर (रोज़ तोड़ने वाला) का हुक्म नहीं लगा सकते, चे जाए कि नशा हो। क्योंकि महज़ नशा होने से रोज़ा का दूसरे मसाइल पर भी एतिराज़ वारिद होगा, मसलन बेहोशी में रोज़ा या इलाज के लिए बेहोशी का इंजेक्शन वग़ैरह।

फिर कहीं शरीयत में यह दलील भी नहीं मिलती कि जिस्म में अगर कुछ नशा पैदा हो जाए तो रोज़ा बातिल हो जाएगा। बल्कि गुल करने वाले को उस वक्त नशा महसूस भी नहीं होता, फिर तो यह इल्लत पाई भी नहीं गई। ताहम इस्तेमाल की हुरमत अपनी जगह बाक़ी है, क़लील और कसीर नशा के क़ायदे से।

पांचवीं बात यह है कि आप रोज़ा की जो तहरीफ़ करते हैं, उस हिसाब से भी देखें, गुल न खाने पीने या उसके क़बील से है, न जिमा और शहवत में से है, फिर मुबतिलात-ए-सौम में से कैसे माना जाएगा?

अगर कोई यह कहता है कि गुल मंजन करने से रोज़ा फ़ासिद हो गया, तो उसके ज़िम्मे है कि वह सरीह दलील लाए और यह भी साबित करे कि साबिक़ा इन तमाम रोज़ों की कज़ा करना पड़ेगा, जिनमें गुल मंजन किया गया है। सबको अच्छी तरह मालूम है कि नवाक़िज़ और मफ़सदात दीन के अहम उसूल हैं, इसलिए वुज़ू या ग़ुस्ल तोड़ने या नमाज़ और रोज़ा बातिल क़रार देने के लिए सरीह नसीह और वाज़ेह दलील चाहिए। हां, यह बात ज़रूर है कि सिगरेट पीने और सूरती खाने के क़बील से है, इसलिए उन दोनों से रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। और अगर गुल-ए-मंजन का इस्तेमाल कोई सूरती की तरह होंठ के नीचे रख कर करता है, तो यक़ीनन वह मुफ़सिद-ए-सौम है क्योंकि उसने गुल के इस्तेमाल की ऐसी कैफ़ियत इख़्तियार की, जो खाने और लज़्ज़त अंदोज़ी के मुशाबेह है। गोया किसी चीज़ के इस्तेमाल की मख़सूस कैफ़ियत के मुताबिक़ हुक्म लगेगा। अगर वही चीज़ दूसरी कैफ़ियत में इस्तेमाल हो, तो उसका हुक्म बदल जाएगा।

एक भाई ने मुझसे कहा कि आप ने गुल को तंबाकू की क़िस्म बताया है, इसलिए गुल भी तंबाकू की तरह हुक्म रखता है यानी उससे भी रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। उस पर एक तबस्सुम और सादगी वाला जवाब अर्ज़ करता हूँ कि टमाटर भी फ्रूट्स की एक क़िस्म है, क्या आप मेहमान की आमद पर प्लेट में टमाटर बतौर मेहमान नवाज़ी पेश करेंगे?

बहरहाल, एक मुसलमान को नशा आवर चीज़ कभी भी इस्तेमाल नहीं करना चाहिए, ख़ुसूसन रमज़ान जैसे मुबारक माह में तो क़तअन उससे इज्तिनाब करना चाहिए। और जिन लोगों ने रमज़ान में या रमज़ान के अलावा दोनों में यह अमल अंजाम दिया है, वह अल्लाह से सच्ची तौबा करें और दांतों की सफ़ाई के लिए अल्लाह की रज़ा वाला मिस्वाक करें या जाइज़ अशिया इस्तेमाल करें।

मुलाहिज़ा:

चूंकि यह मज़मून अपनी नौ'इय्यत (हालत) के एतिबार से काफ़ी हस्सास था और अब तक जमात अहले हदीस की तरफ़ से मेरी नज़र में गुल-ए-मंजन से रोज़ा टूटने या न टूटने के सिलसिले में कोई फ़तवा

नहीं आया था, इस वजह से मैंने इस मज़मून को कई उलमा पर पेश किया और उन्होंने अपने तअस्सुरात से हमें नवाज़ा। जज़ाहुमुल्लाह ख़ैरा

1. डॉ. वसीउल्लाह मुहम्मद अब्बास हाफ़िज़ाहुल्लाह (मुदर्रिस हरम-ए-मक्की और उस्ताद जामिया उम्मुल-कुरा, मक्का मुकर्रमा)

गुल-ए-मंजन से मुताल्लिक़ शैख़ मक़बूल सलफ़ी हाफ़िज़ाहुल्लाह ने जो तहक़ीक़ पेश की है कि उसका इस्तेमाल करना जाइज़ नहीं क्योंकि वह मुस्कर (नशा आवर) है, चाहे उसका थोड़ा हिस्सा इस्तेमाल किया जाए या ज़्यादा। इसका ख़ुलासा यह है कि गुल-ए-मंजन का इस्तेमाल दांत और मुंह की सफ़ाई के लिए जाइज़ नहीं है, उसके बिलमुक़ाबिल अल्लाह ने बहुत सी हलाल चीज़ें पैदा की हैं, जैसे कि मिस्वाक। शैख़ मक़बूल ने जो बात कही है, आमदन आदमी अगर गुल-ए-मंजन के कुछ हिस्से को (इस्तेमाल के वक्त) निगल नहीं रहा है, तो उससे रोज़ा बातिल नहीं होगा क्योंकि किताब और सुन्नत से इबताल-ए-सौम की दलील नहीं मिलती है। यही हक़ीक़त है और तहक़ीक़ के क़रीब यही क़ौल है। हां, अगर गुटका, सूरती (ख़ुशक पत्तो की सूरत मे खाने का तंबाकू) और तंबाकू की तरह इस्तेमाल कर रहा है और उसकी कश

यानी पीस को निगल जाता है, तो उससे सौम बातिल हो जाएगा, उसमें शुब्हा नहीं है। (शैख़ की ऑडियो यूट्यूब पर मौजूद है।)

2. शैख़ जलालुद्दीन क़ासमी हाफ़िज़ाहुल्लाह, मालेगांव:

गुल-ए-मंजन से रोज़ा नहीं टूटता अगर उसका कोई हिस्सा पेट में न जाए, जबकि गुल-ए-मंजन मुस्किर (नशा पैदा करने वाले चीज़) होने की वजह से हराम है। गुल-ए-मंजन से रोज़ा न टूटने की मक़बूल अहमद सलफ़ी ने मौक़िफ़ की ताइद शैख़ वसीउल्लाह अब्बास ने भी की है और कहा है कि यह मौक़िफ़ अक़रब इला सवाब है। फ़िलहाल मैं भी इस मौक़िफ़ से मुत्तफ़िक़ हूँ, तांकि कोई दलील आ जाए जो उसे नाक़िस करे। मक़बूल अहमद सलफ़ी हाफ़िज़ाहुल्लाह की यह तहक़ीक़ क़ाबिल-ए-क़दर है। ज़ादकल्लाहु इल्मा

3. शैख़ अब्दुल हसीब उमरी मदनी हाफ़िज़ाहुल्लाह, बैंगलोर:

मज़मून पढ़ा, मज़मून के मशमूलात क़ाबिल-ए-इतमिनान हैं, बारकल्लाहु फीकुम। अलबत्ता मैं सूरती (ख़ुशक पत्तो की सूरत मे खाने का तंबाकू) नहीं जानता। इस जुज़ से मुताल्लिक़ गुफ़्तगू के अलावा बाक़िया बातों से इत्तिफ़ाक़ है।

4. डॉ. मुहम्मद असलम मुबारकपुरी हाफ़िज़ाहुल्लाह, जामिया सलफ़िया, बनारस:

तक़रीबन हर शख़्स को मालूम है कि इस्लामी शरीयत ने हर नशाआवर चीज़ को हराम क़रार दिया है, इस पर किताब और सुन्नत के दलाईल बेशुमार हैं। गुल-ए-मंजन भी नशा आवर है, इसलिए यह भी हराम है। हर मुसलमान को इस से इज्तिनाब करना चाहिए, लेकिन गुल-ए-मंजन मुफ़्तिर-ए-सौम है या नहीं? इस बारे में इख़्तलाफ़ है। मुझ सियह-कार (गुनाहगार) को किताब और सुन्नत के दलाइल में इसका मुफ़्तिर अक़्ल होना तो मिला, लेकिन मुफ़्तिर सौम होना नहीं मिला। अगर कोई मुफ़्तिर अक़्ल होने से मुफ़्तिर सौम होना क़ियास कर ले, तो यह क़ियास म'अल-फ़ारिक़ है। हां, अगर किसी वजह से यह अंदरून मादा पहुँच जाए या कोई निगल ले, तो मुफ़्तिर-ए-सौम है, जिस तरह दीगर चीज़ों के निगल जाने से मुफ़्तिर-ए-सौम होगा, वर्ना नहीं। इस सिलसिले में मौलाना मक़बूल अहमद सलफ़ी हाफ़िज़ाहुल्लाह ने जो तहक़ीक़ पेश की है, मुझे अक़रब इला अल-सहीह मालूम होती है। वअल्लाहु आलम बिस्सवाब वअइल्मुहु अतम वअहकम

5. डॉ. अब्दुल बारी फत्हुल्लाह मदनी हाफ़िज़ाहुल्लाह, रियाज़ (एक भाई के इस्तिफ़सार पर शैख़ ने उनको मेरे मजमून का ऑडियो जवाब दिया):

इस रिसाले में बाक़ी चीज़ें सब सही लिखी हैं और गुल-ए-मंजन से रोज़ा नहीं टूटेगा, लेकिन वह मुस्किरात (नशे वाली चीजें) के ज़िम्न से है, तो बहुत बड़ा गुनाह है।

================

[41].गुस्सा और उसके असबाब और इलाज

गुस्सा एक नफ़सियाती कैफ़ियत का नाम है। यह इंसानी फ़ितरत का हिस्सा है, इस वजह से हर शख़्स के अंदर इस फ़ितरत का वजूद है और यह मुशाहिदा में भी आता है। ऐसा नहीं है कि गुस्सा अमीरों की दौलत है और फ़क़ीर और मिस्कीन को कभी गुस्सा नहीं आता। यह हर इंसान की सिफ़त है, बचपन से लेकर बुढ़ापे तक इसका ज़हूर होता है, जो उस बात की ना क़ाबिल-ए-तर्दीद अलामत है कि गुस्सा इंसानी फ़ितरत और तबियत का जुज़ ला-युन्फ़क (inseparable) है। अल्लाह और उसके रसूल के कलाम से भी वाज़ेह तौर पर मालूम होता है। अल्लाह मोमिनों की सिफ़ात बयान करते हुए फ़रमाता है:

الذين ينفقون في السراء والضراء والكاظمين الغيظ والعافين عن الناس والله يحب المحسنين.(آل عمران: 134)

तर्जुमा: जो लोग आसानी में और सख़्ती के मौक़ो पर भी अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करते हैं। गुस्सा पीने वाले और लोगों से दरगुज़र करने वाले हैं। अल्लाह उन नेककारों से मुहब्बत करता है।

और नबी (ﷺ) ने फ़रमाया:

ليس الشديد بالصرعة انما الشديد الذي يملك نفسه عند الغضب.

(صحيح البخاري:6114)

तर्जुमा: पहलवान वह नहीं है जो कुश्ती लड़ने में ग़ालिब हो जाए बल्कि असली पहलवान तो वह है जो गुस्से की हालत में अपने आप पर क़ाबू पाए, बे क़ाबू न हो जाए।

क़ुरआनी आयात और हदीस से जहां यह मालूम होता है कि गुस्सा इंसानी फ़ितरत है, वहीं यह भी मालूम होता है कि इस फ़ितरत को इस्लाम ने दबा कर और क़ाबू में रखने का हुक्म दिया है। अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है, वह बयान करते हैं:

ان رجلا قال للنبي صلى الله عليه وسلم اوصني قال لا تغضب فردد مرارا قال لا تغضب.(صحيح البخاري:6116)

तर्जुमा: एक शख़्स ने नबी (ﷺ) से अर्ज़ किया कि मुझे आप कोई नसीहत फ़रमा दीजिए। नबी (ﷺ) ने फ़रमाया कि गुस्सा न किया कर। उन्होंने कई मर्तबा यह सवाल किया और नबी (ﷺ) ने फ़रमाया कि गुस्सा न किया कर।

एक बात वाज़ेह हो गई कि गुस्सा फितरत-ए-इंसानी है, ताहम उस पर क़ाबू न रखने से भयावह नताइज (नतीजे) सामने आते हैं। मियां-बीवी में जुदाई, औलाद और वालिदैन में दूरी, बहन-भाई में इख़्तिलाफ़, फ़र्द और मुआशरे में बिगाड़, दुनिया में ज़ुल्म और बर्बरियत और फ़ितना और फ़साद की जड़ गुस्सा है। जब तक गुस्सा दबा होता है तब तक फ़ितना दबा होता है और जब गुस्सा बे-क़ाबू हो जाता है तो फ़ितना और फ़साद भी अपना मुँह

खोल लेता है। ऐसे मौक़ो से शैतान काफ़ी फ़ायदा उठाता है। वह दो फ़रीक़ में नफ़रत और बदला की आग भड़काता है और इंसान बिला-दरेग़ (बिला तहाशा) एक दूसरे का ख़ून कर बैठता है। गुस्से का बुरा असर इंसानी जिस्म और रूह पर भी मुरत्तब होता है। चेहरे देखकर हम भाँप सकते हैं कि आदमी गुस्से में है, रगें फूल जाना, चेहरा लाल हो जाना और सांसों में तेज़ी पैदा होना गुस्सा होने की अलामत है।

यह म'अदे की शिकायत, कोलेस्ट्रॉल की ज़्यादती, आंतों की परेशानी, कुव्वत-ए-मुदाफ़'अत की कमी, फ़ालिज का ख़तरा और दिल की बीमारी का सबब है। इसी तरह मर्ज़-ए-यरक़ान (पीलिया) से लेकर सर, याददाश्त, ग़ौर और फ़िक्र और निज़ाम-ए-आ'साब (nervous system)

तक मुतास्सिर करता है। बल्कि मौत का भी रास्ता हमवार कर सकता है। जब समाज और मुआशरे की तबाही का असल सबब गुस्सा है तो फिर हमें इसके अस्बाब मालूम करने की ज़रूरत है ताकि उन अस्बाब से पहले ही इख़्तियार करके गुस्से पर क़ाबू पाया जा सके।

(1) गुस्सा भड़कने का एक अहम सबब तकब्बुर है। जिसके पास तकब्बुर होगा वह बात-बात पर गुस्सा होगा और लोगों को हक़ीर समझते हुए उन पर ज़्यादती करेगा। इसीलिए इस्लाम ने तकब्बुर की बुराई बयान की है और मुतकब्बिर शख़्स पर जन्नत ममनू कर दिया है। नबी (ﷺ) का फ़रमान है:

لا يدخل الجنة من كان في قلبه مثقال ذرة من كبر .(صحيح

مسلم :91)

तर्जुमा: वह शख़्स जन्नत में दाख़िल न होगा जिसके दिल में राई के दाने के बराबर भी तकब्बुर और गुरूर होगा।

जिसे अपनी आख़िरत की फ़िक्र होगी वह कभी तकब्बुर की नजासत में मुलव्विस होकर जहन्नम में दाख़िल नहीं होगा।

(2) बदगोई, लफ़्फ़ाज़ी, बिला ज़रूरत लंबी बातें, कटुजैहती, मज़ाक़, सख़्त कलाम, अड़ियलपन, ग़ीबत, बदमिज़ाजी, चिड़चिड़ापन यानी बद अख़लाक़ी के जितने सिफ़ात हैं उनसे गुस्सा जन्म लेता है और आपस में नफ़रत पैदा होती है। इसीलिए मोमिन की शान यह होती है कि वह निहायत सीधा-सादा और शरीफ़ुन्नफ़स होता है। नबी (ﷺ) का फ़रमान है:

المؤمن غر كريم والفاجر خب لئيم.(صحيح ابي داؤد:4790)

तर्जुमा: मोमिन भोला-भाला और शरीफ़ होता है और फ़ाजिर फ़सादी और कमीना होता है। हम कम से कम बात करें, ख़ुद को अख़लाक़-ए-हसना से मज़ीन करें और ज़बान की आफ़तों से बचें क्योंकि यही बड़ी से बड़ी मुश्किलात लाने वाली है। इसी लिए तो रसूल (ﷺ) ने इर्शाद फ़रमाया:

من يضمن لي ما بين لحيية وما بين رجليه اضمن له الجنة.(صحيح البخاري:6474)

तर्जुमा: जो शख़्स मुझे अपनी ज़बान और शर्म-गाह की ज़मानत दे, तो मैं उसके लिए जन्नत की ज़मानत देता हूँ।

नबी (ﷺ) का फ़रमान है:

من حسن اسلام المرء تركه ما لا يعنيه.(صحيح الترمذي:2317)

तर्जुमा: फुज़ूल बातों को छोड़ देना, आदमी के इस्लाम की अच्छाई की दलील है।

इन तमाम दलाइल का ख़ुलासा यह है कि आदमी अपने आप में अख़लाक़ और किरदार वाला, ज़रूरत भर नरमी और अदब से बात करने वाला, ज़बान का सही इस्तेमाल करने वाला और हुज्जत के वक्त ख़ामोश रहने वाला हो, तो वह गुस्से की आफ़त से बच जाए।

(3) समाज में कई तबक़े हैं, उनमें जाहिल और नादान बड़ी कसरत से मौजूद हैं। उन अहमक़ों का काम शरीफ़ लोगों को छेड़ना और उनके जज़्बात बर-अंगेख़्ता (afire) कर के फ़साद बरपा करना होता है। ऐसे मौक़ो पर एक शरीफ़ इंसान का शिआर जाहिलों की जहालत और बदतमीज़ी पर सब्र और ख़ामोशी है। अल्लाह का फ़रमान है:

واذا خاطبهم الجاهلون قالوا سلاما.(الفرقان:63)

तर्जुमा: और जब बे-इल्म लोग उनसे बातें करने लगते हैं, तो वे कह देते हैं कि सलाम है।

यहां सलाम कहने से मुराद है जहालत पर ख़ामोशी इख़्तियार करना। इसी सूरत में आगे अल्लाह का इरशाद है:

إذا مروا باللغو مروا كراما.(الفرقان:72)

तर्जुमा: और जब किसी लग़्व चीज़ पर उनका गुज़र होता है, तो शराफ़त से गुज़र जाते हैं।

यहां भी शराफ़त से गुज़र जाने का मतलब है बदकलामी पर ख़ामोशी इख़्तियार करना। और जो बदकलामी पर ख़ामोशी इख़्तियार कर ले, वह फ़ितने से महफ़ूज़ हो जाएगा। रसूल (ﷺ)

का फ़रमान है:

من صمت نجا.(صحيح الترمذي:2501)

तर्जुमा: जिसने ख़ामोशी इख़्तियार की, उसने नजात पा ली।

(4) कभी हम इंतिक़ाम लेने में हक़ बजानिब होते हैं क्योंकि हम पर ज़ुल्म किया गया होता है, मगर इंतिक़ाम मज़ीद बिगाड़ और फ़साद और गैज़ और ग़ज़ब का पेश-ए-ख़ैमा है। उस वजह से इस्लाम ने माफ़ करने वाले को सराहा है। अल्लाह तआला फ़रमाता है:

والذين يجتنبون كبائر الإثم والفواحش واذا ما غضبوا هم يغفرون.(الشورى:37)

तर्जुमा: वह लोग जो बड़े गुनाहों और बे-हयाई के कामों से बचते हैं और जब गुस्से में आते हैं तो माफ़ कर देते हैं।

नबी (ﷺ) ने फ़रमाया:

ما نقصت صدقة من مال وما زاد الله عبدا بعفو إلا عزا وما تواضع أحد لله إلا رفعه الله.(صحيح مسلم:2588)

तर्जुमा: सदक़ा माल में कमी नहीं करता और बंदे के माफ़ कर देने से अल्लाह उसकी इज़्ज़त बढ़ा देता है और जो आदमी भी अल्लाह के लिए आजिज़ी इख़्तियार करता है, अल्लाह उसका दर्जा बुलंद फ़रमा देता है।

(5) गुस्सा का एक भयानक सबब तशद्दुद पर मबनी हालत से दो-चार होना या पुर तशद्दुद अफ़लाम का मुशाहिदा करना या शिद्दत वाले माहौल और दोस्ती इस्तिवार करना है। हमें ऐसे शिद्दत पसंद माहौल, शिद्दत पसंद दोस्त और पुर तशद्दुद मनाज़िर और अफ़लाम देखने से बाज़ रहना चाहिए, वरना ऐसी शिद्दत और उसका रद्दे अमल गुस्सा की शक्ल में हमारे जिस्म और रूह में सरायत (absorption) करेगा।

(6) शैतान हमारी रगों में घूमता रहता है। उसे मालूम है कि इंसानी तबीयत में गुस्सा मौजूद है, बस उसमें इश्ति'आल (burning) पैदा करना है। उसके बाद ख़ुद ही शैतानी अमल ज़ाहिर हो जाता है। इस बात को अच्छी तरह महसूस करें और शैतानी हमले से बचते रहें।

उसके लिए नमाज़ों की पाबंदी, अज़कार पर हमेशगी और ख़लवत और जलवत में अल्लाह का ख़ौफ़ पैदा करना है।

(7) अल्लाह से बेख़ौफ होना, मा'सियत (disobedience) पर इसरार करना और दीनी तालीमात के हुसूल और उन पर अमल करने से गुरेज़ करना भी इंसानी तबीयत में गुस्से को भड़काने का काम कर सकता है। आदमी जिस क़दर मुत्तकी होगा, गुनाहों से परहेज़ करेगा, दीन का इल्म हासिल करेगा और उसे अमली जामा पहनाएगा, वह अल्लाह के हुक़ूक़ की अदायगी के साथ बंदों के हुक़ूक़ भी अच्छे से अदा कर सकेगा और किसी के साथ ज़्यादती नहीं करेगा।

(8) मौजूदा ज़माने में किसी के ख़िलाफ़ बात करना भी गुस्से का सबब है। हद तो यह है कि हक़ बात बोलने पर भी गुस्सा किया जाता है। इन दोनों कामों में हिकमत और बसीरत लाज़िम है यानी बात करने का सलीक़ा और हिकमत चाहिए और अपने ख़िलाफ़ हक़ बात सुनने पर बजाय गुस्सा होने के उसे क़बूल करना चाहिए।

(9) ज़ेहनी तनाव और उलझन का शिकार होना भी गुस्सा पैदा करने का सबब है। आज के ज़माने में अक्सरियत टेंशन का बोझ पाल रही है। किसी को दौलत का, तो किसी को गुरबत, किसी को तिजारत का,

तो किसी को सियासत का, किसी को घरेलू, तो किसी को सामाजिक तनाव ने टेंशन की लपेट में ले रखा है। इसके नतीजे में चारों तरफ़ लूटमार, इख़्तिलाफ़ और इंतिशार, क़त्ल और ग़ारतगिरी, फ़ितना और फ़साद, और ज़ुल्म और त'अद्दी (violence) उरूज पर हैं। इस्लाम ने हमें जिंदगी गुज़ारने के सुनहरे उसूल दिए हैं, उन्हें अपनाने वाला हर तरह की मायूसी, परेशानी और फ़िक्र और इज़्तिराब से बचा रहेगा।

(10) जहां असबियत (अपने गिरोह की वफ़ादारी और पासदारी) होगी, वहां गुस्सा भी अपनी जगह बनाएगा और मौक़ा-ब-मौक़ा ज़ाहिर होकर बिगाड़ पैदा करता रहेगा। आज के दौर में फसाद की बड़ी वजह असबियत भी है। कहीं पर क़ौमी असबियत ने, तो कहीं पर क़बाइली असबियत ने तबाही मचा रखी है। ख़ानदानी असबियत या ज़बानी असबियत ने भी सालेह समाज का ख़ून किया है। मुसलमानों के दरमियाँन मस्लकी असबियत ने तो इस क़ौम को कई टुकड़ों में बांट दिया और यह क़ौम अपनी ताक़त और इत्तिहाद खोकर भी ख़ुश है।

इस्लाम ने जिसे अपना भाई कहा है, असबियत मे मुसलमान उसे अपना दुश्मन समझते हैं और जिसे दुश्मन कहा गया है, उसे अपना दोस्त बना रहे हैं। ऐ काश हमें असबियत से छुटकारा मिल जाए, तो

समाज की बेहतरी के साथ-साथ दीनी इत्मीनान से भी हमारी तरक़्क़ी होगी।

गुस्से के वक्त फ़ौरन तदबीर:

ऊपर चंद असबाब बयान किए गए हैं जो गुस्सा लाने का सबब बनते हैं। अगर उनसे बचा जाए, तो इंसान गुस्से पर क़ाबू पा लेगा और इसके बुरे अंजाम से ज़िंदगी भर बचता रहेगा। अगर ख़ुदानाख़्वास्ता गुस्सा आ जाए, तो हमें फ़ौरन क्या करना चाहिए?

(1) सबसे पहले शैतान से अल्लाह की पनाह मांगनी चाहिए, क्योंकि वही असल मुहर्रिक है जो दिल में वसवसा डालकर तबीयत के अंदरूनी हिस्से से गुस्सा बाहर निकाल देता है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَإِمَّا يَنزَغَنَّكَ مِنَ الشَّيْطَانِ نَزْغٌ فَاسْتَعِذْ بِاللَّهِ ۚ إِنَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ (الأعراف: 200)

तर्जुमा: अगर तुम्हें शैतान की तरफ़ से चौंका लगे (यानि शैतान गुस्से को उत्तेजित कर दे) तो अल्लाह की पनाह मांगो, यक़ीनन वही सुनने वाला और जानने वाला है।

और नबी (ﷺ) का फ़रमान है:

إذا غضب الرجل فقال اعوذ بالله سكن غضبه (صحيح الجامع: 695)

तर्जुमा: जब आदमी को गुस्सा आए और वह अल्लाह से पनाह मांग ले, तो उसका गुस्सा ठंडा हो जाएगा।

बुख़ारी और मुस्लिम में दो शख़्स के गाली-गलौज का ज़िक्र है। उनमें से एक का चेहरा गुस्से में लाल हो जाता है और रगे फूल जाती है। आप (ﷺ) ने इस गुस्से में होने वाले शख़्स के पास जाकर फ़रमाया:

اني لا علم كلمة لو قالها لذهب عنه اعوذ بالله من الشيطان الرجيم. (صحيح البخاري: 3282, صحيح مسلم: 2610)

तर्जुमा: मैं एक कलिमा जानता हूँ कि अगर वह कह ले, तो उसकी यह हालत दूर हो जाएगी। वह कलिमा है: 'आउज़ु बिल्लाही मिन्नशय्यता निर रजीम'। मैं शैतान मर्दूद से अल्लाह की पनाह चाहता हूँ।

(2) इसके बाद फ़ौरन ज़बान पर ख़ामोशी इख़्तियार कर लेनी चाहिए, क्योंकि जिस क़दर ज़बान खोलेगा, ग़लत अल्फ़ाज़ निकलेंगे और गुस्से में इज़ाफ़ा होता चला जाएगा। इसी लिए नबी (ﷺ) ने फ़रमाया:

إذا غضب أحدكم فليسكت. (صحيح الجامع: 693)

तर्जुमा: जब तुममें से किसी को गुस्सा आए, तो उसे ख़ामोशी इख़्तियार करनी चाहिए।

(3) अपनी हालत बदल लेनी चाहिए, यानी खड़े हो तो बैठ जाएं और बैठे हों या बैठने से गुस्सा दूर न हो, तो लेट जाएं। नबी (ﷺ) फ़रमाते हैं:

إذا غضب أحدكم وهو قائم فليجلس فإن ذهب عنه الغضب وإلا فليضطجع.(صحيح ابي داؤد:4782)

तर्जुमा: जब तुममें से किसी को गुस्सा आए और वह खड़ा हो, तो चाहिए कि बैठ जाए। अब अगर उसका गुस्सा दूर हो जाए, तो बेहतर है, वर्ना फिर लेट जाए।

(4) गुस्से के वक्त कुछ हदीस में वुज़ू करने और कुछ हदीस में गुस्ल करने का ज़िक्र है। इन दोनों क़िस्म की हदीसों को शैख़ अलबानी (रह.) ने ज़ईफ़ कहा है, इसलिए गुस्से के वक्त वुज़ू या गुस्ल करने को नबी (ﷺ) की तरफ़ मंसूब नहीं किया जाएगा। हालांकि, अहले इल्म ने लिखा है कि गुस्से के वक्त ठंडे पानी का इस्तेमाल मुफ़ीद है।

इसलिए गुस्से के वक्त पानी पी लिया जाए या हाथ-मुंह धो लिया जाए, तो बेहतर होगा।

गुस्सा रोकने वाले असबाब:

गुस्सा और नर्मी दोनों औसाफ़ हर इंसानी फ़ितरत में मौजूद हैं। कोई गुस्सा ज़्यादा करता है और नर्मी का दामन छोड़ देता है, और कोई नरम मिज़ाजी अपनाता है और गुस्सा कम रखता है। गोया एक इंसान अपनी फ़ितरत को बदल नहीं सकता, मगर गुस्से को कम ज़रूर कर सकता है। पहले बयान किया जा चुका है कि जब गुस्सा आ जाए, तो उसका फ़ौरन इलाज क्या है? अब यहाँ बताना चाहता हूँ कि आप गुस्से को हमेशा कंट्रोल में कैसे रख सकते हैं?

सबसे पहले उन तमाम असबाब से बचना है जो गुस्सा भड़काने और गुस्से में ज़्यादती पैदा करने वाले हैं। पहले गुस्सा दिलाने वाले असबाब ज़िक्र किए जा चुके हैं। उनमें तकब्बुर, बुरे अख़लाक़, लोगों की जहालत और नादानी, बे सबरी, बदला लेने का जज़्बा, तशद्दुद पर मबनी फ़िल्म देखना, शैतानी अमल, ज़ेहनी तनाओ, असबियत वग़ैरह हैं।

इसी तरह फ़ितरत में नर्मी पैदा करना, इबादत पर इज्तिहाद करना, ज़्यादा रोज़ा रखना, ज़बान को ज़िक्रे इलाही से तर रखना, फ़िज़ूल बातों से बचना बल्कि ख़ामोशी की सिफ़त इख़्तियार करना, सदक़ा और ख़ैरात करना, फ़क़ीर और मिसकीन के साथ हुस्ने सुलूक करना, गुनाहे कबीरा और फ़हश कामों से बचना गुस्से को कम करने में मददगार है:

अल्लाह का फ़रमान है:

وَالَّذِينَ يَجْتَنِبُونَ كَبَائِرَ الْإِثْمِ وَالْفَوَاحِشَ وَإِذَا مَا غَضِبُوا هُمْ يَغْفِرُونَ) االشورى: 37)

तर्जुमा: और बड़े गुनाहों और बेहयाई से बचते हैं और गुस्से के वक्त भी माफ़ कर देते हैं।

इस आयत में बड़े गुनाहों से बचने और फ़हश कामों से रुकने का ज़िक्र करके अल्लाह ने मोमिन की एक सिफ़त यह भी बयान की है कि वह गुस्से के वक्त माफ़ कर देता है। और एक बात यह भी मालूम हुई कि अल्लाह ने हमें गुस्सा का बदला लेने की ताक़त दी है मगर माफ़ करने वाला अल्लाह के नज़दीक बेहतर इंसान है। एक दूसरे

मक़ाम पर अल्लाह ने ख़र्च करने वाले, गुस्सा रोकने वाले और लोगों को माफ़ करने वाले की तारीफ़ की है।

फ़रमान ए इलाही है:

الذين ينفقون في السراء والضراء والكاظمين الغيظ والعافين عن الناس والله يحب المحسنين.(آل عمران: 134)

तर्जुमा: जो लोग आसानी में और सख़्ती के मौक़े पर भी अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करते हैं, गुस्सा पीने वाले और लोगों से दर गुज़र करने वाले हैं, अल्लाह उन नेक कामों से मोहब्बत करता है।

इस आयत से यह भी मालूम हुआ कि गुस्सा रोका जा सकता है, यह कोई ऐसी सिफ़त नहीं है जिस पर बंदे का इख़्तियार न हो। अगर गुस्से पर क़ाबू नहीं पाया जा सकता, तो फिर हर कमज़ोर अपने से ताक़तवर से बदला ले लेता है। उस तरह दुनिया में कोई ज़ुल्म नहीं करता, मगर ज़ालिम से कमज़ोर का बदला न लेना इस बात की दलील है कि कमज़ोर ने अपने गुस्से पर क़ाबू रख लिया ताकि कहीं वह ज़ालिम से और ज़ुल्म का शिकार न हो जाए। क़ुदरत रखते हुए माफ़ कर देने वाला जन्नत में पसंद होने का इख़्तियार दिया जाएगा। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

من كظم غيظا وهو يستطيع أن ينفذه دعاه الله يوم القيامة على رءوس الخلائق حتى يخيره في أي الحور شاء.(صحيح الترمذي:2021)

तर्जुमा: जो शख़्स गुस्सा ज़ब्त कर ले, हालांकि वह उसे कर गुज़ारने की इस्तिताअत रखता हो, तो क़यामत के दिन अल्लाह उसे लोगों के सामने बुलाएगा और उसे इख़्तियार देगा कि वह जिस हूर को चाहे पसंद कर ले।

गुस्सा इख़्तियारी मामला है। कोई गुस्से में किसी का क़त्ल कर दे, तो दुनिया की अदालत भी उसकी सज़ा माफ़ नहीं करेगी और अल्लाह के यहां सज़ा तो होगी ही। एक इंसान जब इस हैसियत से कि गुस्से का अंजाम बुरा है, इस पर अल्लाह के यहां पकड़ होगी, सोचेगा, तो उसका गुस्सा नरम होगा और गुस्से में भी मासियत का कोई काम करने से बचेगा। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने गुस्से के वक्त हक़ बात बोलने की अल्लाह से दुआ मंगी है। फ़रमान-ए-रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम है:

اسألك كلمة الحق في الرضا والغضب.(صحيح النسائی:1304)

तर्जुमा: "मैं तुझसे ख़ुशी और गुस्सा दोनों हालात में कलमा-ए-हक़ कहने की तौफ़ीक़ मांगता हूँ।"

इसी तरह नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ख़्वाब में डरने पर ये कलाम कहने को सिखलाते थे:

اعوذ بكلمات الله التامة من غضبه وشر عباده ومن همزات الشياطين وان يحضرون.(صحيح ابي داؤد:3893)

तर्जुमा: "मैं अल्लाह के पूरे कलमों की पनाह मांगता हूँ, उसके ग़ुस्से से, उसके बंधों के शर से, शैतानों के वसवसों से, और उनके मेरे पास आने से।"

अल्लाह और उसके रसूल का ग़ुस्सा:

ग़ुस्सा होना अल्लाह और उसके रसूल की भी सिफ़त है, इसलिए हर क़िस्म का ग़ुस्सा मअयूब नहीं है, बल्कि कुछ जगहों पर दरमियानी के साथ ग़ुस्सा का मुस्तहसन काम है। अल्लाह के ग़ुस्से के मुताल्लिक़ नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इरशाद फ़रमाते हैं:

لما قضى الله الخلق كتب في كتابه فهو عنده فوق العرش ان رحمتي غلبت غضبي.(صحيح البخاري:3194)

तर्जुमा: जब अल्लाह मख़लूक़ को पैदा कर चुका तो अपनी किताब (लौह-ए-महफ़ूज़) में जो उसके पास अर्श पर मौजूद है, उसमें लिखा कि मेरी रहमत मेरे गुस्से पर ग़ालिब है।

अल्लाह अपने बंदों पर ऐसे ही नाराज़ नहीं होता, बल्कि अल्लाह के अहकाम की नाफ़रमानी होती है तो अल्लाह गुस्सा होता है और बंदों को सज़ा देता है। कभी दुनिया में देता है और कभी आख़िरत में देगा, और कभी दुनिया और आख़िरत दोनों जगह

सज़ा देता है।

अल्लाह के गुस्से से मुताल्लिक़ क़ुरआन की चंद आयतें मुलाहिज़ा करें।

अल्लाह का फ़रमान है:

وضربت عليهم الذلة والمسكنة وباءوا بغضب من الله ذلك بأنهم كانوا يكفرون بآيات الله ويقتلون النبيين بغير الحق ذلك بما عصوا وكانوا يعتدون.(البقرة: 61)

तर्जुमा: उन पर ज़िल्लत और मिस्किनी डाल दी गई और अल्लाह का ग़ज़ब लेकर वे लौटे, यह इसलिए कि वे अल्लाह की आयतों के साथ कुफ़्र करते थे और नबियों को नाहक़ क़त्ल करते थे। यह उनकी नाफ़रमानी और ज़्यादतियों का नतीजा है।

अल्लाह का फ़रमान है:

وَمَن يَقْتُلْ مُؤْمِنًا مُتَعَمِّدًا فَجَزَاؤُهُ جَهَنَّمُ خَالِدًا فِيهَا وَغَضِبَ اللَّهُ عَلَيْهِ وَلَعَنَهُ وَأَعَدَّ لَهُ عَذَابًا عَظِيمًا) النساء:93)

तर्जुमा: और जो कोई किसी मोमिन को जानबूझकर क़त्ल कर डाले, उसकी सज़ा दोज़ख़ है जिसमें वह हमेशा रहेगा। उस पर अल्लाह का ग़ज़ब है, अल्लाह ने उस पर लानत की है और उसके लिए बड़ा अज़ाब तय कर रखा है।

अल्लाह का फ़रमान है:

كلوا من طيبات ما رزقناكم ولا تطغوا فيه فيحل عليكم غضبي ومن يحلل عليه غضبي فقد هوى.(طه:81)

तर्जुमा: तुम हमारी दी हुई पाकीज़ा रोज़ी खाओ और उसमें हद से आगे न बढ़ो, वरना तुम पर मेरा ग़ज़ब नाज़िल हो जाए वह यक़ीनन तबाह हुआ।

इस क़िस्म की कई आयतें हैं, लंबी पोस्ट की वजह से सिर्फ़ नज़र करता हूँ। याद रखो, अल्लाह का ग़ज़ब दोज़ख़ में ले जाने का सबब है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इर्शाद फ़रमाते हैं:

ان العبد ليتكلم بالكلمة من رضوان الله لا يلقي لها بالا يرفعه الله بها درجات وان العبد ليتكلم بالكلمة من سخط الله لا يلقي لها بالا يهوي بها في جهنم .(صحيح البخاري:6478)

तर्जुमा: बंदा अल्लाह की रज़ामंदी के लिए एक बात ज़बान से निकालता है, उसे वह कोई अहमियत नहीं देता लेकिन उसी के वजह से अल्लाह उसके दर्जे को बुलंद कर देता है और एक दूसरा बंदा ऐसा कलमा ज़बान से निकालता है जो अल्लाह की नाराज़गी (ग़ज़ब) का बाइस बनता है, उसे वह कोई अहमियत नहीं देता लेकिन उसकी वजह से वह जहन्नम में चला जाता है।

अल्लाह के ग़ैज़ और ग़ज़ब से बचने के लिए बंदा उसकी नाफ़रमानी से बचे और सदक़े को ख़ास तौर पर अहमियत दे, क्योंकि यह अल्लाह के ग़ज़ब को बुझा देता है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

ان الصدقة تطفئ غضب الرب وتدفع ميتة السوء .(الترمذي:667)

तर्जुमा: सदक़ा रब के ग़ज़ब को बुझा देती है और बुरी मौत से बचाती है।

यह हदीस सनदन ज़ईफ़ है, लेकिन इसके पहले हिस्से को शैख़ अल्बानी ने कसरत-ए-शवाहिद की बुनियाद पर क़वी कहा है। (तमामुल मिनाह: 390)

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम भी ग़ज़ब होते थे। वाज़ और नसीहत के वक़्त ग़ज़ब होते, किसी को झगड़ते देखते तो ग़ज़ब हो जाते, किसी के बारे में ग़लत सुनते या किसी को ग़लती करते देखते तो ग़ज़बनाक हो जाते। इस सिलसिले में अहादीस में बेशुमार वाक़ि'आत मौजूद हैं जिनका ज़िक्र इस छोटे मज़मून में मुमकिन नहीं है। हालांकि कुछ मिसाले आपके सामने पेश कर देता हूँ।

(1) आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा बयान करती हैं कि रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम घर में दाख़िल हुए। घर में एक पर्दा लटका हुआ था जिस पर पिक्चर (चित्र) थी। उसकी वजह से नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के चेहरे का रंग बदल गया। (बुख़ारी शरीफ़: 6109)

(2) एक शख़्स ने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से कहा कि या रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम, मैं फ़ज्र की नमाज़ में ताख़ीर

करता हूँ क्योंकि फ़ुलाँ साहब फ़ज्र की नमाज़ बहुत लंबी कर देते हैं। इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु के अल्फ़ाज़ हैं:

فما رأيت رسول الله صلى الله عليه وسلم قط أشد غضبا في موعظة منه يومئذ.(صحيح البخاري:6110)

तर्जुमा: इस पर आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इस क़दर ग़ज़ब हुए कि मैंने नसीहत के वक़्त उस दिन से ज़्यादा ग़ज़बनाक आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को कभी नहीं देखा।

(3) नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुझे रेशमी धारियों वाला एक जोड़ा इनायत फ़रमाया। मैं उसे पहन कर निकला तो मैंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के चेहरे पर ग़ज़ब के असर देखे। चुनांचे मैंने इसके टुकड़े-टुकड़े कर के अपनी अज़ीज़ औरतों में बांट दिए। (बुख़ारी शरीफ़: 5840)

(4) Abu Hurairah RA Bayaan Farmaate Hai:

خرج علينا رسول الله صلى الله عليه وسلم ونحن نتنازع في القدر فغضب حتي احمر وجهه حتى كأنما فقئ في وجنتيه الرمان.(صحيح الترمذي:2133)

तर्जुमा: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हमारी तरफ़ निकले। इस वक्त हम सब तक़दीर के मसले में बहस और मुबाहिसा कर रहे थे। आप ग़ज़ब हो गए यहाँ तक कि आपका चेहरा लाल हो गया और ऐसा नज़र आने लगा जैसे आपके गालों पर अनार के दाने निचोड़ दिए गए हों।

ममनू' और मतलूब ग़ज़ब:

हर वह ग़ज़ब ममनू' है जिसे अल्लाह और उसके रसूल नापसंद करें। इस बात को दूसरे लफ़्ज़ो में ऐसे भी कह सकते हैं कि अल्लाह और उसके रसूल की मुख़ालिफ़त में ग़ज़ब वाला कोई भी काम ममनू' है। मिसाल के तौर पर, बिना ग़लती के ग़ज़ब होना, हक़ बात बोलने वाले पर ग़ज़ब होना, नाहक़ पर ग़ज़ब करना, इंतिक़ाम की आग में जलना, कमज़ोरों को दबाने के लिए ग़ज़ब का इज़हार करना, ग़ज़ब के वक्त फ़ैसला करना, ज़बरदस्ती धौंस जमाकर दूसरों का हक़ छीनना, ताक़त और माल के ज़ो'म (arrogance) में तकब्बुर करना, औहदे और मनसब का नाजायज़ फ़ायदा उठाना, मातहतों पर रौब जमाना, वग़ैरह। बिला वजह ग़ज़ब वाला काम तो मना है ही। मा'सियत का कोई भी काम भी अल्लाह के ग़ज़ब का सबब है। हमसे मतलूब है कि मुंकिर को मिटाने में हद-ए-ए'तिदाल में रहते हुए ग़ज़ब का इज़हार करें, जैसे कि

रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बच्चों को नमाज़ छोड़ने पर मारने का हुक्म दिया है, सरकशी पर बीवी को हल्की मार का ज़िक्र है, बुराई देखने पर पहले हाथ से मिटाने का हुक्म हुआ है, इन सारे कामों में ग़ज़ब का असर शामिल है। इस वजह से हमें हक़ है कि अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नाफ़रमानी पर ग़ज़ब का इज़हार करें और ग़ज़ब भी इस हद तक ना हो कि फ़ायदे की बजाय उल्टा नुक़सान हो जाए। और ग़ज़ब के ज़ाहिर में मुनासिब वक्त और हिकमत और दानाई भी ज़रूरी है। बात-बात पर ग़ज़ब, बेहिसाब ग़ज़ब, हद-ए-ए'तिदाल से बढ़ा हुआ ग़ज़ब तबाही का सबब है, इससे बचना ज़रूरी है। मतलूब ग़ज़ब में मे'यार ये फ़रमान-ए-रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम है:

ما انتقم رسول الله صلى الله عليه وسلم لنفسه في شيء قط إلا أن تنتهك حرمة الله فينتقم بها لله.(صحيح البخاري:6126)

तर्जुमा: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपनी ज़ात के लिए किसी से बदला नहीं लिया। अलबत्ता, अगर कोई शख़्स अल्लाह की इज़्ज़त और हद तोड़ता, तो आप उससे सिर्फ़ अल्लाह की रज़ा के लिए बदला लेते।

===================

[42].चंद शुब्हात व नज़रियात हिन्दुस्तान के मौजूदा हालात के तनाज़ुर मे

कुछ दिनों से भारतीय जनता जिस तरह बेचैनी का शिकार है उसकी मिसाल शायद अंग्रेज़ी दौर में ही मिल पाएगी। उससे पहले मुस्लिम हुक्मरानों ने शायद इस्लाम के लिए कुछ किया हो या न किया हो, मगर यहाँ के तमाम तबक़ो के लिए अदल-ओ-इंसाफ़ से लेकर हुक़ूक़-ओ-मुरा'आत की मुकम्मल पासदारी ज़रूर की है। यही वजह है कि लगभग आठ सौ साल मुसलमानों की हुकूमत रहते हुए भी हमारी तादाद चौदह-पंद्रह प्रतिशत है, जबकि बीजेपी सत्ता संभालने के बाद से ही आरएसएस के साथ मिलकर अपनी तादाद की बढ़ोतरी और मुसलमानों की तादाद कम करने के मंसूबे पर अमल कर रही है। हम मुसलमानों के लिए यह इश्यू फ़िक्र मंदी का इतना बाइस नहीं है जितना कि हमें मुत्तहिद होना और शिर्क-ओ-बिदअत से ताइब होकर ख़ालिस दीन-ए-हनीफ़ पर जमा होना है।

इस मज़मून के ज़रिए मुसलमानों के चंद नज़रियात और शुब्हात की हक़ीक़त टटोलना चाहता हूँ, इस वजह से हिंदुस्तान के मुख़्तलिफ़ सूरते

हाल या मौजूदा सूरते हाल पर हिंदुओं के नज़रियात से सर्फ़-ए-नज़र करता हूँ।

सबसे पहले इस्लामी नुक्ता-ए-नज़र से जम्हूरी मुल्क में एहतिजाज की शरई हैसियत पर मुसलमानों के दरमियाँन जवाज़-ओ-अदम जवाज़ पर अपनी बात रखना चाहता हूँ कि बिला शक मज़ाहिरे हराम हैं, इस बात की वज़ाहत के साथ कि जो उलमा क़ुरआन-ओ-हदीस से इसके जवाद की दलील पेश करते हैं उनका इस्तिदलाल ग़लत है। अब मैं ख़ालिस सियासी पस-मंज़र में बात कर रहा हूँ और सियासत में मुफ़ीद मस्लहत मलहूज़ रख सकते हैं। हम सभी जानते हैं कि जम्हूरियत में अकसरियत की राय से ज़ालिमाना क़ानून भी पास किया जा सकता है, इसकी रोकथाम के लिए जम्हूरी दस्तूर में ही पुर-अमन मुज़ाहिरे को क़ानूनी जवाज़ हासिल है। मुल्क में जब सीएबी (नागरिकता संशोधन विधेयक) लाने की बात हुई तो शुरू में अकसर लोगों की राय थी कि यह ऐवान-ए-हुकूमत (Government House) से पास नहीं हो पाएगी क्योंकि यह तमाम हिंदुस्तानियों के लिए नुक़सान देह है, मगर फिर भी दोनों ऐवान (पार्लियामेंट) से पास होकर एक्ट की शक्ल इख़्तियार कर ली। हिंद में ज़ुल्म के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलंद करने का एक ज़रिया कोर्ट में मुक़दमा दर्ज करना भी है, मगर मौजूदा कोर्ट, वकील, पुलिस, रिपोर्टर सब भाजपा की मुठ्ठी में हैं। हमने बाबरी

मस्जिद का फ़ैसला भी देखा जो सुप्रीम कोर्ट से आया, इसके लिए हमने मुज़ाहिरे नहीं किए थे, कोर्ट पर इंहिसार किए थे, फ़ैसले पर नज़र सानी के लिए दोबारा कोर्ट में अर्ज़ी पेश की गई जिसे यक लख़्त ख़ारिज कर दी गई। ऐसी सूरते हाल में ज़ालिमाना कानून सीएबी (Citizenship Amendment Bill) की रोकथाम के लिए पुर-अमन मुज़ाहिरो के अलावा कोई रास्ता नज़र नहीं आता है। मैं कहना चाहता हूँ कि ये मुज़ाहिरे मौजूदा सूरते हाल में जाइज़ ही नहीं हम सब की अव्वलीन ज़रूरत हैं, बरवक्त इन्हें अपने तमाम कामकाज पर तरजीह देना चाहिए। क्या आपको मालूम नहीं है कि अंग्रेज़ों की ग़ुलामी से आज़ादी दिलाने में उलमा सर-ए-फ़िहरिस्त रहे हैं और उन्होंने मुल्क भर में मुज़ाहिरे किए, इनमें से किसी ने भी इख़्तिलाफ़ नहीं किया सिवाए अंग्रेज़ी ग़ुलाम और मुनाफ़िक़ के। इसमें मज़ीद एक बात का इज़ाफ़ा करता चलूं कि जो लोग इस बिल की हिमायत में हैं उनके साथ हमारा रवैया कैसा होना चाहिए, इस बाबत मेरा ये कहना है कि हमें उनसे त'अर्रुज़ करने की ज़रूरत नहीं है, मुल्क की अकसरियत मुख़ालिफ़त में खड़ी है, हम अकसरियत के साथ मिलकर अदलिया और हुकूमत पर दबाव बना सकते हैं। रही बात औरतों का मुज़ाहिरे में हिस्सा लेना जबकि उन्हें अपने घरों में इस्तिक़रार का हुक्म दिया गया है, तो मैं समझता हूँ यहाँ औरत-मर्द सबकी जान-ओ-माल को

ख़तरा है, अगर औरत का इसमें हिस्सा लेना मुफ़ीद है तो वह भी हिस्सा ले सकती है, जैसे कि उसे भी अपने जान-ओ-माल के लिए दिफ़ा का हक़ है। ताहम शरई हुदूद मलहूज़ रखना चाहिए, मसलन पर्दा और इख़्तिलात (मेल जोल) के मुताल्लिक़।

अब मैं बात करना चाहता हूँ एनआरसी (राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर) की, कई उलमाओं ने बयान दिया है कि एनआरसी क़ुरआन से साबित है, मैं उन उलमाओं से ब-एहतराम गुज़ारिश करना चाहता हूँ कि आप अपने इस मौक़िफ़ पर नज़र-ए-सानी की ज़हमत फ़रमाएँ। एक तरफ़ आप ही कहते हैं बल्कि पूरा मुल्क कह रहा है कि एनआरसी (राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर) मुसलमानों के ख़िलाफ़ नहीं बल्कि पूरे हिंदुस्तानियों के ख़िलाफ़ है फिर तज़ाद बयान क्यों? कहीं आपकी ये बात कट्टर हिंदू पुष्पेंद्र को न मालूम हो जाए तो जिस तरह पहले कहता रहा है कि मोदी को अल्लाह ने भेजा है, अब ये भी कहेगा कि तुम जब क़बूल करते हो एनआरसी क़ुरआन से साबित है फिर उसकी मुख़ालफ़त क्यों करते हो, चुपचाप मुल्क से निकल जाओ। दिक़्क़त नज़र से मसले को समझने की ज़रूरत है कि क़ुरआन में क्या कहा गया है, किस पस-ए-मंज़र में कहा गया है और कौन मुख़ातिब हैं?

सूरह इब्राहीम में अल्लाह ने ज़िक्र किया है कि काफ़िरों ने अपने रसूलों से कहा कि हम तुम्हें मुल्क-बदर कर देंगे या फिर हमारा दीन क़बूल कर लो और दूसरे मक़ामात पर बाज़ अक़्वाम का भी ज़िक्र है जिन्होंने अपनी क़ौम के नबी और उन पर ईमान लाने वालों को मुल्क-बदर करने की धमकी दी, मसलन क़ौम-ए-शुऐब, क़ौम-ए-लूत और मुशरिकीन-ए-मक्का। मेरा सवाल है कि क्या एनआरसी का यही पस-ए-मंज़र और मतलब है जो मतलब मोजूद-ए-आयत में है? क्या हिंदुस्तान के काफ़िरों ने ये हुक्मनामा जारी किया है कि तुम मुसलमान हिंदुस्तान से निकल जाओ या हिंदू मज़हब क़बूल कर लो? बिल्कुल ऐसी बात नहीं है।

पहले ये तो देखें कि हिंदुस्तान में किस क़िस्म के मुसलमानों की अक़सरियत है, दिल्ली में सूफ़ी कांफ्रेंस करने वाले मोदी के साथ मिलकर कांफ्रेंस करते हैं, क्या ये लोग आयत के मिस्दाक़ हो सकते हैं? दूसरी बात ये है कि लफ़्ज़ एनआरसी (National Register of Citizens) मुल्क के तमाम बाशिंदों को शामिल है, इससे सिर्फ़ मुसलमान मुराद नहीं है, इस वजह से एनआरसी (राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर) की दलील क़ुरआन से निकालना न सिर्फ़ इज्तिहादी ख़ता है बल्कि दुश्मन के लिए प्रोपेगेंडा का रास्ता भी हमवार करना है।

इससे मुताल्लिक़ आख़िरी बात कहना चाहता हूँ कि भारत से मुसलमानों को निकाल दिया जाए या उन सबको क़त्ल कर दिया जाए, इस बात से हक़ीक़ी मुसलमान कभी नहीं ख़ौफ़ खाएगा क्योंकि इन दोनों सूरतों में अल्लाह की तरफ़ से हमारे लिए इनाम है। हक़ीक़ी मोमिन को उसकी ज़मीन से निकाला जाए तो अल्लाह उन्हें उनकी सरज़मीन में वापस बुलाता है जैसा कि नबी ﷺ और असहाब-ए-रसूल के साथ हुआ और अगर क़त्ल कर दिया जाए तो वह इस्लाम के लिए क़त्ल होने पर शहीद कहलाएगा लेकिन याद रहे शिर्क करने वाला मक्तूल शहीद नहीं होगा, इस लिए शुरू में कहा हूँ कि हिंदुत्व का मुस्लिम मुख़ालिफ़ एजेंडा उतना फ़िक्रमंदी का बाइस नहीं है जितना कि हम मुसलमानों का अक़ीदा-ए-तौहीद पर एक जगह जमा होना है।

एक मसला मेरा साथ ये पेश आया कि एक साहब ने मेरे ग्रुप इस्लामियात में लिखा कि ये ख़ालिस इस्लामी ग्रुप है फिर भी हिंदुस्तानी मसाइल पर कोई बात-चीत नहीं है, उलमा ख़ामोश हैं, क्या मुसलमान मर जाएँगे तो आरएसएस के गुंडों को मसाइल बताए जाएँगे?

गरचे जुमलों का इंतिख़ाब सही नहीं है, ताहम वो मौजूदा सूरत-ए-हाल पर उलमा की ख़ामोशी से शदीद नालाँ (मजबूर) नज़र आते हैं। मैंने

उन्हें जवाब दिया कि यहां मसले मसाइल की ज़रूरत नहीं बल्कि ज़ालिमाना क़ानून (सीएबी, एनआरसी, एनपीआर) के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलंद करने की ज़रूरत है और ये बात भी सही है कि मुल्क के मुस्लिम तबकात के दीनी रहनुमा, उलमा और तलबा पर जुमूद (काहिली) तारी है, कुछ है तो बस लफ्फ़ाज़ी, लच्छेदार तक़रीर या सेमिनार जबकि अभी वतन को हमारे जिस्म ओ जान की ज़रूरत है जैसे अंग्रेज़ों से आज़ादी के लिए हमारे आबा ओ अजदाद ने क़ुर्बानियाँ दीं।

हिंदुस्तानी सूरत-ए-हाल के तनाज़ुर में सोशल मीडिया पर सरहद पार से कुछ हवाएँ ग़लत सिम्त चलती नज़र आ रही हैं, ये हवाई उड़ाने वाले कुछ ख़ुद को मुवह्हिद कहने वाले भी हैं। बहुत सारे सरहदी गुंचे इस बात पर खिल रहे हैं कि क़ाइद-ए-आ'ज़म रहमतुल्लाह का दो क़ौमी नज़रिया सच होता दिखाई दे रहा है। मैं दूसरों पर कम, मुवह्हिद कहने वालों पर ज़्यादा हैरान-ओ-शशदर हूँ कि किस तरह एक ग़ाली शिया को उसके नाम से नहीं बल्कि क़ाइद-ए-आ'ज़म से पुकारा जाता है और रहमतुल्लाह के ज़रिये दुआ दी जाती है। दूसरी तरफ़ हिंद के आलिम-ए-दीन, मुफ़स्सिर-ए-क़ुरआन मौलाना अबुलकलाम आज़ाद

रहमतुल्लाह का नज़रिया अदम तक़सीम का है। एक मुवह्हिद किस को तरजीह देगा?

सरहदी भाई हमें क़िस्म क़िस्म के ताने दे रहे हैं, उनका ज़िक्र फ़ुज़ूल है, असल मसले की वज़ाहत काफ़ी है। एक मसला हिंदुस्तान से मुसलमानों की मोहब्बत पर सवाल उठाना और दूसरा मसला हिंदुओं का मुल्क कहकर हमें यहाँ से हिजरत कर जाने का मशवरा देना है। मुल्क से मोहब्बत पर सवाल उठाना जहालत और ना-वाक़िफ़ियत की दलील है, वतन से मोहब्बत और उसके इज़हार में कतई कोई हर्ज नहीं है और हिजरत करने का मशवरा देने वालों को पहले अपने अहवाल दुरुस्त करना चाहिए, हमारे लिए अभी हिजरत का वक़्त नहीं आया है। जब इस्लामी अहकाम पर अमल करने से हमें रोका जाएगा तब ये मसला आएगा क़त'-ए-नज़र इस से कि सरहद पार के वज़ीर-ए-आज़म ने मुसलमान मुहाजिर को क़बूल करने से इंकार कर दिया है। या-लिल-'अजब सब को मालूम है कि हिंद के हालात पाक से मुख़्तलिफ हैं फिर भी पाक में बुत परस्त आराम से हैं, उनसे कोई बैर नहीं, क़ादियानियों को एक बड़े शहर रब्वा में पनाह दी गई है जहां उनको अपनी दावत की नश्र-ओ-इशा'अत के लिए अख़बारात व चैनल से लेकर हर क़िस्म का प्लेटफार्म मुहैय्या है, सालाना इजलास इस क़दर

अहम होता है कि पूरी दुनिया से क़ादियानी इसमें शरीक होते हैं और फिर ईसाई व शिया हुकूमत के बड़े-बड़े ओहदों पर फ़ाइज़ हैं जो न सिर्फ़ पाक के लिए ख़तरनाक हैं बल्कि दीन-ए-इस्लाम को भी नुक्सान पहुंचा रहे हैं, यूट्यूब पर सैकड़ों वीडियोज़ मिल जाएंगी जिनमें शिया अल्लाह, रसूल, उम्महातुल मोमिनीन, सहाबा और इस्लाम का मजाक़ उड़ाते नज़र आते हैं। आख़िर इनको मुस्लिम मुल्क में इस क़दर छूट कैसे?

सरहद पार से एक और साहब मिले जो मेरे मज़मून में वारिद एक मिसरा पर एतिराज़ करने लगे, मशहूर शेर का एक मिसरा है "हिंदी हैं वतन है हिंदुस्तान हमारा", इस पर उन्होंने मुझे वुस'अत-नज़री (दूरदर्शिता) पैदा करने की नसीहत की और कुछ एतराज़ात किए मगर लाजवाब ठहरे। इस मिसरा पर उन्होंने कहा "मुस्लिम हैं वतन है सारा जहां हमारा"। मैंने उनसे बा-एहतिराम अर्ज़ किया कि अगर आपसे कोई पूछे किस मुल्क के बाशिंदे हैं तो क्या जवाब होगा? साहब की तरफ़ से अभी तक कोई जवाब नहीं आया।

ख़ैर, मैंने इख़्तिसार से लिखने को सोचा था मगर मज़मून कुछ तवील हो गया। इस मज़मून से इख़्तिलाफ़ किया जा सकता है मगर सलीक़ा इख़्तिलाफ़ मल्हूज़-ए-ख़ातिर रहना चाहिए।

[43].चापलूसीः एक समाजी नासूर

तमल्लुक़ और चापलूसी सालेह मुआशरे (अच्छे समाज) के लिए कैंसर है। चापलूसी में एक चापलूस की इंफ़िरादी मंफ़'अत (व्यक्तिगत लाभ) होता है, जबकि पूरे समाज को केवल नुक़सान ही होता है। यह इतनी मज़्मूम (निंदनीय) हरकत है कि इसे समाज में गंदे और घिनावने-अलक़ाब (घृणित उपनामों) से जाना जाता है, जैसे तलवे चाटना, ख़ुसिया-बरदार (ख़ुशामदी) करना, और चमचागिरी करना वग़ैरहचापलूस के असबाब और मक़ासिद (उद्देश्य) से इसका मंफ़ी पहलू (नकारात्मक पक्ष) वाज़ेह होता है, साथ ही इसका इलाज भी मिल जाता है।

पहला: आराम पसंदी;

कभी-कभी आराम पसंदी आदमी को चापलूस बना देती है, वह बिना मेहनत के चापलूसी की कमाई खाना चाहता है, जबकि इस्लाम ने हमें रोज़ी रोटी कमाने के लिए मेहनत और कोशिश करने पर उभारा है।

हदीस-ए-रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम है:

مَا أَكَلَ أَحَدٌ طَعَامًا قَطُّ خَيْرًا مِنْ أَنْ يَأْكُلَ مِنْ عَمَلِ يَدِهِ، وَإِنَّ نَبِيَّ اللَّهِ دَاوُدَ-عَلَيْهِ السَّلَامُ-كَانَ يَأْكُلُ

مِنْ عَمَلِ يَدِهِ (صحيح البخاري:2072)

तर्जुमा: किसी इंसान ने उस शख़्स से बेहतर रोज़ी नहीं खाई, जो ख़ुद अपने हाथों से कमा कर खाता है और अल्लाह के नबी दाऊद अलैहिस्सलाम अपने हाथ से काम कर खाते थे।

यह हदीस हमें कमाने के लिए मेहनत करने पर उभारती है। जो बिना मेहनत के चापलूसी की कमाई खाना पसंद करते हैं, वे हरामख़ोरी में मुबतला हैं। ऐसे लोगों को तौबा के साथ-साथ रिज़्क़-ए-हलाल कमाने की ज़रूरत है।

दूसरा: शोहरत तलबी;

चापलूसी की एक दूसरी वजह झूठी शोहरत हासिल करना है ताकि लोगों में उसका मक़ाम और मर्तबा बढ़े और जिस की चापलूसी करता है, उसकी नज़र में मोतबर समझा जाए। वाज़ेह रहे इसके बड़े ख़तरात हैं, उनमें झूठी तारीफ़ या किसी के सामने तारीफ़ करना भी है जो इस्लाम की नज़र में मा'यूब ही नही शदीद क़िस्म का मुंकिर है।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है:

إِذَا رَأَيْتُمُ الْمَدَّاحِينَ فَاحْثُوا فِي وُجُوهِهِمُ التُّرَابَ(صحيح مسلم :3002)

तर्जुमा: जब तुम तारीफ़ करने वालों को देखो तो उनके चेहरों पर मिट्टी डाल दो।

यह हाल उन लोगों का है जो सामने सही तारीफ़ करते हैं, तो जो झूठी तारीफ़ करें उनका क्या हाल होगा?

एक बार नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बनू आमिर के वफ़्द को अपने लिए सय्यद का लफ़्ज़ इस्तेमाल करने पर टोक दिया और फ़रमाया:

ولا يَسْتَجْرِيَنَّكم الشيطانُ(صحيح أبي داود:4806)

तर्जुमा: यानी शैतान तुम्हें मेरे सिलसिले में जरी न कर दे। (कि तुम ऐसे कलिमात कह बैठो जो मेरे लिए मुनासिब न हो)

इसके अलावा इसमें मुनाफ़िक़त और दुनिया की तलब भी है, जो ईमान के लिए बहुत ख़तरनाक है।

तीसरा: माहौल का असर;

कुछ लोग माहौल से मुतास्सिर होकर इस बीमारी में मुबतला हो जाते हैं। इसलिए अच्छे माहौल में रहना, अच्छा साथी बनाना और हमेशा अल्लाह की बंदगी करते रहना इंसान को हमेशा ज़िल्लत और रुस्वाई से बचाएगा।

चौथा: दूसरों को तकलीफ़ पहुंचाना;

कई बार दूसरों से बदला लेने या नुक़सान पहुंचाने या दूसरों की चुग़ली इंसान को चापलूसी के रास्ते पर लगा देती है। मोमिन बंदा कभी भी किसी मोमिन को तकलीफ़ नहीं देता। और वह शख़्स हकीक़त में मुसलमान ही नहीं जो दूसरे भाई को तकलीफ़ देता है या नुक़सान पहुंचाता है।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

المسلمُ من سلِم المسلمون من لسانِه ويدِه(صحيح البخاري:6484)

तर्जुमा: मुसलमान वह है जिसकी ज़ुबान और हाथ से मुसलमान बचें रहें।

जो ग़ीबत और चुग़ली करता है, वह भी दूसरे भाई को तकलीफ़ देता है। लिहाज़ा मुसलमान अपनी ज़ुबान और हाथ को ग़लत इस्तेमाल से

बचाए। इस ग़लत इस्तेमाल से दुनिया और आख़िरत दोनों बर्बाद हो सकती हैं।

पांचवां: ऐबपोशी (ऐब छुपाना);

अपना ऐब छुपाने के लिए भी चापलूसी की जाती है। इस क़िस्म का इलाज यह है कि अगर रब का गुनहगार है तो रब से माफ़ी मांग ले और सच्ची तौबा कर ले। और अगर किसी इंसान का गुनहगार है तो फिर उससे माफ़ी मांग ले। यह बड़ा सख़्त मरहला होता है। रब से माफ़ी मांगना आसान है मगर बंदों से माफ़ी को ज़िल्लत समझा जाता है। बंदा यह भूल जाता है कि कल क़यामत में आज से कहीं ज़्यादा ज़लील और रुस्वा होना पड़ेगा जहां रिश्ते-नाते और दोस्त-अहबाब से लेकर पूरी दुनिया वाले होंगे। अक़्लमंद और साहिब-ए-बसीरत वही है जो बड़ी ज़िल्लत से बचने के लिए छोटी ज़िल्लत बर्दाश्त कर ले। हक़ीक़त में अपनी ग़लती की माफ़ी मांगना ज़िल्लत नहीं बल्कि बड़प्पन है, इस बड़प्पन से अल्लाह तआला भी ख़ुश हो जाता है।

छठा: (ओहदा) पद और मंसब की लालच;

मंसब भी क्या चीज़ है, जिसके दिल में इसकी लालच पैदा हो जाए, वह उसको हासिल करने के लिए चापलूसी तो क्या, क़त्ल करने से भी

नहीं चूकता। इसकी मिसाल हमें तारीख़ में बहुत सारी मिल जाएंगी और आए दिन हम इसका मुशाहिदा भी करते हैं। चापलूसी इंसान को सुकून नहीं देती। इसके ज़रिए इंसान मंसब वग़ैरह तो हासिल कर सकता है, लेकिन सुकून नहीं हासिल कर सकता क्योंकि उसका मंसब अच्छी बुनियाद पर नहीं बल्कि चापलूसी पर क़ाइम होता है। हमें अगर सुकून से ज़िंदगी गुज़ारनी है तो दो बातों को सामने रखना होगा:

पहली:

मंसब की चाहत अपने दिल से निकालनी होगी। हां, अगर ख़ुद से मिल जाए तो इसमें कोई बुराई नहीं।

दूसरी:

मुनाफ़िक़त की तंग और तारीक राहों से निकलना पड़ेगा।

चापलूसी ऐसी बीमारी है जो मुनाफ़िक़त की सारी क़िस्में अपने अंदर छुपाए हुए होती है। यानी एक बीमारी से हज़ार बीमारियां जन्म ले लेती हैं, इसलिए हमें किसी भी फ़ायदे की ख़ातिर किसी क़िस्म की चापलूसी नहीं करनी चाहिए।

एक शुब्हा का इज़ाला:

शुब्हा: कुछ लोग चापलूसी को वक़्त की नज़ाकत और मजबूरी का नाम देते हैं, यह कहते हुए कि नौकरी (job) / ओहदा (Designation) बचाने के लिए कभी ऐसा करना मजबूरी बन जाती है, इसलिए ऐसे हालात में चापलूसी करना कोई हरज की बात नहीं। दलील में मुज़्तर (मजबूर) के लिए खिंज़ीर के हलाल होने को पेश करते हैं।

इज़ाला: अगर चापलूसी को मजबूरी का नाम देकर जाइज़ ठहरा लिया जाए तो फिर हलाल और हराम का लिहाज़ किए बग़ैर रोज़ी-रोटी कमाने के लिए कोई भी प्रोफ़ेशन इख़्तियार किया जा सकता है, जबकि इस्लाम में ऐसी कोई दलील नहीं। जहां तक मजबूर के लिए खिंज़ीर के हलाल होने का मसला है, तो यह सिर्फ़ जान बचाने के लिए है। जबकि चापलूस को जान की कोई परवाह नहीं होती है, बल्कि उसे तो कुर्सी और म'ईशत (रोज़ी-रोटी) बचाने की फ़िक्र होती है और याद रखें कि कुर्सी और ओहदा (Designation) बचाने वाला मुज़्तर (मजबूर) नहीं है। हमें सिर्फ़ जाइज़ तरीक़े से म'ईशत (रोज़ी-रोटी) हासिल करनी चाहिए।

===============

[44].ज़मीन और आसमान का मालिक और सारे जहां का बादशाह अल्लाह है

पाक है वह अल्लाह जिसकी बादशाहत हमेशा से ज़मीन और आसमान पर क़ाइम है, उसी के लिए आला सिफ़ात और बुलंदी और पाकीज़गी है। वह हर ऐब से पाक और तमाम क़िस्म की ख़ूबियों का मालिक है। जिस तरह वह सातों आसमान उसके इख़्तियार और कुदरत में हैं, उनमें जिस तरह चाहता तसर्रुफ़ करता है, इसी तरह ज़मीन पर भी उसी की बादशाहत है। बज़ाहिर ज़मीन पर हमें इंसानों में भी मुल्को के बादशाह और हाकिम नज़र आते हैं, मगर वह वक़्ती बादशाह हैं। हक़ीक़ी बादशाह तो ज़मीन और आसमान का ख़ालिक अल्लाह रब्बुल आलमीन ही है। वही खालिक़-ए-कायनात ज़मीन पर जिसे चाहता है बादशाहत अता करता है और जिससे चाहता है हुकूमत छीन लेता है। अल्लाह का फ़रमान है:

قُلِ اللَّهُمَّ مَالِكَ الْمُلْكِ تُؤْتِي الْمُلْكَ مَنْ تَشَاءُ وَتَنْزِعُ الْمُلْكَ مِمَّنْ تَشَاءُ وَتُعِزُّ مَنْ تَشَاءُ وَتُذِلُّ مَنْ تَشَاءُ بِيَدِكَ الْخَيْرُ ۖ إِنَّكَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ (آل عمران: 26)

तर्जुमा: आप कहिए, ऐ अल्लाह! ऐ तमाम जहान के मालिक! तू जिसे चाहे बादशाहत दे, जिसे चाहे सल्तनत छीन ले, जिसे चाहे इज़्ज़त दे और जिसे चाहे ज़िल्लत दे, तेरे ही हाथ में सब भलाई है, बेशक तू हर चीज़ पर क़ादिर है।

यह आयत बताती है कि लोगों की बादशाहत ज़ाइल होने वाली है। आज किसी को अल्लाह बादशाह बनने का मौक़ा देता है, तो कल उसकी जगह किसी और को मुक़र्रर कर देता है, जबकि ख़ुद हमेशा से बादशाह है। वह ज़मीन और आसमान में जिस तरह चाहता है तसर्रुफ़ करता है और अपनी तदबीर से सारे जहान का निज़ाम चलाता है।

तवारीख़ और मुशाहिदे से मालूम होता है कि जब से दुनिया बनी, उस वक्त से लेकर आज तक कोई ऐसा इंसान नहीं गुज़रा जो हमेशा से बादशाह बना बैठा हो, उसकी बादशाहत ख़त्म न हुई हो। बहुत बड़ी सच्चाई यह है कि इंसान की ज़िंदगी महदूद है। वह अपने हिस्से की दुनिया काट कर अल्लाह के हुक्म से मर जाता है। मौत की वजह से फिर इस इंसान का दुनियावी रिश्ता कट जाता है। वह बादशाह रहा हो तो उसकी बादशाहत ख़त्म, ज़मीन और जायदाद का मालिक रहा हो तो उसकी मिल्कियत ख़त्म, बल्कि माल और मना'ल के साथ

तमाम इंसानों से उसका रिश्ता मुनक़ते हो जाता है। भला उस हक़ीक़त का इंसान दुनिया का हक़ीक़ी बादशाह कैसे हो सकता है?

इस बात को एक मिसाल से भी समझें कि सुलतान सलमान को सऊदी अरब की बादशाहत नसीब हुई, तो उसके दो अहवाल हो सकते हैं। एक तो यह हो सकता है कि उसकी ज़िंदगी में ही उसकी बादशाहत ख़त्म हो जाए या दूसरा हाल यह होगा कि मौत से उसकी बादशाहत ख़त्म हो जाए। यह दोनों हालात दुनिया के तमाम गुज़िश्ता हाकिम और बादशाह की रही हैं और आने वाले समय में भी यही हालात सारे दुनियावी बादशाह और हाकिम की रहेंगी।

क़ुरआन में अल्लाह के लिए "मुल्क" (बादशाहत) और "मालिक", "मलिक", "मलीक" बादशाह के मानी में आया है। आपकी ख़िदमत में क़ुरआन मजीद से कुछ आयतें पेश करता हूँ जिनमें अल्लाह बयान करता है कि ज़मीन और आसमान का बादशाह वही है। फ़रमान-ए-इलाही है:

أَلَمْ تَعْلَمْ أَنَّ اللَّهَ لَهُ مُلْكُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ ۗ وَمَا لَكُم مِّن دُونِ اللَّهِ مِن وَلِيٍّ وَلَا نَصِيرٍ

(البقرة:107)

तर्जुमा: क्या तुम्हें इल्म नहीं कि ज़मीन और आसमान की बादशाहत अल्लाह ही के लिए है और अल्लाह के सिवा तुम्हारा कोई वली और मददगार नहीं।

अल्लाह फ़रमाता है:

وَلِلَّهِ مُلْكُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ ۗ وَاللَّهُ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ (آل عمران:189)

तर्जुमा: और आसमानों और ज़मीन की बादशाही अल्लाह ही के लिए है और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।

अल्लाह फ़रमाता है:

وَلِلَّهِ مُلْكُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا ۖ وَإِلَيْهِ الْمَصِيرُ) [المائدة:18]

तर्जुमा: और ज़मीन और आसमान और उनके बीच की हर चीज़ अल्लाह की मिल्कियत है और उसी की ओर लौटना है।

अल्लाह फ़रमाता है:

تَبَارَكَ الَّذِي بِيَدِهِ الْمُلْكُ وَهُوَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ (الملک:1)

तर्जुमा: बरकत वाला है वह (अल्लाह) जिस के हाथ में बादशाही है और हर चीज़ पर क़ुदरत रखने वाला है।

फ़िरौन लोगों से कहता था,

"اليس لی ملك مصر"

क्या मिस्रियों पर मेरी बादशाहत नहीं है?

ज़रा सोचिए कि क्या आज भी मिस्र पर फ़िरौन की बादशाहत क़ाइम है? मूसा अलेहिस्सलाम के ज़माने में ही अल्लाह ने फ़िरौन को डुबो कर मौत दे दी और उसकी हुकूमत का ख़ात्मा कर दिया। उस वक़्त से लेकर आज तक मिस्र पर न जाने कितने लोगों ने हुकूमत की? और लोग आते रहे और जाते रहे, किसी की बादशाहत हमेशा नहीं चली और न चल सकती है। कहां गए? नमरूद और शद्दाद और हामान, सब दुनिया से मिट गए। अल्लाह का फ़रमान है:

ان الحكم إلا لله.(يوسف:٠)

तर्जुमा: फ़रमाँ-रवाई (हुक्मरानी) सिर्फ़ अल्लाह की है।

अल्लाह दुनिया की बादशाहत करने का इख़्तियार नहीं देता, उन्हें ज़मीन पर भी महदूद इख़्तियार नहीं देता, उन्हें ज़मीन पर ही महदूद इख़्तियार देता है और इख़्तियार की मियाद भी महदूद होती है, यानी चंद दिनों के लिए मामूली इख़्तियार दिया जाता है।

ज़मीन के बादशाह चलती हवा, बरसता पानी, गर्जती बिजली और रूनुमा. (ज़ाहिर) होने वाला ज़लज़ले और तूफ़ान नहीं रोक सकते, क्योंकि इन सब चीज़ों पर बादशाहत अल्लाह की है। अल्लाह ही आदम अलेहिस्सलाम के ज़माने में बारिश बरसाता था, सूरज उगाता और डुबाता था, रात और दिन लाता था, ज़िंदगी और मौत देता था और आज भी वही बारिश लाता है, सूरज उगाता और डुबाता है, रात और दिन लाता है और ज़िंदगी और मौत देता है। इसीलिए वही दुनिया का हक़ीक़ी बादशाह है।

ज़मीन और आसमान के सारे खज़ाने भी उसी के हैं, इंसान की न ज़मीन अपनी है, न सोना चांदी अपनी है, यहाँ तक कि उसका अपना जिस्म और बदन भी अपना नहीं। ज़रा ग़ौर करो और अल्लाह की बादशाहत पर ईमान पक्का करो। इंसान का पूरा जिस्म अल्लाह का

दिया हुआ है, फिर उस जिस्म के तमाम आज़ा और तमाम हरकात और सकनात पर अल्लाह की बादशाहत है।

आंखों से देखने पर अल्लाह की बादशाहत है। कानों से सुनने पर अल्लाह की बादशाहत है, नाक से सूंघने और सांस लेने पर अल्लाह की बादशाहत है, हाथ और पांव से हरकत करने, दिल और दिमाग़ से सोचने और सोने जागने तमाम चीज़ों पर अल्लाह की बादशाहत है। इंसान बादशाह क्या मजबूर महज़ है। उसको हर पल अपने ख़ालिक और मालिक की मेहरबानी चाहिए वरना उसके जिस्म का कोई हिस्सा किसी काम का नहीं। अल्लाह चंद लम्हों के लिए आंखों से देखने की क्षमता छीन ले, अंधा बना देगा, कानों से सुनने की क्षमता ले ले, बहरा बना देगा, दिल और दिमाग़ से सोचने और फ़िक्र को छीन ले, पागल बना देगा और जिस्म से रूह निकाल ले, मुर्दा क़रार पाएगा।

पाक है वह परवरदिगार जिसने हमें अनगिनत नेमतों से नवाज़ा है मगर कम ही लोग हैं जो अपने रब की नेमतों की क़द्र करते हैं और उसका कहा मानते हैं।

अल्लाह फ़रमाता है:

وَلِلّٰهِ خَزَائِنُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَلَٰكِنَّ الْمُنَافِقِينَ لَا يَفْقَهُونَ(المنافقون:7)

तर्जुमा: और आसमान और ज़मीन के सारे खज़ाने अल्लाह की मिल्कियत हैं लेकिन ये मुनाफ़िक़ बे-समझ हैं।

और हदीस ए क़ुदसी में अल्लाह फ़रमाता है:

يا عِبَادِي لو أنَّ أَوَّلَكُمْ وَآخِرَكُمْ وإنْسَكُمْ وَجِنَّكُمْ قَامُوا في صَعِيدٍ وَاحِدٍ فَسَأَلُونِي فأَعْطَيْتُ كُلَّ إنْسَانٍ مَسْأَلَتَهُ، ما نَقَصَ ذلكَ ممَّا عِندِي إلَّا كما يَنْقُصُ المِخْيَطُ إذَا أُدْخِلَ البَحْرَ(صحيح مسلم:2577)

तर्जुमा: ऐ मेरे बंदों! अगर तुम सभी अगले, पिछले इंसान और जिन एक मैदान में खड़े हो, फिर मुझसे मांगना शुरू करो और मैं हर एक को जो मांगे दूं, तब भी मेरे पास जो कुछ है वह कम नहीं होगा बल्कि इतना ही जैसे दरिया में सुई डुबोकर निकाल ली जाए।

सुब्हानल्लाह, अल्लाह सारे ख़ज़ानों का मालिक है और जितना चाहे किसी को दे, उसके ख़ज़ाने में कोई कमी नहीं होती फिर भी मुसलमानों की अधिकतर ग़ैर-इलाही से मांगती है। ऐसे में अल्लाह का अज़ाब उन

पर नहीं आएगा तो क्या आएगा? आज अल्लाह बादशाह है साथ ही इंसानों को अच्छाई और बुराई करने की मोहलत भी दी हुई है। कल आख़िरत में जब बादशाह होगा तब उसकी तरफ़ से कोई मोहलत नहीं होगी। नेकियों का बदला अच्छा और ज़ुल्म का बदला बुरा होगा। गरज़ दुनिया में इंसान ने जो कुछ किया होगा, मालिक-ए-यौमुद्दीन (क़यामत के दिन का बादशाह) क़यामत में ज़र्रा-ज़र्रा का हिसाब लेगा और अल्लाह पूछेगा आज किसकी बादशाहत है?

يَوْمَ هُم بَارِزُونَ ۖ لَا يَخْفَىٰ عَلَى اللَّهِ مِنْهُمْ شَيْءٌ ۚ لِّمَنِ الْمُلْكُ الْيَوْمَ ۖ لِلَّهِ الْوَاحِدِ الْقَهَّارِ (غافر:16)

तर्जुमा: जिस दिन सब लोग ज़ाहिर हो जाएंगे, उनकी कोई चीज़ अल्लाह से छिपी न रहेगी। आज किसकी बादशाहत है? सिर्फ़ अल्लाह वाहिद और क़हार की।

इर्शाद ए बारी है:

الْمُلْكُ يَوْمَئِذٍ الْحَقُّ لِلرَّحْمَٰنِ ۚ وَكَانَ يَوْمًا عَلَى الْكَافِرِينَ عَسِيرًا (الفرقان:26)

तर्जुमा: और उस दिन सही तौर पर बादशाही सिर्फ़ रहमान की होगी और वह दिन काफ़िरों पर बड़ा भारी होगा। (फ़ुरक़ान:26)

नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

يَطْوِي اللَّهُ عزَّ وجلَّ السَّمواتِ يومَ القِيامَةِ، ثُمَّ يَأْخُذُهُنَّ بيَدِهِ اليُمْنَى، ثُمَّ يقولُ: أنا المَلِكُ، أيْنَ الجَبَّارُونَ؟ أيْنَ المُتَكَبِّرُونَ. ثُمَّ يَطْوِي الأرَضِينَ بشِمالِهِ، ثُمَّ يقولُ: أنا المَلِكُ أيْنَ الجَبَّارُونَ؟ أيْنَ المُتَكَبِّرُونَ؟(صحيح مسلم :2788)

तर्जुमा: अल्लाह क़यामत के दिन आसमानों को लपेट लेगा और उन्हें दाहिने हाथ में ले लेगा, फिर फ़रमाएगा मैं बादशाह हूँ, कहां हैं ज़ौर वाले? कहां हैं घमंड करने वाले? फिर बाएं हाथ से ज़मीन को लपेट लेगा (जो दाहिने हाथ की मिस्ल है और इसी वास्ते दूसरी हदीस में है कि परवरदिगार के दोनों हाथ दाहिने हैं)। फिर फ़रमाएगा मैं बादशाह हूँ, कहां हैं ज़ौर वाले? कहां हैं बढ़ाई करने वाले?

इस हदीस की रोशनी में अल्लाह की बेमिसाल कुदरत और उसकी अज़ीम बादशाहत के बारे में ग़ौर फ़रमाएं कि अल्लाह क़यामत वाले दिन इस क़दर बुलंद और ऊंचे सात तबक़ो वाले आसमान (जिसमें चाँद ज़मीन से 50 गुना बड़ा और सूरज ज़मीन से 13,00,000 गुना बड़ा है) को लपेट कर दाहिने हाथ में और सात तबक़ो वाली ज़मीन खज़ानों समेत दूसरे हाथ में ले लेगा। इस दिन दुनिया के ज़ालिम बादशाहों का क्या हाल होगा? नबी ﷺ इस बाबत बयान फ़रमाते हैं:

أشدُّ الناسِ يومَ القيامةِ عذابًا إمامٌ جائِرٌ(صحيح الجامع:1001)

तर्जुमा: क़यामत के दिन ज़ालिम बादशाह को सबसे ज़्यादा शदीद अज़ाब दिया जाएगा।

मज़कूरा बाला तमाम बातों का ख़ुलासा यह है कि अल्लाह ही ज़मीन और आसमान का मालिक और सारे जहान का बादशाह है। उसकी बादशाहत हमेशा से है और हमेशा रहेगी। उसने हमें और पूरी कायनात को पैदा किया है, लिहाज़ा हमें हमेशा उससे डरना चाहिए और उसने अपनी बंदगी के ख़ातिर हमें पैदा किया है, सो ख़ालिस उसकी बंदगी करनी चाहिए और उसके साथ किसी को भी ज़र्रा बराबर शरीक नहीं करना चाहिए।

दूसरी बात यह है कि ज़मीन और आसमान के सारे खज़ानों का मालिक अकेला अल्लाह है और वही अपनी तद्बीर से सारी मख़लूक़ की परवरिश करता है, इसलिए हमें जिस चीज़ की भी ज़रूरत पड़े अपने रब से मांगनी चाहिए, वह अपने मोहताज मांगने वाले बंदों को महरूम नहीं करता।

तीसरी और आख़िरी बात यह है कि अगर हम में से किसी को अल्लाह मुल्क का हाकिम बनाए या गाँव और घर का सरबराह बनाए, तो कभी भी अपने मातहतों पर ज़ुल्म न करें। याद रखे, अल्लाह की नज़रों से कुछ भी ओझल नहीं है और ज़ुल्म और फ़साद करने वालों को वह दुनिया में भी सज़ा देगा। साथ ही यह भी हमें शु'ऊर होना चाहिए कि अल्लाह के फ़ज़ल से ही किसी को जाह, मनसब, दौलत और सल्तनत मिलती है, लिहाज़ा न कभी घमंड करें और न ही अपने जाह (रूतबा) और मनसब (पद) और दौलत और सल्तनत का ग़लत इस्तेमाल करें। दुनिया की नेमत आंख खुली रहने तक है, निगाह बंद होते ही सब कुछ चला जाता है और अंधेरा छा जाता है।

[45].ज़ालिम फ़िरौन पर अल्लाह का अज़ाब और इबरत और नसीहत

ज़ुल्म अंधेरा है, ज़मीन में फ़साद-फ़ी-अल-अर्ज़ (अशांति) है, और कुरह-अर्ज़ (ज़मीन) पर दुनिया का सबसे बड़ा गुनाह है। अल्लाह शिर्क के अलावा अपने नफ़्सो पर और अल्लाह के हक़ में हुए जुल्म और ज़्यादती को चाहे तो माफ़ कर सकता है, मगर बंदों के हक़ में ज़ुल्म और ज़्यादती करने वालों को हरगिज़ माफ़ नहीं करेगा। भले दुनिया की अदालतों में ऐसे ज़ालिमों के लिए कोई सज़ा न हो, मगर ख़ालिक-ए-काइनात की अदालत से दुनिया की सज़ा मुक़र्रर होती है और ज़रूर उसे मिलकर रहती है।

आख़िरत में तो अलग से सज़ा मुक़र्रर है ही। इंसानी तारीख़ ज़ालिमों की इब्रतनाक सज़ाओं से भरी पड़ी है। मैं यहाँ क़ुरआन-ए-मुक़द्दस के हवाले से दुनिया के ज़ालिम तरीन इंसान फ़िरौन के ज़ुल्म और इस्तिब्दाद (अत्याचार) और उस पर अल्लाह के क़हर और अज़ाब का ज़िक्र करना चाहता हूँ, जिसमें दुनिया वालों के लिए इबरत और नसीहत है मगर कम ही लोग नसीहत हासिल करते हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

فاليوم ننجيك ببدنك لتكون لمن خلفك آية وان كثيرا من الناس عن آياتنا لغافلون.(يونس:92)

तर्जुमा: पस आज सिर्फ़ तेरी लाश को निजात देंगे ताकि तू उनके लिए निशाने इबरत हो जो तेरे बाद हैं और हक़ीक़त यह है कि बहुत से आदमी हमारी निशानियों से ग़ाफ़िल हैं।

बनी इस्राइल, जिस की तरफ़ मूसा (अलैहिस्सलाम) भेजे गए, दरअसल याक़ूब (अलैहिस्सलाम) की 12 औलाद से चलने वाली 12 क़बीलों की नस्ले हैं जो मिस्र में थीं। अल्लाह ने बनी इस्राइल को बहुत सारी नेमतों से नवाज़ा था, उनको पूरी दुनिया पर बर्तरी और हुकूमत अता फ़रमाई थी। अल्लाह का फ़रमान है:

يا بني اسرآئيل اذكروا نعمتي التي أنعمت عليكم واني فضلتكم على العالمين.(البقرة:47)

तर्जुमा: ऐ औलाद-ए-याक़ूब, मेरी उस नेमत को याद करो जो मैंने तुम पर इनाम की और मैंने तुम्हें तमाम जहानों पर फ़ज़ीलत दी।

मिस्र में क़िब्तियों की भी क़ौम थी, जिससे फ़िरौन यानी बादशाह हुआ करता था। जब बनी इस्राइल ने अल्लाह के अहकाम की नाफ़रमानी

की हद से तजावुज़ किया तो अल्लाह ने उन पर 4 सदियों तक ज़ालिम फ़िरौन को मुसल्लत कर दिया। फ़िरौन ने बनी इस्राइल को अपना गुलाम बना रखा था और उनमें से कोई यहाँ से भाग कर भी नहीं जा सकता था। दोबारा अल्लाह ने बनी इस्राइल पर मेहरबानी की और मूसा (अलैहिस्सलाम) को उनकी तरफ़ नबी बनाकर भेजा और आपकी बदौलत फ़िरौन के ज़ुल्म से निजात दी।

मूसा (अलैहिस्सलाम) और फ़िरौन का क़िस्सा बड़ा लंबा है। सुरह क़सस, सुरह शुअरा और दीगर मुत'अद्दिद मक़ामात पर इसकी तफ़सील मज़कूर है। मैं क़ुरआन और तफ़सीरो के हवाले से मुख़्तसर तौर पर यहाँ मूसा (अलैहिस्सलाम) का क़िस्सा और बनी इस्राइल का फ़िरौन के ज़ुल्म से निजात बयान कर देता हूँ। मूसा (अलैहिस्सलाम) की पैदाइश से पहले नजूमियों और काहिनों ने फ़िरौन को ख़बर दी के बनी इस्राइल में एक लड़का पैदा होने वाला है जो उसकी हुकूमत और सल्तनत का ख़ात्मा करने वाला है। इस वजह से फ़िरौन ने बनी इस्राइल के हर लड़के को क़त्ल करवाना शुरू कर दिया।क़त्ल की वजह जब ख़िदमत गुज़ार बनी इस्राइल की कमी होने लगी तो फिर एक साल छोड़ दिया करता था।

मूसा अलैहिस्सलाम के बड़े भाई हारून की पैदाइश क़त्ल वाले साल से पहले और मूसा (अलैहिस्सलाम) की पैदाइश क़त्ल वाले साल हुई। अल्लाह ने मूसा (अलैहिस्सलाम) की माँ की तरफ़ वह्यी की कि इसे ताबूत में रख कर दरिया में बहा दो और कोई ग़म न करो, साथ ही यह वादा भी किया के इस बच्चे को उसके पास दुबारा लौटाएगा और उसे पैग़म्बर भी बनाएगा। माँ ने अल्लाह के हुक्म की तामील की और बेटी को लोगों की नज़रों से दूर हो कर उसे देखते रहने की ताकीद की। क़ुदरत का करिश्मा के इस ताबूत पर फ़िरौन के हवारीयों की नज़र पड़ती है। वह उसे दरबार में ले आते हैं, लड़का देख कर फ़िरौन ने क़त्ल का हुक्म दिया मगर फ़िरौन की बीवी ने यह कह कर बचा लिया कि शायद यह हमारे किसी काम आए या इसे हम अपना बेटा बना लें।

क़ुदरत ने बच्चे को माँ का ही दूध पिलाया क्योंकि उसने किसी का दूध पिया ही नहीं। फ़िरौन ने जिसे अपने हलाक करने वाले की तलाश थी, उसके क़त्ल के दर पे था और इस काम के लिए सैकड़ों लड़कों का क़त्ल करवा चुका था, उस वक्त वह अपने महल में उसी की परवरिश कर रहा था। यह भी क़ुदरत का अज़ीम करिश्मा है। जवानी तक वहाँ पले बढ़े। एक रोज़ उन्होंने एक क़िब्ती को बनी इस्राइल पर

ज़ुल्म करते देखा, पहले उसे मना किया, बाज़ न आने पर एक मुक्का रसीद कर दिया और क़िब्ती उसी वक्त मर गया।

इस डर से कि कहीं फ़िरौन क़िब्ती को क़त्ल करने के जुर्म में हमें क़त्ल न करवा दे, वह मदीयन चले गए। वहाँ एक कुएं पर लोगों को जानवर को पानी पिलाते हुए देखा। उनके 2 लड़कियाँ भी थीं जो काफ़ी देर से इंतज़ार कर रही थीं। मूसा (अलैहिस्सलाम) ने वजह पूछी तो उन्होंने जवाब दिया के हम सब से आख़िर में अपने जानवरों को पिलाएंगे। मूसा (अलैहिस्सलाम) ने पानी पिलाने पर उनकी बग़ैर उजरत मदद की। लड़कियाँ घर जा कर अपने वालिद को आपके बारे में बताया और अमानतदारी और क़वी होने की सिफ़त बता कर अपने यहाँ काम पर रखने की सलाह दी। बाप ने मूसा (अलैहिस्सलाम) को तलब किया और 8 साल ख़िदमत करने पर अपनी एक बेटी से निकाह का वादा किया, अगर 10 साल पूरे करे तो यह एहसान होगा।

मूसा (अलैहिस्सलाम) राज़ी हो गए। जब ख़िदमत करते-करते मुद्दत पूरी हो गई तो बूढ़े बाप ने आप से एक बेटी का निकाह कर दिया। अब मूसा (अलैहिस्सलाम) अपने अहल और माल के साथ वापिस लौट रहे थे कि रास्ते में आग की तलाश में एक जगह रुक गए। बीवी को

इंतिज़ार करने को कहा और ख़ुद उस जगह आग लेने चले गए जहां से रोशनी नज़र आ रही थी। वहां पहुंचने पर अल्लाह ने मूसा (अलैहिस्सलाम) से कलाम किया और आपको नुबूवत से सरफ़राज़ फ़रमा कर फ़िरौन की तरफ़ जा कर नरमी से तबलीग़ करने का हुक्म दिया। अल्लाह ने आपको बतौर-ए-मौजिज़ा 9 निशानियाँ अता फ़रमाई। मूसा (अलैहिस्सलाम) के अंदर एक ख़ौफ़ तो यह था कि उन्होंने क़िब्ती को मार दिया था और दूसरा ख़ौफ़ यह था कि फ़िरौन बड़ा ज़ालिम था, वह रब होने का दावा करता था। साथ ही आपकी ज़बान में लुक्नत (हकलापन) भी थी, इस लिए अल्लाह से 4 बातों की दुआ की। अल्लाह फ़रमाता है:

قال رب اشرح لي صدري ويسر لي امري واحلل عقدة من لساني يفقهوا قولي واجعل لي وزيرا من اهلي هارون اخي اشدد به ازري واشركه في امري.(طه: 3225)

तर्जुमा: मूसा ने कहा, ऐ मेरे परवर्दिगार (1) मेरा सीना मेरे लिए खोल दे। (2) और मेरे काम को मुझ पर आसान कर दे। (3) और मेरी ज़बान की गिरह भी खोल दे ताकि लोग मेरी बात अच्छी तरह समझ सके। (4) और मेरा वज़ीर मेरे कुन्बे में से कर दे यानी मेरे भाई हारून को। तो उससे मेरी कमर कस दे और उसे मेरा शरीक-ए-कार (मददगार) कर दे।

दोनों भाई मूसा और हारून ने फ़िरौन को रब्बुल आलमीन का पैग़ाम सुनाया और अल्लाह वहदहु ला शरीक की इबादत की तरफ़ बुलाया मगर उसने सरकशी की और नुबुव्वत की निशानियाँ तलब की। मूसा अलैहिस्सलाम ने अपने नबी होने का मौजिज़ा पेश किया। लाठी का सांप बन जाना, बग़ल में हाथ लगाने से उसमें चमक पैदा होना। फ़िरौन ने जादूगरी कहकर इसका भी इनकार किया।

फिर फ़िरौन ने अपने माहिर जादूगरों से मूसा अलैहिस्सलाम का मुक़ाबला करवाया। मुक़ाबले में पहले फ़िरौन के जादूगरों ने अपनी लाठियाँ और रस्सियाँ ज़मीन पर फेंकी और आख़िर में मूसा अलैहिस्सलाम ने अपनी लाठी फेंकी जो अजदहा बनकर जादूगरों के तमाम आलात निगल गई। यह मंज़र देखकर सारे जादूगर मूसा और हारून के रब पर ईमान ले आए। फ़िरौन अब भी ईमान न लाया और ख़ुद को ही माबूद कहलाता रहा। लोगों से कहता, "أنا ربكم الأعلى" यानी मैं तुम सबका सबसे बड़ा माबूद हूँ। यह फ़िरौन का सबसे बड़ा गुनाह था। इसके अलावा क़ुरआन ने फ़िरौन को सरकशी करने वाला, बनी इस्राइल पर ज़ुल्म और सितम ढाने वाला, उनका क़त्ल करने वाला और फ़साद मचाने वाला कहा है। अल्लाह फ़रमाता है:

"ان فرعون علا في الأرض وجعل أهلها شيعا يستضعف طائفة منهم يذبح أبناءهم ويستحيي نساءهم انه كان من المفسدين". القصص:4)

तर्जुमा: यक़ीनन फ़िरौन ने ज़मीन में सरकशी कर रखी थी और वहाँ के लोगों को गिरोह गिरोह बना रखा था और उनमें से एक फ़िरक़े को कमज़ोर कर रखा था और उनके लड़कों को तो ज़िब्ह कर डालता था और उनकी लड़कियों को ज़िंदा छोड़ देता था। बेशक वह था ही मुफ़सिदों में से।

इसके अलावा रसूल को झुठलाने वाले फ़िरौन और उसके लश्कर को क़ुरआन ने कहीं ज़ालिम क़ौम कहा, कहीं फ़ासिक़ क़ौम कहा, कहीं क़ाहिर कहा, कहीं सरकशी और बाग़ी और कहीं मुतकब्बिर कहा। एक तरफ़ फ़िरौन अपने इन मज़ालिम (ज़ुल्म-ओ-सितम) की वजह से अल्लाह की अदालत से दर्दनाक अज़ाब का मुस्तहिक़ था ही, दूसरी तरफ मूसा अलैहिस्सलाम ने उसकी हलाकत की अल्लाह से दुआ भी माँगी। अल्लाह फ़रमाता है:

"وقال موسى ربنا آتيت فرعون وملاه زينة واموالا في الحياة الدنيا ربنا ليضلوا عن سبيلك ربنا اطمس على أموالهم واشدد على قلوبهم فلا يؤمنوا حتى يروا العذاب الاليم". [يونس: 88]

तर्जुमा: और मूसा ने अर्ज़ किया कि ऐ हमारे रब! तू ने फ़िरौन को और उसके सरदारों को शानदार ज़ीनत और तरह-तरह के माल दुनियावी ज़िंदगी में दिए। ऐ हमारे रब! (इसी वास्ते दिए हैं कि) वह तेरी राह से गुमराह करें। ऐ हमारे रब! उनके माल को नीस्त-नाबूद (तबाह) कर दे और उनके दिलों को सख़्त कर दे। फिर यह ईमान न लाने पाएं जब तक कि दर्दनाक अज़ाब को न देख लें।

फिर क्या था, दुनिया में ही फ़िरौन और उसके लश्कर पर अल्लाह की तरफ़ से क़िस्म क़िस्म का अज़ाब आना शुरू हो गया। क़हत साली, फलों की कमी, तूफ़ान, टिड्डियाँ, घुन का कीड़ा, मेंढक, और ख़ून का अज़ाब आया। यहाँ तक कि उनके साख़्ता-पर्दाख़्ता (बनाया- सँवारा) कारख़ाने और ऊँची ऊँची इमारतों को भी दरहम बरहम कर दिया गया। फ़िरौन मूसा अलैहिस्सलाम से अज़ाब हटाने के बदले बनी इस्राइल की आज़ादी का वादा करता मगर कभी निभाता नहीं।

फ़िरौन और उसके लश्कर पर दुनिया का सबसे बड़ा अज़ाब यह आया कि जब मूसा अलैहिस्सलाम बनी इस्राइल को लेकर एक दिन अचानक भाग निकले और फ़िरौन अपने लश्कर के साथ उनका पीछा किया। दरिया के पास पहुँचकर मूसा अलैहिस्सलाम ने अल्लाह के हुक्म से

पानी पर लाठी मारी और 12 रास्ते बन गए। इस तरह मूसा अलैहिस्सलाम और उनकी क़ौम उन रास्तों से पार निकलकर हमेशा के लिए फ़िरौनी ज़ुल्म और सितम से निजात पा गए। और जब फ़िरौन और उसका लश्कर दरिया उबूर करने लगे, तो अल्लाह ने पानी को आपस में मिलाकर डुबो दिया और सबको एक आन (वक्त) में मौत की नींद सुला दिया। अल्लाह का फ़रमान है:

"واذا فرقنا بكم البحر فانجينا كم واغرقنا آل فرعون وانتم تنظرون".

(البقرة: 50)

तर्जुमा: और जब हमने तुम्हारे लिए दरिया चीर दिया और तुम्हें उस से पार कर दिया और फ़िरौनीयों को तुम्हारी नज़रों के सामने उसमें डुबो दिया।

तिरमिज़ी (3108) की सही हदीस में है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ज़िक्र किया कि जब फ़िरौन डूबने लगा, तो जिब्रईल अलैहिस्सलाम फ़िरौन के मुँह में मिट्टी ठूँसने लगे इस डर से कि वह कहीं "لا اله الا الله" न कह दे, तो अल्लाह को उस पर रहम आ जाए।

फ़िरौन को उसके ज़ुल्म के बदले दुनिया में मुख़्तलिफ़ क़िस्म की सज़ा मिली, दर्दनाक तरीक़े से पानी में डुबो दिया गया। मरते वक्त फ़रिश्ते

उसके मुँह में दरिया की मिट्टी ठूँसते रहे। मज़लूम के सामने ज़ालिम फ़िरौन को कैफ़र-ए-किरदार (बुरे कर्मों का बदला/किए की सज़ा) तक पहुँचाया गया, यानी उसको डुबोकर मारा गया। मरकर भी क़यामत तक (आलम ए बरज़ख़ में) फ़िरौन और उसकी आल को अज़ाब मिलता रहेगा और क़यामत में भी सख़्त तरीन अज़ाब दिया जाएगा। अल्लाह का फ़रमान है:

"النار يعرضون عليها غدوا وعشيا ويوم تقوم الساعة ادخلوا آل فرعون أشد العذاب".

(غافر: 46)

तर्जुमा: आग है जिसके सामने यह हर सुबह शाम लाए जाते हैं और जिस दिन क़यामत क़ायम होगी (फ़रमान होगा कि) फ़िरौनीयों को सख़्त तरीन अज़ाब में डाल दो।

इस पूरे वाक़ि'आ से एक अहम नसीहत मिलती है कि अल्लाह ने मूसा अलैहिस्सलाम और आप पर ईमान लाने वालों को दुनिया के सबसे ज़ालिम हुक्मरान से निजात दी। यहाँ तक कि फ़िरौन की बीवी आसिया भी ईमान ले आती है। फ़िरौन से निजात और जन्नत में घर के लिए अल्लाह से दुआ करती है।

ज़ालिम फिरौन की हलाकत और तबाही के मुताल्लिक़ अल्लाह ने फ़रमाया कि देखो ज़ालिम का क्या अंजाम हुआ:

"فاخذناه وجنوده فنبذناهم في اليم فانظر كيف كان عاقبة الظالمين".

(القصص: 40)

तर्जुमा: बिलआख़िर हमने उसे और उसके लश्कर को पकड़ लिया और दरिया में डुबो दिया। अब देख लो कि उन गुनहगारों का अंजाम कैसा कुछ हुआ?

एक दूसरी जगह अल्लाह ने फ़रमाया:

"ثم بعثنا من بعدهم موسى بآياتنا إلى فرعون وملئه فظلموا بها فانظر كيف كان عاقبة المفسدين".[الأعراف: 103]

तर्जुमा: फिर उनके बाद हमने मूसा को अपने दलाईल देकर फ़िरौन और उसके उमरा (हाकिम/दौलतमंदो) के पास भेजा, मगर उन लोगों ने उनका बिल्कुल हक़ अदा न किया। पस देखो उन मुफ़सिदों का क्या अंजाम हुआ।

नसीहत से मुताल्लिक एक आख़री बात अर्ज़ करना चाहता हूँ कि अल्लाह ने फ़िरौन की लाश महफ़ूज़ रखने का वादा किया है ताकि बाद वालों के लिए नसीहत रहे। फ़रमान ए इलाही है:

"فاليوم ننجيك ببدنك لتكون لمن خلفك آية وان كثيرا من الناس عن آياتنا لغافلون".[يونس: 92]

तर्जुमा: पस आज हम तेरी लाश को निजात देंगे ताकि तू उनके लिए निशाने इबरत हो जो तेरे बाद हैं और हक़ीक़त यह है कि बहुत से आदमी हमारी निशानियों से ग़ाफ़िल हैं। इस आयत के तनाज़ुर में मिस्र के म्यूज़ियम में मौजूद ममी की हुई लाश को अक्सर लोग फ़िरौन-ए-मूसा कहते हैं। वाज़ेह रहे कि यह सिर्फ़ एक साइंस की तहक़ीक़ है, इस लिए इस लाश को हतमी तौर पर फ़िरौन की लाश नहीं कह सकते हैं और ना ही हतमी तौर पर यह कह सकते हैं कि लाश की हिफ़ाज़त से मक़सूद क़यामत तक हिफ़ाज़त है क्योंकि आयत में इसकी सराहत नहीं है।

===============

[46].ज़ियाफ़त (मेहमान नवाज़ी) की अहमियत और इसके आदाब

मेहमान नवाज़ी की इस्लाम में बड़ी क़दर और मंज़िलत (हैसियत) है मगर आज के मादी दौर (भौतिक युग) में मुसलमान इस सिफ़त से आरी होते नज़र आ रहे हैं। थोड़े बहुत होंगे जिन्हें अल्लाह की तौफ़ीक़ से मेहमान नवाज़ी का शरफ़ हासिल हो जाता है जबकि अक्सर के हिस्से में महरूमी आती है। ऐसा नहीं है कि आज खाने पीने की कमी है या दावतें और तक़रीबात मुन'अक़िद नहीं होतीं। इस मामले में तो हम सब बहुत आगे हैं मगर वह दावत कहाँ नज़र आती है जिसमें कोई भूखा शामिल हो, कोई फ़क़ी और मिस्कीन शरीक हुआ हो या उसमें किसी यतीम को बुलाया गया हो। आजकल की अक्सर दावतें अबू हुरैरा रज़ि० अन्हु के इस फ़रमान के मिस्दाक़ हैं।

عن أبي هريرةَ أنه كان يقول : بِئْسَ الطعامُ طعامُ الوليمةِ يُدعى إليه الأغنياءُ ويُترك المساكين،فمن لم يأتِ الدَّعوةِ، فقد عصى اللهَ ورسولَه. (صحيح مسلم:1432)

तर्जुमा: अबू हुरैरा रज़ि० अन्हु कहते हैं, खाने में बुरा खाना उस वलीमा का खाना है जिसमें अमीर बुलाए जाएं और मिसकीनों को न बुलाया

जाए। तो जो दावत में न हाज़िर हो उसने नाफ़रमानी की अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की।

क़ुरआन में एक अंसारी सहाबी की ज़ियाफ़त ((किसी को मेहमान के रूप में) खाना खिलाना) का ज़िक्र है। आइए उसे पढ़कर अपना ईमान ताज़ा करते हैं। फ़रमान-ए-इलाही है:

ويؤثرونوَيُؤْثِرُونَ عَلَىٰٓ أَنفُسِهِمْ وَلَوْ كَانَ بِهِمْ خَصَاصَةٌۚ وَمَن يُوقَ شُحَّ نَفْسِهِۦ فَأُولَٰٓئِكَ هُمُ ٱلْمُفْلِحُونَ (الحشر: 9)

तर्जुमा: और वे अपने ऊपर उन्हें तरजीह देते हैं जबकि वे ख़ुद कितनी ही सख़्त तंगी में हों। और जो भी अपने नफ़्स के बुखल से बचा लिया गया, वही असल कामयाब है।

इस आयत के शान-ए-नुज़ूल में सहीह बुख़ारी में निहायत ही ईमान अफ़रोज़ वाक़िआ मज़कूर है। चुनांचे अबू हुरैरा रज़ि० अन्हु ने बयान किया कि रसूल ﷺ की ख़िदमत में एक साहब ख़ुद हाज़िर हुए और अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह, मैं फ़ाक़ा से हूँ। नबी ﷺ ने उन्हें अज़्वाज-ए-मुतह्हरात के पास भेजा कि वे आपकी दावत करें लेकिन उनके

पास कोई चीज़ खाने की नहीं थी। आप ﷺ ने फ़रमाया कि क्या कोई शख़्स ऐसा नहीं जो आज रात इस मेहमान की मेज़बानी करे? अल्लाह उस पर रहम करेगा। इस पर एक अंसारी सहाबी (अबू तल्हा रज़ि० अन्हु) खड़े हुए और अर्ज़ किया, या रसूलुल्लाह, ये आज मेरे मेहमान हैं। फिर वे उन्हें अपने साथ घर ले गए और अपनी बीवी से कहा कि ये रसूल ﷺ के मेहमान हैं, कोई चीज़ उनसे बचा के ना रखना। बीवी ने कहा, अल्लाह की क़सम, मेरे पास इस वक्त बच्चों के खाने के सिवा और कोई चीज़ नहीं है। अंसारी सहाबी ने कहा, अगर बच्चे खाना मांगे तो उन्हें सुला दो और आओ ये चिराग़ भी बुझा दो, आज रात हम भूखे ही रह लेंगे। बीवी ने ऐसा ही किया। फिर वह अंसारी सहाबी सुबह के वक्त रसूल ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुए तो नबी ﷺ ने फ़रमाया कि अल्लाह ने फुलाँ (अंसारी सहाबी) और उनकी बीवी (के काम) को पसंद फ़रमाया। या (आप ﷺ ने यह फ़रमाया कि) अल्लाह मुस्कुराया। फिर अल्लाह ने यह आयत नाज़िल की:

«ويؤثرون على أنفسهم ولو كان بهم خصاصة»

यानि और अपने ऊपर दूसरों को तरजीह देते हैं, अगरचे ख़ुद फ़ाक़ा में हों। (सहीह बुख़ारी: 4889)

सुबहान-अल्लाह, कितने अज़ीम हैं वो मेज़बान जिनकी तारीफ़ अल्लाह करे और उनका ज़िक्र कुरआन में करे। खाना खिलाने और मेज़बानी करने के बड़े फ़ज़ाइल हैं और यह बड़े सवाब का काम है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

خيرُكُمْ مَنْ أَطْعَمَ الطعامَ ، وردَّ السلامَ(صحيح الجامع:3318)

तर्जुमा: तुम में से सबसे बेहतर आदमी वह है जो खाना खिलाता है और सलाम का जवाब देता है।

और जो ज़ियाफ़त नहीं करता वह ख़ैर से महरूम है। नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

لا خيرَ فِيمَنْ لا يُضِيفُ(صحيح الجامع:7492)

तर्जुमा: उस शख़्स में कोई भलाई नहीं है जो मेज़बानी न करे।

यहाँ तक कि रसूल ﷺ ने इरशाद फ़रमाया कि अगर कोई ज़ियाफ़त से इनकार करे तो जबरन अपनी ज़ियाफ़त वसूल करो। फ़रमान-ए-नबवी है:

إن نزلتم بقومٍ ، فأُمِرَ لكم بما ينبغي للضيفِ فاقْبَلُوا ، فإن لم يَفعلوا ، فخذوا منهم حقَّ الضيفِ(صحيح البخاري:2461)

तर्जुमा: अगर तुम्हारा क़ियाम किसी क़बीले में हो और तुमसे ऐसा बर्ताव किया जाए जो किसी मेहमान के लिए मुनासिब है तो तुम उसे क़बूल कर लो। लेकिन अगर वह न करे तो तुम ख़ुद मेहमानी का हक़ उनसे वसूल कर लो।

इसीलिए अलग-अलग उलमा ने मेज़बान पर ज़ियाफ़त को वाजिब कहा है। यह इस्तिदलाल मज़कूरा हदीस के अलावा और अहादीस से किया जाता है। उनमें से एक यह है। नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

مَن كان يُؤمِنُ باللهِ واليومِ الآخِرِ فلْيُكرِمْ جارَهُ، ومَن كان يُؤمِنُ باللهِ واليومِ الآخِرِ فلْيُكرِمْ ضَيْفَهُ جائِزَتَه. قال: وما جائِزَتُه يا رسولَ اللهِ؟ قال: يومٌ وليلةٌ، والضِّيافَةُ ثلاثةُ أيامٍ، فما كان وَراءَ ذلك فهو صدَقَةٌ عليه(صحيح البخاري:6019)

तर्जुमा: जो शख़्स अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता हो, वह अपने पड़ोसी का इकराम करे। और जो शख़्स अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता हो, वह अपने मेहमान की दस्तूर के मुताबिक़ हर तरह इज्ज़त करे। पूछा या रसूलुल्लाह, दस्तूर के

मुताबिक़ कब तक है? फ़रमाया एक दिन और एक रात। और मेज़बानी 3 दिन की है और जो उसके बाद हो, वह उसके लिए सदक़ा है।

इस हदीस में मेहमान के मेज़बान पर 3 मरातिब (मर्तबे) का ज़िक्र है। पहला मर्तबा यह है कि 1 दिन और 1 रात मेहमान की ज़ियाफ़त करना वाजिब है। दूसरा मर्तबा यह है कि दूसरे और तीसरे दिन की ज़ियाफ़त मुस्तहब है। इस बात को दूसरे लफ्ज़ों में ऐसे भी कह सकते हैं कि कामिल ज़ियाफ़त 3 दिन है। और तीसरा मर्तबा 3 दिन के बाद की मेज़बानी सदक़ा है।

यहाँ पर अहम बात यह भी जान ली जाए कि हदीस में मौजूद ज़ईफ़ (मेहमान) से मुराद सफ़र से आने वाला कोई मुसाफ़िर है, चाहे रिश्तेदार हो या ग़ैर रिश्तेदार, अजनबी ही क्यों न हो, जो क़रीब से ज़ियारत करने आए या ऐसे ही मिलने-जुलने वाले लोगों के लिए मेज़बान पर ज़ियाफ़त करना वाजिब नहीं है। रिश्तेदारों की ज़ियाफ़त सिलाह-ए-रहमी और दूसरों की दावत एहसान और सुलूक के दर्जा में है।

मेज़बान ज़ियाफ़त के कुछ आदाब:

(1) घर आने वाला मेहमान पहले इजाज़त तलब करे और मेज़बान ख़ुशदिली से उनका इस्तकबाल करे। 'अलैक-सलैक (सलाम व जवाब) के बाद हालात की दरयाफ़्त करे।

(2) मेहमान के रहने के लिए मुनासिब इंतज़ाम करे जहां आराम हासिल करने में न मेहमान को परेशानी हो और न ही घर वालों को।

(3) ज़ियाफ़त में जल्दी से काम के लिए सफ़र का थका-मांदा खा-पीकर आराम की ख़्वाहिश करे। इंतज़ाम में ताख़ीर होने पर उज़्र पेश कर दे।

(4) पहले दिन की ज़ियाफ़त हैसियत के मुताबिक़ पुर-तकल्लुफ़ यानि दस्तूर के मुताबिक़ हो। फिर दूसरे और तीसरे दिन की ज़ियाफ़त रोज़मर्रा की तरह होना काफ़ी है।

(5) मेहमान को मेज़बान ख़ुद से खाना खिलाए, यानि साथ खाना खाए। इसमें न सिर्फ़ बरकत है बल्कि यह सरापा ख़ुलूस और प्यार है जिसे मेहमान कभी भूल न पाएगा। खाने में आख़िर तक साथ देना चाहिए।

(6) हर मुमकिन कोशिश हो कि मेहमान को ज़बान या हाथ और पैर से किसी क़िस्म की कोई तकलीफ़ न हो।

(7) जब मेहमान रुख़सत होने लगे तो घर से बाहर निकल कर कुछ दूर रुख़सत करने जाए।

मेहमान के लिए कुछ आदाब:

(1) किसी के घर मुनासिब वक़्त में जाए ताकि मेज़बान पर गिराँ न गुज़रे।

(2) रिहाइश या खाने में फ़रमाइश न करे। जो नसीब से मिल जाए, उस पर ख़ुश हो जाए।

(3) खाना खाते वक्त या बाद में ऐब न निकाले। और पूछा जाए तो माशा-अल्लाह कह दे।

(4) खाने के बाद अल्लाह का शुक्र अदा करे जिसने उसे ज़ियाफ़त की तौफ़ीक़ दी और फिर घर वालों का शुक्रिया अदा करे जिन्होंने ख़ातिर और मदारात की।

(5) 3 दिन से ज़्यादा किसी के यहाँ न रुकें। नबी ﷺ ने फ़रमाया:

الضيافة ثلاثة ايام وجائزته يوم وليلة، ولا يحل لرجل مسلم ان يقيم عند اخيه حتى يؤثمه، قالوا: يا رسول الله وكيف يؤثمه؟، قال: يقيم عنده ولا شيء له يقريه به(صحيح مسلم:4514)

तर्जुमा: ज़ियाफ़त (मेहमान नवाज़ी) तीन दिन है। और ख़ुसूसी एहतिमाम एक दिन और एक रात का है। और किसी मुसलमान आदमी के लिये हलाल नहीं कि वो अपने भाई के यहाँ (ही) ठहरा रहे यहाँ तक कि उसे गुनाह में मुब्तला कर दे। सहाबा ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल! वो उसे गुनाह में कैसे मुब्तला करेगा? आपने फ़रमाया : वो उसके यहाँ ठहरा रहे और उसके पास कुछ न हो जिससे वो उसकी मेज़बानी कर सके। (तो वो ग़लत काम के ज़रिए से उसकी मेज़बानी का इन्तिज़ाम करे।)

3 दिन से ज़्यादा ठहरने में घर वालों के लिए दिक़्क़त है और ख़ुद की शख़्सियत भी मजरूह होती है। इसलिए किसी को मशक़्क़त में डालकर गुनहगार नहीं बनना चाहिए।

(6) मेहमान को चाहिए कि मेज़बान और पूरे अहल के लिए खाना की ज़िंदगी और माल में बरकत के लिए कसरत से दुआएं करे। यह दुआएं भी दे सकते हैं:

اللهمَّ ! بارِكْ لهم في ما رزقتَهم . واغفرْ لهم وارحمْهم (صحيح مسلم :2042)

तर्जुमा: अल्लाह उनकी रोज़ी में बरकत दे और उन्हें बख़्श दे और उन पर रहम कर।

اللهمَّ ! أطعِمْ مَن أطعَمني . وأسْقِ من أسقاني (صحيح مسلم :2055)

तर्जुमा: ऐ अल्लाह, जिसने मुझे खिलाया, उसे भी खिला और जिसने मुझे पिलाया, उसे भी पिला।

(7) जाने लगे तो घर वालों से इजाज़त तलब करे, फिर जाए बग़ैर घर वालों की इत्तिला के न जाए।

आख़िरी बात यह है कि सिर्फ़ मुसाफ़िर को खिलाना ही अजर का बाइस नहीं है बल्कि एक दूसरे को दावत देना और खाना मस्नून अमल है। इससे मोहब्बत में ज़्यादती पैदा होती है जो कोई हमारे घर ज़ियारत को आए बग़ैर तकल्लुफ़ के जो बन सके पेश करना चाहिए, चाहे एक गिलास पानी ही सही। ग़रीब और मिस्कीन, नादार (जिसके पास कोई साज़-ओ-सामान, धन-दौलत या मिलकिय्यत न हो) और यतीम, क़ल्लाश (भूका नंगा) और मुफ़लिस, फ़क़ीर और हाजत-मंद को खिलाना सवाब का काम है। अल्लाह हम सबको दीनी समझ दे और उसके मुताबिक़ अमल करने की तौफ़ीक़ दे। आमीन।

==================

[47]..जुम'आ के दिन उज़्र की वजह से नमाज़-ए-जुम'आ जुम'आ ना पढ़ सके तो क्या करें?

जुम'आ बहुत ही अहम तरीन दिन है, बड़ी अहमियत और फ़ज़ीलत का हामिल है, लेकिन उस दिन कभी ऐसा उज़्र (मजबूरी) भी दरपेश हो सकता है जिसकी वजह से कभी हम इन्फिरादी तौर पर तो कभी इज्तिमाई तौर पर नमाज़-ए-जुम'आ अदा नहीं कर सकते हैं। मसलन, शदीद बीमार हो गए, मस्जिद में हाज़िर नहीं हो सकते हैं, या सफ़र दरपेश हो गया, या मुसलाधार बारिश होने लगी और घर से निकलना दुश्वार हो जाए, तो ऐसी सूरत में शरियत हमें ज़ुह्र अदा करने की रुख़सत देती है। सुन्नत में इसकी मिसाल मिलती है कि बारिश और कीचड़ की वजह से लोगों को अपने घरों में ही नमाज़ अदा करने का हुक्म दिया गया और हमें यह भी मालूम है कि घर में जुम'आ की नमाज़ क़ायम नहीं की जाती, बल्कि ज़ुह्र की नमाज़ ही अदा की जाती है। सहीह बुख़ारी की मुंदरिजा-ज़ेल रिवायत देखें। इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है:

حَدَّثَنَا عَبْدُ اللَّهِ بْنُ عَبْدِ الْوَهَّابِ ، قَالَ : حَدَّثَنَا حَمَّادُ بْنُ زَيْدٍ ، قَالَ : حَدَّثَنَا عَبْدُ الْحَمِيدِ صَاحِبُ الزِّيَادِيِّ ، قَالَ : سَمِعْتُ عَبْدَ اللَّهِ بْنَ الْحَارِثِ ، قَالَ : خَطَبَنَا ابْنُ عَبَّاسٍ فِي يَوْمٍ ذِي رَدْغٍ ، فَأَمَرَ

الْمُؤَذِّنَ لَمَّا بَلَغَ حَيَّ عَلَى الصَّلَاةِ ، قَالَ : قُلِ الصَّلَاةُ فِي الرِّحَالِ ، فَنَظَرَ بَعْضُهُمْ إِلَى بَعْضٍ فَكَأَنَّهُمْ أَنْكَرُوا ، فَقَالَ : كَأَنَّكُمْ أَنْكَرْتُمْ هَذَا ، إِنَّ هَذَا فَعَلَهُ مَنْ هُوَ خَيْرٌ مِنِّي يَعْنِي النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ ، إِنَّهَا عَزْمَةٌ وَإِنِّي كَرِهْتُ أَنْ أُحْرِجَكُمْ ، وَعَنْ حَمَّادٍ ، عَنْ عَاصِمٍ ، عَنْ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ الْحَارِثِ ، عَنِ ابْنِ عَبَّاسٍ نَحْوَهُ ، غَيْرَ أَنَّهُ قَالَ : كَرِهْتُ أَنْ أُؤَثِّمَكُمْ ، فَتَجِيئُونَ تَدُوسُونَ الطِّينَ إِلَى رُكَبِكُمْ .

तर्जुमा: हमें एक दिन इब्ने-अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने जबकि बारिश की वजह से कीचड़ हो रही थी ख़ुतबा सुनाया। फिर मुअज़्ज़न को हुक्म दिया और जब वो (حی علی الصلاۃ) पर पहुँचा तो आप ने फ़रमाया कि आज इस तरह पुकार दो الصلاۃ في الرحال कि नमाज़ अपनी क़ियाम रास्तों पर पढ़ लो। लोग एक-दूसरे को (ताज्जुब की वजह से) देखने लगे। जैसे उसको उन्होंने नाजायज़ समझा। इब्ने-अब्बास (रज़ि०) ने फ़रमाया कि ऐसा मालूम होता है कि तुमने शायद उसको बुरा जाना है। ऐसा तो मुझसे बेहतर ज़ात यानी रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने भी किया था। बेशक जुमा वाजिब है मगर मैंने ये पसन्द नहीं किया कि (حی علی الصلاۃ) कह कर तुम्हें बाहर निकालूँ (और तकलीफ़ में मुब्तला करूँ) और हम्माद आसिम से वो अब्दुल्लाह-बिन-हारिस से वो इब्ने-अब्बास (रज़ि०) से इसी तरह रिवायत करते हैं। अलबत्ता उन्होंने इतना और कहा कि इब्ने-अब्बास (रज़ि०) ने फ़रमाया कि मुझे अच्छा मालूम नहीं हुआ कि तुम्हें गुनहगार करूँ

और तुम इस हालत में आओ कि तुम मिट्टी मैं घुटनों तक सन गए हो।

यह हदीस इस बात की दलील है कि अगर किसी उज़्र की वजह से मस्जिद में जुम'आ की नमाज़ ना क़ायम की जा सके तो बस्ती के लोग अपने-अपने घरों में नमाज़-ए-ज़ुह्र अदा कर सकते हैं। जैसा कि इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने लोगों को बारिश की वजह से घरों में नमाज़ पढ़ने का हुक्म दिया और इस अमल को नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत क़रार दिया।

आजकल कोरोना वायरस की वजह से कुछ ख़लीजी ममालिक में मस्जिदों में जमात से नमाज़ नहीं होती, घरों में ही लोग नमाज़ अदा करते हैं। ऐसे में लोगों के सामने जुम'आ के दिन से मुताल्लिक़ मुख़्तलिफ़ क़िस्म के मसाइल हैं। उन्हें इख़्तिसार से बयान कर देता हूँ:

(1) बात तो यह है कि ख़लीजी ममालिक हों या और कोई मुल्क या शहर जहां मस्जिद में 5 वक्त और नमाज़-ए-जुम'आ पढ़ने से रोक दिया गया है, वहां के लोग जुम'आ के दिन अपने घरों में ज़ुह्र की

नमाज़ अदा करेंगे। पूरे घर वाले मिलकर ज़ुह्र और दीगर फ़राइज़ अदा करें तो जमात का अज्र मिलेगा।

(2) यह कि मस्जिद में ज़वाल के बाद अज़ान भी दी जाएगी मगर उन मस्जिदों में जहां जुम'आ की नमाज़ होती थी और जिसमें जुम'आ की नमाज़ नहीं होती थी उसमें अज़ान नहीं दी जाएगी।

(3) बात यह कि जुम'आ के दिन ग़ुस्ल करना नमाज़-ए-जुम'आ के वास्ते मशरू था, इसलिए ज़ुह्र पढ़ने वालों के हक़ में ग़ुस्ल-ए-जुम'आ मशरू नहीं है, जैसा कि नमाज़-ए-जुम'आ न पढ़ने वाली औरतों के हक़ में मशरू नहीं है।

(4) बात यह कि जुम'आ के दिन कसरत से दरूद पढ़ना, सूरह कहफ़ की तिलावत करना और क़बूलियत की घड़ी में दुआ करना बड़ा अहम है। इसलिए तमाम लोगों को, चाहे औरत हो या मर्द, इन बातों का एहतिमाम करना चाहिए।

एक आख़िरी बात कहना चाहता हूँ कि मोमिनों का जुम'आ के दिन नमाज़-ए-जुम'आ से महरूम होने पर ग़मगीन होना फ़ितरी बात है

मगर हमें अल्लाह की रहमत से मायूस नहीं होना चाहिए और ना ही किसी को नमाज़-ए-जुम'आ बंद होने पर कोसना चाहिए। बल्कि ऐसे मौक़े पर कसरत से तौबा और इस्तिग़फार करना चाहिए, त'अज़्ज़ुर (excuse) के साथ मुसलमानों की भलाई, मुल्की अमन-ओ-अमान और अपने दीन और ईमान की सलामती के लिए दुआ करना चाहिए। अल्लाह हम सबका हामी और नासिर हो और हमें हर क़िस्म की बीमारियों और ख़ौफ़ से अपनी पनाह में रखे। आमीन

=============

[48].जुम्मा के दिन औरते कैसे फ़ायदा उठा सकती हैं?

जुम्मा का दिन सभी दिनों में सबसे बेहतर दिन है, यह दिन जहाँ मर्द के लिए बेहतर है वहीं औरतों के लिए भी बेहतर है मगर अफ़सोस हमारे यहाँ जुम्मा के मुताल्लिक़ औरतों को तारीकी में रखा गया है। उन्हें यही तालीम दी जाती है कि जुम्मा का दिन सिर्फ़ मर्द के लिए है औरतों के लिए कुछ नहीं। इस वजह से औरतें जहाँ आम दिनों में ग़ाफ़िल होती हैं सय्यद-उल-अय्यम में भी ग़फ़लत की रिदा ओढ़े रहती हैं। मैं आपकी ख़िदमत में अहादीस सहीहा की रोशनी में मुख़्तसरन बयान करता हूँ कि ख़ातून-ए-इस्लाम किस तरह जुम्मा के बाबरकत दिन से फ़ायदा उठा सकती है।

(1) गुस्ल जुम्मा:

जुम्मा के दिन गुस्ल करना वाजिब नहीं बल्कि मुस्तहब है, यही बात दुरुस्त है।

और वह हदीस जिसमें जुम्मा का ग़ुस्ल वाजिब बताया गया है जो हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी करीम ﷺ ने फ़रमाया:

الغُسْلُ يومَ الجمعةِ ، واجِبٌ على كلِّ مُحْتَلِمٍ(صحيح مسلم : 846)

तर्जुमा: जुम्मा के दिन ग़ुस्ल करना हर बालिग़ पर वाजिब है।

इसके मुताल्लिक़ जम्हूर उलमा ने कहा है कि इससे सुन्नत की ता'कीद मुराद है।

औरत अगर जुम्मा की नमाज़ में हाज़िर होती है तो उसके लिए भी ग़ुस्ल करना मसनून है जैसा कि एक रिवायत में वारिद है।

من أتى الجمعةَ منَ الرِّجالِ والنِّساءِ فليغتسِلْ , ومن لم يأتِها فليسَ عليهِ غُسلٌ منَ الرِّجالِ والنِّساءِ(ابن خزيمة وابن حبان)

तर्जुमा: मर्द और औरत में से जो जुम्मा की नमाज़ के लिए आए वह ग़ुस्ल करे, और जो जुम्मा की नमाज़ न पढ़े उस मर्द और औरत पे ग़ुस्ल नहीं है।

इमाम नववीؒ ने अल-ख़लासाह और अल-मजमू दोनों के अंदर इन अल्फाज़ के साथ इसकी सनद को सहीह क़रार दिया है। (अल-ख़लासाह 2/774 व अल-मजमू 4/534)

हाफ़िज़ इब्न हजर ने कहा "रिज़ालह सिख़ात"।

(फ़तह अल-बारी लि इब्न हजर 2/417)

(2) जुम्मा के दिन दरूद पढ़ना:

إنَّ من أفضلِ أيامِكم يومَ الجمعةِ ، فيه خُلِقَ آدمُ ، و فيه قُبِضَ ، و فيه النفخةُ ، و فيه الصعقةُ ، فأكثِروا عليَّ من الصلاةِ فيه ، فإنَّ صلاتَكم معروضةٌ عليَّ ، إنَّ اللهَ حرَّم على الأرضِ أن تأكلَ أجسادَ الأنبياءِ.(صحيح الجامع للالباني: 2212)

तर्जुमा: रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया: जुम्मा का दिन तुम्हारे तमाम दिनों में सबसे अफ़ज़ल दिन है। इस दिन आदम अलैहिस्सलाम पैदा किए गए, इसी दिन वफ़ात पाए, इसी दिन सूर फूंका जाएगा और इसी दिन बेहोशी तारी होगी। पस इस दिन तुम मुझ पर बकसरत दरूद भेजो, इस लिए कि तुम्हारा दरूद मुझ पर पेश किया जाता है। अल्लाह तआला ने अंबिया के जिस्मों को मिट्टी पर हराम कर दिया है।

जुम्मा के दिन नबी ﷺ पर दरूद पढ़ने वाली यह हदीस मर्द औरत दोनों को शामिल है, इस लिए औरत भी जुम्मा के दिन दरूद का ख़ास एहतिमाम करे।

(3) सूरह क़हफ़ की तिलावत करना:

ख़वातीन को जुम्मा के दिन सूरह क़हफ़ की तिलावत करनी चाहिए। नबी ﷺ का आम फ़रमान है जिसमें मर्द के साथ औरत भी शामिल है।

من قرأ سورةَ الكهفِ في يومِ الجمعةِ، أضاء له من النورِ ما بين الجمُعتَين(صحيح الجامع للالبانی: 6470)

तर्जुमा: हज़रत अबू सईद ख़ुदरी से मरवी है, नबी करीम ﷺ ने इरशाद फ़रमाया: जिस ने जुम्मा के दिन सूरह क़हफ़ पढ़ी तो इस जुम्मा से अगले जुम्मा तक उसके लिए नूर को रोशन कर दिया जाता है।

(4) औरतों के लिए नमाज़-ए-जुम्मा:

इस पर बात सब का इत्तेफ़ाक़ है कि जुम्मा की नमाज़ सिर्फ़ मर्दों पर फ़र्ज़ है, औरतों पर फ़र्ज़ नहीं है। इसकी दलील:

الجمعةُ حقٌّ واجبٌ على كلِّ مسلمٍ في جماعةٍ ؛ إلا أربعةً : عبدًا مملوكاً ، أو امرأةً ، أو صبيًّا ، أو مريضًا(صحيح الجامع للالباني : 3111)

तर्जुमा: जुम्मा की नमाज़ हर मुसलमान पर जमात के साथ वाजिब है सिवाए चार लोगों के, गुलाम, औरत, बच्चा और बीमार।

लेकिन यहाँ यह बात भी जान लेनी चाहिए कि अगर औरत जुम्मा की नमाज़ में शामिल हो जाती है तो उसकी नमाज़-ए-जुम्मा सही है और उससे ज़ोहर की नमाज़ साकित हो जाएगी। नबी ﷺ के ज़माने में सहाबियात जुम्मा में शरीक होती थीं।

دليل : عن أم هشام بنت حارثة بن النعمان: وما أخذت (ق والقرآن المجيد) إلا عن لسان رسول الله صلى الله عليه وسلم يقرؤها كل يوم جمعة على المنبر إذا خطب الناس.(صحيح مسلم : 873)

तर्जुमा: सय्यदा उम्मे हिशाम बिन्त हारिसा बिन नौमान रज़ियल्लाहु अन्हा बयान करती हैं कि मैंने सूरह क़हफ़ रसूल करीम ﷺ की ज़बान मुबारक से (सुनकर) ही तो याद की थी, आप इसे हर जुम्मा के दिन मिंबर पर लोगों को ख़ुतबा देते हुए तिलावत फ़रमाया करते थे।

इस हदीस में दलील है कि सहाबिया उम्मे हिशाम रज़ियल्लाहु अन्हा जुम्मा की नमाज़ में शरीक होती थीं, जुम्मा में शिरकत की वजह से ख़ुतबा नबवी में पढ़ी जाने वाली सूरह कहफ़ उन्हें हिफ़्ज़ हो गई।

यहाँ एक और बात याद रखनी चाहिए कि औरतों का इकट्ठा होकर अलग से औरतों के लिए जुम्मा की नमाज़ क़ाइम करने की दलील नहीं मिलती।

(5) दुआ की क़ुबूलियत:

जुम्मा के दिन एक घड़ी ऐसी है जिसमें दुआ की जाए तो क़ुबूल की जाती है, इसलिए औरत को जुम्मा की इस घड़ी में दुआ करनी चाहिए।

أنَّ رسولَ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّم ذكَر يومَ الجمُعةِ، فقال : فيه ساعةٌ، لا يُوافِقُها عبدٌ مسلمٌ، وهو قائمٌ يُصلِّي، يَسألُ اللهَ تعالى شيئًا، إلا أعطاه إياه . وأشار بيدِه يُقَلِّلُها. (صحيح البخاري:935)

तर्जुमा: नबी ﷺ ने जुम्मा के दिन का ज़िक्र किया और फ़रमाया: इसमें एक ऐसी घड़ी है जिसमें कोई मुसलमान बंदा नमाज़ की हालत में अल्लाह तआला से जो कुछ भी माँगता है, तो अल्लाह तआला उसे ज़रूर इनायत करता है। और आपने ﷺ ने अपने हाथों से उस वक़्त के थोड़े होने का इशारा किया।

क़ुबूलियत की यह घड़ी कौन सी है, इसमें इख़्तिलाफ़ है, दो क़ौल ज़्यादा मशहूर हैं।

जुम्मा की अज़ान से लेकर नमाज़ के पूरा होने तक है।

असर के बाद से लेकर सूरज के गुरूब होने तक है।

वैसे उलमा का ज़्यादा रुख़ दूसरे क़ौल की तरफ़ है, अगर जुम्मा के वक़्त भी दुआ कर ली जाए तो ज़्यादा मुनासिब है जैसा कि आलिम इब्नुल क़य्यमؒ ने ज़िक्र किया है।

(6) जुम्मा के दिन हसन-ए-ख़ातिमा:

जैसा कि मैंने ऊपरी सुतूर में बताया है कि अक्सर औरतें जानकारी न होने के कारण जुम्मा के दिन भी ख़ैर के कामों से दूर रहती हैं जबकि आज का दिन अफ़ज़ल है, इस दिन नेकी करनी चाहिए और गुनाह से बचना चाहिए। जुम्मा के दिन वफ़ात पाना हसन-ए-ख़ातिमा की निशानी है।

अब्दुल्लाह बिन उमर अमर रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है, रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

مَا مِن مسلمٍ يموتُ يومَ الجمعةِ أو ليلةَ الجمعةِ إلَّا وقاهُ اللَّهُ فِتنةَ القبرِ(صحيح الترمذی:1074)

तर्जुमा: जो कोई मुसलमान जुम्मा की रात या दिन में वफ़ात पाता है, अल्लाह तआला उसे अज़ाब-ए-क़ब्र से बचाता है।

अंदाज़ा कीजिए कि अगर कोई औरत जुम्मा के दिन भी गुनाह के काम में मुलव्विस है तो क्या उसे यह फ़ज़ीलत मिलेगी और इसका हसन-ए-ख़ातिमा माना जाएगा?

अल्लाह तआला हमें अच्छे आमाल की तौफ़ीक़ दे। आमीन या रब।

==================

[49].जूते समेत हरम शरीफ़ में दाख़िल होना या जूते समेत तवाफ़ और सई करना

मस्जिद अल्लाह का घर और रू-ए-ज़मीन पर सब से पाक और मुक़द्दस सर ज़मीन है। मस्जिद में दाख़िल होने वाला बेवज़ू तो दाख़िल हो सकता है मगर जुनुबी, हैज़ा और नुफ़्सा के लिए वहाँ ठहरना मना है। वजह मस्जिद का तकद्दुस है। इसके बावजूद मस्जिद में जूते समेत दाख़िल होने और जूते में नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है बशर्ते यह कि जूते नजासत से पाक और साफ़ हों। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़ात ए गिरामी हमारे लिए उस्वा (मिसाल) है जैसा कि अल्लाह 'अज़्ज़-ओ-जल का फ़रमान है:

لقد كان لكم في رسول الله اسوة حسنة.(الاحزاب: 21)

तर्जुमा: यक़ीनन तुम्हारे लिए रसूलुल्लाह मैं बेहतरीन नमूना (मौजूद) है।

चुनांचे जो हमारे उस्वा और रहबर है उनके क़ौल और अमल से साबित है कि आप ने ख़ुद भी जूते में नमाज पढ़ी है और सहाबा-ए-किराम को भी जूते में नमाज पढ़ने का हुक्म दिया है। मैं पहले क़ौली हदीस पैश करता हूं फिर अमली हदीस पैश करूंगा।

क़ौली हदीस: शद्दाद बिन औस रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं के रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

خالفوا اليهود فانهم لا يصلون في نعالهم ولا خفافهم. (صحيح ابي داود:652)

तर्जुमा: यहूद की मुख़ालिफ़त करो क्योंकि वो अपने जूतो में नमाज़ पढ़ते हैं और न अपने मौज़ो में।

अमली हदीस: अब्दुल्ला बिन अमर बिन आस रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं:

رأيت رسول الله صلى الله عليه وسلم يصلي حافيا ومنتعلا. (صحيح ابي داود:653)

तर्जुमा: मैने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को देखा है कि आप नंगे पाओ नमाज़ पढ़ते हैं और जूते पहन कर भी।

यह दोनों हदीस सही है और उन दोनों की तरह की हदीस से साबित हो गया के रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ख़ुद भी जूते में नमाज़ पढ़ी है और जूते में नमाज पढ़ने का हुक्म भी दिया है।

इस बाब में दलाइल और भी है मगर इस्तिदलाल के लिए और नफ़्स मसला को समझने के लिए यहीं दो दलीले काफ़ी है ताहम एक और

दलील जो काफ़ी मशहूर है और उस बाब में अफ़हाम के एतिबार से और भी वजह है ज़िक्र करना मुफ़ीद होगा।

अबू सईद खुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं:

بينما رسول الله صلى الله عليه وسلم يصلي بأصحابه؛ إذ خلع نعليه، فوضعهما عن يساره، فلما رأى ذلك القوم، ألقوا نعالهم، فلما قضى رسول الله صلى الله عليه وسلم صلاته، قال: ما حملكم على إلقاء نعالكم؟، قالوا: رأيناك ألقيت نعليك، فألقينا نعالنا. فقال رسول الله صلى الله عليه وسلم: "إن جبريل صلى الله عليه وسلم أتاني فأخبرني أن فيهما قذرا أو قال: أذى"، وقال: "إذا جاء أحدكم إلى المسجد، فلينظر: فإن رأى في نعليه قذرا أو أذى، فليمسحه، وليصل فيهما".

(صحيح ابي داود:650)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह ﷺ अपने सहाबा को नमाज़ पढ़ा रहे थे कि आपने (नमाज़ में) अपने जूते उतार कर अपनी बाएँ तरफ़ रख लिये। जब सहाबा किराम (रज़ि०) ने आपको देखा तो उन्होंने भी अपने जूते उतार दिये। जब आप नमाज़ से फ़ारिग़ हुए तो फ़रमाया : तुम लोगों ने अपने जूते क्यों उतारे ? उन्होंने कहा कि हमने आपको देखा कि आपने अपने जूते उतारे हैं तो हमने भी उतार दिये। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया : बेशक जिब्राईल (अलैहि०) मेरे पास आए और बताया कि आपके जूते में गन्दगी लगी है। (लफ़्ज़ (قذر) था या (أذى)) आपने फ़रमाया : जब तुम में से कोई मस्जिद में आए तो अपने जूतों को

ग़ौर से देख लिया करे। अगर उनमें कोई गन्दगी या नजासत नज़र आए तो उसे पोंछ डाले और फिर उनमें नमाज़ पढ़ ले।

इन तमाम हदीस को सामने रखते हुए ये कहना आसान हो गया के जूते समेत मस्जिद में दाख़िल हो सकते हैं और जूते समेत मस्जिद में नमाज़ पढ़ सकते हैं क्योंकि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जो सहाबा को जूते में नमाज़ पढ़ी थी वो जमात वाली, मस्जिद की नमाज थी। इस से साफ़ मालूम होता है कि हम जुतो समेत मस्जिद में दाख़िल हो सकते हैं।

मस्जिद ए हराम भी एक मस्जिद है, आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जुते समेत मस्जिद ए नबवी में दाख़िल हुए तो हम भी मस्जिद ए नबवी, मस्जिद ए हराम और दुनिया की दीगर मसाजिद में दाख़िल हो सकते हैं इसमे शर'अन कोई क़बाहत नहीं है।

यहाँ यह मसला भी वाज़ेह कर दिया जाए के मस्जिद ए हराम में जैसे जूते समेत दाख़िल हो सकते है और वहा जूते समेत नमाज़ पढ़ सकते है, उसी तरह जूते समेत तवाफ़ भी कर सकते है और सई भी कर सकते है, जाइज़ है ताहम सफ़ाई सुथराई का अहम मसला है जिसकी

तई आज कल मस्जिद ए हराम में जूते समेत दाख़िल होना ग़ैर मुनासिब है इस बात की मज़ीद वज़ाहत नीचे है।

जूतो में तवाफ़ और सईं से मुतल्लिक़ मज़ीद चंद बाते

उमरा करने वालो के इल्म में इज़ाफ़ा के बाइस पहले यह बता देना चाहता हूं कि मर्दो को अहराम की हालत में जूते नहीं पहनने चाहिए, मौज़ा भी नहीं बल्कि चप्पल का इस्तेमाल करना चाहिए और औरत हालात ए अहराम में मौज़ा और जूते पहन सकती है। नफ़ली तवाफ़ में मर्द हज़रत भी जूते पहन सकते हैं क्योंकि वहां अहराम की पाबन्दी नहीं है।

जूतो समेत मस्जिद में दाख़िल होने का मतलब यह नहीं है कि आप ज़रूर जूते पहन कर मस्जिद जाएं या जूते में ज़रूर नमाज़ अदा करे बल्कि इसका मतलब यह है कि जूतो समेत मस्जिद में दाख़िल होना ज़रूरी है और जूते पहन कर नमाज़ पढ़ना जायज़ है। इसी तरह यह भी ज़रूरी नहीं है कि जूते समेत तवाफ़ और सईं करे, ख़ाली पैर तवाफ़ और सईं करे जैसे आम लोग करते हैं ताहम कोई जूते में तवाफ़ और सईं कर लेता है तो जाइज़ है मगर सफ़ाई के पैश ए नज़र नंगे पैर तवाफ़ और सईं किया जाए।

रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़माने में भी मस्जिद ए हराम में लोग जूते चप्पल समेत दाख़िल होते होंगे क्योंकि तालीमात ए नबवी में इसकी इजाज़त है, नीज़ रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़माने में भी मस्जिद ए हराम में लोग जूते और चप्पल पहने जाते होंगे व, इसमें भी कोई शक नहीं है।

चूंकि पहले की मस्जिद मिट्टी वाली होती थी इस वजह से कभी किसी ने जूते समेत उनमे दाख़िल होना मायूब नहीं समझा मगर आज कल की मस्जिद संगे मरमर और क़ालीन से मुज़य्यन होती है इस के लिए हमें इस पहलू पर ग़ौर करने की ज़रूरत है।

इसमें कोई शक नहीं कि मस्जिद ए हराम में एक बड़ी तदाद सफ़ाई पर मामूर है जिस के बाइस मस्जिद ए हराम हमेशा चमकती दमकती नज़र आती है, ऐसी सूरत में हमें सफ़ाई का ख़्याल करते हुए मस्जिद ए हराम में जूते और चप्पल पहन कर अंदर दाख़िल नहीं होना चाहिए।

जो जूते चप्पल हम बाहर से पहन कर आते हैं और उसको हमाम भी ले कर जाते हैं वो यक़ीनन धूल मिट्टी और पानी से भीगे होंगे ऐसी

सूरत में क़ालीन और संगे मरमर गंदा होगा और सफ़ाई मज़दूरों को बड़ी दुश्वारियों का सामना करना पड़ेगा।

गोया मसला जवाज़ या अदमे जवाज़ का नहीं है बल्कि सफ़ाई का है। मस्जिद ए हराम की नज़ाफ़त (पाकीज़गी) के पैशे नज़र इस में बिना चप्पल और जूते दाख़िल हो यानी वो जूते और चप्पल जिन को मस्जिद से बाहर इस्तिमाल कर के आए हैं उनको पहन कर मस्जिद में ना आएं बल्कि दरवाज़े पर उतार ले और ख़ाली पैर अंदर दाख़िल हो, खाली पैर नमाज़ अदा करे और ख़ाली पैर तवाफ़ और सई करे।

मस्जिद ए हराम की लाइव वीडियो नश्र होती है इस के मनाज़िर सारे लोग ब-शुमूल मुस्लिम और काफ़िर सभी देखते हैं, जूते चप्पल समेत मस्जिद ए हराम में दाख़िल होने का मंज़र ग़ैरो को बुरा मालूम होगा यहां तक के मुस्लिमों में भी जो जाहिल और दीन से नाबलद (ना जानने वाले) है वो ग़लत तसव्वुर लेते हैं इस लिए भी मस्जिद ए हराम में जूतो समेट दाख़िल न हुआ जाए।

ख़ुलासा कलाम:

पूरी बहस का ख़ुलासा यह हुआ मस्जिद ए हराम समेत दुनिया की वो तमाम मस्जिद जिन की ज़मीन मिट्टी वाली नहीं है बल्कि उन्हे

पत्थर और टाइलें और क़ालीन से मुज़य्यन कर दी गई है उनमे जूते चप्पल समेत दाख़िल न हो, यह हुक्म सफ़ाई सुथराई के पैश-ए-नज़र है वर्ना जो मसाजिद आज भी मिट्टी की बनी है उन्मे जूते पहन कर जाने में कोई हर्ज नहीं है इस शर्त के साथ के वो ताहिर/पाक हो जैसा के सुतूर बाला की मुत'अद्दिद हदीसों से मालूम होता है।

[50].तालिबान-ए-उलूम नबुवत के नाम

आज बड़ी तादाद में इस्लाम के तादाद मिल्लत-ए-इस्लामिया से ख़ारिज नज़र आते हैं। तौहीद से मुंहरिफ़, दीन-ए-हनीफ़ की दावत देने से क़ासिर और अमली तौर पर शरियत से कोसो दूर हैं, जबकि उन्हें गुमान है कि वही इस्लाम के हक़ीक़ी अलम्बरदार और दीन के असल मुहाफ़िज़ हैं।

इन गुमराह फिरक़ो में शिया, सूफ़ी टोला और ख़वारिज हैं। अल्लाह का फ़ज़्ल है कि उसने हमें ख़ालिस दीन और ख़ालिस तौहीद से नवाज़ा, बल्कि उसकी ही तौफ़ीक़ और हिदायत से अहल-ए-तौहीद की एक मुख़्तसर जमात अंबिया के मिशन पर कमा-हक़्क़हु (properly) क़ाइम है और दावत-ए-दीन का अहम फ़र्ज़ सर अंजाम दे रही है। ख़ुश-नसीब हैं वो लोग जो ज़बान और बयान से तौहीद की नश्र-ओ-इशा'अत (publicity) में कोशाँ हैं, हालांकि आज लोगों की चाहत है कि नए नए बातें सुनाई जाएं, अजीब और ग़रीब वाक़िआत ज़िक्र किए जाएं, अक़ल को हैरान कर देने वाले कशफ़ और करामात बयान किए जाएं, मगर अहल-ए-तौहीद ने हमेशा लोगों पर तौहीद की दावत पेश की। अल्लाह हमें पूरी उमर इस मिशन को शौक़ और जज़्बा, इख़लास

और लिल्लाहिय्यत और कोशिशों के साथ थामे रहने की तौफ़ीक़ दे। यक़ीन करें कि जो फ़िरक़ा तौहीद से मुंहरिफ़ है और उसकी दावत से रू-गर्दां है, वह बिला शक और शुबहा गुमराह फिरक़ो में से है। अहल-ए-सुन्नत वल जमात की असल पहचान और उनकी अहम दावत तौहीद की दावत और उसकी नश्र-ओ-इशाअत है।

अज़ीज़ तलबा (स्टूडेंट)! अल्लाह ने हमें ना सिर्फ़ मुसलमान बनाया है बल्कि अहल-ए-तौहीद में से होने का शरफ़ बख़्शा। यह अल्लाह का हम पर ख़ास फ़ज़ल और अहसान है, वर्ना कितने फिर्क़े इस्लाम का दावेदार होने के बावजूद गुमराहों में से हैं। इस वजह से हमारे ऊपर अल्लाह का शुक्र-ए-आज़ीम लाज़िम है।

आप तालिबान-ए-उलूम-ए-नबुवत हैं, इस चश्मा-साफ़ से सेराब हो रहे हैं, जिससे रूह की तज़कीर होती है, इंसानियत ज़िंदा होती है, शौर और आगाही को लज़्ज़ते हयात मिलती है, क़दमों को उरूज, मु'आशरे (society) को पाकीज़गी और फ़र्द को हक़ीक़ी सआदत नसीब होती है। आप उन ख़ुश-नसीबों में से हैं जिन्हें अल्लाह अपना महबूब बनाता है। आपकी क़िस्मत में उलूम-ए-नबुवत से सेराब होना, सीरत और

किरदार में मोहम्मदी तस्वीर बनना और अंबियाई मिशन क़ायम रखना है। सुबहान'अल्लाह।

आज आप तालिब-ए-इल्म हैं, कल मो'लिम-ए-इंसानियत बनेंगे। आज चटाई पर बैठते हैं, कल दर्स और तदरीस की कुर्सी पर बैठेंगे। आज इल्म-ए-नबुवत के ख़ुसूसियत हैं, कल उलूम-ए-नबुवत के वारिस बनेंगे। आप बड़े ख़ुश-नसीब हैं अपने अंदर एहसास, कमतरी, मु'आशी (इकनॉमिक) परेशानी, ख़्याली, माद्दियत का ग़ल्बा, असरे-हाज़िर की झूठी रौनक़, जदीद अदब और जदीद कल्चर के नाम पर लग़्व (बेहुदा), बे-हयाई और जाहलिय्यत को दाख़िल होने का कोई रास्ता ना दें।

चूंकि आप इल्म-ए-नबुवत के तालिब हैं, आपके सर अंबियाई मिशन आने वाला है, इस वजह से यहाँ आपसे चंद अहम और ज़रूरी बातें करना चाहता हूँ ताकि यह शु'ऊर पहले से ज़हन में पुख़्ता रहे और उम्र भर इस शु'ऊर को कभी मन्द ना होने दे।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

من سلك طريقًا يطلبُ فيه علمًا ، سلك اللهُ به طريقًا من طرقِ الجنةِ ، وإنَّ الملائكةَ لتضعُ أجنحتَها رضًا لطالبِ العِلمِ ، وإنَّ العالِمَ ليستغفرُ له من في السماواتِ ومن في الأرضِ ، والحيتانُ في جوفِ الماءِ ، وإنَّ فضلَ العالمِ على العابدِ كفضلِ القمرِ ليلةَ البدرِ على سائرِ الكواكبِ ، وإنَّ العلماءَ ورثةُ الأنبياءِ ، وإنَّ الأنبياءَ لم يُورِّثُوا دينارًا ولا درهمًا ، ورَّثُوا العِلمَ فمن أخذَه أخذ بحظٍّ وافرٍ(صحيح أبي داود:3641)

तर्जुमा: जो शख़्स इल्म-ए-दीन की तलाश में किसी रास्ते पर चले, तो अल्लाह उसके ज़रिया उसे जन्नत के रास्ते पर लगा देता है। बेशक फ़रिश्ते तालिब-ए-इल्म की ख़ुशी के लिए अपने पर बिछा देते हैं और आलिम के लिए आसमान और ज़मीन की सारी मख़्लूक़ात मग़फ़िरत की दुआ करती है यहाँ तक कि पानी के अंदर की मछलियाँ भी। और आलिम की फ़ज़ीलत 'आबिद' पर ऐसी ही है जैसे चाँद की फ़ज़ीलत सारे सितारों पर, बेशक उलमा अंबिया के वारिस हैं और अंबिया ने किसी को दीनार और दिरहम का वारिस नहीं बनाया। इसलिए जिसने इस इल्म को हासिल कर लिया उसने (इल्म-ए-नबवी और विरासत-ए-नबवी से) पूरा पूरा हिस्सा लिया।

ज़रा इस हदीस पर ग़ौर करें कि कितना बड़ा मक़ाम है नबुवत का इल्म हासिल करने वाले और इल्म हासिल कर के बनने वालों का। आप डॉक्टर और इंजीनियर नहीं बने तो पस्ती का एहसास नहीं करना

है, इल्म-ए-नबुवत से बढ़कर दुनिया का कोई इल्म नहीं है। दुनियावी इल्म, दुनिया में सिर्फ़ दुनिया कमाने तक महदूद है, जबकि इल्म-ए-नबुवत का दुनिया में, मरने के बाद और आख़िरत तक उसका अज्र और फ़ायदा पहुँचता है। इस हदीस की गहराई में जाकर ग़ौर करें तो अंबिया की ज़िंदगी में तीन क़ीमती सरमाया मिलता है। पहला सरमाया इल्म, दूसरा सरमाया इबादत और तीसरा सरमाया दावत। यानी अंबिया सबसे बेहतरीन आलिम होते हैं, कसरत के साथ अल्लाह की इबादत करने वाले होते हैं (इबादत में अल्लाह की रज़ा का हर काम शामिल है) और अपनी उम्मत तक अल्लाह का पैग़ाम पहुँचाने में तमाम कोशिशें सर्फ़ करते हैं। यही वजह है कि शरीअत-ए-मोहम्मदीया में इल्म और आलिम, इबादत और आबिद, दावत और दाई के बड़े फ़ज़ाइल बयान किए गए हैं और इल्म, आलिम, इबादत, आबिद, दावत और दाई के अल्फ़ाज़ अंबिया के लिए ख़ास तौर पर वारिद हुए हैं।

पढ़ने का हुक्म देते हुए अल्लाह ने नबी मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मुख़ातिब फ़रमाया:

اقْرَأْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذِي خَلَقَ (العلق:1)

तर्जुमा: पढ़िए अपने उस रब के नाम से जिसने पैदा किया।

वह्यी की तिलावत के साथ अपनी इबादत का हुक्म देते हुए फ़रमाया:

اتْلُ مَا أُوحِيَ إِلَيْكَ مِنَ الْكِتَابِ وَأَقِمِ الصَّلَاةَ ۖ إِنَّ الصَّلَاةَ تَنْهَىٰ عَنِ الْفَحْشَاءِ وَالْمُنكَرِ ۗ وَلَذِكْرُ اللَّهِ أَكْبَرُ ۗ وَاللَّهُ يَعْلَمُ مَا تَصْنَعُونَ (العنكبوت:45)

तर्जुमा: जो किताब आपकी तरफ वह्यी की गई है उसे पढ़िए और नमाज़ क़ाइम कीजिए। यक़ीनन नमाज़ बेहयाई और बुराई से रोकती है। बेशक अल्लाह का ज़िक्र बहुत बड़ी चीज़ है। तुम जो कुछ कर रहे हो उससे अल्लाह ख़बरदार है।

इबादत पर बहुत ज़्यादा कोशिश करते हुए मुघीरह बिन शोबा रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं:

صلَّى رسولُ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ عليه وسلم حتَّى انتفخَت قدماهُ، فقيلَ لَهُ: أتتَكَلَّفُ هذا وقد غُفِرَ لَكَ ماتقدم من ذنبِكَ وما تأخَّرَ، قالَ: أفلا أكونُ عبدًا شَكورًا(صحيح الترمذي:412)

तर्जुमा: रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नमाज़ पढ़ी यहाँ तक कि आपके पैर सूज गए। आप से अर्ज़ किया गया: क्या आप इतनी मेहनत करते हैं जबकि आपके पिछले और आगामी सभी गुनाह माफ़ कर दिए गए हैं? तो आपने फ़रमाया: क्या मैं शुक्र गुज़ार बंदा न बनूं?

अल्लाह की तरफ़ उसकी वहदानियत की दावत देने का ज़िक्र करते हुए अल्लाह ने फ़रमाया जो कि असल में सभी अम्बिया की दावत है:

قُلْ هَٰذِهِ سَبِيلِي أَدْعُو إِلَى اللَّهِ ۚ عَلَىٰ بَصِيرَةٍ أَنَا وَمَنِ اتَّبَعَنِي ۖ وَسُبْحَانَ اللَّهِ وَمَا أَنَا مِنَ الْمُشْرِكِينَ

(يوسف:108)

तर्जुमा: आप कह दीजिए: मेरी राह यही है, मैं और मेरे मुत्तबि'ईन (इत्तिबा करने वाले) पूरी यक़ीन और एतिबार के साथ अल्लाह की तरफ़ बुला रहे हैं। और अल्लाह पाक है और मैं मुश्रिकों में नहीं हूँ।

बल्कि अल्लाह ने अपने पैगम्बर मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बतौर ख़ास तबलीग़ करने का हुक्म दिया:

يَا أَيُّهَا الرَّسُولُ بَلِّغْ مَا أُنزِلَ إِلَيْكَ مِن رَّبِّكَ ۖ وَإِن لَّمْ تَفْعَلْ فَمَا بَلَّغْتَ رِسَالَتَهُ ۚ وَاللَّهُ يَعْصِمُكَ مِنَ النَّاسِ ۗ إِنَّ اللَّهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرِينَ (المائدة:67)

तर्जुमा: ऐ रसूल, जो कुछ भी आपके रब की तरफ़ से आप पर नाज़िल किया गया है, पहुँचा दीजिए। अगर आपने ऐसा न किया, तो आपने अल्लाह की रिसालत अदा नहीं की और अल्लाह आपको लोगों से बचा लेगा। बेशक (निस्संदेह) अल्लाह काफ़िरों को हिदायत नहीं देता।

फिर अल्लाह ने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शदीद दावती फ़िक्र और बेचैनी का ज़िक्र करते हुए कहा:

فَلَعَلَّكَ بَاخِعٌ نَّفْسَكَ عَلَىٰ آثَارِهِمْ إِن لَّمْ يُؤْمِنُوا بِهَٰذَا الْحَدِيثِ أَسَفًا (الكهف:6)

तर्जुमा: तो क्या आप उनके पीछे इस ग़म में अपनी जान गवा देंगे अगर वे इस बात पर ईमान न लाएं?

हम अम्बिया के वारिस बनेंगे तो जाहिर सी बात है कि उनकी ज़िन्दगी के जो अहम तरीन औसाफ़ हैं उन्हें अपनाना पड़ेगा ताकि विरासत की ज़िम्मेदारी ठीक से निभाई जा सके। बल्कि देखा जाए तो तमाम अहले ईमान को अल्लाह और उसके रसूल उन औसाफ़ से मुत्तसिफ़ होने का हुक्म देते हैं।

नबुवत का इल्म सीखना फ़र्ज़ बताते हुए अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

طلبُ العلمِ فريضةٌ على كلِّ مسلمٍ ، وإنَّ طالبَ العلمِ يستغفِرُ له كلُّ شيءٍ ، حتى الحيتانِ في البحرِ (صحيح الجامع:3914)

तर्जुमा: इल्म हासिल करना हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है और बेशक तालिब-ए-इल्म के लिए हर चीज़ माफ़ी की दुआ करती है यहाँ तक

कि समुद्र की मछलियाँ भी। इबादत तो तख़लीक़ इंसानी का मक़सद ही है।

जैसा कि अल्लाह ने फ़रमाया:

وَمَا خَلَقْتُ الْجِنَّ وَالْإِنسَ إِلَّا لِيَعْبُدُونِ (الذاريات:56)

तर्जुमा: मैंने जिन्नात और इंसानों को सिर्फ़ इसलिए पैदा किया है कि वे मेरी इबादत करें।

और कुरआन की नीचे दी गई आयत की ख़ासियत से मुख़ातिब आप तालिब-ए-उलूम-ए-नबुवत हैं, इर्शाद-ए-इलाही है:

وَلْتَكُن مِّنكُمْ أُمَّةٌ يَدْعُونَ إِلَى الْخَيْرِ وَيَأْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنكَرِ ۚ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ (آل عمران:104)

तर्जुमा: तुम में से एक जमात ऐसी होनी चाहिए जो भलाई की तरफ़ बुलाए, नेक कामों का हुक्म दे और बुरे कामों से रोके और यही लोग कामयाब और नजात पाने वाले हैं।

ऊपर की बातों का ख़ुलासा निकालना चाहें तो यह कह सकते हैं कि आम मुसलमानों को भी इल्म हासिल करने, मक़सद-ए-हयात पूरा करने, यानी रब की बंदगी करने और दावत-ए-इलाह का काम करने की ज़रूरत है। मगर वारिसे अम्बिया के लिए सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी है कि उन्हें नबुवत की सही पहचान होनी चाहिए ताकि पुख़्ता इल्म से वाक़िफ़ और पुख़्ता आलिम बन सकें जिनका ज़िक्र अल्लाह ने किया है:

وَمَا يَعْلَمُ تَأْوِيلَهُ إِلَّا اللَّهُ ۗ وَالرَّاسِخُونَ فِي الْعِلْمِ يَقُولُونَ آمَنَّا بِهِ كُلٌّ مِّنْ عِندِ رَبِّنَا ۗ وَمَا يَذَّكَّرُ إِلَّا أُولُو الْأَلْبَابِ(آل عمران:7)

तर्जुमा: उनकी हक़ीक़ी मुराद को सिवा अल्लाह के कोई नहीं जानता और पुख़्ता और मज़बूत इल्म वाले यही कहते हैं कि हम तो उन पर ईमान ला चुके हैं, यह हमारे रब की तरफ़ से है और नसीहत तो सिर्फ़ अक़्लमंद ही हासिल करते हैं।

जब रासिख़ इल्म नहीं होगा, ना केवल इबादत में कमी होगी बल्कि अपनी कम इल्मी से ख़ुद भी गुमराह होंगे और दूसरों को भी गुमराह करेंगे। इसी तरह ज़माना तालिब-ए-इल्म से ही इबादत की पाबंदी करता है मगर तालिब मे इस वस्फ़ की बड़ी कमी महसूस की जाती है। जब अभी से इबादत में कमज़ोरी होगी तो आगे भी कमज़ोरी

आएगी। तसव्वुर (कल्पना) करें कि जब नबुवत का आलिम और दाई इबादत में क़स्र हो, तो फिर उसके इल्म और दावत में असर कहाँ से आएगा? कलाम में तासीर अल्लाह की तरफ़ से है जो बिना सलाहियत और बंदगी के कैसे आ सकता है?

अब तीसरी ख़ूबी पर ग़ौर करें कि एक तालिब-ए-इल्म, फ़ारिग़ हो कर आलिम तो बन गया, इबादत पर पाबंदी भी करने वाला है मगर दावत-ए-दीन का फरीज़ा छोड़ दिया है, उसने अक्सर अपना मैदान बदल लिया? क्या वह वारिस-ए-अम्बिया है? क्या उसके इल्म का कोई फ़ायदा पहुँचेगा या फिर किसी का ख़ुद अमल करने और दूसरों को उसकी दावत न देने से अल्लाह के यहाँ उसकी इबादत मक़बूल होगी जबकि वह आलिम-ए-दीने हो। हरगिज़ उसकी इबादत मक़बूल नहीं होगी। इन सारी बातों का एक जुमला में ख़ुलासा यह है कि तालिब मेहनत और मशक़्क़त के साथ पुख़्ता इल्म हासिल करके मिसाली आलिम बने, आलिम भी ऐसा कि कुल क़िस्म की इबादत में भी कसरत-ए-इज्तिहाद करे और क़ौम और मिल्लत को लूटने वाले तो बहुत हैं मगर आप दीन के बे-लौस ख़ाम बनें। अल्लाह का फ़रमान है:

قُلْ مَا سَأَلْتُكُم مِّنْ أَجْرٍ فَهُوَ لَكُمْ ۖ إِنْ أَجْرِيَ إِلَّا عَلَى اللَّهِ ۖ وَهُوَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ شَهِيدٌ (سبا:47)

तर्जुमा: कह दीजिए कि जो बदला मैं तुमसे मांगता हूँ, वह तुम्हारे लिए है, मेरा बदला तो अल्लाह ही के ज़िम्मे है, वह हर चीज़ से वाक़िफ़ और निगरान है।

गिरामी-क़द्र अज़ीज़ तलबा! अपने मक़ाम और मर्तबे को पहचानें और अपने अंदर अम्बिया के तीनों अहम औसाफ़ पैदा करें। दुनिया आपकी प्यासी है, कुफ़्र और शिर्क के अहद (दौर) में सदा-ए-हक़ बुलंद करने वाले बहुत थोड़े हैं। उन थोड़े लोगों में भी अगर आप अपने फ़र्ज़ से बरगश्तगी इख़्तियार करने लगे तो फिर कौन उम्मत की इस्लाह करेगा? 'अज़्म-ए-मुसम्मम (firm determination) पैदा करें, ज़माने का रुख़ मोड़ने का इरादा करें, लोगों को शिर्क और कुफ़्र के दलदल से निकालने की फ़िक्र करें और अपने साथ-साथ अफ़राद-ए-उम्मत के लिए भी नजात का रास्ता हमवार करें।

अज़ीज़ तलबा! आज के सोशल मीडिया के दौर में आपसे एक बात अर्ज़ करना चाहता हूँ कि जामिया में रहते हुए अपने टीचर्स से इल्म हासिल करें, लाइब्रेरी की किताबों से इस्तिफ़ादा करें। मेरे पास बहुत सारे तलबा के सवाल आते हैं, मैं उन्हें अपने टीचर्स की तरफ़ रुजू करने की नसीहत करता हूँ। आप इल्म के समुद्र में हैं, वहाँ से इल्म लें। याद रखें कि सोशल मीडिया का इल्म पायदार नहीं है, किताबी

इल्म ही पुख़्ता है। सिर्फ़ ऊंची क्लास के तलबा सोशल मीडिया का इस्तेमाल करें, वो भी बक़दर-ए-ज़रूरत और बतौर-ए-त'आवुन और असास (बुनियाद) के तौर पर अपने टीचर्स और लाइब्रेरी से इस्तिफ़ादा करें। जिस क़दर मुमकिन हो, कुरआन भी हिफ़्ज़ करते रहें, हिफ़्ज़-ए-मुतून-ए-हदीस का ख़ास ध्यान रखें। यही चीज़ें आगे दावत-ए-दीने, तक़रीर और तहरीर और इस्तिश्हाद और बयान में काम आएंगी।

अल्लाह से तमाम सलाफ़ी इदारे की हिफ़ाज़त, उनके ज़िम्मेदारों के हौसले में बुलंदी, स्टूडेंट और टीचर के लिए इल्म और अमल में पुख़्तगी और इख़्लास की आजिज़ाना और मुख़्लिसाना दुआ करता हूँ। जो भी सलफ़ी इदारे के लिए किसी शकल में त'आवुन पेश कर रहे हैं, अल्लाह उन जुमला अहबाब के लिए जन्नत का रास्ता आसान बनाए और ता क़यामत सलफ़ी इदारो का फ़ैज़ सारी दुनिया में जारी-ओ-सारी रखे।

आमीन या रब्ब-उल-आलमीन

===============

[51].तीसरी तलाक़ के अहकाम

इस्लाम में तलाक़ का निज़ाम बेशक मौजूद है जो हमेशा से ग़ैर-मुसलमानों की नज़र में खटकता रहा है, नए ज़माने के कुछ मुसलमान भी शक़ और शुबह में रहते हैं। अल्लाह का क़ानून, फ़ितरत के बिल्कुल मुताबिक़ है और इसमें इंसान की भलाई है, इस पर हमारा ईमान होना चाहिए। क़ानून-ए-तलाक़ भी इंसानी फ़ितरत के मुताबिक़ है चाहे उसकी हिकमत समझ में आए या न आए। इसका हरगिज़ मतलब यह नहीं है कि तलाक़ का ग़लत इस्तेमाल करें। बात-बात पर बीवी को तलाक़ की धमकी देना, मुख़्तलिफ़ कामों को तलाक़ से जोड़ देना। हमें औरतों के बारे में अल्लाह से डरना चाहिए और अपने अहल-ओ-अयाल के लिए बेहतरीन किरदार अदा करना चाहिए।

अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रजि.) से रिवायत है कि रसूलल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

خيرُكم خيرُكم لأهلِه وأنا خيرُكم لأهلِي(صحيح ابن ماجه:1621)

तर्जुमा: "तुम में से बेहतर वह है जो अपने घर वालों के लिए बेहतर हो और तुम में से सबसे बेहतर अपने घर वालों के साथ हुस्न-ए-सुलूक (अच्छा व्यवहार) करने वाला मैं ख़ुद हूँ।"

इसलिए मर्द और औरत दोनों एक-दूसरे को बर्दाश्त करने की कोशिश करें और जहां तक हो सके तलाक़ की नौबत आने से बचें। इस्लामी ज़ाबिता-ए-तलाक़ के मुताबिक़ एक आदमी को 3 तलाक़ का इख़्तियार मिला है, जो एक मजलिस (बैठक) में तीनों नहीं दे सकता। अगर ग़लती से किसी ने एक मजलिस में तीन तलाक़ दे भी दी, तो एक ही मानी होगी, क्योंकि जिस तरह इंसान के इख़्तियार में 4 तलाक़ नहीं है, उसी तरह उसके इख़्तियार में एक मजलिस में 3 तलाक़ देने का इख़्तियार भी नहीं है। जिसने अपनी बीवी को पहले एक-एक कर के दो तलाक़ दे दी हो और अब तीसरी तलाक़ भी दे दी हो तो उससे मुताल्लिक़ अहकाम नीचे ज़िक्र किए जाते हैं।

तीसरी तलाक़ के बाद रूजू:

तीसरी तलाक़ के बाद मर्द को रूजू का हक़ नहीं होता, रूजू सिर्फ़ पहली और दूसरी तलाक़ पर होता है। इसकी दलील अल्लाह का यह फ़रमान है:

ٱلطَّلَٰقُ مَرَّتَانِ ۖ فَإِمۡسَاكُۢ بِمَعۡرُوفٍ أَوۡ تَسۡرِيحُۢ بِإِحۡسَٰن (بقرة:229)

तर्जुमा: "तलाक़ दो बार है, फिर या तो दस्तूर के मुताबिक़ अपनी बीवी को रोक लो या अच्छे तरीक़े से उसे रुख़सत कर दो।"

तीसरी तलाक़ की इद्दत:

तीसरी तलाक़ के बाद औरत की इद्दत 3 हैज़ (मासिक) है (अगर हामिला नहीं) जैसा कि अल्लाह का फ़रमान है:

وَالْمُطَلَّقَاتُ يَتَرَبَّصْنَ بِأَنْفُسِهِنَّ ثَلَاثَةَ قُرُوءٍ (بقره:228)

तर्जुमा: "और जिन औरतों को तलाक़ दी गई हो, वे अपने आपको तीन हैज़ (मासिक) तक इंतज़ार करें।"

हामिल औरत की इद्दत वज़'-ए-हमल (बच्चा पैदा होना) है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَأُولَاتُ الْأَحْمَالِ أَجَلُهُنَّ أَن يَضَعْنَ حَمْلَهُنَّ(الطلاق:4)

तर्जुमा: "और हामिला औरतों की इद्दत उनके वज़'-ए-हमल है।"

जिन्हें हैज़ न आता हो उनकी इद्दत 3 महीने है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَاللَّائِي يَئِسْنَ مِنَ الْمَحِيضِ مِن نِّسَائِكُمْ إِنِ ارْتَبْتُمْ فَعِدَّتُهُنَّ ثَلَاثَةُ أَشْهُرٍ وَاللَّائِي لَمْ يَحِضْنَ ۚ (الطلاق:4)

तर्जुमा: "और जो औरतें हैज़ से न उम्मीद हो गई हों, अगर तुम्हें शक हो तो उनकी इद्दत 3 महीने है, और उन लोगों की भी जिनकी हैज़ शुरू ही नहीं हुई।"

इद्दत गुज़ारने की जगह:

तीसरी तलाक़ की इद्दत औरत अपने मायके में गुज़ारेगी क्योंकि तीसरी तलाक़ के बाद औरत को तलाक़-ए-मुग़ल्लिज़ा पड़ जाती है जिसके बाद मर्द न तो रूजू कर सकता है और न ही (बग़ैर हलाला शरिया के) निकाह कर सकता है। इसलिए इस इद्दत में औरत ना तो सकनी (रहन-सहन) की हक़दार है और न ही नफ़क़ा (ख़र्च) की, सिवाय हामिला के, क्योंकि उसके लिए रिहाइश और नफाक़ा दोनों हैं। फ़ातिमा बिन्त-ए-क़ैस से मंक़ूल है कि वह कहती हैं कि मैंने कहा:

يا رسولَ اللهِ ! زوجي طلقني ثلاثًا . وأخافُ أن يُقْتَحَم عليَّ . قال : فأمرها فتحولتْ. (صحيح مسلم:1482)

तर्जुमा: "ऐ रसूलल्लाह! मेरे शौहर ने मुझे 3 तलाक़ दी हैं (यानि अलग-अलग), मुझे ख़तरा है कि कोई चोर-उचक्का दीवार न फांद के

आ जाए, लिहाज़ा आपने मुझे इजाज़त दे दी और मैं पति के घर से मुंतकिल हो गई।"

नान-ओ-नफ़क़ा का हुक़म:

तीसरी तलाक़ के बाद जैसे सकनी (मकान वग़ैरह/रिहाइश) का हक़ नहीं है, वैसे ही नफ़क़ा का भी हक़ नहीं है। इसकी दलील यह हदीस है:

عن النبيِّ صلَّى اللهُ عليهِ وسلَّمَ ، في المطلقةِ ثلاثًا . قال : " ليس لها سُكنى ولا نفقةٌ (صحيح مسلم:1480)

तर्जुमा: हज़रत फ़ातिमा बिन्त-ए-क़ैस से मंक़ूल है कहती हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने मुतल्लक़ा सोलासा के बारे में फ़रमाया है: इसके लिए न तो सकनी (रहन-सहन) है और न ही नफक़ा।"

हामिल वाली औरत का नफ़क़ा वज़'-ए-हमल (बच्चा पैदा होने) तक मर्द को बर्दाश्त करना होगा। अल्लाह का फ़रमान है:

وَإِنْ كُنَّ أُولَاتِ حَمْلٍ فَأَنْفِقُوا عَلَيْهِنَّ حَتَّى يَضَعْنَ حَمْلَهُنَّ (الطلاق :6)

तर्जुमा: "और अगर वे हामिल हैं, तो उनके हामिल होने तक उन पर ख़र्च देते रहो।"

नफ़क़ा में औरत की रिहाइश, विलादत का ख़र्चा, खाने-पीने और पहनने का ख़र्चा, दूध पिलाने की मज़दूरी और बच्चे के लिए दवा वग़ैरह का ख़र्चा वज़'-ए-हमल (बच्चा पैदा होने) तक मर्द के ज़िम्मे है।

औरत का माल:

तलाक़ के बाद औरत के ज़ाती माल में से या जो महर की सूरत में या हदिया की शक्ल में उसे दिया था, उसमें से कुछ भी नहीं ले सकता है। अल्लाह का फ़रमान है:

الطَّلَاقُ مَرَّتَانِ فَإِمْسَاكٌ بِمَعْرُوفٍ أَوْ تَسْرِيحٌ بِإِحْسَانٍ وَلَا يَحِلُّ لَكُمْ أَنْ تَأْخُذُوا مِمَّا آتَيْتُمُوهُنَّ شَيْئًا[البقرة:229]

"तलाक़ दो बार है, फिर या तो नेक नियति के साथ बीवी को रोके रखो, या भलाई के साथ उसे छोड़ दो। उस स्थिति में तुम्हारे लिए हलाल नहीं है कि तुम ने जो कुछ उन्हें दे रखा है, उसमें से कुछ वापस लो।"

यह तो उस मर्द का मामला है जिसने पहले महर की अदा कर दी हो। आजकल महर सिर्फ़ तय किया जाता है, अदा करने की कोशिश कम ही लोग करते हैं, जबकि महर औरत का हक़ है, उसे जल्द से

जल्द अदा कर देना चाहिए। तलाक़ की नौबत आने तक जिसने महर अदा न किया हो, वह तयशुदा महर की रक़म पूरा अदा करे। इसी तरह जो माल औरत ने शौहर को बतौर क़र्ज़ दिया था, चाहे घर बनाने में या कुछ सामान वग़ैरह ख़रीदने में, उसे भी लौटाना वाजिब है, लेकिन जो माल औरत ने ख़ुशी से दिया था, उसका दावा करना जाइज़ नहीं है, अलबत्ता मर्द अगर चाहे तो लौटा सकता है। उस वक्त औरत बे-सहारा होने की वजह से माल की ज़्यादा मोहताज होती है।

मीरास:

पहली या दूसरी तलाक़ की इद्दत के दौरान अगर शौहर (पति) फ़ौत हो जाए, तो औरत शौहर के मीरास का हक़दार होगी, लेकिन अगर तीसरी तलाक़ (बाइन) हो जाए, तो उसकी इद्दत या बाद में कभी, मर्द के इंतिक़ाल होने से मीरास का हक़दार नहीं होगी, क्योंकि बीवी शौहर (पति-पत्नी) की क़रीबी रिश्तेदारी ख़त्म हो चुकी है, जो मीरास का सबब बनती है।

औलाद की परवरिश का हक़दार:

तलाक़ के बाद औलाद की परवरिश का मसला पेश आता है कि उसकी परवरिश का ज़्यादा हक़दार कौन है? इस्लाम में औरत को ही बच्चे की परवरिश का ज़्यादा हक़ मिला है, लेकिन औरत इद्दत गुज़ार कर किसी और मर्द से दूसरी शादी कर ले, तो उस स्थिति में बच्चे की परवरिश का हक़दार बच्चों का वालिद (पिता) होगा। अब्दुल्लाह बिन अमर (रजि.) बयान करते हैं:

أنَّ امرأةً قالَت يا رسولَ اللَّهِ إنَّ ابني هذا كانَ بطني لَه وعاءً وثَديي لَه سِقاءً وحجري لَه حِواءً وإنَّ أباهُ طلَّقني وأرادَ أن ينتزِعَه منِّي فقالَ لَها رسولُ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ عليهِ وسلَّمَ أنتِ أحقُّ بِه ما لم تَنكِحي(صحيح أبي داود:2276)

तर्जुमा: "एक औरत ने कहा, 'या रसूलल्लाह! मेरा बेटा है, उसके लिए मेरा पेट बर्तन था, मेरी छाती उसकी मस्जिद थी और मेरी गोदी उसके लिए बनी रही। उसके वालिद ने मुझे तलाक़ दे दी है और अब वह उसे मुझसे छीनना चाहता है।' तो रसूलुल्लाह ﷺ ने कहा: 'तुम उसकी परवरिश करने की ज़्यादा हक़दार हो जब तक तुम किसी से निकाह न कर लो।"

लेकिन जब बच्चा बाश'ऊर हो जाए, तो उसे इख़्तियार है माँ-बाप में से जिसे चाहे चुन ले। अबू मैमूना सलमी का बयान है कि एक फ़ारसी औरत रसूलल्लाह ﷺ के पास आई, उस हाल में कि उसके शौहर ने

उसे तलाक़ दे दी थी और मियां बीवी (पति-पत्नी) दोनों बच्चे के दावेदार थे, तो रसूलुल्लाह ﷺ ने बच्चे से कहा:

هذا أبوكَ وهذِهِ أمُّكَ فخذ بيدِ أيِّهما شئتَ فأخذَ بيدِ أمِّهِ فانطلقَتْ بهِ(صحيح أبي داود: 2277)

तर्जुमा: "यह तुम्हारा वालिद है और यह तुम्हारी माँ है, तो तुम इनमें से जिस का चाहो, उसका हाथ पकड़ लो।"

बच्चा विलादत के बाद जहां भी रहे, उस वक्त से बुलूग़ तक उसका ख़र्चा वालिद के ज़िम्मे है, जैसा कि इस आयत से पता चलता है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَعَلَى الْمَوْلُودِ لَهُ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ ۚ لَا تُكَلَّفُ نَفْسٌ إِلَّا وُسْعَهَا ۚ لَا تُضَارَّ وَالِدَةٌ بِوَلَدِهَا وَلَا مَوْلُودٌ لَّهُ بِوَلَدِهِ ۚ وَعَلَى الْوَارِثِ مِثْلُ ذَٰلِكَ(البقرة: 233)

तर्जुमा: "और बच्चे के बाप पर उनका खाना-पीना और कपड़ा है, दस्तूर के मुताबिक़। किसी शख़्स को उसकी गुंजाइश से ज़्यादा तकलीफ़ नहीं दी जाएगी और न माँ को उसके बच्चे की वजह से नुक़सान पहुँचाया जाएगा, माँ-बाप को उनके बच्चे की वजह से और (अगर बच्चे का बाप न हो, तो बाप के) वारिस पर ऐसा ही (खाना, कपड़ा) है।"

तीसरी तलाक़ के बाद निकाह:

तीसरी तलाक़ देते ही औरत मर्द से अलग हो जाएगी, अब वह औरत उस मर्द से शादी भी नहीं कर सकती। शादी करने की एक स्थिति (situation) है उसका तरीक़ा यह है कि वह औरत दूसरे मर्द से शादी करे (यह शादी घर बसाने की नीयत से हो, न कि साज़िशी) वह मर्द उस औरत से जिमा करे और फिर (किसी के कहने से नहीं) अपनी मर्ज़ी से तलाक़ दे दे, तो इद्दत गुज़ार कर औरत पहले मर्द से शादी कर सकती है। अल्लाह का फ़रमान है:

فَإِن طَلَّقَهَا فَلَا تَحِلُّ لَهُ مِن بَعْدُ حَتَّىٰ تَنكِحَ زَوْجًا غَيْرَهُ ۗ فَإِن طَلَّقَهَا فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا أَن يَتَرَاجَعَا إِن ظَنَّا أَن يُقِيمَا حُدُودَ اللَّهِ ۗ وَتِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ يُبَيِّنُهَا لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ(البقرة:230)

तर्जुमा: "फिर अगर उसे (तीसरी बार) तलाक़ दे दे, तो अब उसके लिए हलाल नहीं है, जब तक वह औरत उसके सिवा किसी और से निकाह न करे। फिर अगर वह भी तलाक़ दे दे, तो उन दोनों को मेल-मिलाप करने में कोई गुनाह नहीं, बशर्ते कि वह जान लें कि अल्लाह की हदों को क़ाइम रख सकेंगे। यह अल्लाह की हदें हैं जिन्हें वह जानने वालों के लिए बयान कर रहा है।"

तीसरी तलाक़ पर मुरव्वजा हलाला:

अपने समाज में तीसरी तलाक़ या तीसरी तलाक़ पर हलाला का यह तरीक़ा राइज है कि किसी क़रीबी मर्द से एक रात के लिए मुतल्लक़ा (तलाक़ पायी हुई औरत) की शादी करा देता है और सुबह उसे तलाक़ दिलाकर पहले मर्द से फिर से शादी करा देता है। इस तरीक़े से औरत अपने पहले शौहर के लिए हलाल नहीं होगी, क्योंकि शरई हलाला हुआ ही नहीं, मुरव्वजा हलाला ज़िना है और इसी तरह हलाला कराने वालों पर अल्लाह की लानत है। शरई हलाला का तरीक़ा यह है कि औरत घर बसाने की मंशा से किसी मर्द से शादी करे, वह मर्द औरत से जिमा भी करे और अगर कभी तलाक़ की नौबत आए, तो यह औरत पहले शौहर से शादी कर सकती है।

एक साथ 3 तलाक़ का हुक्म:

यहां यह बात भी वाज़ेह रहे कि जिस औरत को एक ही लफ्ज़ में 3 तलाक़ दी गई या एक मजलिस में 3 तलाक़ दी गई हो, वह 3 नहीं मानी जाएगी, एक ही मानी होगी। ऐसी स्थिति में मर्द 3 हैज़ के दौरान रूजू कर सकता है, अगर रूजू की मुद्दत (3 हैज़) गुज़र जाए, तो नई शादी के ज़रिए फिर से बीवी बना सकता है।

============

[52].तुम जिसे ना पसंद करते हो मुमकिन है उसमें ख़ैर का पहलू हो

बर-सर-ए-इक़्तिदार (सत्ता में) बीजेपी हुकूमत में तालीम, सेहत, रोज़गार और म'ईशत (आर्थिक दशा) और तिजारत दिन-ब-दिन तनज़्ज़ुली (गिरावट) का शिकार है। ऐसे में मीडिया बतौर ख़ास अवाम की ज़बान बंद करना मुश्किल ही नहीं, बल्कि मुमकिन था। गो कि मीडिया के अक्सर हिस्सों पर इजारा-दारी (ठेकेदारी) भी इसी हुकूमत की है, मगर आज सोशल मीडिया का दौर है। कुछ अच्छे टेलीविज़न एंकरों के साथ यूट्यूबर की कसरत है जो बीजेपी की पहुंच से बाहर है।

हुकूमत ने अवाम और मीडिया की तवज्जोह मुल्क के बोहरान से हटा कर ऐसे क़ानून और एक्ट की तरफ़ करानी चाहिए, जिसमें कई साल तक अवाम और मीडिया मशग़ूल रहे और म'ईशत, तिजारत, तालीम, सेहत और रोज़गार की तनज़्ज़ुली (गिरावट) की तरफ़ ध्यान न जाए, मगर वार उल्टा पड़ गया।

गोया कि इन बोहरानो (संकट) के नाहिये (क्षेत्र) से अभी भी मीडिया में चर्चा नहीं है, मगर अवाम और मीडिया को मौजूदा मोहतल हुकूमत

के ख़िलाफ़ ज़बान खोलने का सबको बेहतरीन मौक़ा मिल गया है। ज़रा तसव्वुर करें कि तलाक़ पर पाबंदी लगने के बाद मुसलमानों की तरफ़ से किसी क़िस्म का मुज़ाहिरा नहीं हुआ, बाबरी मस्जिद की बहाली के लिए सैकड़ों साल की गई क़ुर्बानी का कोई समरा (नतीजा) बर-आमद नहीं हुआ। कम से कम मुजरिमाना काम करने वालों को अदालत सज़ा भी मुक़र्रर कर देती तो मुसलमानों का कलेजा कुछ ठंडा हो जाता, मगर वो भी न हो सका और मुसलमान एक हर्फ़ भी ना बोल सके। इससे हिंद में मुसलमानों की बेबसी का अंदाज़ा लगाया जा सकता है।

अभी हुकूमत जो काले क़ानून लोगों पर जबरन थोपने की कोशिश कर रही थी, वो फंदा बनकर उसी के गले में अटक गया है। वापस लेने में RSS और बीजेपी की नाक कटने का सवाल है, इसलिए वो ख़ुद से रुजू नहीं कर सकते। इसलिए अमित शाह बार-बार कहता है कि CAA किसी सूरत में वापस नहीं होगा। इस बात से हुकूमत की सरासीमगी (परेशानी) और शर्मिंदगी साफ़ ज़ाहिर है। हमें वापसी की उम्मीद अगर है तो अदालत से ही है। गोया अभी जहां मुसलमानों को काले क़ानून और ज़ुल्म के ख़िलाफ़ खड़ा होने में हिम्मत मिली, वहीं दिगर तमाम अक़वाम और मिल्लत को हुकूमत के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलंद करने और

इस हुकूमत के सियाह चेहरे और गुज़िश्ता तमाम काले कारनामे एक्सपोज़ करने का सुनहरा मौका दस्तियाब (प्राप्त) हुआ है।

अल्लाह ने फ़रमाया है:

كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ وَهُوَ كُرْهٌ لَّكُمْ ۖ وَعَسَىٰ أَن تَكْرَهُوا شَيْئًا وَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۖ وَعَسَىٰ أَن تُحِبُّوا شَيْئًا وَهُوَ شَرٌّ لَّكُمْ ۗ وَاللَّهُ يَعْلَمُ وَأَنتُمْ لَا تَعْلَمُونَ (البقره:216)

तर्जुमा: तुम पर जिहाद फ़र्ज़ किया गया चाहे वह तुम्हें दुश्वार मालूम हो। मुमकिन है कि तुम किसी चीज़ को बुरी जानो और दरअसल वही तुम्हारे लिए भली हो और यह भी मुमकिन है कि तुम किसी चीज़ को अच्छी समझो, हालांकि वह तुम्हारे लिए बुरी हो। हक़ीक़ी इल्म अल्लाह ही को है, तुम महज़ बेख़बर हो।

अल्लाह से ख़ास दुआ भी करें कि वह हमारे साथ ज़ुल्म करने वालों को इबरत नाक सज़ा दे और मुसलमानों को हिंदुस्तान में अमन और राहत के साथ रहने का माहौल साज़गार बनाए। आमीन

================

[53].तौबा की नमाज़

आदमी गुनाहों का पुतला है, ख़ताएँ होती रहती हैं। बनी आदम को हमेशा अल्लाह की तरफ़ रुजू करते रहना चाहिए। जब बनी आदम से ग़लती होती है और वह शर्मिंदा होकर अल्लाह से माफ़ी मांगता है तो वह अल्लाह को बहुत ज़्यादा माफ़ करने वाला पाता है।

अल्लाह ने अपने बंदों को माफ़ी पर उभारा है, फ़रमान-ए-इलाही है:

وتوبوا إلى الله جميعا أيها المؤمنون لعلكم تفلحون

तर्जुमा: और ईमान लाने वालो, तुम सब अल्लाह की तरफ़ तौबा (रुजू) करो ताकि तुम कामयाब हो।

(सूरह नूर: 31)

और नबी ﷺ ने जहाँ तौबा पर उभारा वहीं आपका इस पर कसरत से अमल भी रहा है। आप दिन में 100-100 बार इस्तिग़फार किया करते थे।

तौबा के लिए नमाज़-ए-तौबा शर्त नहीं, मुस्तहब है।

तौबा के लिए नदामत/शर्मिंदगी ही काफ़ी है, ताहम इस्तिग़फ़ार का मुस्तहसन (अच्छा) तरीक़ा यह है कि बंदा किसी ख़ास या आम गुनाह सरज़द हो जाने पर तौबा करने की नियत से वुज़ू कर के 2 रकात नमाज़ अदा करने के बाद निहायत ख़ुलूस-ए-दिल से अपने गुनाहों पर शर्मिंदा हो और अल्लाह से माफ़ी मांगे और आइंदा उन गुनाहों को छोड़ दे और ना करने का अज़्म कर ले तो अल्लाह रब्बुल आलमीन अपने बंदे को माफ़ फ़रमा देते हैं।

तौबा की नमाज़ की दलील:

नबी ﷺ ने फ़रमाया:

ما من عبد يذنب فيحسن الطهور ثم يقوم فيصلي ركعتين ثم يستغفر الله إلا غفر الله له

तर्जुमा: कोई आदमी जब गुनाह करता है फिर वुज़ू कर के 2 रकात नमाज़ पढ़ता है और अल्लाह से इस्तिग़फार करता है तो अल्लाह उसे माफ़ फ़रमा देता है।

(अबू दाऊद: 1521)

इस हदीस को अल्बानी रहिमहुल्लाह ने सहीह क़रार दिया है।

============

[54].दावत देना छोड़ देना हलाकत को वाजिब कर देता है

इस्लाम अल्लाह का प्यारा दीन है। यह प्यारा दीन ख़ूबसूरत बातों, हसीन तालीमात, पाकीज़ा अहकाम और उम्दा फ़िक्र व ख़्याल पर मुश्तमिल है। दरअसल, इसी दीन में तमाम दुनिया वालों के लिए अमन, राहत और सुकून व इत्मिनान है। जिसको भी ज़िंदगी का और जीने का सही तरीक़ा चाहिए, वह इस्लाम के साए में आ जाए। फिर अल्लाह की रहमत उसे ढांप लेगी और वह ख़ुशहाल ज़िंदगी गुज़ार सकेगा।

एक सवाल ज़हन में उभर कर सामने आता है कि जब इस्लाम के दामन में अमन है तो फिर मुसलमान आज परेशान हाल क्यों है? जिसको उरूज और इर्तिक़ा (उंचाई) मुक़र्रर थी, वह मज़लूम क़ौम बनकर क्यों रह गई है? हर तरफ़ मुसलमानों का क़त्ल-ए-आम क्यों हो रहा है? आज अल्लाह हमसे क्यों नाराज़ है और उसने क्यों हमें आज़माइश में मुब्तला कर दिया है?

इसका जवाब यह है कि हम सिर्फ़ दावा करने में मुसलमान रह गए हैं, अमल करने में मोहम्मदी से बहुत दूर हैं। अल्लाह ने हमें सबसे

प्यारा दीन दिया, हमने उस दीन की न हिफ़ाज़त की, न उसे सही से समझा और न ही दीन पर सही से अमल करने की कोशिश की, यानी हमने अपने दीन की मदद नहीं की, जिसकी वजह से अल्लाह की मदद हमसे दूर हो गई। अल्लाह ने हमें उम्मत-ए-मोहम्मदीया में से बनाया है और उम्मत के हर इंसान की ज़िम्मेदारी है कि वह दीन-ए-इस्लाम का इल्म हासिल करे, उस पर अमल करे और दूसरों को उसकी तालीम भी करे। अगर तालीम के रास्ते में मुश्किलात पेश आएं तो सब्र का दामन थामे। सूरह अल-असर का ख़ुलासा यही है और इन ही बातों पर अमल करने के बाद हम दुनिया और आख़िरत में निजात पाने वाले हैं, वर्ना नहीं। अल्लाह तआला ने मुसलमानों को दावत देने का हुक्म देते हुए इर्शाद फरमाया:

ولتكن منكم امة يدعون إلى الخير ويأمرون بالمعروف وينهون عن المنكر وأولئك هم المفلحون آل عمران:104

तर्जुमा: तुम में से एक जमात ऐसी होनी चाहिए जो भलाई की तरफ़ बुलाए और नेक कामों का हुक्म करे और बुरे कामों से रोके और यही लोग फ़लाह और निजात पाने वाले हैं।

और दूसरी जगह फ़रमाया:

ادع الى سبيل ربك بالحكمة والموعظة الحسنة وجادلهم بالتي هي أحسن.(النحل:125)

तर्जुमा: अपने रब की राह की तरफ़ लोगों को हिकमत और बेहतरीन नसीहत के साथ बुलाइए और उनसे बेहतरीन तरीक़े से बात कीजिए।

दावत और तब्लीग़ हिस्ब-ए-इस्तिताअत और बक़दर-ए-इल्म हर मुसलमान की ज़िम्मेदारी है, रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का फ़रमान है:

بلغوا عني ولو آية وحدثوا عن بني إسرائيل ولا حرج ومن كذب علي متعمدا فليتبوا مقعده من النار.(صحيح البخاري:3461)

तर्जुमा: मेरा पैग़ाम लोगों तक पहुँचाओ अगर चाहे एक ही आयत हो और बनी इस्राईल के वाक़ि'आत तुम बयान कर सकते हो उनमें कोई हर्ज नहीं और जिसने मुझ पर जान-बूझ कर झूठ बोला तो उसे अपने जहन्नम के ठिकाने के लिए तैयार रहना चाहिए।

अल्लाह ने आख़िरी नबी भेजकर अंबिया की आमद का सिलसिला मुनक़ते कर दिया, अब क़यामत तक सिर्फ़ आख़िरी नबी मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का पैग़ाम ही दुनिया वालों के लिए राहे निजात है। इस पैग़ाम को दुनिया के हर फ़र्द तक और दुनिया के हर कोने-कोने तक पहुँचाना हर मुसलमान का फ़र्ज़ है। यहाँ यह

भी हक़ीक़त है कि लोगों तक सही दावत न पहुँचने की वजह से इस्लाम अजनबी होता जा रहा है। मुसलमानों के लिए ना-गुफ़्ता-बिह-हालात (ऐसे हालात जो ब्यान नही किए जा सकते) पैदा होते जा रहे हैं। मुझे यह बात कहने में ज़रा भी शक नहीं कि इस उम्मत के अकसर अफ़राद ने असल दावत का फ़र्ज़ छोड़ रखा है जिसकी वजह से तबाही हमारी मुक़द्दर बन गई है। ऐसे मौक़े पर अल्लाह की तबाही नेक और बुरे सबको शामिल होती है। इस सिलसिले में कुरआन और हदीस के चंद दलाइल देखते हैं जिनमें दीन की दावत को छोड़ देने पर तबाही और बर्बादी का ज़िक्र है। अल्लाह का फ़रमान है:

لعن الذين كفروا من بني إسرائيل على لسان داؤد وعيسى بن مريم ذلك بما عصوا وكانوا يعتدون. كانوا لا يتناهون عن منكر فعلوه لبس ما كانوا يفعلون.(المائدة:7978)

तर्जुमा: बनी इस्राईल के काफ़िरों पर दाऊद और ईसा बिन मरियम (अलैहिस्सलाम) की ज़बानी लानत की गई इस वजह से कि वे नाफ़रमानी करते थे और हद से आगे बढ़ जाते थे। आपस में एक-दूसरे को बुरे कामों से जो वे करते थे, नहीं रोकते थे। जो कुछ भी वे करते थे, यक़ीनन वह बहुत बुरा था।

जो मुंकर से लोगों को नहीं रोकते थे, वे लानत के मुस्तहिक़ होते हैं और मुंकर वाले तो अज़ाब से दो-चार होते ही हैं और बचते वही हैं

जो नेकी करते हैं, बुराई से रुकते हैं और लोगों को भी नेकी का हुक्म देते हैं और बुराई से रोकते हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

فلما نسوا ما ذكروا به انجينا الذين ينهون عن السوء وأخذنا الذين ظلموا بعذاب بئس بما كانوا يفسقون.(الأعراف:165)

तर्जुमा: तो जब वे उस चीज़ को भूल गए जो उन्हें समझाई जाती थी, तो हमने उन लोगों को बचा लिया जो इस बुरी आदत से मना करते थे और उन लोगों को, जो ज़्यादती करते थे, एक सख़्त अज़ाब में पकड़ लिया, इस वजह से कि वे बे-हुक्मी किया करते थे।

एक जगह अल्लाह ने सराहत के साथ ज़िक्र किया है कि पहले ज़माने में फ़साद और मुंकर से रोकने वाले कम थे और हमने सब को हलाक कर दिया, और उनमें से कुछ अच्छे लोगों को बचा लिया जो लोगों को फ़साद और बुराई से मना किया करते थे। चुनांचे फ़रमान-ए-इलाही है:

فلولا كان من القرون من قبلكم اؤلوا بقية ينهون عن الفساد في الأرض إلا قليلا ممن انجينا منهم واتبع الذين ظلموا ما اترفوا فيه وكانوا مجرمين.(هود:116)

तर्जुमा: पस क्यों न तुम से पहले ज़माने के लोगों में ऐसे अहले ख़ैर लोग हुए जो ज़मीन में फ़साद फैलाने से रोकते, सिवाय उन चंद लोगों

के जिन्हें हमने उनमें से निजात दी थी। ज़ालिम लोग तो उस चीज़ के पीछे पड़ गए जिस में उन्हें आराम मिला था और वे गुनहगार थे।

अब चंद हदीसें ज़िक्र करता हूँ जिनमें दीन की दावत छोड़ देने पर हलाकत-ख़ेज़ी (तबाह और बर्बादी) का ज़िक्र है। जरीर बिन अब्दुल्लाह बिन बिजली (रज़ियल्लाहु अन्हु) बयान करते हैं कि मैंने नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को फ़रमाते हुए सुना:

ما من رجل يكون في قوم يعمل فيهم بالمعاصي يقدرون على ان يغيروا إلا أصابهم الله بعذاب من قبل ان يموتوا.(صحيح ابي داؤد: 4339)

तर्जुमा: कोई ऐसा आदमी नहीं है जो ऐसी क़ौम में हो जहाँ अल्लाह की नाफ़रमानी हो रही हो और लोग उनकी इस्लाह और बदलने की क़ादिर हो, फिर भी वे उनकी इस्लाह न करें और न बदलें, तो अल्लाह उन्हें उनके मरने से पहले अज़ाब देगा।

अबू बक्र सिद्धीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि उन्होंने कहा:

يا أيها الناس انكم تقرؤون هذه الآية يا أيها الذين آمنوا عليكم أنفسكم لا يضركم من ضل إذا اهتديتم واني سمعت رسول الله صلى الله عليه وسلم يقول ان الناس إذا راؤ ظالما فلم يأخذوا على يديه أوشك أن يعمهم الله بعقاب منه.(صحيح الترمذي: 3057)

तर्जुमा: ऐ लोगों, तुम यह आयत पढ़ते हो:

{يا أيها الذين آمنوا عليكم أنفسكم لا يضركم من ضل إذا اهتديتم}

और मैंने रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को यह कहते हुए भी सुना है कि जब लोग ज़ालिम (ज़ुल्म करते हुए) को देखें फिर भी उसके हाथ न पकड़ें (उसे ज़ुल्म करने से रोक न दें) तो क़रीब है कि उन पर अल्लाह की तरफ़ से उमूमी अज़ाब आ जाए (और वह उन्हें अपनी पकड़ में ले ले।)

हज़रत हुज़ैफा बिन यमाल रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

والذي نفسي بيده لتامرن بالمعروف ولتنهون عن المنكر أو ليوشكن الله ان يبعث عليكم عقابا منه ثم تدعونه فلا يستجيب لكم. (صحيح الترمذي:2169)

तर्जुमा: उस ज़ात की क़स्म, जिस के हाथ में मेरी जान है, तुम भलाई का हुक्म दो और बुराई से रोकने का काम करो, वर्ना क़रीब है कि अल्लाह तुम पर अपना अज़ाब भेज दे, फिर तुम अल्लाह से दुआ करो और तुम्हारी दुआ क़बूल न की जाए।

हज़रत नौमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है, वह बयान करते हैं कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

مثل القائم على حدود الله والواقع فيها كمثل قوم استهموا على سفينة فأصاب بعضهم أعلاها وبعضهم أسفلها فكان الذين في أسفلها إذا استقوا من الماء مروا على من فوقهم فقالوا لو انا خرقنا في نصيبنا خرقا ولم نؤذ من فوقنا فإن يتركوهم وما أرادوا هلكوا جميعا وان أخذوا على ايديهم نجوا ونجوا جميعا.(صحيح البخاري:2493)

तर्जुमा: अल्लाह की हुदूद पर क़ायम रहने वाले और उसमें घुस जाने वाले (यानी खिलाफ़ करने वाले) की मिसाल ऐसे लोगों की सी है जिन्होंने एक कुश्ती के ज़रिए कुआँ का तक़सीम कर लिया, कुछ लोगों के हिस्से में ऊपर वाला तबक़ा आया जबकि कुछ लोगों के हिस्से में नीचे वाला हिस्सा ले लिया। अब नीचे हिस्से वालों को जब पानी की ज़रूरत होती तो वे ऊपर वालों के पास से गुज़रते। उन्होंने ख़्याल किया कि अगर हम अपने नीचे हिस्से में ही सुराख़ कर लें तो अच्छा होगा, इस तरह हम ऊपर वालों के लिए तकलीफ़ का बाइस नहीं होंगे। अब अगर ऊपर वाले नीचे वालों को उनके इरादे के मुताबिक़ छोड़ दें तो सब हलाक हो जाएंगे और अगर वे उनका हाथ पकड़ लें तो वे भी बच जाएंगे और दूसरे भी महफ़ूज़ रहेंगे।

इन आयात और अहादीस से जो बात साफ़-साफ़-साफ़ समझ में आ रही है वह यह है कि अकसर मुसलमानों ने दावत के फ़रीज़े को छोड़ रखा है जिसके नतीजे में आज वे क़िस्म-क़िस्म के दुनियावी अज़ाब में मुब्तला हैं। दूसरी तरफ़ हम देखते हैं कि दावत देने वालों की भी कुछ कमी नहीं है, बड़े पैमाने पर और बड़े-बड़े इजलास मुन'अक़िद हो रहे हैं, बसा औक़ात एक-एक प्रोग्राम की लिस्ट में 100-100 तक़रीर करने और मक़ालात निगार के नाम होते हैं। उन अफ़राद की कोशिशों में सिर्फ़ एक-एक फ़ायदा तलाश किया जाए तो समझ के लिए इस प्रोग्राम से 100 फ़ायदा बनते हैं, मगर हक़ीक़त में समाज को उन जैसे प्रोग्रामों से आज कोई फ़ायदा होता नज़र नहीं आ रहा है। दुनिया की उन सारी दावतों को देखते हुए हमें लगता है कि दावत का काम नहीं हो रहा है या अगर कुछ दावाती काम हो रहा है तो उसमें बहुत सारी ख़ामियाँ पैदा हो गई हैं। आइए तलाश करते हैं ख़ामियाँ कहाँ हैं?

एक बड़ी ख़ामी तो यह है कि मुसलमानों की एक बड़ी तादाद जामियात और मदरासों से फ़ारिग़ होती है और ज़्यादा तादाद में दीन का इल्म रखने वाले इल्म हासिल करने के बाद दूसरा मैदान इख़्तियार कर लेते हैं और सिरे से तब्लीग़ ही नहीं करते।

दूसरी ख़ामी यह है कि जब अहले इल्म ने दीन की तब्लीग़ में कोताही की, लोगों तक दीन पहुंचाने में सुस्ती से काम लिया, तो उनकी जगह जाहिलों ने ले ली। यही वजह है कि आज कम इल्म वाले मुफ़्ती और आलिम बने उम्मत को गुमराही की तरफ़ ले जा रहे हैं।

जो लोग फ़िरक़ा परस्ती की दावत दे रहे हैं, वे लोगों से हक़ छुपाते हैं और बातिल की दावत देते हैं। मेरे कहने का मतलब यह है कि वे दीन के नुसूस को तोड़-मरोड़ कर अपने मस्लक पर मुंतबिक़ करते हैं और लोगों से हक़ छुपा कर अपने ख़ुद-साख़्ता अक़्वाल की तरफ़ बुलाते हैं।

एक ख़ामी तो यह है कि उम्मत के पढ़े-लिखे अफ़राद दावत में असल चीज़ की दावत से किनारा कशी इख़्तियार कर रहे हैं। अंबिया की असल दावत "तौहीद" की नश्र-ओ-इशाअत और "शिर्क" की बुराई थी, जिस से आज के अक्सर उलमा कतरा रहे हैं, इल्ला मा-शा-अल्लाह।

आज इल्म तिजारत बन गया है। वक़्त और आलिम के क़दर के हिसाब से तक़रीर में पैसा मुश्तरिक किया जाता है। ऐसे में दावत

कहां होगी, वह तो तिजारत बन गई और जब दावत तिजारत बन जाए तो उम्मत को क्या ख़ुद को भी फ़ायदा नहीं पहुंचा सकता।

दावत का सर्कल बिल्कुल महदूद हो कर रह गया है। दीन तो मुसलमानों के पास है ही। उलमा के लिए तब्लीग़ का असल मैदान ग़ैरों पर इस्लाम पेश करना है, मगर अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि इस मैदान में असरी तालीम याफ़्ता कुछ डॉ. और इंजीनियर तो काम कर रहे हैं, मगर अंबिया के असल वारिस नज़र नहीं आते।

दावत का सर्कल इस मानी में भी तंग हो गया है कि मुसलमान मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) टोलियों में बंटे हुए हैं। हर फ़िरक़े वाला सिर्फ़ अपने सर्कल में दावत दे कर मस्त है और समझ रहा है कि हम दावत का बड़ा काम कर रहे हैं, जबकि न तो ग़ैर मुसलमानों तक पहुँच रहे हैं और न ही अपने सिवा दूसरे मुसलमानों के पास जा पाते हैं।

जो कुछ दाई पाए जाते हैं उनमें अक्सर अपने नफ़्स की दावत से बिलकुल ग़ाफ़िल हैं। समझते हैं कि क़ुरआन और हदीस को दूसरों पर पेश कर देना ही दावत है, हमारे लिए उन बातों का अमल में लाना

कोई ज़रूरी नहीं है। यह बात ख़ुद से कहते नहीं हैं, मगर अमलन ऐसा ही ज़ाहिर होता है। ऐसे दाई की तक़रीर में असर कहां से पैदा होगा?

दावत में एक पहलू हुक्म का है और दूसरा नही का। यानी जिस तरह हम पर भलाई की बातों का हुक्म देना वाजिब है, उसी तरह बुरी बातों से रोकना भी वाजिब है। आज अच्छी-अच्छी बातों की बड़ी तब्लीग़ होती है, मगर मुंकिरात पर कोई किसी को टोकने वाला नहीं है।

कुछ दाई नाफ़रमानों को तब्लीग़ नहीं करते। यह सोचते हैं कि तब्लीग़ से उन्हें क्या फ़ायदा होगा। यह बड़ी भूल है, जिसका इर्तिकाब पहले बनी इसराइल भी कर चुकी है। बुराई करने वालों को जब सालिहीन नसीहत करते, तो कुछ लोग कहते कि उन पर अज़ाब तो आना ही है, उन्हें नसीहत करके क्या फ़ायदा?

इन बातों का ख़ुलासा यह है कि दावत हम मुसलमानों का अहम फ़रीज़ा है, उसकी अदायगी में इमानदारी का सबूत दें। दीनी दावत की इतनी ही जानकारी दें जितनी मालूमात यक़ीन और बुरहान के साथ हो। फिर दावत के मैदान में पेश होने वाली ज़िक्र की गई ख़ामियाँ अपने दरमियाँन से दूर करें। तभी हमारी दावत कामयाब होगी और हमारा यह अमल निजात का बाइस (कारण) बन सकता है।

अल्लाह हम सब को इख़्लास और लिल्लाहियत के साथ दावत देने की तौफ़ीक़ दे। आमीन।

=================

[55].दीन-ए-इस्लाम सरापा अदल है

अदल, हक़, बराबरी, यकसानियत और रास्त के मानी में इस्तेमाल होता है। दुनिया का कोई भी निज़ाम अदल से ख़ाली होने पर निज़ाम कहने के लायक़ नहीं है। निज़ाम कहते ही हैं सीधी राह को। यही वजह है कि इस्लाम का सारा निज़ाम अदल पर क़ायम है, ब-अल्फ़ाज़-ए-दीगर, अदल और इंसाफ़ के बग़ैर इस्लाम का अदना तसव्वुर भी बाक़ी नहीं रह सकेगा। क़यामत के दिन अल्लाह अदल के ज़रिए ही बंदों के आमाल का पूरा-पूरा बदला देगा।

दुनिया चूंकि इम्तिहान और आज़माइश की जगह है, यहां घर से लेकर मुल्क तक और स्टेशन से लेकर अदालत हर जगह हमें कभी अदल नज़र आता है और कभी इसके बरख़िलाफ़ ज़ुल्म दिखाई देता है। बल्कि यह कहना बेजा न होगा कि दुनिया की अकसर जगहों में अदल कम और ज़ुल्म और ज़ोर ही नज़र आता है। नबी ﷺ ने दीन के तमाम उमूर में मियाना रवी इख़्तियार करने का हुक्म दिया है, यह ऐन अदल है। इबादत करें दरमियाँना रवी के साथ जिसमें ज़ुल्म न हो, ग़रज़ यह कि इस्लाम की तमाम तालीमात अदल पर मबनी हैं क्योंकि यह मिन जानिब अल्लाह है। ग़ैरुल्लाह की जानिब से निज़ाम-ए-ज़िंदगी और

सियादत और क़ियादत के लिए जैसा भी दस्तूर बना लिया जाए, उसमें अदल नहीं होगा। अदल होगा भी तो बराए नाम होगा। क़ुरआन में अल्लाह ने इस बात की तरफ़ इशारा कर दिया है कि अगर यह किताब (क़ुरआन) अल्लाह के अलावा दूसरों की जानिब से होती, तो तुम इसमें बहुत ज़्यादा इख़्तिलाफ़ पाते। जब हाल यह है कि इंसानों का बनाया हुआ कोई भी दस्तूर इख़्तिलाफ़ से ख़ाली और अदल पर मबनी नहीं हो सकता, तो फिर हुकूमत और अदालत के इस दस्तूर के ज़रिए इंसानियत को कैसे अदल इंसाफ़ मिलेगा?

अल्लाह ने दुनिया में क़ुरआन की शक्ल में आदिलाना निज़ाम-ए-ज़िंदगी और दस्तूर-ए-हयात भेज कर इंसानों पर बड़ा करम किया है। इस दस्तूर को दुनिया के जिस ख़ित्ते में नाफ़िज़ किया जाए, वहां अमन और अमान होगा, अमीर और ग़रीब में बराबर सलूक होगा। अदल और इंसाफ़ के साए में लोग बेख़ौफ़ होकर ज़िंदगी गुज़ार सकेंगे। कोई बिला वजह किसी पर ज़्यादती करने से बचेगा। ज़ालिम को उसके किए की सज़ा और मज़लूम को पूरा पूरा इंसाफ़ मिलेगा। यहां तक कि इस ख़ित्ते में रहने वाले हैवानों के साथ भी एहसान और सुलूक किया जाएगा।

अल्हम्दुलिल्लाह, इंसानों में कायनात के सबसे बड़े आदिल और मुनसिफ़ मुहम्मद ﷺ ने अल्लाह का आदिलाना पैग़ाम अपनी उम्मत तक अदल और इंसाफ़ के साथ पहुंचाया। आप ﷺ ने ज़िंदगी के हर मोड़ पर अपनी उम्मत को न सिर्फ़ अदल का दामन थामने का हुक्म दिया, बल्कि अदल और इंसाफ़ के बाब में ऐसी मिसाल पेश की, जिसकी नज़ीर दुनिया पेश करने से क़ासिर है। इसका अंदाज़ा सही बुख़ारी के एक वाक़िआ से लगा सकते हैं कि एक बड़े ख़ानदान की औरत फ़ातिमा बिन्त असवद ने चोरी कर ली। इस्लाम में ऐसे मुजरिम की सज़ा हाथ काटना है। बड़े ख़ानदान की होने की वजह से लोगों को फ़िक्र लाहिक़ हो गई कि अगर उसका हाथ काट लिया जाए तो उसके साथ पूरे ख़ानदान की रुसवाई है, इसलिए लोगों ने इस मामले में रसूल ﷺ से सिफ़ारिश की सोची। चुनांचे औसामा बिन ज़ैद रज़ियल्लाहु अन्हु इस औरत की सिफ़ारिश के लिए नबी ﷺ के पास आए। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इस वक्त औसामा बिन ज़ैद और अपनी पूरी उम्मत को ऐसी तालीम दी जिसकी मिसाल क़यामत तक कोई हाकिम, जज, वकील, लीडर, और रहनुमा पेश नहीं कर सकता। आइए जानते हैं कि आप ﷺ ने क्या फ़रमाया:

"पिछली बहुत सी उम्मतें इसलिए हलाक हो गईं कि जब उनका कोई शरीफ़ आदमी चोरी करता तो उसे छोड़ देते और अगर कोई कमज़ोर

चोरी करता तो उस पर हद क़ाइम करते। और अल्लाह की क़सम! अगर फ़ातिमा बिन्त मुहम्मद ﷺ भी चोरी करे तो मैं उसका भी हाथ काट डालूंगा।"

भला दुनिया का कौन सा हाकिम अपनी बेटी को चोरी की सज़ा के तौर पर उसका हाथ काट सकता है? यक़ीनन कोई भी नहीं। हां, वह हाकिम ऐसा कर सकता है जो इस्लाम का सच्चा पैरोकार होगा और अल्लाह से बहुत ज़्यादा डरने वाला होगा।

तारीख़ गवाह है कि नबी ﷺ के नक़्श-ए-क़दम पर चलते हुए ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन ने अपने ज़माने में लोगों के साथ वैसा ही अदल और इंसाफ़ किया, जिसकी तालीम अल्लाह और उसके रसूल ﷺ ने दी है। उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने लोगों के इख़्तिलाफ़ और मामला हल करने के लिए काज़ी मुन्तख़ब किए और आपके बाद दूसरे ख़लीफ़ा भी मंसब-ए-क़जा और दारुल क़जा बहाल रखे। काज़ी को बाक़ायदा सैलरी दी जाती थी ताकि ग़ैर-जानिबदार होकर अदल और इंसाफ़ पर मबनी फ़ैसला कर सके। ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन के बाद भी इस्लाम के नाम लेवा, दीन पर अमल करने, तालीमात-ए-इलाहिया की इशाअत करने और लोगों के दरमियाँन मामलात करने में अदल का दामन थामे रहे।

मुहम्मद ﷺ ने आदिल हुक्मरान की हौसला अफ़ज़ाई की है और अदल के साथ हुक्मरानी करने वालों के बुलंद दर्जात का ज़िक्र फ़रमाया है। नबी ﷺ की उन तालीमात से जहां एक तरफ़ मुस्लिम हुक्मरान को अदल करने में तरग़ीब मिलती है, वहीं ज़ुल्म और ज़्यादती के भयानक नताइज से ख़ौफ़ खाते हुए किसी की हक़ तलफ़ी और जानिबदारी से अल्लाह से डर महसूस करता है।

हिन्दुस्तान के मुस्लिम हुक्मरानों की बात की जाए जिन्होंने हिन्दुओं की अकसरियत वाले मुल्क पर सैंकड़ों साल हुक्मरानी की, तो बिला शक कहा जाएगा कि उन सब ने बिला इम्तियाज़ सभी हिन्दुस्तानियों के साथ इंसाफ़ से काम लिया। ख़ास और आम और ख़ुसूसन इंसाफ़ के लिए उनके दरबारों में "दीवान-ए-आम" होता, जहां हर किसी की फ़रियाद सुनी जाती। बल्कि कितने हुक्मरानों के यहां ज़ंजीर-ए-अदल होता, जिसे हिलाकर मज़लूम अपनी आवाज़ आसानी से बादशाह तक पहुंचा सकता था। ज़ंजीर-ए-अदल का मतलब यह था कि हर किसी मज़लूम से बादशाह आगाह रहे और उसे मुकम्मल इंसाफ़ दे सके। उन हुक्मरानों की ग़ैर मुस्लिमों के साथ रवादारी, अदल और इंसाफ़, हुक़ूक़ और मुरा'आत (ख़ास सुलूक़) और एहसान और सुलूक हिन्दुस्तानी तारीख़ों का रौशन बाब है। आज कई मुस्लिम बादशाह

जिनमें ज़हीरुद्दीन बाबर भी हैं, जिन्हें हिन्दुस्तानी हुकूमत ज़ालिम बादशाह की शक्ल में पेश करती है। यह सरासर ज़्यादती, तारीख़ के साथ खिलवाड़ और आज के मुसलमानों के साथ ज़ुल्म और ना-इंसाफी है।

9 नवंबर 2019, बरोज़ सनिचर, हिन्दुस्तान की सुप्रीम कोर्ट ने बाबरी मस्जिद क़ज़िया में ना-इंसाफी करते हुए यह फ़ैसला सुनाया है कि यह मस्जिद राम जन्मभूमि है। इस जगह हिन्दू राम मंदिर तामीर करेगा।

"हमको उनसे है वफ़ा की उम्मीद
जो नहीं जानते वफ़ा क्या है।"

बाबर क्या, कोई भी मुस्लिम हाकिम न किसी हिन्दू का घर जलाया, न कहीं घरों के दरवाजे तोड़े, न मंदिर तुड़वाकर उस पर मस्जिद बनवाई,ना-हक़ ख़ून बहाया यहाँ तक कि किसी को जबरन मुसलमान नहीं बनाया। बाबर ने तो अपनी औलाद हुमायूँ और बनारस के हाकिम अबुल हसन को मंदिर ढहाने से ख़ास तौर पर मना किया था। ख़ैर बाबरी मस्जिद के सिलसिले में जो होना था सो हो गया, अदालत का

फ़ैसला शायद अब बदला भी नहीं जा सकता, बाबरी मस्जिद की जगह राम मंदिर तामीर होकर रहेगा, तथापि यह इतिहास कभी नहीं मिट पाएगी कि बाबरी मस्जिद तोड़कर उसके मलबे पर राम मंदिर बनाया गया। साथ ही अदालत की यह सच्ची बात भी याद रहेगी कि बाबरी मस्जिद की तामीर के वक्त कोई मंदिर नहीं तोड़ा गया था।

अब सोचना या करना क्या है? ऊपर मैंने बताया है कि अल्लाह के दीन के अलावा किसी दस्तूर में अदल और इंसाफ़ मुमकिन नहीं है, इससे हक़ मुसलमानों को एक सबक़ मिलता है कि दुनिया में अदल चाहते हैं तो फिर हमें अल्लाह के दीन की तरफ़ आना होगा और किताबुल्लाह को ही अपना दस्तूर बनाना पड़ेगा।

==============

[56].नमाज़अव्वाबीन के फ़ज़ाइल और अहकाम-ए-

अवाम (पब्लिक) मे अव्वाबीन (तौबा की नमाज़) की नमाज़ का बहुत चर्चा है मगर बेशतर उसकी असल हक़ीक़त से ना वाक़िफ़ है और अहनाफ़ के यहाँ आमतौर पर लोग यह नमाज़ मग़रिब के बाद 6 रकात अदा करते हैं जब कि अव्वाबीन की नमाज़ का वक़्त यह नहीं है। अवाम और अहनाफ़ की इसी ग़लती पर मुतनब्बेह करने के लिए मैंने यह मज़मून लिखा है।

अव्वाबीन का मतलब:

अव्वाबीन मुबालग़ा का सीग़ा है जिसकी मानी क़सरत से अल्लाह की तरफ़ लौटने वाला, ज़िक्र और तस्बीह करने वाला, गुनाहों पर शर्मिंदा होने वाला और तौबा करने वाला है। अव्वाबीन इसी अव्वाब (तौबा और इस्तग़फ़ार) की जम (जमाअत) है।

क़ुरआन में अव्वाब और अव्वाबीन दोनों इस्तेमाल हुआ है, अल्लाह का फ़रमान है:

هَٰذَا مَا تُوعَدُونَ لِكُلِّ أَوَّابٍ حَفِيظٍ (ق:32)

तर्जुमा: यह है जिस का तुमसे वादा किया जाता था हर उस शख़्स के लिए जो अल्लाह की तरफ़ लौटने वाला और पाबंदी करने वाला हो।

अल्लाह का फ़रमान है:

رَّبُّكُمْ أَعْلَمُ بِمَا فِي نُفُوسِكُمْ ۚ إِن تَكُونُوا صَالِحِينَ فَإِنَّهُ كَانَ لِلْأَوَّابِينَ غَفُورًا (الاسراء:25)

तर्जुमा: जो कुछ तुम्हारे दिलों में है उसे तुम्हारा रब बख़ूबी जानता है, अगर तुम नेक हो तो वह तो लौटने वालों की बख़्शिश करने वाला है।

एक दूसरी जगह अल्लाह का फ़रमान है:

وَلَقَدْ آتَيْنَا دَاوُودَ مِنَّا فَضْلًا ۖ يَا جِبَالُ أَوِّبِي مَعَهُ وَالطَّيْرَ ۖ وَأَلَنَّا لَهُ الْحَدِيدَ (سبا:10)

तर्जुमा: और हमने दाऊद पर अपना फ़ज़ल किया, ऐ पहाड़ों! इसके साथ रग़बत के साथ तस्बीह पढ़ा करो और परिंदों को भी (यही हुक्म है) और हमने उसके लिए लोहा नर्म कर दिया।

नमाज़े अव्वाबीन और चाशत की नमाज़ दोनों एक ही है:

नमाज़े अव्वाबीन और चाशत की नमाज़ दोनों एक ही है, इनमें कोई फ़र्क़ नहीं है। इससे मुताल्लिक़ कई हदीस और इमामों और मुहद्दिसीन

के मुतद्दिद अक़्वाल हैं मगर एक हदीस ही इसके सबूत के लिए काफ़ी है और क़ौल-ए-मुहम्मद ﷺ के सामने दुनिया के सारे अक़्वाल और लोगों की सारी बातें मर्दूद हैं।

अब्दुल्लाह बिन हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है:

أوصاني خليلي بثلاثٍ لستُ بتاركهنَّ ، أن لا أنامَ إلا على وترٍ ، و أن لا أدَعَ ركعتي الضُّحى ، فإنها صلاةُ الأوّابينَ ، و صيامِ ثلاثةِ أيامٍ من كلِّ شهرٍ۔(صحيح الترغيب:664، صحيح ابن خزيمة:1223)

तर्जुमा: मुझे मेरे ख़लील ﷺ ने 3 चीज़ों की वसीयत की कि मैं इन्हें कभी नहीं छोड़ूंगा। बिना वित्र पढ़े न सोऊं, चाशत की दो रकअत न छोड़ूं क्योंकि यही अव्वाबीन की नमाज़ है और हर महीने 3 रोज़ न छोड़ूं।

☆ इस हदीस को शैख़ अल्बानी ने सही अत-तर्ग़ीब और सही इब्न खुज़ैमा में सही क़रार दिया है।

इस हदीस में नबी ﷺ ने वाज़ेह तौर पर बता दिया कि चाशत की नमाज़ ही अव्वाबीन की नमाज़ है।

यहाँ एक अहम बात याद रखें कि फ़ज्र के बाद से ज़ुह्र के पहले तक 3 नमाज़ों का ज़िक्र है। (1) इशराक़ की नमाज़ (2) चाशत की नमाज़ (3) अव्वाबीन की नमाज़।

इन तीनों नमाज़ों में चाशत और अव्वाबीन की नमाज़ दोनों एक ही है और इशराक़ की नमाज़ वक़्त पर अदा करने से चाशत की नमाज़ है। यानी इशराक़ और चाशत की नमाज़ भी दोनों एक ही है। हमने वक़्त पर अदा कर लिया तो इशराक़ कहलाया और ज़ुह्र की नमाज़ से पहले बीच में या आख़िर वक़्त में अदा की तो चाशत की नमाज़ कहलाएगी। गोया तुलू-ए-आफ़ताब के कुछ मिनट बाद इशराक़ का वक़्त है और यही वक़्त चाशत का भी है मगर उसे ज़ुह्र से पहले किसी भी वक़्त अदा कर सकते हैं। ज़ुह्र से पहले वस्त या आखिर वक़्त में अदा की गई नमाज़ को चाशत कहेंगे फिर इशराक़ नहीं कहेंगे।

नमाज़े अव्वाबीन के फ़ज़ाइल:

चूंकि चाशत और अव्वाबीन की नमाज़ दोनों एक ही है, इस वजह से चाशत की फ़ज़ीलत से मुताल्लिक़ जो भी हदीसें वारिद हैं, वो सभी अव्वाबीन की भी फ़ज़ीलत में हैं।

चंद एक हदीसें मुलाहिज़ा फ़रमाएं:

(1) पहली हदीस:

عَنْ أَبِي ذَرٍّ عَنْ النَّبِيِّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ أَنَّهُ قَالَ يُصْبِحُ عَلَى كُلِّ سُلَامَى مِنْ أَحَدِكُمْ صَدَقَةٌ فَكُلُّ تَسْبِيحَةٍ صَدَقَةٌ وَكُلُّ تَحْمِيدَةٍ صَدَقَةٌ وَكُلُّ تَهْلِيلَةٍ صَدَقَةٌ وَكُلُّ تَكْبِيرَةٍ صَدَقَةٌ وَأَمْرٌ بِالْمَعْرُوفِ صَدَقَةٌ وَنَهْيٌ عَنْ الْمُنْكَرِ صَدَقَةٌ وَيُجْزِئُ مِنْ ذَلِكَ رَكْعَتَانِ يَرْكَعُهُمَا مِنْ الضُّحَى(صحيح مسلم: 1701)

तर्जुमा: अबू ज़र रज़ियल्लाहु अन्हु से नबी ﷺ ने कहा: सुबह को तुममें से हर एक शख़्स के हर जोड़ पर एक सदक़ा होता है, इसलिए हर एक तस्बीह (एक दफ़ा "सुब्हानअल्लाह" कहना) सदक़ा है। हर एक तहमीद (अलहम्दुलिल्लाह कहना) सदक़ा है। हर एक तहलील (ला इलाहा इलल्लाह कहना) सदक़ा है। हर एक तकबीर (अल्लाहू अकबर कहना) भी सदक़ा है। किसी को नेकी की तलीक़ीन करना सदाक़ा है और किसी को बुराई से रोकना भी सदक़ा है। और इन तमाम उमूर की जगह 2 रकअत जो इंसान चाशत के वक़्त पढ़ता है, किफ़ायत करती है।

(2) दूसरी हदीस:

عَنْ أَبِي الدَّرْدَاءِ أَوْ أَبِي ذَرٍّ عَنْ رَسُولِ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ عَنْ اللَّهِ عَزَّ وَجَلَّ أَنَّهُ قَالَ ابْنَ آدَمَ

ارْكَعْ لِي مِنْ أَوَّلِ النَّهَارِ أَرْبَعَ رَكَعَاتٍ أَكْفِكَ آخِرَهُ(الترمذي: 486)

अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु या अबू ज़र से रिवायत है कि रसूल ﷺ ने कहा: अल्लाह फ़रमाता है: ऐ इब्न-ए-आदम! तुम दिन के शुरू में मेरी रज़ा के लिए 4 रकअत पढ़ा करो, मैं पूरे दिन तुम्हारे लिए काफ़ी हो जाऊंगा।

(3) तीसरी हदीस:

عَنْ أَبِي أُمَامَةَ، أَنَّ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ:مَنْ خَرَجَ مِنْ بَيْتِهِ مُتَطَهِّرًا إِلَى صَلَاةٍ مَكْتُوبَةٍ، فَأَجْرُهُ كَأَجْرِ الْحَاجِّ الْمُحْرِمِ، وَمَنْ خَرَجَ إِلَى تَسْبِيحِ الضُّحَى لَا يَنْصِبُهُ إِلَّا إِيَّاهُ، فَأَجْرُهُ كَأَجْرِ الْمُعْتَمِرِ، وَصَلَاةٌ عَلَى أَثَرِ صَلَاةٍ لَا لَغْوَ بَيْنَهُمَا، كِتَابٌ فِي عِلِّيِّينَ (ابوداؤد:558)

हज़रत अबू-उमामा (रज़ि०) से रिवायत हुई है रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया : जो आदमी अपने घर से वुज़ू करके फ़र्ज़ नमाज़ के लिये निकलता है तो उसका अज्र और सवाब ऐसे है जैसे कि हाजी एहराम बाँधे हुए आए और जो शख़्स चाश्त की नमाज़ के लिये निकले और उस मशक़्क़त या उठ खड़े होने की ग़रज़ सिर्फ़ यही नमाज़ हो तो ऐसे आदमी का सवाब उमरा करने वाले के जैसा है। और एक नमाज़ के बाद दूसरी नमाज़ कि उन दोनों के बीच कोई फ़ुज़ूल और बेकार बात न हो। इल्लीयीन में दर्ज की वजह है।

(4) चौथी हदीस: अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि आप ﷺ का फ़रमान है:

من صلى الغداة في جماعة، ثم قعد يذكر الله حتى تطلع الشمس، ثم صلى ركعتين كانت له كأجر حجة وعمرة تامة تامة تامة۔ (صحيح الترمذي: 586)

तर्जुमा: जिसने नमाज़ फ़ज्र जमाअत से पढ़ी फिर बैठ कर अल्लाह का ज़िक्र करता रहा यहाँ तक कि सूरज निकल गया फिर उस ने दो रकअतें पढ़ीं तो उसे एक हज और एक उमरे का सवाब मिलेगा। वो कहते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया : पूरा-पूरा यानी हज और उमरे का पूरा सवाब।

नमाज़-ए-अव्वाबीन का हुक्म:

इस नमाज़ के हुक्म के बारे में इख़्तिलाफ़ पाया जाता है। कुछ ने इसे सबबी नमाज़ कहा क्योंकि इस क़िस्म के भी दलील वारिद हैं जैसा कि किसी ने आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से पूछा: क्या नबी ﷺ चाशत की नमाज़ पढ़ा करते थे? उन्होंने जवाब दिया: नहीं, इल्ला यह कि सफ़र से वापिस आए हों। (मुस्लिम:1691)

कुछ ने पूरी तरह से इस नमाज़ का इंकार किया, बल्कि अब्दुल्लाह इब्न उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने इसे बिदअत कह दिया है, यह बात रावी की अदमे रूयत पर महमूल की जाती है जैसा कि हाफ़िज़ इब्न हजर रहिमहुल्लाह ने कहा है। कुछ उलमा ने कभी-कभार पढ़ने का जवाज़ ज़िक्र किया है जबकि शैख़ इब्न बाज़ ने चाशत की नमाज़ का हुक्म बयान करते हुए उसे सुन्नत-ए-मुक्किदा कहा है और बेश्तर उलमा अव्वाबीन की नमाज़ को इस्तिहबाब पर महमूल करते हैं। मेरी नज़र में भी इस्तिहबाब का हुक्म औला और अक़्वा है। इस सिलसिले में चंद दलीलें देखें:

(1) एक दलील ऊपर अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु को नबी ﷺ की 3 हमेशा वाली वसीयतें हैं जिनमें चाशत की नमाज़ भी ज़िक्र की गई है।

(2) नबी ﷺ का फ़रमान है:

لا يُحَافِظُ على صلاةِ الضُّحَى إلا أَوَّابٌ وهي صلاةُ الأَوَّابِينَ(صحيح الجامع:7628)

तर्जुमा: नमाज़-ए-इशराक़ की सिर्फ़ अव्वाब (रुजू करने वाला, तौबा करने वाला) ही पाबंदी करता है, और यही नमाज़-उल-अव्वाबीन है।

यह हदीस जहाँ इस बात की दलील है कि चाशत की नमाज़ अव्वाबीन की नमाज़ है, वहीं इस में चाशत और अव्वाबीन की नमाज़ पर हमेशा की पाबंदी की भी दलील है, इसलिए इस नमाज़ का इंकार करना या इसे बिदअत कहना सही नहीं है, बड़े अज्र और सवाब का अमल है इस पर हमें मुदावमत बरतनी चाहिए।

नमाज़े अव्वाबीन की रकअत:

अव्वाबीन की नमाज़ कम से कम 2 और ज़्यादा से ज़्यादा 8 हो। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम 2 रकअत, 4 रकअत और फ़तह मक्का के मौके पर उम्मे हानी रज़ियल्लाहु अन्हा के घर में 8 रकअत पढ़ना साबित है। इन तमाम हदीसों की रोशनी में मुस्लिम शरीफ़ में बाब है

(بَابُ اسْتِحْبَابِ صَلَاةِ الضُّحَى، وَأَنَّ أَقَلَّهَا رَكْعَتَانِ، وَأَكْمَلَهَا ثَمَانِ رَكَعَاتٍ، وَأَوْسَطُهَا أَرْبَعُ رَكَعَاتٍ، أَوْ سِتٍّ، وَالْحَثُّ عَلَى الْمُحَافَظَةِ عَلَيْهَا)

यानी बाब नमाज़े चाशत का इस्तिहबाब, यह कम से कम 2 रकअत, मुकम्मल 8 रकअत और दर्मियानी सूरत 4 या 6 रकअत है। नीज़ इस नमाज़ की पाबंदी की तलक़ीन के बारे में 12 रकअत सल्लातुस ज़ुहा वाली रिवायत साबित नहीं है, अत-तर्ग़ीब वत-तहरीब (1/320)

लिलमुंज़िरी में है जो 2 रकअत नमाज़े चाशत अदा करे उसे ग़ाफ़िल में नहीं लिखा जाता। उसमें आगे यह टुकड़ा भी है:

"مَن صلَّى ثِنْتَيْ عَشْرةَ رَكعةً بَنَى اللهُ له بيتًا في الجنَّة"

के जो 12 रकअत चाशत की नमाज़ अदा करे अल्लाह उसके लिए जन्नत में एक घर बनाएगा। इस हदीस को शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने ज़ईफ़ अत-तर्ग़ीब में (405) में दर्ज किया है।

और इसी तरह तिर्मिज़ी में यह रिवायत है:

"مَن صلَّى ثِنْتَيْ عَشْرةَ رَكعةً بَنَى اللهُ له بيتًا في الجنَّة"

यानि जो चाशत की 12 रकअत अदा करेगा अल्लाह उसके लिए जन्नत में सोने का एक महल तामीर करेगा। शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने इस हदीस को ज़ईफ़ तिर्मिज़ी (473) में दर्ज किया है।

नमाज़े अव्वाबीन का वक़्त:

नमाज़े अव्वाबीन के वक़्त से मुताल्लिक़ मुस्लिम शरीफ़ में एक वाज़ेह हदीस है:

عَنْ أَيُّوبَ عَنْ الْقَاسِمِ الشَّيْبَانِيِّ أَنَّ زَيْدَ بْنَ أَرْقَمَ رَأَى قَوْمًا يُصَلُّونَ مِنْ الضُّحَى فَقَالَ أَمَا لَقَدْ عَلِمُوا أَنَّ الصَّلَاةَ فِي غَيْرِ هَذِهِ السَّاعَةِ أَفْضَلُ إِنَّ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ صَلَاةُ الْأَوَّابِينَ حِينَ تَرْمَضُ الْفِصَالُ(صحيح مسلم:1777)

तर्जुमा: अय्यूब ने क़ासिम शैबानी से रिवायत की कि ज़ैद बिन अर्कम रज़ियल्लाहु अन्हु ने कुछ लोगों को चाशत के वक़्त नमाज़ पढ़ते देखा तो कहा: हाँ यह लोग अच्छी तरह जानते हैं कि नमाज़ इस वक़्त की बजाय एक और वक़्त में पढ़ना अफ़ज़ल है, बेशक रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: अव्वाबीन (इता'त गुज़ार, तौबा करने वाले और अल्लाह की तरफ़ रुजू करने वाले लोग) की नमाज़ उस वक़्त होती है जब (गर्मी से) ऊंट के दूध छुड़ाए जाने वाले बच्चों के पांव जलने लगते हैं।

मुस्लिम शरीफ़ में इस हदीस पर नमाज़ुल अव्वाबीन का बाब है जबकि सही इब्न ख़ुज़ैमा में सलात-उज़-ज़ुहा का बाब है। इसकी वजह यही है कि चाशत और अव्वाबीन दोनों एक ही नमाज़ है जैसा कि इसी हदीस में ज़िक्र है कि लोग चाशत की नमाज़ अदा कर रहे थे तो रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि अव्वाबीन की नमाज़ यानी चाशत की नमाज़ फुलाँ वक़्त में है।

अव्वाबीन की नमाज़ का वक़्त तुलू-ए-आफ़ताब के कुछ मिनट बाद से शुरू होता है और ज़ुह्र की नमाज़ से कुछ देर पहले तक रहता है और

गर्मी तक मुअख़्ख़र करना अफ़ज़ल है जैसा कि ऊपर वाली हदीस में ज़िक्र है।

तर्माज़ का मानी है सूरज की गर्मी लगना और अलफ़िसाल का मानी ऊंट का बच्चा यानी अव्वाबीन का अफ़ज़ल वक़्त वह है जब गर्मी की शिद्दत से ऊंट का बच्चा अपने पांव उठाए और रखे। यह दिन का चौथाई हिस्सा यानी तुलू-ए-शमस और ज़ुह्र के दर्मियानी निस्फ़ वक़्त है।

मग़रिब और इशा की नमाज़ के दरमियाँन नफ़्ल पढ़ना:

मग़रिब के बाद 2, 4, 6, 8 और 20 रकात नफ़्ल पढ़ने की कई रिवायतें आई हैं, उन पर एक नज़र डालते हैं।

(1) पहली हदीस:

من صلَّى ستَّ رَكَعاتٍ ، بعدَ المغرِبِ ، لم يتَكَلَّم بينَهُنَّ بسوءٍ ، عدَلَت لَه عبادةَ اثنتَي عَشرةَ سنةً۔

(ترمذی: 435،ابن ماجه:256)

तर्जुमा: जिसने मग़रिब के बाद 6 रकात पढ़ीं और उनके दरमियाँन कोई बुरी बात न की, तो उसका सवाब 12 साल की इबादत के बराबर होगा।

यह हदीस सख़्त ज़ईफ़ है, अल्लामा इब्न क़य्यिम ने तो इसे मौज़ू कहा है और शैख़ अल्बानी रहमतुल्लाह अलैह ने अलग-अलग जगहों पर ज़ईफ़ जिद्दा (सख़्त ज़ईफ) कहा है।

हवाला के लिए देखें।

(अल मीनारुल मुनीफ़: 40, ज़ईफ़ अत तर्ग़ीब: 331, अस सिलसिलतुल ज़ईफ़ा: 469, ज़ईफुल जामे: 5661, ज़ईफ इब्ने माजा: 220, ज़ईफ इब्ने माजा: 256)

(2) दूसरी हदीस:

مَن صلَّى ستَّ ركعاتٍ بعدَ المغربِ قبل أن يتكلَّمَ, غُفِرَ لهُ بها ذنوبُ خمسينَ سنةٍ۔

तर्जुमा: जिसने मग़रिब के बाद बग़ैर बात किए 6 रकात पढ़ी तो उसके 50 साल के गुनाह माफ़ कर दिए जाएंगे।

यह हदीस भी सख़्त ज़ईफ है। (अस सिलसिलतुल ज़ईफा: 468)

(3) हज़रत अम्मार बिन यासिर फ़रमाते हैं:

رأَيْتُ حبيبي رسولَ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّم صلَّى بعدَ المغرِبِ ستَّ ركَعاتٍ وقال مَن صلَّى بعدَ المغرِبِ ستَّ ركَعاتٍ غُفِرَتْ له ذُنوبُه وإنْ كانت مِثْلَ زَبَدِ البحرِ(المعجم الأوسط:191/7, مجمع الزوائد:233/2)

तर्जुमा: मैंने अपने हबीब रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को देखा कि आप मग़रिब के बाद 6 रकात पढ़ते थे और फ़रमाते थे: जिसने मग़रिब के बाद 6 रकात पढ़ीं, तो उसके गुनाह माफ़ कर दिए जाएंगे, चाहे वो समंदर की झाग के बराबर ही क्यों न हों।

इमाम तिबरानी ने इसे मौजम औसत में ज़िक्र करने के बाद कहा कि इस हदीस को अम्मार से बयान करने वाला अकेला सालेह बिन क़तान है, वो भी सिर्फ़ इसी सनद से। और हैसमी ने मज्मू अल-ज़वाइद में इसे ज़िक्र करने के बाद कहा है कि इसमें सालेह बिन क़तान अल बुख़ारी है जिसका तर्जुमा मुझे नहीं मिल सका। इब्ने अल जौज़ी ने इस हदीस को अल इलालुल मुतनहीया (1/453) में शामिल करके कहा कि इसकी सनद में कई मजहूल रावी हैं।

(4) चौथी हदीस:

مَن صلَّى ، بينَ المغربِ والعِشاءِ ، عشرينَ ركْعةً بنى اللَّهُ لَه بيتًا في الجنَّةِ(ابن ماجه: 1373)

तर्जुमा: जिसने मग़रिब और इशा के दरमियाँन 20 रकात नमाज़ अदा की, अल्लाह उसके लिए जन्नत में एक घर बनाएगा।

इस हदीस को शैख़ अल्बानी रहमतुल्लाह अलैह ने मौज़ू कहा है।

(5) पांचवी हदीस:

مَن صَلَّى بعدَ المغرِبِ قبلَ أنْ يَتَكَلَّمَ ركعتيْنِ وفي روايةٍ : أربعَ رَكعاتٍ – ؛ رُفِعَتْ صلاتُه في عِلِّيِّينَ.(مسند الفردوس، مصنف عبدالرزاق:4833، مصنف ابن أبي شيبة:5986)

तर्जुमा: जिसने मग़रिब की नमाज़ के बाद बिना बात किए 2 रकात, और एक रिवायत में 4 रकात पढ़ीं, तो उसकी नमाज़ इल्लीयीन में उठाई जाती है।

इस हदीस को शैख़ अल्बानी रहमतुल्लाह अलैह ने ज़ईफ़ कहा है (ज़ईफ अत तर्ग़ीब: 335)

(6) छठी हदीस:

من صلى أربعَ ركعاتٍ بعد المغربِ كان كالمعقبِ غزوةً بعد غزوةٍ في سبيلِ اللهِ(شرح السنة للبغوى:474/3)

तर्जुमा: जिसने मग़रिब के बाद 4 रकात अदा कीं, गोया वो अल्लाह की राह में लगातार एक गज़वा के बाद दूसरा गज़वा करने वाला है।

अल्लामा शौकानी ने कहा कि इसकी सनद में मूसा बिन उबैदा अज़ ज़बदी बहुत ही ज़ईफ़ है (नीलुल औतार: 3/67)। इब्ने अल क़ैसरानी ने कहा कि इसमें अब्दुल्लाह बिन जाफ़र मतरूकुल हदीस है (तज़किरतुल हफ़्फ़ाज़: 335)। इब्ने हब्बान ने कहा कि इसमें अब्दुल्लाह बिन जाफ़र (अली बिन मदीनी के वालिद) है जिसे आसार की रिवायत में वहम हो जाता है और वह उलट देता है, इसमें ख़ता कर जाता है (अलमर्जूहीन: 1/509)

(7) सातवीं हदीस:

مَنْ رَكَعَ عشرِ ركعاتٍ بينَ المغربِ والعشاءِ، بُنِيَ له قصرٌ في الجنةِ۔(الجامع الضعير: 8691)

तर्जुमा: जिसने मग़रिब और इशा के दरमियाँन 10 रकात नमाज़ अदा की, उसके लिए जन्नत में एक महल बनाया जाएगा।

शैख़ अल्बानी ने इसे ज़ईफ़ कहा है (अस सिलसिलतुल ज़ईफ़ा: 4597) सुयूती ने इसे मुरसल कहा है (हवाला साबिक़)

इन सारी रिवायतों के बयान करने के बाद अब 2 बातें जान लें:

(1) ये तमाम हदीसें आम हैं, उनमें आम नफ़्ल नमाज़ का ज़िक्र है, उनका अव्वाबीन की नमाज़ से कोई ताल्लुक़ नहीं है। बतौर मिसाल इस टॉपिक के तहत मज़कूर पहली हदीस को देखें। तिर्मिज़ी में इस हदीस के ऊपर बाब है:

" بَاب مَا جَاءَ فِي فَضْلِ التَّطَوُّعِ وَسِتِّ رَكَعَاتٍ بَعْدَ الْمَغْرِبِ"

यानी बाब है मग़रिब के बाद नफ़्ल नमाज़ और 6 रकात पढ़ने की फ़ज़ीलत के बयान में। और इब्ने माजा में इस हदीस पर बाब है ":بَابُ مَا جَاءَ فِي الصَّلَاةِ بَيْنَ الْمَغْرِبِ وَالْعِشَاءِ" यानी बाब है मग़रिब और इशा के दरमियाँन की नमाज़ के बयान में।

(2) ये तमाम रिवायतें नक़ाबिले ऐतमाद और ज़ईफ़ हैं। शैख़ अल्बानी रहमतुल्लाह अलैह फ़रमाते हैं: मग़रिब और इशा के दरमियाँन मुअय्यन रकात के साथ जो भी हदीसें आई हैं, कोई भी सहीह नहीं है, एक-दूसरे से ज़ईफ़ में शदीद हैं। इस वक़्त में बग़ैर त'यीन के नमाज़ पढ़ना नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अमल की वजह से सहीह है। (अज़ ज़ईफ़ा: 1/481)

ख़ुलासा यह हुआ कि मग़रिब के बाद रकात मुअय्यन कर के कोई नमाज़ नहीं पढ़ सकते, वरना बिद'अत कहलाएगी क्योंकि इस सिलसिले

में कोई रिवायत सहीह नहीं है। अलबत्ता बग़ैर त'यीन के मग़रिब और इशा के दरमियाँन नवाफ़िल पढ़ सकते हैं।

नमाज़ अव्वाबीन और अहनाफ़:

अहनाफ़ के यहां अव्वाबीन की नमाज़ मग़रिब के बाद 6 रकात है, और जिन अहादीस से इस्तिदलाल करते हैं, उनका हाल ऊपर गुज़र चुका है कि सब ही ज़ईफ़ हैं और उनमें से कोई भी नमाज़ अव्वाबीन से मुताल्लिक़ नहीं है। कुछ आसार से पता चलता है कि अव्वाबीन की नमाज़ मग़रिब और इशा के दरमियाँन है मगर वह भी ज़ईफ़ हैं। मज़ीद, जबकि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सरीह (स्पष्ट) अहादीस मौजूद हैं, ज़ईफ़ अक़वाल की तरफ़ इल्तिफ़ात भी नहीं किया जाएगा।

1. मुहम्मद बिन अल मुकंदर से रिवायत है:

من صلى ما بين صلاةِ المغربِ إلى صلاةِ العشاءِ ؛ فإنها صلاةُ الأوابينَ۔

तर्जुमा: "जिसने मग़रिब और इशा के दरमियाँन नमाज़ अदा की वह अव्वाबीन की नमाज़ है।"

इसे शैख़ अल्बानी रहमतुल्लाह अलैह ने ज़ईफ़ कहा है। (अस सिलसिलतुल ज़ईफा: 4617)

अल्लामा शौकानी ने इसे मुरसल कहा है। (नील-उल-अवतार: 3/66)

2. अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं:

صَلَاةُ الْأَوَّابِينَ مَا بَيْنَ أَنْ يَلْتَفِتَ أَهْلُ الْمَغْرِبِ إِلَى أَنْ يَثُوبَ إِلَى الْعِشَاءِ۔ (مصنف ابن ابی شیبه)

तर्जुमा: "अव्वाबीन की नमाज़ का वक्त उस वक्त से है जब नमाज़ी नमाज़ मग़रिब पढ़कर फ़ारिग़ हो और इशा का वक्त आने तक रहता है।"

इसकी सनद में मूसा बिन उबैदाह अज़ ज़बदी ज़ईफ़ है।

अब्दुल्लाह बिन उमर से यह भी मर्वी है:

مَنْ صلَّى المغربَ في جماعةٍ ثم عقَّبَ بعشاءِ الآخرةِ فهِيَ صلاةُ الأوَّابينَ۔

तर्जुमा: "जिसने मग़रिब की नमाज़ से पढ़ी उसे इशा की नमाज़ से मिलाया यही अव्वाबीन की नमाज़ है।"

इब्ने अदी ने कहा कि इसमें बशर बिन ज़ज़ान ज़ईफ़ रावी है जो ज़ु'अफ़ा से रिवायत करता है। (अल कामिल फ़ी ज़ईफ़ा: 2/180)

3. इब्ने अल मुकंदर और अबू हाज़िम से:

" تتجافى جنوبهم عن المضاجع"

की तफ़सीर में मग़रिब और इशा के दरमियाँन अव्वाबीन की नमाज़ है। इसे बैहक़ी ने सुनन में रिवायत किया है और इसकी सनद में मशहूर ज़ईफ़ रावी इब्ने लहय'अह है जबकि सही हदीस में बग़ैर लफ़्ज़ अव्वाबीन के मग़रिब और इशा के दरमियाँन नमाज़ पढ़ना मज़कूर है।

4. इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं:

الملائكة لتحف بالذين يصلون بين المغرب والعشاء وهي صلاة الأوابين۔ (شرح السنة للبغوی ج2ص439)

तर्जुमा: "फ़रिश्ते उन लोगों को घेर लेते हैं जो मग़रिब और इशा के दरमियाँन नमाज़ पढ़ते हैं और यह अव्वाबीन की नमाज़ है।

5. कुछ मुफ़स्सिरीन ने सूरह इसरा में वारिद अव्वाबीन के तहत भी मग़रिब और इशा के दरमियाँन नमाज़ पढ़ने वाले को ज़िक्र किया है। तफ़सीर इब्ने कसीर में भी कई अक़वाल में एक यह क़ौल है।

यह सारे सिर्फ़ अक़वाल हैं जबकि सरीह सहीह मर्फ़ू रिवायत में अव्वाबीन की नमाज़ वही है जो चाश्त की नमाज़ है। और चाश्त और अव्वाबीन का वक्त तुलू ए आफ़ताब के बाद से लेकर ज़ह्र से पहले तक है। ताहम गर्मी के वक्त अदा करना अफ़ज़ल है। बिना-बरीं नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साबित शुदा फ़रमान के सामने ज़ईफ़ अहादीस और ग़ैर मुस्तनद अक़वाल की कोई हैसियत नहीं है। और तहक़ीक़ से बस यही साबित होता है कि अव्वाबीन की नमाज़ चाश्त की नमाज़ है और इन दोनों में कोई फ़र्क नहीं है।

[57].नमाज़ी अपनी नज़र कहाँ रखे?

यह एक अहम मसला है कि नमाज़ी नमाज़ के दौरान, हालत-ए क़ियाम, रुकू, सजदा, तशह्हुद और सलाम फेरते वक्त कहाँ देखे?

1. अहल-ए-इल्म के यहाँ नज़र के मक़ाम के त'अय्युन में इख़्तिलाफ़ पाया जाता है। लेकिन राजेह क़ौल और जम्हूर अहल-ए-इल्म के मुताबिक़ हालत-ए क़ियाम और रुकू में सजदे की जगह नज़र रखना मुस्तहब है। इब्न-ए-सीरीन से मारवी है कि नबी-ए-क़रीम ﷺ पहले नमाज़ में आसमान की तरफ़ देख लिया करते थे, जब यह आयत-ए-मुबारका الَّذِينَ هُمْ فِي صَلَاتِهِمْ خَاشِعُونَ (سورہ مومنون:2) नाज़िल हुई तो आप ने अपना सर नीचे झुका लिया।

(इस असर को बैहक़ी और सईद बिन मंसूर ने रिवायत किया है)

इसी तरह एक दूसरी रिवायत है:

عن أنس أن النبی صلی اللہ علیہ وسلم قال: یا انس اجعل بصرك حيث تسجد

“अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है नबी-ए-क़रीम ﷺ ने फ़रमाया: ऐ अनस! अपनी निगाह सजदे की जगह पर रखो।” (बैहक़ी) अगरचे

यह हदीस ज़ईफ़ है मगर अल्लामा अल्बानी रहिमहुल्लाह फ़रमाते हैं कि इस बाब में बहुत सारी अहादीस हैं जो सजदे की जगह देखने पर दलालत करती हैं। (देखें: सिफ़ातुस सलातुन नबी)

2. हालत-ए तशह्हुद और दोनों सजदो के दरमियाँन बैठने पर उंगली के इशारे पर नज़र रखे।

अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु से मारवी है कि: आप ﷺ की नज़र आप ﷺ के (शहादत की उंगली के) इशारे से आगे नहीं बढ़ती थी.. (सहीह अबू दाऊद) शैख़ अल्बानी ने इसे हसन सहीह क़रार दिया है।

सहाब-ए-तोहफ़तुल अहवज़ी लिखते हैं: तशह्हुद में अपनी नज़र शहादत की उंगली और उसके इशारे की तरफ़ रखनी चाहिए। (तोहफ़तुल अहवाज़ी: 2/196)

3. सजदे की हालत में नमाज़ी अपनी आँखों के मुक़ाबिल ज़मीन पर देखे।

4. नमाज़ी सलाम फेरते हुए राइट और लेफ़्ट अच्छी तरह मुड़ेगा, इसी तरह जो नमाज़ में उसके लेफ़्ट और राइट साइड मौजूद है उसकी

तरफ़ भी मुड़ सकता है, ऐसे ही नमाज़ी के लिए यह भी जाइज़ है कि वह अपने साथी की तरफ़ देखे या कंधे की तरफ़ देखे, इस बारे में वुसअत है।

[58].निस्फ़/आधे शाबान के बाद रोज़ा रखने का हुक्म

कुछ अहादीस से पता चलता है कि 15 शाबान के बाद रोजा नहीं रखना चाहिए और कुछ हदीस आधे शाबान के बाद रोज़ा रखने पर दलालत करती हैं जिनकी वजह से आम इंसान को यह उलझन है कि सही मौक़िफ़ और राय क्या है, यानी 15 शाबान के बाद रोज़ा रख सकते हैं या नहीं रख सकते हैं?

पहले 15 शाबान के बाद रोज़ा नहीं रखने वाली हदीस देखें:

मुख़्तलिफ़ हदीस की किताबों में अल्फ़ाज़ के इख़्तिलाफ़ के साथ 15 शाबान के बाद रोज़ा रखने की मुमान'अत (मनाही) वारिद है। वो हदीस अल्फ़ाज़ के इख़्तिलाफ़ के साथ इस तरह है:

पहली हदीस:

إِذَا كَانَ النِّصْفُ مِنْ شَعْبَانَ، فَأَمْسِكُوا عَنِ الصَّوْمِ حَتَّى يَكُونَ رَمَضَانُ

तर्जुमा: जब निस्फ़/आधा शाबान हो जाए तो रमज़ान तक रोज़ा रखने से रुक जाओ।

(मुस्नद अहमद: 9707, मुसन्नफ इब्न एबी शैबा)

दूसरी हदीस:

إِذَا انْتَصَفَ شَعْبَانُ فَلَا تَصُومُوا

तर्जुमा: जब निस्फ़/आधा शाबान आ जाए तो रोज़ा मत रखो।

(सुनन अबू दाऊद: 2337)

तीसरी हदीस:

لا صومَ بعدَ النِّصفِ مِن شعبانَ حتَّى يجيءَ شهرُ رمضانَ

तर्जुमा: निस्फ़/आधा शाबान के बाद कोई रोज़ा नहीं यहाँ तक कि रमज़ान का महीना आ जाए।

(सहीह इब्न ए हिब्बान: 3591)

चौथी हदीस:

إذا كان النصف من شعبان فأفطروا

तर्जुमा: जब निस्फ़/आधा शाबान आ जाए तो (रोज़ा छोड़ दो और) इफ़्तार करो।

(अल कामिल लि इब्न एबी: 2/476, 4/1617)

पांचवीं हदीस:

إذا انتصفَ شعبانُ فكفوا عنِ الصومِ

तर्जुमा: जब निस्फ़/आधा शाबान आ जाए तो रोज़े से रुक जाओ।

(अस सुन्नन अल कुबरा लिन-नसाई: 2923)

छठी हदीस:

إذا مضى النصف من شعبان فامسكوا عن الصيام حتى يدخل رمضان

तर्जुमा:जब निस्फ़/आधा शाबान गुज़र जाए तो रोज़ा रखने से रुक जाओ यहाँ तक कि रमज़ान दाख़िल हो जाए।

(बैहक़ी: 4/209)

सातवीं हदीस:

إِذَا بَقِيَ نِصْفٌ مِنْ شَعْبَانَ فَلَا تَصُومُوا

तर्जुमा: जब निस्फ़/आधा शाबान बाक़ी बच जाए तो रोज़ा मत रखो।

(सुनन तिर्मिज़ी: 738)

अल्फ़ाज़ के इख़्तिलाफ़ के साथ ये हदीसें थीं।

इस बाब की हदीसों को सहीह क़रार देने वाले मुहद्दिसीन भी हैं और ज़ईफ क़रार देने वाले भी।

सहीह क़रार देने वालों में हाफ़िज़ इब्न ए हज्र, इमाम तिर्मिज़ी, इमाम इब्न ए हिब्बान, इमाम तहावी, अबू अवाना, इमाम इब्न ए अब्दुल बर, इमाम इब्न ए हज़्म, अल्लामा अहमद शाकिर, अल्लामा अल्बानी, अल्लामा इब्न ए बाज़, शुऐब अरनौत और मुबारकपुरी वग़ैरह हैं। और ज़ईफ कहने वालों में इब्न ए जौज़ी, दार कुतनी, इब्न ए अदी, ज़िया मक़्दिसी, सक़ावी, नसाई, और इब्न ए उसैमीन वग़ैरह हैं।

इमाम अहमद बिन हंबल रहमतुल्लाह ने इन हदीसों को ग़ैर महफ़ूज़ कहा है और अलग-अलग जगहों पर मुंकिर क़रार दिया है। अबू दाऊद भी मुंकिर क़रार देते हैं और इब्न ए रजब ने शाज़ और सहीह हदीस के ख़िलाफ़ कहा है। इन रिवायतों में नकारत और इल्लत पाई जाती

है जिनकी वजह से इन्हें मुंकिर कहना ज़्यादा मुनासिब मालूम होता है।

अब इन रिवायतों को देखें जिनसे निस्फ़/आधा शाबान के बाद रोज़ा रखने का जवाज़ निकलता है:

पहली हदीस:

عن أبي هريرة رضي الله عنه عن النبي صلى الله عليه وسلم أنه قال لا يتقدمن أحدكم رمضان بصوم يوم أو يومين إلا أن يكون رجل كان يصوم صومه فليصم ذلك اليوم

तर्जुमा: रमज़ान मुबारक से एक या दो दिन पहले रोज़ा न रखो, लेकिन वह शख़्स जो पहले रोज़ा रखता रहा है उसे रोज़ा रख लेना चाहिए।

(सहीह बुख़ारी: 1914)

फ़ायदा: यह रिवायत रमज़ान से एक-दो दिन पहले यानी निस्फ़ शाबान के बाद रोज़ा रखने पर दलालत करती है।

दूसरी हदीस:

ان عائشة رضي الله عنها قالت لم يكن النبي صلى الله عليه وسلم يصوم شهرا أكثر من شعبان

فإنه كان يصوم شعبان كله

तर्जुमा: आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा बयान करती हैं कि नबी ﷺ शाबान से ज़्यादा किसी महीने में रोज़ा नहीं रखा करते थे। आप ﷺ शाबान के महीने का तक़रीबन पूरा रोज़ा रखा करते थे।

(सहीह बुख़ारी: 1970)

फ़ायदा: इस रिवायत का मतलब यह है कि नबी ﷺ पूरा शाबान का नहीं बल्कि शाबान का तक़रीबन अक्सर रोज़ा रखा करते थे और अक्सर रोज़े में निस्फ़/आधा शाबान का रोज़ा भी शामिल है।

तीसरी हदीस:

عن عمران بن حصين أن النبي صلى الله عليه وسلم قال لرجل هل صمت من سرر هذا الشهر شيئا قال لا فقال رسول الله صلى الله عليه وسلم فإذا أفطرت من رمضان فصم يومين مكانه

तर्जुमा: इमरान बिन हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हू से मरवी है कि नबी ﷺ ने एक शख़्स से कहा: क्या तू ने इस महीने के आख़िर में कोई रोज़ा रखा है? उस शख़्स ने जवाब दिया नहीं। तो नबी ﷺ ने कहा: जब तू रमज़ान से इफ़्तार करे तो उसकी जगह 2 रोज़े रख ले।

(सहीह मुस्लिम: 1161)

फ़ायदा: यह असल में एक सहाबी को नबी ﷺ ने हुक्म दिया जिनकी आदत हमेशा रोज़ा रखने की थी या नज़्र का रोज़ा था शाबान के आख़िर में न रख पाने की वजह से बाद रमज़ान के बाद उसे पूरा करने का हुक्म दिया।

एक तरफ़ मुमान'अत (मनाही) वाली रिवायत में इल्लत हैं तो दूसरी तरफ़ जवाज़ वाली रिवायतें सही हैं। इस नज़र से जवाज़ को तर्जीह मिलती है और अगर निस्फ़/आधा शाबान के बाद रोज़ा रखने की मुमान'अत वाली रिवायत को सही मान लिया जाए तो इस बिना पर यह कहा जाएगा कि इस मुमान'अत से कुछ लोग अलग हैं जो कि नीचे दर्ज है।

(1) जिसे रोज़ा रखने की आदत हो, मसलन कोई शख़्स पीर और जुमेरात का रोज़ा रखने का आदी हो, तो वह निस्फ़/आधा शाबान के बाद भी रोज़ा रखेगा।

(2) जिसने निस्फ़/आधा शाबान से पहले रोज़ा रखना शुरू कर दिया है और निस्फ़ शाबान से पहले वाले रोज़े को बाद वाले से मिला दिया।

(3) इससे रमज़ान की क़ज़ा और नज़र में रोजा रखने वाला भी अलग होगा।

(4) नबी ﷺ की पैरवी में शाबान का अक्सर रोज़ा रखना चाहे रख सकता है इस हाल में कि रमज़ान के रोज़े के लिए कमज़ोर न हो जाए।

[59].पेटीएम का कैश बैक शरई नुक्ता ए नज़र से

इंटरनेट के ज़माने में अक्सर तिजारत इसी से जुड़ गई है, लेन-देन का इंहिसार (निर्भरता) तो अब 100% इस पर हो गया है और ख़रीद-फ़रोख़्त के मैदान में इंटरनेट ने काफ़ी सहूलियतें फ़राहम (प्रदान) कर दी हैं। घर बैठे मर्ज़ी का सामान उपलब्ध हो जाता है और आमद-ओ-रफ़्त (आने जाने) की मुश्किलात और ख़र्चात बचने लगे हैं।

इंटरनेट से जुड़े मोबाइल का एक एप्लिकेशन पेटीएम इस वक्त बड़ी मक़बूलियत हासिल कर चुका है। पेटीएम न कोई बैंक है, न तिजारती कंपनी है और न ही मालियाती इदारा (Financial institution) है, यह सिर्फ़ एक एप्लिकेशन है। इसको बनाने वाले ने इस ऐप को मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) बैंक्स, तिजारती इदारों, ऑनलाइन ख़रीद-फ़रोख़्त और लैंडलाइन, मोबाइल, रिचार्ज, बिजली, टिकट (ट्रेन, बस, जहाज़), टीवी, सिनेमा, फ़ैशन, होटल, गैस, दवा, इलाज, एंटरटेनमेंट, गेम, बीमा, चैरिटी ऑफ़िस वग़ैरह से मरबूत कर के इन कामों को इस एक ऐप से करना आसान कर दिया है। हक़ीक़त में इस ऐप से हज़ारों क़िस्म के मालियाती, तिजारती और मामलाती इदारें जुड़े हुए दिखाई देते हैं, इनमें कितने ग़ैर-शरई इदारें और ग़ैर-शरई 'अवामिल (वुजूहात) मौजूद हैं।

यहाँ सवाल यह है कि पेटीएम अपने ऐप से ट्रांजेक्शन करने पर कैश बैक यानी कुछ पैसा वापस देता है। उस पैसे को हासिल करना या लेकर इस्तेमाल करना शरअन कैसा है? होता इस तरह है कि किसी ने इस ऐप के ज़रिए कोई मोबाइल 50 रुपये का रिचार्ज किया, यह रिचार्ज मोबाइल कंपनी से हुआ, मोबाइल कंपनी से लेन-देन 50 रुपये का हुआ, यहाँ पर Paytm की जानिब से 30 रुपये का कैश बैक मिलता है। अब सवाल यह है कि जब पेटीएम मोबाइल कंपनी नहीं है तो कैश बैक कहाँ और कैसे देता है?

जब इस सवाल की हक़ीक़त जानते हैं तो पता चलता है कि जिस तरह गूगल कंपनी ब्लॉग, वेबसाइट और यूट्यूब पर कंपनी के प्रचार करके उसका कुछ हिस्सा फ़ायदा उन समाजी रवाबित के इस्तेमाल करने वालों को भी देती है, इसी तरह का मामला पेटीएम ऐप में भी है। मैंने इससे पहले यूट्यूब पर वीडियो अपलोड कर के उससे पैसे कमाने के मुताल्लिक़ नौजवानों को आगाह किया था, आज पेटीएम के मुताल्लिक़ अर्ज़ करना चाहता हूँ कि अगर इस ऐप के सिर्फ़ इस्तेमाल से यानी उसके ज़रिए मोबाइल रिचार्ज या किसी क़िस्म के बिल की अदायगी पर कैश बैक मिलता है तो उसके लेने में रुकावट नहीं होती, मगर मेरे सामने इस ऐप में कई रुकावटें हैं।

1. यह ऐप बीमा, फ़िल्म, एंटरटेनमेंट, और फ़ैशन वग़ैरह की भी तशहीर (मुनादी) करता है और बहुत सारी ऑनलाइन तिजारती चीज़ों की नग्न तस्वीरों के साथ इश्तिहार मौजूद हैं।

2. ट्रांजेक्शन पर कैश बैक इश्तिहार पर मदद के बदले है और ऊपर हमने जाना कि इश्तिहारबाज़ी में कई सारी शरई ख़ामियाँ हैं।

3. इस ऐप में कई क़िस्म की ऑनलाइन तिजारत भी है, जिसके मुताल्लिक़ दज्ल और फ़रेब का भी इमकान है, जैसे ऑनलाइन ख़रीद और फ़रोख़्त में सामान पर कब्ज़ा किए बिना उसे दूसरों के हाथ बेचना आम है, जो शरअन नाजाइज़ है, और अगर इस तिजारत में हराम चीज़ों की तिजारत भी हो, तो उस हराम चीज़ की तशहीर में मदद करना भी हराम है।

4. इस ऐप को शेयर करने पर उसका कोई साथी मोबाइल रिचार्ज करता है या बिल जमा करता है तो शेयर करने वाले को 50 रुपये मिलने का वादा है। जिसने यह ऐप शेयर किया है, उसकी वजह से कोई इस ऐप से फिल्म का टिकट ख़रीदता है या बीमा कराता है या उसका प्रीमियम जमा कराता है तो उस गुनाह का ज़िम्मेदार शेयर करने वाला भी होगा। इसी तरह ऑनलाइन तिजारत में कोई कंपनी फ्रॉड हो, तो इनवाइट करने वाला भी गुनहगार होगा। ऐप शेयर करने से नग्न तस्वीर का गुनाह भी इस पर आएगा।

5. चूंकि इस ऐप में सैकड़ों प्रोग्राम मौजूद हैं, जिनमें से कुछ का मैंने ज़िक्र कर ही दिया है, यह ग़ैर-शरई है, और कितने और ग़ैर-शरई काम उसमें मौजूद हैं, कौन मुसलमान इसकी सच्चाई को बताएगा? जब मामला शक वाला है, तो कुछ पैसों के लिए क्यों अपना ईमान बरबाद करें?

6. ख़ुद रिचार्ज करने पर 30 रुपये, जबकि इनवाइट करने पर 50 रुपये कैश बैक के तौर पर मिलते हैं और ऐप वाले ने हर नए फ्रेंड के ट्रांजेक्शन पर 50 रुपये कहकर रोज़ाना 1000 रुपये कमाने का लालच दिया है। ज़ाहिर सी बात है कि 1000 रुपये की फ़िक्र में जिन-जिन को भी यह ऐप भेजा जाएगा, उस ऐप के अंदर मौजूद ग़ैर-शरई कामों का गुनाह भी भेजने वाले के सिर भी जाएगा।

7. नेटवर्क मार्केटिंग की तरह इसमें भी बड़ा बड़ा लालच दिया गया है। ऊपर एक लालच गुज़रा के रोज़ाना 1000 कमाने, दूसरा लालच यह है कि हर घंटे 200 आदमी 100% कैश बैक पाते हैं और तीसरा सबसे बड़ा लालच लाखपति बनने का है, वह यह कि हर हफ़्ते रिचार्ज या बिल की अदायगी पर 1,00,000 का लकी ड्रॉ से निकाला गया कैश बैक पाने का मौक़ा मिलेगा। तीसरा लालच इस ऐप का सबसे बड़ा झांसा है।

8. इस ऐप में बड़ी तादाद में ऑनलाइन शॉपिंग की चीज़ें नज़र आती हैं, उन पर कई हज़ार का कैश बैक लिखा हुआ है। मुझे लगता है कि सामान पर बड़े क़ीमत का कैश बैक बस दिखावा है, असली क़ीमत को बढ़ा कर उसका नाम कैश बैक रख दिया गया है।

इन चंद बातों के ज़िक्र का मक़सद यह है कि इस ऐप से पैसा कमाना शरई नुक्ता नज़र से जाइज़ नहीं मालूम होता है, क्योंकि इस ऐप में धोखा का इमकान भी है, ग़ैर-शरई तिजारत भी है और हराम काम पर मदद भी है। अगर सिर्फ़ रिचार्ज या बिल की अदायगी पर कैश बैक होता और किसी क़िस्म की ग़ैर-शरई चीज़ की तशहीर न होती, तो फिर जाइज़ होने की गुंजाइश थी, मगर रिचार्ज या बिल की अदायगी पर कैश बैक असल में इस ऐप में मौजूद मुख़्तलिफ़ तिजारती इदारों की तशहीर और उनसे मामलात के बदले हैं, जिनमें ग़ैर-शरई काम भी पाए जाते हैं।

इस ऐप की मक़बूलियत को देखते हुए बहुत से लोग इसके ज़रिए कमाई कर रहे हैं, मुझे उनके पैसों से हसद नहीं है, लेकिन उनकी कमाई के ग़लत पहलू से ज़रूर तकलीफ़ है। इसी बिना पर यह तहरीर कलम बंद करने पर मजबूर हुआ। ऐसे तमाम मुस्लिम भाइयों की

ख़िदमत में अदब और इज़्ज़त के साथ यह पैग़ाम पेश करता हूँ कि लेन-देन का जो भी मामला हो, इदारे की असली ऑफ़िस से या उनकी सारी वेबसाइट से करें, जैसे मोबाइल रिचार्ज करें, बिजली बिल अदायगी करनी हो, उनके ऑफ़िस जाएं या उनकी ज़ाती वेबसाइट से पेमेंट करें, इसी तरह बैंक का कोई काम करना हो तो उसी बैंक से काम करें। ऑनलाइन कोई सामान ख़रीदना हो तो डायरेक्ट कंपनी की वेबसाइट इस्तेमाल करें और पहले उसके मुताल्लिक़ इम्तिहान करें, फिर ख़रीदारी करें। मेरे कहने का मक़सद यह है कि मु'आमलात अपनी जगह और कमाई अपनी जगह। यह दोनों अलग-अलग चीज़ें हैं। मु'आमलात को मु'आमलात ही रहने दें और ढंग से मालूमात करें जो महफ़ूज़ तरीक़े से हो और कमाई को अलग-अलग ज़रिया रहने दें और हलाल तरीक़े से मेहनत और मशक़्क़त के साथ रोज़ी कमाएं। हलाल तरीक़े से कमाई गई कम रोज़ी में भी अल्लाह बरकत देगा और बिना मेहनत की हराम रोज़ी में कभी बरकत नहीं होती।

अल्लाह हमें हलाल तरीक़े से रोज़ी कमाने की तौफ़ीक़ दे और अपने फ़ज़ल से हमें ख़ुशहाल बना दे। आमीन।

==============

[60].फ़िरक़ा परस्ती: नुक़सानात - वुजूहात - हल

इस्लाम एक साफ़ सुथरा दीन है। इस पर किसी क़िस्म का दाग़, धब्बा, मैल कुचैल नाम की कोई चीज़ नहीं है। इस्लाम का हर मामला वाज़ेह, तालीमात रोशन और अफ़्कार और नज़रियात से लेकर अक़ीदत और इबादत तक सारे के सारे ठोस और मुस्तनद मे'यार पर क़ायम हैं। यह दीन अपने मानने वालों को इत्तेहाद और इत्तेफ़ाक़ की तालीम देता है। इस लिए नमाज़, रोज़ा, हज जैसे अरकान-ए-इस्लाम में वहदानियत नज़र आती है।

अल्लाह ने क़ुरआन में और रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपने फ़रामीन में लोगों को तफ़रिक़ा-बाज़ी करने, इख़्तिलाफ़ और इंतिशार फ़ैलाने, नफ़रत और दुश्मनी को हवा देने से मना किया है और उल्फ़त और मोहब्बत, इत्तेहाद और इत्तेफ़ाक़ और भाईचारा को क़ायम करने और उसे बढ़ाने का हुक्म दिया है।

मुसलमान होने की हैसियत से जहां अवाम की ज़िम्मेदारी है कि वह लोगों में यकजहती की फिज़ा क़ायम रखें वहीं गुफ़्तार और किरदार के ज़रिए उलमा की भी ज़िम्मेदारी है कि इत्तेहाद मिल्लत का दामन

थामे रहें। इसके लिए जो भी जायज़ सूरत अपनानी पड़े अपनाएं, चाहे तंज़ीमी शक्ल हो या ख़िलाफ़त का क़ियाम जो लोग दीन में तफ़रिक़ा फ़ैलाते हैं या तफ़रिक़ा-बाज़ी का हिस्सा बनते हैं, चाहे उलमा हों या अवाम, दोनों ही इत्तेहाद-ए-इस्लामी के दुश्मन, तालीमात-ए-इस्लामिया के मुख़ालिफ़ और अल्लाह, उसके रसूल के बाग़ी हैं।

आज दीन और मसलक के नाम पर हमारे इख़्तिलाफ़ ने अवाम को बड़ी मुश्किलात में डाल रखा है। आम आदमी सही दीन को समझने से क़ासिर है, दीन पर अमल करने के लिए बहुत सारे मसाइल में तज़बज़ुब (शक-ओ-शुबह) का शिकार है यहाँ तक कि इबादत को अंजाम देने में इस क़दर कठिनाई का सामना कर रही है कि अकसरियत तो इबादत से सरगर्दां (परेशान) हो गई है।

एक-दूसरे की तकफ़ीर करना, एक-दूसरे से नफ़रत और बुग़्ज़ रखना, एक-दूसरे के ख़िलाफ़ मकर और फ़रेब करना, दूसरे मस्लक वालों की मस्जिदों, क़ब्रिस्तानों और मदरसों पर क़ब्ज़ा करना, अपनी इबादतगाहों, किताबों, इमामों और अक़ाइद और नज़रियात को तक़सीम और ख़ास कर लेना, शादी-ब्याह और लेन-देन में मस्लकी मुनाफ़रत (दूरी) बरतना, बेकसूर मुसलमानों पर झूठे इल्ज़ामात लगाना, और उन पर झूठे

मुक़दमे दायर करके हिरासाँ और परेशान करना, बल्कि उस पर फ़ख़्र करना और मज़ा लेना, एक-दूसरे के मकातिब और मदरासों के ख़िलाफ़ साज़िश रचना, उन्हें बंद करने की नाजायज़ कोशिश करना, मुख़्लिस द'आत (हक़ की तरफ़ बुलाने वाले) और मुबल्लिग़ीन के ख़िलाफ़ प्रोपेगैंडा करना, असलाफ और बुज़ुर्गाने दीन के मुताल्लिक़ हरज़ा सराई करना, अपने-अपने मस्लकी क़ुव्वत और शान बढ़ाना और उसके लिए जायज़ और नाजायज़ हर क़िस्म के ज़राए इस्तिमाल करना, मस्लकी असबियत, मस्लकी अना की, मस्लकी तनाज़े, मस्लकी तशद्दुद और फ़साद मचाना, मुसलमानों में बतौर-ए-ख़ास हिंद, पाक, नेपाल, बांग्लादेश वग़ैरह में आम है।

यहां समझने की बात यह है कि सहाबा ए किराम और ताबिईन और तबा-ताबिईन के दौर में भी इख़्तिलाफ़ का नमूना मिलता है, मगर वह इख़्तिलाफ़ नुसूस ए आयत और अहादीस में फ़हम और बसीरत का इख़्तिलाफ़ है, जिसका इमकान कल भी था, आज भी है, और कल भी रहेगा। सहाबा किराम और ताबिईन इस्लाम पर अमल करने के लिए नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत तलाश करते थे और उस पर अमल करते थे। सहाबा के बाद ताबिईन और इत्तिबा ए ताबिईन का भी यही मनहज रहा है। चार इमामों के दर्मियान इख़्तिलाफ़ का

कारण या तो नस की अदम मार्फ़त है या नस में फ़हम का इख़्तिलाफ़ है। यह इख़्तिलाफ़ होते हुए भी इमामों के दौर में तफ़रिक़ा-बाज़ी नहीं थी। आज लोगों ने उनके नाम पर अलग-अलग फिरक़ा बना रखा है और उन इमामों के इख़्तिलाफ़ को बुनियाद कर आपस में एक-दूसरे की तकफ़ीर में मुब्तला हैं।

जहाँ तक किसी इमाम के नस की अदमे मारिफ़त की वजह से किसी मसले में ग़लती होने की बात है, तो उस ग़लती को छोड़ दिया जाएगा और यह ग़लती जो आज हमें इख़्तिलाफ़ नजर आ रही है, दरअसल उस वक्त के लिहाज़ से उस इमाम का इज्तिहाद था जो उन्होंने अल्लाह की दी हुई दीन की बसीरत की बुनियाद पर लिया था। उनके सामने कोई ख़ास मसलक, कोई ख़ास दुनियावी गरज़ या कोई शख़्सियत परस्ती नहीं थी। वे हमसे ज़्यादा अल्लाह से डरने वाले थे, अपनी ज़बान से वही बात कहते जो वे अपनी दीन की बसीरत से हक़ समझते थे। आज दलील वाज़ेह हो जाने के बावजूद भी लोग इमाम की बशरी ग़लतियों पर मुसीर हैं और यह इसरार इस क़दर शदीद है कि आपस में झगड़े और जिद्दाल का माहौल बना हुआ है। और जहाँ पर अइम्मा से नस की माहियत के बावजूद फ़हम और बसीरत में इख़्तिलाफ़ हुआ, तो उस इख़्तिलाफ़ को किताब और सुन्नत पर लौटाया

जाए। जो मुवाफ़िक़ हो उसे इख़्तियार किया जाए और जो मुख़ालिफ़ हो उसे छोड़ दिया जाए। इससे किसी इमाम की एहानत मक़सूद नहीं होती और न ही उनके हक़ में कस्र-ए-शान शुमार होगी। चारों इमाम हमारे ही हैं, किसी ग़ैर के नहीं हैं। हम उनसे बहुत मुहब्बत करते हैं, उनसे मुहब्बत का तक़ाज़ा है कि उनकी ग़लती या इख़्तिलाफ़ पर पकड़ न की जाए और न ही उनके नाम पर फ़िरक़ा बनाया जाए। मुज्तहिद होने के नाते उनसे जो ग़लती या इख़्तिलाफ़ हुआ वह अल्लाह के नज़दीक अज्र का बाइस है, लेकिन हम जानबूझ कर उनके इख़्तिलाफ़ को हवा दें, उनके इख़्तिलाफ़ की बुनियाद पर अइम्मा को चार हिस्सों और चार फ़िरक़ो में तक़सीम कर दें और उनकी बशरी ग़लतियों को भी जबरन सही साबित करें, यह मज़्मूम (बुरा) है। यही तफ़रिक़ा-बाज़ी की जड़ है।

मालूम यह हुआ कि नुसूस में फ़हम और तदब्बुर से जो मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) मआनी अख़ज़ हो, वह मज़्मूम नहीं बल्कि मुख़्तलिफ़ मआनी को बुनियाद बना कर तफरिक़ा बाज़ी करना यह मज़्मूम है। यक़ीन जानिए अगर आज भी उम्मत इस नुक्ता-ए-नज़र पर जमा हो जाए तो सारे फ़िरक़े मिट सकते हैं क्योंकि इस्लाम एक तरीक़ा-ए-

ज़िन्दगी और दस्तूर-ए-ज़िन्दगी का नाम है, इसमें तफरिक़ा बाज़ी की कोई गुंजाइश ही नहीं है।

हमें अगर इमाम अबू हनीफा रहिमहुल्लाह से मोहब्बत है तो मोहब्बत का इज़हार कर सकते हैं, मोहब्बत में निस्बत भी करने में कोई हरज नहीं है जैसा कि कोई इमाम मालिक से मोहब्बत के तौर पर अपने नाम के साथ मालिकी लिखे। लोगों का सिद्धीक़ी, फ़ारूक़ी और उस्मानी लिखना भी बतौर-ए-मोहब्बत है। कोई किसी मदरसे से फ़ारिग़ होता है तो उसकी मोहब्बत में ख़ुद को उस तरफ़ इंतिसाब करता है। मोहब्बत के इज़हार के लिए अच्छी निस्बतों में कोई हरज नहीं लेकिन अगर निस्बत का मतलब अलग फ़िरक़ा बनाना है तो मज़्मूम है चाहे निस्बत किसी शख़्स के नाम पर हो या इदारे के नाम पर या क़ौम और इलाक़े के नाम पर हो।

================

[61].फ़ोन उठाने वाला पहले सलाम करे या कलाम

मसला यह है कि जब किसी को फ़ोन किया जाए तो फ़ोन उठाने वाला पहले सलाम करे या तख़ातुब (एक दूसरे से बातें करना) का कोई कलाम इस्तेमाल करे? इस सिलसिले में राजेह (सही) बात यही है कि फ़ोन उठाने वाला तख़ातुब का कोई भी कलाम जो उसके माहौल और मुआशरे में राइज है बोले, इस सिलसिले में शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह का मौक़िफ़ यही है कि फिर फ़ोन करने वाला अपने मुख़ातिब को सलाम करे।

इस बात को दूसरे अल्फ़ाज़ में ऐसे समझें कि जब हम किसी को फ़ोन करते हैं तो बसा अवसर मुश्किल से राबता होता है, कनेक्शन का प्रॉब्लम होता है या कभी एक जानिब फ़ोन एक्सेस करने वाला या फोन करने वाला ग़ैर-मुस्लिम हो सकता है जिस से इस्लाम में सलाम करना मना है। फिर यहाँ एक उलझन यह भी है कि फ़ोन करने वाला सलाम करे या उठाने वाला? कौन पहल करे और किस बुनियाद पर?

इसलिए बेहतर यह है कि जब हम किसी को फ़ोन करें तो अपना फ़ोन दूसरे से मरबूत हो जाने का इंतज़ार करें, उसकी सूरत यह है कि

जिसने फ़ोन एक्सेस किया है उसे चाहिए कि तख़ातुब का कोई जुमला जैसे हेल्लो, अहलन-सहलन, मरहबा फ़रमाइये, हैल्लो, नाम वग़ैरह बोलकर पहले आपस में मरबूत हो जाएं फिर फ़ोन करने वाला सलाम से अपनी बात का आगाज़ करे। अगर नंबर नया हो तो सलाम से पहले तआरुफ़ भी कर लें ताकि पता चल जाए मुसलमान भाई है या कोई और? यह मसला हराम और हलाल का नहीं है बल्कि अफ़ज़लियत और एहतियात का तक़ाज़ा है।

ताहम मेरी नज़र से इस मसले में भी कोई ज़्यादा क़बाहत नहीं है कि फ़ोन उठाने वाले को अगर यक़ीन हो कि फ़ोन करने वाला हमारा मुसलमान भाई है तो बजाए तख़ातुब के बराह-ए-रास्त सलाम से अपनी बात को शुरू करे। ताहम एहतियात और अफज़लियत के पेशे नज़र क़वी मसलक यही मालूम होता है कि फ़ोन उठाने वाला पहले तख़ातुब के कलमा के ज़रिये फ़ोन करने वाले से राबता क़ायम कर ले फिर फ़ोन करने वाला सलाम करे, आगे हदीस आ रही है जिससे इस मौक़िफ़ की ताईद होती है।

अब यहाँ कुछ एक शुब्हात का इज़ाला (ख़ात्मा) भी कर देता हूँ कि जिन्होंने यह कहा कि कलाम के शुरू में हैल्लो नहीं कहना चाहिए

क्योंकि इसका मानी जहन्नमी का है तो यह मसला मैंने अलग मज़मून में वाज़ेह किया है, हैल्लो कहने में कोई हरज नहीं है और इसका मानी जहन्नमी नहीं होता है। और जिन्होंने कहा कि हैल्लो के मानी में कुछ तो है जिस की वजह से अंग्रेज़ों ने इसे इस्तेमाल करना छोड़ दिया तो यह क़तई ग़लत है, यह किस ने कहा कि अंग्रेज़ या इंग्लिश बोलने वाले हैल्लो इस्तेमाल करना छोड़ दिए, हर जगह इंग्लिश बोलने वालों में यह लफ़्ज़ आम है यहाँ तक कि अंग्रेज़ों में भी जिस तरह दूसरे अल्फ़ाज़ आम हैं।

जिन्होंने कहा कि हैल्लो बोलने से सलाम मिट जाएगा क्योंकि अंग्रेज़ों की कोशिश ही इस्लामी तहज़ीब और संस्कृति को मिटाने की है, उनके लिए जवाब यह है कि हैल्लो बोलना किस ने ज़रूरी कहा है? हम इस लफ़्ज़ का इस्तेमाल ज़रूरी नहीं कहते बल्कि यह कहते हैं कि अगर किसी ने इस लफ़्ज़ का इस्तेमाल कर लिया तो उसमें कोई मज़ाहिका नहीं है। अलबत्ता जिन्होंने यह कहा कि सलाम से ही अपनी बात का आग़ाज़ करना ज़रूरी है और दलील में "अस सलाम क़बल्ल कलाम" यानी बात करने से पहले सलाम करना है, इस हदीस को पेश करते हैं।

इस हदीस की हक़ीक़त आगे बयान की जाएगी। पहले उनकी ख़िदमत में अर्ज़ है कि आप पहले सलाम के मुताल्लिक़ इस्लामी हुक्म समझ लें, इस्लाम में सलाम करना वाजिब नहीं है बल्कि मस्नून है, अगर कोई सलाम करता है तो फिर जवाब देना वाजिब हो जाता है।

मज़ीद बरा फ़ोन पर तख़ातुब वाला कोई जुमला कहना सलाम से पहले यही है जैसे कि कोई किसी के दरवाज़े पर जाकर दरवाज़ा खटखटाकर इजाज़त तलब करे।

हज़रत अबू मूसा अश'अरी रज़ियल्लाहु अन्हु से मर्वी है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया:

"إِذَا اسْتَأْذَنَ أَحَدُكُمْ ثَلَاثًا فَلَمْ يُؤْذَنْ لَهُ فَلْيَرْجِعْ"

तर्जुमा: "अगर कोई तुमसे तीन बार इजाज़त तलब करे और उसे इजाज़त न मिले तो वह लौट जाए।" (मुस्लिम शरीफ़, किताबुल इस्तिज़ान वल आदा: 2153)

दरवाज़े पर पहले सलाम नहीं, इजाज़त तलब करना है। जब इजाज़त मिल जाए तो घर में दाख़िल होते हुए सलाम करना है। हाँ अगर

आदमी बिल-मुशाफ़ा (आमने सामने) मुलाक़ात करे तो अपनी बात का आग़ाज़ सलाम से करें।

पहली रिवायत, कलाम से पहले सलाम वाली रिवायत:

حدثنا الفضل بن الصباح بغدادي حدثنا سعيد بن زكريا عن عنبسة بن عبد الرحمن عن محمد بن زاذان عن محمد بن المنكدر عن جابر بن عبد الله قال قال رسول الله صلى الله عليه و سلمالسلام قبل الكلام وبهذا الإسناد عن النبي صلى الله عليه و سلم قال لا تدعوا أحدا إلى الطعام حتى يسلم قال أبو عيسى هذا حديث منكر لا نعرفه إلا من هذا الوجه وسمعت محمدا يقول عنبسة بن عبد الرحمن ضعيف في الحديث ذاهب و محمد بن زاذان منكر الحديث (سنن ترمذی:)

तर्जुमा: जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूल ﷺ ने फ़रमाया: सलाम कलाम से पहले किया जाना चाहिए। और उसी सनद से यह भी मनकूल है कि किसी को उस वक़्त तक खाने के लिए न बुलाओ जब तक वह सलाम न करे।

इमाम तिर्मिज़ी ने फ़रमाया: यह हदीस मुंकिर है। हम इसे इसी सनद से जानते हैं और मैंने मोहम्मद (इमाम बुख़ारी) से सुना कि अनबसा

बिन अब्दुर्रहमान ज़ईफ़ और ज़ाहिबुल हदीस हैं और मोहम्मद बिन ज़दान मुंकिर-उल-हदीस हैं।

ग़ोया इमाम तिर्मिज़ी ने भी इसे मुंकिर क़रार दिया है। शैख़ ज़ुबैर अली ज़ई ने इस रिवायत को ज़ईफ़ कहा है। (अन्वारुस सहीहा, ज़ईफ़ सुन्नन तिर्मिज़ी: 2699)

शेख अल्बानी (रह.) ने इस रिवायत को (ज़ईफुल जामे: 3373, 3374) में मौज़ू कहा है।

दूसरी रिवायत:

"من بدأ بالكلام قبل السلام؛ فلا تجيبوه"

तर्जुमा: "जो बिना सलाम के बात करे, उसका जवाब न दो।"

अब्दुल हातिम ने इस रिवायत को "अल इलाल" (2/294/2390) में बातिल क़रार दिया है।

अब्दुल ज़र'अ ने "अल इलाल" (2/332/2517) में इस हदीस की कोई असल तस्लीम नहीं की है।

हैयसमी ने "अल मजमुआ" (8/32) में कहा कि उसकी सनद में हारून बिन मुहम्मद अबुत तय्यब नामी रावी कज़्ज़ाब है।

ग़ोया यह हदीस भी ज़ईफ़ है और उससे भी इस्तिदलाल नहीं किया जाएगा। अगर सही भी मानते हैं जैसा कि शैख़ अल्बानी ने इसे हसन क़रार दिया है, फिर भी फ़ोन उठाते वक्त हैल्लो या मरहबा वग़ैरह कहने में कोई हरज नहीं है क्योंकि यह मिसाल दरवाज़ा खटखटाने और इजाज़त तलब करने की है। यही मौक़िफ़ शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह का है जबकि उनके सामने यह हदीस थी फिर भी वह मानी नहीं लेते जो सलाम से शुरू करने वाले लोग लेते हैं।

फ़ोन एक्सेस करने वाला क्या कहे, इससे मुताल्लिक़ शैख़ मोहम्मद नासिरुद्दीन अल्बानी रहिमहुल्लाह का एक वाक़िआ यहाँ ज़िक्र करना मुफ़ीद होगा, जिसे शैख़ सालेह बिन ताहा अबू सलाम ने अपनी किताब अल-मान'अ अल-जामील (1/16-17) में ज़िक्र किया है। वह बयान करते हैं कि एक बार शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने टेलीफोन से मुझसे राबता क़ाइम किया और मैं मौजूद नहीं था तो मेरी छोटी बेटी ने टेलीफ़ोन का रिसीवर उठाते ही कहा, "अस-सलामु अलेकुम व रहमतुल्लाही व बरकातुहू।" शैख़ ने इससे मुताल्लिक़ इस्तिफ़सार किया,

फिर उस बच्ची से कहा कि अपने वालिद को ख़बर दे कि मोहम्मद नासिरुद्दीन अल्बानी रहिमहुल्लाह ने फ़ोन किया था। और उन्होंने अपने लिए शैख़ का लफ़्ज़ इस्तेमाल नहीं किया, यह उनका तवाज़ो था। अल्लाह उन्हें जन्नत में आला दर्जे अता फ़रमाए। जब मैं घर लौटा तो मेरी बच्ची ने ख़बर दी कि एक आदमी ने फ़ोन किया था, उनका नाम मोहम्मद नासिरुद्दीन अल्बानी है। मैंने तुरंत शैख़ को फ़ोन लगाया तो शैख़ ने जो चाहा था मुझसे पूछने के बाद कहा: "ए अबू सलाम! जब मैंने आपसे इत्तिसाल किया तो आपकी छोटी बेटी ने फ़ोन उठाया और कहा: अस-सलामु अलेकुम व रहमतुल्लाही व बरकातुहू। क्या यह अमल इल्म और यक़ीन के साथ है या बच्ची की तरफ़ से ज़ाती तसर्रुफ़ है? ए अबू सलाम, हम इस मामले में इस्तिफ़ादा चाहते हैं।"

यह बात भी शैख़ रहिमहुल्लाह के तवाज़ो और दावत की हिकमत में से है।

मैंने शैख़ से कहा: यह बच्ची की तरफ़ से पहली बार तसर्रुफ़ हुआ है और जहाँ तक इस मसले में मुझे मालूम है, वह यह कि टेलीफ़ोन का रिसीवर उठाने वाला "नाम" कहे और जिसने फ़ोन किया है वह इससे

सलाम करे, तब वह फ़ोन करने वाले को सलाम का जवाब लौटाए, न कि फोन उठाने वाला सलाम से शुरू करे।

शैख़ रहिमहुल्लाह ने जवाब दिया कि यही सही है जो मैं जानता हूँ, इसलिए कि फ़ोन करने वाला शख़्स उस शख़्स की तरह है जो दरवाज़ा खटखटाकर (इजाज़त) तलब करता है, दोनों में कोई फ़र्क़ नहीं है।

================

[62]..बच्चे के हाफ़िज़ ए क़ुरआन होने पर ख़ुशी मनाने वालो के लिए

किसी के घर में बच्चा हाफ़िज़ ए क़ुरआन हो जाए तो यक़ीनन यह हमारे बच्चे के लिए बड़ी सआदत (ख़ुशी) की बात है और क्यो ना हो कि मोमिन की ज़िंदगी का दस्तूर यही किताब है, इसी की तबलीग़ और इशा'अत (तबलीग़) के लिए मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को भेजा गया।

बच्चे के साथ क़ुरआन हिफ़्ज़ करवाने वाले (उस्ताद) और क़ुरआन के हिफ़्ज़ की तरफ़ रहनुमाई करने वाले (वालिदैन) सब को अज्र मिलेगा। यहाँ यह बात ज़ेहन में रहे के क़ुरआन के नुज़ूल का असल मक़सद क़ुरआन की तालीम को जानना और उस पर अमल करना है।

फ़ुज़ैल रहिमहुल्लाह फ़रमाते हैं कि क़ुरआन इस लिए नाज़िल किया गया कि उसके मुताबिक़ अमल किया जाए जबकि लोगो ने इसकी तिलावत ही को अमल बना लिया है। (इस बात में हमारे लिए बड़ी इबरत है)।

अब सवाल यह है कि किसी का बच्चा हाफ़िज़ ए क़ुरआन बन गया है तो वालिदैन को ला-मुहाला ख़ुशी होगी फिर वो बच्चे के हाफ़िज़ ए क़ुरआन बनने की ख़ुशी में किया एहतिमाम करे या किस तरह अपनी ख़ुशी का एहतिमाम करे?

इस सवाल के जवाब में पहले यह अर्ज़ कर दू के ख़ुशी के मौक़े पर ख़ुश होना और ख़ुशी का इज़हार करना इस्लाम में मना नहीं है मगर ख़ुशी के इज़हार का तारीख़ किताब और सुन्नत के ख़िलाफ़ ना हो। उसके साथ यहां बात भी जान लेते हैं कि क़ुरआन तो रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़माने से चला आ रहा है, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ कितने सहाबा और सहाबियात क़ुरआन के हाफ़िज़ थे। क्या वो लोग क़ुरआन हिफ़्ज़ होने पर इज़हार ए ख़ुशी में किसी क़िस्म का अमल अंजाम देते थे?

आज हमारे यहां हाफ़िज़ ए क़ुरआन होने पर दावती तक़रीब मुन'अक़िद की जाती है, बड़ी महफ़िल सजाई जाती है, मिठाई तक़सीम की जाती है, लोगो की तरफ़ से तोहफ़े मिलते हैं और बच्चों को फूल पहनाये जाते हैं। क्या इस क़िस्म का कोई अमल हम अपने असलाफ़ की ज़िन्दगी में पाते हैं? नहीं, पाते हैं।

फिर हम दीन में अपने असलाफ़ से कुछ आगे बढ़ना चाहते हैं, क़ुरआन तो दीन की किताब है, पाक दीन की इमारत इसी पर क़ायम है और दीन पर अमल करने के लिए हमारे पास नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का बेहतरीन नमूना और आप के पियारे असहाब की मिसाले मौजुद है। आप का बच्चा हाफ़िज़ ए क़ुरआन होता है तो बिलाशुबाह आप को ख़ुशी होगी और हर मुसलमान को इस बात पर ख़ुशी होगी, इस मौक़े से बच्चे को आप अपनी तरफ़ से कोई उपहार (गिफ्ट) या क़ीमती तोहफ़ा दे कर उसकी हौसला अफ़ज़ाई करते हैं या मदरसा वाले सर्टिफिकेट या इनाम दे कर तकरीम करते हैं तो इसमें कोई हर्ज नहीं है मगर आज कल हाफ़िज़ ए क़ुरआन बनने पर बच्चे के घर वालो की तरफ़ से जो मंज़र देखने को मिल रहा है बड़ा अफ़सोसनाक है।

देखा देखा अब आम लोग यहीं समझने लगे के हाफ़िज़ ए क़ुरआन होने पर लाज़िमन दावत का एहतिमाम करना है और ख़ुशी की महफ़िल क़ायम करनी है फिर इसमे दूर और नज़दीक के रिश्तेदार और गांव के बहुत से अफ़राद को बुलाया जाता है जो बच्चों को गिफ्ट पेश करते हैं, माला पहनते हैं और दावत खाते हैं।

आप जानते हैं शादी में बारात की रस्म, एक आदमी ने जारी की होगी और आज शादी का जुज़ ला-युन्फ़क बन गई है, यही हाल हाफ़िज़ बनने पर दावत करने का हो गया है। पैसे वालो के लिए दावत का अहतिमाम करना कोई बड़ी बात नहीं है लेकिन जब ग़रीब का बच्चा हाफ़िज़ ए क़ुरआन बनेगा और वो दावत नहीं कर सकेगा तो उस ग़रीब को दुख होगा के हम अमीरों की तरह ख़ुशी नहीं मना सकते ख़ुदारा! दीन के नाम पर या ख़ुशी के इज़हार में ऐसा काम न करे जो किताब और सुन्नत में न हो और उम्मत के लिए दुशवारी का बाइस हो। आप का बच्चा हाफ़िज़ ए क़ुरआन बना है तो आप क्या करेंगे?

इस मौक़े से तक़रीब और महफ़िल का इं'इक़ाद (जलसे वग़ैरह की व्यवस्था) करने की ज़रूरत नहीं है बल्कि बच्चे का हौसला बढ़ाना और उसको दुआ देने की ज़रूरत है। हौंसला अफ़ज़ाई इस लिए कि बच्चों ने मेहनत की है और 30 पारे सीने में महफ़ूज़ किये है। आप हौसला अफ़जाई में उसे मिठाई खिलाएं, पैसे दे, गाड़ी और साइकिल जो मयस्सर हो उसे दे इसमें कोई हर्ज नहीं है, ये वो वालिदैन और बच्चे के दरमियाँन का मामला है।

दूसरी बात यह है कि क़ुरआन हिफ़्ज़ कर लेना ही काफ़ी नहीं है उसकी तालीम हासिल करना अहम है जिस मक़सद से क़ुरआन नाज़िल हुआ है, उस पर अमल करना और उसकी तब्लीग़ करना भी नीज़ क़ुरआन याद करना आसान है मगर उसको हमेशा याद रखना कोई आसान काम नहीं है बल्कि क़ुरआन भूलना गुनाह का बाइस है।

इन सुरतो में ज़रुरत इस बात की है कि बच्चे के हाफ़िज़ ए क़ुरआन होने पर अल्लाह का शुक्रिया बजा लेने के साथ उससे बहुत सब यह दुआ करे कि उमर भर उसका हाफ़िज़ा बाक़ी रहे, इस बच्चे को जैसे पूरा क़ुरआन हिफ़्ज़ हो गया, उसी तरह पूरे क़ुरआन के मानी और अहकाम जाने की तौफ़ीक़ दे, क़ुरआन के मुताबिक़ अमल करने और उसकी तब्लीग़ करने की तौफ़ीक़ दे। बच्चे को इस वक़्त दुआ की ज़रूरत है। जब आप का बच्चा हाफ़िज़ ए क़ुरआन होने के साथ उसके उलूम और अहकाम को भी सीख लेगा और उस पर अमल करेगा तो आप के लिए बशारत ए नबवी है।

من قرأ القرآن وتعلمه وعمل به؛البس والداه يوم القيامة تاجا من نور.(صحيح الترغيب:1434)

तर्जुमा: जिस ने क़ुरआन पढ़ा, उसे सीखा और उस पर अमल किया तो उसके वालिदैन को क़यामत के दिन नूर का ताज पहनाया जाएगा।

क़ुरआन हिफ़्ज़ करने का मरहला इब्तिदाई है, अभी क़ुरआन सीखने और अमल करने का मरहला बाक़ी है, जब आप का बच्चा मराहिल को पार कर ले तो आप क़ाबिल ए मुबारकबाद है और आप के लिए बशारत ए नबवी है, क़यामत में मां बाप दोनों को नूर का ताज पहनाया जाएगा। याद रहे बग़ैर इल्म और बग़ैर अमल के यह फ़ज़ीलत हासिल नहीं होगी।

===============

[63].बंदों को सब से ज़्यादा उम्मीद दिलाने वाली आयत

अल्लाह की मुकम्मल किताब कुरआन-ए-हकीम बंदों के लिए सुकून का ज़रिया है, हिदायत का सामान है और ज़िंदगी के हर मोड़ पर उन्हें उम्मीद दिलाती है। इस लिए उससे ताल्लुक़ मज़बूत रखने, उसे सबसे प्यारा बनाने, पढ़ने, पढ़ाने और ज़िंदगी में उतारने की ज़रूरत है। हमें जब भी बेचैनी महसूस हो अल्लाह का कलाम पढ़ें, परेशानी का सामना हो कलाम-ए-इलाही की तिलावत करें, ख़ौफ़ और दहशत का मंजर हो ज़िक्र-ए-ख़ालिक़ से दिल और ज़बान को ताज़गी दें, यानी हमें कभी मायूस होने की ज़रूरत नहीं है चाहे हालात कुछ भी हों। आख़िर हमारा कोई ख़ालिक़ है जो सब कुछ देख और सुन रहा है, सब की निगरानी करने वाला है, सब की ज़रूरतें पूरी करने वाला है, रोज़ी-रोटी से लेकर ज़िंदगी का हर सामान देने वाला है, तो हम क्यों मायूस होते हैं। जबकि अल्लाह ने हमें हर तरह की परेशानी से निकालने का रास्ता बताया है, अच्छाई और बुराई की पहचान दी है, ईमान और कुफ़्र का फ़र्क़ बताया है, एक रोशन दीन और खुली किताब दी है जिसमें हर कलिमा में रोशनी, उम्मीद और हिदायत है।

मुमकिन है दूसरे मज़ाहिब में मायूसी की तालीम दी गई हो मगर इस्लाम में इसे कोई जगह नहीं दी गई है, बल्कि मायूसी ऐसा गुनाह

है जो कुफ़्र तक ले जाता है और कभी तो आदमी काफ़िर भी हो जाता है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَلَا تَيْأَسُوا مِن رَّوْحِ اللَّهِ ۖ إِنَّهُ لَا يَيْأَسُ مِن رَّوْحِ اللَّهِ إِلَّا الْقَوْمُ الْكَافِرُونَ

तर्जुमा: और अल्लाह की रहमत से मायूस न हो, यक़ीनन अल्लाह की रहमत से मायूस वही होते हैं जो काफ़िर होते हैं। (सूरह यूसुफ़: 87)

दूसरी जगह अल्लाह का फ़रमान है:

قَالَ وَمَن يَقْنَطُ مِن رَّحْمَةِ رَبِّهِ إِلَّا الضَّالُّونَ

तर्जुमा: कहा, अपने रब की रहमत से न-उम्मीद तो सिर्फ़ गुमराह और भटके हुए लोग ही होते हैं। (सूरह अल-हिज्र: 56)

इस सिलसिले में नबी ﷺ का फ़रमान है:

الكبائرُ: الشِّركُ باللهِ، والإِياسُ من رَوْحِ اللهِ، و القُنوطُ من رحمةِ اللهِ

तर्जुमा: अल्लाह के साथ शिर्क करना और उसकी रहमत से ना-उम्मीद होना कबीरा गुनाह है। (सहीह उल जामी: 4603)

यानी अल्लाह की रहमत से मायूसी खुली गुमराही है। यह रास्ता गुमराह और काफ़िर ही इख़्तियार करता है, अगर कोई मुसलमान मायूसी का शिकार है तो वह गुनाह-ए-कबीरा का मुर्तकिब है और उसे तौबा करना लाज़मी है।

क़ुरआन-ए-हकीम का हर वर्क़ (पेज) और हर सत्र (लाइन) बंदों के लिए राहत का सामान है। है कोई जो क़ुरआन पढ़ कर और समझ कर देखे? है कोई जो अपनी बीमारियों का इलाज इस किताब में तलाश करे? तारीख़ गवाह है जिसने भी क़ुरआन को अपनी ज़िंदगी का हिस्सा बनाया उसके हिस्से में कामयाबी ही कामयाबी आई। आप भी कामयाब होना चाहते हैं तो किताबुल्लाह को अपना साथी बनाएं, उसे ग़ौर और फ़िक्र से पढ़ें, उस पर अमल करें और उसे मुसलमान और ग़ैर-मुसलमान को बुलाएं।

उलमा ने तलाश करने की कोशिश की है कि क़ुरआन की कौन सी आयत है जो बंदों को सबसे ज़्यादा उम्मीद दिलाती है, मायूसी से बचाती है और गुनाहगार हो कर भी अपने ख़ालिक़ और मालिक से बख़्शिश और दर्गुज़र की उम्मीद जगाती है। इस सिलसिले में कई क़ुरआनी आयतें ज़िक्र की जाती हैं लेकिन अक्सर अहले इल्म ने सूरह

ज़ुमर की आयत नंबर 53 को सबसे ज़्यादा उम्मीद दिलाने वाली आयत क़रार दिया है, अल्लाह का फ़रमान है:

قُلْ يَا عِبَادِيَ الَّذِينَ أَسْرَفُوا عَلَىٰ أَنفُسِهِمْ لَا تَقْنَطُوا مِن رَّحْمَةِ اللَّهِ ۚ إِنَّ اللَّهَ يَغْفِرُ الذُّنُوبَ جَمِيعًا ۚ إِنَّهُ هُوَ الْغَفُورُ الرَّحِيمُ

तर्जुमा: (मेरी जानिब से कह दो) के ऐ मेरे बंदो! जिन्होंने अपनी जानों पर ज़्यादती की है तुम अल्लाह की रहमत से ना-उम्मीद न हो जाओ। यक़ीनन अल्लाह सारे गुनाहों को बख़्श देता है, वाक़ई वह बड़ी रहमत वाला है। (सूरह ज़ुमर: 53)

यह क़ौल अली रज़ियल्लाहु अन्हु और अब्दुल्लाह बिन मस'ऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की तरफ़ भी मंसूब है मगर सनद के एतिबार से यह अक़्वाल साबित नहीं हैं। जब हम ऊपर ज़िक्र आयत की शान-ए-नुज़ूल (आयत के उतरने का सबब) तलाश करते हैं तो सहीह बुख़ारी में इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी यह रिवायत मिलती है:

أَنَّ نَاسًا، مِن أَهْلِ الشِّرْكِ كَانُوا قدْ قَتَلُوا وأَكْثَرُوا، وزَنَوْا وأَكْثَرُوا، فأتَوْا مُحَمَّدًا صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ فَقالوا: إنَّ الذي تَقُولُ وتَدْعُو إلَيْهِ لَحَسَنٌ، لو تُخْبِرُنَا أنَّ لِما عَمِلْنَا كَفَّارَةً فَنَزَلَ: {وَالَّذِينَ لا يَدْعُونَ مع اللَّهِ إِلَهًا آخَرَ، ولَا يَقْتُلُونَ النَّفْسَ الَّتي حَرَّمَ اللَّهُ إلَّا بالحَقِّ، ولَا يَزْنُونَ} ونَزَلَتْ {قُلْ يا عِبَادِيَ الَّذِينَ أَسْرَفُوا علَى أَنْفُسِهِمْ، لا تَقْنَطُوا مِن رَحْمَةِ اللَّهِ}

तर्जुमा: मुश्रिकीन में से कुछ लोगों ने बहुत ख़ून नाहक़ बहाया था और बहुत ज़यादा ज़िना किया था, वे मोहम्मद ﷺ के पास आए और कहा कि आप जो कुछ कहते हैं और जिस की दावत देते हैं वह यक़ीनन अच्छा है लेकिन अगर आप हमें इस बात से आगाह कर दें कि अब तक हमने जो गुनाह किए हैं क्या वे माफ़ के क़ाबिल हैं तो अल्लाह ने यह आयत नाज़िल की: "वह लोग जो अल्लाह के साथ किसी दूसरे माबूद को नहीं पुकारते और किसी जान को नाहक़ क़त्ल भी नहीं करते जिसका क़त्ल अल्लाह ने हराम किया है मगर हक़ के साथ और न वह ज़िना करते हैं।" और यह आयत भी नाज़िल हुई "कह दीजिए ऐ मेरे बंदो! जिन्होंने अपनी जानों पर ज़्यादती की है अल्लाह की रहमत से मायूस न हों।" (सहीह बुख़ारी: 4810)

गोया कि शान-ए-नुज़ूल में ख़िताब मुश्रिकीन-ए-मक्का को है मगर इस आयत का हुक्म आम है। इसमें मुश्रिकीन और काफ़िर और हर तरह के गुनाहगार शामिल हैं जिन्होंने ख़ूब गुनाह करके अपनी जानों पर ज़ुल्म किया है।

हाफ़िज़ इब्न-कसीर रहिमहुल्लाह ने इस आयत के मुताल्लिक़ लिखा है कि "यह आयत तमाम नाफ़रमानों को चाहे वे काफ़िर हों या दूसरों

को तौबा और अल्लाह की तरफ रुजू की दावत देने वाली है, और ख़बर देने वाली है कि अल्लाह तौबा करने वालों और उसकी तरफ़ रुजू करने वालों के सारे गुनाह माफ़ कर देता है, गुनाह कितने भी हों, चाहे समंदर के झाग के बराबर क्यों न हो जाएं। इस आयत को तौबा पर महमूल न करना सही नहीं है क्योंकि शिर्क तौबा के बग़ैर माफ़ नहीं किया जाता। (तफ़सीर इब्न कसीर)

इस आयत को तौबा पर महमूल करना ज़रूरी है जैसा के हाफ़िज़ रहिमहुल्लाह ने कहा है, ताकि क़ुरआन की उस आयत से टकराव ना हो जिसमें कहा गया है कि अल्लाह सारे गुनाह माफ़ कर सकता है सिवाए शिर्क के। अल्लाह का फ़रमान है:

إِنَّ اللّٰهَ لا يَغْفِرُ أَنْ يُشْرَكَ بِهِ وَيَغْفِرُ ما دُونَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَشاءُ

तर्जुमा: यक़ीनन अल्लाह अपने साथ शरीक किये जाने को नहीं बख़्शता और उसके सिवा जिसे चाहे बख़्श देता है। (सूरह अन-निसा: 48)

आयत के शान ए नुज़ूल और उसके मने और मफ़हूम पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि बंदों के हक़ में सब से ज़्यादा उम्मीद वाली आयत यही है। आइए देखते हैं अल्लाह गुनेहगार बंदों को किस तरह की उम्मीद दिलाता है?

➤ सब से पहले अल्लाह अपने पैग़म्बर को ख़िताब करता है के वो अपनी उम्मत को ख़बर करें फिर "يَا عِبَادِي" के ज़रिये बंदों को शफ़क़त और मुहब्बत भरे निराले अंदाज़ में याद करता है और कहता है कि तुम्हें डरने और ख़ौफ़ खाने की ज़रूरत नहीं है, तुम ने गुनाह कर लिया तो क्या हुआ? बंदे तो मेरे ही हो, मैं ही तुम्हारा ख़ालिक़ और मालिक हूं। और तो कोई नहीं जिससे तुम्हें घबराने की ज़रूरत है।

➤ जब अल्लाह अपने बंदो को प्यार भरे लहजे में पुकार कर उनका एहतिराम और इकराम करता है फिर गुनाह और नाफ़रमानी की कसरत याद दिलाता है कि तुम ने हद से ज़्यादा गुनाह कर लिया, गुनाहों की हद पार कर दी, नाफ़रमानी पर नाफ़रमानी करते रहे।

➤ गुनाहों की कसरत याद दिलाने के बाद अब गुनाहगारों की हिम्मत बांधता है, ना उम्मीद से रुकता है और साफ़ लफ़्ज़ो में गुनाहगारों से कहता है कि गुनाहों की कसरत याद दिलाने के बाद अब भी तुममें अल्लाह की रहमत से मायुस नहीं होना है। ऊपर आप ने क़ुरआन की कुछ आयतें भी पढ़ी हैं जिन में मयूसी गुमराह और काफ़िर की सिफ़ात क़रार दी गई हैं। मोमिन को किसी भी तरह से कभी भी मायूस नहीं होना चाहिए, ऐसे मौक़े पर अल्लाह पर भरोसा बहुत काम आता है और ईमान और यक़ीन में मजबूरी पैदा होती है।

➤ अब अल्लाह ﷻ ताकीदी जुमले के साथ वो बात कहता है जिससे गुनेहगारों की उम्मीद बिलाशुबा जाग जाती है और रहमत ए इलाही से दामन भर जाता है, अल्लाह फ़रमाता है कि तुम्हें तुम्हारा गुनाह याद है मुझे मेरी रहमत और मग़फ़िरत याद है, जाओ तुम्हारे सारे गुनाह माफ़ कर दिये। सुन लो! एक दो गुनाह नहीं सारे गुनाह बख़्श दिये। अल्लाह ﷻ ने इसी पर बस नहीं किया बल्कि आगे ताकीद के साथ यह भी ख़बर दे दी के बे-शक मैं ही तो सब से ज़्यादा माफ़ करने वाला और सब से ज़्यादा मेहरबानी करने वाला हूं, तुम मेरे अलावा किस को इतना माफ़ करने वाला पते हो? सुब्हान'अल्लाह, अल्लाह वाक़ई बड़ा माफ़ करने वाला है। जब हमें यह मालूम हो गया कि अल्लाह बहुत माफ़ करने वाला और बड़ा मेहरबान है और गुनेहगारों के सारे गुनाह माफ़ कर देता है तो इसके साथ मज़ीद दो बातों को जाने और अमल में लाने की भी ज़रूरत है: पहली बात तो यह है कि अल्लाह की रहमत से मायुस न होने का मतलब यह नहीं है कि हम अल्लाह की रहमत की उम्मीद में जान बूझ कर गुनाह करते रहें, गुनाहों पर जमे रहें, अल्लाह के हुदूद को पार करते रहें और फ़राइज़ ओ वाजिबात में कोताही करे। याद रहे कि अल्लाह बहुत माफ़ करता है तो बहुत सज़ा भी देता है।

दूसरी बात यह है कि छोटे गुनाह नेकियों से ख़ुद ही मिट जाते हैं

मगर बड़े गुनाहों के लिए तौबा ज़रूरी है जैसा कि ऊपर ज़िक्र की गई आयतें भी तौबा को लाज़िम पकड़ने की हिदायत देती हैं।बिना तौबा के बड़े गुनाह माफ़ नहीं होते और तौबा की क़बूलियत की शर्तें यह है:

❶ गुनाह पर शर्मिंदगी और अफ़सोस का इज़हार किया जाए

❷ अल्लाह की इबादत में गुनाह छोड़ दिया जाए

❸ आइन्दा उस गुनाह से बचने का अल्लाह से वादा किया जाए।

❹ गुनाह हुक़ूक़ उल इबादत से मुताल्लिक़ हो तो हक़ की वापसी भी तौबा की शर्त है।

आख़िरी बात तहरीर कर के मज़मून ख़त्म करना चाहता हूं कि ऐसा नहीं है के यही आयत सिर्फ़ गुनहगारों को उम्मीद दिलाती है, एक मोमिन का ईमान होना चाहिए के अल्लाह के दीन में ही बिल्कुल सुकून और राहत का सामान है। अल्लाह का मुकम्मल कलाम उम्मीद है। अपनी ज़िंदगी को मायूसी और कुफ़्र से बचाने के लिए हमें क़ुरआन को समझना और उस पर अमल करना चाहिए। कुछ अहल ए इल्म ने सूरह अज़-ज़ुमर की ऊपर ज़िक्र की गई आयत के अलावा दूसरी आयत को सब से ज़्यादा उम्मीद वाली आयत क़रार दिया है, उन आयत में भी बेशक मोमिन और ख़ास तौर से गुनेहगारों के वास्ते

रहमत और मग़फ़िरत की उम्मीद है मगर सब से ज़्यादा उम्मीद वली आयत सूरह अज़-ज़ुमर की ऊपर ज़िक्र की गई आयत ही मालूम होती है, इस आयत के अलावा सब से ज़्यादा उम्मीद वाली आयत के मुताल्लिक़ अहल ए इल्म का जो इख़्तिलाफ़ है उस में कुछ के नज़दीक सूरह फ़ातिर की 32-33 आयत, सूरह अन-नूर की 22 नंबर आयत, सूरह ग़ाफ़िर 33, सूरह अल-हिज्र:49, सूरह अल-अन'आम:82, सूरह अल-अराफ़ 156, सूरह अर-रा'द 6, सूरह ताहा 48, सूरह अल-अहज़ाब 47, सूरह अज-ज़ुहा 5, सूरह अश-शूरा 30, सूरह अन-निसा 110, सूरह मुहम्मद 11 और 19, सूरह अत-तौबा 102 वग़ैरह हैं।

अल्लाह हमारे गुनाहों को माफ़ फ़रमाये और अपनी रहमत से नवाज़ कर जन्नत उल फ़िरदौस में आला मक़ाम अता फ़रमाये। आमीन

================

[64]..बरमूडा ट्रायंगल की हक़ीक़त

डेविल्स ट्रायंगल शैतानी/आसेबी मुसल्लस भी कहा जाता है, पानी की सतह पर बना हुआ है और जो बहरी (समुन्द्री) ओस्यानस में अमेरिका के साहिल से कुछ फ़ासले पर वाक़े इलाक़े का नाम है। इस इलाक़े का एक कोना बर्मूडा में, दूसरा प्रोटोरिक में और तीसरा फ्लोरिडा के क़रीब एक मक़ाम पर वाक़े है। बर्मूडा ट्रायंगल उन्हीं 3 कोनों के दर्मियानी इलाक़े को कहा जाता है। यह 300 जज़ाइर पर मुश्तमिल है जिनमें अक्सर जज़ाइर ग़ैर आबाद हैं, सिर्फ़ 20 जज़ाइरों पर आबादी है, उसका जो इलाक़ा पुर इसरार और ख़तरनाक माना जाता है उसकी बर्मूडा मुसल्लस या बर्मूडा ट्रायंगल कहते हैं। इस ट्रायंगल का कुल रक़बा 1140000 है।

यह मुसल्लस लोगों में पुर इसरारियत के लिए शोहरत का बाइस बना हुआ है। इसकी शोहरत उस वक्त से शुरू हुई जब 1945 में फ्लोरिडा से अचानक 5 हवाई जहाज़ कहीं लापता हो गए। माना जाता है कि यहाँ गुम होने वाले जहाज़ के साथ मरने वाले का भी कोई नामो निशान नहीं मिलता। यह ट्रायंगल इस क़दर मशहूर हुआ कि कहीं भी कोई जहाज़ गुम हो जाता, उसका सिरा इस ट्रायंगल से जोड़ दिया

जाता। लोग कहते हैं कि इस मुसल्लस में अब तक सैकड़ों जहाज़ पुर इसरार तौर पर ग़ायब हो चुके हैं।

यह ट्रायंगल मु'अम्मा नहीं मगर बे शुमार किताबों और नौवेलों के ज़रिये मुआमला बना दिया गया है और उस पर इस क़दर मूवी डॉक्यूमेंट्री पेश की गई कि लोगों ने यहाँ मदुकल फ़ितरत अनासिर मान लिया जिसके सबब होने वाले तमाम पुर इसरार वाक़ि'आत उसी की तरफ़ मंसूब कर दिए जाते हैं।

ट्रायंगल से मुताल्लिक़ क़िस्से कहानियाँ, वाक़ि'आत, जादुई करिश्मा और शैतानी हरकत बयान की जाती है। उसको इस्लाम से भी जोड़ने की कोशिश की जा रही है। मैं क़िस्से कहानियों से हटकर उन बातों का ख़ुलासा करने की कोशिश करता हूँ जिन्हें इस्लाम से जोड़ा जा रहा है।

ट्रायंगल और इस्लाम

1. एक नज़रिया यह पेश किया जाता है कि यह सिज्जीन की तरफ़ जाने वाला रास्ता है, इसमें जो उड़ान तश्तरिया दिखाई देती है वह

दरअसल फ़रिश्ते हैं जो रुहों को सिज्जीन की तरफ़ ले जाते हैं। इसमें सबसे फ़हश ग़लती तो यही है कि सिज्जीन को कोई जगह समझा जा रहा है जब कि यह एक रजिस्टर का नाम है जिसमें बुरे लोगों का इंदिराज (जाना) होता है। अल्लाह का फ़रमान है:

كلا ان كتاب الفجار لفي سجين وما أدراك ما سجين كتاب مرقوم. (المطففين:97)

तर्जुमा: हरगिज़ नहीं, यक़ीनन फुज्जार का लिखना सिज्जीन में है और आपको किस ने मालूम कराया कि सिज्जीन क्या है, वह तो एक लिखी गई किताब है।

दूसरी बात यह है कि फ़रिश्ते को आदमी असली सूरत में नहीं देख सकता और दूसरी सूरत में पहचान नहीं सकता।

मज़कूर नज़रिया से पता चलता है कि जिस तरह काफ़िरों ने इस ट्रायंगल से बहुत सारे क़िस्से कहानियाँ जोड़ दी हैं वैसे ही कम इल्म मुसलमानों ने भी कुछ ग़लत बातें उसकी तरफ़ मंसूब कर दीं।

2. दूसरा नज़रिया मुर्दा आदमी का दोबारा दुनिया में ज़िंदा वापस आना है। इस ख़्याल को डॉ. रेमंड ए मोदी ने अपनी किताब "मौत के बाद की जिंदगी" में उजागर किया है। डॉ मोदी ने इस किताब में कुछ ऐसे लोगों के बारे में मालूमात दी हैं, जिन्हें क्लिनिकली डेड क़रार दिया गया, लेकिन किसी वजह से वे दोबारा ज़िंदा हो गए। मोदी की बुनियाद इस ख़्याल पर मबनी है कि एक आदमी कुछ देर के लिए वाक़ियतन मर कर दोबारा इस दुनिया में वापस आ सकता है।

मोदी की बात सरासर गलतोऔर इस्लामी अक़ीदे के ख़िलाफ़ है क्योंकि इंसान जब मर जाता है तो दोबारा ज़िंदा नहीं हो सकता। इस्लामी अक़ीदे के मुताबिक़ रुह निकलने के बाद दुनिया में क़यामत तक नहीं लौट सकती। अल्लाह का फ़रमान है:

ومن ورائهم برزخ إلى يوم يبعثون.(المؤمنون:100)

तर्जुमा: इस मरने वाले के दर्मियान और दुनिया वालों के दर्मियान एक आड़ और पर्दा है।

3. तीसरा नज़रिया दज्जाल का है। कहा जाता है कि बर्मूडा ट्रायंगल दज्जाल का मस्कन (घर) है। यहाँ के उड़न तश्तरी दज्जाल के शैतान

हैं जिन्हें भेज कर दज्जाल दुनिया की ख़बरें मालूम करता है। इस नज़रिये की बुनियाद इस पर क़ायम है कि बर्मूडा ट्रायंगल पानी का हिस्सा है और दज्जाल का तख़्त भी पानी पर है। यह नज़रिया सबसे पहले मिस्री मुसलमान मुहक़्क़िक़ मुहम्मद इसा दाऊद ने पेश किया।

यह नज़रिया कई वजह से नाक़ाबिल-ए-भरोसा है:

(1) कुरआन और हदीस की रोशनी में बर्मूडा ट्रायंगल दज्जाल का मस्कन (घर) है ऐसा कोई वाज़ेह और सरीह सबूत नहीं है बल्कि सही हदीस की रोशनी में इस क़दर वज़ाहत है कि दज्जाल का निकलना मशरिक़ से और सिटी असबहान से यहूदी नामी क़बीला से होगा जो कि ईरानी ममालिक है।

(2) किसी हदीस में दज्जाल का तख़्त पानी पर है ज़िक्र नहीं है बल्कि इबलीस का तख़्त पानी पर है यह बात हदीस में आई है। दज्जाल और इबलीस में बहुत फ़र्क़ है। सबसे बड़ा फ़र्क़ दज्जाल इंसान में से है और इब्लीस जिन में से

(3) उड़न तश्तरी को शैतान कहना सिर्फ़ इख़्तिरा है। न जाने फ़िज़ा की किस चीज़ को उड़न तश्तरी का नाम दिया जाता है? और वह

शैतान है इस बात का क्या सबूत है? और फिर यह बात कहना मबनी पर ग़लत है कि ये दज्जाल के कारिंदे हैं जो उसे पूरी दुनिया से मुताल्लिक़ किए हुए हैं क्योंकि क़ुरआन और हदीस में इसकी भी वज़ाहत नहीं है कि दज्जाल को उसके निकलने से पहले से ही दुनिया की ख़बरें मिल रही हैं।

(4) दज्जाल एक आदमी का नाम है, वह अभी अकेला है और अकेले ही निकलेगा उसका कोई कारिंदा नहीं है। निकलने के बाद अपना कुफ़्र फैलाएगा, लोग उसकी इताअत क़बूल करेंगे फिर उसके कारिंदे होंगे।

आख़िर में बर्मूडा ट्रायंगल के मुताल्लिक़ यह कहना चाहता हूँ कि मुझे यह कोई यहूदी और नज़रिया की साज़िश लगता है। इसका मक़सद लोगों के अज़हान (समझ) और क़ुलूब पर हैबत (ख़ौफ़) तारी करना है, वक़्त पड़ने पर दुनिया वालों के लिए इसका इस्तेमाल करेगा। कुछ लोगों का कहना है कि वहाँ अस्लहा का ज़ख़ीरा जमा किया गया है और उस जगह को शैतानी ट्रायंगल क़रार दिया गया है ताकि लोग उस जगह से दूर रहें। यही वजह है कि तक़रीबन 400 साल से उन जज़ाइर में बेश-बाद नहीं इख़्तियार की गई। अगर यह साज़िश और मंसूई मुआमला नहीं....

तो इतने बड़े-बड़े साइन्टिस्ट पढ़े हुए हैं आख़िर क्या वजह है कि उसकी असल हक़ीक़त सामने नहीं आ रही है?

क्या वजह है कि मलेशिया का जहाज़ गुम होने पर उसका ताल्लुक़ बर्मूडा ट्रायंगल से जोड़ दिया गया?

☆ और अगर यह ख़तरनाक जगह होती तो इंश्योरेंस वालों के लिए भी ख़तरनाक होती मगर वे बग़ैर किसी झिझक के जहाज़-रान (जहाज़ चलाने वाला/जहाज़ का कप्तान) करने वालों से इंश्योरेंस प्रीमियम लेते हैं जो दीगर समुद्री इलाक़ों में जहाज़-रान करने वालों से लिया जाता है।

☆ ट्रायंगल का सिरा फ्लोरिडा से मुत्तसिल (मिला हुआ) है। इस फ्लोरिडा के 2 माने हैं:

(1) उस ख़ुदा का शहर जिसका इंतिज़ार किया जा रहा है।

(2) वह ख़ुदा जिसका इंतिज़ार किया जा रहा है। उस मानी से

ट्रायंगल और फ्लोरिडा का कुछ ताल्लुक़ मालूम होता है। लगता है यहूद और नसारा मुस्तक़बिल (भविष्य) में अपने किसी मफ़ाद के लिए इस नए ख़ुदाई तसव्वुर का इस्तेमाल करने वाले हैं, इसलिए अब से ही बर्मूडा ट्रायंगल के नाम से दुनिया वालों पर हैबत तारी की गई है। मगर मुसलमानों को इस क़िस्म के ड्रामी और अफ़साने वाले क़िस्से कहानियों से घबराना नहीं चाहिए।

================

[65]..बिदअत को पहचानिए

अल्हम्दुलिल्लाह इस्लाम एक वाज़ेह और साफ़ सुथरा दीन है जिसकी तालीमात (शिक्षाएँ) और अहकाम रोशन दिन की तरह अयाँ-ओ-बयाँ (स्पष्ट और ज़ाहिर) हैं, मगर इस्लाम के नाम लिए जाने से सूफ़ियों और बिद'अतीयों ने इस साफ़ सुथरे दीन को जहां ग़ैर मुसलमानों की नज़र में बदनाम किया है, वहीं आम मुसलमानों पर भी इसे मुश्किल बना दिया है। जो असली दीन है उसे छोड़कर, इन बिदअतियों ने दीन में नई नई बिद'आत और ख़ुराफ़ात घड़ ली हैं और उन पर सख़्ती से अमल किया और अवाम को यक़ीन दिलाया कि यही असली दीन है, जो इस पर अमल करता है वह असल सुन्नी है और जो अमल नहीं करता है वह बिद'अती, मुर्तद और नबी का गुस्ताख़ है। العياذ بالله

किस क़दर हैरानी और ताज्जुब की बात है कि असल दीन को पीछे पुश्त किया गया बल्कि असल दीन पर अमल करने वालों को बाग़ी, मुर्तद, गुस्ताख़ और बिद'अती कहा जाता है और दीन के नाम पर नई नई बिद'आत को असल दीन समझा जाता और बिद'अती ख़ुद को असल सुन्नी कहता है।

ख़ुर्द का नाम जुनूँ रख दिया, जुनूँ का ख़ुर्द-जो चाहे आपका हुस्न करिशमा साज़ करे।

इस्लाम के लिए ख़तरात, ख़द्शात और नुक़सानात की बात जाए तो जो यहूद और नसारा नहीं कर सके, वो इन बिद'अतियों ने इस्लाम के लिए ख़तरात पैदा किये और दीन में नयी नयी बिद'अतें रिवाज कर दीं, इस्लाम के असल चेहरे को मस्ख़ किया। कुफ़्फ़ार और मुश्रिकीन मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाने की कोशिश करते हैं जबकि बिद'अती असल इस्लाम को नुक़सान पहुँचा रहे हैं, इस लिहाज़ से बिद'अती इस्लाम के लिए सब से बड़ा ख़तरा है। इसी ख़तरे का एहसास करके आज सादा मुसलमानों को सलीस (आसान) अंदाज़ में बिद'अत समझाने की कोशिश कर रहा हूँ ताकि उन पर बिद'अत की हक़ीक़त मुनकशिफ़ (वाज़ेह) रहे और शायद किसी बिद'अती को भी समझ आ जाए और इस्लाम को नुक़सान पहुँचाने से बाज़ आ जाए या कम अज़ कम ख़ुद को नुक़सान से बचाए।

बिद'आत की एक लम्बी फ़ेहरिस्त (सूची) है, उन सब का नाम गिनना मुश्किल है। कुछ बिद'आत बहुत मशहूर और मारूफ़ हैं जिनसे बिद'अतियों की असली पहचान होती है, उन्हें बताकर उनकी हक़ीक़त बताने की कोशिश करूँगा। आप देखते हैं कि कुछ मुसलमान नबी का

नाम आने पर अंगूठा चूमते हैं, अज़ान से पहले ख़ुद-साख़्ता दरूद पढ़ते हैं, फ़ातिहा ख़्वानी करते हैं, मीलाद मनाते हैं, मज़ारात पर उर्स और मेले लगाते हैं, जुलूस निकालते हैं, झंडियां लगाते हैं, क़ब्रों पर फूल और चादर चढ़ाते हैं, वहां अज़ान देते हैं, उनका तवाफ़ करते हैं, सजदा करते हैं और वहां नमाज़ और क़ुरआन पढ़ते हैं। इसी तरह ताज़िया मनाना, मुर्दों को पुकारना, ग़ैरुल्लाह का वसीला लगाना, ग़ैरुल्लाह की नज़र मानी करना, कुल, तीज्जा, सातवां, दसवां, इक्कीसवां, चहल्लुम, ग्यारहवीं मनाना, लिक्खी रोज़े, हज़ारी रोज़े, उम दाऊद की नमाज़, सलात अल-रग़ाइब, नमाज़ ग़ौसीया, ख़त्मे क़ादरीया, ज़फ़र सादिक़ के कुंडे, शब-ए-मेराज का जश्न, पीरों की बैअत, इमाम ज़ामिन और तावीज़ात अत्तारिया, नौहा ख़्वानी और सोग, बदशगूनी और नहूस्त और ख़ुद-साख़्ता औराद और वज़ाइफ (दरूद ग़ौसिया, दरूद ताज, दरूद तंजीना, दरूद लिक्खी वग़ैरह) उन बिदातियों के इमत्तियाज़ी अफ़'आल और अमल हैं। ये सब अमल और उन जैसे सैकड़ों अमल दीन के नाम पर बिद'अतियों की तरफ़ से ईजाद कर लिए गए हैं, इन्हीं को दीन समझा जाता है, इसी के गर्दान की ज़िंदगी घूमती है और यही सब कुछ करते करते बिद'अतियों की मौत आ जाती है।

मज़कूरा चंद बिद'आत के बाद अब आते हैं असल मुद्दे की तरफ़, वह यह है कि हमें कैसे पता चलेगा कि मज़कूरा सारे काम बिदअती हैं

और एक बिदअती को कैसे समझाएंगे कि इन कामों से दूर रहो, यह जहन्नम में ले जाने वाले हैं? इसलिए पहले हम बिदअत की सही तारीफ़ (परिभाषा) देखेंगे और तारीफ़ भी शर'ई शरिया यानी मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़ुबानी मालूम करेंगे। सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

مَن أَحْدَثَ في أَمْرِنَا هذا ما ليسَ فِيهِ، فَهو رَدٌّ (صحيح البخاري:2697،صحيح مسلم:1718،سنن أبي داود4606, سنن ابن ماجه:14,مشكوة المصابيح:140)

तर्जमा: जिसने हमारे दीन में अपनी तरफ़ से कोई ऐसा काम ईजाद किया जो दीन में नहीं है, तो वह रद्द है।

यही हदीस सहीह मुस्लिम में इस तरह मरवी है, सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

مَن عَمِلَ عَمَلًا ليسَ عليه أمْرُنا فَهو رَدٌّ(صحيح مسلم: 1718)

तर्जमा:"जो शख़्स ऐसा काम करे जिसके लिए हमारा हुक्म न हो (यानि दीन में ऐसा अमल निकाले) तो वह मर्दूद है।

इस हदीस के बारे में इमाम नववी रहिमहुल्लाह लिखते हैं: यह हदीस इस्लाम के क़वाइद (क़ायदों) में से एक अज़ीम क़वाइद है और यह

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के जामे अल-कलम में से है और यह बिदअत और नई ईजाद की तर्दीद में सरीह हदीस है। (शरह मुस्लिम लिल नववी (2/15 हदीस 1718))

बिदअतीयो की बिदअत हदीस-ए-रसूल की कसौटी पर:

हदीस-ए-रसूल के पूरे अल्फ़ाज़ पर नज़र रखते हुए इमाम नववी रहिमहुल्लाह के कलाम के एतिबार से ग़ौर करते हैं कि यह हदीस किस तरह बिदअत की सरीह तर्दीद करती है।

मन अहदसा (مَن أَحْدَثَ): जो अपनी ख़्वाहिश और मर्ज़ी से कोई काम ईजाद करे।

फ़ी अमरिना हज़ा (في أَمْرِنَا هذا): यहाँ अम्र से मुराद दीन है, यानी दीन में कोई नया काम अपनी तरफ़ से ईजाद करे।

मा लय्सा फ़ीहि (ما ليسَ فِيهِ): जो दीन में से नहीं हो। ब्रेलवी आलिम मुफ़्ती अहमद यारख़ान न'ईमी "ما ليسَ فِيهِ" की शरह में लिखते हैं जो क़ुरआन और हदीस के ख़िलाफ़ हो। (दावत इस्लामी की वेबसाइट: बिदअत की इक़्साम)

फ़हूवा रद्द (فَهو رَدّ): तो वह काम बिदअती के लिए मर्दूद और बातिल है।"

हदीस की शरह के साथ अब इन बिदअतो में से एक नमूना लेकर दीन की कसौटी पर परखते हैं। मिसाल के लिए, जब नबी का नाम आता है तो अंगूठों को आंखों से लगाकर चूमा जाता है और यह एतिबार रखा जाता है कि यह दीन का अमल है, ऐसा करना चाहिए, इससे सवाब मिलता है। जब दीन की किताब क़ुरआन और हदीस में इस अमल को खोजते हैं तो पता चलता है कि यह अमल न क़ुरआन में ज़िक्र है और न ही किसी हदीस में ज़िक्र है। इसका मतलब है कि किसी आदमी ने अपनी तरफ़ से इस अमल को दीन समझकर ईजाद कर लिया है। इसी को बिदअत कहते हैं जो अल्लाह और उसके रसूल की नज़र में मर्दूद है।

अब आइए बिदअतीयो के कुछ शक़ों का भी जायज़ा लेते हैं ताकि और बेहतर तरीक़े से बिदअत की हक़ीक़त को समझ सकें। मैं बिदअतीयो के तीन बड़े शुब्हात (शक़ों) और एक अहम मुग़ालते (महत्वपूर्ण भ्रम) का ज़िक्र करूंगा।

पहला शुब्हा (शक): जब हम बिदअतीयो को बताते हैं कि अंगूठा चूमना बिदअत है, मीलाद मनाना बिदअत है क्योंकि क़ुरआन और हदीस में इन बातों का कहीं पर हुक्म नहीं दिया गया है, तो आगे से बिदअती जवाब देता है कि रसूल के ज़माने में गाड़ी नहीं थी, बस नहीं थी, ट्रेन नहीं थी, जहाज़ नहीं था, तुम उन पर क्यों सवारी करते हो? क्या यह बिदअत नहीं है? तुम ख़ुद भी रसूल के ज़माने में नहीं थे, इसलिए तुम भी बिदअत हो।

जवाब: इस शुब्हा को जानने के लिए मुंदरिजा-बाला (उपरोक्त) हदीस-ए-रसूल पर फिर से नज़र डालें। इस हदीस की शरह में मैंने चार बातों का ख़ुलासा किया है। पहली बात तो यह है कि हर वह काम जो अपनी तरफ़ से ईजाद कर लिया जाए जैसा कि लफ़्ज़ "من عمل عملا" से बिलकुल वाज़ेह है। दूसरी बात यह है कि नए काम दीन में ईजाद किए जाएं यानी दुनियावी मामले में नहीं। तीसरी बात यह है कि वह नई ईजाद क़ुरआन या हदीस में से नहीं हो।

तो वह नया अमल (काम) बिदअत है जो कि मर्दूद है और यह चौथी बात है। बिदअती जब यह कहे कि रसूल के ज़माने में ट्रेन नहीं थी, तुम उस पर सवारी क्यों करते हो, क्या यह बिदअत नहीं है, तो हम उससे कहेंगे कि हमने कब कहा कि जो चीज़ रसूल के ज़माने में नहीं

थी, उसका इस्तेमाल बिदअत है, यह तो हमने कभी कहा ही नहीं, यह तो तुम कहते हो। हम तो बिदअत की वही तारीफ़ करते हैं जो रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सिखाई है, वह यह है कि जो कोई अपनी तरफ़ से दीन में कोई नया काम ईजाद कर ले जो क़ुरआन और हदीस में से नहीं है, तो वह काम मर्दूद है। अब ज़रा तुम ही बताओ कि क्या ट्रेन कोई काम या अमल है? यह तो एक सामान है। बिदअत का ताल्लुक़ सामान से नहीं है बल्कि अमल से है। दूसरी बात यह है कि क्या ट्रेन की ईजाद दीन के मामले में है या दुनियावी मामला है? ज़ाहिर सी बात है, एक कम अक़्ल भी कहेगा यह दुनियावी मामला है जबकि रसूल ने बिदअत की तारीफ़ में फ़रमाया है जो दीन के मामले में कोई नया काम ईजाद करे, वह अमल बिदअत है।

दूसरा शुब्हा: लोगों में एक शुब्हा (शक) यह भी आम है कि आप कहते हैं फुलाँ काम बिदअत है जबकि फुलाँ मौलवी कहता है यह काम दीन है, इसके करने से सवाब मिलेगा। तो हम किसकी बात सही मानें? आप भी मौलवी, वह भी मौलवी। हम किस मौलवी को दुरूस्त (सही) मानें?

जवाब: इस शुब्हा (शक) को दीन के अमल की रोशनी में मिसाल देकर समझाता हूँ। आप ज़रा ग़ौर करें, जब आप नमाज़ पढ़ते हैं तो सबसे पहले नमाज़ की नीयत करते हैं, फिर तकबीर कहकर हाथ बांधते हैं, क़ियाम करते हैं, फिर रुकू करते हैं, फिर सजदा करते हैं, इस तरह एक रकात होती है, फिर इसी तरह दूसरी रकात पढ़ते हैं। दो रकात वाली नमाज़ में क़ायदा करके सलाम फैरते हैं, मग़रिब की नमाज़ में दो रकात पर क़ायदा करके फिर तीसरी रकात के लिए उठते हैं, फिर तीसरी रकात पूरी करके दूसरा क़ायदा करके सलाम फैरते हैं। ज़ोहर, अस्र और इशा में चार-चार रकात पढ़ते हैं। नमाज़ को इस शक्ल में क्यों पढ़ते हैं? क्या इस लिए नहीं पढ़ते कि हमें रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इसी तरह नमाज़ की तालीम दी है। और बुख़ारी में आपका यह फ़रमान है: तुम लोग इसी तरह नमाज़ पढ़ो जैसे मुझे नमाज़ पढ़ते हुए देखते हो।

इसी तरह जब आप बैतुल्लाह का हज करते हैं तो यौम अल-तर्वियह (आठ ज़िलहिज्जा) से हज का काम शुरू करते हैं, इस दिन मिना जाते हैं, यौम-ए-अरफ़ा को अराफ़ात जाते हैं, इसी दिन सूरज ढलने के बाद मुज़दल्फ़ा आते हैं, यहाँ रात बिताते हैं। यौम अन-नहर को फ़ज्र के बाद जमरात पर जाते हैं और वहाँ तीन जमरात हैं लेकिन आज के

दिन केवल एक जमरा जो मक्का से जुड़ा है, सात कंकड़ मारते हैं। फिर क़ुर्बानी करते हैं, हल्क़ करवाते हैं और हरम शरीफ़ पहुँचकर तवाफ़ इफ़ाज़ा और सई करते हैं। इसके बाद वापस मिना आ जाते हैं, यहाँ अय्याम-ए-तशरीक़ बिताते हैं और तीनों दिन तीनों जमरात को सात-सात कंकड़ मारते हैं। आख़िर में तवाफ़-ए-विदा करके वतन वापस लौट आते हैं। आपसे सवाल है कि आप क्यों ऐसा करते हैं, क्या किसी पीर ने कहा ऐसा करो, किसी वली के कहने से ऐसा करते हैं? या आप ऐसा इस लिए करते हैं कि यह अल्लाह और उसके रसूल का हुक्म है? बेशक यह अल्लाह और उसके रसूल का हुक्म है और हम हज इस तरह इसलिए करते हैं कि रसूल अल्लाह ने इस तरह हज किया है और करने का हुक्म दिया है जैसे कि जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हुमा कहते हैं कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

يا أَيُّها النّاسُ خُذُوا عَنِّي مناسككم (صحيح الجامع:7882)

तर्जमा: ऐ लोगों! तुम मुझसे हज का तरीक़ा सीख लो।

मैंने सिर्फ़ दो चीज़ें नमाज़ और हज की मिसाल दी है जबकि पूरे दीन का यही हुक्म है जिसका ख़ुलासा यह है कि दीन के सभी मामलों में हम वही करेंगे जो अल्लाह और उसके रसूल ने हमें करने का हुक्म दिया है। अल्लाह तआला का फ़रमान है:

لَقَدْ كَانَ لَكُمْ فِي رَسُولِ اللَّهِ أُسْوَةٌ حَسَنَةٌ (الأحزاب:21)

तर्जमा: यक़ीनन तुम्हारे लिए रसूल अल्लाह में उम्दा नमूना (मौजूद) है।

एक दूसरी जगह इर्शाद-ए-रब्बानी है:"

أطيعوا الله وأطيعوا الرسول (النساء:59)

तर्जमा: अल्लाह की इताअत करो और रसूल अल्लाह ﷺ की इताअत करो।

इसलिए अगर कोई मौलवी आपको बिदअत की तालीम (शिक्षा) दे या वह बात बताए जिसकी दलील नहीं है, तो उस मौलवी की बात नहीं माननी चाहिए क्योंकि रसूल अल्लाह ने बिदअत से मना किया है और केवल उसी आलिम की बात माननी चाहिए जो क़ुरआन और हदीस के मुताबिक़ (अनुसार) बताए क्योंकि दीन क़ुरआन और हदीस का नाम है।

तीसरा शुब्हा (शक): अवाम की ओर (तरफ़) से एक तीसरा शुब्हा पैदा किया जाता है कि अज्र सवाब की नीयत से अगर कोई काम करता है तो इसमें हर्ज क्या है, नीयत तो अच्छी है।

जवाब: इसके जवाब में हम यह कहेंगे कि सिर्फ़ अच्छी नीयत होना काफ़ी नहीं है, बल्कि अमल भी सुन्नत के मुताबिक़ होना ज़रूरी है, वरना वही अमल बिदअत कहलाएगा जो अल्लाह और उसके रसूल के नज़दीक मर्दूद और बातिल है। इस शुब्हा को एक हदीस की रोशनी में देखते हैं कि बिदअत का इर्तिकाब करने में क्या हर्ज है?"

सहीह बुख़ारी (5063) मे अनस बिन मालिक से रिवायत है, उन्होंने ब्यान किया कि तीन हज़रात (अली-बिन-अबी-तालिब अब्दुल्लाह-बिन-अम्र -बिन-अल-आस और उस्मान-बिन-मज़ऊन (रज़ि०)) नबी करीम (सल्ल०) की पाक बीवियों के घरों की तरफ़ आपकी इबादत के मुताल्लिक़ पूछने आए जब उन्हें नबी करीम (सल्ल०) का अमल बताया गया तो जैसे उन्होंने उसे कम समझा और कहा कि हमारा नबी करीम (सल्ल०) से क्या मुक़ाबला! आपकी तो तमाम अगली पिछली ख़ताएँ माफ़ कर दी गई हैं। उन में से एक ने कहा कि आज से मैं हमेशा रात भर नमाज़ पढ़ा करूँगा। दूसरे ने कहा कि मैं हमेशा रोज़े से रहूँगा और कभी नाग़ा नहीं होने दूँगा। तीसरे ने कहा कि मैं औरतों से जुदाई इख़्तियार कर लूँ गा और कभी निकाह नहीं करूँगा। फिर नबी करीम (सल्ल०) तशरीफ़ लाए और उन से पूछा : क्या तुमने ही ये बातें कही हैं? सुन लो! अल्लाह तआला की क़सम!

अल्लाह से मैं तुम सबसे ज़्यादा डरने वाला हूँ। मैं तुममें सबसे ज़्यादा परहेज़गार हूँ लेकिन मैं अगर रोज़े रखता हूँ तो इफ़्तार भी करता हूँ। नमाज़ पढ़ता हूँ (रात में) और सोता भी हूँ और मैं औरतों से निकाह करता हूँ। فمن رغب عن سنتي فليس مني मेरे तरीक़े से जिसने बे तवज्जोही की वो मुझ में से नहीं है।

इस हदीस पर अच्छी तरह ग़ौर करें। एक तरफ़ तीन जलीलुल क़द्र सहाबी, दूसरी तरफ़ उनकी नीयत भी अच्छी है, फिर क्यों रसूल अल्लाह ने उन्हें अच्छी नीयत से मना किया? इन सब के अमल में हर्ज क्या है? हर्ज यही है कि इन सब का अमल सुन्नत के ख़िलाफ़ था, इसलिए आपने उनसे कहा कि जो सुन्नत के ख़िलाफ़ अमल करे वह हम में से नहीं है। आपने देख लिया कि अच्छी नीयत के बावजूद सुन्नत की ख़िलाफ़-वर्ज़ी की वजह से अमल मर्दूद (अस्वीकृत) हो रहा है, यही हाल हर क़िस्म (प्रकार) की बिदअत का है, यानी हर बिदअत मर्दूद (अस्वीकृत) है।

बिदअत-ए-हसना और बिदअत-ए-सय्यिआ की तक़सीम का मुग़ालता:

बिदअती लोग अवाम में एक मुग़ालता (भ्रांति) फैलाते हैं। वह भ्रांति यह है कि हर क़िस्म (प्रकार) की बिदअत से इस्लाम ने मना नहीं किया, बल्कि कुछ बिदअतें अच्छी होती हैं जिन पर अमल किया जा

सकता है, और कुछ बिदअतें बुरी होती हैं जिनसे बचना चाहिए। यानी इन बिदअतीयो ने अपनी बिदअतो की समर्थन में बिदअत की दो क़िस्में की हैं: एक बिदअत-ए-हसना (अच्छी) और दूसरी बिदअत-ए-सय्यिआ (बुरी)। इस तक़सीम (विभाजन) का उद्देश्य यह है कि उन्होंने दीन में जो भी बिदअतें और बेतुके बातें ईजाद की हैं, उन्हें जायज ठहराना ताकि आम लोगों को यह बताया जा सके कि हम जो बिदअत करते हैं वह बिदअत-ए-हसना है, इससे कोई गुनाह नहीं होता, बल्कि इसके करने से अज्र मिलता है और जिस बदअत पर गुनाह मिलता है, वह दूसरी बिदअत है, बिदअत-ए-सय्यिआ।

हक़ीक़त में बिदअत की यह तक़सीम उसी तरह से फ़र्ज़ी (काल्पनिक) और बनावटी है जैसे उनकी सारी बिदअतें फ़र्ज़ी (काल्पनिक) और बनावटी हैं। अगर कहीं बिदअत-ए-हसना का ज़िक्र मिलता है, तो वहां लुग़वी माना का एतिबार रखा गया है, जबकि शरई तौर पर रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हर क़िस्म की बिदअत को गुमराही और ज़लालत क़रार दिया है। चूंकि जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अनहु कहते हैं कि रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अपने ख़ुत्बे में अल्लाह की हम्द और सना बयान करने के बाद फ़रमाते:"

إن اصدق الحديث كتاب الله , واحسن الهدي هدي محمد , وشر الامور محدثاتها , وكل محدثة بدعة وكل بدعة ضلالة وكل ضلالة في النار (صحيح سنن النسائي:1579)

तर्जमा: सबसे सच्ची बात अल्लाह की किताब है, और सबसे बेहतर तरीक़ा मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का तरीक़ा है, और सबसे बुरा काम नए काम हैं, और हर नया काम बिदअत है और हर बिदअत गुमराही है, और हर गुमराही जहन्नम में ले जाने वाली है।

इस हदीस से साफ़ तौर पर मालूम होता है कि दीन में कोई भी नया काम बिदअत में गिना जाएगा, इसलिए यह कहना कि बिदअत अच्छी भी हो सकती है और बुरी भी, ग़लत है और हदीस-ए-रसूल के ख़िलाफ़ है।

आख़िर में बिदअतीयो का हुक्म भी जान लें। ये लोग दावा करते हैं कि हम ही सबसे ज़्यादा रसूल से मोहब्बत करते हैं, हम ही ज़्यादा आप पर दरूद पढ़ते हैं, इसलिए हम लोग ही आख़िरत में रसूल के साथ होंगे, हम लोगों को आपकी शफ़ाअत मिलेगी और जन्नत में दाख़िल होंगे। इसी प्रकार की बातों की तर्जुमानी करते हुए एक बरेलवी शायर जमीलुर्रहमान रिज़वी क़ादरी अपने नातिया कलाम के मुक़त्ता' में कहता है:

मैं वह सुन्नी हूँ जमील क़ादरी मरने के बाद - मेरा लाशा भी कहेगा अस्सलातु वस्सलाम।

इन बिदअतीयो के दावे की हक़ीक़त मज़कूरा बाला हदीस से देखिए कि एक तरफ़ रसूल अल्लाह की तालीम यह है कि सबसे सच्ची किताब क़ुरआन है और सबसे बेहतर तरीक़ा मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का है, लेकिन ये लोग नाम तो नबी का लेते हैं, मगर काम सब बिदअत वाला करते हैं। जो लोग क़ुरआन और तरीक़े मुहम्मद से हटकर दीन में बिदअते ईजाद करते हैं और उन पर अमल करते हैं, क्या वे लोग मुहिब्ब-ए-रसूल हो सकते हैं? हरगिज़ हरगिज़ बिदअती मुहिब्ब-ए-रसूल नहीं हो सकता, बल्कि बिदअती जो ख़ुद को सच्चा मुहिब्ब-ए-रसूल कहता है, उसका दावा खोखला और झूठा है। यही वजह है कि रसूल अल्लाह ने इन बिदअतीयो के बारे में आगाह कर दिया कि हर बिदअत गुमराही है और हर गुमराही जहन्नम में ले जाने वाली है। भला जो काम जहन्नम में ले जाने वाला हो, उस काम की बुनियाद पर रसूल अल्लाह की शफ़ात कैसे मिलेगी? इतना ही नहीं, अल्लाह तआला आख़िरत में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इन बिदअतीयो की बिदअतों के बारे में भी आगाह करेगा, और जब बिदअती

लोग हौज़-ए-कौसर के पास आएंगे तो भगा दिए जाएंगे। सही बुख़ारी में अनस रज़ियल्लाहु अनहु से मरवी है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

لَيَرِدَنَّ عَلَيَّ نَاسٌ مِن أَصْحابِي الحَوْضَ، حتَّى عَرَفْتُهُمُ، اخْتُلِجُوا دُونِي، فأقُولُ: أُصَحابِي! فيَقولُ: لا تَدْرِي ما أَحْدَثُوا بَعْدَكَ(صحيح البخاري:6582)

तर्जमा: मेरे कुछ साथी हौज़ पर मेरे सामने लाए जाएंगे और मैं उन्हें पहचान लूंगा, लेकिन फिर वे मेरे सामने से हटा दिए जाएंगे। मैं कहूंगा कि ये तो मेरे साथी हैं, लेकिन मुझसे कहा जाएगा कि आप नहीं जानते कि उन्होंने आपके बाद क्या नई चीज़ें ईजाद कर ली थीं।

बिदअतीयो का हाल कितना अजीब है?

जिंदगी भर या रसूल अल्लाह का नारा लगाते रहे, मीलाद मनाते रहे, जुलूस निकालते रहे, झंडे लगाते रहे, रसूल की इज़्ज़त में खड़े रहते रहे, खड़े होकर सामूहिक दरूद पढ़ते रहे और अंगूठा चूमते रहे, परिणाम यह हुआ कि आख़िरत में रसूल और हौज़-ए-कौसर से दूर कर दिए गए।

न तो खुदा मिला, न विसाल-ए-सनम, न इधर के हुए, न उधर के हुए।

जो लोग जाने-अनजाने किसी तरह से भटक गए हैं, उन सभी से दरख़्वास्त (अनुरोध) है कि अभी भी वक्त है, साबिक़ा गुनाहों से तौबा कर लें और सच्चे मुहिब्ब-ए-रसूल बनने और आख़िरत में आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हाथों से हौज़-ए-कौसर पीने के लिए अल्लाह की किताब क़ुरआन करीम और रसूल अल्लाह की प्यारी सुन्नत अहादीस तैबा के मुताबिक़ अमल करें। अल्लाह से दुआ है कि इस मज़मून को भटके हुए लोगों के लिए राह-ए-रास्त पर आने का ज़रिया बनाए।"

नोट-जो लोग इस मज़मून का वीडियो ब्यान सुनना चाहते हैं वह मुहर्रिर (तहरीर लिखने वाले) के यूट्यूब चैनल पर पांच फ़रवरी 2022 को अपलोड किया गया ब्यान ब-'उन्वान "बिदअत को पहचानिए" सुन सकते हैं।

================

[66]...बीमारी, सदक़ा और ख़ैरात

बीमारी उस ख़ालिक़ की तरफ़ से है जिसने पूरी काइनात बनाई, ज़िंदगी और मौत पैदा फ़रमाई। हम इंसान को एक बेहतरीन ढांचे में तमाम मख़लूक़ात से मुमताज़ अक़्ल और समझ देकर बनाया। उसी के हाथ में हमारी सायंस, जिस्म और जान और हर क़िस्म की हरकात और सुकूनात है। वह जब चाहता है, किसी को बीमार बना देता है और जब चाहता है, किसी बीमार को शिफ़ा दे देता है। इसलिए मोमिन का ईमान यह होना चाहिए कि सिर्फ़ वही अकेला बीमारी देने वाला और शिफ़ायाब करने वाला है। उसके सिवा दुनिया (संसार) में कोई ज़िंदगी और मौत, बीमारी और शिफ़ा पर ज़र्रा बराबर भी क़ुदरत नहीं रखता है। बीमारी आज़माइश के तौर पर और कभी गुनाहों के बाइस आती है। हम किस क़दर ख़ुश नसीब हैं कि ख़ुशी और ग़म दोनों में हमारे लिए ख़ैर के पहलू हैं बशर्ते यह कि ख़ुशी में और ग़मी में सब्र करें। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

عجبا لأمر المؤمن ان أمره كله خير و ليس ذاك لأحد إلا للمؤمن أن أصابته سراء شكر فكان خيرا له وان أصابته ضراء صبر فكان خيرا له.(صحيح المسلم: 2999)

तर्जुमा: मोमिन का मामला अजीब है, उसके लिए हर मामले में भलाई है और यह बात मोमिन के सिवा किसी और को मयस्सर नहीं। उसे ख़ुशी और ख़ुशहाली मिले तो शुक्र करता है और यह उसके लिए अच्छा होता है। और अगर उसे कोई नुक़सान पहुँचे तो (अल्लाह की रज़ा के लिए) सब्र करता है, यह भी उसके लिए भलाई होती है।

अल्लाह की जानिब से नेक कारों के लिए एक बड़ी ख़ुशी यह भी है कि बीमारी की वजह से उस नेकी के ना करने पर भी अज्र लिखा जाता है जो तंदुरुस्ती में किया करता था। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

إذا مرض العبد أو سافر كتب له مثل ما كان يعمل مقيما صحيحا.(صحيح البخاري:2996)

तर्जुमा: जब बंदा बीमार होता है या सफ़र करता है तो उसके लिए उन तमाम इबादतों का सवाब लिखा जाता है जिन्हें मुक़ीम या सेहत के वक्त किया करता था।

हम में जब कोई बीमार हो जाए तो मायूसी का शिकार न हो, अपने ख़ालिक़ और मालिक पर पूरा पूरा भरोसा रखे, बीमारी के लिए डॉक्टर

से इलाज कराए, अल्लाह से शिफ़ायाबी की दुआ भी करे और अपने गुनाहों से तौबा करे। कभी-कभी लोग बीमारी का इलाज कराते-कराते थक जाते हैं, बेशुमार रुपए-पैसे ख़र्च कर लेते हैं फिर भी बीमारी में फ़र्क़ नहीं होता। ऐसे में कुछ लोग बेहद मायूसी का शिकार हो जाते हैं, कुछ तो अल्लाह से दूर हो जाते हैं और ग़ैरुल्लाह से मदद माँगना शुरू कर देते हैं। याद रखें, ग़ैरुल्लाह से मदद माँगना या बीमारी और मुसीबत के वक्त ग़ैरुल्लाह को पुकारना शिर्क-ए-अकबर है। इस गुनाह की वजह से आदमी इस्लाम से निकल जाता है और इस हाल में मरने वाला हमेशा के लिए जहन्नम रसीद किया जाएगा।

बीमारी के वक्त एक मोमिन का शेवा (तरीक़ा) होना चाहिए कि अल्लाह पर पूरा भरोसा रखे, उसी से शिफ़ा की उम्मीद लगाए और तौबा और इस्तिग़फ़ार के साथ अपने रब से शिफ़ायाबी के लिए दुआ माँगे। बीमारी लंबी हो जाए फिर भी न घबराए, सब्र और ज़ब्त से काम ले और यक़ीन करे कि हमारा रब हमारे बारे में हम से बेहतर जानता है और हिकमत और मसलेहत से भरा फ़ैसला करता है।

इस मज़मून में बताना चाहता हूँ कि जिस तरह अल्लाह दुआ से और मस्नून अज़कार और शरई दम करने से रूहानी तौर पर शिफ़ा नसीब

करता है, इसी तरह सदक़ा और ख़ैरात भी बीमारी दूर करने का एक रूहानी इलाज है। ऐसे तो इस बारे में उलमा से मुख़्तलिफ़ क़िस्म के रूहानी तजुर्बात नक़ल हैं, मगर हमें रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़रमुदात में बहुत सारे दलाइल मिल जाते हैं जिनकी बुनियाद पर यह बात कह सकते हैं कि बीमारी में सदक़ा करने से अल्लाह शिफ़ा नसीब फ़रमाता है। इस बात को मिसाल से इस तरह समझें कि एक शख़्स ब्लड कैंसर की बीमारी में मुब्तिला है, उसने अपना इलाज काफ़ी कराया मगर बीमारी दूर नहीं हो रही है। ऐसे में मरीज़ को पहले तो सब्र जमील से काम लेना चाहिए, क्योंकि मुसीबत पर सब्र करना भलाई है। अल्लाह की तरफ़ सच्चे दिल से इनाबत (तौबा) करनी चाहिए और समाज में मौजूद फ़क़ीर और मिस्कीन और यतीम और नादार (मौहताज) पर अपना माल इस नियत से सदक़ा करना चाहिए कि अल्लाह इस नेकी के बदले बिमारी से शिफ़ा दे। इसकी दलील एक मशहूर हदीस है जिसे शेख अल्बानी रहिमहुल्लाह ने सहीह अल-जामे में हसन क़रार दिया है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

داؤو مرضاكم بالصدقة.(صحيح الجامع:3358)

तर्जुमा: सदक़ा के ज़रिए अपने मरीज़ों का इलाज करो।

दिल की सख़्ती एक बीमारी है। उसके रूहानी इलाज के लिए रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मिस्कीन को खाना खिलाने और यतीम के सर पर हाथ फेरने को कहा है। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

ان اردت ان يلين قلبك فاطعم المسكين وامسخ رأس اليتيم.(صحيح الجامع: 1410)

तर्जुमा: अगर तुम अपने दिल को नरम करना चाहते हो मिस्कीन को खाना खिलाओ और यतीम के सर पर हाथ फेरो।

अगर अल्लाह की नाराज़गी या गुनाह की वजह से बीमारी आई है तो सदक़ा करने से अल्लाह का गुस्सा ठंडा होता है और सदक़ा गुनाहों को भी मिटा देता है, इस तरह यह बीमारी भी दूर हो सकती है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

ان صدقة السر تطفئ غضب الرب تبارك وتعالى(صحيح الترغيب:888)

तर्जुमा: बेशक पोशीदा तौर पर सदक़ा करने से अल्लाह का गुस्सा ठंडा हो जाता है।

और एक दूसरी हदीस में है, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

والصدقة تطفئ الخطيئة كما يطفئ النار الماء.(صحيح ابن ماجه:3224)

तर्जुमा: और सदक़ा गुनाहों को उसी तरह ख़त्म कर देता है जैसे पानी आग बुझा देता है।

सदक़ा ज़ालिम से भी निजात दिलाता है। चुनांचे नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान का एक टुकड़ा है:

وامركم بالصدقة فإن مثل ذلك كمثل رجل أسره العدو فأوثقوا يده إلى عنقه وقدموه ليضربوا عنقه فقال انا افديه منكم بالقليل والكثير ففدى نفسه منهم.(صحيح الترمذي:2863)

तर्जुमा: और तुम्हें सदक़ा देने का हुक्म दिया गया है। उसकी मिसाल उस शख़्स की है जिसे दुश्मन ने क़ैदी बना लिया है और उसके हाथ उसके गर्दन से मिलाकर बाँध दिए हैं और उसे लेकर चले ताकि उसकी गर्दन उड़ा दें तो उस क़ैदी ने कहा कि मेरे पास थोड़ा-बहुत जो कुछ माल है मैं तुम्हें फ़िदया देकर अपने को छुड़ाना चाहता हूँ, फिर उन्होंने फ़िदया देकर अपने आप को आज़ाद करा लिया।

यह भी याद रहे कि अफ़ज़ल सदक़ा बीमारी से पहले देना है, क्यों कि मौत का कोई ठिकाना नहीं और मौत के बाद आदमी का माल उसके वारिसीन का हो जाता है। जैसा कि एक सहाबी ने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से पूछा कि सबसे अफ़ज़ल और बड़ा सदक़ा कौन सा है तो आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

ان تصدق وانت صحيح شحيح تخشى الفقر وتأمل البقاء ولا تمهل حتى إذا بلغت الحلقوم قلت لفلان كذا ولفلان كذا وقد كان لفلان.(صحيح مسلم: 1032)

तर्जुमा: तू सदक़ा दे और तू तंदुरुस्त हो और हरीस हो और ख़ौफ़ करता हो मोहताजी का और उम्मीद रखता हो अमीरी की, वह अफ़ज़ल है और यहाँ तक कि सदक़ा देने में देर न करे कि जब जान हलक़ में आ जाए तो कहने लगे कि यह फ़लाने का है, यह माल फ़लाने को दो और वह तो ख़ुद अब फ़लाने का हो चुका यानी तेरे मरते ही वारिस लोग ले लेंगे।

इस सिलसिले में एक सच्चा वाक़ि'आ बयान करना चाहता हूँ। ज़हबी रहिमहुल्लाह ने इब्न शफ़ीक़ से रिवायत किया है कि वह बयान करते हैं कि मैंने इब्नुल मुबारक से एक आदमी के बारे में सुना जो उनसे अपनी बीमारी के बारे में पूछते हैं जो 7 साल से घुटने में लगी थी और मुख़्तलिफ़ क़िस्म का इलाज करा चुके थे और मुख़्तलिफ़ क़िस्म

के डॉक्टर्स से पूछा मगर उन लोगों की कोई दवा काम ना आई तो उस से इब्नुल मुबारक ने कहा कि जाओ और एक ऐसी जगह कुआं खोद दो जहाँ लोग पानी के लिए मोहताज हों, मुझे उम्मीद है कि वहाँ से चश्मा निकलेगा तो तेरे क़दम से बहने वाला ख़ून रुक जाएगा। उस आदमी ने ऐसा ही किया और अल्लाह के हुक्म से वह ठीक हो गया।

(سير الأعلام النبلاء 8/408)

सदक़ा करते वक्त चंद बातें याद रखनी चाहिए:

(1) अच्छे माल का सदक़ा करें जिसे आप ख़ुद अपने लिए पसंद करते हो। अल्लाह का फ़रमान है:

لن تنالوا البر حتى تنفقوا مما تحبون وما تنفقوا من شيء فإن الله به عليم.(آل عمران:92)

तर्जुमा: जब तक तुम अपनी पसंदीदा चीज़ से अल्लाह की राह में ख़र्च न करोगे हरगिज़ भलाई न पाओगे और तुम जो ख़र्च करो उसे अल्लाह बख़ूबी जानता है।

(2) सदक़ा ऐलान करके नहीं बल्कि लोगों से छुपाकर करें यहाँ तक कि अपने घर वाले और दोस्त-अहबाब को भी ख़बर न हो। ऐसे लोग

जो छुपाकर सदक़ा करते हैं क़यामत में अल्लाह के अर्श के साए तले जगह पाएंगे। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

ورجل تصدق بصدقة فأخفاها حتى لا تعلم يمينه ما تنفق شماله.(صحيح مسلم : 1031)

तर्जुमा: और एक ऐसा आदमी जो उस तरह छुपाकर सदक़ा दे कि दाएँ हाथ को भी ख़बर न हो कि बाएँ हाथ ने क्या ख़र्च किया।

(3) आप नेक आदमी को सदक़ा दें। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

لا تصاحب إلا مؤمنا ولا يأكل طعامك إلا تقي.(صحيح ابي داؤد:4832)

तर्जुमा: मोमिन के सिवा किसी को साथी न बनाओ और तुम्हारा खाना सिवाए परहेज़गार के कोई और न खाए।

एक दूसरी जगह फ़रमान-ए-रसूल है:

نعم المال الصالح للمرء الصالح.(صحيح الأدب المفرد:229)

तर्जुमा: अच्छा माल अच्छे आदमी के लिए क्या ही बेहतर है।

(4) किसी को सदक़ा देने के बाद उस पर एहसान न जतलाएं। अल्लाह का फ़रमान है:

يا أيها الذين آمنوا لا تبطلوا صدقاتكم بالمن والأذى كالذي ينفق ماله رئاء الناس ولا يؤمن بالله واليوم الآخر.(البقرة:264)

तर्जुमा: ऐ ईमान वालों, अपने सदक़ात को एहसान जतला कर और तकलीफ़ पहुँचा कर बर्बाद न करो जिस तरह वह शख़्स जो अपना माल लोगों के दिखावे के लिए ख़र्च करे और न अल्लाह पर ईमान रखे और न क़यामत पर।

कुछ बातिल एतिक़ाद पर तंबीह:

(1) कुछ लोग ख़्याल करते हैं कि बीमारी जिन्नात या घर पर किसी मुज़ी साया की वजह से है लिहाज़ा जानवर ज़िब्ह करते हैं और उसका ख़ून बहाते हैं इस अक़ीदत के साथ कि उसकी वजह से जिन्नात या मुज़ी चीज़ का शर दूर हो जाएगा और तकलीफ़ दूर हो जाएगी। यह अक़ीदा बातिल है।

(2) इसी तरह कुछ लोग तक़द्दुम-बिल-हिफ़्ज़ (एहतियात) के तौर पर जिन्नात और मुज़ी चीज़ के शर से बचने के लिए घर में जानवर पालते हैं या जानवर इस मक़सद से ज़िब्ह करते हैं। यह अक़ीदा भी बातिल और मर्दूद है।

(3) ऐसे भी कुछ लोग पाए जाते हैं जो नए घर में दाख़िल होते वक्त घर और घर वालों की सलामती के तौर पर जानवर ज़िब्ह करते हैं

या जिन्नात के शर से नए घर की हिफ़ाज़त के लिए जानवर ज़िब्ह करते हैं। यह सब बेदीन और शिर्क के क़बील (क़िस्म/समूह) से है। हाँ, अगर कोई घर की नेमत मिलने पर ख़ुशी से लोगों को दावत देता है या जानवर ज़िब्ह करता है तो इसमें कोई हरज नहीं है। अल्लाह हमें ऐसी आज़माइश में न मुब्तिला करे जिसमें कामयाब न हो सके और हमें ऐसी कोई बीमारी न दे जो हमारे लिए फ़ितना का सबब बन जाए। आमीन या रब्बुल आलमीन।

=================

[67]...बैठ कर नमाज पढ़ने के अहकाम

अल्लाह ने दीन आसान बनाया है, यही वजह है कि अपने बंदों को दीन पर अमल करने के लिए उनकी ताक़त और कुदरत से ज़्यादा मुकल्लिफ़ (कष्ट देने वाला) नहीं बनाया है। अल्लाह का फ़रमान है:

لا يكلف الله نفساً إلا وسعها(البقرة: 286)

तर्जुमा: अल्लाह किसी जान को उसकी ताक़त से ज़्यादा मुकल्लिफ़ नहीं करता।

और अल्लाह का फ़रमान है:

فاتقوا الله ما استطعتم(التغابن: 16)

तर्जुमा: जिस क़दर ताक़त हो, उतना अल्लाह से डरो।

और अल्लाह का फ़रमान है:

يريد الله بكم اليسر ولا يريد بكم العسر(البقرة: 185)

तर्जुमा: अल्लाह का इरादा तुम्हारे साथ आसानी का है, सख़्ती (कठिनाई) का नहीं।

इंसानों के लिए जिस्मानी (शारीरिक) हालात हमेशा एक जैसे नहीं रहते, मौसम की तब्दीली, हालात के बदलाव और तक़दीर में लिखी बीमारियाँ और परेशानी के बाइस उठने-बैठने में फ़र्क़ पड़ता रहता है। नमाज़ चूंकि जिस्मानी (शारीरिक) इबादत है, लिहाज़ा उठने-बैठने में परेशानी के बाइस इसकी अदायगी में भी इंसानी ताक़त का एतिबार होगा और जिस कैफ़ियत (हालत) में नमाज़ की अदायगी का मुतहम्मिल (बर्दाश्त करने वाला) होगा, उसी हालत में नमाज़ अदा की जाएगी। इमरान बिन हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है, उन्होंने बयान किया कि मुझे बवासीर की बीमारी थी, इसलिए मैंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से नमाज़ के बारे में पूछताछ की तो आपने सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

صَلِّ قَائِمًا، فَإِنْ لَمْ تَسْتَطِعْ فَقَاعِدًا، فَإِنْ لَمْ تَسْتَطِعْ فَعَلَى جَنْبٍ.(صحيح البخاري:1117)

तर्जुमा: खड़े होकर नमाज़ पढ़ा करो, अगर उसकी भी ताक़त न हो तो बैठकर और अगर उसकी भी न हो तो पहलू के बल लेटकर पढ़ लो।

यह हदीस हमें बताती है कि जिसे नमाज़ में खड़े होने की ताक़त नहीं, वह बैठकर नमाज़ अदा करेगा और जो बैठकर नमाज़ नहीं पढ़ सकता, वह लेटे-लेटे पहलू पर नमाज़ अदा कर सकता है।

मैं यहाँ इस मज़मून में बैठकर नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा और इससे मुताल्लिक़ (संबंधित) कुछ अहकाम बयान करने वाला हूँ, इसलिए इसी मौक़े पर इख़्तिसार (संक्षिप्त) बात होगी और पहले दो अहम मसाइल फिर कुछ अहकाम होंगे।

(1) मसला: ज़मीन पर बैठकर नमाज़ पढ़ने की सूरत:

इस मसले में सबसे पहला सवाल यह होगा कि वह कौन सी हालत है जब नमाज़ी ज़मीन पर बैठकर नमाज़ अदा करेगा? तो इसका जवाब ऊपर गुज़री हदीस में मौजूद है कि जब कोई अपने पैरों पर खड़े होने से अक्षम और माज़ूर हो, तो वह ज़मीन पर बैठकर नमाज़ अदा करेगा। अब इस बाबत दूसरा सवाल यह है कि ज़मीन पर बैठने, रुकू करने और सजदा करने की हालत क्या होगी? ज़मीन पर बैठकर नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा यह है कि नमाज़ी हालते क़ियाम में सुरीन (चूतड़) के बल चार-ज़ानू होकर बैठे यानी अपनी दोनों पिंडलियों को रानों के साथ इकट्ठा करें। यही हालत रुकू और रुकू के बाद क़ियाम में होगी क्योंकि यह क़ियाम के माहौल में है। फिर ज़मीन पर सजदा करें और 2 सजदों में बैठते वक्त इफ़्तिराश (नमाज़ में बाएँ पैर को फैलाने और उस पर बैठने और दाहिने पैर को खड़ा रखने की प्रक्रिया) पर अमल करें, जिस तरह क़ा'दा-ए-ऊला (चार या तीन रकात वाली नमाज़ में

दूसरी रकात के बाद तशह्हुद में बैठना) में बैठते हैं, बल्कि क़ा'दा भी उसी तरह करें।

(2) अहम मसला: - कुर्सी पर बैठकर नमाज़ पढ़ने की सूरत:

कुर्सी पर नमाज़ पढ़ने की मुख़्तलिफ़ सूरतें मरीज़ की इस्तिता'अत (ताक़त) पर मुनहसिर (निर्भर) हैं। नमाज़ में क़ियाम, रुकू और सजदा ये तीनों अरकान हैं। कुर्सी पर नमाज़ पढ़ने की एक सूरत तो यह है कि अगर मरीज़ खड़े होने से माज़ूर है, मगर रुकू और सजदा कर सकता है, तो क़ियाम के वक्त कुर्सी पर बैठकर रुकू और सजदा को अपनी असल सूरत में अदा करें। दूसरी सूरत यह है कि मरीज़ क़ियाम की इस्तिता'अत रखता है मगर रुकू और सजदा की अदायगी असल सूरत में नहीं कर सकता, तो खड़े होकर क़ियाम करें, रुकू और सजदा के लिए कुर्सी का इस्तेमाल करें। रुकू में सर को थोड़ा झुकाएं और सजदा में सर को रुकू से ज़्यादा झुकाएं। इसमें मज़ीद तफ़ासील (अधिक विवरण) हैं जो मुफ़स्सल किताबों में देखी जा सकती हैं।

सफ़ में कुर्सी रखने की कैफ़ियत (स्थिति):

जब नमाज़ी शुरू से कुर्सी पर बैठकर नमाज़ पढ़े, उस वक्त कुर्सी को सफ़ की जगह इस तरह रखें कि इसकी पीठ नमाज़ियों के क़दमों के

बराबर हो, यानी कुर्सी का पिछला हिस्सा नमाज़ियों की एड़ी के बराबर हो। लेकिन अगर नमाज़ी क़ियाम असली सूरत में करे और रुकू और सजदा कुर्सी पर करे, तो कुर्सी को पीछे करना होगा ताकि सभी नमाज़ियों की तरह क़दम से क़दम मिलाकर खड़ा हो सके। यह सूरत कुर्सी की वजह से थोड़ा मुश्किल है, इसलिए नमाज़ पढ़ने के लिए ऐसी जगह खड़े होने का इंतिख़ाब (चुनाव) करें जहां पीछे नमाज़ी को तकलीफ़ न हो।

ज़मीन पर नमाज़ पढ़ना अफ़ज़ल है या कुर्सी पर?

एक सवाल यह होता है कि बीमार के लिए कुर्सी पर बैठकर नमाज़ पढ़ना अफ़ज़ल है या ज़मीन पर बैठकर? मेरे इल्म की हद तक इस मसले में अफ़ज़लियत का सवाल नहीं बल्कि

जवाज़ और अदम जवाज़ का मसला है। अगर कोई क़ियाम की ताक़त न रखे मगर असली शक्ल में रुकू और सजदा करने की ताक़त रखता हो, तो उसके लिए रुकू और सजदा के लिए कुर्सी का इस्तेमाल जाइज़ नहीं है और इसी तरह रुकू और सजदा में माज़ूर है मगर क़ियाम कर सकता है, तो क़ियाम के लिए कुर्सी का इस्तेमाल जाइज़ नहीं है। हमें मालूम है कि कुर्सी पर नमाज़ अपनी असली सूरत में नहीं है, बल्कि अदा की कमी की वजह से शरियत की जानिब (तरफ़) से सहूलत और

बदील है। सजदा जिसमें 7 आज़ा ज़मीन पर होना चाहिए, यह हालत नहीं पाई जाती। अगर कोई कुर्सी पर बैठकर नमाज़ अदा करे और ज़मीन पर सजदा की इस्तिता'अत के बावजूद इशारे से सजदा करे, तो यह अमल जाइज़ नहीं है।

इमाम बैठकर नमाज़ पढ़ाए तो मुक्तदी कैसे नमाज़ पढ़े?

बेहतर है कि बीमार इमामत न कराए ताकि उस बीमार को और उसके पीछे दीगर नमाज़ी को तकलीफ़ न हो, हालांकि उसकी इमामत में नमाज़ जाइज़ है। जब कोई इमाम किसी वजह से बैठकर नमाज़ पढ़ाए, तो उसके पीछे नमाज़ी भी बैठकर नमाज़ पढ़े क्योंकि मुक्तदी को इमाम की इत्तिबा का हुक्म दिया गया है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

وإذا صلى قاعدًا فصلوا قعودًا أجمعون(صحيح مسلم: 411)

तर्जुमा: और जब इमाम नमाज़ बैठकर पढ़ाए, तो तुम भी बैठकर पढ़ो।

कुछ उलमा मुक्तदी के लिए खड़े होकर नमाज़ पढ़ने के क़ाइल हैं, मगर क़वी मौक़िफ़ यही है कि बैठकर पढ़ना ही है जैसा कि फ़रमान-

ए-रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से ज़ाहिर होता है। हालांकि मुक्तदी ने खड़े होकर भी नमाज़ अदा कर ली तो उसकी नमाज़ सही होगी।

क़ुदरत रखते हुए नफ़िल बैठकर पढ़ना और उसका अज्र:

जिसे क़ुदरत है वह फ़र्ज़ नमाज़ बैठकर अदा नहीं कर सकता और अगर ऐसा करेगा तो उसकी नमाज़ नहीं होगी। लेकिन क़ुदरत रखने के बावजूद नफ़िल नमाज़ बैठकर अदा की जा सकती है और इस हालत में खड़े होने के मुक़ाबले आधा अज्र मिलेगा।

अनस रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं:

خرج فرأى أُناسًا يصلُّونَ قعودًا فقال صلاةُ القاعدِ علَى النِّصفِ من صلاةِ القائمِ (صحيح ابن ماجه:1022)

तर्जुमा: रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम घर से निकले और देखा कि कुछ लोग बैठकर नमाज़ अदा कर रहे हैं, तो फ़रमाया: बैठकर नमाज़ अदा करने वाले को क़ियाम करने वाले की तुलना में आधा अज्र मिलेगा।

इसलिए बंदों को चाहिए कि नफ़िल खड़े होकर अदा करें ताकि पूरा अज्र मिले।

बीमार अगर फ़र्ज़ नमाज़ बैठकर पढ़े तो क्या आधा अज्र मिलेगा?

बीमार अगर बैठकर नमाज़ पढ़े तो उसे पूरा अज्र मिलेगा क्योंकि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

إذا مرضَ العبدُ ، أو سافرَ كُتِبَ له مثلُ ما كان يعملُ مُقيمًا صحيحًا (صحيح البخاري:2996)

तर्जुमा: जब बंदा बीमार होता है या सफ़र करता है, तो उसके लिए पूरी इबादत का सवाब लिखा जाता है, जैसा कि वह इक़ामत या सेहत के वक्त करता था।

सजदा से मुताल्लिक़ (संबंधित) 2 सवालों के जवाब:

(1) सवाल: आजकल मसाजिद में बीमारों के लिए नमाज़ की अदायगी के लिए कुर्सियाँ रखी जाती हैं और उसके आगे तकिया रखा होता है। नमाज़ी जब सजदा करता है, तो वह उस तकिये पर सजदा कर लेता है। इस अमल की शरई हैसियत क्या है?

जवाब: शेख सालेह फ़ौज़ान ने ऐसी कुर्सी पर सजदा करना नाजाइज़ कहा है जिसमें सजदे के लिए आगे तकिया रखा हो। उनका इस्तिदलाल है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक बीमार को तकिये पर सजदा करते हुए देखा, तो उसे फेंक दिया। इसलिए कुर्सी पर नमाज़ पढ़ने वाले मरीज़ को चाहिए कि अगर ज़मीन पर सजदा करने की क़ुदरत रखता हो तो ज़मीन पर सजदा करे, वरना कुर्सी पर ही रुकू के मुक़ाबले थोड़ा ज़्यादा झुककर सजदा करे।

(2) सवाल: ऐसा गद्दा जो नरम, मुलायम और ऊंचा हो, उस पर नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं?

जवाब: गर्मी और सर्दी या धूल-मिट्टी से बचने के लिए क़ालीन, चटाई और हल्के गद्दों पर नमाज़ पढ़ना जाइज़ है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से चटाई पर नमाज़ पढ़ना और सहाबा किराम का अपने दामन पर सजदा करना सही बुख़ारी में ज़िक्र है। उम्मुल मोमिनीन मैमूना रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं:

كان النبيُّ صلى الله عليه وسلم يُصَلِّي على الخُمْرَةِ (صحيح البخاري: 381)

तर्जुमा: रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम खजूर की चटाई पर नमाज़ पढ़ते थे।

अनस रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं:

كنا نُصلي مع النبيِّ صلى الله عليه وسلم ، فيضعُ أحدُنا طَرَفَ الثوبِ ، من شدةِ الحرِّ ، في مكان السجودِ.(صحيح البخاري:385)

तर्जुमा: हम रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ नमाज़ पढ़ते, तो हम में से हर आदमी गर्मी से बचने के लिए अपने कपड़े के दामन पर सजदा करता।

ज़्यादा ऊंचे स्पंज के मोटे गद्दों से परहेज़ करें, यानी हल्के क़िस्म के गद्दे इस्तेमाल करें जिस पर सजदा करने से पेशानी को ज़मीन पर इस्तिक़रार (स्थिरता) हो।

एक अहम इंतिबाह:

आजकल मसाजिद में बड़ी तादाद में कुर्सियाँ रखी जाती हैं, लोगों को कुर्सी के मसाइल का इल्म कम होता है और महज़ मामूली परेशानी में भी देखा-देखी पूरा नमाज़ कुर्सी पर ही अदा कर लेते हैं। इसलिए इमाम मसाजिद को कुर्सी पर नमाज़ पढ़ने की कैफ़ियत और मसाइल से आगाह करें और इस सिलसिले में दूसरी सफ़ और दाईं और बाईं

तरफ़ नमाज़ियों को तकलीफ़ न हो, इसके लिए मुनासिब कुर्सी और मुनासिब जगह मुत'अय्यन करें।

[68].मदीना को यसरिब कहना या मुनव्वरा का इज़ाफ़ा करना

मदीना को यसरिब कहने की मनाही आई है जैसा कि बुख़ारी और मुस्लिम में है।

عن أَبِي هُرَيْرَةَ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قال قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ : (يَقُولُونَ يَثْرِبُ ! وَهِيَ الْمَدِينَةُ).

तर्जुमा: अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: "वे लोग इसे यसरिब कहते हैं, हालाँकि यह मदीना है।"

हाफ़िज़ इब्न हजर फ़तह अल-बारी में लिखते हैं:

नबी ﷺ का क़ौल: يَقُولُونَ يَثْرِب وَهِيَ الْمَدِينَة यानी कुछ मुनाफ़िक़ इसे यसरिब कहते थे। इसका मुनासिब नाम मदीना है। इसलिए कुछ उलमा ने इस हदीस से यह मअनी लिया है कि मदीना को यसरिब कहना मकरूह है। अब सवाल यह पैदा होता है कि क़ुरआन करीम में यसरिब

का लफ़्ज़ आया है तो इसका जवाब यह है कि यहाँ अल्लाह तआला ने मुनाफ़िक़ीन का क़ौल नक़ल फ़रमाया है:

و اذا قالت طائفة مهنم يا اهل يثرب لا مقام لكم (الاحزاب: 13)

तर्जुमा: "जब उनमें से एक गिरोह ने कहा 'ऐ यसरिब के रहने वालो! तुम्हारे लिए कोई जगह और ठिकाना नहीं।'"

जैसा कि इमाम नववी रहिमहुल्लाह लिखते हैं:

इमाम नववी रहिमहुल्लाह ने फ़रमाया कि ईसा बिन दिनार रहिमहुल्लाह से हिकायत की गई है कि जिसने भी मदीना तैबा (पाक) का नाम यसरिब रखा यानी इस नाम से पुकारा तो वह गुनाहगार होगा। जहाँ तक क़ुरआन मजीद में यसरिब नाम के ज़िक्र का ताल्लुक़ है तो मालूम होना चाहिए कि वह मुनाफ़िक़ीन के क़ौल की हिकायत है, जिनके दिलों में बीमारी है। (अल-मिरक़ात, शरह अल-मिश्कात, किताब अल-मनासिक, हदीस 2738, 5/622)

लफ़्ज़ यसरिब की कराहत के असबाब:

(1) यसरिब का लफ्ज़ फ़साद और मलामत से ख़बर देता है, मुनाफ़िक़ीन इसी तरफ़ इशारा करके यसरिब कहते, इसी लिए नबी (सल्लल्लाहु

अलैहि व सल्लम) ने इस नाम को नापसंद किया और इसका नाम मदीना रखा।

(2) इसमें मुनाफ़िक़ीन की शबाहत पाई जाती है, इस वजह से किसी लड़की का नाम भी यसरिब रखना मकरूह है।

यसरिब से मुतअल्लिक एक हदीस ज़ईफ़ है जिसमें नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाते हैं:

من سمى المدينة يثرب فليستغفر الله هي طابة هي طابة (رواه الامام احمد)

तर्जुमा: जो मदीना को यसरिब कहे उस पर तौबा वाजिब है। मदीना ताबा (धार्मिक दृष्टिकोण से पवित्र नगरों के विशेषतः मदीने के आगे लगाया जानेवाला शब्द) है मदीना ताबा है। (इस हदीस को अल्लामा अल्बानी ने ज़ईफ़ क़रार दिया है)।

लफ्ज़ मदीना के साथ मुनव्वरा का इज़ाफ़ा: शैख़ इब्न उसैमीन से सवाल किया गया कि मदीना मुनव्वरा कहने का क्या हुक्म है और इसकी क्या 'इल्लत है? तो उन्होंने जवाब दिया: मदीना मुनव्वरा यह नया नाम है जो सलफ़ के नज़दीक मअरूफ़ नहीं है, लेकिन जिन्होंने

इसका नाम रखा है उनका कहना है कि मदीना दीन इस्लाम से मुनव्वर हो गया इस लिए कि दीन इस्लाम मक़ामात को रौशन कर देता है। मुझे नहीं मालूम मगर यह भी एतिक़ाद हो सकता है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के वजूद से यह शहर रौशन हो गया। लेकिन बेहतर है कि हम मदीना मुनव्वरा के बजाय मदीना नबवी कहें। और यह भी कहना कोई ज़रूरी नहीं है, सिर्फ़ मदीना कहना ही काफ़ी है। इस लिए हम सलफ़ के इस तरह की इबारतें पाते हैं। मसलन "ذهب إلى المدينة" (वह मदीना गया) - "رجع من المدينة" (वह मदीना से लौटा) - "سكن المدينة" (वह मदीना में सुकूनत इख़्तियार किया)। और नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का भी फ़रमान है: "المدينة خير لهم" (यानी मदीना उनके लिए बेहतर है)। आपने न तो मदीना मुनव्वरा कहा और न ही मदीना नबवी। लेकिन अगर वस्फ़ लगाना ही चाहते हैं तो मदीना नबवी कहना मदीना मुनव्वरा से अफ़ज़ल है। इस लिए कि नबूवत से मदीना को मुतसिफ़ करना नूर से मुत्तसिफ़ करने से ज़्यादा ख़ास है। जब हम मदीना मुनव्वरा कहते हैं तो इस से तमाम इस्लामी मुल्क मुराद लिया जाएगा क्योंकि इस्लाम ने सारी जगहों को रौशन कर दिया, इस लिए एक ख़ास वस्फ़ नबवी से मदीना को मुत्तसिफ़ करना ज़रूरी है।

शैख़ के कलाम का मफ़हूम लिक़ा अल-बाब अल-मफ़्तूह (24/189)

=================

[69].मय्यत की तरफ़ से रमज़ान के छुटे हुए रोज़ो की क़ज़ा

मय्यत के रोज़े की चंद अक़्साम (मुख़्तलिफ़ क़िस्मे) हैं:

(1) ऐसा मय्यत जिसने क़सदन (जानबूझकर) रमज़ान का कोई रोज़ा ही नहीं रखा और वो न नमाज़ का पाबंद रहा और न ही रोज़ों का। ऐसे मरीज़ के छूटे हुए रोज़ों की कोई क़ज़ा और कोई फ़िदया नहीं है क्योंकि वो नमाज़ और रोज़ा का तारक है जिसका हुक्म काफ़िर का है।

(2) ऐसा मय्यत जो नमाज़ और रोज़ा का पाबंद हो (रोज़ा और नमाज़ के फ़र्ज़ होने का क़ाइल हो) मगर ग़फ़लत और सुस्ती की वजह से उसने रमज़ान के चंद रोज़े आमदन छोड़ा हो। सही क़ौल के मुताबिक़ उसके रोज़ों की क़ज़ा वारिसों के ज़िम्मा है।

(3) ऐसा मय्यत जो हमेशा वाला बीमार हो या बड़ी उम्र की वजह से रोज़ा न रख सकता हो तो हर रोज़े के बदले उसे ज़िंदगी में ही फ़िदया

देना चाहिए था मगर इस वक़्त किसी वजह से नहीं दे सका तो वफ़ात के बाद उसके वारिस मय्यत के माल में से जो रोज़े के बदले एक मिस्कीन को आधा सा अनाज सदक़ा करें।

(4) ऐसा मय्यत जिसे वफ़ात से पहले अचानक रमज़ान में बीमारी लाहिक़ हो गई और इसी बीमारी में मुबतला होकर वफ़ात पा गया उसे रोज़ा क़ज़ा करने की मोहलत नहीं मिली तो ऐसे मरीज़ की जानिब से वारिसीन पर न रोज़ा है न फ़िदया क्योंकि मय्यत मा'ज़ूर है। चाहे मय्यत से रमज़ान के पूरे रोज़े छूटे हों या आख़िर के चंद। यही हुक्म हैज़ और निफ़ास की हालत में छूटे रोज़े और बाद में उसकी मोहलत न पाने का भी है यानी क़ज़ा की मोहलत नसीब न हुई वफ़ात हो गई।

(5) ऐसा मय्यत जिसने रमज़ान में सफ़र या बीमारी या हैज़ और निफ़ास या हमल और रज़ाअत या किसी उज़्र की वजह से चंद रोज़े छोड़े हो और रमज़ान के बाद उसकी अदाएगी की मोहलत मिली मगर किसी वजह से क़ज़ा नहीं कर सका तो वफ़ात के बाद मय्यत के वारिसीन में से कोई एक या चाहे तो सभी मिलकर मय्यत के छूटे हुए रोज़े रख ले यह जाइज़ और मशरू है। ताहम यह बात भी इल्म

में रहे कि अगर फ़िदया भी दे दिया जाए तो किफ़ायत कर जाएगा। इसी तरह यह भी हुक्म है कि अगर मय्यत के रिश्तेदार में से कोई रोज़ा न रख सकता हो या रोज़ा रखने वाला कोई मौजूद न हो तो भी फ़िदया दे दिया जाएगा।

(6) मय्यत के ज़िम्मे कफ़्फ़ारात के रोज़े हों तो उसकी भी क़ज़ा की जाएगी।

(7) मय्यत के ज़िम्मे नज़र के रोज़े हों तो बिला इख़्तिलाफ़ उसकी क़ज़ा देनी होगी।

(8) मय्यत की तरफ़ से आम नफ़ली रोज़े नहीं रखे जाएंगे यानी मय्यत के इसाल-ए-सवाब के लिए नफ़ली रोज़ा रखना जाइज़ नहीं है।

(9) ऐसा आदमी जिसने रमज़ान के चंद दिन या उनमें रोज़ा रखा और फिर दरमियाँन में फ़ौत हो गया तो फ़ौत होने के वक्त से लेकर रमज़ान के आख़िर तक जो रोज़ा मय्यत नहीं रख सका उसकी क़ज़ा नहीं है क्योंकि मय्यत के रमज़ान के यह दिन पाए ही नहीं और रमज़ान का रोज़ा उसके लिए है जो रमज़ान पाए।

ऊपर आपने मय्यत के रोज़ों के 9 अक़्साम (प्रकार) का इल्म हासिल किया। उनमें से कुछ अक़्साम ऐसे हैं जिनमें मय्यत की तरफ़ से रोज़ों की क़ज़ा है और कुछ अक़्साम में रोज़ों की क़ज़ा नहीं है। अब यहाँ यह बात जान लें कि मय्यत की तरफ़ से रमज़ान के छूटे हुए रोज़ों की क़ज़ा से मुताल्लिक़ अहले इल्म के दरमियाँन इख़्तिलाफ़ वाक़े हुआ है। कुछ के नज़दीक मय्यत की तरफ़ से छूटे हुए रमज़ान के रोज़ों की क़ज़ा करनी है, जबकि कुछ अहले इल्म ने रोज़ों के बजाय फ़िदया देने की बात कही है।

दलाइल की रौशनी में मय्यत की तरफ़ से छूटे हुए फ़र्ज़ रोज़ों की क़ज़ा का जवाज़ और उसकी मशरुइयत साबित होती है

लिहाज़ा चंद दलाइल मुलाहिज़ा फरमाएं। अल्लाह का फ़रमान है:

فمن كان منكم مريضاً أو على سفر فعدة من ايام اخر .(سورة البقرة:)

तर्जुमा:- और जो कोई मरीज़ हो या मुसाफ़िर हो तो दूसरे दिनों में गिनती पूरी करे।

यह आयत बतलाती है जब आदमी को छूटे रोज़ों की मोहलत (अय्याम ए उख़र) मिले तो क़ज़ा करे और मोहलत मिलने के बावजूद क़ज़ा न कर सका तो मय्यत का वली क़ज़ा करे। उससे यह बात भी मालूम होती है कि जिस मय्यत को अपने रोज़ों की क़ज़ा की मोहलत न मिली, उसके छूटे हुए रोज़ों की क़ज़ा या फ़िदया वारिस पर नहीं है।

और नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है

من مات وعليه صيام صام عنه وليه.(صحيح البخاري:،صحيح مسلم:)

तर्जुमा: जो शख़्स इस हालत में फ़ौत हो के उसके ज़िम्मे रोज़े थे तो उसकी तरफ़ से उसका वली रोज़ा रखेगा। यहाँ वली से मुराद सरपरस्त वारिस यानी बाप, भाई, बेटा, चाचाज़ाद भाई या क़रीबी रिश्तेदार में से कोई भी है। यह हदीस अपने मानी और मफ़हूम में आम है जो नज़र और फ़र्ज़ रोज़ों को शामिल है। इसमें तो कोई इख़्तिलाफ़ नहीं है कि मय्यत के ज़िम्मे अगर नज़र के रोज़े हों तो उसका वारिस क़ज़ा करेगा, इख़्तिलाफ़ सिर्फ़ उसमें है के मय्यत के फ़र्ज़ रोज़े जो रमज़ान के हैं उसकी क़ज़ा करेगा कि नहीं?

मज़्कूरा हदीस की सेहत में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं है क्यूंकि बुख़ारी और मुस्लिम की है। इसी तरह सहीहैन की यह रिवायत भी दलील है।

جاء رجلٌ إلى النبِيّ صلَّى اللهُ عليهِ وسلَّمَ فقال : يا رسولَ اللهِ ! إنَّ أمی ماتت وعلیها صومُ شهرٍ . أفأقضيهِ عنها ؟ فقال "لو كان على أمكَ دَيْنٌ ، أكنتَ قاضيهِ عنها ؟" قال : نعم . قال "فدَيْنُ اللهِ أحقُّ أن يُقضى". (صحيح مسلم:1148)

तर्जुमा: एक आदमी नबी-ए-अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पास आकर कहता है: ऐ अल्लाह के रसूल! मेरी माँ फ़ौत हो गई हैं और उनके ज़िम्मे एक महीने के रोज़े हैं, क्या मैं उनकी तरफ़ से क़ज़ा करूँ? तो आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: अगर तुम्हारी माँ पर कर्ज़ होता तो क्या उसकी तरफ़ से अदा ना करता? उसने कहा हां। तो नबी ने कहा कि अल्लाह का क़र्ज़ क़ज़ा किए जाने का ज़्यादा हक़ रखता है।

शहर के लफ़्ज़ से ग़ालिब गुमान यही है कि साइल ने अपनी माँ के छूटे हुए रमज़ान के रोज़ों की बाबत ही सवाल किया हो क्योंकि रमज़ान का रोज़ा एक महीने का होता है जिसकी यहाँ सऊम-ए-शहर से ताबीर की गई है। इन अहादीस के अलावा मुस्नद-ए-अहमद की एक रिवायत में साफ़ लफ़्ज़ रमज़ान की क़ज़ा का ज़िक्र है।

أتتهُ امرأةٌ فقالت : إنَّ أمی ماتت وعليها صومُ شهرِ رمضانَ أفَأَقْضِيهِ عنها قال : أرأيتُكِ لو كان عليها دَيْنٌ كنتِ تقضيهِ قالت : نعم قال : فَدَيْنُ اللهِ عزَّ وجلَّ أَحَقُّ أن يُقْضَى (مسند أحمد)

तर्जुमा: एक औरत नबी-ए-अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुई और अर्ज़ की, मेरी अम्मी फ़ौत हो गई हैं। उन पर रमज़ान के एक महीने के रोज़े हैं, क्या मैं उनकी तरफ़ से क़ज़ा करूँ? आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: तुम्हारा क्या ख़्याल है, अगर उन पर कर्ज़ होता तो तुम अदा करती? तो उन्होंने कहा: हाँ। आप ने फ़रमाया: अल्लाह का कर्ज़ अदा करने का ज़्यादा हक़ रखता है।

कुछ मुहद्दिसीन ने रमज़ान का लफ़्ज़ नक़ल करने वालों की ख़ता क़रार दी है, मगर अल्लामा अहमद शाकिर ने मुस्नद-ए-अहमद की तहक़ीक़ में इस लफ़्ज़ को साबित माना है और उसकी सनद को सहीह क़रार दिया है। (देखिए अलमुस्नद: तहक़ीक़ अहमद शाकिर: 5/141)

यह हदीस सहीह मुस्लिम में भी वारिद है, मगर वहाँ रमज़ान का लफ़्ज़ नहीं है, सौम-ए-शहर आया है। और पहले बता चुका हूँ कि सौम-ए-शहर से बज़ाहिर रमज़ान ही मुराद है। इस हदीस से ज़ाहिरन मालूम होता है कि यह दो अलग-अलग वाक़ि'आ होगा एक मर्तबा औरत ने

रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से सवाल किया और वह दूसरी मर्तबा मर्द ने सवाल किया होगा। अगर रमज़ान का लफ़्ज़ साबित मान लिया जाए जैसे कि कुछ नुस्ख़ो में है, तो फिर इख़्तिलाफ़ की गुंजाइश ही नहीं रहती, मसला हल हो जाता है कि मय्यत के छूटे हुए रमज़ान के क़र्ज़ रोज़े क़ज़ा किए जाएंगे। मुतक़द्दिमीन (पहले ज़माने के लोग) और मुतअख़्ख़िरीन (बाद मे आने वाले) उलमा में से बहुत से ऐसे मौक़िफ़ के क़ाइल हैं, मगर बाज़ आसार से मालूम होता है कि बाज़ सहाबा मय्यत की तरफ़ से रमज़ान के रोज़े की क़ज़ा के क़ाइल न थे, मगर फ़िदया देने के क़ाइल थे। नीचे उन दलाइल का जवाब दिया जा रहा है जिनसे इस्तिदलाल करते हुए मय्यत की तरफ़ से क़र्ज़ रोज़े की क़ज़ा का इंकार किया जाता है।

मानि'इय्यत के चंद दलाईल और उनके जवाबात:

(1) दलील और उसका जवाब:

من مات و عليه صيام صام عنه وليه.

वाली रिवायत नज़र से मुताल्लिक़ है जैसा कि इस रिवायत की राविया आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से दूसरी हदीस में रमज़ान के रोज़ों की क़ज़ा की नफ़ी है। वह असर इस तरह से है:

عن عَمرةَ: أنَّ أمَّها ماتَت وعليها مِن رمضانَ فقالَتْ لعائشةَ: أقضيهِ عنها؟ قالَت: لا، بَل تصدَّق عنها مَكانَ كلِّ يومٍ نصفَ صاعٍ على كلِّ مسكينٍ.

तर्जुमा: अम्रु से रिवायत है कि उनकी माँ फ़ौत हो गई और उस पर रमज़ान के रोज़े बाक़ी थे। उसने आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से पूछा, क्या मैं अपनी माँ की तरफ़ से उनकी क़ज़ा अदा करूं? आप ने फ़रमाया: नहीं, बल्कि हर रोज़े के बदले किसी मिस्कीन पर एक सा' गेहूँ सदक़ा कर।

जवाब:

अव्वलन "من مات" वाली रिवायत नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है जो कि आम है और इसमें मय्यत के छूटे हुए रोज़ों के मुताल्लिक़ क़ायदा बयान किया जा रहा है। और दूसरी रिवायत फ़रमान-ए-रसूल नहीं है बल्कि असर है। असर यह हदीस को तरजीह दी जाएगी और इस हैसियत से भी तरजीह दी जाएगी कि यह एक सहाबिया की समझ है जो फ़रमान-ए-रसूल के नीचे है। साथ ही असर के मुताल्लिक़ शैख़ अल्बानी ने लिखा है कि उसकी सनद को तरकमानी ने सहीह मगर बैहक़ी और अस्क़लानी ने ज़ईफ़ कहा है और उसकी कोई दूसरी सनद नहीं है। (अहकामुल जनाइज़: 215)

दूसरी दलील और उसका जवाब: हदीस में है कि मय्यत की तरफ़ से कोई नमाज़ न पढ़े और न ही रोज़ा रखे।

لا يصوم أحد عن أحد ولا يصلى أحد عن أحد. (مشكوة)

तर्जुमा: कोई किसी की तरफ़ से न रोज़ा रखे और न कोई किसी की तरफ़ से नमाज़ पढ़े।

जवाब: पहली बात यह है कि यह रिवायत मुनक़ते है जैसा कि शैख़ अल्बानी ने कहा है। (तख़रीज मिश्कातुल मसाबिह: 1977) दूसरी बात यह है कि कुछ मुहद्दिसीन ने मौक़ूफ़न सहीह कहा है जैसा कि मुबारक पुरी रहिमहुल्लाह तो उसके दो जवाब होंगे। पहला जवाब यह होगा कि यह ज़िंदा आदमी के

मुताल्लिक़ है। कोई ज़िंदा आदमी किसी ज़िंदा आदमी की तरफ़ से न रोज़ा रखे और न ही नमाज़ पढ़े। दूसरा जवाब यह होगा कि कोई ज़िंदा आदमी मय्यत की तरफ़ से नमाज़ न पढ़े और नफ़िल रोज़ा न रखे।

तीसरी दलील और उसका जवाब: इब्न-ए-उमर की राय यह है कि मय्यत की तरफ़ से रमज़ान के रोज़ों की क़ज़ा नहीं है।

عَنْ ابْنِ عُمَرَ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ مَنْ مَاتَ وَعَلَيْهِ صِيَامُ شَهْرٍ فَلْيُطْعَمْ عَنْهُ مَكَانَ كُلِّ يَوْمٍ مِسْكِينٌ(ترمذی: 6441،ابن ماجہ:1757)

तर्जुमा: अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: जो शख़्स इस हाल में फ़ौत हो जाए कि उसके ज़िम्मे और रमज़ान के रोज़े हों तो उसकी तरफ़ से हर दिन (के रोज़े) की जगह एक मिस्कीन को खाना खिलाया जाए।

जवाब: यह रिवायत ज़ईफ़ है, इस से इस्तिदलाल नहीं किया जाएगा। देखें (ज़ईफ़ इब्ने माजा: 347, तख़्रीज मिश्कातुल मसाबिह: 1976, ज़ईफ़ुल जामे: 5853, ज़ईफ़ तिर्मिज़ी: 718)

यहां एक अहम नुक्ता समझ लें कि इस हदीस को इब्ने माजा ने "बाब: मन मात वा अलैहि सियामुन रमज़ान वस फरता फिही" (बाब: जिस शख़्स के ज़िम्मे कोताही की वजह से रमज़ान के रोज़े बाक़ी हों और वह क़ज़ा किए बग़ैर फ़ौत हो जाए) के तहत ज़िक्र किया है, जबकि इस रिवायत में रमज़ान का लफ़्ज़ नहीं

है, सियाम शहर का लफ़्ज़ है। इससे यह बात मालूम होती है कि ऊपर ज़िक्र कर्दा मुस्लिम शरीफ़ के अल्फाज़ 'सौम-ए-शहर' से मुराद रमज़ान के रोज़े ही हैं जिनकी क़ज़ा का हुक्म दिया गया है और यह हुक्म-ए-नबवी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) है। इस हुक्म के सामने किसी की फ़हम या क़ियास पर अमल नहीं किया जाएगा।

(4) दलील और उसका जवाब: इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की राए यह है कि मय्यत की तरफ़ से रमज़ान का रोज़ा क़ज़ा नहीं किया जाएगा।

عَنِ ابْنِ عَبَّاسٍ، قَالَ: إِذَا مَرِضَ الرَّجُلُ فِي رَمَضَانَ، ثُمَّ مَاتَ وَلَمْ يَصُمْ، أُطْعِمَ عَنْهُ، وَلَمْ يَكُنْ عَلَيْهِ قَضَاءٌ، وَإِنْ كَانَ عَلَيْهِ نَذْرٌ، قَضَى عَنْهُ وَلِيُّهُ. (ابوداؤد:2401)

तर्जुमा: इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु का क़ौल है कि जब कोई शख़्स रमज़ान में बीमार हो और फिर फ़ौत हो गया और रोज़े न रख सका तो उसकी तरफ़ से खाना खिला दिया जाए, उस पर क़ज़ा नहीं है। अगर उसने नज़र मानी थी तो उसकी वली क़ज़ा दे।

जवाब: इस हदीस को शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने सहीह अबू दाऊद में शामिल किया है। यह भी असर है और एक सहाबी की अपनी

फ़हम से ज़ाहिर सी बात है कि फ़रमान-ए-रसूल के होते हुए किसी क़ौल की तरफ़ इल्तिफ़ात नहीं किया जाएगा।

अगर मसला यह है कि कोई रमज़ान में बीमार हो गया और इस बीमारी में वफ़ात हो गई तो उसकी क़ज़ा नहीं है, न ही कफ़्फ़ारा है जैसा कि ऊपर बयान कर दिया गया है। उस असर में भी इस बात का ज़िक्र है। रह गई फ़िदया देने की बात तो यह मय्यत की तरफ़ से सदक़ा शुमार होगा, जो अलग-अलग दलाइल से साबित है। इनके अलावा मज़ीद कुछ और दलाइल पेश किए जाते हैं मगर इनसे इस्तिदलाल कमज़ोर होने और ख़ौफ़-ए-तिवालत की वजह से सिर्फ़ नज़र किया जाएगा।

ख़ुलासा कलाम और राजेह क़ौल यह है कि मय्यत की तरफ़ से छूटे हुए रमज़ान के फ़र्ज़ रोज़े क़ज़ा किए जाएंगे। यह मसला मंसूस (तहक़ीक़ किया गया) और जाइज़ और मशरू है। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसे मय्यत का क़र्ज़ क़रार दिया है और क़र्ज़ की अदा इसी शकल में अदा करना उचित है जिस शकल का क़र्ज़ है। यानी मय्यत के ज़िम्मे रोज़े का क़र्ज़ बाक़ी है तो उसके वारिसीन रोज़े की क़ज़ा देकर उस क़र्ज़ को उतारें। साथ ही यह बात

भी बढ़ाता हूं कि अगर मय्यत के वारिसीन में से कोई रोज़ा न रख सके या न रखना चाहे या रोज़ा रखने वाला कोई मौजूद ही न हो तो फ़िदया अदा कर दिया जाएगा। आख़िरी बात यह जान लें कि ऐसी कोई मरफ़ू हदीस नहीं है जिसमें कहा गया हो कि रमज़ान के रोज़ों की क़ज़ा नहीं है। अलबत्ता सही मरफ़ू अहादीस से यह साबित होता है कि मय्यत के छूटे हुए रमज़ान के फ़र्ज़ रोज़ों की क़ज़ा है। इस मसले के साथ सबसे ऊपर बयान किए गए मय्यत के रोज़ों के अक़्साम का भी ध्यान रहे।

=================

[70].मस्जिद के लाउडस्पीकर से मय्यत का ऐलान करना

मस्जिद के लाउडस्पीकर से मय्यत की ख़बर देने से मुताल्लिक़ आवाम (जनता) में तरद्दुद (संशय) पाया जाता है। इस संशय को दूर करने की ग़रज़ से मैंने एक मामूली सी कोशिश की है, अल्लाह मुझे इस मामले में सही बात की तरफ़ रहनुमाई फ़रमाए। अल्लाहुम्मा आमीन।

हदीसों से एक तरफ़ यह मालूम होता है कि मय्यत की न'ई (ख़बर देना) मम्नू (मना) है, तो दूसरी तरफ़ रसूल अल्लाह ﷺ से मय्यत की न'ई (ख़बर देना) साबित है। इसलिए इस क़िस्म की दोनों हदीसों पर नज़र डालते हैं।

हुज़ैफ़ा-बिन-यमान से रिवायत है कि उन्होंने कहा :

إذا مِتُّ فلا تؤذِنوا بي أحدًا إنِّي أخافُ أن يَكونَ نعيًا إنِّي سمعتُ رسولَ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ عليْهِ وسلَّمَ ينْهى عنِ النَّعيِ (صحيح الترمذي:986)

तर्जमा: जब मैं मर जाऊँ तो तुम मेरे मरने का ऐलान मत करना। मुझे डर है कि ये बात (न'ई) होगी। क्योंकि मैं ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को (न'ई) से मना फ़रमाते सुना है।

यह एक तरफ़ की हदीस है और दूसरी तरफ़ की हदीस, अरबी मतन के साथ ब-नज़र ग़ाइर मुलाहिज़ा फ़रमाएं,

हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं:

نَعَى لنا رَسولُ اللَّهِ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ النَّجاشِيَّ صاحِبَ الحَبَشَةِ، يَومَ الذي ماتَ فِيهِ(صحيح البخاري:1327)

तर्जमा: नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हबशा के नजाशी की वफ़ात की ख़बर दी, उसी दिन जिस दिन उनका इंतिक़ाल हुआ था।

इसी तरह अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं:

أنَّ النبيَّ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ، نَعَى زَيْدًا، وجَعْفَرًا، وابْنَ رَوَاحَةَ لِلنَّاسِ، قَبْلَ أنْ يَأْتِيَهُمْ خَبَرُهُمْ(صحيح البخاري:3757)

तर्जमा: नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने किसी इत्तला के पहुँचने से पहले ज़ैद, जाफ़र और इब्न रवाहा रज़ियल्लाहु अन्हुम की शहादत की ख़बर सहाबा को सुना दी थी।

बल्कि सहीह अल-बुख़ारी (458) और सहीह मुस्लिम (956) में मज़ीद है कि मस्जिद-ए-नबवी में झाड़ू देने वाली औरत की वफ़ात पर आपको उसकी वफ़ात की ख़बर न दी गई। बाद में आपको मालूम हुआ तो आपने फ़रमाया: "अफला कुन्तुम आज़न्तुमूनी बिह" यानी तुम लोगों ने मुझे क्यों न (उसकी वफ़ात की) ख़बर दी?

आपने दोनों क़िस्मों की हदीसें देख लीं, अब उनकी हक़ीक़त पर ग़ौर फ़रमाएं। यहां इन दोनों में एक लफ्ज़ 'नई' वारिद है जिसका मानी मौत की ख़बर देना होता है। एक जगह यह माना के क़बील से है और दूसरी जगह जवाज़ के क़बील से। यहीं से यह नुक्ता समझ में आ रहा है कि न'ई की मुतअद्दिद इक़साम हैं, इनमें से बाज़ न'ई माना है और बाज़ न'ई जाइज़ है।

ममनूअ न'ई वह है जो जाहिलिय्यत का तरीक़ा था कि ज़माना-ए-जाहिलिय्यत में जब कोई मर जाता तो एक आदमी किसी जानवर पर सवार होकर गली-कूचों में घूम-घूम कर और चिल्ला-चिल्ला कर उसकी मौत का ऐलान और तशहीर करता, नौहा ख़्वानी करता, मय्यत की ख़ूबियाँ और उसके फज़ाइल व मनाक़िब ज़िक्र करता। जायज़ न'ई फ़ौतगी का ऐलान करना है ताकि लोग जनाज़े में शरीक हो सकें।

लिहाज़ा जिस ऐलान में मय्यत की तशहीर करना, मय्यत की बुलंद आवाज़ से चिल्ला-चिल्ला कर गली-कूचों में घूम कर ख़बर देना, नौहा ख़्वानी करना, मय्यत की ख़ूबियाँ और मफ़ाख़िर व मनाक़िब बयान करना शामिल हो, दरअसल वह ऐलान ममनू है। अलबत्ता जिस ऐलान से मक़सद सिर्फ़ मय्यत के जनाज़े की ख़बर देना हो, चाहे लाउडस्पीकर से ही क्यों न हो, उस ऐलान में कोई हर्ज नहीं है।

रहा मसला मस्जिद के लाउडस्पीकर से ऐलान करने का, तो इसमें भी कोई माने (रुकावट) चीज़ नजर नहीं आती है जब मक़सद मय्यत के जनाज़े और उसकी तजहीज़ व तकफीन की ख़बर देना हो। मस्जिद में ममनू चीज़ों के ताल्लुक़ से इस्लाम ने हमें रहनुमाई कर दी है कि वहां तिजारती और दुनियावी बातें करना, शोर-गुल मचाना, ख़रीद-फरोख़्त करना, गुमशुदा चीज़ों का ऐलान करना, बुलंद आवाज़ से फुज़ूल बातें करना, बिला-मक़सद शायरी करना, मस्जिद में दौड़कर आना, मुसल्ली को तकलीफ़ देना, लहसुन-प्याज खाकर आना, जुनुबी और हाइज़ा का ठहरना और मस्जिद को गुज़र-गाह वग़ैरह बनाना ममनू है। गोया मस्जिद में मय्यत के ऐलान की मुमान'अत वारिद नहीं है, इस वजह से मस्जिद में मय्यत का ऐलान करना या मस्जिद के लाउडस्पीकर से मय्यत का ऐलान करना जायज़ है।

यहां मज़ीद एक बात की वज़ाहत हो जाए कि मस्जिद में बिना ज़रूरत आवाज़ बुलंद करना भी मना है और मय्यत की ख़बर के लिए लाउडस्पीकर का इस्तेमाल ज़रूरत के तहत है, इस वजह से इस काम में कोई हर्ज नहीं है। शैख़ इब्न उसैमीन रहिमहुल्लाह ने अच्छे आदमी की मौत की ख़बर मस्जिद में देना जायज़ कहा है और आम आदमी के ऐलान से रोका है और शैख़ सालेह फौज़ान ने भी मस्जिद में मय्यत का ऐलान करने को जायज़ कहा है।

इस्लाम ने मय्यत के लिए या मौत की ख़बर सुनने पर दुआ करने, मय्यत के वारिसों की ताज़ियत करने, मय्यत को जल्दी दफ़न करने, जनाज़े के पीछे चलने और दफ़न के बाद इस्तिक़ामत की दुआ करने का हुक्म और उसकी तरग़ीब दी है। ये सारी बातें इस पर मुनहसिर हैं कि जब किसी की वफ़ात हो जाए तो उसकी ख़बर लोगों को दी जाए वरना बस्ती वालों को ख़बर कैसे होगी और कैसे उसके हक़ में इस्तिग़फ़ार और तद्फ़ीन का अमल अंजाम पाएगा? अहादीस से ये भी मालूम होता है कि जनाज़े में मुवह्हिदीन की कसरत मय्यत के हक़ में मुफ़ीद है। ये कसरत उसी वक़्त होगी जब लोगों को वफ़ात की ख़बर दी जाएगी। साथ ही ये भी एक हक़ीक़त है कि आजकल हर जगह आबादी घनी होती है, हर कोई अपने-अपने काम में मसरूफ़ है,

एक दूसरे तक बात पहुंचाने का ज़रिया जदीद आलात ही हैं तो फिर ऐसे हालात में मौत की ख़बर देने के लिए माइक्रोफ़ोन, मोबाइल और लाउडस्पीकर का इस्तेमाल करने में हरज नहीं है।

एक इश्काल का जवाब: कुछ अहल-ए-इल्म ने लाउडस्पीकर से मय्यत का ऐलान करने से मना किया है। इसकी वजह ये बताई जाती है कि जाहिलिय्यत की न'ई में एक सिफ़त बुलंद आवाज़ से मौत की ख़बर देना था। इसका जवाब ये है कि जाहिलिय्यत की न'ई में सिर्फ़ एक यही सिफ़त नहीं पाई जाती थी, न'ई की शरह करने वालों ने मुतअद्‌दिद सिफ़ात की तरफ़ इशारा किया है जिसका मैंने ऊपर बयान किया है। अगर मय्यत की ख़बर देने में सिर्फ़ एक सिफ़त यानी बुलंद आवाज़ का इस्तेमाल महज़ इस वजह से किया जाए ताकि सारे बस्ती वालों को मौत की ख़बर हो जाए, मय्यत को दुआ दें और लोग जनाज़े में शरीक हों तो इसमें बिल्कुल कोई क़बाहत नहीं है। मज़ीद-बर-आँ (इसके अलावा) जाहिलिय्यत की बुलंद आवाज़ और यहाँ लाउडस्पीकर की बुलंद आवाज़ में हद दरजा फ़र्क़ है। एक बुलंद आवाज़ का मक़सद मय्यत की तशहीर और मनाक़िब बयान करना जबकि दूसरी बुलंद आवाज़ का मक़सद तमाम बस्ती वालों तक महज़ मौत की ख़बर देना है ताकि वो जनाज़े में शरीक हो सकें। ऊपर एक हदीस गुज़री है

जिसमें मज़कूर है कि नबी ﷺ ने ज़ैद, जाफ़र और इब्न रवाहा की मौत की ख़बर लोगों को लाश आने से पहले ही दे दी थी ताकि लोगों को उनकी मौत की ख़बर हो जाए और उनके हक़ में दुआ-ए-ख़ैर करें। वहाँ जनाज़े की ख़बर देना मक़सद नहीं था बल्कि ख़ालिस मौत की ख़बर देना था। जब मुसलमानों को ख़ालिस मौत की ख़बर देना जाइज़ है तो जनाज़ा और तद्फ़ीनन की ख़बर देना बदर्जा औला जाइज़ है।

मय्यत के ऐलान का एक दूसरा ऑप्शन (विकल्प): आजकल आमतौर पर लोग सोशल मीडिया से जुड़े हुए हैं, इसलिए इस आवामी (सार्वजनिक) मीडिया से फायदा उठाते हुए अगर मस्जिद की कमेटी वाले मोबाइल पर इस काम के लिए एक मख़सूस (विशेष) व्हाट्सएप ग्रुप बना लें जिसमें वफ़ात और उससे मुताल्लिक़ ख़बरें नश्र (प्रसारित) कर सकें, तो आवाज़ बुलंद करने से जो न'ई का शक पैदा होता है वह ख़त्म हो जाएगा। और एक बड़ा फ़ायदा यह भी होगा कि इस ग्रुप में पास-पड़ोस के ज़िम्मेदारों को शामिल करके उन लोगों को भी बहुत ख़ामोशी से ख़बर की जा सकती है। सऊदी अरब में मस्जिदों के ट्रस्टी ऐसे ही करते हैं।

==================

[71].मस्जिदआइशा और उम्रा का एहराम-ए-

मस्जिद-ए-आइशा मक्का मुकर्रमा की एक मा'रूफ़ (मशहूर) मस्जिद है जहाँ से हरम मक्की में रहने वाले एहराम बांध कर उम्रा करते हैं। इस मस्जिद से एहराम बांधने के बारे में लोगों में काफ़ी बेचैनी पाई जाती है हत्ता कि बहुत सारे उलमा भी अलग अलग बातें करते हैं। इस तहरीर में उसी मसले की वज़ाहत पायेंगे।

हुदूद-हरम मकी: मस्जिद हराम के चारों ओर कुछ मसाफ़त की हुदूद को हुदूदहरम कहा जाता है और जितना अज्र मस्जिद हराम में नमाज़ पढ़ने का है उतना ही अज्र हुदूद हरम में कहीं भी नमाज़ पढ़ने का है। नबी ﷺ इर्शाद फ़रमाते हैं:

صلاةٌ في المسجدِ الحرامِ أفضلُ من مائةِ ألفِ صلاةٍ فيما سواهُ(صحيح ابن ماجه:1163)

तर्जुमा: मस्जिद अल-हराम में एक नमाज़ पढ़नी दूसरी मस्जिदों की एक लाख नमाज़ से अफ़ज़ल है।

आप के इल्म में होना चाहिए कि आज कल मस्जिद हराम की चार सिम्तों में हुदूद हरम की अलामत नसब की गई है। जहाँ हरम की हद ख़त्म होती है वहां पर सुतून क़ाइम किया गया है,

जिस सुतून पर अंदर से अरबी में "निहायत हद अल हरम" और इंग्लिश में "END OF HARAM BOUNDARY" लिखा हुआ है और बाहर से अरबी में "बिदायत हद अल हरम" और इंग्लिश में "BEGINNING OF HARAM BOUNDARY" लिखा हुआ है ताकि लोगों को हुदूद हरम की तमीज़ हो सके। हुदूद हरम की हद बंदी सब से पहले इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने अल्लाह के हुक्म से जिब्रील अलैहिस्सलाम के ज़रिये की, फ़िर मुहम्मद ﷺ ने फ़तेह मक्का के मौक़े पर तमीम बिन असद ख़ज़ाई को हरम की अलामत तज्दीद करने का हुक्म दिया था। इस के बाद फिर उसमान रज़ियल्लाहु अन्हु फिर अमीर मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने तज्दीद फ़रमाई और आज भी ये हुदूद वाज़ेह हैं। (देखिए: शरह अल-महज़ब 7/463)

हुकूमत (सरकार) सऊदी अरब की वज़ारत-उल-हज वल-उमरा ने चारों ओर हुदूद-ए-हरम की भौगोलिक सीमा निर्धारण निम्नलिखित आधार पर किया है:

(1) उत्तर मक्का: मक्का के उत्तर में पाँच किलोमीटर तक मस्जिद आइशा तक। (यह मस्जिद मक्का-मदीना रास्ते पर है)

(2) दक्षिण मक्का: मक्का के दक्षिण में मश'आर अरफ़ा की ओर बीस किलोमीटर तक। (मक्का व ताइफ़ रास्ते पर)

(3) पश्चिम मक्का: मक्का के पश्चिम में जद्दा दिशा में हुदैबिया के मक़ाम पर अठारह किलोमीटर तक। (आजकल हुदैबिया को शमीसी कहते हैं)

(4) पूर्व मक्का: मक्का के पूर्व में जिराना के मक़ाम (स्थान) पर साढ़े चौदह किलोमीटर तक। (यहां मस्जिद जिराना है ताइफ़ रास्ते पर)

किलोमीटर में लोगों के बीच इख़्तिलाफ़ (मतभेद) पाया जाता है और मैंने यहाँ पर आपको वज़ारत-उल-हज वल-उमरा की जानकारी दी है। जो भाग इन चारों ओर स्थापित बाउंडरी के अंदर है वह हुदूद-ए-हरम का भाग है और जो बाउंडरी से बाहर का भाग है वह हिल कहलाता है और वह हुदूद-ए-हरम में शामिल नहीं है।

एहराम बाँधने की जगहे (स्थान):

हुदूद-ए-हरम की जानकारी के बाद अब उम्रा के लिए एहराम बाँधने के स्थानों का इल्म हासिल करें। उमरा के लिए एहराम बाँधने की तीन जगहें या तीन हालते हैं:

पहली जगह: जो लोग मीक़ात (क़र्न-उल-मनाज़िल, जुफ़ाह, यलमलम, ज़ात-ए-इर्क़ और ज़ुल-हुलैफ़ा) से बाहर हैं वे जब उम्रा का इरादा करेंगे

तो वे अपनी मीक़ात से एहराम बाँधकर मक्का आएँगे और उमरा करेंगे जैसे हिंदुस्तान-पाकिस्तान वाले हवाई जहाज़ से जद्दा पहुँचेंगे तो ताइफ़ की मीक़ात (क़र्न-उल-मनाज़िल) से एहराम बाँधेंगे।

दूसरी जगह: जो लोग मीक़ात के अंदर रहते हैं वे लोग अपनी रिहाइश (निवास) से ही एहराम बाँधेंगे जैसे जद्दा, शराइय, सौल, बहरा वग़ैरह वाले, ये लोग जहाँ रिहाइश करते हैं वहीं से उम्रा करने के लिए एहराम बाँधेंगे।

तीसरी जगह: ऊपर हुदूद-ए-हरम की वज़ाहत की गई है, जो लोग इस हद (सीमा) में रहते हैं वे हुदूद-ए-हरम से बाहर निकलकर हिल के किसी स्थान से एहराम बाँधेंगे जैसे मस्जिद आइशा, जिराना, अरफ़ात या हुदैबिया वग़ैरह से।

मस्जिद आइशा और उम्रा का एहराम:

मस्जिद आइशा, जिसे मस्जिद तनईम और मस्जिद उम्रा के नाम से भी जाना जाता है, यह मस्जिद हराम के उत्तर में मक्का-मदीना रोड पर पाँच किलोमीटर की दूरी पर हई अल-तनईम में स्थित है। यह बड़ी आलीशान (भव्य) मस्जिद छह हज़ार वर्ग मीटर के क्षेत्रफल में फैली है और लगभग पंद्रह हज़ार नमाज़ियों की वुस'अत (क्षमता)

रखती है। यह मस्जिद हराम की सबसे क़रीबी सीमा है और यहाँ एहराम बाँधने की अच्छी व्यवस्था के साथ आने-जाने की भी बहुत बेहतर सुविधा है इसलिए आमतौर से हुदूद-ए-हरम में रहने वाले लोग मस्जिद आइशा से उम्रा के लिए एहराम बाँधते हैं।

यह मस्जिद आइशा इसलिए मशहूर (प्रसिद्ध) है क्योंकि हुज्जतुल-विदा के मौक़े पर नबी (ﷺ) ने सय्यदा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा को उनके भाई अब्दुर्रहमान रज़ियल्लाहु अन्हु के साथ इसी जगह से उम्रा का एहराम बाँधने का हुक्म दिया था। बाद में यहाँ मस्जिद तामीर की गयी और यह मस्जिद आइशा के नाम से मशहूर हो गई। आइये इस हदीस को भी देख लेते हैं जिसमें सय्यदा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा को यहाँ से उम्रा का एहराम बाँधने का हुक्म दिया गया है। तवालत (विस्तार) की वजह से सिर्फ़ तर्जुमा (अनुवाद) पेश करता हूँ।

तर्जुमा: हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं कि हम रसूलुल्लाह (ﷺ) के साथ हजे-मुफ़रद का एहराम बाँध कर चले और हज़रत आयशा रज़ि० सिर्फ़ उमरे की नीयत से आईं। जब हम सरिफ़ के मक़ाम पर पहुँचे तो हज़रत आयशा रज़ि० को दिन शुरू हो गए, यहाँ तक कि जब हम मक्का आए तो हमने काबा और सफ़ा-मरवा का तवाफ़ कर लिया। फिर आप ﷺ ने हमें हुक्म दिया कि हम में से जिस किसी के साथ क़ुरबानी नहीं, वो (एहराम छोड़ कर) हिल्लत

(बिना एहराम की हालत) इख़्तियार कर ले। हमने पूछा : कौन सी हिल्लत? आपने फ़रमाया : मुकम्मल हिल्लत (एहराम की सभी बन्दिशों से आज़ादी)। फिर हम अपनी औरतों के पास गए, ख़ुशबू लगाई और (साधारण) कपड़े पहन लिये। (और उस वक़्त) हमारे और अरफ़ा (को रवानगी) के बीच चार रातें बाक़ी थीं। फिर हमने तरवीया वाले दिन (आठ ज़ुल-हिज्जा को) तल्बिया पुकारा। आप ﷺ हज़रत आयशा (रज़ि०) के ख़ेमे में दाख़िल हुए, तो उन्हें रोता हुआ पाया। पूछा : तुम्हारा क्या मामला है? उन्होंने जवाब दिया : मेरा मामला ये है कि मुझे दिन शुरू हो गए हैं। लोग हलाल (एहराम से फ़ारिग़) हो चुके हैं और मैं अभी नहीं हुई और न मैंने अभी बैतुल्लाह का तवाफ़ किया है, लोग अब हज के लिये रवाना हो रहे हैं। आपने फ़रमाया : (परेशान मत हो) ये (हैज़) ऐसा मामला है। जो अल्लाह ने आदम (अलैहि०) की बेटियों की क़िस्मत में लिख दिया है। तुम गुस्ल कर लो और हज का (एहराम बाँध कर) तल्बिया पुकारो। उन्होंने ऐसा ही किया और वक़ूफ़ के हर मक़ाम पर वक़ूफ़ किया (हाज़िरी दी, दुआएँ कीं) और जब पाक हो गईं तो अरफ़ा के दिन) बैतुल्लाह और सफ़ा-मरवा का तवाफ़ किया। फिर आपने हज़रत आयशा (रज़ि०) से) फ़रमाया : तुम अपने हज और उमरे दोनों (मुकम्मल कर के उनके एहराम की बन्दिशों) से आज़ाद हो चुकी हो। उन्होंने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल!

मेरे दिल में (हमेशा) ये खटका रहेगा कि मैं हज करने तक बैतुल्लाह का तवाफ़ नहीं कर सकी। आपने फ़रमाया : ऐ अब्दुर्रहमान! उन्हें (ले जाओ और) तनईम से उमरा करा लाओ। और ये (मिना से वापसी पर) हस्बा (में क़ियाम वाली रात का वाक़िआ है।) (सहीह मुस्लिम: 1213)

इल्मी नुक्ता: हज़रत आइशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) ने उम्रा का एहराम बाँधा था, मगर मक्का पहुँचने से पहले रास्ते में ही उन्हें हैज़ आ गया और वे यौम-उल-तर्विया से पहले पाक नहीं हो सकीं। तो रसूलुल्लाह (ﷺ) ने उन्हें यौम-उल-तर्विया को गुस्ल करके हज का एहराम बाँधने का हुक्म दिया, यानी उन्होंने उमरा को हज में शामिल कर लिया और यह हज क़िरान कहलाता है। इसलिए नबी (ﷺ) ने पाक होने पर तवाफ़ और सई कर लेने के बाद उनसे कहा कि "तुम हज और उमरा दोनों से हलाल हो गई हो"। इससे एक मसला मालूम होता है कि जो औरत हज तमत्तो' की नीयत करती है और उमरा करने से पहले हाइज़ा हो जाती है यहाँ तक कि यौम-उल-तर्विया से पहले पाक नहीं हो पाती है, तो उन्हें यौम-उल-तर्विया को अपनी नीयत बदलकर हज क़िरान की

कर लेनी है और उस दिन हज का एहराम बाँधना है और जब वे पाक होकर तवाफ़ और सई करेंगी, तो इससे हज और उमरा दोनों हो जाएगा। इसे हज क़िरान कहते हैं।

मस्जिद आइशा से एहराम बाँधना: जो लोग हुदूद-ए-हरम में काम करते हैं या वहाँ रहते हैं वे मस्जिद आइशा से एहराम बाँधेंगे, इस मसले में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं है। लेकिन इस बारे में इख़्तिलाफ़ पाया जाता है कि जो लोग अपनी मीक़ात से एहराम बाँधकर मक्का आते हैं और पहला उम्रा कर लेते हैं, तो दूसरे उम्रा के लिए मस्जिद आइशा से एहराम बाँध सकते हैं या नहीं?

असल सवाल का जवाब देने से पहले यह मसला बयान कर देता हूँ कि एक सफ़र में एक उम्रा करना ही मस्नून और अफ़ज़ल है क्योंकि इसी बात की दलील मिलती है। लेकिन इस मामले में यह गुंजाइश है कि अगर मक्का में क़ियाम तवील हुआ तो कुछ दिनों के वक़्फ़े के साथ दूसरा उम्रा कर सकते हैं। जल्दी-जल्दी और एक ही दिन में बार-बार उम्रा करना सुन्नत की ख़िलाफ़वर्ज़ी है। और इसी तरह जिसका क़ियाम मुख़्तसर हो और वह दोबारा मक्का नहीं आ सकता है, ऐसा

शख़्स अपने मय्यत वालिद या मय्यत वालिदा की तरफ़ से उम्रा करना चाहे तो कुछ अहल-ए-इल्म ने इसकी इजाज़त दी है।

अब आते हैं असल सवाल की तरफ़ कि जब कोई बाहरी आदमी (जो मीक़ात से एहराम बाँधकर पहले उम्रा कर चुका है) मक्का के क़ियाम के दौरान दूसरा उम्रा करता है तो उसे मीक़ात पर जाने की ज़रूरत है या मस्जिद आइशा से वह एहराम बाँध सकता है?

इसका जवाब यह है कि जो आदमी उस वक्त मक्का यानी हुदूद-ए-हरम में है, उसने पहले उम्रा कर लिया है और दोबारा उम्रा करना चाहता है, तो उसे मीक़ात पर जाने की ज़रूरत नहीं है। वह हिल में जाकर किसी भी मक़ाम से उम्रा का एहराम बाँध सकता है, जैसे जिराना से या मस्जिद आइशा से। जो लोग कहते हैं कि ऐसे लोग मस्जिद आइशा से एहराम नहीं बाँध सकते हैं, यह हुक्म सय्यदा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा के साथ ख़ास है क्योंकि उन्हें हैज़ आया हुआ था। इसका जवाब यह है कि एहराम बाँधने की जगह से मुताल्लिक़ औरत और मर्द के बीच कोई फ़र्क़ नहीं है और हैज़/अदम-हैज़ में भी एहराम बाँधने का कोई फ़र्क़ नहीं है। ऊपर मैंने एहराम बाँधने की तीन हालते बताई हैं, ये हालते उन मक़ाम पर मौजूद लोगों से मुताल्लिक़ हैं। इस बारे में कुछ दलीलें और तर्क भी मुलाहिज़ा करें:

(1) पहली दलील तो यही है कि नबी (ﷺ) ने सय्यदा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा को तनईम से उमरा करने का हुक्म दिया था जो हदीस ऊपर मौजूद है। इसमें कहीं यह नहीं है कि उम्रा के लिए एहराम बाँधने की यह जगह सय्यदा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा के साथ ख़ास है।

(2) आठ हिज्री को फ़त्ह-ए-मक्का के बाद नबी (ﷺ) ने अपने कुछ साथियों के साथ जिराना से एहराम बाँधकर उम्रा किया था। सुन्नन अबू दाऊद, सुन्नन तिर्मिज़ी, सुन्नन नसाई, मुसनद

अहमद और अबू याला वग़ैरह में यह रिवायत मौजूद है। मैं अबू दाऊद के हवाले से हदीस पेश करता हूँ। अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हु) कहते हैं:

أنَّ رسولَ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ عليهِ وسلَّمَ وأصحابَهُ اعتمَروا منَ الجِعْرانةِ فرمَلوا بالبيتِ ثلاثًا ومشوا أربعًا(صحيح أبي داود:1890)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह (ﷺ) और आपके सहाबा ने जिराना से उमरा का एहराम बाँधा तो बैतुल्लाह के तीन चक्करों में रमल किया और चार में आम चाल चली।

इस हदीस की रौशनी में मालूम होता है कि जो हुदूद में दाख़िल हो जाए और वह उम्रा करना चाहे तो हिल में निकलकर एहराम बाँधेगा।

मिसाल के तौर पर, कोई ड्राइवर किसी काम से मक्का गया, पहले उम्रा की निय्यत नहीं थी मगर मक्का पहुँचकर उम्रा का इरादा बन गया तो वह आदमी हिल में जाकर उम्रा का एहराम बाँधेगा। इसी तरह कोई आदमी सऊदी अरब के किसी शहर से काम की ग़र्ज़ से जेद्दा गया और वहाँ जाकर उम्रा का इरादा बन गया तो वह अपनी रिहाइश से ही उम्रा का एहराम बाँधेगा। गोया मैंने ऊपर एहराम बाँधने की जो तीन हालते (अवस्थाएँ) बताई हैं, एहराम बाँधने में उसी तरह अमल किया जाएगा।

(3) जो लोग मीक़ात के अंदर मुक़ीम हैं या नाज़िल हैं, वे उम्रा का एहराम अपनी रिहाइश से ही बाँधेंगे जैसे जेद्दा वाले। इसकी दलील इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से मर्वी हदीस मवाक़ीत में

है, नबी (ﷺ) फ़रमाते हैं:

"ومَن كان دونَ ذلك فمِنْ حيثُ أنشَأَ، حتى أهلُ مكةَ من مكةَ" (صحيح البخاري:1524)

तर्जुमा: जिनका क़ियाम मीक़ात और मक्का के बीच है तो वे एहराम उसी जगह से बाँधेंगे जहाँ से उन्हें सफ़र शुरू करना है, यहाँ तक कि मक्का के लोग मक्का ही से एहराम बाँधेंगे।

इस हदीस में जहाँ यह कहा गया है कि मीक़ात के अंदर वाले अपने सफ़र शुरू करने की जगह यानी अपनी रिहाइश से एहराम बाँधेंगे, वहीं यह भी कहा गया है कि मक्का वाले मक्का से ही एहराम बाँधेंगे। इसका मतलब यह है कि हज-ए-इफ़्राद या क़िरान की निय्यत करते वक्त मक्का वाले अपनी रिहाइश से ही एहराम बाँधेंगे, लेकिन मक्का में जो हुदूद-ए-हरम में रहते हैं, वे उम्रा करने के लिए हरम से बाहर निकलकर हिल से एहराम बाँधेंगे, मिसाल के तौर पर, मस्जिद आइशा से और इस बात पर इज्मा मंकूल है। इब्न अब्दुल बर्र ने कहा कि इमाम मालिक का क़ौल "मक्का में रहने वाला एहराम नहीं बाँधेगा यहाँ तक कि हिल की तरफ़ न चला जाए और फिर वहाँ से एहराम बाँधे" इस बात पर उलमा का इज्मा है और इसमें कोई इख़्तिलाफ़ नहीं है, अलहम्दुलिल्लाह। (अल-इस्तिज़कार: 4/79)

इसी वजह से आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा को उम्रा का एहराम बाँधने के लिए हिल की तरफ़ ले जाने का हुक्म दिया गया। दरअसल यह हुक्म मक्का में रहने वाले सबके लिए है, चाहे वह मुक़ीम हो या नाज़िल व मुसाफ़िर हो। यह सय्यदा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा के साथ ख़ास नहीं है जैसा कि समझा जाता है। अगर उम्रा का एहराम बाँधने में आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा के लिए ख़ासतौर पर आसानी का

हुक्म होता तो नबी (ﷺ) उनसे कहते कि मक्का में जहाँ पर हो, वहीं से उम्रा का एहराम बाँध लो, इसमें उनके लिए आसानी होती। मगर आपने उन्हें हिल की तरफ़ जाने का हुक्म दिया। यह रात का वक्त था, आपने अब्दुर्रहमान और आइशा दोनों से कहा कि तुम लोग उम्रा के बाद मुझसे फुलाँ जगह मिलो। गोया यह मुशक़्क़त वाला मामला है, फिर इसमें सय्यदा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा के लिए कैसे राहत और ख़ुसूसियत है?

इससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि हुदूद-ए-हरम में रहने वाले सबके लिए यही हुक्म है कि जब वह उम्रा करना चाहे, वह हुदूद-ए-हरम से निकलकर हिल की तरफ़ जाए और वहाँ से उम्रा का एहराम बाँधकर आए। यहाँ तक कि जो हुदूद-ए-हरम में किसी ग़रज़ से दाख़िल हुआ और उसे उम्रा का इरादा हो गया, उसके लिए भी यही हुक्म है। और जो लोग उम्रा की ग़रज़ से बाहरी मुल्क या बाहरी शहर से मक्का आए, वे हुदूद-ए-हरम में अभी क़ियाम-पज़ीर हैं। अगर वे दोबारा उम्रा करते हैं तो उनके लिए भी यही हुक्म है, यानी वे भी हिल, मिसाल के तौर पर मस्जिद आइशा जाकर एहराम बाँधेंगे।

एक ग़लतफ़हमी का इज़ाला: आवाम में एक ग़लतफ़हमी फैली हुई है कि जो किसी ग़रज़ से मक्का आया या जेद्दा आया और यहाँ आने के बाद उम्रा का ख़्याल पैदा हुआ, तो कुछ दिन उसे क़ियाम करना होगा, मिसाल के तौर पर तीन दिन या दस पंद्रह दिन, उसके बाद वह उम्रा कर सकता है। यह ग़लत ख़्याल है। सही बात यह है कि जो किसी काम से या रिहाइश की ग़रज़ से हुदूद-ए-हरम में दाख़िल होता है और फिर कुछ देर बाद उम्रा का ख़्याल पैदा होता है, तो वह उसी वक्त हुदूद-ए-हरम से बाहर निकलकर उम्रा का एहराम बाँध सकता है। और इसी तरह जो किसी ग़रज़ से या रिहाइश की निय्यत से जेद्दा आता है और यहाँ आकर उमरा का ख़्याल पैदा होता है, तो जिस वक्त या जिस दिन उम्रा का इरादा बन जाए, उसी वक्त वह अपनी रिहाइश से एहराम बाँधकर उमरा कर सकता है। कुछ दिन गुज़ारने वाला ख़्याल ग़लत है।

यहाँ पर एक दूसरा मसला यह भी ध्यान रहे कि जो मीक़ात से बाहर रहता है और वह उम्रा की गर्ज़ से मक्का या जेद्दा आए, तो उनको लाज़मी अपनी मीक़ात से एहराम बाँधकर आना होगा। बहुत से उमरा करने वाले जेद्दा आकर, यहाँ आराम करके फिर यहीं से उमरा का एहराम बाँधते हैं, यह ग़लत है और अगर किसी ने इस तरह उम्रा किया, तो उसको दम देना होगा। इसी तरह अहले जेद्दा, अपनी रिहाइश

से एहराम न बाँधकर मस्जिद आइशा से एहराम बाँधे या घर से निकलकर आगे जाकर एहराम बाँधे, तो इस सूरत में भी दम लाज़िम आएगा, इसलिए अहले जेद्दा अपनी रिहाइश से ही एहराम बाँधें।

मस्जिद आइशा से एहराम बाँधने से मुताल्लिक़ अरब उलमा के कुछ फ़तवे:

इस मसले में इख़्तिलाफ़ नहीं है कि जो मक्का में मुक़ीम हो, वह हिल जाकर उम्रा का एहराम बाँधेगा। ताहम, कुछ लोगों ने इस बारे में इख़्तिलाफ़ किया है कि जो उम्रा करने मक्का आया, वह दोबारा उम्रा के लिए मस्जिद आइशा से एहराम बाँधे या मीक़ात पर जाए। जबकि मैंने ऊपर वाज़ेह कर दिया है कि वह दोबारा उम्रा के लिए मस्जिद आइशा या किसी दूसरे हिल की तरफ़ जाकर एहराम बाँधेगा। इस सिलसिले में दोचंद उलमा के फ़तवे नक़ल करता हूँ ताकि मौज़ू से मुताल्लिक़ कुछ ताईद हो जाए।

1. शैख़ इब्न बाज़ रहिमहुल्लाह से सवाल किया गया कि एक आदमी रियाज़ से एक उम्रा करने की नियत से मक्का गया, फिर उम्रा के बाद दूसरा उम्रा का ख़्याल पैदा हो गया, तो क्या उसके लिए दूसरा उम्रा करना जायज़ है और वह कहाँ से एहराम बाँधेगा?

शैख ने इस पर जवाब दिया कि इसमें कोई हर्ज नहीं है कि अगर उसने उम्रा कर लिया और फिर अपने मरहूम बाप या माँ या इसी तरह दूसरे की तरफ़ से उम्रा करना चाहे, तो तन'ईम या जिराना या अराफ़ात की तरफ़ यानी हिल की तरफ़ जाए और हुदूद हरम के बाहर हिल से नए उमरा का एहराम बाँधे, जैसे आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने नबी (ﷺ) के हुक्म से तन'ईम से उम्रा किया था। (बिन बाज.ऑर्ग.एसए / फ़तवा: हिल युजौज तक़रार अल-उमरा? व मीन अयन यहरिम?)

2. शैख़ सालेह बिन फौज़ान अल-फौज़ान हाफ़िज़ाहुल्लाह से सवाल किया गया कि अगर किसी औरत ने अपना उम्रा कर लिया, फिर अपने बाप या अपने चाचा की तरफ़ से उम्रा करना चाहे, तो मीक़ात से पहली बार जो एहराम बाँधा, उसी एहराम में उन दोनों में से हर एक की तरफ़ से तवाफ़ और सई करना काफ़ी होगा या मीक़ात की तरफ़ लौटना और उनमें से हर एक की तरफ़ से एहराम बाँधना ज़रूरी होगा?

इस पर शैख़ ने जवाब दिया कि पहली बात यह है कि मुतक़ारिब वक़्त में बार-बार उम्रा करने में तवक़्क़ुफ़ इख़्तियार करना चाहिए क्योंकि क़रीबी वक़्त में बार-बार उम्रा करने पर कुछ उलमा ने नकीर की है है। इसका मतलब शैख़ यह कहना चाहते हैं कि कुछ दिनों के

फासले (अंतराल) के बाद दोबारा उम्रा कर सकते हैं। आगे शैख़ कहते हैं कि अगर मुसलमान उम्रा करे और अपने तवाफ़ और सई में वालिदैन और अक़ारिब (रिश्तेदार) के लिए दुआ करे और इसके अलावा मस्जिदे हराम में दुआ करे तो यही काफ़ी है। हम उम्मीद करते हैं कि इसका सवाब और फ़ायदा उन्हें मिलेगा, इन शा अल्लाह। लेकिन अगर तुमने दोबारा उम्रा कर लिया अपने वालिद की तरफ़ से फिर अपने चाचा की तरफ़ से, तो इसमें कोई हर्ज नहीं है, अगरचे यह खिलाफ़-ए-औला है। हाँ, अगर तुम उम्रा करती हो तो हर एक उम्रा के लिए अलग-अलग एहराम बाँधना ज़रूरी है, इस तरह कि तुम हिल की तरफ़ निकलो जैसे तन'ईम, अराफ़ात या जिराना और वहाँ से उम्रा का एहराम बाँधो और तुम मक्का से एहराम नहीं बाँधोगी और न ही तुम्हें मीक़ात की तरफ़ लौटना है। (इस्लाम वे डॉट नेट/मौज़ू: हुक्म अदा-ए-एक्सर मिन उमरा)

इस फ़तवे में आप देख सकते हैं कि शैख ने दूसरे उम्रा के लिए मीक़ात जाने से मना किया है, यानी दूसरे उम्रा करते वक़्त सिर्फ़ हुदूद हरम से बाहर निकलना है और किसी भी जगह जाकर हिल से उमरा का एहराम बाँध सकते हैं।

3. लजना दाइमा से सवाल किया गया कि तीन औरतों ने हज के बाद कुदी (मक्का का एक होटल) से उमरा का एहराम बाँधा और उमरा किया, क्या उनका उमरा जायज़ है? तो लजना ने जवाब दिया कि कुदी हुदूद हरम में है, इसलिए उन्हें तन'ईम या जिराना जाना था जैसे आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने तन'ईम से और नबी (ﷺ) ने जिराना से एहराम बाँधा था। बहरहाल, उनका उम्रा सही है लेकिन उन सभी पर दम लाज़िम है क्योंकि उन्होंने हरम से एहराम बाँधा है। (यह फ़तवे का ख़ुलासा और मफ़हूम है / लजना दाइमा / फ़तवा नंबर: 5830)

4. शैख़ मोहम्मद सालेह अल-मुन्जिद कहते हैं: "जम्हूर उलमा ने अपने सफ़र में एक उम्रा करने वाले के लिए दूसरा उम्रा करने की इजाज़त दी है, ख़ासकर अगर उम्रा के लिए आने वाला शख़्स आफ़ाक़ी (विदेशी) हो, दूर से सफ़र करके आया हो, और उसके लिए दोबारा मक्का पहुंचना मुश्किल हो, तो ऐसी सूरत में उस शख़्स के लिए क़रीब की हिल की तरफ़ जाने की ज़रूरत होगी, और फिर वह वहीं से दूसरे उम्रा का एहराम बाँधेगा।" (मौक़ा इस्लाम सवाल व जवाब, सवाल नंबर: 180123)

मस्जिद आइशा से बार-बार उम्रा करना:

यहाँ पर यह बात भी कहना मुनासिब समझता हूँ कि कुछ उलमा एक सफ़र में सिर्फ़ एक ही उमरा के क़ाइल हैं क्योंकि नबी (ﷺ) और आपके असहाब से यही मंक़ूल है, जैसे शैख़ अलबानी रहिमहुल्लाह और शैख़ इब्न उसैमीन रहिमहुल्लाह वग़ैरह। हालांकि, कुछ उलमा इस बात के भी क़ाइल हैं कि मक्का में लंबे वक़्त तक ठहरने पर कुछ दिनों के वक़्फ़े (अंतराल) के बाद दूसरा उम्रा किया जा सकता है और इसी तरह कोई एक सफ़र में किसी क़रीबी मरहूम की तरफ़ से उम्रा करना चाहे तो उम्रा कर सकता है, ख़ासकर उस वक्त जब दोबारा मक्का आने की उम्मीद न हो। नबी (ﷺ) का फ़रमान है:

الْعُمْرَةُ إِلَى الْعُمْرَةِ كَفَّارَةٌ لِمَا بَيْنَهُمَا(صحيح البخاري:1773)

तर्जुमा: एक उम्रा के बाद दूसरा उम्रा दोनों के दरमियाँन के गुनाहों का कफ़्फ़ारा है। इस हदीस से बार-बार उम्रा करने की दलील मिलती है, इसी तरह जब आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने हजे-क़िरान अदा किया तो आप ने उन्हें यह बशारत दी कि इस से हज और उम्रा दोनों हो गया, आप ने फ़रमाया:

"قَدْ حَلَلْتِ مِنْ حَجِّكِ وَعُمْرَتِكِ جَمِيعًا" (صحيح مسلم:1213)

तर्जुमा: तुम अपने हज और उम्रा दोनों से हलाल हो गई हो। इसके बावजूद आपने उन्हें फिर से दोबारा अलग और मुस्तक़िल उम्रा करने की इजाज़त दी और उनके भाई अब्दुर्रहमान को हुक्म दिया:

فَاذْهَبْ بِهَا يَا عَبْدَ الرَّحْمَنِ فَأَعْمِرْهَا مِنَ التَّنْعِيمِ۔(مصدر سابق)

तर्जुमा: ऐ अब्दुर्रहमान! इसे ले जाओ और इसे तन'ईम (मक्का से तीन या चार मील दूर एक स्थान का नाम) से उम्रा करवाओ।

ताहम यहां इस बात को याद रखना चाहिए कि एक दिन में कई उम्रा करना या रोज़ाना उम्रा करना या बार-बार उम्रा करना बिलकुल ग़लत है और अफ़ज़ल व औला यही है कि एक सफ़र में एक ही उम्रा पर इक्तिफ़ा किया जाएगा।

==========

[72].माह-ए-शाबान हक़ीक़त के आईने में

माह-ए-शाबान बतौर-ए-ख़ास उसकी 15वीं तारीख़ से मुताल्लिक़ उम्मत-ए-मुस्लिमा में बहुत सी गुमराहियां पाई जाती हैं। इस मुख़्तसर से मज़मून में इस माह की असल हक़ीक़त से रूबरू कराना चाहता हूँ ताकि जो लोग सही दीन को समझना चाहते हैं, उन पर इसकी हक़ीक़त वाज़ेह हो सके, साथ ही जो लोग जाने-अंजाने बिदअत और ख़ुराफ़ात के शिकार हैं, उन पर हुज्जत पेश कर के शाबान की असल हक़ीक़त पर उन्हें भी आगाह किया जा सके।

मुंदरिजा-बाला लाइन में शाबान के हक़ाइक़ को 10 नुक्तों में वाज़ेह करने की कोशिश करूंगा, उन नुक्तों के ज़रिए इख़्तिसार के साथ तक़रीबन सारे पहलू उजागर हो जाएंगे और एक आम क़ारी को भी इस माह की असल हक़ीक़त का अंदाज़ा लगाना आसान हो जाएगा।

पहला नुक्ता: माहे शाबान की फ़ज़ीलत

शाबान रोज़े की वजह से फ़ज़ीलत और इम्तियाज़ वाला महीना है। इस माह में कसरत से रोज़े रखने पर मुत'अद्दिद सहीह अहादीस

मरवी हैं, जिनमें बुख़ारी शरीफ़, मुस्लिम शरीफ़ की रिवायात भी हैं। बुख़ारी शरीफ़ में आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत है।

أن عائشةَ رضي الله عنها حدَّثَتْه قالتْ : لم يكنِ النبيُّ صلَّى اللهُ عليه وسلَّم يصومُ شهرًا أكثرَ من شَعبانَ، فإنه كان يصومُ شعبانَ كلَّه(صحيح البخاري:1970)

तर्जुमा: आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा बयान करती हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम शाबान से ज़्यादा किसी महीने में रोज़ा नहीं रखा करते थे। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम शाबान के महीने में तक़रीबन पूरा महीना रोज़ा रखा करते थे।

और मुस्लिम शरीफ़ में उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से मरवी है

سألتُ عائشةَ رضي اللهُ عنها عن صيامِ رسولِ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ فقالت : كان يصومُ حتى نقول : قد صام . ويفطر حتى نقول : قد أفطر . ولم أَرَه صائمًا من شهرٍ قطُّ أكثرَ من صيامِه من شعبانَ . كان يصومُ شعبانَ كلَّه . كان يصومُ شعبانَ إلا قليلًا .(صحيح مسلم:1156)

तर्जुमा: मैंने आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के रोज़ों के बारे में दरयाफ़्त किया तो वह कहने लगी: आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम रोज़े रखने लगते तो हम कहते कि आप तो रोज़े ही रखते हैं, और जब आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम रोज़ा छोड़ते तो हम कहते कि अब नहीं रखेंगे। मैंने नबी

करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को शाबान के महीने से ज़्यादा किसी और महीने में ज़्यादा रोज़े रखते हुए नहीं देखा। आप सारा शाबान ही रोज़ा रखते थे, आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम शाबान में अक्सर अय्याम रोज़ा रखा करते थे।

तिर्मिज़ी शरीफ़ में उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है:

ما رأيتُ النَّبيَّ صلَّى اللَّهُ عليهِ وسلَّمَ يصومُ شَهرينِ متتابعينِ إلَّا شعبانَ ورمضانَ(صحيح الترمذي:736)

तर्जुमा: मैंने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को लगातार 2 महीनों के रोज़े रखते नहीं देखा सिवाय शाबान और रमज़ान के।

यही रिवायत नसाई में इन अल्फ़ाज़ के साथ है।

ما رأيتُ رسولَ اللهِ صلَّى اللهُ علَيهِ وسلَّمَ يصومُ شهرينِ متتابعينِ ، إلَّا أنَّه كان يصِلُ شعبانَ برمضانَ(صحيح النسائي:2174)

तर्जुमा: मैंने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को कभी भी 2 माह मुसलसल रोज़ा रखते हुए नहीं देखा, लेकिन आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम शाबान को रमज़ान के साथ मिलाया करते थे।

इन सारी हदीसों से सिर्फ़ रोज़ा रखने का सबूत मिलता है, यानी शाबान का अक्सर रोज़ा रखना। और जिन रिवायतों में पूरा शाबान रोज़ा रखने का ज़िक्र है, उनसे भी मुराद शाबान का अक्सर रोज़ा रखना है।

इस माह में बकस्रत रोज़ा रखने की हिकमत पर औसामा बिन ज़ैद रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है:

يا رسولَ اللَّهِ ! لم ارك تَصومُ شَهْرًا منَ الشُّهورِ ما تصومُ من شعبانَ ؟ ! قالَ : ذلِكَ شَهْرٌ يَغفُلُ النَّاسُ عنهُ بينَ رجبٍ ورمضانَ ، وَهوَ شَهْرٌ تُرفَعُ فيهِ الأعمالُ إلى ربِّ العالمينَ ، فأُحبُّ أن يُرفَعَ عمَلي وأَنا صائمٌ(صحيح النسائي:2356)

तर्जुमा: मैंने अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से पूछा कि आप जितने रोज़े शाबान में रखते हैं, किसी और महीने में इतने रोज़े नहीं रखते? आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जवाब में फ़रमाया: यह ऐसा महीना है जिसमें लोग ग़फलत का शिकार हो जाते हैं, जो रजब और रमज़ान के दरमियाँन है। यह ऐसा महीना है जिसमें आमाल रब्बुल आलमीन की तरफ़ उठाए जाते हैं, मैं यह पसंद करता हूँ कि मेरे आमाल रोज़े की हालत में उठाए जाएं।

ख़ुलासा-ए-कलाम यह हुआ कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की इक्तिदा में हमें माहे शाबान में सिर्फ़ रोज़े का एहतिमाम करना चाहिए, वह भी बकस्रत, और किसी ऐसे अमल को अंजाम नहीं देना चाहिए जिनका सबूत नहीं है।

दूसरा नुक्ता: आधे शाबान के बाद रोज़ा रखना

ऊपर वाली अहादीस से मालूम हुआ कि शाबान का अक्सर रोज़ा रखना मस्नून है मगर कुछ ऐसी रिवायात भी हैं जिनमें आधे शाबान के बाद रोज़ा रखने की मुमानिअत आई है।

अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

إذا بقيَ نِصفٌ من شعبانَ فلا تصوموا (صحيح الترمذي:738)

तर्जुमा: जब आधा शाबान बाक़ी रह जाए (यानी आधा शाबान गुज़र जाए) तो रोज़ा न रखो।

इस मानी की कई रिवायात हैं जो अल्फ़ाज़ के फ़र्क़ के साथ अबू दाऊद, नसाई, बैहक़ी, अहमद, इब्ने अबी शैबा, और इब्ने हिब्बान वग़ैरह ने रिवायत की हैं। इस हदीस की सेहत और ज़ौफ़ के मुताल्लिक़

उलमा के दरमियाँन इख़्तिलाफ़ पाया जाता है। सहीह क़रार देने वालों में इमाम तिर्मिज़ी, इमाम इब्ने हिब्बान, इमाम ताहवी, अबू अ'वाना, इमाम इब्ने अब्दुल बर, इमाम इब्ने हज़्म, अल्लामा अहमद शाकिर, अल्लामा अल्बानी, अल्लामा इब्ने बाज़ और अल्लामा शुऐब अरनौत वग़ैरह हैं, जबकि दूसरी तरफ़ ज़ईफ़ क़रार देने वाले अब्दुर रहमान बिन महदी, इमाम अहमद, अबू ज़र'आ राज़ी, इमाम असराम, इब्नुल जौज़ी, बैहक़ी, इब्ने मुईन, और शैख़ उसैमीन वग़ैरह हैं।

इब्न रजब रहिमहुल्लाह ने कहा कि इस हदीस की सेहत और अमल के मुताल्लिक़ इख़्तिलाफ़ है। जिन्होंने तसीह की, वो तिर्मिज़ी, इब्ने हिब्बान, हाकिम, तहावी और इब्ने अब्दुल बर हैं, और जिन्होंने इस हदीस पर कलाम किया, वो इन लोगों से ज़्यादा बड़े और इल्म वाले हैं। उन लोगों ने हदीस को मुंकिर कहा है, वो हैं अब्दुर रहमान बिन महदी, इमाम अहमद, अबू ज़र'आ राज़ी, असरम। (लताइफ़-उल-म'आरिफ़, पेज नंबर: 135)

इस वजह से यह रिवायत मुंकिर और नाक़ाबिल-ए-हुज्जत है। अगर मुमान'अत (मनाही) वाली रिवायत को सहीह मान लिया जाए, जैसा कि बहुत से मुहद्दिसीन इसकी सेहत के भी क़ाइल हैं, तो इस बिना

पर यह कहा जाएगा कि इस मुमान'अत से चंद लोग अलग हैं, जो मुंदरिजा-ज़ेल हैं:

(1) जिसे रोज़े रखने की आदत हो। मिसाल के लिए, कोई शख़्स पीर और जुमेरात का रोज़ा रखने का आदी हो, तो वह शख़्स आधे शाबान के बाद भी रोज़ा रखेगा।

(2) जिसने आधे शाबान से पहले रोज़े रखने शुरू कर दिए और आधे शाबान से पहले को बाद वाले से मिला दिया।

(3) इससे रमज़ान की कज़ा और नज़र में रोज़े रखने वाला भी अलग होगा।

(4) नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की इत्तिबा में शाबान का अक्सर रोज़ा रखना चाहे रख सकता है, इस हाल में कि रमज़ान के रोज़े के लिए कमज़ोर न हो जाए।

तीसरा नुक्ता: आधे शाबान का रोज़ा

ऐसी कोई सहीह हदीस से साबित नहीं है जिससे 15वीं शाबान को रोज़ा रखने की दलील बनती हो। सहीह अहादीस से शाबान का अक्सर रोज़ा रखने की दलील मिलती है जैसा कि ऊपर बहुत सी अलग-अलग हदीसें गुज़री हैं। जो लोग रोज़ा रखने के लिए शाबान की 15वीं तारीख़

को मुतय्यन करते हैं, वो दीन में बिदअत का इर्तिकाब करते हैं और बिदअत मोजिब-ए-जहन्नम है। अगर कोई कहे कि 15वीं शाबान को रोज़ा रखने से मुताल्लिक़ हदीस मिलती है, तो मैं कहूंगा कि ऐसी रिवायत घड़ी हुई और बनावटी है। जो घड़ी हुई रिवायत को नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तरफ मंसूब करे उसका ठिकाना जहन्नम है।

चौथा नुक्ता: आधी शाबान की रात क़ियाम

झूठी और मनगढ़ंत रिवायातों को बुनियाद बनाकर आधी शाबान की रात में मुख़्तलिफ़ क़िस्म की मख़सूस इबादतें अंजाम दी जाती हैं। इब्ने माजह की रिवायत है:

إذا كانت ليلة النصف من الشعبان فقوموا ليلها وصوموا نهارها. (ضعيف ابن ماجه: 261)

तर्जुमा: जब आधी शाबान की रात आए तो उसमें क़ियाम करो और दिन का रोज़ा रखो।

यह रिवायत घड़ी हुई है क्योंकि इसमें एक रावी अबू बकर बिन मुहम्मद रिवायतें गढ़ने वाला था।

इस रात अल्फ़िया की नमाज़, यानी एक हज़ार रकअत वाली मख़सूस तरीक़े की नमाज़ पढ़ी जाती है। कुछ लोग 100 रकअत और कुछ

लोग 14 और कुछ 12 रकअत भी पढ़ते हैं। इस क़िस्म की कोई मख़सूस इबादत नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और आपके अस्हाब रज़ियल्लाहु अन्हुम से मंक़ूल नहीं है। इसी तरह इस रात इज्तिमाई ज़िक्र, इज्तिमाई दुआ, इज्तिमाई क़ुरआन ख़्वानी और इज्तिमाई अमल का कोई सबूत नहीं है।

पांचवां नुक्ता: शबे बरात का तसव्वुर

15वीं शाबान की रात को मुख़्तलिफ़ नामों से मौसूम किया जाता है। मसलन:

- लैलतुल मुबारका (बरकतों वाली रात)

- लैलतुल सक (तक़सीम उम्रूर की रात)

- लैलतुर रहमा (नुज़ूल-ए-रहमत की रात)

एक नाम शबे बरात (जहन्नम से निजात की रात) भी है जो ज़बान-ए-ज़िद ख़ास और आम है। हक़ीक़त में इन नामों की शरीअत में कोई हैसियत नहीं है।

लैलतुल मुबारका आधी शाबान की रात को नहीं कहा जाता है बल्कि शबे क़द्र को कहा जाता है। अल्लाह का फ़रमान है:

إِنَّا أَنزَلْنَاهُ فِي لَيْلَةٍ مُّبَارَكَةٍ إِنَّا كُنَّا مُنذِرِينَ {الدخان:3}

तर्जुमा: यक़ीनन हमने इस (क़ुरआन) को बरकत वाली रात में नाज़िल किया है क्योंकि हम डराने वाले हैं।

अल्लाह ने क़ुरआन को लैल-तुल-मुबारका यानी लैलतुल-क़द्र में नाज़िल किया जैसा कि दूसरी जगह अल्लाह का इर्शाद है:

إِنَّا أَنزَلْنَاهُ فِي لَيْلَةِ الْقَدْرِ [القدر:1]

तर्जुमा: हमने इस (क़ुरआन) को क़द्र वाली रात में नाज़िल किया है।

तक़सीम-ए-उमूर भी शब-ए-क़द्र में ही होती है ना कि आधी शाबान की रात और उसे लैलतुर रहमा कहने की भी कोई दलील नहीं। जहां तक शबे बरात की बात है, तो वह भी साबित नहीं है।

इसके लिए जो दलील दी जाती है, वह ज़ईफ़ है। आगे इस हदीस की वज़ाहत आएगी।

छठा नुक्ता: आधी शाबान की रात क़ब्रिस्तान की ज़ियारत

तिर्मिज़ी में आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है:

فقَدتُ رسولَ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ عليهِ وسلَّمَ ليلةً فخرجتُ فإذا هوَ في البقيعِ۔

तर्जुमा: एक रात मैंने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अपने पहलू से ग़ायब पाया, तलाश किया तो आपको बक़ी (क़ब्रिस्तान) में पाया।

यह रिवायत आधी शाबान से मुताल्लिक़ है। इस हदीस को बुनियाद बनाकर 15वीं शाबान की रात कृब्रिस्तान की सफ़ाई होती है, क़ब्रों की पुताई की जाती है, वहां बिजली और कुमकुमे लगाए जाते हैं और औरतें और मर्द एक साथ क़ब्रिस्तान की ज़ियारत करते हैं। जबकि मज़कूरा हदीस ज़ईफ़ है। इस पर अमल नहीं किया जाएगा। क़ब्रों की ज़ियारत कभी भी मस्नून है, इसके लिए तारीख़ मुतय्यन करना बिदअत है और औरत और मर्द के इख़्तिलात के साथ ज़ियारत करना, क़ब्र पर मेला ठेला लगाना कभी भी जाइज़ नहीं है।

सातवां नुक्ता: आतिशबाज़ी

शाबान में जिस क़दर बिद'अत और ख़ुराफ़ात की अंजाम दिही पर पैसे ख़र्च किए जाते हैं, अगर उस तरह रमज़ानुल मुबारक में सदक़ा और ख़ैरात कर दिया जाता तो बहुत से ग़रीबों को राहत

नसीब होती और यह ज़खीरा-ए-आख़िरत भी बन जाता। मगर जैसे फ़ुज़ूल ख़र्ची यानी शैतानी काम पसंद हो, वह रमज़ान का सदक़ा और

ख़ैरात कहाँ? शाबान में आतिशबाज़ी को ही पसंद करेगा। माह-ए-शाबान शुरू होते ही पटाखे छोड़ना शुरू हो जाते हैं। ज़रा तसव्वुर करें इस वक़्त से लेकर शाबान भर में किस क़दर फ़ुज़ूल ख़र्ची होती होगी? आधी शाबान की रात के पटाखे बाज़ी की हद ही नहीं। इससे होने वाले माली नुक़सानात के अलावा जिस्मानी नुक़सानात अपनी जगह।

आठवां नुक्ता: मख़सूस पकवान और रूहों की आमद

आधी शाबान की बिद'अत में क़िस्म-क़िस्म के खाने, हलवा, पूरी और तरह-तरह के खाने तैयार करना है। उसे फ़ुक़रा और मिस्कीन में तक़सीम करते हैं और यह अक़ीदा रखते हैं कि रूहें आती हैं, इसी वजह से उनके लिए फ़ातिहा ख़ानी की जाती है। यह भी अक़ीदा रखते हैं कि अगर आज हलवा पूरी न बनाई जाए तो रूहें दीवारें चाटती हैं। खाना पकाने के लिए तारीख़ मुतय्यन करना और मुतय्यन तारीख़ में फ़ुक़रा में तक़सीम करना, इस खाने पर फ़ातिहा पढ़ना, फ़ातिहा शुदा खाना मुर्दों को इसाले सवाब करना सब के सब बिद'अती उमूर हैं। और यह जान लें कि मरने के बाद रूहे दुनिया में लौट कर नहीं आती, क़ुरआन में मुतअद्दिद आयात वारिद हैं, जैसा कि अल्लाह का फ़रमान है:

كَلَّآ إِنَّهَا كَلِمَةٌ هُوَ قَآئِلُهَا وَمِن وَرَآئِهِم بَرْزَخٌ إِلَىٰ يَوْمِ يُبْعَثُونَ(المومنون: 100)

तर्जुमा: हरगिज़ नहीं, यह बस एक बात है जो वह बक रहा है, अब इन सब (मरने वालों) के पीछे एक बरज़ख़ हाइल है दूसरी ज़िन्दगी के दिन तक।

नवा नुक्ता: क्या आधी शाबान को अल्लाह आसमान-ए-दुनिया पर नुज़ूल करता है?

एक रिवायत बड़े ज़ोर-शोर से पेश की जाती है:

ان الله ليطلع في ليلة النصف من شعبان فيغفر لجميع خلقه إلا لمشرك أو مشاحن(سنن ابن ماجه :1390)

तर्जुमा: अल्लाह आधी शाबान की रात (अपने बंदों पर) नज़र फ़रमाता है फिर मुशरिक और (मुसलमान भाई से) दुश्मनी रखने वाले के सिवा सारी मख़लूक़ की मग़फिरत कर देता है।

इस हदीस को अल्बानी साहब ने हसन क़रार दिया है जबकि इसमें मशहूर ज़ईफ़ रावी इब्न लहिया है और दूसरे जामी तुरुक़ में भी ज़ईफ़ है। आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा के तरीक से यह रिवायत आई है।

إنَّ اللّٰهَ تعالى ينزِلُ ليلةَ النِّصفِ من شعبانَ إلى السَّماءِ الدُّنيا ، فيغفرُ لأكثرَ من عددِ شَعرِ غنَمِ كلبٍ(ضعيف ابن ماجه:262)

तर्जुमा: अल्लाह तआला आधे शाबान की रात को आसमान-ए-दुनिया पर उतरता है और कल्ब क़बीले की बकरियों के बालों की तादाद से ज़्यादा लोगों को माफ़ फ़रमाता है।

इसे शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने ज़ईफ़ कहा है, इमाम बुख़ारी रहिमहुल्लाह ने भी सनद में इन्क़िता' का ज़िक्र किया है जिसकी वजह से यह ज़ईफ़ है।

बहरहाल, आधे शाबान की रात आसमान-ए-दुनिया पर अल्लाह के नुज़ूल की कोई ख़ास दलील नहीं है, अलबत्ता इस हदीस को 'उमूम में दाख़िल किया जा सकता है जिसमें ज़िक्र है कि अल्लाह हर रात तिहाई हिस्से में आसमान-ए-दुनिया पर नुज़ूल करता है।

दसवां नुक़्ता: 15वीं शाबान से मुताल्लिक़ अहादीस का हुक्म

आख़िरी नुक्ते में यह बात वाज़ेह कर दूँ कि आधे शाबान के दिन या उसकी रात से मुताल्लिक़ कोई भी सही हदीस नहीं है। क़बीला कल्ब की बकरी के बालों के बराबर माफ़ी वाली हदीस, मुशरिक और बुग़्ज़ वाले अलावा सब की माफ़ी वाली हदीस, साल भर की मौत और ज़िंदगी

का फ़ैसला करने वाली हदीस, इस दिन के रोज़े से 60 साल अगले पिछले गुनाहों की माफ़ी की हदीस, 12-14-100 और 1000 रकअत नफ़िल पढ़ने वाली हदीस या आधे शाबान पर क़ियाम और सियाम और अज्र-ओ-सवाब से मुताल्लिक़ कोई भी हदीस क़ाबिल-ए-हुज्जत नहीं है।

इस वजह से 15 शाबान के दिन में कोई मख़सूस अमल अंजाम देना या 15 शाबान की रात में कोई मख़सूस इबादत करना जाइज़ नहीं है। शाबान के महीने में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से सिर्फ़ और सिर्फ़ बकसरत रोज़ा रखने का सबूत मिलता है, लिहाज़ा मुसलमानों को इसी अमल पर इक्तिफ़ा करना चाहिए और बिदअत और ख़ुराफ़ात को अंजाम देकर पहले से जमा की कोई नेकी को भी बर्बाद नहीं करना चाहिए।

================

[73].माहे रजब और दौर ए हाज़िर के मुसलमान

अल्लाह ने साल के 12 महीने काइनात की पैदाइश से ही मुअय्यन फ़रमा दिए, उनमें 4 महीनों को उसी दिन से हुरमत बख़्शी है जिनहे अशहरुल हुरूम (ज़िलक़ादा, ज़िलहिज्जा, मुहर्रम, रजब) कहा जाता है। हुरमत वाले 4 महीनों में रजब भी एक महीना है। फ़रमान-ए-इलाही है:

اِنَّ عِدَّةَ الشُّهُوْرِ عِنْدَ اللّٰهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا فِیْ كِتٰبِ اللّٰهِ یَوْمَ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَ الْاَرْضَ مِنْهَاۤ اَرْبَعَةٌ حُرُمٌؕ ذٰلِكَ الدِّیْنُ الْقَیِّمُ ﲣ فَلَا تَظْلِمُوْا فِیْهِنَّ اَنْفُسَكُمْ وَ قَاتِلُوا الْمُشْرِكِیْنَ كَآفَّةً كَمَا یُقَاتِلُوْنَكُمْ كَآفَّةًؕ وَ اعْلَمُوْۤا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِیْنَ.(التوبہ:36)

तर्जुमा: बेशक अल्लाह के नज़दीक महीनों की गिनती अल्लाह की किताब (यानी नविश्ता-ए-कुदरत) में बारह महीने (लिखी) है जिस दिन से उसने आसमानों और ज़मीन (के निज़ाम) को पैदा फ़रमाया था, उनमें से चार महीने (रजब, ज़िलक़ादा, ज़िलहिज्जा और मुहर्रम) हुरमत वाले हैं। यही सीधा दीन है, तो तुम इन महीनों में (अज़ख़ुद जंग व क़िताल में मुलव्विस होकर) अपनी जानों पर ज़ुल्म न करना और तुम (भी) तमाम मुशरिकीन से उसी तरह (जवाबी) जंग किया करो जिस

तरह वे सबके सब (इकट्ठे होकर) तुमसे जंग करते हैं, और जान लो कि बेशक अल्लाह परहेज़गारों के साथ है।

और हदीस में हुरमत वाले महीनों की वज़ाहत इस तरह आई है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

السنة اثنا عشر شهرا منها أربعة حرم: ثلاثة متواليات: ذو القعدة، ذو الحجة، والمحرم ورجب مضر، الذي بين جمادى وشعبان. صحيح البخاري: 4406)

तर्जुमा: साल 12 महीनों का है। इसमें 4 महीने हुरमत वाले हैं, 3 सिलसिलेवार हैं: ज़िलक़ादा, ज़िलहिज्जा, और मुहर्रम, और एक रजब है जो जमादी-उल-उख़रा और शाबान के दरमियाँन है।

यहां जमादी से मुराद जमादी-उल-उख़रा है क्योंकि उसके और शाबान के दरमियाँन ही रजब आता है। क़ुरआनी आयत और सहीह अल बुख़ारी की हदीस से मालूम हुआ कि रजब अशहरुल हुरुम यानी 4 हुरमत और अदब के महीनों में से है। इस महीने का तक़ाज़ा है कि इसमें फ़ितना और फ़साद, क़त्ल-ग़ारतगिरी और ज़ुल्म और त'आदी (दुश्मनी) से बाज़ रहा जाए। ऐसा नहीं है कि मा'सियत, फ़साद, ज़ुल्म और क़त्ल सिर्फ़ इन्हीं महीनों में मम्नू (मना) हैं बल्कि मुराद यह है कि इन महीनों में सख़्ती के साथ मम्नू हैं।

आज के बहुत सारे मुसलमान इस हुरमत वाले महीने का एहतिराम तो क़ज़ा अंधविश्वास और ख़ुराफ़ात और शिर्क और बिदअत में बुरी तरह मुलव्विस हैं। सिर्फ़ इख़्तिसार के साथ मुख़्तसर फेहरिस्त पेश करता हूं। इस पर काफ़ी कुछ लिखा गया है इस वजह से लंबा लिखने से बच रहा हूं। और दलाईल की तरफ़ सिर्फ़ इशारा कर रहा हूं।

(1) इस महीने का नाम रजब ताज़ीम की वजह से पड़ा है क़बीला मुझिर उसकी ताज़ीम ज़्यादा करते थे, इस वजह से रजब मुझिर (नुक़सान) भी कहा जाता है। बिदअतियों के यहां भी ज़्यादा ताज़ीम के बाइस यह महीना रजब-उल-मुरज्जब (रजब का सम्मानित महीना) से मशहूर है और इनकी ताज़ीम अपने मख़सूस अंदाज़ में शिर्किया और बिदिया आमाल अंजाम देना है।

(2) लोगों में यह मैसेज घूम रहा है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: जिसने इस माह की मुबारकबाद दी, उस पर जहन्नम की आग हराम हो जाती है, यह झूठी बात है और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तरफ़ झूठी बात मंसूब करने वाला जहन्नम में जाएगा।

(3) रजब की आमद से पहले ही अमूमन और चांद निकलने पर ख़ुसुसन यह दुआ:

اللهم بارك لنا في رجب وشعبان وبلغنا رمضان.

(ऐ अल्लाह! हमारे लिए रजब और शाबान में बरकत अता फ़रमा और हमें रमज़ान तक पहुंचा दे)

चारों तरफ़ पढ़ी और फ़ैलायी जाती है, जबकि यह ज़ईफ़ है और ज़ईफ़ हदीस को दलील नहीं बना सकते। (ज़ईफ़ हदीस के लिए देखें ज़ईफ़ुल जामे: 4395)

(4) रजब के महीने में मख़सूस क़िस्म की मुख़्तलिफ़ नमाज़ें अदा की जाती हैं, मसलन पहले रजब को 1000 नमाज़, पहली जुमा की रात को सलात-उल-रग़ाइब (अल्लाह की याद में मशग़ूल रहने वालों की नमाज़ जो मग़रिब और इशा के दरमियान पढ़ी जाती है) यही 12वीं नमाज़ 15 रजब को उम्मे दाऊद की नमाज़ और 27वीं रात को शबे मेराज की नमाज़। यह सारी नमाज़ें बिदअत हैं क्योंकि इन सबकी कोई दलील शरियत में वारिद नहीं है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है: जिसने दीन में कोई ऐसा काम किया जो दीन में से नहीं है, वह मर्दूद है।

(5) रजब के महीने में मख़सूस क़िस्म के रोज़े रखकर मख़सूस अज्र की उम्मीद की जाती है जैसा कि लोगों में मशहूर है कि रजब के पहले दिन का रोज़ा 3 साल का कफ़्फ़ारा है और दूसरे दिन का रोज़ा 2 साल का कफ़्फ़ारा और तीसरे दिन का एक साल का कफ़्फ़ारा है, फिर हर दिन का रोज़ा एक महीने का कफ़्फ़ारा है। इसी तरह 27 को लखी और हज़ारी रोज़े रखकर हज़ारों लाखों सवाब की उम्मीद की जाती है जबकि यह रोज़े रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से साबित नहीं हैं और जो अमल रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से साबित नहीं, वह बातिल और मर्दूद है।

(6) रजब के महीने में ज़्यादा से ज़्यादा उमरा करना सवाब का बाइस ख़्याल किया जाता है, जबकि सहीह रिवायत से मालूम है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने रजब में कभी उमरा नहीं किया और जितने उमरा किए, सब ज़िल-क़ा'दा में अदा किए।

(7) रजब की मशहूर तरीन बिदअत में 22 रजब को जाफ़र सादिक़ के नाम से कुंडे भरना है। कुंडे भरकर जाफ़र सादिक़ के वसीला से मांगी गई हर मुराद पूरी होने का अक़ीदा रखा जाता है। याद रहे कि यह

ग़ैरुल्लाह की नज़र है जो कि हराम और शिर्क है, नज़र इबादत है और यह सिर्फ़ अल्लाह के लिए मानी जाएगी।

(8) रजब की 27 तारीख़ भी बिदअतियों के नज़दीक काफ़ी अहम है। इस तारीख़ को मेराज की रात का जश्न मनाते हैं, क़मक़मो से घरों को रोशन करते हैं, रात जागते हैं, मेराज की रात के नाम से महफ़िल क़ायम करते हैं और मेराज की रात की इबादत करते हैं। औरत के मुशाबहत दो बाज़ू वाले बुराक़ के नाम से तस्वीर बनाते हैं। इस्लाम में न जश्न ए मेराज है, न उस रात शबबेदारी है, न चिराग़ा और न ही कोई मख़सूस इबादत है, फिर कोई मुसलमान अपने मन से यह सारे काम कैसे अंजाम दे सकता है?

(9) इन सब कामों के अलावा भी बहुत सारे ख़ुराफ़ात अंजाम दिए जाते हैं, मसलन रुह की तरफ़ से ख़ैरात करना, अजमेर का सफ़र करके मोइनुद्दीन चिश्ती के मज़ार पर मेला ठेला लगाना, क़ब्रों का सजदा और तवाफ़ और उन पर चादर और फूल चढ़ाना, ख़ास क़िस्म के पकवान पकाना, बरकत की नियत से रजब की अंगूठी पहनना और मख़सूस क़िस्म के अवराद और वज़ाइफ़ का एहतिमाम करना वग़ैरह।

(10) इस महीने में अंजाम दिए जाने वाले मज़कूरा सारे आमाल मर्दूद और बातिल हैं क्योंकि यह न अल्लाह के मुक़द्दस फ़रामीन में हैं और न ही रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की पाकीज़ा तालीमात में हैं। इसका मतलब यह नहीं कि हम रजब में नफ़्ल नमाज़ नहीं पढ़ सकते, या नफ़्ल रोज़े नहीं रख सकते और उमरा या इबादत और सदक़ात करना मना है। जिस तरह नेक आमाल दूसरे महीने में अंजाम देते हैं, इस महीने में भी अंजाम दे सकते हैं, यानी नफ़्ली नमाज़ें, पीर और जुमेरात अय्यामे बीज़ (13, 14, 15) रोज़े, क़जा रोज़े, ज़िक्र, तिलावत, उमरा, सदक़ात वग़ैरह। ताहम कोई इबादत मख़सूस तौर पर और तारीख़ और वक्त मुअय्यन करके नहीं अदा कर सकते हैं जैसा कि बिदअती लोग करते हैं।

(11) बहुत सारे लोग आपको रजब के फ़ज़ाइल में मुख़्तलिफ़ क़िस्म की अहादीस दिखाएंगे, आप उनसे धोखा न खाएं और मुख़्तसर ज़हन में यह बात रखें कि रजब एक हुरमत वाला महीना है और उस हुरमत के सिवा इस महीने में मख़सूस नमाज़, मख़सूस रोज़े, मख़सूस दुआ, मुबारकबादी वाली तमाम हदीस या तो ज़ईफ हैं या मनघड़ंत।

(12) एक आख़िरी अहम बात यह बताने लगा हूं कि रजब हुरमत वाला महीना होने के बाइस इस महीने में शिर्क और

बिदअत और हर क़िस्म की मा'सियत से बचना हमारे लिए निहायत ज़रूरी है। किस क़दर अलमिया है कि शुरू आफ़रीनिश से नेक और बुरे सबने अशहरुल हुरूम का एहतिराम किया और आज का मुसलमान किस क़दर गया गुज़रा है कि वह हुरमत की सारी हदें पार कर गया है।

अल्लाह ने हुक्म दिया के हुरमत वाले महीनों में अपनी जानों पर ज़ुल्म न करो और ज़ुल्म में शिर्क और बिद'अत के साथ हर क़िस्म की मा'सियत (नाफ़रमानी) शामिल है।

अल्लाह उम्मत ए मुस्लिमा को दीन की समझ अता फ़रमाए और शिर्क और बिद'अत से बचा कर एक प्लेटफार्म पर जमा कर दे। आमीन

====================

[74].मुक़ल्लिदीन का वसवसा "अहले हदीस अंग्रेज़ की पैदावर" और इसका इलाज

कई सालों से मुक़ल्लिदीन की तरफ़ से अहले हदीस के वजूद को हिंदुस्तान में अंग्रेज़ की आमद से जोड़ने की नापाक कोशिश की जा रही है ताकि अपने नए वजूद को लोगों की नज़रों से छुपा सके। यह काम वही करता है जिसे अपने वजूद पर भरोसा नहीं होता।

दरहक़ीक़त, अहले हदीस हिंदुस्तान में ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया में उस वक्त से हैं जब से इस्लाम है, यह अलग बात है कि हक़ परस्तों की तादाद हमेशा कम रही है, इसकी वजह अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने ख़ुद बतला दी है। وَقَلِيلٌ مِنْ عِبَادِيَ الشَّكُورُ शुक्र गुज़ार बंदे थोड़े ही होते हैं।

अहले हदीस को अंग्रेज़ की आमद से जोड़ने के लिए मुक़ल्लिदीन की अक़्ल का जनाज़ा निकल गया। एक तरफ़ तो अहले हदीस को अंग्रेज़ की पैदावार कहते हैं दूसरी तरफ़ अहले हदीस मुहद्दिसीन की जमात कहकर शुरू इस्लाम से इसका वजूद भी मानते हैं। इनकी अक़्ल पर मातम किया जाए और क्या किया जाए?

अहले हदीस का सही मतलब और इसकी सही तारीख़ समझ लें। जैसे अहलुस सुन्नत से सुन्नत वाले यानी तमाम मुसलमान चाहे पढ़े-लिखे हों या जाहिल मुराद हैं, इसी तरह अहले हदीस से हदीस पर अमल करने वाले तमाम मुसलमान चाहे पढ़े-लिखे हों, ग़ैर पढ़े-लिखे मुराद हैं। चूंकि इमाम अहमद बिन हंबल रहिमाहुल्लाह ने फ़रमाया:

"साहिबुल हदीस हमारे नज़दीक अहले हदीस वही है जो हदीस पर अमल करता है।"

(मनाक़िब अल-इमाम अहमद बिन हम्बल लि-इब्नुल जौज़ी पेज 209 और सनद सहीह)

मैं देवबंदी या बरेलवी को अंग्रेज़ की औलाद या उसकी पैदावार नहीं कह सकता, अल्लाह तआला के सामने मेरी पूछ होगी, मगर इन दोनों का वजूद अंग्रेज़ी दौर से है यह बिलकुल कह सकता हूँ। मुझे ताज्जुब इस बात पर है कि अहले हदीस को कैसे अंग्रेज़ की पैदावार कहा जाता है? ज़र्रा बराबर अल्लाह का ख़ौफ़ नहीं होता। हिंद पर राज करने वाला अंग्रेज़ तो सारा का सारा काफ़िर था, मुसलमान उस काफ़िर की पैदावार कैसे हो सकते हैं? शर्म नहीं आती यह बात कहते हुए।

यह मुसलमान हैं जिन्हे देखकर शर्माए यहूद

अहले हदीस के मुख़्तलिफ़ नाम हैं, इनमें सलफ़ी, मोहम्मदी, अहलुस सुन्नत और असरी वग़ैरह हैं। ये सब अहले हदीस के सिफ़ाती नाम हैं जिसकी पहचान हदीस में ताईफ़ा मंसूरा बताई गई है। ताईफ़ा मंसूरा भी एक वसफ़ी नाम है यानी निजात पाने वाली जमात। इस नाम का भी यह मतलब नहीं कि इस्लाम से हटकर यह एक अलग फ़िर्क़ा है।

गौया अहले हदीस में बशमूल आवाम और ख़ास सहाबा, ताबिईन तबा-ताबिईन, आइम्मा और क़ियामत तक आने वाले हामिल किताब व सुन्नत शामिल हैं। इसका दो टूक मतलब यह हुआ कि अहले हदीस सदा से हैं। अइम्मा और मुहद्दिसीन ने अंग्रेज़ की आमद से सैकड़ों साल पहले ताईफ़ा मंसूरा को अहले हदीस बताया है। इमाम अहमद बिन हंबल, इमाम बुख़ारी, इमाम अली बिन अल-मदीनी और बहुत से अहले इल्म ने ताईफ़ा मंसूरा को अहले हदीस ही ठहराया है।

हवाले के तौर पर देखें: (मरीफ़ा उलूमुल हदीस लिल-हाकिम : 2 और सहीह इब्न हजर अल-'असक़लानी फ़ी फत्हुल बारी जिल्द 13, पेज 293 तहित ह 7311, मसअलतुल इह्तिजाज, बिश-शाफ़ी लिल-ख़तीब पेज 47, सुन्नन तिर्मिज़ी मरीज़ातुल अहवाज़ी जिल्द 9, पेज 74 हदीस 2229)

तवालत के ख़ौफ़ से इस बात का ज़िक्र का मौक़ा नहीं, वरना हज़ारों अहले इल्म के अक़वाल पेश किए जा सकते हैं जिन्होंने अंग्रेज़ से सैकड़ों साल पहले जमात अहले हदीस का तज़किरा और उसकी मद्ह-सराई की है।

एक आम तालिब-ए-इल्म या आम आदमी बिना किताब उठाए और बिना तारीख़ का पता किए यह बात कह सकता है कि:

देवबंदी की इब्तिदा मदरसा देवबंद के क़ियाम से है।

बरेलवी की इब्तिदा अहमद रज़ा बरेलवी की पैदाइश के बाद से है। और अहले हदीस की इब्तिदा उस वक्त से है जब से हदीस और आमिलीन बिल-किताब वल हदीस पाए जाते हैं।

अरे मियां! तुम अहले हदीस की बात करते हो। अंग्रेज़ से हमारी कोई निस्बत ही नहीं, हम तो असल मुसलमान समझ कर आज़ादी हिंद में गाजर-मूली की तरह काटे गए और तुम तो वफ़ादार अंग्रेज़ थे, हालांकि उसने तुम्हें जन्म नहीं दिया मगर तुम्हारा वजूद उसी वफ़ादार ने बाक़ी रखा क्योंकि उसका साथ जो निभाते थे।

मदरसा देवबंद का क़ियाम 1867 और अहमद रज़ा बरेलवी की पैदाइश 1865—इन दोनों के मो'रिज़ वजूद में आने से पहले यानी उन्नीसवीं और बीसवीं सदी ईसवी से पहले फ़िर्क़ा देवबंदी और फ़िर्क़ा बरेलवी का कोई वजूद ही नहीं था। हिंदुस्तान में हालांकि पहले ही अंग्रेज़ की आमद हो गई थी मगर 1857 के बाद यहां इसका राज क़ाइम हो गया। जिसने इस राज का साथ दिया अंग्रेज़ का वफ़ादार कहलाया और जिसने मुख़ालिफ़त की उसे गद्दार समझा गया और उसे क़िस्म-क़िस्म की सज़ा दी गई। हमें तो मुख़ालिफ़ समझकर वहाबी कहा गया और हमने सीने में अंग्रेज़ की गोलियां खाई और अल-हम्दु लिल्लाह इस्लाम बचाया मगर मुल्क का ग़द्दार होने के साथ, दींन से भी कुछ मुसलमानों ने ग़द्दारी की जिनका इस्लामी तारीख़ कभी माफ़ नहीं कर सकती।

मैं पूरे देवबंदी मुसलमान को मत'ऊन नहीं करता और ना ही कर सकता हूँ। ख़ास तौर पर जो अभी के देवबंदी हैं उनका कोई कसूर नहीं मगर तारीख़ी हक़ाइक़ का इनकार भी नहीं किया जा सकता जिसमें देवबंद और आला देवबंद का अंग्रेज़ी सरकार से दोस्ताना ताल्लुक़ात मिलते हैं।

(1) मदरसा देवबंद और अंग्रेज़ी सरकार: जो काम बड़े-बड़े कॉलेजों में हज़ारों रुपयों के ख़र्च से होता है वह यहां कौड़ियों में हो रहा है। जो काम प्रिंसिपल हज़ारों रुपये मासिक तनख़्वाह लेकर करता है वह यहां एक मौलवी चालीस रुपये महीने पर कर रहा है। यह मदरसा ख़िलाफ़े सरकार नहीं बल्कि मुवाफ़िक़ सरकार, मददगार सरकार है। (मौलाना मुहम्मद एहसान नानोतवी, पेज 217)

(2) मदरसा देवबंद के कारकुनान और अंग्रेज़: मदरसा देवबंद के कारकुनों में अक्सरियत ऐसे बुज़ुर्गों की थी जो सरकार के क़दीम मुलाज़िम और हाल पेंशनर थे जिनके बारे में सरकार को शक-ओ-शुब्हा करने की कोई गुंजाइश ही नहीं थी। (हाशिया सवानेह क़ासमी, जिल्द 2, पेज 247)

(3) मदरसा देवबंद के बानी और अंग्रेज़: मौलवी मुहम्मद क़ासिम नानोतवी साहब का अंग्रेज़ी मदरसा दिल्ली से भी ताल्लुक़ रहा (तज़किरा उलमा हिंद फ़ारसी पेज 210 नुलक्ष्वर-पुर यासीन लखनऊ 1914)

इस अंग्रेज़ी कॉलेज का मक़सद भी जान लें:

"अरबी कॉलेज (दिल्ली) की मशीन में जो कल पुर्जे ढाले जाते थे उनके बारे में तय किया गया था कि सूरत व शक्ल के और बाहरी लवाज़िम के हिसाब से तो वह मौलवी हों और मज़ाक़ व राय और समझ के एतिबार से आज़ादी के साथ हक़ की तलाश करने वाली जमात हो।" (सव्वाने क़ासमी, जिल्द 1, पेज 97-96)

इसी कॉलेज के तरबियत याफ़्ता मौलवी क़ासिम, उनके उस्ताद ममलूक अली और मौलवी एहसान नानोतवी वग़ैरह थे। देखें। (मौलाना एहसान नानोटवी, पेज 77, 25) (अरवाह सोलासा, पेज 301) और (तज़किरा उलमा हिंद, पेज 210)

(4) मौलवी राशीद अहमद गंगोही और अंग्रेज़: देवबंदी हल्क़े के मुमताज़ मुसन्निफ़ मौलवी आशिक़ इलाही मैरठी अपनी किताब तज़किरतुर रशीद में अंग्रेज़ी हुकूमत के साथ मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही के नियाज़मंदा जज़्बात की तस्वीर खींचते हुए एक जगह लिखते हैं कि आप समझे हुए थे कि मैं जब हक़ीक़त में सरकार का फ़रमाबरदार हूँ तो झूठे इलज़ाम से मेरा बाल भी बांका नहीं होगा और अगर मारा भी गया तो सरकार मालिक है इसे इख़्तियार है जो चाहे करे। (तज़किरतुर रशीद जिल्द 1, पेज 80, इदारा इस्लामियत लाहौर)

(5) मौलवी अशरफ़ अली थानवी साहिब को सरकार ब्रिटानिया (अंग्रेज़) से छह सौ रुपये महीने मिलते थे (मक़ालामातुस सदरैन सफ़ा नंबर 9, दार अल इशात देवबंद ज़िला सहारनपुर)

(6) तबलीग़ी जमात के बानी मौलवी इलियास कांधलवी को सरकार ब्रिटानिया (अंग्रेज़) से ब-ज़रिया लेटर पैसे मिलते थे - (मक़ालामातुस सदरैन सफ़ा नंबर 8)

(7) जमीयत उलमा-ए-इस्लाम को हुकूमत ब्रिटानिया (अंग्रेज़) ने क़ाइम किया और इनकी मदद की - (मक़ालामातुस सदरैन सफ़ा नंबर 7)

हुज्जत क़ाइम करने के लिए एक ही सबूत काफ़ी होता है मगर यहाँ इस क़दर सबूत मौजूद हैं कि आँखें बंद करने से भी हक़ाइक़ ओझल नहीं होते।

ख़ुलासा बयान करते हुए यह कह सकता हूँ कि देवबंदी फ़िर्क़ा अंग्रेज़ के दौर से मा'रिज़ वजूद में आया, इस फ़िर्क़े के सरकर्दा उलमा और मशाइख़ की तर्बियत अंग्रेज़ी स्कूल में हुई, इस फ़िर्क़े पर अंग्रेज़ों के

बेहिसाब एहसानात हैं या यह कह लें कि अंग्रेज़ी साथ निभाने से इन्हें ख़ूब-ख़ूब अंग्रेज़ी इनामात मिले।

आप ही अपनी अदाओं पर ज़रा ग़ौर करें

हम अगर अर्ज़ करेंगे तो शिकायत होगी

बहुत माफ़ी के साथ उन नादानों के नाम जो लोगों में वस्वासा पैदा करते हैं कि अहले हदीस अंग्रेज़ की औलाद हैं।

================

[75].मुख़्तलिफ़ हालात मे सलाम का जवाब देना

लोगों के दरमियाँन बाज़ (कुछ) हालातों में सलाम का जवाब देना मालूम नहीं है, इसलिए हर रोज़ इस क़िस्म के सवाल दोहराए जाते रहते हैं और अच्छे ख़ासे लोग इसमें उलझे रहते हैं। मैंने मुख़्तलिफ़ जगहों से इस्तिफ़ादा लेते हुए और मौक़े की नज़ाकत के त'ईं (अनुसार) उनका जवाब एक जगह जमा करके क़ारिईन (पाठकों) के नज़र कर रहा हूँ। अल्लाह तआला इसे नफ़ा'-बख़्श (लाभदायक) बनाए, आमीन।

(1) नमाज़ की हालत में सलाम का जवाब देना:

अगर मस्जिद में जमात हो रही हो और सभी नमाज़ी बा-जमात नमाज़ अदा कर रहे हों और बाहर से आने वाला शख़्स जब सलाम कहे तो नमाज़ी उसका जवाब अल्फ़ाज़ से न दें क्योंकि नमाज़ की हालत में बात करना मना है बल्कि नमाज़ी हाथ के इशारे से जवाब दे।

दलील: सय्यदना अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) कहते हैं कि:

"मैंने बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) से कहा कि नबी करीम को नमाज़ की हालत में जब लोग सलाम करते हैं तो आप उन लोगों को जवाब

देते हुए रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को कैसे देखा? सय्यदना बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने कहा, आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ऐसे कहते थे और अपनी हथेली को फैलाते थे" (बलूगुल मराम म'अ सबलुस सलाम 1/140)

इस हदीस से मालूम हुआ कि नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) नमाज़ की हालत में सलाम का जवाब हाथ के इशारे से देते थे। ज़बान से बात नहीं करते थे। इमाम मुहम्मद बिन इस्माईल अस-सन'आनी इस हदीस की शरह में लिखते हैं कि:

"यह हदीस इस बात पर दलालत करती है कि जब भी कोई आदमी किसी को नमाज़ की हालत में सलाम कहे तो उसका जवाब हाथ के इशारे से दे न कि ज़बान से बोलकर" (सबलुस सलाम 1/140)

(2) खाते वक्त सलाम का जवाब देना:

खाना खाते वक्त सलाम करना और सलाम का जवाब देना जाइज़ है क्योंकि मुमान'अत की कोई दलील नहीं पाई जाती। कुछ लोगों की ज़ुबानों पर यह जो मशहूर है कि "ला सलाम व ला कलाम अला तआम" कि “खाते वक्त सलाम या कलाम नहीं होना चाहिए” तो यह

कोई हदीस नहीं है बल्कि एक मक़ूला (बात) है जो लोगों में राइज हो गयी है।

अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से खाने के बीच बात करना साबित है। एक मर्तबा आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास गोश्त पेश किया गया, आप नोच-नोच कर तनावुल फ़रमाने लगे। इसी दौरान आपने फ़रमाया: "मैं क़यामत के दिन लोगों का सरदार हूँ" फिर आपने शफ़ाअत की तवील हदीस बयान की। (बुख़ारी: 3340 और मुस्लिम: 194)

जब हदीस से खाते वक्त बात करने का सबूत मिलता है तो इस हालत में सलाम का जवाब देना ब-दर्जा ऊला सही है।

(3) क़ुरआन की तिलावत करते वक्त सलाम का जवाब देना:

क़ुरआन की तिलावत करते वक्त सलाम का जवाब देना जाइज़ है। हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "मुसलमान के मुसलमान पर छह हक़ हैं, पूछा गया वो क्या हैं? या रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)! आपने फ़रमाया: जब तू उसे मिले तो उसे सलाम

कहे, जब वह दावत दे तो उसे क़ुबूल कर, जब वह नसीहत तलब करे तो उसे नसीहत दे, जब वह छींकें और अल्हम्दुलिल्लाह कहे तो उसे छींक का जवाब दे, जब वह बीमार हो तो उसकी इयादत कर और जब वह फ़ौत हो तो उसके जनाज़े के पीछे चले।" (सहीह मुस्लिम: 2162)

इस हदीस से मालूम हुआ कि मुलाक़ात के वक्त हर मुसलमान को सलाम करना मुस्तहब अमल है जब कि सलाम का जवाब देना फ़र्ज़ है। फ़रमान बारी तआला है:

''وَإِذَا حُيِّيتُمْ بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوا بِأَحْسَنَ مِنْهَا أَوْ رُدُّوهَا إِنَّ اللَّهَ كَانَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ حَسِيبًا''

और जब तुम्हें सलाम किया जाए तो उससे अच्छा सलाम का जवाब दो या उसी के जैसा लौटाओ, बेशक अल्लाह हर चीज़ का ख़ूब हिसाब रखने वाला है। (अन-निसा: 86)

ख़ुलासा-ए-कलाम यह कि तिलावत-ए-क़ुरआन में मुनहमिक (व्यस्त) शख़्स को सलाम करना मुस्तहब अमल है और तिलावत करने वाले शख़्स पर सलाम का जवाब देना वाजिब है। मुमानअत की कोई दलील नहीं।

(4) दौरान-ए-ख़ुत्बा सलाम का जवाब देना:

बुख़ारी और मुस्लिम की रिवायत में है कि "जब जुमा के दिन दौरान-ए-ख़ुत्बा तुम अपने साथी से यह कहो कि ख़ामोश हो जाओ तो भी तुमने लग़्व काम किया।"

इस हदीस से पता चलता है कि दौरान-ए-ख़ुत्बा बात करना ममनू है लेकिन अगर किसी मुअस्सली ने सलाम किया तो दिल में उसका जवाब दे दे, क्योंकि दिल में सलाम का जवाब देने से ख़ुत्बे के समा में कोई ख़लल वाक़े नहीं होता। अलबत्ता बिल-जहर जवाब देना समा में ख़लल का बाइस है, इसलिए बिल-जहर (बुलन्द आवाज़ के साथ) सलाम का जवाब न दे।

(5) अज़ान देते वक्त सलाम का जवाब देना:

अज़ान होते हुए सलाम कहना और इसका जवाब देना किसी हदीस से मना नहीं है।

इसलिए अज़ान होते हुए सलाम का जवाब देना दरुस्त है। सलाम का जवाब देने से अज़ान के समा में कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता, क्योंकि मुअज़्ज़िन कलिमात खींच कर कहता है।

नोट: सलाम करने और जवाब देने के लिए यह क़ाइदा ज़हन में

रहे कि जहां सलाम करने की मुमान'अत नस से वारिद है वहां सलाम करना और जवाब देना ममनू होगा, मसलन क़ज़ाए हाजत के वक्त सलाम करना और जवाब देना मना है, बाक़ी दीगर मौक़ो पर सलाम करना या जवाब देना जहां मुमान'अत की दलील नहीं है मशरू और जाइज़ होगा।

=============

[76].मुर्दो से वसीला पकड़ने वाली हदीस "ऐ अल्लाह के बंदो मेरी मदद करो" ज़ईफ़ है

मुर्दे (मरे हुए) जिंदो की कुछ भी मदद नहीं कर सकते, बल्कि वे ख़ुद ज़िंदा के मोहताज हैं ताकि उन्हें दुआ, इस्तिग़फार, सदक़ा और ख़ैरात के ज़रिये फ़ायदा पहुंच सके। इस क़िस्म के गढ़े हुए वाक़ि'आत सूफ़ी पेश भी करते हैं कि जब कोई ज़िंदा मरे हुए की क़ब्र पर जाता है तो मरे हुए ज़िंदा को ऐसे देखते हैं जैसे जन्मों का प्यासा पानी की तरफ़ देखता है ताकि कुछ ईसाले सवाब कर दे और मरे हुए को राहत नसीब हो। इस बात पर कि मरे हुए को हम नहीं सुन सकते, वे हमारी कुछ भी मदद नहीं कर सकते, वे किसी के फ़ायदा और नुक़सान का ज़र्रा भर इख़्तियार नहीं रखते, क़ुरआन की बेशुमार दलील हैं और इसी तरह हदीस से भी साबित है। मगर क़ब्र के पुजारी, जिन्हें क़ब्र की कमाई खानी है और उसी से पेशा भी चलाना है, वे कब मानेंगे। इसलिए क़ुरआन और हदीस के नुसूस को तोड़-मरोड़ कर पेश करते हैं और ज़बरदस्ती मरे हुए से वसीला पकड़ना, बल्कि मुर्दे (मरे हुए) से मदद की पुकार करना साबित करने की नाजाइज़ कोशिश करते हैं और ख़ुद तो भटके हुए हैं ही, सीधी-सादी आम जनता को भी सही रास्ते से

भटका देते हैं। अगर आम जनता को न भट्काएं तो उनकी कमाई कहां से होगी? म'आज़-अल्लाह

मुर्दे से मदद मांगने से मुताल्लिक़ सूफ़ी और क़ब्रो वाले शख़्स बहुत सारे दलील पेश करते हैं, इनमें से कुछ तो घड़ी हुई हैं, कुछ ज़ईफ़ हदीसें हैं जिनसे इस्तिदलाल नहीं किया जा सकता और कुछ दलील को उनके असल मानी और मफ़हूम से हटा कर ग़लत सलत हुज्जत पकड़ी जाती है। यहाँ मेरा मक़सद एक दलील की वज़ाहत है जिसका क़ब्र परस्त लोग बड़े ज़ोर-शोर से ढंका बजाते हैं और मरे हुए से इमदाद मांगने पर बतौर-ए-दलील और हुज्जत पेश करते हैं।

वह रिवायत सनद के साथ इस तरह है, जिसे तबरानी ने ज़िक्र किया है:

حدثنا إبراهيم بن نائلة الاصبهاني،ثنا الحسن بن عمر بن شقيق،ثنا معروف بن حسان السمرقندي، عن سعيد بن أبي عروبة عن قتادة عن عبد الله بن بريدة عن عبد الله بن مسعود قال: قال رسول الله صلى الله عليه وسلم إذا انفلتت دابة أحدكم بأرض فلاة فليناد يا عباد الله احبسوا علي يا عباد الله احبسوا علي فإن لله في الأرض حاضرا سيحبسه عليكم.

)رواه الطبراني في المعجم الكبير(

तर्जुमा: अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी सल्लल्लाहु अलेहि वसल्लम ने फ़रमाया: जब तुम में से किसी की सवारी बेयाबान में छूट जाए तो उसे चाहिए कि कहे: ऐ अल्लाह के बंदों! मेरी सवारी पकड़ लो, ऐ अल्लाह के बंदों! मेरी सवारी पकड़ लो, क्योंकि अल्लाह के बहुत से ऐसे (बंदे) हैं जो इस ज़मीन में होते हैं, वे तुम्हारी सवारी पकड़ देंगे।

रिवायत का हुक्म: यह रिवायत तबरानी के अलावा दीगर किताबों में भी ज़िक्र है, जो अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु के तरीक़ से है। हैयस्मी ने इस रिवायत पर कलाम करते हुए कहा है कि इसकी सनद में मारूफ़ बिन हसन ज़ईफ़ है। (मज्मू ज़वाइद: 10/135)

एक दूसरी इल्लत यह है कि क़तादा मुदल्लिस रावी है जो अन से रिवायत करते हैं। तीसरी इल्लत हाफ़िज़ इब्ने हजर रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान की कि वह इब्ने बुरैदा और इब्ने मसऊद के दरमियान इन्क़िता का ज़िक्र करते हैं, इस वजह से उनके नज़दीक यह रिवायत ज़ईफ़ है। (शरहुल अज़कार: 5/150)

अल्लामा अलबानी रहिमहुल्लाह ने भी इस हदीस पर ज़ईफ का हुक्म लगाया है। (देखें: अस-सिलसिला ज़ईफा: 655, ज़ईफुल जामे: 404, अल-कलिमात तईब: 178)

इस हदीस की एक शाहिद हदीस भी है जिसे दलील के तौर पर सूफ़ी पेश करते हैं। आइये उस हदीस को भी देखते हैं। इस हदीस को भी इमाम तबरानी मोअजम-उल-कबीर में ज़िक्र किया है, जिसे सनद के साथ पेश करता हूँ।

तर्जुमा: उतबा बिन अज़्वान रज़ियल्लाहु अन्हु नबी सल्लल्लाहु अलेहि वसल्लम से रिवायत करते हैं कि आपने सल्लल्लाहु अलेहि वसल्लम ने फ़रमाया: जब तुम में से किसी की कोई चीज़ गुम हो जाए और वह कोई मदद चाहता हो और वह ऐसी जगह हो जहाँ उसका कोई मददगार भी न हो, तो उसे चाहिए कि कहे: ऐ अल्लाह के बंदो! मेरी मदद करो, ऐ अल्लाह के बंदो! मेरी मदद करो, यक़ीनन अल्लाह के ऐसे भी बंदे हैं जिनको हम देख तो नहीं सकते (लेकिन वे लोगों की मदद करने पर मामूर हैं) और यह तजुर्बा शुदा बात है।

रिवायत का हुक्म: इस रिवायत में भी कई इल्लते हैं, जिनकी वजह से यह भी ज़ईफ़ है।

(1) अब्दुर रहमान बिन सहल ज़ईफ़ (कमज़ोर) रावी है।

(2) अब्दुर रहमान बिन सहल के बाप शरीक बिन अब्दुल्लाह नख़ई के हिफ़ाज़ और ज़बत पर कलाम है।

(3) ज़ैद बिन अली और उत्बा बिन अज़्वान के दरमियाँन इन्क़िता पाया जाता है, जैसा कि हाफ़िज़ इब्न हजर ने ज़िक्र किया है।

इसलिए यह रिवायत भी ज़ईफ़ है, इसे शैख़ अलबानी रहिमहुल्लाह ने भी ज़ईफ़ कहा है। (देखें: अस-सिलसिला ज़ईफा: 656, ज़ईफ़ुल जामे: 383)

इन दोनों रिवायातों की हक़ीक़त सामने आ गई, अब इसे मद्दे नज़र रखते हुए नीचे कुछ बातें मुलाहिज़ा फ़रमाएँ:

(1) ये दोनों रिवायात ज़ईफ़ हैं, इन रिवायातों से क़तई दलील नहीं पकड़ी जा सकती, इसलिए मरे हुए पर फिट करना और उनसे वसीला के लिए हुज्जत बनाना बिल्कुल सही नहीं है।

(2) दूसरी रिवायत के आख़िरी अल्फ़ाज़ हैं "وقد جرب ذلك" यानी यह तजुर्बा शुदा बात है। जैसा कि तजुर्बा वाली बात इमाम अहमद बिन हम्बल रहिमहुल्लाह की तरफ़ भी मंसूब है, तो यहाँ यह बात वाज़ेह रहे कि इस्लाम में कोई बात तजुर्बा की वजह से साबित नहीं होती और सिर्फ़ किसी का तजुर्बा दीन में दलील नहीं होगी, दलील वही है जो शरीअत अलैहिस्सलाम की तरफ़ से आई है।

(3) अगर थोड़ी देर के लिए बहस के तौर पर न सही, इस्तिदलाल और हुज्जत के तौर पर उन्हें सही मान भी लिया जाए तो यहाँ जिन का पुकारना है वह फ़रिश्ते है ना कि जिन्न इंसान या वली, जैसा कि शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने बड़ी जामे बात कही है कि हदीस में "इबादुल्लाह" से मुराद इंसान के अलावा मख़लूक़ है, जैसा कि पहली हदीस के अल्फ़ाज़:

فإن لله في الأرض حاضرا سيحبسه عليكم

और दूसरी हदीस के अल्फ़ाज़:

فإن لله عباد لا نراهم

दलालत करते हैं। यह ख़ूबी फ़रिश्ते या जिन्न पर मुंतबिक़ होते हैं और चूंकि जिन्न से मदद मम्नू है, जिस पर वाज़ेह दलील है, बचा फ़रिश्ता तो यहाँ सिर्फ़ फ़रिश्ता मुराद है (शैख़ अलबानी रहिमहुल्लाह के कलाम का मतलब ख़त्म हुआ)

यहाँ 'इबादुल्लाह से फ़रिश्तों के अलावा किसी और को मुराद लेना ही नहीं सकते हैं। यह मानना होगा कि अल्लाह ने फ़रिश्तों को इस काम पर मामूर कर रखा है। जब बयाबान में सामान गुम होने वाला मदद के लिए अल्लाह के बंदों को पुकारता है तो यही फ़रिश्ते अल्लाह के हुक्म से मदद करते हैं।

जिन्हें पुकारा जाता है वो फ़रिश्ते हैं, इस प्रकार की एक ज़ईफ़ रिवायत जो मुसनद बाज़ार में है, उससे साफ़ पता चलता है कि जिनको पुकारा जाता है, वो फ़रिश्ते हैं।

इब्ने अब्बास (रज़ि.) से रिवायत है कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फ़रमाया:

ان الله ملائكته في الأرض سوى الحفظة يكتبون ما سقط من ورق الشجر فإذا أصاب أحدكم عرجة بأرض فلاة فليناد اعينوا عباد الله.(مسند البزار:4922)

तर्जुमा: अल्लाह के कुछ फ़रिश्ते ज़मीन में मुहाफ़िज़ों के अलावा हैं जिनका काम पेड़ से गिरने वाले पत्तों को लिखना है। इसलिए जब तुममें से किसी को सफ़र के दौरान बयाबाँ (जंगल/वीरान) में कोई मुसीबत आ पड़े तो उसे चाहिए कि आवाज़ दे। ऐ अल्लाह के बंदों, मेरी मदद करो।

हालांकि यह रिवायत भी ज़ईफ़ होने की वजह से काबिल-ए-हुज्जत नहीं है, लेकिन इससे एक बात तो बिल्कुल वाज़ेह हो गई और इसमें अब किसी क़िस्म का इश्काल नहीं रहा कि इबादुल्लाह से मुराद फ़रिश्ते नहीं हैं।

बयाबानो में फ़रिश्ते की त'ईनाती (पहरेदारी) तो एक अलग मसला है, उसके लिए कोई हदीस भी सही नहीं है। यहाँ तो सिर्फ़ बतौर बहस ज़ईफ़ हदीस को मानकर बात समझने की कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन यह बात तो सही है कि अल्लाह ने बंदों की निगहबानी और उनकी हिफ़ाज़त के लिए फ़रिश्तों को मुक़र्रर कर रखा है। अल्लाह का फ़रमान है:

له معقبات من بين و من خلفه يحفظونه من امر الله. (الرعد:11)

तर्जुमा: इसके पहरेदार (फ़रिश्ते) इंसान के आगे पीछे मुक़र्रर हैं, जो अल्लाह के हुक्म से उनकी निगहबानी करते हैं।

बयाबाँ के उन फ़रिश्तों को उन चीज़ों में पुकारा जाएगा जिन चीज़ों में एक ज़िंदा इंसान दूसरे ज़िंदा इंसान से मदद मांगते हैं, जैसे मुझे बतौर क़र्ज़ कुछ रुपये दो। मेरा सामान फ़ुलाँ जगह पहुंचा दो, मेरी फ़ुलाँ चीज़ गुम हो गई है, उसकी तलाश में मेरी मदद करो। वग़ैरह तो फ़रिश्तों को भी ऐसे ही काम पर मदद के लिए पुकारा जाएगा और हदीस में भी साफ़ है कि सामान गुम होने पर हमें इबादुल्लाह (फ़रिश्ते) को मुख़ातिब कर के मदद की पुकार लगानी है। इसकी मिसाल ऐसे समझें कि अपने घर में मेरा चश्मा गुम जाए तो मैं अपने बच्चों, बीवी और घर वालों को चश्मे की तलाश में मदद के लिए पुकारूंगा। ठीक यही मामला हदीस में भी ज़िक्र किया गया है।

कुछ लोगों का कहना है कि बयाबाँ में आम तौर पर जिन्नात रहते हैं, इसलिए यहाँ इबादुल्लाह से जिन्नात मुराद हैं। सलफ़ के नज़दीक यह मसला भी तक़रीबन मुत्तफ़िक़ है कि मदद के लिए जिन्नात को

पुकारना शिर्क है। सऊदी अरब की इल्मी तहक़ीक़ात और फ़तावा जात की दायमी ने फ़तवा नं. 433 में कहा है:

जिन्नों से मदद मांगना और ज़रूरतों को पूरा करने के लिए या किसी को नुक़सान या फ़ायदा पहुंचाने की गरज़ से उनकी पनाह ढूंढना इबादत में शिर्क करना है, क्योंकि जिन्न से फ़ायदा हासिल करना ज़ुमरे में आता है, जैसे जिन्न का उसके सवाल का जवाब देना और उसकी ज़रूरत पूरी करना, इसी तरह इंसान की जानिब से जिन्न की ताज़ीम करने और उसका सहारा लेने और अपनी ख़्वाहिश पूरी करने के लिए उसकी मदद मांगने से जिन्न का मुस्तफ़ीद होना लाज़िमी आता है।

इन बातों के इस्तिदलाल के लिए मुंदरिजा-ज़ेल दलाइल पेश किए हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

ويوم يحشرهم جميعا يا معاشر الجن قد استكثرتم من الانس وقال اولياوهم من الانس ربنا استمتع بعضنا ببعض وبلغنا أجلنا الذي أجلت لنا قال النار مثوا كم خالدين فيها إلا ما شاء الله ان ربك حكيم عليم وكذلك نولي بعض الظالمين بعضا بما كانوا يكسبون.(الانعام: 129128)

तर्जुमा: और जिस दिन अल्लाह तमाम ख़लाइक़ (तमाम लोग) को जमा करेगा, (कहेगा) ऐ जमात जिन्नात की! तुमने इंसानों में से बहुत

से अपने लिए जो इंसान उनके साथ ताल्लुक़ रखने वाले थे, वह कहेंगे कि ऐ हमारे परवरदिगार, हमने एक-दूसरे से फ़ायदा हासिल किया और हम अपनी इस मु'अय्यन की हुई मीयाद तक पहुंच गए जो तू ने हमारे लिए मु'अय्यन की थी। अल्लाह फ़रमाएगा कि तुम्हारा ठिकाना दोज़ख़ है, जिसमें हमेशा रहोगे, हाँ अगर अल्लाह चाहे तो दूसरी बात है, बेशक तुम्हारा रब बड़ी हिकमत वाला और बड़ा इल्म वाला है, और इसी तरह हम कुछ काफ़िरों को कुछ के क़रीब रखेंगे, उनके आमाल के सबब।

अल्लाह का फ़रमान है:

وانه كان رجال من الانس يعوذون برجال من الجن فزادهم رهقا. (الجن:6)

तर्जुमा: बात यह है कि कुछ इंसान कुछ जिन्नात से पनाह मांगा करते थे, जिससे जिन्नात अपनी सरकशी में और बढ़ गए।

इस फ़तवा से यह बात वाज़ेह हो गई कि यहाँ इबादुल्लाह से जिन्नात मुराद नहीं हैं, क्योंकि जिन्नात से मदद मांगने की सरीह मुमान'अत (बंदिश) है।

ज़ईफ़ हदीसों को बुनियाद बनाकर क़ब्र परस्त हज़रात वफ़ात याफ़्ता वलीयो और मुर्दा लोगों को पुकारते हैं, जबकि हदीस ही सिरे से क़ाबिल-ए-हुज्जत नहीं है। मैंने कहा कि अगर बिलफ़र्ज़ महल मान भी लिया जाए तो उससे ग़ैरुल्लाह (जिन्न और इंसान) को पुकारने पर हुज्जत पकड़ना किसी भी तरह सही नहीं है, क्योंकि क़ुरआन और हदीस में ग़ैरुल्लाह को पुकारने से मना किया गया है और यह सरासर शिर्क है, सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह को ही पुकारा जाए। अल्लाह का फ़रमान है:

ولا تدع من دون الله ما لا ينفعك ولا يضرك فإن فعلت فإنك إذا من الظالمين.(يونس:106)

तर्जुमा: और तुम अल्लाह को छोड़कर किसी को मत पुकारो जो तुम्हारा भला कर सके न नुक़सान, अगर तुम ने ऐसा किया तो तुम ज़ालिमों (यानी मुश्रिकों) में से हो जाओगे।

अल्लाह का फ़रमान है:

ومن اضل ممن يدعو من دون الله من لا يستجيب له الى يوم القيامة وهم عن دعائهم غافلون.
(الاحقاف:5)

तर्जुमा: और उससे ज़्यादा गुमराह कौन होगा जो अल्लाह को छोड़कर उन को पुकारे जो क़यामत तक (उसकी पुकार सुनकर) उसे जवाब नहीं दे सकते और वो उनकी पुकार से ग़ाफ़िल और बेख़बर हैं।

अल्लाह का फ़रमान है:

وما انت بمسمع من في القبور.(الفاطر:22)

तर्जुमा: और तुम उन को जो क़ब्रों में दफ़्न हैं नहीं सुन सकते।

अल्लाह का फ़रमान है:

فإنك لا تسمع الموتى ولا تسمع الصم الدعاء إذا ولو مدبرين. (روم:52)

तर्जुमा: बेशक आप मुर्दों को नहीं सुना सकते और ना ही बहरों को (अपनी) आवाज़ सुना सकते हैं जब कि वे पीठ फेर कर मुड़ चुके हों।

यह सारी आयतें साबित करती हैं कि मुर्दे न तो हमारी बात सुनते हैं और न ही हम उन्हें सुना सकते हैं, बल्कि क़यामत तक हमारी पुकार से ग़ाफ़िल हैं। अगर सुन भी लें तो वे फ़ायदा और नुक़सान का कोई भी इख़्तियार नहीं रखते, लिहाज़ा मालूम यह हुआ कि सिर्फ़ अल्लाह को ही पुकारा जाएगा।

आख़िर में एक बात की तरफ़ इशारा करना चाहता हूँ कि केरल और कर्नाटका वग़ैरह में मज़्कूरा-बाला हदीस को लेकर सलफ़ियों के बीच भी यह मसला निज़ा (झगड़े) का सबब बना हुआ है, जबकि ऐसा नहीं

होना चाहिए था। जब हदीस ही सिरे से क़ाबिल-ए-इस्तिनाद नहीं है तो बात ही ख़त्म। और अगर असलाफ़ में से किसी ने इस हदीस पर अमल भी किया हो तो उन्होंने ना तो जिन्न से मदद मांगी और ना ही वलियों और क़ब्र वालों को पुकारा, बल्कि उन्होंने वैसे ही पुकारा जैसा पुकारने का हदीस में हुक्म मिला है और वह है फ़रिश्तों को पुकारना, जैसा कि मैंने वह हदीस भी पेश कर दी है जिसमें फ़रिश्तों की जमात का ज़िक्र है।

==================

[77].मुस्लिम औरतो का मंगल सूत्र-पहनना कैसा है?

बाज़ मुस्लिम अहबाब के ज़रिए मालूम हुआ कि उनके इलाक़े में शादी में मुस्लिम ख़्वातीन एक हार का इस्तेमाल करती हैं, जिस तरह से हिंदुओं में मंगल सूत्र होता है, तो क्या मुस्लिम औरतें मंगल सूत्र का इस्तेमाल कर सकती हैं?

मंगल सूत्र वाक़ई में हिंदुओं की मज़हबी आलमत है, इसमें कोई दो राय नहीं है, लड़के का लड़की के गले में मंगलसूत्र डालना निकाह के माने में समझा जाता है। आज भी इश्क़-ओ-मुहब्बत में भगने वाले लोग गले में मंगलसूत्र डालकर शादी ब्याह कर लेते हैं।

मुझे प्रिंट मीडिया के ज़रिये मालूम हुआ कि मुंबई में सीरियल अदाकारा सना शैख़ के सिन्दूर लगाने पर मुस्लिम तबक़े ने आवाज़ उठाई थी वो उन्होेंने कहा कि जब मेरा सिन्दूर लगाना हराम है तो मेरा सीरियल क्यों देखते हो? मज़ीद उन्होेंने कहा कि मेरी मां और नानी मंगल सूत्र का इस्तेमाल करती हैं ये उनके सुहाग की आलमात है।

इस वाक़िये से इस बात को समझने में मदद मिलती है कि वाक़ई बाज़ मुस्लिम औरतों में भी इस हिंदुवाना अक़ीदे के तहत मंगलसूत्र का इस्तेमाल पाया जाता है। और ये वाज़ेह है कि हिंदुओं के यहां मंगलसूत्र मज़हबी सार-ओ-अलामत है। इस्लाम ने हमें किसी ग़ैर क़िस्म की नक़ल और मुशाबहत इख़्तियार करने से मना किया है।

قَالَ: للّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: مَنْ تَشَبَّهَ بِقَوْمٍ فَهُوَ مِنْهُمْ

तर्जुमा:- सय्यदना उमर रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है, उन्होन कहा कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स जिस क़ौम की मुशाबहत (तौर तरीक़े) को अपनाना वो उन्ही मे से है।

(सुनन अबू दाऊद हदीस नं 4031)

गोया हिंदुओं की तरह मंगलसूत्र का इस्तेमाल नाजायज़ ठहरेगा, कोई हिंदुवाना अक़ीदा न हो तो किसी भी क़िस्म का हार बतौर ए ज़ीनत (ख़ूबसूरती) औरत के लिए जायज़ है।

वल्लाहु आलम

================

[78].मुस्लिम ख़वातीन के सर के बाल के अहकाम

अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने औरत की तख़्लीक़ (पैदाइश) कर के कायनात का हुस्न दो-बाला (दुगुना) कर दिया है, है तो यह सिंफ़-ए-नाज़ुक (औरत) मगर कायनात की बड़ी हसीन चीज़ है। जब एक मर्द निकाह के ज़रिए औरत के साथ अपनी ज़िंदगी शुरू करता है तो फिर अल्लाह की मेहरबानी के साथ बीवी की रफ़ाक़त उसकी ज़िंदगी के मसाइल के लिए काफ़ी हो जाती है। दोनों मिल कर अच्छा घर, अच्छा समाज और अच्छी दुनिया बना लेते हैं। ना सिर्फ़ मर्दों को औरत की ज़रूरत है बल्कि औरतों को भी मर्दों की ज़रूरत है, हालांकि औरतों की तुलना में मर्दों में इच्छा ज़्यादा पाई जाती है। उसकी वजह यह है कि अल्लाह ने औरत को हसीन पैदाइश और पुर-कशिश वस्फ़ (आकर्षक सिफ़त) से नवाज़ा है। इस्लाम ने अपने तमाम उसूलों में पाकीज़गी इख़्तियार की है, औरत जो अपने आप में सिंफ़ मुख़ालिफ़ के लिए पुर-कशिश है इसे महारिम के अलावा तमाम अजनबी मर्दों से पर्दा इख़्तियार करने का हुक्म दिया है, यहाँ तक कि सर के बाल भी छुपाने का हुक्म देता है, उसकी नमाज़ भी नंगे (नग्न) सिर जाइज़ नहीं है। औरत पूरी तरह से पर्दा है। इस वजह से सर से लेकर पैर तक ढीले (मोटे) कपड़े से अपने अज़ा-ए-बदन छुपाने का हुक्म दिया गया है। ज़ेरे नज़र मज़मून

में औरत के सर के बाल के अहकाम बताए जाएंगे ताकि मुसलमान औरतों को इन बातों की शरई हैसियत मालूम हो सके।

सर के बाल की हिफ़ाज़त करना, उसमें कंघा करना और तेल लगाना:

(1) यहाँ मालूम होना चाहिए कि मर्दों के लिए रोज़ाना कंघा करना मना है लेकिन औरतों के बाल घने और लंबे होते हैं इसलिए औरतों के लिए हस्ब-ए-ज़रूरत (ज़रूरत के हिसाब से) कंघा करने में कोई मुज़ाइक़ा (हर्ज) नहीं है बल्कि शादीशुदा औरतों को अपने शौहर के लिए बाल संवारने चाहिए, तेल, कंघा और ज़ीनत की चीज़ें इस्तेमाल करनी चाहिए। हाँ इतना ज़रूर ध्यान दें कि बालों को सजाने संवारने और तेल कंघा करने में ज़्यादा वक़्त बर्बाद न करें और ना ही माल में इसराफ़ (फ़ज़ूलख़र्ची) करें जैसा कि बहुत सारी औरतों को देखा जाता है कि बाल धोने में मुबालग़ा, धूप में सुखाने में मुबालग़ा और उसे सजाने संवारने में मुबालग़ा-आराई से काम लेती हैं, गोया दिन का बल्कि रात का भी अक्सर हिस्सा बालों की ज़ीनत और हिफ़ाज़त पर ख़र्च किया जाता है। इसी तरह बालों में ख़ुशबू या ख़ुशबूदार तेल लगा कर बाहर ना निकलें, ख़ुशबू का इस्तेमाल घर तक ही महदूद रखें।

दिन और रात के किसी हिस्से में रोज़ाना औरत बालों में कंघा कर सकती है यहाँ तक कि हैज़ और निफ़ास और जनाबत की हालत में भी, अलबत्ता ईदुल अज़हा की मुनासबत से जो क़ुर्बानी का इरादा रखे वह उन दिनों आराम से और नर्मी के साथ कंघा करें। हालत ए एहराम में कंघा करने की मुमान'अत नहीं आई है लेकिन चूंकि बाल कटना या तोड़ना एहराम की हालत में मना है इस वजह से कंघा नहीं करनी चाहिए और जिसे कंघा करने से बाल टूटने का यक़ीन हो तो उसकी हर हाल में कंघा नहीं करनी चाहिए। इद्दत में ज़ीनत इख़्तियार करना मना है इस वजह से औरत इद्दत में कंघा ना करे और ना ही ज़ीनत की कोई चीज़ बालों में इस्तेमाल करे।

औरतों के लिए बाल रखने और मांग निकालने का तरीक़ा:

रसूल ﷺ की मांग दर्मियान सिर में होती थी उम्मुल मोमिनीन आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा बयान करती हैं:

كنتُ إذا أردتُ أن أَفرُقَ رأسَ رسولِ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ علَيهِ وسلَّمَ ، صدَعتُ الفرقَ من يافوخِهِ وأُرسلُ ناصيتَهُ بينَ عَينيهِ(صحيح أبي داود:4189)

तर्जुमा: जब मैं रसूल ﷺ के बालों में मांग निकालने लगती तो आपके सिर के बीच से निकालती और आपके माथे के बालों को आपकी आँखों के सामने लटका देती, यानी फिर उन्हें आधा-आधा कर देती।

मांग के मामले में औरत और मर्द दोनों बराबर हैं यानी रसूल अल्लाह का उस्वा (अख़्लाक़ और किरदार) अपनाते हुए दर्मियान सिर से मांग निकालें, टेढ़ी मांग निकालना उस्वा-ए-रसूल ﷺ के ख़िलाफ़ और काफ़िर और मुश्रिकीन की मुशाबहत है इस लिए कोई मुसलमान औरत टेढ़ी मांग ना निकाले ना दाएं से और ना ही बाएं से। हाँ बिना मांग निकाले बालों को दाएं या बाएं झुका ले तो इसमें कोई हरज नहीं है। इसी तरह कंधे पर बाल लटकाने या चोटी बनाकर या बिना चोटी के पीठ पर लटकाने में भी कोई हरज नहीं है। इसमें भी कोई हरज नहीं है कि सिर के पीछे बालों को जमा कर के ऊपरी हिस्से पर रिबिन बांध ले और बालों के नीचे हिस्से को पीठ की तरफ़ छोड़ दे।

बालों की चोटी और वज़ू और ग़ुस्ल:

औरतों के लिए बालों की चोटी बनाने में कोई हरज नहीं है, रसूल ﷺ के ज़माने में औरतें बालों में चोटी बनाती थीं, उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है उन्होंने बयान किया:

قُلْتُ: يا رَسولَ اللهِ، إنِّي امْرَأَةٌ أشُدُّ ضَفْرَ رَأْسِي فأنْقُضُهُ لِغُسْلِ الجَنَابَةِ؟ قالَ: لا. إنَّما يَكْفِيكِ أنْ تَحْثِي علَى رَأْسِكِ ثَلَاثَ حَثَيَاتٍ ثُمَّ تُفِيضِينَ عَلَيْكِ المَاءَ فَتَطْهُرِينَ (صحيح مسلم:330)

तर्जुमा: मैंने अर्ज़ की: ऐ अल्लाह के रसूल! मैं एक ऐसी औरत हूँ कि कस कर सिर के बालों की चोटी बनाती हूँ तो क्या गुस्ल-ए-जनाबत के लिए इसे खोल दूं? आपने फ़रमाया: नहीं, तुम्हें बस इतना ही काफ़ी है कि अपने सिर पर 3 चुल्लू पानी डालो, फिर अपने आप पर पानी बहा लो, तुम पाक हो जाओगी।

इस हदीस से मालूम हुआ कि औरतों के लिए चोटी बनाने में कोई हरज नहीं है औरत चोटी की हालत में नमाज़ की अदाईगी भी कर सकती है। नमाज़ के लिए वज़ू करते वक्त चोटी खोलने की भी ज़रूरत नहीं है, बाल के ऊपर से मसह कर ले और गुस्ल-ए-जनाबत में भी चोटी खोलने की ज़रूरत नहीं है जैसा कि इसी हदीस से वाज़ेह है, गुस्ल-ए-जनाबत में सिर पर 3 लप पानी डाल लेना ही काफ़ी है। हैज़ और निफ़ास के गुस्ल में चोटी खोलने के मुताल्लिक़ इख़्तिलाफ़ पाया गया है, कुछ ने खोलना वाजिब क़रार दिया है। उनकी दलील वह हदीस है जिसमें दौरे हज्ज हैज़ से पाक होने पर आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा को नबी ﷺ ने हुक्म दिया था:

انقُضي شَعرَك واغتسِلي قالَ عليٌّ في حديثِه انقُضي رأسَك (صحيح ابن ماجه:530)

तर्जुमा: अपने बाल खोल दो और गुस्ल करो। अली बिन मुहम्मद की रिवायत में है: "अपना सिर खोल दो"

जिन्होंने ग़ैर वाजिब कहा है वह इसका यह जवाब देते हैं कि यह हज्ज के साथ ख़ास है और कुछ दूसरी रिवायत मसलन तबरी में सराहत के साथ मज़कूर है कि हैज़ सर पर पानी बहाना है चोटी नहीं खोलनी है, इस रिवायत को शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने ज़ईफ़ कहा है। (अस-सिलसिलतु ज़ईफ़ा: 937)

इस मसले में दलीलों की रोशनी में क़वी मस्लक यह है कि गुस्ल-ए-जनाबत, गुस्ल-ए-हैज़ और गुस्ल-ए-निफ़ास में चोटी खोलना ज़रूरी नहीं है, 3 लप पानी डालना ही काफ़ी है, हालांकि सिर पर पानी उंडेलते वक्त इस बात का ख़याल रखा जाए कि बालों की जड़ों में पानी पहुंच जाए।

यहाँ एक मसला औरत के गुस्ल-ए-जनाज़ा से मुताल्लिक़ भी जान लिया जाए कि अगर औरत की वफ़ात हो जाए और उसे गुस्ल दिया जाए तो उसके बालों की 3 चोटी बनाकर पीठ के पीछे डाल दी जाए। उम्मे अतीया रज़ियल्लाहु अन्हा नबी ﷺ की एक सहाबज़ादी की वफ़ात

पर उनके ग़ुस्ल से मुताल्लिक़ एक हदीस बयान करती हैं इस हदीस के आख़िरी अल्फाज़ हैं:

فضفرنا شعرها ثلاثة قرون والقيناها خلفها.

तर्जुमा: हमने उनके बाल गूंथ कर 3 चोटियाँ बनाई और उन्हें पीठ के पीछे डाल दिया।

वुज़ू में औरत के सर का मसह:

औरत और मर्द के मसह में कोई फ़र्क़ नहीं है, अल्लाह का फ़रमान है:

وامسحوا برءوسكم.

तर्जुमा: अपने सिर का मसह करो।

यह फ़रमान मर्द और औरत दोनों को शामिल है। नबी ﷺ ने हमें मसह का तरीक़ा यह बताया कि तर हाथों को सिर के अगले हिस्से पर फेरते हुए गुद्दी तक ले जाएं और फिर वापिस आगे की तरफ़ ले आएं और गवाह की अंगुली से कान का अंदरूनी हिस्सा और अंगूठे से बाहरी हिस्सा मसह करें। औरत को अपना बाल नग्न करने की ज़रूरत नहीं है और न ही चोटी हो तो खोलने की ज़रूरत है। दुपट्टे

के अंदर से बालों पर हाथ फेर ले और अजनबी मर्द आस-पास न हो तो सिर नग्न होने और बाल बिखेरने में कोई हरज नहीं है। औरत वुज़ू करते हुए अपने दुपट्टे पर मसह कर सकती है जब ठंडक की वजह से या बिना ठंडक के सिर को दुपट्टे से मज़बूती के साथ बांध रखा हो क्योंकि इसके उतारने में मुष्किल और परेशानी है। इसी तरह अगर सिर पर मेहंदी का लेप लगाया हो तो उस पर भी मसह कर सकती है।

जूड़ें बनाना और जूड़ें में नमाज़ पढ़ना:

सही मुस्लिम (2128) में जहन्नमी औरतों की एक सिफ़त बतलाई गई है:

رؤوسهن كأسنمة البخت المائلة.

यानी उनके सिर बुख़्ती ऊंट की कोहान की तरह एक तरफ़ झुके हुए होंगे। मुहद्दिसीन ने इसके कई मानी बयान किए हैं, उनमें से एक मानी इमाम नववी ने काज़ी की तरफ़ मंसूब कर के यह भी बयान किया है कि बाल इकठ्ठा कर के दर्मियान सिर के ऊपर जमा कर लेना जो बुख़्ती ऊंट की कोहनी की तरह मालूम होता है, इस तरह

मुसलमान औरत के बालों का जोड़ना जाइज़ नहीं है। अगर किसी औरत ने इस हालत में नमाज़ पढ़ ली, ब-शर्त-ए-कि बाल ढके हुए थे, तो उसकी नमाज़ सही है, दोहराने की ज़रूरत नहीं है, हालांकि यह अमल न नमाज़ में सही है और न ही नमाज़ के बाहर, लिहाज़ा हमेशा के लिए इस अमल से बाज़ रहे।

औरत का अपने महरमों के सामने खुले सिर आना कैसा है?

औरत अपने महरम के सामने जिस तरह चेहरा खोल सकती है, उसी तरह अपने बाल भी ज़ाहिर कर सकती है, इस लिए अपने महरमों के सामने खुले सिर आने में कोई हरज नहीं है। अल्लाह का फ़रमान है:

وَلَا يُبْدِينَ زِينَتَهُنَّ إِلَّا لِبُعُولَتِهِنَّ أَوْ آبَائِهِنَّ أَوْ آبَاءِ بُعُولَتِهِنَّ أَوْ أَبْنَائِهِنَّ أَوْ أَبْنَاءِ بُعُولَتِهِنَّ أَوْ إِخْوَانِهِنَّ أَوْ بَنِي إِخْوَانِهِنَّ أَوْ بَنِي أَخَوَاتِهِنَّ(النور:31)

तर्जुमा: और अपनी ज़ीनत को किसी के सामने ज़ाहिर ना करें सिवा अपने शौहरों के या अपने वालिद के या अपने ससुर के या अपने लड़कों के या अपने शौहर के लड़कों के या अपने भाइयों के या अपने भतीजों के या अपने भानजों के।

इस आयत की रोशनी में औरत अपने महरमों के सामने अपने हाथ, पैर, सिर, बाल और गर्दन खुला रख सकती है। इस लिए अपने महरमों के सामने खुले सिर या खुले बाल आ सकते हैं। मुस्लिम औरत का काफ़िर के सामने नग्न सिर और नग्न चेहरे आने के सिलसिले में इख़्तिलाफ़ है। शैख़ इब्ने उसैमीन रहमतुल्लाह कहते हैं कि मेरा मत इस दिशा में है कि अगर फ़ितना ना हो तो औरत औरत के बीच फ़र्क़ नहीं है चाहे मुसलमान हो या काफ़िर, लेकिन अगर फ़ितने का ख़ौफ़ हो जैसे वह औरत रिश्तेदार मर्दों के पास औरत का वसफ़ बयान करे तो उस वक्त फ़ितने से बचना ज़रूरी है और इस स्थिति में दूसरी औरत के सामने अपने जिस्म (शरीर) का कोई हिस्सा भी ज़ाहिर ना करे, न पैर, न बाल, चाहे औरत मुसलमान हो या ग़ैर मुसलमान।

(फ़तवा अल मरआ पेज: 172)

नग्न सिर या पतले दुपट्टे में नमाज़:

हमें पहले इस बात को जान लेना चाहिए कि नमाज़ अहम तरीन इबादत है जो रब के सामने अदा की जाती है, इस लिए नमाज़ में औरतों को चाहिए कि सतर का पूरा ख़्याल रखें। इब्न एबी शैबा की रिवायत है जिसे शेख अल्बानी रह. ने सही क़रार दिया है:

قال ابنُ عمرَ إذا صلت المرأةُ فلتصلِّ في ثيابِها كلِّها: الدرعِ والخمارِ والملحفةِ(تمام المنة:162)

तर्जुमा: इब्न उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया: जब औरत नमाज़ पढ़े तो पूरे लिबास में नमाज़ पढ़े, यानी क़मीस, दुपट्टा और क़मीस के ऊपर चादर।

औरत का यह लिबास सलफ़ के यहाँ मा'रूफ है, इस लिए बहालत ए नमाज़ जहाँ औरत को हाथ, पैर और मुकम्मल जिस्म छुपाना है (सिवाय चेहरे और हाथ के, लेकिन अजनबी हो तो चेहरे को भी छुपाना वाजिब है), वही सिर के बालों को भी दुपट्टे से अच्छी तरह ढांकना है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

لا يقبَلُ اللَّهُ صَلاةَ حائضٍ إلَّا بخِمارٍ(صحيح أبي داود:641)

तर्जुमा: अल्लाह हाइज़ा यानी (बालिग़ औरत) की नमाज़ दुपट्टे के बिना क़बूल नहीं फ़रमाता।

इस हदीस को इमाम अबू दाऊद ने "المرأة لا تصلي بغير خمار" के तहत ज़िक्र किया है कि औरत दुपट्टे के बिना नमाज़ नहीं पढ़े। मालूम यह हुआ कि नमाज़ में औरत को अपने सिर को ढांकना है और लिबास भी ऐसा दबीज़ (मोटा) हो कि आज़ा की मुकम्मल सतर-पोशी हो रही

हो, इस लिए नमाज़ हो या ग़ैर नमाज़ औरत का बारीक लिबास पहनना जिससे आज़ा-ए-बदन का ख़द-ओ-ख़ाल (हुलिया) नुमायां हो जायें, जाइज़ नहीं है। नमाज़ में भी ऐसा कोई लिबास न पहनें जिससे हाथ, क़दम, पिंडली, जिस्म का कोई हिस्सा या सिर के बाल नज़र आ रहे हों।

रहा मसला ज़ईफ़ और बीमार औरत का, तो उन्हें भी नमाज़ में सिर को ऐसे दुपट्टे से छुपाना चाहिए जिससे बाल न ज़ाहिर हों। यही हुक्म नौजवान औरत, मरीज़ा, ज़ईफ़ा, और बुज़ुर्ग का भी है। अलबत्ता नमाज़ के बाहर औरत अपने सिर को तन्हाई में या अपने महरमों के सामने खुला रख सकती है। अगर मरीज़ या ज़'ईफ़ इस क़दर शदीद हो कि नमाज़ में हिजाब की मुकम्मल पाबंदी करना न मुमकिन हो और कोई मदद करने वाला भी न हो, तो जिस क़दर हो सके पाबंदी करे, अल्लाह किसी को ताक़त से ज़्यादा मुकल्लफ़ नहीं बनाता।

औरतों के लिए सिर मुँडवाने और बाल कटवाने का हुक्म:

मुसलमान औरतों के लिए सिर के बाल मुकम्मल रखना वाजिब है और बिना ज़रूरत उसे मुँडवाना हराम है। इस तरह औरतों के लिए

सिर के बाल बिना ज़रूरत कटवाना भी जाइज़ नहीं है, चाहे शौहर ही का हुक्म क्यों न हो। रसूल ﷺ के ज़माने में औरतों के बाल पूरे होते थे और छोटे बाल वाली औरतें वस्ल (मेल मिलाप) से काम लेती थीं, तो रसूल ﷺ ने उन पर लानत भेजी।

لعنَ النَّبِيُّ صلَّى اللَّهُ علَيهِ وسلَّمَ الواصلةَ والمستَوصلةَ، والواشمةَ والمستَوشمةَ(صحيح البخاري:5940)

तर्जुमा: नबी ﷺ ने सिर के कुदरती बालों में मस्नुई बाल लगाने वाली और लगवाने वाली और गुथने वाली और गुथवाने वाली पर लानत भेजी है।

तो औरतों के लिए बाल रखना और न कटाना रसूल ﷺ के फ़रमान से साबित है। लिहाज़ा औरतों का बिना ज़रूरत सिर मुँडवाना या बाल कटवाना जाइज़ नहीं है। हज और उमरा में औरत का उँगली के पोर के बराबर बाल कटाने का हुक्म है, और अगर औरत को किसी बीमारी वग़ैरह की वजह से बाल कटाने की ज़रूरत पड़े तो उस स्थिति में जाइज़ होगा।

नबी ﷺ की अज़्वाज-ए-मुतह्हरात के मुताल्लिक़ मुस्लिम शरीफ में है, आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा बयान करती हैं:

وكان أزواجُ النبيِّ صلى الله عليه وسلم يَأْخذْنَ مِن رؤوسِهنَّ حتى تكونَ كالوَفْرَةِ (صحيح مسلم:320)

तर्जुमा: बेशक नबी ﷺ की बीवियाँ अपने सिर के बाल काट लेती थीं यहाँ तक कि कानों तक लंबे हो जाते थे।

इस हदीस की बिना पर कुछ उलमा ने औरतों को बाल कटाने की रुख़्सत दी है, हालांकि यह हदीस अज़्वाज-ए-मुतह्हरात के साथ ही ख़ास है। उन्होंने नबी ﷺ की वफ़ात के बाद ज़ीनत को छोड़ने के तौर पर ऐसा किया था। अगर कोई औरत ज़रूरत से काटना चाहती है तो इसकी इजाज़त है, मगर फ़ैशन के तौर पर या पश्चिमी तहज़ीब की नक़ल के लिए या मर्दों से मुशाबेहत इख़्तियार करने की ग़रज़ से औरत का सिर के बाल कटवाना इन सुरते में हराम ठहरेगा।

कुछ ग़ैर शादीशुदा नौजवान लड़कियों को देखा जाता है कि वे सिर के अगले हिस्से से कुछ बाल काट कर और उसकी लट बना कर चेहरे पर गिरा लेती हैं। इस मात्रा में बाल काटने में कोई क़बाहत नज़र

नहीं आती है, बशर्ते कि फ़ाहिशा की मुशाबेहत न हो, मगर ग़ैर शादीशुदा नौजवान लड़की का ऐसा करना फ़ितना का बाइस (कारण) है। ऐसी लड़कियाँ आमतौर पर पर्दा भी नहीं करतीं, उनके सरपरस्तों को चाहिए कि इस क़िस्म के बाल रखने से मना करें, इस वक्त वह किस के लिए ज़ीनत कर रही है? शादी हो जाए और शौहर के वास्ते करे तो अलग बात है।

नौ-मौलूद बच्ची का सिर मुँड़वाने का हुक्म:

इस मसले में अहले इल्म के दरमियाँन इख़तिलाफ़ है कि नौ-मौलूद बच्ची का 7वे दिन लड़के की तरह बाल मुँडवाया जाएगा या नहीं? कुछ हनाबिला बच्चियों के हक़ में हल्क़ (मुँडाना) से मना करते हैं जबकि इमाम मालिक और इमाम शाफ़'ई के यहाँ लड़कों की तरह लड़कियों का भी बाल मुँडवाया जाएगा। मना और अदम मना अपने-अपने अंदाज़ इस्तिदलाल पर मुनहसिर है। जो मना करते हैं उनका इस्तिदलाल यह है कि हदीस में ख़ास तौर पर बच्चियों के बाल मुँडवाने का ज़िक्र नहीं है, बल्कि ग़ुलाम का ज़िक्र है जो बच्चा (मुज़क्कर) पर दलालत करता है और बच्चियों (मुअन्नस) के मुताल्लिक़ बाल मुँडवाने की मुमान'अत वारिद है। अदम मना वाले का इस्तिदलाल है कि नस आम है इसमें जिस तरह ग़ुलाम दाख़िल है, इसी तरह जारिया (लड़की) भी दाख़िल

है। दला'इल की रोशनी में नौ-मौलूद बच्ची का 7वे दिन जिस तरह नाम रखना और अक़ीक़ा करना मस्नून है, इसी तरह बाल मुँडवाना और इसके बराबर चांदी सदक़ा करना भी मस्नून है। इस पर विस्तृत मज़मून "नौऔ-मौलूद बच्ची का 7वे दिन बाल मुँड़वाना" के तहत मेरे ब्लॉग में मुताल'अ करें।

सफ़ेद बालों को उखाड़ने की मुमान'अत और उसे बदलने का हुक्म:

(1) यह बात मालूम होना चाहिए कि सफ़ेद बालों को उखाड़ने से मना किया गया है और औरत भी इस मुमान'अत में शामिल

है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

لا تنتِفوا الشَّيبَ ما من مسلِمٍ يشيبُ شيبةً في الإسلامِ إلَّا كانت لَهُ نورًا يومَ القيامةِ إلَّا كتبَ اللَّهُ لَهُ بِها حسنةً وحطَّ عنهُ بِها خطيئةً(صحيح أبي داود:4202)

तर्जुमा: सफ़ेद बाल न उखाड़ो, इस लिए कि जिस मुसलमान के कोई बाल हालत-ए-इस्लाम में सफ़ेद हो गए हों, तो वह उसके लिए क़यामत के दिन नूर होगा और उसके बदले अल्लाह उसके लिए एक नेकी लिखेगा और एक गुनाह मिटा देगा।

(2) यह मालूम होना चाहिए कि औरत और मर्द के लिए मस्नून है कि जब बालों में सफ़ेदी आ जाए, तो उन्हें काले रंग के अलावा दूसरे किसी भी रंग से बदल दें। जाबिर बिन अब्दुल्ला रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि फ़तह मक्का के रोज (अबू बकर रज़ियल्लाहु अन्हु के वालिद) अबू क़ुहाफ़ा को लाया गया, तो उनके सिर और दाढ़ी के बाल सुग़ामा बुटी की तरह सफ़ेद थे। तो रसूल ﷺ ने फ़रमाया:

غَيِّروا هذا بشيءٍ ، واجتَنِبوا السَّوادَ(صحيح مسلم:2102)

तर्जुमा: उन्हें किसी रंग से बदल दो और स्याही से बचो।

बुख़ारी शरीफ़ में वारिद है:

إن اليهودَ والنصارى لا يصبُغون ، فخالفوهم(صحيح البخاري:3462)

तर्जुमा: बेशक यहूदी और नसरानी अपने बाल नहीं रंगते हैं, तुम उनकी मुख़ालिफ़त करो।

इन हदीसों से मालूम हुआ कि हमें (मर्द और औरत) अपने सफ़ेद बालों में ख़िज़ाब (मेहंदी) लगाना चाहिए और काले ख़िज़ाब से मना किया गया है।

(3) यह मालूम होना चाहिए कि काले रंग के अलावा कोई भी जैसे मेंहदी, ज़ाफ़रान यहाँ तक कि काला मिक्स (यानी काले रंग में दूसरा रंग मिला कर अलग रंग तैयार करना) रंग ख़िज़ाब के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं। ख़िज़ाब में सिर्फ़ ख़ालिस काला रंग मना है।

(4) यह तरीक़ा भी सही है कि जितने बाल सफ़ेद हों उतने ही रंग किए जाएं या फिर पूरा सिर रंग लिया जाए, यानी कुछ हिस्से को रंगने और कुछ को छोड़ने में कोई हरज नही है। हालांकि इस अमल में फ़ाहिशा की नक़ल से बचना चाहिए।

(5) आजकल औरतें बाल रंगने में ग़ैरों की नक़ल करती हैं। उनमें एक यह रिवाज पाया गया है कि एक ही वक्त में सिर के बाल को मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) रंगों से रंगा जाता है। दरअसल, यह फ़ैशन और फ़ाहिशा औरत की मुशाबेहत इख़्तियार करना है। इससे मुसलमान औरतों को बचना चाहिए। हाँ, अगर मुख़्तलिफ़ रंगों के किसी तरीक़े इस्तेमाल में फ़ाहिशा औरत की मशाबेहत न पाई जाती हो, तो उस तरीक़े में कोई हरज नहीं है, जैसे मुख़्तलिफ़ रंगों को मिला कर एक रंग तैयार कर के लगाना।

(6) कुछ औरतें पूछती हैं कि हमने अनजाने में बहुत सारी नमाज़ें काले रंग में पढ़ी हैं, उन नमाज़ों का क्या होगा? इसका जवाब यह है कि खिजाब अपनी जगह एक दूसरा अमल है, काले रंग में पढ़ी गई नमाज़ अपनी जगह सही है। उसे लौटाने की ज़रूरत नहीं है, हालांकि काले रंग लगाने वाली औरत को आइंदा के लिए सच्ची तौबा करनी चाहिए।

बालों को सीधा करना या घुंघराले बनाना:

बहुत बार कुछ औरतों के बाल स्वाभाविक रूप से घुंघराले होते हैं। ऐसे में बालों को सीधा करना एक ज़रूरत है, उसमें कोई हर्ज नहीं है। अलबत्ता बिना ज़रूरत ज़ीनत के मक़सद से सीधी बालों को घुंघराले बनाना या शौहर के वास्ते हो तो कोई हरज नहीं है, लेकिन लोगों को मोहित करने और ग़ैरों की मुशाबेहत इख़्तियार करने की वजह से हो तो जाइज़ नहीं है।

बालों में बाल जोड़ना या विग पहनना या बालों की पैवंद-कारी (ट्रांसप्लांटेशन) करना:

क़ुदरती बालों में मस्नुई बाल जोड़ना मना है, बल्कि ऐसा करने वाली मल'ऊन औरत है। नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

لَعَنَ اللَّهُ الواصِلَةَ والمُسْتَوْصِلَةَ، والواشِمَةَ والمُسْتَوْشِمَةَ(صحيح البخاري:5937)

तर्जुमा: अल्लाह ने बनावटी बाल जोड़ने वालियों पर जुड़वाने वालियों पर गोदने वालियों पर और गुदवाने वालियों पर लानत भेजीं है।'

इस हदीस की रोशनी में न तो क़ुदरती बालों में मस्नुई बाल जोड़ सकते हैं और न ही मस्नुई बालों की विग पहन सकते हैं। अगर किसी औरत का सिर गंजा हो जाए तो उसके लिए बालों की पैंचवर्क जाइज़ है और ऐब छुपाने के लिए विग इस्तेमाल भी जाइज़ है। बाल होते हुए शौक़िया विग पहनना या बाल जोड़ना मना है। और अगर किसी औरत ने मजबूरी में विग पहन रखी हो, तो शैख़ मुहम्मद बिन सालेह मुनज्जिद ने वुज़ू के वक्त उस पर मसाह करना जाइज़ नहीं कहा है, यानी उसे उतारना होगा।

टूटे बालों को दफ़न करना:

औरतें अक्सर सवाल करती हैं कि क्या बाल जो ज़मीन पर गिर जाएं उन्हें दफ़न कर देना चाहिए ताकि लोग उन्हें ग़लत मक़सद के लिए इस्तेमाल न करें?

इसका जवाब यह है कि बालों को दफ़न करने से मुताल्लिक़ कोई नस मौजूद नहीं है, हालांकि अहले इल्म उसे दफ़न करने को अच्छा ख़्याल करते हैं। अगर जादू-टोना का अंदेशा हो, जैसा कि आजकल इसका बड़ा रिवाज है, तो फिर किसी महफ़ूज़ जगह दफ़न कर देना चाहिए ताकि अजनबी मर्दों की नज़र न पड़े। इस मक़सद से भी बाल ज़मीन में छुपाए जा सकते हैं। अक्सर औरतें तौहमत का शिकार होती हैं और हर बात को जिन्नाती असरात से मंसूब करती हैं। मैं उन औरतों को पाबंदी से नमाज़ अदा करने, कसरत से इस्तग़फार पढ़ने और तहारत और अज़कार पर हमेशा की तरह रहने की सलाह देता हूँ। अल्लाह की तौफ़ीक़ से न तो किसी इंसान का जादू आप पर असर करेगा और न ही कोई शैतान आपको नुक़सान पहुँचा सकता है।

दुल्हन के बालों की सजावट:

इसमें एक मसला यह है कि शादीशुदा या ग़ैर शादीशुदा किसी मौक़े पर अजनबी मर्द से बालों की सजावट और ज़ीनत करना हराम है। औरतों वाले सैलून में या घर पर औरत के ज़रिए शादी के मौक़े पर

बालों को दिलकश बनाने में कोई मुज़ाइक़ा नहीं है। बचना उन उमूर से है जिनकी मुमान'अत आई है और जिन ममनूआ उमूर का ज़िक्र ऊपर किया गया। शादी के मौक़े पर दुल्हन के बालों की सजावट करें, लेकिन फ़िज़ूलख़र्ची और काफ़िरा और फ़ाहिशा औरत की मुशाबेहत से बचें।

बीट्यूल पार्लर में नौकरी करने का शरई हुक्म:

बीट्यूल पार्लर में ग़ैर शरई उमूर से बचना बहुत मुश्किल है, जैसे आइब्रो तराशना, सिर के बाल छोटा करना, मस्नुई बाल जोड़ना, बिना ज़रूरत औरतों की मक़ामात-ए-सतर को देखना सिर्फ़ ज़ीनत के लिए, किसी औरत का हराम का काम गाना बजाना या शौहर के अलावा दूसरे अजनबी मर्दों के लिए सिंगार करना वग़ैरह। उनके अलावा कहीं पर मर्दों से इख़्तिलात है, तो किसी ख़ातून को उस नौकरी के लिए तन्हा घर से बाहर आमद-ओ-रफ़्त करनी पड़ती है। इन तमाम मफ़ासिद और नाजाइज़ कामों से बचकर और शरई हदूद में रहकर अगर कोई औरत ब्यूटी पार्लर की नौकरी कर सकती है, तो फिर कोई हरज नहीं है। लेकिन अगर ग़ैर शरई उमूर से बच नहीं सकती है, तो इस सूरत में नौकरी करना जाइज़ नहीं होगा। एक लफ़्ज़ में कहें तो,

ब्यूटी सिंगार का काम फि नफ्सिहि जायज़ है और उसका पेशा इख़्तियार कर के उस पर उन्नत हासिल करना भी जाइज़ है, लेकिन उस पेशे में नाजाइज़ काम करना पड़े तो वह कमाई जाइज़ नहीं है।

लेडी बाल के मुताल्लिक़ ग़लत फ़हमियाँ:

अवाम में लेडीज़ बालों के मुताल्लिक़ कुछ ग़लत फ़हमियाँ पाई जाती हैं, उन्हें इन मक़सद से ज़िक्र किया जाता है कि इन बातों की कोई हक़ीक़त नहीं है:

☆औरतों के लंबे बाल क़ियामत में पर्दा

☆ औरतों के लंबे बाल क़यामत में पर्दे की वजह बनेंगे।

☆ अज़ान के वक्त सिर पर दुपट्टा रखना ज़रूरी है।

☆ यह आम बात है कि टूटी हुई कंघी से कंघा करने पर घर में ग़रीबी आती है।

☆ रोज़े की हालत में बालों में मेंहदी लगाने से रोज़ा टूट जाता है।

यह सब ग़लत बातें और अफ़वाहें हैं, इनकी कोई हक़ीक़त नहीं है।

===========

[79].रमज़ान का इस्तक़बाल कैसे करे?

रमज़ान अल मुबारक की आमद-आमद है, हर तरफ़ मोमिन के अंदर इसके तईं (लिए) इज़हार मसर्रत है। यह वह मुबारक महीना है जिसका इंतज़ार सभी मोमिन दिन-रात करते हैं क्योंकि यह एक नेकी, बरकत, माफ़ी, इनायत, तौफ़ीक, इबादत, ज़ोहद, तक़वा, मार्फ़त, ख़ाकसारी, मुसावात, सद्क़ा व ख़ैरात, रज़ा-ए-इलाही, जन्नत की बशारत, जहन्नुम से गुलू-ख़लासी (छुटकारे) का महीना है। इस महीने में मोमिन के अंदर फ़िक्र आख़िरत के ज़रिये रब से मुलाक़ात की ख़्वाहिश बेदार होती है। सुब्हानल्लाह बहुत ही पाकीज़ा और मुहतरम यह महीना है। यह रब की तरफ़ से उस पर ईमान लाने वालों के लिए बहुत बड़ा तोहफ़ा है। अब हमारा यह फ़र्ज़ बनता है कि इस माह अज़ीम अल-शान का कैसे इस्तक़बाल करें और किस 'उम्दगी से इस महीने के फ़ुयूज़-ओ-बरकात (फ़ायदों और बरकतो) से अपने दामन को नेकीयो के मौती भर लें?

रमज़ान का इस्तक़बाल कैसे करे?

अपने ज़हन (दिमाग़) में ज़रा तसव्वुर पैदा करें कि जब आपके घर किसी आला (उच्च) मेहमान की आमद होती है तो आप क्या करते हैं? आपका जवाब होगा। हम बहुत सारी तैयारियां करते

हैं। घर को ख़ूब सजाते हैं, ख़ुद भी उनके लिए ज़ीनत इख़्तियार (अधिकृत) करते हैं, पूरे घर में ख़ुशी का माहौल होता है, बच्चों के होंठ पर नग़मे, चेहरे पर ख़ुशी के आसार होते हैं। मेहमान के ख़ातिर-तवाज़ो (hospitality) के लिए अनगिनत पुर-तकल्लुफ़ (ceremonious) सामान तैयार किये जाते हैं। जब एक मेहमान के लिए इतनी तैयारी तो मेहमानों में सबसे आला और रब की तरफ़ से भेजा हुआ मेहमान हो तो उसकी तैयारी किस क़दर पुरज़ोर होनी चाहिए? आइये इस तैयारी से मुताल्लिक़ (संबंधित) आपके लिए एक मुख़्तसर ख़ाका पेश करता हूँ।

(1) अज़मत का एहसास

रमज़ान का महीना बेहद अज़ीम है, इसकी अज़मत का एहसास (महत्त्व का अनुभव) और उसकी क़द्र-ओ-मंज़िलत (महत्वपूर्णता) का लिहाज़ रमजान से पहले ही दिमाग़ में जमा लिया जाए ताकि जब रमज़ान में दाख़िल (प्रवेश) हो, तो ग़फ़लत, सुस्ती, उदासी, नाक़द्री, ना शुक्री, एहसान फ़रामोश, और रोज़ा और नमाज़ से ब रग़बती के औसाफ़ (लक्षण) रज़ीला न पैदा हों।

यह इतनी अज़मत व क़द्र वाला महीना है कि इसकी एक रात का नाम ही क़द्र-ओ-मंज़िलत है

إِنَّا أَنْزَلْنَاهُ فِي لَيْلَةِ الْقَدْرِ (1) وَمَا أَدْرَاكَ مَا لَيْلَةُ الْقَدْرِ (2) لَيْلَةُ الْقَدْرِ خَيْرٌ مِنْ أَلْفِ شَهْرٍ (3) تَنَزَّلُ الْمَلَائِكَةُ وَالرُّوحُ فِيهَا بِإِذْنِ رَبِّهِمْ مِنْ كُلِّ أَمْرٍ (4) سَلَامٌ هِيَ حَتَّى مَطْلَعِ الْفَجْرِ (5) (سورة القدر)

तर्जुमा : बेशक हमने क़ुरआन को लैलतुल क़द्र यानी बड़ी इज़्ज़त और बरकत वाली रात में नाज़िल किया है। और आपको क्या मालूम कि लैलतुल क़द्र क्या है? लैलतुल क़द्र हज़ार महीनों से बेहतर है। इस रात में फ़रिश्ते और ज़िब्रील रूहुल अमीन अपने रब के हुक्म से हर हुक्म लेकर आते हैं। वह रात सलामती वाली होती है तुलू फ़ज्र तक।

आप यह ना समझें कि रमज़ान की एक रात ही क़द्र की रात है बल्कि उसका हर दिन और हर रात क़द्र और मंज़िलत का हामिल है।

(2) नेमत का एहसास

रमज़ान जहाँ रब का मेहमान है वहीं उसकी तरफ़ से एक अज़ीम (अद्‌वितीय) नेमत भी है। आम तौर पर इंसान को इस नेमत का

एहसास कम ही होता है जो हासिल हो जाती है लेकिन जो नहीं मिल पाती उसके लिए उसे तड़पता रहता है। एक बीना को आँख की नेमत का एहसास कम होता है इसलिए उसका इस्तेमाल फिल्म बेनी और बुराई के दृश्यों में करता है। अगर उसे यह एहसास हो कि यह रब की बहुत बड़ी नेमत है तो उसकी क़द्र करनी चाहिए तो कभी अपनी आँख से बुराई का इदराक (तसव्वुर) न करें। बीना की बनिस्बत (बजाय) अंधे को आँख की

नेमत का एहसास ज़्यादा होता है। यह फ़र्क़ ईमान में कमी का सबब है। जिसका ईमान मज़बूत होगा वह हर नेमत की क़द्र करेगा। ईमान का तक़ाज़ा है कि हम रमज़ान जैसे मुक़द्दस महीने की नेमत का एहसास करें। और इस एहसास का तक़ाज़ा है कि इस नेमत पे रब की शुक्रगुज़ारी हो जैसा कि अल्लाह का फ़रमान है: وَإِذْ تَأَذَّنَ رَبُّكُمْ لَئِن شَكَرْتُمْ لَأَزِيدَنَّكُمْ ۖ وَلَئِن كَفَرْتُمْ إِنَّ عَذَابِي لَشَدِيدٌ (ابراهيم : 7)

तर्जुमा : और जब तुम्हारे परवरदिगार (पालनेवाला) ने तुम्हें बता दिया कि अगर तुम शुक्रगुज़ारी करोगे, तो बेशक मैं तुम्हें ज़्यादा दूंगा और अगर तुम नाशुक्री करोगे तो यक़ीनन मेरा अज़ाब बहुत सख़्त है।

अल्लाह का फ़रमान है: أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ بَدَّلُوا نِعْمَتَ اللَّهِ كُفْرًا وَأَحَلُّوا قَوْمَهُمْ دَارَ الْبَوَارِ، جَهَنَّمَ يَصْلَوْنَهَا وَبِئْسَ الْقَرَارُ {ابراہیم :2928}

तर्जुमा : "क्या तुमने नहीं देखा उनकी तरफ़ जो अल्लाह त'आला की नेमत का बदले नाशुक्री की और अपनी क़ौम को हलाकत के घर में ला उतारा, यानी जहन्नुम में जिसमें वे सब जाएँगे जो सबसे बुरी जगह है।"

नेमत में रमज़ान जैसा महीना नसीब होने की भी नेमत है और सेहत व तनदरुस्ती इस पर मुस्तज़ाद है। इन नेमतों का एहसास क्यों न करें, कि इन नेमतों के बदले हमें हर क़िस्म की नेकी की तौफ़ीक मिलती है। रोज़ा, नमाज़, सद्क़ा, ख़ैरात, दुआ, ज़िक्र, इनाबत इला अल्लाह, तौबा, तिलावत, माग़फ़िरत, रहमत वग़ैरा इन नेमतों की देन है।

(3) इनाबत इलल्लाह

"इनाबत इलल्लाह" अज़मत और नेमत के अहसास में अधिक ताक़त पैदा करेगी। अल्लाह की ओर लौटना सिर्फ़ रमज़ान के लिए नहीं है बल्कि मोमिन की ज़िंदगी हमेशा अल्लाह के हवाले और उसकी मर्ज़ी के हिसाब से गुज़रनी चाहिए। यहां सिर्फ़ बतौर तज़किरे के तौर पर

याद दिया जा रहा है कि कहीं ऐसा न हो कि बंदा रब से दूर होकर रोज़े के नाम पर सिर्फ़ भूख और प्यास सहे। अगर ऐसा है तो रोज़े का कोई फ़ायदा नहीं। पहले रब की ओर (तरफ़) लौटें, उससे ताल्लुक़ जोड़ें और उसे राज़ी करें, फिर हमारी सारी नेकी क़बूल होगी।

"इनाबत इलल्लाह" से मेरी मुराद, हम रब पर सही तौर से ईमान लाएं, ईमान बिल्लाह को मज़बूत करें, इबादत को अल्लाह के लिए ख़ालिस करें, रब पर मुकम्मल ए'तिमाद (भरोसा) करें।

जब हमने अपने दिल में मेहमान की अज़मत को बहाल कर ली, उस अज़ीम नेमत क़द्र व मंज़िलत का भी एहसास कर लिया तो अब हमारा यह फ़रीज़ा बनता है कि दुनिया से रूख़ मोड़ के अल्लाह की ओर (तरफ़) लौट जाएँ। "इनाबत इल्लल्लाह" महानता और नेमत के अनुभव में और शक्ति पैदा करेगा। अल्लाह की ओर लौटना सिर्फ रमज़ान के लिए नहीं है बल्कि मुमिन की ज़िंदगी हमेशा अल्लाह के हुक्म के साथ और उसके मर्ज़ी के हिसाब से गुज़रनी चाहिए। यहाँ सिर्फ संदेश के रूप में याद दिया जा रहा है कि कहीं ऐसा न हो कि इंसान रब से दूर होकर रोज़े के नाम पर सिर्फ भूख और प्यास सहे। अगर ऐसा है तो रोज़े का कोई फायदा नहीं है। पहले रब की ओर लौटें, उससे ताल्लुक जोड़ें और उसको राजी करें, फिर हमारी सारी

नेकियाँ स्वीकार होंगी। "इनाबत इला अल्लाह" से मेरा मतलब है, हमें रब पर सही तरह ईमान लाना, अल्लाह के ईमान को मज़बूत करना, इबादत को अल्लाह के लिए ख़ालिस करना, रब पर पूरी भरोसा करना।

अल्लाह को सारे जहां का हाकिम मानें, ख़ुद को उस का फ़कीर और मुहताज जानें, किसी ग़रीब व मिस्कीन को हक़ारत की नज़र से न देखें, नादारों की इ'आनत (मदद) करें, बीमारी व मुसीबत में उसी की तरफ़ रुजू करें। ये सारी बातें "इनाबत इल्लल्लाह" में शामिल हैं। बहुत से लोग हैं जो नमाज़ भी पढ़ते हैं, रोज़ा भी रखते हैं, लम्बे लम्बे क़ियाम-उल-लैल करते हैं मगर ग़ैरुल्लाह को पुकारते हैं, अल्लाह को छोड़ को औरों को मुश्किल कुशा समझते हैं। बीमारी और मुसीबत में मुर्दों से इस्तिग़ासा (फ़रियाद) करते हैं। इन लोगों का रोज़ा कैसे क़बूल होगा? गोया ऐसे अक़ीदे वालों का मुकम्मल रमज़ान और उसकी नेकियाँ ज़ाए हो गईं। अल्लाह तआला का फ़रमान ला-रैब है।

وَلَقَدْ أُوحِيَ إِلَيْكَ وَإِلَى الَّذِينَ مِن قَبْلِكَ لَئِنْ أَشْرَكْتَ لَيَحْبَطَنَّ عَمَلُكَ وَلَتَكُونَنَّ مِنَ الْخَاسِرِينَ

(الزمر:65)

तर्जुमा : यक़ीनन तेरी तरफ़ भी और तुझ से पहले (के तमाम नबीयो) की तरफ़ भी वहय की गई है कि अगर तूने शिर्क किया तो बिलाशुबाह

तेरा अमल ज़ाए हो जायेगा और बिल-यक़ीन तू ज़ियाकारो मे से हो जायेगा।

इसलिए इस बात को अच्छी तरह ज़हन-नशीन कर ले।

(4) पेश क़दमी - इसके दो पहलू है

(I) मुनकर से इज्तिनाब

(II) मा'रूफ़ की रग़बत

(I) मुनकर से इज्तिनाब : रमज़ान के इस्तक़बाल (आगमन) में एक अहम पहलू यह है कि हम पहले अपने पिछले गुनाहों से सच्ची तौबा करें और आगे गुनाह न करने का मुसम्मम (मज़बूत) अज़्म कर लें। देखा जाता है लोग एक तरफ़ नेकी करते हैं तो दूसरी तरफ़ बुराई करते हैं। इस तरह आमाल का ज़ख़ीरा नहीं बन पाता बल्कि बुराई के समंदर में हमारी नेकियाँ डूब जाती हैं। वैसे भी हमारे पास नेकी की कमी है वो भी ज़ाए हो जाए तो नेकी करने का फ़ायदा क्या? इसलिए नेकी को अगर बचाना चाहते हैं और रमज़ान उल मुबारक की बरकतें, रहमतें, नेमतें, बख़्शिशो और नेकियाँ को बचाना चाहते हैं तो बुराई से पूरी तरह से इज्तिनाब करना पड़ेगा।

अल्लाह तआला का फ़रमान है:

قُلْ أَنْفِقُوا طَوْعًا أَوْ كَرْهًا لَنْ يُتَقَبَّلَ مِنْكُمْ إِنَّكُمْ كُنْتُمْ قَوْمًا فَاسِقِينَ (التوبة:53)

तर्जुमा: कह दीजिए कि तुम ख़ुशी या नाख़ुशी किसी भी तरह से ख़र्च करो, वह कभी भी क़बूल (स्वीकार) नहीं किया जाएगा, यक़ीनन तुम फ़ासिक़ लोग हो।

इस आयत से पता चलता है कि अल्लाह तआला फ़िस्क़ और फ़ुजूर और नापसंदीदगी के कारण ख़र्च करने की वजह से सदक़े को स्वीकार नहीं करता।

और हदीस में है सहाबा बयान करते हैं:

"كَانَ مَعَ بُرَيْدَةَ فِي يَوْمٍ ذِي غَيْمٍ، فَقَالَ: بَكِّرُوا بِالصَّلَاةِ، فَإِنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: مَنْ تَرَكَ صَلَاةَ الْعَصْرِ حَبِطَ عَمَلُهُ (صَحِيحُ الْبُخَارِيِّ:594)"

तर्जुमा : "कि हम लोग बुरैदा रज़ियल्लाहु अन्हु के साथ किसी ग़ज़वा में बारिश वाले दिन थे तो उन्होंने कहा कि अस्र की नमाज़ जल्दी

पढ़ो, इसलिए कि नबी ﷺ ने फ़रमाया है: जो शख़्स अस्र की नमाज छोड़ दे तो उसका (नेक) काम बेकार हो जाता है।"

"जो आदमी इबादत भी करे और गुनाह का काम भी करे तो उसमें कोई शक नहीं कि उसका नेक काम मर्दूद है।"

"إِنَّ الصَّلَاةَ تَنْهَىٰ عَنِ الْفَحْشَاءِ وَالْمُنكَرِ" (العنكبوت :45)

"इसमें कोई शक नहीं कि नमाज़ बेहयाई और बुराई के काम से रोकती है तो जो नमाज़ी या रोज़ा बेहयाई से नहीं रोके वह अल्लाह के यहां क़ाबिल रद्द है।"

(II) मा'रूफ़ की रग़बत

रमज़ान भलाई कमाने के वास्ते है, अल्लाह तआला मोमिनों को मुत'अद्दिद (कई) तरीक़े से इस महीने में भलाई से नवाज़ता है, हमें इन भलाईयों के हासिल की ख़ातिर रमज़ान से पहले ही कमरबस्ता हो जाना चाहिए और मवाक़े हसनात से मुस्तफ़ीद होने के लिए ब-रज़ा-ओ-रग़्बत (अपनी ख़ुशी से) एक ख़ाका तैयार करना चाहिए ताकि हर क़िस्म की भलाईयां समेट सकें। समझ कर क़ुरआन पढ़ने का

एहतिमाम (कम अज़ कम एक ख़त्म), पंच वक़्ती नमाज़ों के अलावा नफ़्ली इबादात, सदक़ा और ख़ैरात, ज़िक्र-व-अज़कार, दुआ और मुनाजात, तलब अफ़्व और दुर्गुज़र, क़ियाम उल लैल का ख़ास ख़याल, रोज़े के मसाइल की मा'रिफ़त बशमूल रमज़ान के मुस्तहब आमाल, दरूस और बयानात में शिरकत, आमाल सालिहा पे महनत और मुश्किल, और ज़ोहद (दुनियावी चीज़ो से इज्तिनाब) और तक़्वा से मुसल्लह होने का मुकम्मल ख़ाका तर्तीब दें और उस खाके के मुताबिक़ रमज़ान अल मुबारक का रूहानी और मुक़द्दस महीना गुज़ारें।

रमज़ान में हर चीज़ का सवाब दो गुना होता है और रोज़े की हालत में कारसवाब करना मज़ीद इज़ाफ़ा हसनात का बाईस है, इस लिए इस मौसम में मामूली नेकी भी गिराँ-बहा (precious) है ख़्वाह मिस्वाक की सुन्नत ही क्यों न हो। हर नमाज़ के लिए मिस्वाक करना, अज़ान का इन्तज़ार करना बल्कि पहले से मस्जिद में हाज़िर रहना, तरावीह में पेश पेश रहना, नेकी की तरफ़ दूसरों को दावत देना, दुरूस और मुहाज़रात का एहतिमाम करना, मुंकिरात के ख़िलाफ़ मुहिम जुई करना और सालेह मुआशिरा की तश्क़ील के लिए जद्दोजहद करना सभी हमारे ख़ाके का हिस्सा हों।

(5) बेहतर तब्दीली

इस्तक़बाल रमज़ान के लिए अपने आप को पूरी तैयार करें, नेकी का जज़्बा बहुत ज़्यादा हो और अपने अंदर अच्छाई के तईं अभी से ही बदलाव नज़र आए। पहले से ज़्यादा सच्चाई और नेकी की राह अपनाएं। रमज़ान क्योंकि रमज़ान है इसलिए इससे पहले ही बेहतरी का इज़हार शुरू होने लग जाए। तक़वे के असबाब अपनाएं और ख़ुद को मुत्तक़ी इंसान बनाने पर इबादत के ज़रिए जिहाद करने का मुख़्लिसाना जज़्बा बेदार करें। यहाँ यह बात भी नहीं भूलनी चाहिए कि अपने अंदर बेहतरी पैदा करने की ख़ूबी और ख़ासियत सिर्फ़ रमज़ान के लिए नहीं बल्कि साल भर के लिए पैदा करे। ऐसे बहुत से लोग हैं जो रमज़ान के नमाज़ी होते हैं और रमज़ान रुख़्सत होते ही नमाज़ से बिल्कुल ग़ाफ़िल हो जाते हैं। इसलिए अब से ही यह राह मुहय्या करें कि अच्छाई के लिए बदलाव महीने भर के लिए नहीं, साल भर बल्कि ज़िन्दगी भर के लिए हो। इसी तरह का बदलाव रमज़ान के सारे आमाल को अल्लाह के हुज़ूर शरफ़ क़ुबूलियत से नवाज़ेगा और आपकी उख़रवी ज़िन्दगी को बेहतर से बेहतर करेगा।

आख़िरी पैग़ाम:- रमज़ान के इस्तक़बाल (स्वागत) के लिए कोई ख़ास (विशेष) दुआ, ख़ास इबादत और रोज़ा या कोई मख़सूस और मु'अय्यन

तरीक़ा शरीअत में वारिद नहीं हुआ है। हदीस में रमज़ान के इस्तक़बाल में एक दो दिन पहले का रोज़ा रखना मना है। इसलिए दीन में किसी भी तरह की बिदअत के इर्तिकाब से ख़ुद भी बचें और दूसरों को भी बचाएं।

अल्लाह त'आला हमें रमज़ान का बेहतरीन इस्तक़बाल (सर्वोत्तम स्वागत) करने, इस महीने से हर तरह का फ़ायदा उठाने का मौक़ा फ़राहम (प्रदान) करे और रमज़ान में बकसरत आमाल सालिहा अंजाम देने की तौफ़ीक़ दे और उन आमाल को आख़िरत में नजात का ज़रिया बनाए। आमीन।

===================

[80]. रमज़ान के आख़िरी अश्रे से मुताल्लिक़ इमाम-ए-काबा की तरफ़ मंसूब झूठी तज्वीज़

यह मेसेज आजकल काफ़ी नश्र किया जा रहा है जिसमें लिखा गया है कि रमज़ान करीम के आख़िरी अश्रे में मुंदरिजा-ज़ेल तीन आमाल का एहतिमाम कर ले

(1) हर रात एक रुपया ख़ैरात करें। जिस रात लैलत-उल-क़द्र होगी, उसे एक रुपये की ख़ैरात ऐसी हो जाएगी कि आपने 28 साल तक ख़ैरात दी हो।

(2) हर रात दो रक'अत नमाज़ अदा करें। जिस रात लैलत-उल-क़द्र होगी, उस नमाज़ की अदा ऐसी होगी जैसे 28 साल इबादत की हो।

(3) हर रात तीन बार सूरह इख़लास पढ़ें। जिस रात लैलत-उल-क़द्र होगी, वह तिलावत ऐसी होगी कि 48 साल रोज़ाना एक क़ुरआन पढ़ा हो।

इसे आगे बढ़ाएं, इन शा अल्लाह यह आपके नेक आमाल में शामिल होगा।

(1) पहली बात यह है कि इमाम-ए-काबा की तरफ़ मंसूब यह झूठ है इसकी एक वजह तो यह है कि इस बात का कोई सबूत नही है कि इमाम-ए-काबा ने ऐसी कोई बात कही है।

(2) दूसरी बात यह है कि तहरीर से पता चलता है बर्रे-सग़ीर हिंद-ओ-पाक के किसी बिदअती की यह शरारत है क्योंकि इसमें रुपया का लफ़्ज़ मज़कूर है जबकि सऊदी अरब में रुपया नहीं चलता, रियाल चलता है।

(3) तीसरी बात यह है कि क़ुरआन और हदीस में ऐसी तालीम नहीं दी गई है जिसकी वजह से इमाम-ए-काबा ऐसी तालीम नहीं दे सकते हैं।

आख़िरी अश्रे (दस दिनों) से मुताल्लिक़ अहम बात:

रमज़ान-उल-मुबारक का आख़िरी अश्रा अज्र और फ़ज़ीलत के ऐतबार से बहुत ही मुबारक और मुफ़ीद है, तो क्या इस अश्रे में एक ही रुपया ख़र्च करना चाहिए, या सिर्फ़ दो रक'अत नमाज़ पढ़नी चाहिए और तिलावत के लिए सिर्फ़ सूरह इख़लास को ख़ास कर लेना चाहिए जिस की दलील वारिद नहीं है?

नहीं हरगिज़ नहीं।

हमें इस अश्रे में रसूल अल्लाह ﷺ का अमल तलाश करना चाहिए ताकि हम भी आप ﷺ की तरह इबादत करें। ऐसे ही रमज़ान-उल-मुबारक के आख़िरी अश्रे (दस दिनों) से मुताल्लिक़ आप ﷺ के अमल ब्यान करते हुए सय्यदा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा बताती हैं:

आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा ब्यान करती हैं कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब आख़िरी अश्रे में दाख़िल होते तो (इबादत के लिए) कमर कस लेते, ख़ुद भी रात भर जागते और घरवालों को भी जगाते थे। (हवाला: सहीह बुख़ारी: 2024)

इस हदीस से मालूम होता है कि हमें आख़िरी अश्रे में कुछ ज़्यादा इबादत के काम करना चाहिए जैसे नमाज़, तिलावत, ज़िक्र, दुआ, तौबा, इस्तिग़फ़ार, सद्क़ा और दीगर आमाल सालिहा की अंजाम दिही के साथ दूसरों के साथ नेकी पर त'आवुन। क्योंकि यही वह दस दिन है जिसमें लैलत-उल-क़द्र (शबे क़द्र) होती है जो हज़ार महीनों से बेहतर है और इस रात के क़ियाम करने से गुज़िश्ता तमाम (सभी) गुनाह माफ़ हो जाते है। इसलिए आख़िरी अश्रे में जितनी ज़्यादा इबादत का

काम करेंगे वह हमारे लिए उतना ही बेहतर और मुफ़ीद है। शबे क़द्र की एक मख़सूस (ख़ास) दुआ है जिसे ज़्यादा से ज़्यादा पढ़ना चाहिए, वह दुआ यह है:

اللَّهمَّ إنَّكَ عفوٌّ تحبُّ العفوَ فاعفُ عنِّي

(ऐ अल्लाह, तू माफ़ करने वाला है, माफ़ी को पसंद करता है,

लिहाज़ा तू मुझे माफ़ कर दे)

=================

[81].रमज़ान के बाद हमारी अमली ज़िन्दगी

एक मुक़द्दस पुर्बहार महीना और नेकियों से लबरेज़ महीना जैसे लगा पलभर में हमसे रुख़्सत हो गया। इस अज़ीम-उल-अज्र महीने से इज्तेहाद करने वाला हस्बे कोशिश और तौफ़ीक़ नेकियों से अपना दामन भरता रहा। अब वो दिन रहे कि नेकियाँ लौट सके, वो लम्हे रुख़्सत हो गए जो रब को बेहद अज़ीज़ थे। मगर याद रखें अल्लाह का करम आम है, वो कभी सख़ावत और करम का दरवाज़ा बंद नहीं करता। माँगने वाले हमेशा पाते रहेंगे, इल्तिजा करने वाले सदा उम्मीद-बरा होते रहेंगे। यहाँ हमें सोचना यह है कि जब वाक़ई रब करीम में उसका करम आम है, इस पर हमारा ईमान है तो फिर उसके फ़ैज़-ए-आम से कैसे हमेशा लुत्फ़ अंदाज़ हुआ जाए?

हमें याद रहे कि इस्तिक़बाल-ए-रमज़ान के लिए हमने एक बेहतरीन लाहेहा मुरत्तब किया था, वही लाहेहा अमल बाद-ए-रमज़ान भी मुरत्तब करने की ज़रूरत है ताकि ज़िंदगी के औक़ात आइने इस्लाम के मुताबिक गुज़रते रहें। दरअसल, ज़िंदगी में वही लोग नाकाम होते हैं जिनका कोई लाइहा-ए-'अमल (काम करने का प्रोग्राम) नहीं होता।

इस्लाम का आईन (क़ानून) हमें सुबह से शाम तक और रात से दिन तक 24 घंटे का एक दस्तूर देता है, जिसके मुताबिक़ बंदा सुबह सादिक़ में ही बेदार होकर रब की बंदगी और ज़िक्र करके भरोसा और एतिमाद के साथ कस्ब-ए-म'आश (रोज़ी कमाने) के लिए अल्लाह की ज़मीन में फैल जाता है, फिर मुक़द्दर की रोज़ी लेकर वापस हो जाता है। सोने से पहले भी रब की बंदगी बजा लाता है और उठकर भी पहले रब की बंदगी करता है, फिर ज़िंदगी के लिए सोचता है। यह रात और दिन की इस्लामी तर्ज़े ज़िंदगी इंसान को रब की रज़ामंदी के साथ दुनिया की ख़ैर और भलाई से भी पूरी तरह लुत्फ़ अंदोज़ होने का मौक़ा मयस्सर करता है।

रमज़ान हमारे लिए इनाम-ए-इलाही बनकर आया था, वो अब दोबारा नसीब हो पाएगा या नहीं, ये रब की तौफ़ीक़ पर मुंहसिर है। लेकिन रब के फ़रमान में लिखा है कि उसकी ने'मत मिलने पर शुक्रगुज़ारी से वह ने'मत दोबारा मिल सकती है।

وَإِذْ تَأَذَّنَ رَبُّكُمْ لَئِنْ شَكَرْتُمْ لَأَزِيدَنَّكُمْ وَلَئِنْ كَفَرْتُمْ إِنَّ عَذَابِي لَشَدِيدٌ (سوره ابراهيم:)

तर्जुमा: और याद रखो तुम्हारे रब ने ख़बरदार कर दिया था कि अगर शुक्रगुज़ार होगे तो मैं तुम्हें और ज़्यादा नवाज़ूंगा और अगर कुफ़्राने ने'मत करोगे तो मेरी सज़ा बहुत सख़्त है।

यह हक़ भी है कि ने'मत पर शुक्रगुज़ारी करें, वरना नाक़दरी से कुफ़्राने ने'मत का शिकार हो जाएंगे और अल्लाह की पकड़ के साथ ज़वाल-ए-ने'मत के सज़ावार ठहरेंगे। अल्लाह का फ़रमान है:

فاذكروني أذكركم واشكروا لي ولا تكفرون.(البقره:)

तर्जुमा: लिहाजा तुम मुझे याद रखो, मैं तुम्हें याद रखूंगा और मेरा शुक्र अदा करो, कुफ़्रान-ए-ने'मत न करो।

नीज़ फ़रमान है:

مَّا يَفْعَلُ ٱللَّهُ بِعَذَابِكُمْ إِن شَكَرْتُمْ وَءَامَنتُمْ وَكَانَ ٱللَّهُ شَاكِرًا عَلِيمًا (النساء:)

तर्जुमा: आखिर अल्लाह को क्या पड़ी है कि तुम्हें ख़्वाह मख़्वाह सज़ा दे अगर तुम शुक्रगुज़ार बंदे बने रहोगे और ईमान की रविश पर चलोगे। अल्लाह बड़ा क़दरदान है और सबके हाल से वाक़िफ़ है।

शुक्रगुज़ारी यह है कि हम रब की हम्द ओ सना बयान करें, उसकी ने'मत की क़दरदानी और अज़मत का अहसास हमेशा दिल में बसाए रखें और जो जो ने'मतें मयस्सर हुईं, सबके बदले रब का गुन गाते फिरें। शुक्रगुज़ारी का सबसे अहम दर्जा हमेशा अल्लाह का ज़िक्र करते रहना है, जिसका ज़िक्र अल्लाह ने इस आयत में किया है।

ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ وَتَطْمَئِنُّ قُلُوبُهُم بِذِكْرِ ٱللَّهِ أَلَا بِذِكْرِ ٱللَّهِ تَطْمَئِنُّ ٱلْقُلُوبُ.(الرعد:)

तर्जुमा: जो लोग ईमान लाए, उनके दिल अल्लाह के ज़िक्र से इत्मिनान हासिल करते हैं। याद रखो, अल्लाह के ज़िक्र से दिलों को तसल्ली हासिल होती है।

अल्लाह के ज़िक्र से मुराद उसकी तौहीद का बयान है, जिससे मुशरिकों के दिलों में इंक़िबाज़ पैदा हो जाता है, या उसकी इबादत, तिलावत क़ुरआन, नवाफ़िल और दुआ और मुनाजात है जो अहले ईमान के दिलों की ख़ुराक़ है, या उसके अहकाम और फ़रामीन की इताअत और बजा आवरी है, जिसके बग़ैर अहले ईमान और तक़्वा बेक़रार रहते हैं। (तफ़सीर अहसनुल बयान)

ٱتْلُ مَآ أُوحِىَ إِلَيْكَ مِنَ ٱلْكِتَٰبِ وَأَقِمِ ٱلصَّلَوٰةَ إِنَّ ٱلصَّلَوٰةَ تَنْهَىٰ عَنِ ٱلْفَحْشَآءِ وَٱلْمُنكَرِ وَلَذِكْرُ ٱللَّهِ أَكْبَرُ وَٱللَّهُ يَعْلَمُ مَا تصنعون.(سورہ العنکبوت:)

तर्जुमा: जो किताब अल्लाह की तरफ से वह्यी की गई है उसे पढ़ते रहिए और नमाज़ क़ायम करें। यक़ीनन नमाज़ बेशर्मी और बुराई से रोकती है। बेशक अल्लाह का ज़िक्र बहुत बड़ी चीज़ है, और तुम जो कुछ कर रहे हो, उससे अल्लाह ख़बरदार है।

रमज़ान-उल-मुबारक का लाइहा-ए-'अमल हमें अच्छी तरह मालूम है, उसे बस हमेशा के लिए अपनाना है। वही नमाज़, उसी तरह नफ़ली

रोज़े (शशा ईदी रोज़े, अश्रा ज़िलहिज्जा के रोज़े, अरफ़ा का रोज़ा, आशूरा-ए-मुहर्रम, अय्यामे बीज़ के रोज़े, पीर और जुमेरात के रोज़े), क़ियाम-उल-लैल, दुआ और मुनाजात, तसबीह और तहलील, सदक़ा और ख़ैरात, तिलावत और तदब्बुर-ए-कुरआन, दरूस और बयानात को सुनना, अहकाम और मसाइल को जानना और ताअत और भलाई पर मेहनत और मशक़्क़त मुसलसल होते रहना चाहिए। इन चीज़ों पर जमे रहने और लगातार क़ायम रहने का नाम इस्तेक़ामत है।

अपने लाइहा-ए-'अमल में इस्तेक़ामत ले आएंगे तो रमज़ान के फ़ुयूज़ और बरकात साल भर मिलते रहेंगे। इस्तेक़ामत ही ईमान वालों से मतलूब है। अल्लाह जल्ले जलालहु का फ़रमान है:

فَاسْتَقِمْ كَمَا أُمِرْتَ (هود:)

तर्जुमा:- पस ऐ मुहम्मद! तुम और तुम्हारे साथी जो (कुफ़्र और बग़ावत से ईमान और ताअत की तरफ़) पलट आए हैं ठीक ठीक राहे रास्त पर साबित क़दम रहो।

दूसरी जगह इर्शाद फ़रमाया:

فَاسْتَقِيمُوا إِلَيْهِ وَاسْتَغْفِرُوهُ (فصلت:)

तर्जुमा: - तुम सीधे उसी का रुख़ इख़्तियार करो और उसी से इस्तिग़फ़ार करो।

इस वक़्त ए ज़माना निहायत पुर-फ़ितन है, ईमान वालों को अपना ईमान बचाना और सुन्नत के मुताबिक़ ज़िंदगी गुज़ारना बहुत दुश्वार हो गया है। सुबह में मोमिन शाम में काफ़िर ऐसा मंज़र बरपा हो गया है।

अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत करते हैं कि रसूल सलल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

بَادِرُوا بِالأَعْمَالِ فِتَنًا كَقِطَعِ اللَيلِ المظْلِمِ، يُصْبِحُ الرَّجُلُ مؤمنًا ويُمْسِي كافرًا ويُمْسِي مؤمنًا ويُصْبِحُ كافرًا، يبيعُ دينَه بعَرَضٍ مِنَ الدُّنيا» (رواه مسلم:)

तर्जुमा: नेक आमाल करने में जल्दी किया करो, फ़ितने रात की तह दर तह तारीकी की तरह उमड़ते चले आएंगे। कई मोमिन भी सुबह के वक़्त ईमान की हालत में होंगे और शाम कुफ़्र के आलम में करेंगे, दुनिया के हक़ीर सामान के लिए दीन का सौदा कर लेंगे।

ऐसे हालात में दीन पर इस्तेक़ामत ही हमारे ईमान को शर, फ़साद, और फ़ितना-ए-ज़माना से महफ़ूज़ कर सकती है। मुझे नबी करीम सलल्लाहु अलैहि वसल्लम का एक फ़रमान याद आ रहा है:

عن سفيان بن عبدالله رضي الله عنه قال قلت يا رسول الله صلى الله عليه وسلم قال لی فی الإسلام قولا لا اسأل عنه أحدا غيرك قال قل آمنت بالله ثم استقم. (رواہ مسلم:)

तर्जुमा: - सुफ़्यान बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है उन्होंने कहा: ऐ अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)! मुझे इस्लाम की एक ऐसी बात बतलाइए के फिर आपके बाद किसी से उसके मुताल्लिक़ सवाल न करूं। तो आपने (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: कहो मेरा रब अल्लाह है और उसी पर क़ाइम रहो।

अगर वाक़ई हम इस्तक़ामत की राह इख़्तियार करेंगे तो अल्लाह उसके बदले हमें जन्नत नसीब करेगा।

إِنَّ الَّذِينَ قَالُوا رَبُّنَا اللَّهُ ثُمَّ اسْتَقَامُوا تَتَنَزَّلُ عَلَيْهِمُ الْمَلَائِكَةُ أَلَّا تَخَافُوا وَلَا تَحْزَنُوا وَأَبْشِرُوا بِالْجَنَّةِ الَّتِي كُنْتُمْ تُوعَدُونَ.(فصلت:30)

तर्जुमा: - (वाक़ई) जिन लोगों ने कहा कि हमारा परवरदिगार अल्लाह है फिर उसी पर क़ायम रहे उनके पास फ़रिश्ते (यह कहते हुए आते हैं कि तुम कुछ भी अंदेशा और ग़म न करो बल्कि) उस जन्नत की ख़ुश ख़बरी सुन लो जिसका तुमसे वादा किया गया है।

इस्तिक़ामत से हमें ख़ुद ब ख़ुद बुराई से छुटकारा मिलेगा, शैतान हमसे दूर भागेगा, कभी उसके बहकावे का शिकार नहीं होंगे, औसाफ़-ए-रज़ीला (ग़ीबत, धोखा, अय्यारी, बद-क़माशी, बेईमानी वग़ैरह) से निजात मिलेगी, ज़ुल्म और बग़ावत से दिल में तनफ़्फ़ुर पैदा होगा।

अल्लाह से दुआ है कि रमज़ान-उल-मुबारक के फ़ुयूज़ (फ़ायदे) और बरकात से हमारा दामन भर दे, पिछले तमाम गुनाहों से पाक कर दे, दुनिया और आख़िरत की भलाइयों से मालामाल कर दे और हमेशा हमें दीन पर इस्तिक़ामत नसीब फ़रमाए। आमीन

================

[82].रमज़ान-उल-मुबारक और गुनाहो की मग़फ़िरत के मौक़े

रमज़ान सरापा (शुरू से आख़िर तक) बख़्शिश और मग़फ़िरत का महीना है। इसमें हर क़िस्म की ख़ैर और बरकत की इंतिहा है। बिलाशुबाह यह माह-ए-मुबारक सियाम और क़ियाम पर अज्र-ए-जज़ील और गुनाहों की मग़फ़िरत के साथ अपने अंदर नेकियों पर बेहद हिसाब और अज्र-ओ-सवाब रखता है। यही वजह है कि असलाफ़-ए-किराम 6 महीने पहले से ही रमज़ान पाने की रब से दुआएं करते थे, जब रमज़ान पा लेते तो इसमें इज्तिहाद करते, हर क़िस्म की ता'अत और भलाई पर ज़ौक़ और शौक़ और अल्लाह से अज्र की उम्मीद करते हुए मेहनत करते। जब रमज़ान गुज़र जाता तो बाक़ी 6 महीने रमज़ान में किए गए आमाल-ए-सालिहा की क़बूलियत के लिए दुआ करते। गोया सलफ़-ए-सालिहीन का पूरा साल रमज़ान की ख़ुशियों से मुअत्तर रहता। आज हम हैं कि न रमज़ान की अज़मत का एहसास, न उसकी ख़ैर और बरकत से सरोकार है, यहाँ तक कि अपने गुनाहों की मग़फ़िरत का भी ख़्याल दिल में नहीं गुज़रता। जब कि रमज़ान पाकर उसमें मग़फ़िरत न पाने वाला निहायत ही बदनसीब है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

شقي عبد ادرك رمضان فانسلخ منه ولم يغفر له.(صحيح الأدب المفرد: ٠٠)

तर्जुमा:- बदबख़्त है वह जिसने रमज़ान पाया और यह महीना निकल गया और वह उसमें (नेक आमाल करके) अपनी बख़्शिश ना करवा सका।

अल्फ़ाज़ के इख़्तिलाफ़ के साथ उस मानी के कई सही हदीस वारिद हैं जिनसे रमज़ान-उल-मुबारक में महरूम होने वालों की महरूमी का अंदाजा लगाया जा सकता है।

एक जगह है:

رغم انف امرى ادرك رمضان فلم يغفر له(فضل الصلاة للألباني:،صحيح بشواهده)

तर्जुमा:- उस शख़्स की नाक ख़ाक आलूद हो जिसने रमज़ान पाया और उसकी बख़्शिश न हुई।

दूसरी जगह इर्शाद है:

بعد من ادرك رمضان فلم يغفر له.(صحيح الترغيب:)

तर्जुमा:- दूरी उसके लिए जिसने रमज़ान पाया और वह नहीं बख़्शा गया।

तीसरी जगह वारिद है:

من ادرك شهر رمضان فلم يغفر له، فدخل النار فابعده الله.(صحيح الترغيب:)

तर्जुमा:- जिसने रमज़ान का महीना पाया, उसकी मग़फ़िरत न हुई और वह जहन्नम में दाख़िल हुआ, उसे अल्लाह दूर करेगा।

चौथी जगह मज़कूर है:

من ادرك شهر رمضان فمات فلم يغفر له فادخل النار فابعده الله. صحيح الجامع:)

तर्जुमा: जिसने रमज़ान का महीना पाया, मर गया, उसकी मग़फ़िरत नहीं हुई और वह जहन्नम में दाख़िल कर दिया गया, उसे अल्लाह अपनी रहमत से दूर कर देगा।

कहीं हम कलमा गो होकर रमज़ान के रोज़ों का इंकार करके अल्लाह की रहमत से दूर न हो जाएं। इसके लिए रोज़ों की अज़मत अपने दिल में बहाल करनी होगी। रमज़ान नसीब होने पर रब का शुक्रिया अदा करना होगा और माह-ए-मुबारक को ग़नीमत जानते हुए गुनाहों की मग़फ़िरत के वास्ते नमाज़, रोज़ा, सदक़ा, ख़ैरात, ज़िक्रे इलाही, क़ियाम और सुजूद और नेक आमाल करके रब को राज़ी करना होगा और उससे इस बात की तौफ़ीक़ तलब करनी होगी कि वह हमें अपने फ़ज़्ल और करम से जन्नत में दाख़िल कर दे।

बिलाशुबाह, बनी आदम गुनहगार है लेकिन हमें रब की रहमत और मग़फ़िरत से कभी भी मायूस नहीं होना चाहिए। अल्लाह अपने बंदों की नेकियों के बदले गुनाह माफ़ करता है, तौबा क़बूल करता है और

दर्जात बुलंद करके कामयाबियों से दामन भर देता है। याद रहे, मग़फ़िरत के लिए हमारा अक़ीदा सही होना चाहिए। हम अल्लाह के साथ किसी को शरीक और साझी न ठहराएं वरना फिर न इबादत काम आएगी और न रमज़ान के क़ियाम और सियाम काम आएंगे। रब का फ़रमान है:

إِنَّ اللَّهَ لَا يَغْفِرُ أَنْ يُشْرَكَ بِهِ وَيَغْفِرُ مَا دُونَ ذَٰلِكَ لِمَنْ يَشَاءُ ۚ. (سورۃ النساء:)

तर्जुमा:- बेशक अल्लाह उस (गुनाह) को नहीं बख़्शेगा कि (किसी को) उसका शरीक ठहराया जाए और उसके अलावा दूसरे गुनाह जिसे चाहे माफ़ कर देगा।

अगर मुसलमान का अक़ीदा सही है तो उसके सारे आमाल अल्लाह के यहां मक़बूल हैं। उसे अल्लाह बख़्श देता है। फ़रमान-ए-इलाही है:

الا الذين صبروا وعملوا الصالحات اولئك لهم مغفرة وأجر كبير.(هود:)

तर्जुमा:- सिवाय उनके जो सब्र करते हैं और नेक कामों में लगे रहते हैं, उन्हीं लोगों के लिए बख़्शिश है और बहुत बड़ा नेक बदला भी।

इस मज़मून में इख़्तिसार के साथ हम रमज़ान-उल-मुबारक में अल्लाह की जानिब से बख़्शिश के सुनहरे मौक़े का ज़िक्र करेंगे और ब-ख़ौफ़-

ए-तवालत इन मौक़ों से सिर्फ़ नज़र करेंगे जो आम दिनों में बख़्शिश के बाइस हैं। गोया वह भी रमज़ान में शामिल हैं सिवा इस के कि किसी ख़ास मौक़ा और मुनासिबत से हों।

आईए उन आमाल और मौक़ों का ज़िक्र करते हैं जो रमज़ान में मग़फ़िरत का सबब हैं:

(1) रमज़ान पाना और गुनाह-ए-कबीरा से बचते रहना: उमूमन लोग रमज़ान पाने को ख़ास अहमियत नहीं देते, ऐसे समझा जाता है कि माह और साल की गर्दिश से रमज़ान आ गया हालाँकि इस महीने का पाना बड़ी सआदत की बात है। जिसकी क़िस्मत में रमज़ान ना हो वह कभी भी उसे नहीं पा सकता लिहाज़ा हमें इस माह की हुसूलयाबी पर सजदा करके रब का शुक्रिया अदा करना चाहिए और उसकी अज़मत का ख़्याल करते हुए उसके आदाब और तकाज़ों को निभाना चाहिए। और जो बंदा नमाज़ क़ायम करता रहा और गुनाह-ए-कबीरा से बचता रहा उसके लिए इस माह-ए-मुक़द्दस में साल भर के गुनाहों की बख़्शिश का वादा है। नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का फ़रमान है:

الصلوات الخمس والجمعة الى الجمعة ورمضان الى رمضان منكرات ما بين إذا اجتنب الكبائر .(صحيح مسلم:)

तर्जुमा: पाँचों नमाज़ें, हर जुम्मा दूसरे जुम्मा तक और रमज़ान दूसरे रमज़ान तक दरमियानी मुद्दत के गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं बशर्ते यह कि बड़े गुनाहों से बचा जाए।

(2) ईमान के साथ अज्र-ओ-सवाब की उम्मीद से रोज़ा रखना गुज़िश्ता तमाम ख़ताओं की बख़्शिश का ज़रिया है। नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

من صام رمضان ایمانا واحتسابا غفر له ما تقدم من ذنبه۔(صحیح البخاری:2014)

तर्जुमा:- जिसने रमज़ान का रोज़ा ईमान के साथ अज्र-ओ-सवाब की उम्मीद करते हुए रखा, उसके पिछले सारे गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।

एक हदीस में रोज़ा, नमाज़ और सदक़ा को फ़ितने से निजात और गुनाहों का कफ़्फ़ारा बताया गया है। नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

فتنة الرجل في أهله وماله وجاره تكفرها الصلاة والصيام والصدقة.(صحيح البخاري:)

तर्जुमा:- इंसान के लिए उसके बाल-बच्चे, उसका माल और उसके पड़ोसी बाइस-ए-आज़माइश हैं, जिसका कफ़्फ़ारा नमाज़ पढ़ना, रोज़ा रखना और सदक़ा देना बन जाता है।

(3) रमज़ान में क़ियाम करना गैर-रमज़ान में क़ियाम करने से अफ़ज़ल है और उसका सवाब रोज़े की मिस्ल है अगर ईमान और एहतिसाब के साथ किया जाए। नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

من كان رمضان ايمانا واحتسابا غفر له ما تقدم من ذنبه۔ (صحيح مسلم: 759)

तर्जुमा: जो रमज़ान में ईमान और अज्र की उम्मीद के साथ क़ियाम करता है, उसके सारे गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।

(4) रमज़ान-उल-मुबारक की रातों में क़ियाम की फज़ीलत आख़िरी अश्रे में बढ़ जाती है क्योंकि इसमें लैलतुल क़द्र (शबे क़द्र) है। नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) इस अश्रे में शब बेदारी करते और ख़ूब ख़ूब इज्तिहाद (जद्दोजहद) करते। शब-ए-क़द्र में क़ियाम की फज़ीलत बयान करते हुए नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

من قام ليلة القدر ايمانا واحتسابا غفر له ما تقدم من ذنبه. (صحيح البخاري: ٠)

तर्जुमा: जो शबे क़द्र में ईमान और ख़ालिस नियत के साथ क़ियाम करता है, उसके पिछले गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।

(5) इफ़्तार के वक्त अल्लाह बंदों को आज़ाद करता है। उस वजह से बतौर-ए-ख़ास इफ़्तार के वक्त रोज़े की क़बूलियत, गुनाहों की मग़फ़िरत, बुलंद दरजात, जहन्नम से रिहाई और जन्नत में दाख़िल होने की दुआ की जाए।

"لله عند كل فطر عتقاء." (رواه أحمد وقال للألباني: حسن صحيح)

तर्जुमा:- अल्लाह तआला हर इफ़्तार के वक्त (रोज़ेदारों को जहन्नम से) आज़ादी देता है।

तिर्मिज़ी और इब्ने माजा की एक रिवायत जिसे अल्लामा अल्बानी (रहिमहुल्लाह) ने हसन क़रार दिया है, इसमें मज़कूर है कि हर रात अल्लाह अपने बंदों को जहन्नम से आज़ादी देता है।

रिवायत इस तरह है:

إن الله عند كل فطر عتقاء وذالك في كل ليلة.(صحيح ابن ماجه:١٣٤٠)

तर्जुमा:- अल्लाह हर इफ़्तार के वक्त (रोज़ेदारों को जहन्नम से) आज़ादी देता है। यह आज़ादी हर वक्त मिलती है।

(6) मोमिन को रमज़ान के दिन में रोज़ा रखना चाहिए, बहालत-ए-रोज़ा बकसरत आमाल-ए-सालिहा अंजाम देना चाहिए और उसकी हर रात में शब बेदारी करके क़ियाम, दुआ, इस्तिग़फार और अज़कार में मसरूफ़ रहना चाहिए क्योंकि हर रात अल्लाह की जानिब से ख़ैर का तालिब को निदा (आवाज़) लगाई जाती है और जहन्नम से रिहाई की बशारत सुनाई जाती है। अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) कहते हैं कि रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

حديث أبي هريرة رضي الله عنه قال: قال رسول الله صلى الله عليه وسلم: (إِذَا كَانَ أَوَّلُ لَيْلَةٍ من شَهْرِ رَمَضَانَ صُفِّدَتِ الشَّيَاطِينُ وَمَرَدَةُ الْجِنِّ، وَغُلِّقَتْ أَبْوَابُ النَّارِ فلم يُفْتَحْ منها بَابٌ، وَفُتِّحَتْ أَبْوَابُ الْجَنَّةِ فلم يُغْلَقْ منها بَابٌ...) الحديث، رواه الترمذي (682)

तर्जुमा: जब माह-ए-रमज़ान की पहली रात आती है तो शैतान और सरकश जिन पकड़ लिए जाते हैं, जहन्नम के दरवाज़े बंद कर दिए जाते हैं, उनमें से कोई भी दरवाज़ा खोला नहीं जाता और जन्नत के दरवाज़े खोल दिए जाते हैं, उनमें से कोई भी दरवाज़ा बंद नहीं किया जाता। पुकारने वाला पुकारता है: "खैर के तलबगार! आगे बढ़ो," और शर के तलबगार रुक जाते हैं। और बहुत से बंदे हैं जिन्हें अल्लाह ने आग से आज़ाद किया है (तो हो सकता है कि तुम भी उन्हीं में से हो) और ऐसा (रमज़ान की) हर रात को होता है।

(7) सदक़ा गुनाहों की मग़फ़िरत का अहम ज़रिया है। नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़रमान है:

والصدقة تطفي الخطيئة كما يطفئ الماء النار.(صحيح الترمذي:)

तर्जुमा: सदक़ा गुनाह को ऐसे बुझा देता है जैसे पानी आग को बुझाता है।

इसलिए नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) रमज़ान में ख़ैर और तिलावत के काम तेज़ हवा से भी ज़्यादा करते हैं। हालांकि वह रिवायत जिसमें अफ़ज़ल सदक़ा रमज़ान का सदक़ा बताया गया है, ज़ईफ़ है।

रमज़ान में मग़फ़िरत से मुताल्लिक कुछ रिवायतें:

(1) रमज़ान में बख़्शिश से मुताल्लिक़ एक बहुत ही मशहूर हदीस है जो तक़रीबन रमज़ान में नश्र होने वाले अक्सर रिसाले, कैलेंडर और पैम्प्लेट वग़ैरा में लिखी जाती है, वह इस तरह से है:

أول شهر رمضان رحمة، وأوسطه مغفرة، وآخره عتق من النار. (السلسلة الضعيفة:)

तर्जुमा:- इस माह का इब्तिदाई हिस्सा रहमत है और दरमियानी हिस्सा बख़्शिश और आख़िरी हिस्सा जहन्नम से आज़ादी का बाइस है।

इस हदीस को इमाम नसाई, हाफ़िज़ इब्ने हजर और अल्लामा सुयुती ने ज़ईफ़ कहा है और अबू हातिम, अल्लामा ऐनी हनफ़ी और अल्लामा अल्बानी रहिमहुल्लाह ने मुनकिर कहा है।

(2) रमज़ान में अल्लाह का ज़िक्र करने वाला बख़्श दिया जाता है और अल्लाह से माँगने वाला महरूम नहीं होता। रिवायत देखें:

ذاكر الله في رمضان مغفور له وسائل الله فيه لا يخيب.(السلسلة الضعيفة:)

(3) इस तरह मुंदरिजा-ज़ेल रिवायत भी ज़ईफ़ है:

يغفر لأمته في آخر ليلة من رمضان قيل يا رسول الله أهي ليلة القدر قال: لا، ولكن العامل إنما يوفى أجره إذا قضى عمله.

तर्जुमा:- रमज़ान की आख़िरी रात में उम्मत माफ़ कर दी जाती है। कहा गया, "ऐ अल्लाह के रसूल! क्या यह क़द्र की रात है?" तो आपने फ़रमाया: "नहीं, बल्कि मज़दूर को उसकी मेहनत पूरी करने के बाद पूरा अज्र दिया जाता है।"

इस रिवायत को अल्लामा अल्बानी रहिमहुल्लाह ने ज़ईफ़ कहा है। (तख़रीज मिष्कातुल मसाबीह: 1909)

इस रिवायत में यह भी वारिद है कि रोज़ेदारों के लिए फ़रिश्ते इफ़्तार तक इस्तिग़फार करते हैं, कुछ में मछलियो के इस्तिग़फार का ज़िक्र है जो कि ज़ईफ़ है।

ख़ुलासा कलाम यह है कि रमज़ान में हर क़िस्म की नेकी का गुनाह माफ़ होता हैं। इसलिए दुआ, नमाज़, ज़िक्र, तौबा, इस्तिग़फार, तिलावत, दावत और सदक़ा, ज़कात वग़ैरह हर क़िस्म की भलाई अंजाम दी जाती है। ऐसा नहीं है कि रमज़ान में सिर्फ़ ऊपर ज़िक्र किए गए आमाल ही अंजाम दिए जाने के क़ाबिल हैं और सिर्फ़ उन्हीं से मग़फ़िरत होती है। यह तो वो आमाल और अस्बाब हैं जिनमें ख़ासियत के साथ रमज़ान में मग़फ़िरत की जाती है, उन पर ज़्यादा तवज्जो दी जानी चाहिए।

अल्लाह से दुआ है कि हमारी सभी इबादतों को क़बूल फ़रमा ले और रमज़ान में सारी ख़ता को बख़्श कर जन्नतुल फ़िरदौस में दाख़िल करे। आमीन।

===========

[83].रमज़ान-उल-मुबारक कुछ अहम सबक़ देते हुए हमसे रूख़सत हो गया (मंज़र मे-कोरोना वाइरस पस)

जिन हालात से आज दुनिया गुज़र रही है, उनकी तारीख़ रक़म होती जा रही है। आने वाली नस्लें हमारी तारीख़ पढ़ेंगी और जानेंगी कि इसमें उनके लिए बहुत कुछ अस्बाक़ (इल्म/दर्स) पाए जाते हैं। मुमकिन है, मुस्तक़बिल बेहतर बनाने के लिए अपनी इसलाह भी करें। उन नस्लों को आने में अभी वक्त है। पहले हमें यहाँ से गुज़रना होगा। लेकिन सवाल हमारे लिए भी बहुत अहम है कि हमने रक़म होती हुई आज की तारीख़ से क्या कुछ सीखा और सबक़ लिया?

रमज़ान आया और जैसे लगा लमहों में हम से रुख़्सत हो गया मगर इसकी बरकते साल भर ख़त्म नहीं होतीं बशर्ते यह कि हासिल करने वालों ने माह-ए-ख़ैर और फ़लाह से वाक़ई सआदत और बरकत हासिल की हो। अल्लाह का फ़रमान है:

قد أفلح من تزکی وذکر اسم ربہ فصلی.(اعلی:)

तर्जुमा: बेशक उसने कामयाबी पाई जो पाक हो गया और जिसने अपने रब का नाम याद रखा और नमाज़ पढ़ता रहा।

इस आयत की तफ़सीर में अल्लामा इब्ने कसीर रहमतुल्लाह अलैह ने लिखा है कि जिसने अपने नफ़्स को बुरे अख़लाक़ से पाक किया, जो कुछ अल्लाह ने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर नाज़िल किया उसकी ताबेदारी की, अल्लाह की ख़ुशी और उसके अहकाम और शरीअत की पासदारी करते हुए नमाज़ को अपने वक्तों पर क़ायम किया, वह कामयाब हो गया।

इस आयत को आयत-ए-सियाम के लफ़्ज़

لعلكم تتقون

"ताकि तुम परहेज़गार बन सको" से जोड़कर देखते हैं तो हमें मालूम होता है कि माह-ए-सियाम और उसकी इबादतें मोमिनों (इसमें नाम के मुसलमान शामिल नहीं हैं) को गुनाहों से पाक और नफ़्स को परहेज़गार बना देती हैं। हमें अल्लाह की बेपाया रहमतों से उम्मीद है कि इस माह में मोमिनों की मग़फ़िरत हो गई होगी और हम कामयाब होने वालों में से हो जाएंगे। इन शा अल्लाह।

अभी हमारी मग़फ़िरत हो गई और हम गुनाहों से पाक हो गए लेकिन याद रखिए कि मासियत का इर्तिकाब करने से फिर हम गुनहगार और अल्लाह के मुजरिम हो जाएंगे। इसलिए अपने नफ़्स को पाक

रखना और उसी तहारत और पाकीज़गी पर ख़ुद को बाक़ी रखना बहुत ही अहम मसला है जो अकसर की नज़रों से ओझल होता है। ज़रा ग़ौर फरमाएं कि अल्लाह ने कामयाबी के लिए क्या कहा है? अल्लाह फ़रमाता है कि बेशक उसने फ़लाह पाई जो पाक हो गया और जिसने अपने रब का नाम याद रखा और नमाज़ पढ़ता रहा।

यहां नमाज़ से मुराद 5 वक़्त की नमाज़ों को अपने वक़्तों पर क़ाइम करना और उसकी हिफ़ाज़त करते रहना है, जैसा कि मुख़्तलिफ़ मुफ़स्सिरीन इस आयत की तफ़सीर में ज़िक्र किया है। मतलब यह हुआ कि असल कामयाबी उसी की है जो अल्लाह के अहकाम और शरीअत की पासदारी करता और उसकी रज़ा के लिए हमेशा नमाज़ों की पाबंदी करता रहता है। किसी ख़ास मौक़े पर इबादत कर लेना कमाल नहीं है, बल्कि सदा इबादत पर क़ाइम रहना कमाल है और यही मतलूब मोमिन भी है। जैसा कि अल्लाह का फ़रमान है:

فاستقم كما أمرت.(هود:)

तर्जुमा:- पस ऐ मुहम्मद! तुम और तुम्हारे वे साथी जो (कुफ़्र और बग़ावत से ईमान और ताअत की तरफ़) पलट आए हैं ठीक-ठीक राहे रास्त पर साबित क़दम रहो।

यही बात नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक मौक़े पर सवाल करने वाले सहाबी सुफ़्यान बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु को बताई जब उन्होंने आप से सवाल किया कि मुझे इस्लाम की एक ऐसी बात बतलाएं कि फिर आपके बाद किसी से उसके मुताल्लिक़ सवाल न करूं, तो आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

قل آمنت بالله ثم استقم۔(صحیح مسلم :38)

तर्जुमा:- कहो मेरा रब अल्लाह है और उसी पर क़ाइम रहो।

इसलिए गुज़रते हुए रमज़ान से एक अहम सबक़ यह मिलता है कि बिलाशुबाह रमज़ान गुज़र गया है मगर अल्लाह का ज़िक्र बाक़ी है, उसका दीन और उसकी इबादत बाक़ी है। हम उसकी हम्द ओ सना करते रहेंगे, उसके दीन पर चलते रहेंगे और उसकी इबादत मरते दम तक करते रहेंगे। जैसा कि फ़रमान-ए-इलाही है:

واعبد ربک حتی یأتیك الیقین.(الحجر:)

तर्जुमा:- और अपने रब की इबादत करते रहें यहाँ तक कि आपको मौत आ जाए।

कोरोना हालात की वजह से रमज़ानुल मुबारक में मसाजिद बंद हो जाने से हम सब कबीदा-ख़ातिर (नाख़ुश) थे। आज भी इस वजह से हम में मायूसी है मगर अल्लाह के दीन में बड़ी कुशादगी और तसल्ली का सामान है। यही गुज़िश्ता आयत देखें जो नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तसल्ली के लिए उस वक्त नाज़िल हुई जब मुशरीक़ीन-ए-मक्का आपको तरह-तरह से सताते, आपका मज़ाक उड़ाते और दीवाना, पागल कहकर तकलीफ़ पहुंचाते थे। इससे आप रंजीदा और कबीदा-ख़ातिर हो जाते। अल्लाह ने आपको तसल्ली देते हुए तसबीह बयां करने और सजदा का हुक्म दिया। आपको कहा कि अपने रब के लिए नमाज़ पढ़ते रहें और उसके लिए सजदा और तसबीह में लगे रहें, उसी में आपको क़ल्बी सुकून मिलेगा और ऐसे आपको अल्लाह की मदद भी मिलती रहेगी।

जिस तरह अल्लाह ने ग़म और मलाल के मौक़े पर अपने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इबादत और ज़िक्र के ज़रिये ढाँढस बँधाई है, इसी तरह उसमें हमारी तसल्ली का भी सामान है। हमसे रब की इबादत मतलूब है, लिहाज़ा हम जहाँ भी रहें और जिस हाल में रहें, अपने परवरदिगार की हम्द ओ सना बयां करते रहें और पाँच

वक्त नमाज़ की मुहाफ़िज़त करते रहें। उससे दिल को सुकून मिलेगा और अल्लाह की मदद हासिल रहेगी।

आज के हालात और रमज़ानुल मुबारक से आम मुसलमानों को यह सबक़ मिला कि हमने दीन के वह ज़रूरी अहकाम भी नहीं सीखे थे जिनसे वास्ता रोज़मर्रा का है। यही वजह है कि रमज़ान जैसे इबादत के मौसम में कितने घर तिलावत, नमाज़ और क़ियाम-उल-लैल से सूने होंगे क्योंकि उनके घर में कोई नमाज़ पढ़ाने वाला नहीं और कोई क़ुरआन जानने वाला नहीं था। क्या यह कोरोना हमें सबक़ देता है कि दीन को इतना हम में से हर कोई सीखे जो कम-अज़-कम इबादत के लिए काफ़ी हो?

मसाजिद बंद हो जाने में उन लोगों के लिए लम्हा-ए-फ़िक्रिया है जो सिर्फ़ जुमा की इबादत करते थे। उनसे मुसलसल जुमा छूट रहा है यहाँ तक कि रमज़ानुल मुबारक के जुमा भी छूट गए। ऐसे लोगों के लिए नसीहत है कि नमाज़ सिर्फ़ हफ़्ते में फ़र्ज़ नहीं है बल्कि दिन और रात में 5 मर्तबा फ़र्ज़ है। यह बात दीन में लिखी हुई पहले से मौजूद है और आज कोरोना की वजह से इस्क़ात-ए-जुमा और जमाअत ने अहसास भी दिला दिया। ऐ काश कि हम नसीहत हासिल करें।

इस तरह के बेशुमार अस्बक़ मिल जाएंगे लेकिन मेरी नज़र में 3 अहम थे जिनका मैंने जिक्र किया है। उसका ख़ुलासा यह है कि कोरोना के इस दौर में रमज़ान से एक सबक़ तो यह मिला कि जो हर रमज़ान का सबक़ है कि हमारी कामयाबी दरअस्ल उसमें है कि पंचवक़्ता नमाज़ों की मुहाफ़िज़त करते रहें चाहे क़ैद रहें या आज़ाद रहें।

दूसरा सबक़ यह कि दुनियावी उलूम के साथ-साथ दीन की बुनियादी तालीम भी हासिल करें ताकि ख़ुद से भी रब की बंदगी, उसकी हम्द ओ सना और क़ुरआन की तिलावत कर सकें। कितनी अजीब है कि दुनिया की बड़ी से बड़ी डिग्री हासिल करने के बावजूद हमें नमाज़ पढ़ना और क़ुरआन की तिलावत करना न आए।

तीसरी बात यह है कि जो लोग दीन पर अपनी मर्ज़ी से अमल करते थे, वे संभल जाएं और रब की इस तरह बंदगी करें जिस तरह करने का हुक्म हुआ है।

अल्लाह से दुआ है कि वह रमज़ान में अंजाम दिए गए हमारे आमाल को क़बूल फ़रमा कर उसे हमारी निजात का ज़रिया बनाए, हमसे

कोरोना की वबा दूर कर दे और हमें मरते दम तक अपनी बंदगी की तौफ़ीक़ से नवाज़े। आमीन।

===================

84].रमज़ान-उल-मुबारक मे ख़लीजी ममालिक (खाड़ी इलाक़ो) से सफ़र करने वालो के मसाइल

सऊदी अरब, दुबई, क़तर, बहरीन और कुवैत वग़ैरह में काम करने वाले बर्रे-सग़ीर हिंद-पाक के लोग जब रमज़ान में अपने मुल्क का सफ़र करते हैं तो उन्हें तक़रीबन पांच क़िस्म के मसाइल की जानकारी दरकार होती है।

(1) पहला मसअला यह है कि सफ़र के दौरान रोज़ा रखना चाहिए कि नहीं?

(2) दूसरा मसअला यह है कि जब ख़लीज़ी ममालिक से अपने मुल्क का सफ़र करते हैं और अपने मुल्क पहुंच जाते हैं तो हमें वहाँ के हिसाब से रोज़ा रखना चाहिए या ग़ल्फ़ के हिसाब से?

(3) तीसरा मसअला यह है कि अगर हमने सफ़र में रोज़ा तोड़ लिया तो क्या इसकी क़ज़ा करनी पड़ेगी जबकि अपने मुल्क में जाकर रोज़ा रखने से हमारा रोज़ा मुकम्मल हो जाता है, कभी कभी ज़्यादा ही हो जाता है?

(4) चौथा मसअला यह है कि अगर कोई शख़्स रियाद या मस्क़ट या अबुधाबी वग़ैरह से सफ़र करता है उसने सहरी वहाँ के हिसाब से ख़ाई है इफ़्तार का वक़्त उसके लिए क्या होगा?

(5) पांचवां मसअला कुछ लोगों के साथ यह पेश आता है कि उधर सऊदी अरब या दुबई व क़तर में ईद मनाया और अपने मुल्क सफ़र किया, एक दिन में मुल्क पहुंच गया अगले दिन वहाँ भी ईद है अब वह ईद की नमाज़ वहाँ भी अदा करेगा या नहीं?

पहले सवाल का जवाब यह है कि सफ़र में रोज़ा रखने से मुश्किलात दर्पेश हो तो रोज़ा छोड़ देना चाहिए लेकिन अगर मुश्किलात नहीं हो तो रोज़ा रखना अफ़्ज़ल है मिसाल के तौर पर कुछ पाकिस्तानी या हिंदुस्तानी हज़रात ग़ल्फ़ में हवाई अड्डे के क़रीब ही रहते हैं, बिना मुश्किलात फ़्लाइट पर सवार हुए और कुछ लोग तीन और कुछ लोग चार घंटों में अपने घर तक पहुँच गए, कोई कुल्फ़त (inconvenience) नहीं हुई, ऐसी सूरत में रोज़ा रखना चाहिए। जिन्हें फ़्लाइट का भी सफ़र करना है, बसों और ट्रेनों के सफ़र से भी गुज़रना है, सफ़र भी कई घंटों पर मुश्तमिल हो तो लाज़िमन मुश्किलात दर्पेश होगी ऐसी सूरत में रोज़ा नहीं रखना चाहिए।

दूसरे सवाल का जवाब यह है कि जब कोई एक मुल्क से दूसरे मुल्क का सफ़र करता है तो वह उस मुल्क के हिसाब से रोज़ा रखेगा जहां का सफ़र कर रहा है यही अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के फ़रमान से ज़ाहिर होता है। अल्लाह का फ़रमान है:

فَمَن شَهِدَ مِنكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ (البقرة: 185)

तर्जुमा: जो रमज़ान का महीना पाए वह रोज़ा रखे।

नबी ﷺ का फ़रमान है:

الصَّومُ يومَ تَصومونَ ، والفِطرُ يومَ تُفطِرونَ ، والأضحَى يومَ تُضحُّونَ (صحيح الترمذي: 697)

तर्जुमा: रोज़ा वह दिन है जिसमें तुम सब रोज़ा रखते हो, और इफ़्तार वह दिन है जिसमें तुम सब रोज़ा नही रखते हो, और ईद उल अज़हा वह दिन है जिसमें तुम सब क़ुर्बानी करते हो।

आयत व हदीस से साफ़ साफ़ पता चलता है कि इंसान जहां भी सफ़र करके जाए वहां के लोगों के हिसाब से रोज़ा रखेगा, इफ़्तार करेगा और क़ुर्बानी देगा। इस को मिसाल से इस तरह समझा जा सकता है कि जब हम रोज़ा रख कर सऊदी अरब से सफ़र किए अपने मुल्क में इफ़्तार का वक़्त हो गया जबकि सऊदी अरब में अभी इफ़्तार का वक़्त बाक़ी है लेकिन इस वक़्त सऊदी में सूरज डूबने का इंतज़ार नहीं

करेंगे बल्कि आप अपने मुल्क वालों के हिसाब से सूरज डूबते ही इफ़्तार कर लेंगे।

तीसरे सवाल का जवाब यह है कि अगर कोई सफ़र की वजह से फ़र्ज़ रोज़ा छोड़ा था तो बाद में उसकी क़ज़ा करेगा भले अपने मुल्क का रोज़ा मिला कर 29 या तीस हो जाता है, इसकी वजह यह है कि उसने जो रोज़ा छोड़ा था वह फ़र्ज़ रोज़ा था।

चौथे सवाल का जवाब यह है कि रोज़ेदार के लिए जब और जिस जगह सूरज गुरूब हो जाए उस वक्त और उस जगह के ऐतिबार से इफ़्तार करें। अगर जहाज़ में रहते वक्त सूरज गुरूब हो रहा है तो जहाज़ में इफ़्तार करें और जहाज़ से उतर कर एयरपोर्ट या गाँव, सड़क, बस्ती में सूरज डूब रहा है तो वहाँ इफ़्तार करें।

पांचवें सवाल का जवाब यह है कि उसने रमज़ान मुकम्मल किया, ईद की नमाज़ भी अदा कर ली अब उसके ज़िम्मे ईद की नमाज़ बाक़ी नहीं है ताहम मुस्लिमों के साथ उनकी ईद और ख़ुशी में शामिल होना इज़हार यकजहती है।

यहाँ पर चंद बातें मज़ीद समझ लेनी चाहिए:

रोज़ा रखने में रूयत-ए-हिलाल (sighting the moon of first date of the new month) का ही एतिबार होता है जैसाकि हदीस में है चाँद देख कर रोज़ा रखो और चाँद देख कर इफ़्तार करो।

रोज़ेदार तारीख़-ए-क़मरी का एतिबार करेगा न कि मसीही तारीख़ का।

तारीख़-ए-क़मरी कम से कम 29 का और ज़्यादा से ज़्यादा 30 दिन का होता है, यह याद रहे इक़्तीस (31) दिन तारीख़-ए-क़मरी में है ही नहीं।

आदमी सफ़र करके जिस मुल्क में जा रहा है उस मुल्क के हिसाब से अगर उसका रोज़ा इक़्तीस दिन का हो जाता है तो कोई हर्ज नहीं लेकिन अगर 29 से कम हो जाता है तो कम से कम एक रोज़ा बाद में रखना होगा क्यूंकि क़मरी महीने में कम से कम 29 दिन होते हैं।

अगर कोई किसी मुल्क से ईद करके दूसरे मुल्क का सफ़र करता है उस हाल में कि यहाँ अभी ईद नहीं हुई है यानी रमज़ान ही है तो उसके लिए ज़रूरी नहीं है कि वह रोज़ा रखे क्यूंकि उसने शर'ई तरीक़े से अपना रमज़ान मुकम्मल कर लिया है।

=============

[85].रमज़ान-उल-मुबारक से मुताल्लिक़ बाज़ ग़लत फ़हमीयो का इज़ाला

(1) लोगों के अंदर यह ग़लतफ़हमी है कि रोज़ा रखने की कोई मख़सूस दुआ है, जबकि ऐसी कोई बात नहीं, बल्कि रोज़ा रखने के लिए सिर्फ़ निय्यत की ज़रूरत है और सहरी खाना मस्नून है।

(2) बाज़ लोग यह सोचते हैं कि रोज़ा की हालत में एहतिलाम (स्वप्नदोष) होने से रोज़ा टूट जाता है। इस वजह से अगर किसी को दिन में एहतिलाम हो जाए तो अपना रोज़ा तोड़ लेता है जो कि बहुत बड़ी ग़लती है। एहतिलाम से रोज़ा नहीं टूटता। एहतिलाम होने पर गुस्ल करले बस।

(3) बाज़ लोग यह सोचते हैं कि जनाबत यानी नापाकी की हालत में सहरी नहीं खाई जाती। यह भी ग़लत है। नापाकी की हालत में भी सहरी खा सकते हैं ताहम फ़ज्र से पहले गुस्ल करले ताकि जमाअत से फ़ज्र की नमाज़ पढ़ सके।

(4) रोज़े की हालत में बीवी से जिमा (मुबाशरत) करना मना है। हंसी मज़ाक करना, बौसा लेना ब-शर्त-ए-कि जिमा में वाक़े होने का ख़तरा नहीं हो तो जाइज़ है। रात में बीवी से जिमा कर सकते हैं।

(5) रोज़े की हालत में औरत अपने बच्चे को दूध पिला सकती है इससे रोज़ा नहीं टूटता है।

(6) रोज़ा में बिना ताक़त वाला इंजेक्शन, नाक, कान और आंख का क़तरा इस्तेमाल कर सकते हैं उसी तरह कम असरवाला पेस्ट भी इस्तेमाल कर सकते हैं। यह अमल रात तक मुअख़्ख़र कर ले तो बेहतर है।

(7) रोज़े की हालत में अजनबी लड़की से बात कर ली या फ़िल्म देख ली, गाना सुन लिया, ताश खेल लिए या क्रिकेट वग़ैरह में वक़्त (समय) ज़ाए कर दिया तो इन बातों से रोज़ा नहीं टूटता मगर अजनबी लड़की से बात करना, फिल्म देखना, गाना सुनना, ताश खेलना न केवल रोज़े की हालत में मना है बल्कि आम दिनों में भी मना है।

(8) रोज़े की हालत में थूक निगलने से रोज़ा फ़ासिद नहीं होता मगर बलग़म बाहर फ़ेंक दे क्यूंकि इस में बीमारी है।

(9) कुछ ख़वातीन (महिलाएँ) यह मानती हैं कि रोज़े में हिजाब में न रहने से रोज़ा टूट जाता है। यह भी ग़लत है। हां हम यह कहेंगे कि महिलाओं के लिए हिजाब रमज़ान और अन्य समय में हमेशा ज़रूरी है, पर्दगी का तालुक़ रोज़े टूटने से नहीं है।

(10) रमज़ान में आम तौर पर लोगों के किरदार से मालूम होता है कि इस्लाम में अच्छाई का ताल्लुक़ महज़ रमज़ान से ही है। हालांकि अच्छाई हमेशा अच्छाई है और बुराई हमेशा बुराई है। इसलिए मुसलमानों को रमज़ान के बाद भी रमज़ान की तरह ही अच्छाई की तरफ़ रग़बत और बुराई से बे-ए'तिनाई (उपेक्षा) होनी चाहिए।

(11) सिगरेट नोशी फ़ेल हराम के साथ रोज़ा के बातिलान का भी सबब है क्योंकि इसका असर मादे तक जाता है।

(12) सूरज डूबने के बाद इफ़्तारी में एहतियात करना सरासर शरीअत की ख़िलाफ़ वर्ज़ी है। यह ग़लती अहनाफ़ और बरेलवी के यहाँ पाई जाती है।

(13) लोगों में यह बात मशहूर है कि इफ़्तार के वक़्त बंदे और रब के दरमियान का पर्दा उठा दिया जाता है। इस बात की कोई हक़ीक़त नहीं है। यह किसी सही हदीस में मज़कूर नहीं है।

(14) तरावीह की नमाज़ में हर दो रकात पर बुलंद से किसी ख़ास ज़िक्र का सबूत नहीं है।

(15) यह बात भी किसी सही हदीस से साबित नहीं है कि रमज़ान में फ़ौत होने से हिसाब-किताब नहीं होता और वह बेहिसाब जन्नत में चला जाता है। एक हदीस इस तरह की आती है कि जो अल्लाह की रज़ा के लिए रोज़ा रखे और उसी हालत में मर जाए तो जन्नत में दाखिल होगा। (अहमद:22813)

(16) कुछ लोग ज़कात देने के लिए रमज़ान का इंतजार करते हैं यह भी दुरुस्त नहीं है। ज़कात का ताल्लुक़ निसाब और साल पूरा होने से है। निसाब तक पहुंचने के बाद जो भी साल पूरा हो जाए ज़कात अदा कर दे उसके लिए ताख़ीर करना और रमज़ान का इंतजार करना सही नहीं है। अगर रमज़ान में साल पूरा होता हो या शव्वाल में तो कुछ पेशगी (पूर्वगी) ज़कात दी जा सकती है। हां, इस महीने में बहुत से

सद्क़े दे सकते हैं जैसा कि नबी ﷺ से साबित है।

(17) सताईसवीं की रात सदक़ा करना कुछ के यहाँ मुख़्तसर है। इस का मतलब हुआ कि सताईसवीं की रात ही शब-ए-क़द्र है जबकि यह रात हर साल मुन्तक़िल होती रहती है। कभी 21, कभी 23, कभी 25, कभी 27 और कभी 29 की रात होती है। इन रातों में ताअत (इबादत/बंदगी) के काम करना बड़े अज्र का काम है। ताअत के कामों में सदक़ा भी है लिहाज़ा बिना 27 की रात मुख़्तसर किए उन सभी रातों में सदक़ा व ख़ैरात करे ताकि शब-ए-क़द्र पाने का इमकान हो।

(18) रमज़ान के आख़िर में हर जगह और हर-कस-ओ-ना-कस (हर किसी) की ज़बान पे यह जुमला आम होता है कि इस साल फ़ित्राना कितना रुपया है? गोया लोगों ने रक़म को ही फ़ित्राना समझ रखा है और उन्हें गाइड करने वाले उलमा भी ऐसे ही हैं जो पहले से कैलकुलेटर से हिसाब किए बैठे होते हैं। फ़ित्राने की असल फ़िक्स 2.25 किलो अनाज है। फ़ित्रा देने वाला खाने के किसी भी अनाज से 2.25 किलो दे सकता है। एक रेट लगाने वाले उलमा को अनाज के बजाए रुपया निकालने और एक मुख़्तसर अनाज का रेट फ़िक्स करने का किस ने इख़्तियार दिया है? उलमा को चाहिए कि लोगों को फ़ित्राने की हक़ीक़त

बताएं ताकि फ़ित्राने लेने और देने वाले तमाम लोगों को आसानी हो। यह अलग बात है कि ब-वक़्त ज़रूरत फ़ित्राने की रक़म भी निकाली जा सकती है।

वल्लाहु आलम

====================

[86].रस्म ताज़ियादारी, इस्लाम और शर'ई ताज़ियत की कसौटी पर

आजकल मोहर्रम में जिस क़िस्म (प्रकार) की ताज़ियादारी की रस्म अदा की जाती है, इस्लाम में उसकी हैसियत क्या है, इसे जानने के लिए पहले यह जानना ज़रूरी है कि ताज़ियत किसे कहते हैं और इसका शर'ई हुक्म क्या है?

ताज़ियत को अरबी में त'अज़ियत लिखते हैं, जैसे रहमत को अरबी में रहमत लिखते हैं। ताज़ियत का लुग़वी मानी (अर्थ) है तससली देना, और शर'ई इस्तिलाह में ताज़ियत का मतलब है मय्यत के रिश्तेदार को सब्र की तलक़ीन करना और उन्हें तसल्ली देना ताकि उनका ग़म हल्का हो और उन्हें ढांढस मिले।

जब से शियाओं ने मातम और ताज़ियादारी को रिवाज बनाया और मुसलमानों के क़ब्र परस्त तबक़े ने इसे अपनाया, इसके बाद उर्दू लुग़त वालों ने ताज़ियत का एक मतलब और बढ़ा दिया। पहले से ताज़ियत का एक मतलब है तसल्ली देना और दूसरा मतलब जैसे फ़रहंग-ए-

आसफ़िया में है: "हज़रत इमाम हसन और हुसैन की तुर्बतोन की नक़ल जो कागज़ और बांस के कुब्बे के अंदर मोहर्रम के दिनों में दस रोज़ तक उनका मातम या फ़ातिहा दिलाने के लिए बतौर यादगार मनाते हैं।"

यहाँ पर एक शिया विकीपीडिया के हवाले से भी ताज़ियत का मतलब जानते चलें तो मौज़ू को समझने में मदद मिलेगी। शिया विकीपीडिया क्या कहता है: "ताज़िया शियाओं की एक रस्म है जो इमाम हुसैन के जनाज़े या उनके रोज़े की शबीह बनाकर आशूरा के दिन 'अज़ा-दारी के जलूस में निकाले जाते हैं। मुख़्तलिफ़ इलाकों में ताज़ियों की मुख़्तलिफ़ शक्लें होती हैं। ताज़िया सोने, चांदी, लकड़ी, बांस, कपड़े, स्टील और कागज़ से तैयार किया जाता है। इराक़ में ताज़िया को शबीह और ईरान में नख़ल ग़र्दानी कहा जाता है।"

इस्लाम में ताज़ियत किसी की मौत पर उसके रिश्तेदारों से की जाती है ताकि मय्यत के घरवालों को तसल्ली हो क्योंकि जिनके घर में वफ़ात होती है, वे लोग ग़मगीन और उदास होते हैं।

इस्लाम ने ऐसे मौक़े पर तालीम दी हैं कि मय्यत के घरवालों को तसल्ली दी जाए, इसे ताज़ियत कहते हैं। ताज़ियत से मुताल्लिक़ कई हदीसें मिलती हैं, आइए कुछ हदीसें देखते हैं और इस्लाम में ताज़ियत की हैसियत जानते हैं।

औसामा बिन ज़ैद रज़ियल्लाहु अन्हुमा ने बयान किया कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम की एक साहबज़ादी (हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु अन्हा) ने आप सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम को इत्तिला (सूचना) दी कि मेरा एक लड़का मरने के क़रीब है, इसलिए आप सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम तशरीफ़ लाएं। आप सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम ने उन्हें सलाम कहलवाया और ब-ईं अलफ़ाज़ ताज़ियत फ़रमायी:

إِنَّ لِلَّهِ ما أَخَذَ، وله ما أَعْطَى، وكُلٌّ عِنْدَهُ بِأَجَلٍ مُسَمًّى، فَلْتَصْبِرْ، ولْتَحْتَسِبْ(صحيح البخاري:1284)

तर्जुमा: अल्लाह तआला ही का सारा माल है, जो ले लिया वह उसी का था और जो उसने दिया वह भी उसी का था और हर चीज़ उसकी बारगाह से वक्त मुक़र्रर पर ही होती है। इसलिए सब्र करो और अल्लाह तआला से सवाब की उम्मीद रखो।

इस हदीस में आगे ज़िक्र है कि नबी ﷺ बच्चे की जान-कनी (नज़अ की हालत) का हाल देखकर आपकी आंखों से आंसू बहने लगे, इसलिए मुमकिन है कि मय्यत के ग़म में इंसान की आंखों से आंसू बह जाएं, मगर मय्यत पर ज़ोर ज़ोर से रोना, चीख़ना-चिल्लाना, गिरेबान चाक करना और सीना-कोबी करना मना है।

एक दूसरी हदीस में ताज़ियत की फ़ज़ीलत बयान की गई है, चूंकि नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

ما من مؤمنٍ يعزِّي أخاهُ بِمُصيبةٍ إلَّا كساهُ اللَّهُ سبحانَهُ من حُلَلِ الكرامةِ يومَ القيامَةِ(صحيح ابن ماجه:1311)

तर्जुमा: जो मोमिन अपने भाई को किसी मुसीबत पर तसल्ली देता है, अल्लाह तआला उसे क़यामत के दिन इज़्ज़त अफ़ज़ाई का ख़िल'अत अता फ़रमाएगा।

सुनन निसाई (2090) में एक वाक़िआ मौजूद है। क़ुर्रा रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं: नबी अकरम सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम जब बैठते तो आपके सहाबा की एक जमाअत भी आपके पास बैठती, उनमें एक

ऐसे आदमी भी होते जिनका एक छोटा बच्चा उनकी पीठ के पीछे से आता, तो वह उसे अपने सामने (गोद में) बिठा लेते। (चूंकि कुछ दिनों बाद) वह बच्चा मर गया, तो उस आदमी ने अपने बच्चे की याद में महफ़िल में आना बंद कर दिया और रंजीदा रहने लगा, तो (जब) नबी अकरम सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम ने उसे नहीं पाया तो पूछा:

مالي لا أرى فلانًا ؟ قالوا : يا رسولَ اللَّهِ ، بُنَيُّهُ الَّذي رأيتَهُ هلَكَ ، فلقيَهُ النَّبيُّ فسألَهُ عن بُنَيِّهِ ، فأخبرَهُ أنَّهُ هلَكَ ، فعزَّاهُ علَيهِ ، ثمَّ قالَ : يا فلانُ ، أيُّما كانَ أحبُّ إليكَ أن تُمتَّعَ بِهِ عمُرَكَ ، أو لا تأتي غدًا إلى بابٍ من أبوابِ الجنَّةِ إلَّا وجدتَهُ قد سبقَكَ إليهِ يفتَحُهُ لَكَ ، قالَ : يا نبيَّ اللَّهِ ، بل يَسبقُني إلى بابِ الجنَّةِ فيَفتحُها لي لَهوَ أحبُّ إليَّ ، قالَ : فذاكَ لَكَ(صحيح النسائي:2087)

तर्जुमा: क्या बात है? मैं फुलां को नहीं देख रहा हूँ?" लोगों ने कहा: अल्लाह के रसूल! उसका नन्हा बच्चा जिसे आपने देखा था, मर गया। चूंकि नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उससे मुलाक़ात की, (और) उसके बच्चे के बारे में पूछा, तो उसने बताया कि वह मर गया, तो आपने उसकी (मौत की ख़बर) पर उसकी ताज़ियत की, फिर फ़रमाया: ऐ फुलां! तुझको कौन सी बात ज़्यादा पसंद है? यह कि तुम उससे उम्र भर फ़ायदा उठाते या यह कि (जब) तुम क़यामत के दिन जन्नत के किसी दरवाज़े पर जाओ तो उसे अपने से पहले पहुंचा हुआ पाओ, वह तुम्हारे लिए उसे खोल रहा हो? तो उसने कहा: अल्लाह के नबी! मुझे यह बात ज़्यादा पसंद है कि वह जन्नत के दरवाज़े पर

मुझसे पहले पहुंचे, और मेरे लिए दरवाज़ा खोल रहा हो, आपने फ़रमाया: तुम्हारे लिए ऐसा (ही) होगा।

इसमें कलिमा इस्तिश्हाद है "فَعَزَّاهُ عَلَيْهِ" यानी नबी ने उस आदमी की ताज़ियत की जिसका बच्चा मर गया था। इसी कलिमा की मुनासबत से इमाम निसाई ने इस हदीस पर बाब बांधा है "بَابُ: فِي التَّعْزِيَةِ" यानी बाब: ताज़ियत का बयान।

इस मक़ाम पर मौज़ू से मुताल्लिक़ एक अहम हदीस भी देखते चलें कि सय्यदना हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु की शहादत पर एक ताबई ने अहल-ए-बैत से कैसे ताज़ियत की?

शहर बिन हौशब कहते हैं: "मैं उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा के पास हुसैन बिन अली रज़ियल्लाहु अन्हु की ताज़ियत के लिए गया" तो वह कहने लगीं: एक बार मेरे पास नबी करीम सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम आए और एक चादर पर बैठे, आप सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम के पास सय्यदा फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा कोई चीज़ लाईं, मैंने उसे रखा, आप सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम ने कहा: "हसन, हुसैन और अपने चचाज़ाद को भी बुलाओ।" जब सारे आप सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम

के पास इकट्ठे हो गए तो आप सल्लल्लाहु अलेहि व सल्लम ने उनके बारे में कहा: ये मेरी ख़ास औलाद हैं और मेरे अहल-ए-बैत हैं। ऐ अल्लाह! इनसे गंदगी और नजासत को दूर कर दे और इन्हें अच्छी तरह पाक कर दे। (मुअज्जम सग़ीर लि तिबरानी: 846)

मज़कूरा बाला रिवायात से मालूम होता है कि वफ़ात के वक़्त मय्यत के घरवालों को सब्र दिलाया जाए, वे किसी भी तरह के अल्फ़ाज़ के साथ सब्र और तसल्ली दे सकते हैं, मु'ईन अलफ़ाज़ में ताज़ियत करना कोई ज़रूरी नहीं है।

नीज़ ताज़ियत के बाब में जहां तक सोग का मामला है, वह सिर्फ़ औरतों के साथ ख़ास है, यानी मर्दों के लिए कभी भी सोग जाइज़ नहीं है, सिर्फ़ औरतों के लिए सोग जाइज़ है क्योंकि सोग तरक ज़ीनत को कहते हैं। आइए हदीस देखते हैं:

عَنْ أُمِّ عَطِيَّةَ، عَنِ النَّبِيِّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَتْ: «كُنَّا نُنْهَى أَنْ نُحِدَّ عَلَى مَيِّتٍ فَوْقَ ثَلاَثٍ، إِلَّا عَلَى زَوْجٍ أَرْبَعَةَ أَشْهُرٍ وَعَشْرًا، وَلاَ نَكْتَحِلَ وَلاَ نَتَطَيَّبَ وَلاَ نَلْبَسَ ثَوْبًا مَصْبُوغًا، إِلَّا ثَوْبَ عَصْبٍ، وَقَدْ رُخِّصَ لَنَا عِنْدَ الطُّهْرِ إِذَا اغْتَسَلَتْ إِحْدَانَا مِنْ مَحِيضِهَا فِي نُبْذَةٍ مِنْ كُسْتِ أَظْفَارٍ، وَكُنَّا نُنْهَى عَنِ اتِّبَاعِ الجَنَائِزِ»(صحیح البخاری:313)

तर्जुमा: उम्मे अतिया से रिवायत है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया हमें किसी मय्यत पर तीन दिन से ज़्यादा सोग करने से मना किया जाता था। लेकिन शौहर की मौत पर चार महीने दस दिन के सोग का हुक्म था। उन दिनों में हम न सुरमा लगातीं न ख़ुशबू और अस्ब (यमन की बनी हुई एक चादर जो रंगीन भी होती थी) के अलावा कोई रंगीन कपड़ा हम इस्तेमाल नहीं करती थीं और हमें (इद्दत के दिनों में) हैज़ के ग़ुस्ल के बाद कुस्त अज़फ़ार इस्तेमाल करने की इजाज़त थी और हमें जनाज़ा के पीछे चलने से मना किया जाता था।

यही वजह है कि उम्मे अतिया रज़ियल्लाहु अन्हा के बेटे का जब इंतेक़ाल हुआ तो उन्होंने सिर्फ़ तीन दिन ही सोग मनाया, जबकि बेटे से जुदाई का ग़म एक माँ को कितना होगा, इसका अंदाज़ा लगाया जा सकता है। मोहम्मद बिन सिरीन से रिवायत है:

تُوفِّيَ ابنٌ لأمِّ عطيةَ رَضِيَ اللهُ عنها ، فلمَّا كان اليومُ الثالثُ ، دعت بصُفْرَةٍ فتمسحتْ بهِ ، وقالت : نُهِينا أن نُحِدَّ أكثرَ من ثلاثٍ إلَّا بزوجٍ .(صحيح البخاري:1297)

तर्जुमा: उम्मे अतिया रज़ियल्लाहु अन्हा के एक बेटे का इंतिक़ाल हो गया। इंतिक़ाल के तीसरे दिन उन्होंने सिफ़्र-ए-ख़लूक़ (एक क़िस्म की ज़र्द ख़ुशबू) मंगवाई और उसे अपने बदन पर लगाया और फ़रमाया

कि ख़ाविंद के सिवा किसी दूसरे पर तीन दिन से ज़्यादा सोग करने से हमे मना किया गया है।

इससे मालूम होता है कि सोग सिर्फ़ औरत के लिए जाइज़ है, मर्द के लिए नहीं। दूसरी बात यह है कि औरत अपने रिश्तेदार की मौत पर तीन दिन सोग मना सकती है, यह जाइज़ है मगर वाजिब नहीं है। हालांकि, शौहर की वफ़ात पर वाजिब तौर पर चार महीने दस दिन सोग मनाना है और यह सोग वफ़ात के वक्त जिंदगी में एक बार है, बार-बार और हर साल सोग जाइज़ नहीं है।

शरीअत मोहम्मदी में मय्यत के घरवालों की ताज़ियत से मुताल्लिक़ इख़्तिसार में यह बात जान लें कि जब किसी के घर में वफ़ात हो, तो इस वक्त घरवाले ग़मगीन होते हैं। ऐसे में मय्यत की माफ़ी के लिए दुआ दी जाए और घरवालों को तसल्ली और सब्र की तलीक़न की जाए। पड़ोसी का हक़ बनता है कि इस दिन मय्यत के घरवालों के लिए खाना बनाया जाए और अगर घरवालों को मदद की ज़रूरत हो तो उनकी मदद की जाए। ताज़ियत के लिए कोई ख़ास दिन नहीं, कोई ख़ास तरीक़ा नहीं, और कोई ख़ास अलफ़ाज़ ज़रूरी नहीं।

-इस्लामी तारीख़ (इतिहास) में कई घटनाएँ घट चुकी हैं और कई शहादतें हुई हैं, इनमें से एक शहादत सय्यदना हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु की भी है, लेकिन हुसैन की शहादत के बहाने शियाओं ने ताज़िया की रस्म ईजाद की और आज मुसलमानों की अक्सरियत (अधिकांशता) भी शियाओं की तरह ताज़िया दारी करते हुए नज़र आती है। यह बिल्कुल न भूलें कि रस्म ताज़िया शियाओं की ईजाद है और यह रस्म ताज़िया सय्यदना हुसैन की याद में ताज़ियत के तौर पर है। ताज़िया में शहीद की क़ब्र की शबीह होती है जो सोने, चांदी, लकड़ी, बांस, कपड़े, स्टील और कागज़ से तैयार की जाती है।

जब आप इस्लामी ताज़ियत और रस्म ताज़िया का मुआयना करते हैं तो मालूम होता है कि रस्म ताज़िया बिल्कुल इस्लाम के ख़िलाफ़ है, इसका इस्लाम से दूर-दूर तक कोई वास्ता (संबंध) नहीं है। इस्लामी शरीअत में ताज़ियत का लफ़्ज़ इस्तेमाल किया गया है और इसके पीछे सभी अमल ख़ुद से तय किए गए हैं। आइए देखते हैं कि रस्म ताज़िया कैसे इस्लामी ताज़ियत और इस्लामी तालीमात के ख़िलाफ़ है।

(1) नबी ﷺ की वफ़ात 9/रबी उल-अव्वल ग्यारह हिज्री को हुई जबकि कर्बला का वाक़िआ 10/मुहर्रम इकसठ् हिजरी को पेश आया। और

आप जानते हैं कि दीन इस्लाम नबी ﷺ के उस दौर में ही पूरा हो चुका था, इसलिए दीन वही है जो क़ुरआन और हदीस में मौजूद है और क़ुरआन और हदीस से बाहर कोई अमल दीन नहीं है। रस्म ताज़िया सय्यदना हुसैन से जुड़ी हुई है जो यक़ीनन इस्लाम के पूरा होने के बाद की पैदावार है। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कभी भी किसी की वफ़ात या शहादत पर रस्म ताज़िया मनाने का हुक्म नहीं दिया है। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने वफ़ात के समय मय्यत के घरवालों से सिर्फ़ ताज़ियत का हुक्म दिया है जिसका ज़िक्र ऊपर की सुतूर में है, लेकिन बांस और कागज़ और लकड़ी से लंबा जहाज़ मॉडल क़ब्र की शबीह बनाने का कहीं हुक्म नहीं दिया है, न किसी सहाबी के लिए और न ही अहल-ए-बैत के शहीद के लिए और न ही ख़ुसूसियत के साथ हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु के लिए। यह नई ईजाद है और हर ईजाद बिदअत है और हर बिदअत गुमराही है और हर गुमराही जहन्नम में ले जाने वाली है।

(2) ताज़िया ताज़ियत से माख़ूज़ है और इस्लाम में ताज़ियत ज़बानी तौर पर मय्यत के घरवालों को दिलासा और तसल्ली देने को कहते हैं, लेकिन रस्म ताज़िया दारी में मय्यत की क़ब्र की शबीह बनाई जाती है और हर साल दस मुहर्रम को ताज़िया मनाया जाता है। किसी

मय्यत या शहीद की शहादत के दिन भी एक बार भी शहीद की क़ब्र की शबीह नहीं बनाई जा सकती है, तो हर साल इस अमल को दोहराना भी किसी तरह जाइज़ नहीं है। और कितने ही गुमराह मुसलमान हैं जो क़ब्रों की शबीह बनाते हैं, गलियों में घुमाते हैं, फिर तालाब में जला देते हैं। क्या यह हिंदुओं की मूर्ति पूजा जैसी इबादत नहीं है? हिंदू भी अपने त्योहारों पर अपने बुज़ुर्गों की मूर्ति बनाते हैं, उसकी तज़ीम और इबादत करते हैं और फिर उसे पानी में बहा देते हैं। यानी जो सब आस्था और अमल हिंदू अपनी मूर्ति के साथ अंजाम देते हैं, ठीक वैसे ही आस्था और अमल के साथ ताज़िया दारी की जाती है। इस लिहाज़ से यह शिर्क और कुफ़्र का अमल भी है और अल्लाह तआला ने कुरआन में ज़िक्र किया है कि वह हर गुनाह को माफ़ कर देगा मगर शिर्क को कभी माफ़ नहीं करेगा, इसलिए मुसलमानों को इस शियाई ईजाद शिर्क और कुफ़्र के अमल से परहेज़ करना चाहिए।

(3) ताज़िया में मौजूद क़ब्र को ज़िंदा हुसैन समझा जाता है, उनकी तज़ीम की जाती है, उनके लिए नियाज़ की जाती है, नज़र मानी जाती है और उनसे मदद मांगी जाती है, यहां तक कि उनका सजदा भी किया जाता है और ताज़िया के नीचे से बच्चों को गुज़ारा जाता है इस विश्वास के साथ कि साहिब-ए-क़ब्र की पनाह में आ जाएगा। जैसे एक

इंसान को माबूद की हैसियत से पूजा जाता है, अगर यह शिर्क नहीं है तो फिर शिर्क का नाम क्या है? और अगर कोई कलमा पढ़कर ये सारे मुशरिकाना अमल अंजाम देगा तो उसका भी वही हश्र होगा जो मूर्ति पूजा करने वालों का होगा क्योंकि इन दोनों में एतिक़ाद (आस्था) और अमल के एतिबार (हिसाब) से कोई फ़र्क़ नहीं है।

(4) कहीं पर ताजिया मे ज़ुल-जनाहैन (दो परों वाले घोड़े) और दुलदुल नामी सवारी तैयार करके उसका जलूस निकाला जाता है, यह देखने में अजीब मूर्ति की शक्ल मे होती है, इसे नफ़ा और नुक़सान का मालिक समझकर उसकी तारीफ़ की जाती है। उससे मुरादे मांगी जाती हैं, उसकी ज़ियारत और उसके जलूस में शामिल होना अज्र और सवाब समझा जाता है। आमतौर पर इस तरह की रस्में शिया ही करते हैं, मगर इसमें ताज़िया मनाने वाले भोले भाले मुसलमान भी शामिल होते हैं जो बेहद शर्मनाक हैं। अल्लाह तआला ने हमें बुतों की इबादत से बचाने के लिए निजात दे कर इस्लाम में दाख़िल किया, फिर भी कुछ मुसलमान जानबूझकर या ग़लती से बुतों, घोड़ों, पत्थरों, क़ब्रों और मूर्तियों की इबादत किसी न किसी शक्ल में करते हैं। हम ऐसे बे-राहो के लिए अल्लाह से हिदायत की दुआ करते हैं।

(5) ताज़ियत तो मय्यत के ग़म (दुख) पर सब्र दिलाने का कहते हैं मगर ताज़िया दारी में बाक़ाएदा ढोल बजाया जाता है, इसमें नाचा और थिरका जाता है, जवान लड़के और लड़कियाँ इसमें रक़्स करते हैं और ख़ूब हंसते गाते, खेलते तमाशा करते और मेला ठेला लगाते हैं। पहली बात ढोल बाजो की ताज़िया से कोई निस्बत नहीं बनती, दूसरी बात ढोल और नाच (नृत्य) हमेशा मना है फिर ताज़िया के साथ कैसे जाइज़ होगा। नबी ﷺ ने इन जैसे आलात को शैतान का साज़ बनाया है और आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाते हैं कि इस उम्मत में ख़स्फ़, मस्ख़ और क़ज़फ़ वाक़े होगा, एक मुसलमान ने अर्ज़ किया : अल्लाह के रसूल! ऐसा कब होगा? आपने फ़रमाया: जब नाचने वालियां और बाजे आम हो जाएंगे और शराब ख़ूब पी जाएगी। (सहीह अल-तिर्मिज़ी: 2212)

मुस्लिम भाइयों! अल्लाह कभी तुम्हारे इन अमलों से राज़ी नहीं होगा बल्कि तुम ऐसे अमल करके क़हर इलाही को दावत दे रहे हो, ज़रा ग़ौर करो कि शहीदे कर्बला के वास्ते यौम शहादत पर शहनाई बजाना क्या हुब्ब ए अहले बैत है या यह अहले बैत से बुग़्ज़ की अलामत है और जो इस्लाम औरतों को अपने घर में सुकूनत इख़्तियार करने का हुक्म देता है मगर तुम उन्हें घरों से सड़कों, गली कूचों और चौक

चौराहों पर निकालते हो, ख़ुद भी नाचते हो, उनसे भी नचवाते हो और यूं मुसलमान ख़वातीन की इज़्ज़त अपनों और ग़ैरों के सामने नीलाम करते हो।

(6) ताज़िया की मुनासबत से मर्सिया-ख़्वानी, नौहा, मातम, गिरेबान चाक करना, चीख़ना-चिल्लाना, रोना-धोना किया जाता है। हमने सुतूर बाला मे बताया कि सिर्फ़ वफ़ात के वक्त मय्यत के घर वालों में ख़ातून को तीन दिन का सोग मनाने की इजाज़त है और शौहर की वफ़ात हो तो चार महीने दस दिन का सोग मनाने का हुक्म है, मगर मर्दों को कभी भी सोग मनाने की इजाज़त नहीं है, सोग सिर्फ़ औरत के लिए है वह भी वफ़ात के वक्त। और मातम व नौहा तो कभी भी इस्लाम में जाइज़ नहीं है, न मौत के वक्त और न ज़िंदगी में कभी। नबी ﷺ का फ़रमान है: हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया:

ليس مِنَّا من ضربَ الخدودَ، وشَقَّ الجيوبَ، ودعا بدَعْوَى الجاهليَّةِ .(صحيح البخاري:1297)

तर्जुमा: जिसने मुंह पीटा, गिरेबान चाक किया और दौर-ए-जाहिलिय्यत की पुकार लगाई वह हम में से नहीं है।

बल्कि मय्यत पर रोने-धोने और नौहा करने से मय्यत को अज़ाब दिया जाता है। नबी करीम ﷺ ने फ़रमाया: मय्यत को क़ब्र में उस पर किए गए नौहा की वजह से अज़ाब होता है। (सहीह अल-बुख़ारी: 1292)

आप ﷺ का फ़रमान है: "यक़ीनन मय्यत को उसके घर वालों के रोने से अज़ाब दिया जाता है।" (सहीह अल-बुख़ारी: 1288)

ज़रा सोचो कि तुम मातम और नौहा करके अहले बैत से मोहब्बत का सबूत दे रहे हो और सवाब-ए-दारेन हासिल कर रहे हो या शोहदा-ए-कर्बला को तकलीफ़ पहुँचा रहे हो?

(7) इसी तरह ताज़िया के पस-ए-मंज़र में सहाबा किराम को सब्ब-ओ-शत्म (गाली-गलौज) किया जाता है, ख़ास तौर पर अमीर मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु पर तान किया जाता है। सहाबा को गाली देना शिया की ख़ास पहचान है मगर आज शिया के झांसे में बहुत सारे मुसलमान आ गए और मुसलमान भी कुछ सहाबा को बुरा-भला कहने लगे। इस बारे में मुख़्तसरन यह जान लें कि एक दिल में ईमान और सहाबी का बुग़्ज़ दोनों जमा नहीं हो सकते हैं। अगर दिल में ईमान है तो

सहाबी की मोहब्बत होगी और अगर कोई आदमी सहाबी से बुग़्ज़ रखता है तो उसके दिल में ईमान नहीं होगा।

(8) ताज़िया में एक अमल ख़ुद को तकलीफ़ देना है जैसे तलवार और चाकू से ख़ुद को ज़ख़्मी करना, धारदार हथियार से शरीर को लहूलुहान करना, आग लगाना, सीना कोबी और ज़ंजीर ज़नी करके ख़ुद को नुक़सान पहुँचाना। ये सारे शियाई अमल हैं और ये उनके बुरे कर्मों का नतीजा हैं जिनके कारण वे दीन की बेइज़्ज़ती और ज़िल्लत के रूप में क़ियामत तक ख़ुद को तकलीफ़ में रखेंगे। यह वाज़ेह (स्पष्ट) है कि इन भयानक हरकतों का इस्लाम और शारीअत की ताज़ियत से कोई ताल्लुक़ नहीं है, बल्कि इस्लाम तो ख़ुद को छोटी सी भी तकलीफ़ पहुँचाने से मना करता है। शियाओं की देखादेखी कहीं-कहीं बरेलवी लोग भी इसी तरह की हरकतें अंजाम देते हैं। बर्रेसग़ीर में अक्सर बरेलवी ताज़िया में तलवार, ज़ंजीर और लाठियों से अजीबोगरीब खेल, तमाशे, करतब और सर्कस जैसा अमल करते हैं, यह अमल चौक-चौराहों, गलियों और बाज़ारों में किया जाता है। इन हरकतों को देखकर ऐसे बदक़िस्मत मुसलमानों पर अफ़सोस होता है। क्या नबी की उम्मत ऐसी हो सकती है और ऐसे लोग ख़ुद को असली सुन्नी कहते हैं?

मैंने सुना है कि इन बरेलवियों को कुछ जगहों पर शियाओं से ताज़िया मनाने के पैसे भी मिलते हैं और इन पैसों से ये बरेलवी धूमधाम से ताज़िया मनाते हैं। कितना अफ़सोस का मुक़ाम है कि सहाबा को गाली देने वाले शियाओं की महफ़िल-ए-अज़ादारी में बरेलवी शौक़ से जाते हैं, उनकी तरह मातम और ताज़िया मनाते हैं जबकि दूसरी तरफ़ ये कहते हैं कि देवबंदी या अहले हदीस से सलाम करने पर निकाह टूट जाता है और उनको बदमज़हब और बदअक़ीदा कहा जाता है। हक़ीक़त यह है कि गुमराह मुसलमानों को गुमराह फ़िरक़ों से ही मोहब्बत हो सकती है।

(9) ताज़िया में ग़ैरुल्लाह के नाम की नज़र-नियाज़ की जाती है, मुख़्तलिफ़ क़िस्म (विभिन्न प्रकार) के पकवान पकाए जाते हैं और उन्हें मज़ारों पर पेश किए जाते हैं और लोगों में भी बांटे जाते हैं और झूठी रिवायतों का सहारा लेकर इन नज़र-नियाज़ के झूठे फ़ज़ाइल बयान किए जाते हैं। हमें मालूम होना चाहिए कि नज़र इबादत है और ग़ैरुल्लाह के लिए नज़र मानना और ग़ैरुल्लाह के लिए नियाज़ करना शिर्क है और अल्लाह शिर्क को कभी माफ़ नहीं करेगा।

(10) मुसलमानों में अलहम्दुलिल्लाह, अहले हदीस जमात बिदअतों से पूरी तरह से दूर है, और ताज़ियादारी की रस्म से भी दूर-दूर का कोई वास्ता नहीं है। बल्कि इस कुफ़्रिया और शिर्किया रस्म की सख़्त लहजे में कोई जमात तर्दीद (आलोचना) करती है तो वह अहले हदीस जमात ही है। देवबंद के उलमा भी ताज़िया को नहीं मानते और अपनी अवाम को इससे रोकते हैं, फिर भी कहीं-कहीं देवबंदी अवाम इस काम में शामिल हैं। जहां तक बरेलवियों का मसला है तो यह लोग खुलेआम ताज़िया बनाते, मनाते और यह विश्वास दिलाते हैं कि असली मुसलमान और अहले बैत से सच्ची मोहब्बत करने वाले यही बरेलवी हैं। जबकि मैं बता चुका हूं कि ताज़िया बिदअत है, कुफ़्र भी है और इसमें शिर्किया अमल भी पाया जाता है। कम से कम बरेलवी अपने आला हज़रत अहमद रज़ा के फ़तवे को, जो रिसाला ताज़ियादारी में मौजूद है, उसी को मान लें और उसी पर अमल कर लें, यही बहुत है। इस रिसाले में अहमद रज़ा का कहना है "अब कि ताज़ियादारी इस तरीक़े ना-मर्ज़िय्या (ना पसंदीदा) का नाम है, क़तअन बिदअत, नाजाइज़ और हराम है।"

वैसे ताज़िया से मुताल्लिक़ बहुत सारे और भी मुद्दे हैं जिनका इस्लाम से कोई ताल्लुक़ नहीं है, हालांकि मैंने अहम दस मुद्दों का ज़िक्र किया

है और ख़ुलासे के तौर पर एक जुमले में यह समझ लें कि ताज़िया दारी पूरी तरह से नाजाइज़ और हराम है और ताज़िया के साथ जितने भी अमल किए जाते हैं वे भी ताज़िया की तरह नाजाइज़ हैं क्योंकि जिस अमल की बुनियाद ही हराम है, उससे जुड़े सभी अमल भी हराम होंगे। और क़ुरआन और हदीस के दलीलों से यह पता चलता है कि ताज़िया दारी करने वाले ऊपर बताए गए अमलों से तौबा किए बिना मर गए तो अल्लाह के पास उनकी माफ़ी महाल (संभव) नहीं है और जो जन्नत के जवानों के सरदार हैं यानी हसन और हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हुमा वे ख़ुद भी कभी नहीं चाहेंगे कि उनके नाम पर बेहिसाब बिदअत, गुनाह और शिर्क करने वाले लोग जन्नत में दाख़िल हों। अल्लाह तआला से दुआ है कि वह लोगों को हिदायत दें ताकि वे सच्चे ईमान वाले और पक्के तौहीद वाले बन सकें और ऊपर बताए गए कुफ़्र और गुनाह से तौबा करके सही रास्ते पर आ सकें।

=============

[87].रहम-ए-मादर (बच्चादानी/कोख) की पैवंद-कारी इस्लाम की नज़र में

टेक्नोलॉजी के इस हैरान कुन दौर में इंसानों को हैरान कर देने वाली नई-नई दरयाफ़्ते (खोज) हो रही हैं। दरयाफ़्ते कैसी भी हों, मादाह परस्ती के दौर में अक्सर लोग बिना समझे-बूझे उनकी हामी भरने लगते हैं। एक मुसलमान होने के नाते हमारा फ़रीज़ा बनता है कि जो नई-नई दरयाफ़्ते हो रही हैं, उनके मुताल्लिक़ उलमा-ए-इस्लाम से शरई हैसियत दरयाफ़्त करें, ताकि कहीं अनजाने में हराम काम में मुलव्विस न हो जाएं। इस्लाम ना साइंस का मुख़ालिफ़ है, ना नई ईजादात और इकतिशाफ़ात (नयी शोध) का मुख़ालिफ़ है, और ना ही जदीद आलात और टेक्नोलॉजी का मुख़ालिफ़ है। हां, इस्लाम एक मुनज़्ज़म निज़ाम-ए-हयात पेश करता है, उसके अपने उसूल और तालीमात हैं। नई दरयाफ़्ते (खोज) और टेक्नोलॉजी की जो चीज़ इस्लामी निज़ाम से मुतसादिम (एक दूसरे से टकराने वाली) होगी, उसका इस्तेमाल हमारे लिए जाइज़ नहीं होगा।

मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी भी दुनिया वालों के लिए एक नई खोज है, गो कि इस पर बरसों से तजुर्बा किया जा रहा था। पहले जानवरों

पर तजुर्बा किया गया, वहां कामयाबी मिली तो फिर इंसानों पर बर्ता गया और मुतअद्दिद कुर्बानियों और इंसानी हलाकतों के बाद 3 मुमालिक (स्वीडन, अमेरिका, और इंडिया) में अब तक मादर-ए-रहम की पैवंदकारी पर तजुर्बा कामयाब हुआ है। पहली बार 2014 में स्वीडन में कामयाबी मिली और फिर 2017 में अमेरिका और इंडिया में यह तजुर्बा कामयाबी के मरहले से गुज़रा।

मादर-ए-रहम को अंग्रेजी में 'यूटेरस' और पैवंदकारी को 'ट्रांसप्लांट' कहा जाता है। इस तरह मादर-ए-रहम की पैवंदकारी की अंग्रेज़ी इस्तिलाह 'यूटेरस ट्रांसप्लांट' राइज है। इंडिया के सिटी पुणे के गैलेक्सी नामी अस्पताल में गुजरात की रहने वाली ख़ातून मीनाक्षी वलंद ने 18 अक्टूबर 2018 को एक बेटी को जन्म दिया, जिसमें उसी की मां की बच्चादानी ट्रांसप्लांट की गई थी। इस बात से जहां इंडिया का सर फख़्र से बुलंद हो रहा है, वहीं लोगों में इस का तजुर्बा की ख़ुशी मनाई जा रही है और मुस्तक़बिल में औरत के बांझपन के ख़ात्मे की उम्मीद जताई जा रही है।

अभी तक दुनिया में जिसे बच्चा ना हो, वो या तो सब्र करता रहा है, या किसी औरत की कोख किराया पर लेकर बच्चा (सरोगेट) गोद

लिया है या दूसरे का बच्चा (एडॉप्शन) गोद लिया है। दूसरी सूरत को 'सरोगेसी' या 'सरोगेट मदरहुड' कहा जाता है। इसका तरीक़ा-ए-कार यह है कि मर्द की मनी और औरत का बैज़ा मिला कर लैबोरेटरी में जीनीन (related to genes) तैयार किया जाता है, फिर तैयार शुदा जीनीन को इंजेक्शन के ज़रिए औरत की बच्चादानी में डाला जाता है। इस्लाम में यह अमल ना जाइज़ है। मस्नूई हमल के कई इक़्साम हैं, उनमें कुछ जाइज़ भी हैं, इस पर आगे बहस आएगी।

मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी के असबाब और मक़ासिद:

शादी के बाद एक औरत की ख़्वाहिश मां बनने की होती है, लेकिन जब उसे शादी के बाद बच्चा पैदा नहीं होता है तो दर-दर की ठोकर खाती है, डॉक्टर से मदद की गुहार लगाती है। यह बड़ी वजह बनी मादर-ए-रहम की पैवंदकारी की।

इसके अलावा मुझे यह वजह भी कुछ कम बड़ी नहीं मालूम होती है कि आजकल बड़ी तादाद में औरत अपनी बच्चादानी कटवा कर फेंक रही है, अस्पताल में बड़ी तादाद में ज़ाए होने वाले इंसानी अज़ा (रहम-ए-मादर) की मौजूदगी ने डॉक्टर और साइंसदानों को इस तरफ़ तवज्जोह मबज़ूल किया और उसको कार-आमद (मुफ़ीद) बनाने में ग़ौर और फ़िक्र की दावत दी।

साइंटिस्ट दुनिया वालों को नई-नई खोज से मुत'आरिफ़ (परिचित) कराने की हमा-वक़्त (हमेशा) कोशिश करते रहते हैं, इस पहलू पर किसी की नज़र गई और तजुर्बा शुरू हो गया। हलाकतों के बावजूद इस पर मुसलसल तजुर्बा की वजह यह बनी कि यह म'ईशत का बड़ा दरवाज़ा खोल रहा था। जिसे औलाद ना हो रही हो, उसके लिए औलाद की उम्मीद जगाने वाला मुँह मांगी रक़म हासिल कर सकता है।

कुछ औरतों के साथ रहम की पेचीदगी होती है, जिसकी वजह से उसे मजबूरन हटाना पड़ता है। कुछ औरतों में पैदाइशी तौर पर बच्चादानी ही नहीं होती। कुछ के पास बहुत छोटी होती है, तो कुछ का हमल बार-बार इस्क़ात ((गर्भ का) गिरना या गिराना) हो जाता है, कुछ को सिरे से हमल ही नहीं ठहरता। यह बातें भी मादर-ए-रहम के ट्रांसप्लांट के लिए मुहर्रिक बनीं।

साइंस और डॉक्टर का मानना है कि मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी का मक़सद यह है कि जो औरत बांझ (इनफर्टिलिटी) हो या किसी वजह से बच्चा नहीं हो रहा हो और वो किसी दूसरे की कोख में बच्चा भी नहीं चाहती हो, अपनी ही कोख से बच्चा जन्म देना चाहती हो। ऐसी हर औरत मां बन सकती है और अपनी ही कोख से बच्चा जन्म देकर अपनी आरज़ू पूरी कर सकती है। इसी मक़सद के तहत मादर-ए-रहम की पैवंदकारी का अमल मु'उर्रिज़ वजूद में आया है।

मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी का तरीक़ा:

एक औरत की बच्चादानी निकाल कर दूसरी औरत में पैवंद की जाती है। आमतौर पर क़रीबी औरत, मां, बहन या ख़ाला की बच्चादानी बेहतर मानी जाती है क्योंकि उनके दरमियाँन टिश्यूज़ और ख़लिय्ये में मुशाबिहत पाई जाती है। मादर-ए-रहम की पैवंदकारी का मुकम्मल अमल 10 से 13 घंटों पर मुनहसिर होता है और यह निहायत मुश्किल होता है, क्योंकि इंसानी बदन में एक अनजान अज़ा लगाने से उसे मुस्तरद किए जाने का संगीन ख़तरा लगा रहता है। इसमें सिर्फ़ बच्चादानी की ही पैवंदकारी होती है, नसों और बैज़ादानी (ओवरी) की नहीं। 'उज़्व-बंदी के बाद एक साल तक उसकी ख़ूब निगरानी की ज़रूरत होती है। फिर लैबोरेटरी टेस्ट से हमल की सलाहियत ज़ाहिर होने पर शौहर के नुत्फ़े और बीवी के बैज़े को लैबोरेटरी में जीनीन बनाया जाता है, इसके बाद इंजेक्शन के ज़रिए औरत की कोख में नस्ब किया जाता है। स्वीडन के कामयाब तजुर्बे में 11 नुत्फ़े तैयार किए गए थे और उन्हें मुंजमिद नुत्फ़ा बच्चादानी में डाला गया।

मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी की हलाकतें:

मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी इंतिहाई ख़तरनाक है, इससे ना सिर्फ़ बीमारी लाहिक़ होती है बल्कि जान भी जा सकती है और इस अमल

के इर्तिक़ाई अदवार में कई जानें जाने पर तारीख़ शाहिद है। आमतौर पर ख़तरा यह है कि नया अज़ा जिस्म क़बूल नहीं कर पाता है और जल्द ही इसे काटकर हटा दिया जाता है और यह मुत'अद्दिद बीमारियों का सबब बन सकता है। इस आलम में साल भर ख़तरे मंडराते हैं और कड़ी निगरानी की जाती है और कुव्वत-ए-मुदाफ़'अत दवाओं के ज़रिए सुस्त कर दी जाती है ताकि नया अज़ा क़बूल कर सके, मगर मुदाफ़'अती कुव्वत की कमी से डायबिटीज़ का ख़तरा बढ़ जाता है। उसके साथ बीपी के बढ़ने और घटने का भी ख़तरा रहता है, बल्कि यह औरत के लिए जानलेवा भी हो सकता है। मुर्दा औरत की बच्चादानी की मुंतक़िली (ट्रांसफ़र) कामयाब नहीं है, इस वजह से ज़िंदा औरत से ही यह अज़ा लिया जाता है। बल्कि ग़ैर औरत की बच्चादानी का ट्रांसप्लांट तजुर्बे के लिहाज़ से नुक़सान देह बतलाया जा रहा है। इसीलिए क़रीबी औरत, मां, बहन या ख़ाला वग़ैरह की बच्चादानी कम नुक़सान वाला बतलाया जा रहा है क्योंकि उनके दरमियांना टिश्यूज़ और ख़लिये में ज़्याद मुशाबिहत पाई जाती है। सर्जरी के अलावा हमल, तवालुद (औलाद पैदा करना) और ज़च्चा-ओ-बच्चा के तमाम मराहिल मुश्किल तरीन हैं। ना ही हमल आसान होता है और ना ही ज़चगी (बच्चा जानने की क्रिया) , और कम वक़्तों में बच्चे की पैदाइश हो जाती है, जिससे मौलूद को सख़्त हिफ़ाज़त की ज़रूरत होती है। हमल

और ज़चगी के दौरान पेचीदगियां पैदा होने से ज़च्चा-ओ-बच्चा दोनों को जान का ख़तरा लाहिक़ हो सकता है।

1931 में जर्मनी में एक हिजड़े (ट्रांसजेंडर) में बच्चादानी को ट्रांसप्लांट किया गया लेकिन यह अमल कामयाब ना हुआ और उसकी जान चली गई। 2002 में सऊदी अरब में एक 26 साल की औरत में 46 साल अजनबी औरत की बच्चादानी की मुन्तक़िली का अमल हुआ, मगर इन्फ़ेक्शन के सबब चंद हफ़्तों में ही यह अज़ा निकालना पड़ा। 2014 में स्वीडन में तारीख़ का पहला बच्चा मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी से 31 हफ़्ते में पैदा हुआ और पैदाइश के वक्त दिल की धड़कन ख़िलाफ़-ए-मामूल पाई गई। हिंदी खातून मीनाक्षी के पेट में सिर्फ़ 22 हफ़्ते ही बच्चा पैदा हुआ और वह इस मौलूद तक रसाई हासिल करने के लिए मुसलसल 17 महीने तक अस्पताल में इंतिहाई निगरानी में ज़ेर-ए-इलाज रही। मीनाक्षी का मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी कर रहे डॉ. शैलेश का कहना है कि यह अमल इंतिहाई ख़तरनाक है। वह कहते हैं कि अब तक इस तरह से दुनिया में 11 हमल ठहरा है, 9 स्वीडन में, 2 यूनाइटेड स्टेट्स में और 12वाँ बच्चा हमारा है। यह कोई आसान सर्जरी नहीं है और ना ही हमल ठहरना आसान है।

बहरहाल! यह अमल ख़तरात पर मुनहसिर है। दुनिया भर में कितनी सारी औरतों का मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी किया गया, अक्सर को नुक़सान हुआ। अब तक सिर्फ़ 12 बच्चों की पैदाइश का ज़िक्र मिलता है, यह 12 बच्चे भी सिर्फ़ दावे हैं। उन सबकी तफ़सील नहीं मिलती। इसका सबसे ख़तरनाक पहलू यह है कि सर्जरी, हमल और पैदाइश सब उम्मीद पर क़ाइम हैं, यानी नतीजे का यक़ीन नहीं होता, सिर्फ़ उम्मीद पर यह सारा अमल अंजाम दिया जाता है। आगे कुछ भी हो सकता है।

बर्थ कंट्रोल और मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी का तसादुम:

माहिरीन-ए-तिब ने ख़ुशहाली, तालीम, तरक़्क़ी और सागर का नारा लगाकर ख़ुशनुमा तरीक़े से बर्थ कंट्रोल करने और ख़ानदान छोटा बनाने का मंसूबा दिया जिसे ख़ानदानी मंसूबा बंदी का नाम दिया जाता है। उलमा-ए-तिब की इस तजवीज़ और मंसूबा बंदी से समाज पर मोहलिक असरात मुरत्तब हुए। इस्क़ात-ए-हमल और ज़ब्त-ए-विलादत के मुख़्तलिफ़ तरीक़े अपनाए जाते हैं। यहां तक कि नसबंदी और छोटा ख़ानदान फ़ख्र का बाइस बन गया। आज अवाम तबाही के दहाने पर पहुंच गई है। मां के पेट में मासूम बच्चियों का क़त्ल कोई गुनाह नहीं समझा जाता, यहां तक कि वज़'-ए-हमल (बच्चा जनने) के

बाद भी ज़िंदा बच्चियों को डस्टबिन में फेंक दिया जाता है। कोई मुर्दा लाश को भी इस तरह नहीं फेंकता। उस वक़्त 100 में से चंद औरतें ही बर्थ कंट्रोल से बच पाती होंगी। अस्पतालों में बच्चा जनने वाली बहुत सी औरतें रहम-ए-मादर कटवाकर निकाल देती हैं। हिंदुस्तानी हुकूमत ने इसकी मुफ़्त सेवा गांव-गांव तक मुहैया कर दी है। ख़ानदानी मंसूबा बंदी की एक तरफ़ ऐसी तबाही है तो दूसरी तरफ़ यही माहिरीन-ए-रहम मादर को दोबारा जोड़ने का काम कर रही हैं। ख़ानदानी मंसूबा बंदी के ख़ुशनुमा नारों और अमली क़दमों ने कितने मासूम बच्चों की जान ली, कितनी जानों को दुनिया में आने से रोका और कितनी औरतों को इस मोहलिक रास्ते से गुज़रने में अपनी जान गंवानी पड़ी। दरअसल बर्थ कंट्रोल ने बेऔलादी और बांझपन में इज़ाफ़ा किया। हमल और तौलीद (पैदाइश) रोकने के ग़ैर फ़ितरी तरीक़े अपनाने से रहम-ए-मादर में ख़राबियां पैदा हुईं और औरतों में बांझपन की वबा आम हुई। ज़ब्त-ए-विलादत के नारे लगाने वाले लोग ही असल मुजरिम हैं जो पहले बांझपन की बीमारी फैलाते हैं फिर उसका इलाज करते हैं। सेहत के मराकिज़ में ऐसा घिनौना खेल बहुत होता है। माल और ज़र की हवस में सेहतमंदों को बीमार क़रार देकर उसका महंगे से महंगा इलाज किया जाता है। जिसे ऑपरेशन की नौबत नहीं, उसे

ऑपरेशन किया जाता है। हद तो यह है कि सिर्फ़ पैसों की लालच में मरीज़ की वफ़ात होने के बावजूद उसका इलाज किया जाता है।

मियां-बीवी में तवालुद (औलाद पैदा करने) की कमज़ोरी का जाइज़ हुदूद में रहकर इलाज करना कोई ग़लत नहीं है, मगर क़ुदरत के फ़ितरी निज़ाम के साथ खिलवाड़ करना हैवानियत और दरिंदगी है, चाहे ज़ब्त-ए-नस्ल के तहत ऐसी हैवानियत सोज़ हरकत की जाए या अफ़ज़ाइश-ए-नस्ल के नाम पर। इस्लाम में मजबूरी की बुनियाद पर आरज़ी मंसूबा बंदी करना जाइज़ है और अगर ज़रूरत के तहत मादर-ए-रहम काटना पड़े तो उसकी भी गुंजाइश है। मगर सिर्फ़ शौक़ में या कम बच्चे की चाहत में या अच्छी परवरिश और बेहतर तालीम के नाम पर बर्थ कंट्रोल करना हराम है।

अफ़ज़ाइश-ए-नस्ल के जदीद तरीक़े और उनका शरई हुक्म:

जदीद साइंस तरक़्क़ियात में तौलीद (पैदाइश) के जदीद तरीक़े ईजाद हुए और हो रहे हैं। मुस्तक़बिल में यह क़दम कहां तक पहुंचेंगे, कुछ कहना मुश्किल है। अभी तक मस्नुई तुख़्म-रेज़ी (आर्टिफिशियल इनसेमिनेशन), बल्कि बार-आवरी (टेस्ट ट्यूब फ़र्टिलाइज़ेशन), सरोगेट मदर और क्लोनिंग वग़ैरह मुख्तलिफ़ क़िस्में पाई जाती हैं। कई सालों

से मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी पर तजुर्बा जारी था। इस मैदान में इक्का-दुक्का कामयाबी मिलने पर अब यह भी तौलीद (पैदाइश) का एक तरीक़ा माना जा रहा है।

मस्नुई तुख़्म-रेज़ी का तरीक़ा:

मर्द से जलक़ (मुश्तज़नी/हाथ की मदद से वीर्य निकालना) वग़ैरह से इंज़ाल कराके कसीर मिक़दार में हासिल शुदा मादा तौलीद ब-ज़रिया इंजेक्शन औरत के पेट के ज़ेरीं हिस्से (पेल्विक कैविटी) में पहुंचा दिया जाता है, जहां से काज़फ़ीन नाली में पहुंचकर पहले से मौज़ूद बैज़ा-ए-उन्सा बार-आवर बना देता है। फिर नीचे रहम में उतरकर तकलीक़ के मराहिल पूरे करता है। इस तरीक़े-तवलीद में जाइज़ पहलू यह है कि सिर्फ़ शौहर का नुत्फ़ा लेकर बीवी के रहम में डाल सकते हैं।

टेस्ट ट्यूब बेबी या नलकी बार-आवरी का तरीक़ा:

यह तरीक़ा तुख़्म-रेज़ी से मुख़्तलिफ़ है। इसमें मर्द और औरत का नुत्फ़ा हासिल करके एक शीशे में रखकर इख़्तिलात कराया जाता है। जब वहां मादह बार-आवरहो जाता है तो उसे मज़ीद कुछ दिनों के

मराहिल तय कराकर मादर-ए-रहम में डाल दिया जाता है, जहां से इर्तिक़ाई मराहिल तय करके तवलीद होती है। यहां काज़फ़ीन नाली की ज़रूरत नहीं रह जाती है। अगर मियां-बीवी का नुत्फ़ा लेकर, उसे बार-आवर करके बीवी के रहम में डाला जाए तो यह सूरत जाइज़ है।

मस्नुई तुख़्म-रेज़ी और टेस्ट ट्यूब के ग़ैर-शरई तरीक़े:

मस्नुई तुख़्म-रेज़ी (आग़ाज़) और नलकी बार आवारी में जो जाइज़ तरीक़े हैं उन्हें बयान कर दिया गया है, उनके अलावा बहुत सारे नाजाइज़ तरीक़े हैं, उन तरीक़ों से बच्चा पैदा करना किसी मुसलमान के लिए जाइज़ नहीं है।

(1) शौहर की मनी और दूसरी औरत का बैज़ा लेकर बीवी के रहम में डाला जाए।

(2) दूसरे मर्द की मनी और बीवी का बैज़ा लेकर बीवी के रहम में डाला जाए।

(3) शौहर की मनी और बीवी का बैज़ा लेकर दूसरी औरत के रहम में डाला जाए।

(4) अजनबी मर्द की मनी अजनबी औरत का बैज़ा लेकर बीवी के रहम में डाला जाए।

(5) शौहर की मनी और पहली बीवी का बैज़ा लेकर दूसरी बीवी के रहम में डाला जाए।

सरोगेट मदरहुड का तरीक़ा:

मियां बीवी का नुत्फ़ा हासिल कर के उसे मस्नुई तरीक़े से बार आवार कर के किसी दूसरी औरत के रहम में रखा जाता है, गोया एक औरत की कोख किराए पर होती है जबकि इस कोख में नुत्फ़ा मियां बीवी का होता है। यह सरासर हराम है। कुछ उलमा ने सरोगेसी में जवाज़ का एक पहलू निकाला है कि एक शख़्स को 2 बीवियां हों तो एक बीवी और शौहर का नुत्फ़ा दूसरी बीवी के रहम में उसकी इजाज़त से रखा जा सकता है, मिसाल के तौर पर बांझ बीवी का बैज़ा और शौहर का नुत्फ़ा लेकर औलाद जनने वाली बीवी का बैज़ा और शौहर का नुत्फ़ा लेकर बांझ बीवी के रहम में रखा जाए। हक़ीक़त में ज़वाज़ का फ़तवा ग़लत है और किसी के लिए एक बीवी का बैज़ा दूसरी बीवी के रहम में रखना जाइज़ नहीं है। इस मसले पर राब्ता ए आलम ए इस्लामी की इस्लामिक फ़िक़्ह अकैडमी का सेमिनार हो चुका है जिसका

ख़ुलासा अल-इस्लाम सवाल और जवाब के फ़तवा नंबर 23104 में ज़िक्र है।

इंसानी क्लोनिंग का तरीक़ा:

इंसानी क्लोनिंग का मआनी किसी इंसान की हू-ब-हू नक़ल उतारना है। इसका तरीक़ा यह है कि दो अलग-अलग जानदार जिस्मों से ग़ैर-जिन्सी ख़लिय्ये (कोशिकाएं) हासिल कर के उनका इख़्तिलात किया जाता है, एक ख़लिय्ये (cell) का मरकज़ निकाल कर दूसरे ख़लिय्ये के मरकज़ा में रख दिया जाता है, फिर बार आवार ख़लिय्ये (cell) को कुछ दिनों बाद लिए गए ख़लिय्ये वाले जिस्म में या किसी तीसरे जिस्म में तख़लीक़ के बाक़ी मराहिल तय करने के लिए रख दिया जाता है। दो अलग-अलग जिस्मों से ग़ैर-जिन्सी ख़लिय्ये का हुसूल कभी नर और मादा से होता है तो कभी 2 अलग-अलग मादा से या कभी एक ही मादा के 2 मुख़्तलिफ़ ख़लिय्ये से। इंसानी क्लोनिंग में जाइज़ शक्ल सिर्फ़ यह है कि मियां बीवी के ख़लिय्ये को बीवी के ही जिस्म में रख कर क्लोनिंग की जाए, बाक़ी मुंदरिजा ज़ेल तरीक़े ग़ैर-शरई और नाजाइज़ हैं।

(1) मियां बीवी के अलावा दो अलग-अलग जिस्मों के ख़लिय्ये से इंसानी क्लोनिंग करना।

(2) दो अलग-अलग औरतों के ख़लिय्ये से इंसानी क्लोनिंग करना।

(3) एक ही औरत के दो मुख़्तलिफ़ ख़लिय्ये से क्लोनिंग करना।

(4) मियां बीवी के ख़लिय्ये (cell) को तीसरे जिस्म से तौलीद कराना।

रहम ए मांदर की पैवंद-कारी का तरीक़ा:

उपर इसका तरीक़ा बतला दिया गया है कि एक औरत में दूसरी औरत की बच्चादानी नस्ब की जाती है, फिर उस मर्द और औरत के नुत्फ़ा का हुसूल कर के प्रयोगशाला में बार आवार किया जाता है, फिर उसे रहम में डाला जाता है। इस तरीक़ा ए तौलीद में मुत'अद्दिद शरई ख़ामियां हैं।

रहम-ए-मादर की पैवंद-कारी में शरई ख़ामियां:

(1) पहली ख़ामी: इसमें पहली ख़ामी मर्द और औरत का बेपर्दा होना है। डोनर, शौहर और बीवी तीन व्यक्ति न जाने कितने देर के लिए

बार-बार अपना सत्र ज़ाहिर करते हैं, हालांकि मजबूरी में आदमी अपना सत्र दूसरे के सामने खोल सकता है।

(2) दूसरी ख़ामी: इस्लाम ने इंसान को मुहतरम बनाया है, और हिफ़्ज़ाने सेहत के सुनहरे उसूल बताए हैं ताकि इंसानी जिस्म को हलाकत से बचाया जाए। हिफ़्ज़ाने सेहत की नज़र से किसी के लिए अपने जिस्म को तकलीफ़ देना, कोई अज़्व काटकर अलग करना जाइज़ नहीं सिवाए इज़्तिरारी हालत के। रहम-ए-मादर काटकर जिस्म से अलग करना, सिवाए ज़रूरत के जहां फ़ितरत से बग़ावत और मसला के हुक्म में है, वहीं हिफ़्ज़ाने सेहत के ख़िलाफ़ भी है क्योंकि इसके बड़े मफ़ासिद हैं।

रहम-ए-मादर काटकर जिस्म से अलग करने के नुक़सानात में वज़न में कमी या ज़्यादती होना, शर्मगाह में सूजन पैदा होना, पेशाब में इन्फेक्शन, आंतों का सुजना, ख़ून का जमना, हड्डियों का भर भरा होना, बैज़ा दारियों में रसौली पैदा होना वग़ैरह है। अगर रहम-ए-मादर के साथ ओवरी भी हटा दी जाए तो अक्सर महिलाएं मानसिक तनाव, जज़्बाती असंतुलन, अकेलापन और एहसास-ए-कमतरी का शिकार हो जाती हैं, साथ ही एस्ट्रोजन लेवल कम हो जाने से दिल की बीमारियों

का ख़तरा बढ़ जाता है। एक तरफ़ रहम-ए-मादर कटवाने वाली के लिए बहुत सारी शारीरिक नुक़सानों की स्थिति है तो दूसरी तरफ पैवंद-कारी के भी भयानक परिणाम उत्पन्न होते हैं, जैसा कि इससे पहले पैवंद-कारी की हलाकत खेज़ वाज़ेह की गई है। इस्लाम इस क़िस्म के नुक़सानदेह कामों की इजाज़त नहीं देता।

(3) तीसरी ख़ामी : मर्द से ग़ैर-फ़ितरी तरीक़े से इंज़ाल कराया जाता है और ऑपरेशन के ज़रिए औरत की बैज़ा दानी से बैज़ा हासिल किया जाता है। अल्लाह ने हमें तौलीद का फ़ितरी तरीक़ा दिया है, इस तरीक़े को अपनाते हुए हम फ़ितरी तरीक़े पर औरत की शर्मगाह में इंज़ाल करते हैं, जबकि मादर-ए-रहम की पैवंद-कारी के लिए आमतौर पर जलक़ (हस्त-मैथुन) के ज़रिए क़सीर मिक़दार में मर्द की मनी हासिल की जाती है जिससे कई नुत्फ़े बना कर मुंजमिद कर दिए जाते हैं। इज़्तिरारी (बेइख्तियाराना) हालत में यह स्थिति भी जाइज़ होगी।

(4) चौथी ख़ामी: रहम-ए-मादर की पैवंद-कारी में अतिया देने वाली एक औरत की ज़रूरत होती है जो अपना रहम-ए-मादर अतिया कर सके। ख़ून का अतिया करने में कोई हरज नहीं है क्योंकि यह फिर में बदन में तैयार हो जाता है, मगर ऐसे अज़्व का अतिया करना जो

ख़ुद अपने जिस्म की ज़रूरत और मस्लहत है (बग़ैर ज़रूरत और मस्लहत के अल्लाह ने जिस्म में कोई चीज़ नहीं रखी है) दूसरे को अतिया करना जाइज़ नहीं है इस हाल में कि इसके निकलने से बड़े नुक़सानों का ख़तरा हो, बल्कि अक्सर उलमा ने जिस्म का कोई भी अज़्व अतिया करना जाइज़ नहीं कहा है, न ज़िंदगी में और न ही मौत के बाद क्योंकि ख़ून का अतिया करने से जिस्म में उसकी भरपाई हो जाती है, जबकि किसी भी उज़्व को निकालने से उसकी तलाफ़ी नहीं हो सकती और इस वजह से भी कि यह मस्ला के ज़ुमरे में है जबकि किसी का 'उज़्व का फ़रोख़्त करना मुत्तफ़िक़ा तौर पर हराम है। कैंसर या अन्य बीमारियों के कारण निकाले गए रहम-ए-मादर की पैवंद-कारी में मुफ़ीद नहीं है। लिहाज़ा इसके लिए ज़रूरत है कि सेहतमंद रहम-ए-मादर हासिल किया जाए, इसके लिए डोनर का ऑपरेशन भी ज़रूरी है। ऐसा भी संभव है कि चाइल्ड ऑपरेशन के वक्त रहम-ए-मादर हासिल किया जाए। उन सारी सूरतों में रहम-ए-मादर काटना बग़ैर ज़रूरत के है जो जाइज़ नहीं होगा। जिसे रहम-ए-मादर चाहिए उसकी ज़िंदगी को कोई ख़तरा नहीं है, सिर्फ़ औलाद की ख़्वाहिश के लिए अज़्व बंधी होती है और सिर्फ़ इसी मक़सद से किसी ज़िंदा इंसान का अज़्व काटना और दूसरे में नस्ब करना जाइज़ नहीं होगा।

(5) पांचवी ख़ामी: एक मुसलमान का ईमान हो कि औलाद देने वाला अल्लाह है, अगर शादी के बाद कुछ साल औलाद न हो तो मायूस नहीं होना चाहिए, न अल्लाह पर भरोसा कम करना चाहिए। औलाद न होने के परिणाम में मज़ारों पर जाना, ग़ैरुल्लाह से औलाद मांगना, तावीज़ और शिर्किया काम करना या फ़ितरी निज़ाम में दख़ल देते हुए दूसरी औरत का रहम पैवंद करना सब तवक्कुल के ख़िलाफ़ है। हां, औलाद हासिल करने के लिए जाइज़ असबाब अपनाना तवक्कुल (भरोसे) के मुनाफ़ी नहीं है।

हमें सब्र से काम लेना चाहिए, औलाद के हुसूल के लिए अल्लाह से दुआ करनी चाहिए, इलाज की ज़रूरत हो तो मुबाह तरीक़े से इलाज करना चाहिए और अल्लाह के फ़ैसले पर राज़ी होकर उसकी तरफ़ से औलाद का इंतज़ार करना चाहिए। उसने हमारे नसीब में औलाद लिख रखी है तो एक न एक दिन ज़रूर औलाद होगी, लिहाज़ा औलाद के हुसूल के अपने ईमान को बर्बाद न करें। याद रखें, ज़िंदगी का असल मक़सद बच्चा पैदा करना नहीं है, आख़िरत की तैयारी करनी है।

(6) छठी ख़ामी: अल्लाह ने औरत की शर्मगाह को निकाह के ज़रिए मर्द के लिए हलाल किया है। रहम-ए-मादर शर्मगाह का हिस्सा है जहां

एक शौहर को ही मुजाम'अत (हमबिस्तरी) के ज़रिए इंज़ाल करने का हक़ है। दूसरी औरत की बच्चा दानी में किसी ग़ैर मर्द का नुत्फ़ा दाख़िल करना सीधे ज़िना तो नहीं है मगर शुबहा ज़िना कहलाएगा। जिस तरह सरोगेट मदरहुड नाजाइज़ है, इसी की यह दूसरी शक्ल है कि सरोगेसी में भी मियां बीवी का नुत्फ़ा दूसरी औरत के रहम-ए-मादर में होता है और रहम-ए-मादर की पैवंद-कारी में भी मियां बीवी का नुत्फ़ा दूसरी औरत के रहम में होता है। कोई यह कह सकता है कि रहम-ए-मादर की पैवंद-कारी करने से अब यह उस औरत का उज़्व हो गया, कोई ब'ईद नहीं, कल यही वैज्ञानिक्स पैदायशी तौर पर औरत की शर्मगाह न रखने वाले में किसी औरत की शर्मगाह सेट कर दें, क्या उसमे वती (संभोग/हमबिसतरी) करना हलाल होगा?

(7) सातवीं ख़ामी: आजकल अस्पताल में ब्लड बैंक की तरह से मनी बैंक (Seman Bank) क़ाइम है जहां हज़ारों लोगों के नुत्फ़े मुंजमिद करके रखे होते हैं बल्कि ख़ून की तरह मनी 'अतिय्या की जाती है। एक शख़्स से वाफ़िर मिक़दार में मनी ले कर कई-कई नुत्फ़े 'मुंजमिद करके रखे जाते हैं और फिर उन सारे नुत्फ़ो से कालाबाज़ारी की जाती है। चाहे जो नुत्फ़ा जिस मरीज़ में फ़िट हो जाए इस्तेमाल कर लिया जाता है, मक़सद काम चलाना और पैसा कमाना होता है, यहां तक कि

कितने लोग मर चुके होते हैं और उनका नुत्फ़ा लैबोरेटरी में मौजूद होता है। ज़ाहिर सी बात है, यह नुत्फ़ा किसी न किसी पर इस्तेमाल किए जाएंगे, इसमें से मुस्लिम ख़ातून भी हो सकती है, इसलिए हमें इस चालबाज़ी से बाख़बर रहना चाहिए। चालबाज़ी के अलावा नुत्फ़ो में इख़्तिलात का बहुत एहतिमाल होता है क्योंकि लैबोरेटरी टेस्ट के लिए मनी बहुत पहले ले ली जाती है और एक मुद्दत के बाद नुत्फ़ा तैयार कर के उसे मुंजमिद कर के नुमू के कुछ मराहिल तय कर के फिर रहम-ए-मादर में नसब किया जाता है। रहम-ए-मादर में देर से मादा रखने पर उलमा ने इस तकलीफ़ से मना किया है क्योंकि इसमें ग़लती का एहतिमाल पाया जाता है। सेमन बैंक हराम बैंकिंग है। एक शख़्स का ख़ून दूसरे किसी भी इंसान में लगाया जा सकता है मगर मनी का मामला बिल्कुल बरअक्स है। मियां बीवी के नुत्फ़े को बार-आवर कर के सिर्फ़ बीवी के रहम में नसब किया जाएगा। अब आप ग़ौर करें कि मादा परस्ती के तौर में शोहरत, लालच और रुपए के लिए सेमन बैंक वाले क्या कुछ नहीं कर सकते हैं?

(8) आठवीं ख़ामी: इस पैवंद-कारी में इसराफ़ पाया जाता है, बग़ैर किसी बड़ी बीमारी या जानी ख़तरे के। इससे बहुत कम पैसों में किसी का बच्चा गोद ले कर पाल-पोस कर जवान किया जा सकता है और

कितने यतीम बच्चों की परवरिश की जा सकती है जिस पर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रफ़ाक़त का वादा है।

(9) नौवीं ख़ामी: इसका दरवाज़ा खोलने से हरामकारी के बेशुमार दरवाज़े खुलेंगे, जैसे औरतों की इज़्ज़त की पामाली, फ़ितरत के साथ छेड़छाड़, हरामी औलाद की अफ़ज़ाइश, ग़ैर फ़ितरी इंज़ाल, अमल-ए-जर्राही ही से ज़नाना जरासीम का हुसूल, नुत्फ़ो में इख़्तिलात, क़स्बे हराम की अफ़रातफरी, अज़ा-ए इंसानी का कारोबार, रहम-ए-मादर की शोकिया पैवंद-कारी वग़ैरह।

(10) यह तरीक़ा लोगों को क़लाश (कंगाल) बनाने, हासिल तरीक़े से माल खाने और लोगों की माशियत तबाह करने का बहुत बड़ा हथियार है, बल्कि इंसानी अज़ा की स्मगलिंग का ज़रिया है। मनी बैंक से कमाई, टेस्ट और लैबोरेटरी के नाम पर लाखों के चार्ज, ऑपरेशन का मुँह मांगा दाम और इंसानी आज़ा की हतक (बेइज़्ज़ती) और घिनौना कारोबार जैसे क़स्बे हराम के बहुत सारे हीले (excuses) और नाजाइज़ उमूर हैं। सिर्फ़ एक केस का पैसा एक यतीमखाने का महीनों का ख़र्च है।

बांझपन क्या है?

इंसान का ख़ालिक़ अल्लाह है, उसने अपनी हिकमत के साथ इंसानों को अच्छे ढांचे में ज़रूरत की तमाम चीज़ें दे कर पैदा किया है। क़ुदरत ने मर्द और औरत के मिलाप से अफ़्ज़ाइश-ए-नस्ल (वंशवृद्धि) का सिलसिला जारी किया है। ख़ालिक़ ने मर्द और औरत का मिलाप सिर्फ़ निकाह के साथ हलाल किया है, बग़ैर निकाह के मिलाप करना और उससे बच्चा पैदा करना हराम है, ऐसी औलाद, औलादुज़-ज़िना है। कभी मियां-बीवी के दरमियाँन जिंसी ताल्लुक़ात क़ाइम होने के बावजूद औलाद नहीं होती, यह बांझपन कहलाता है। अफ़्ज़ाइश-ए-नस्ल की तरह बांझपन भी अल्लाह की तरफ़ से है। सुरह शुरा की मुकम्मल दो आयात पढ़ें, फ़रमान-ए-इलाही है:

ِهِ مُلْكُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ ۚ يَخْلُقُ مَا يَشَاءُ ۚ يَهَبُ لِمَن يَشَاءُ إِنَاثًا وَيَهَبُ لِمَن يَشَاءُ الذُّكُورَ (49) أَوْ
يُزَوِّجُهُمْ ذُكْرَانًا وَإِنَاثًا ۖ وَيَجْعَلُ مَن يَشَاءُ عَقِيمًا ۚ إِنَّهُ عَلِيمٌ قَدِيرٌ (50)(الشورى)

तर्जुमा: आसमानों और ज़मीन की सल्तनत अल्लाह ही के लिए है। वह जो चाहता है पैदा करता है। जिसको चाहता है बेटियाँ देता है, जिसको चाहता है बेटे देता है या उन्हें जमा कर देता है, बेटे भी और बेटीयाँ भी, और जिसे चाहता है बांझ कर देता है। वह बड़े इल्म वाला और कामिल क़ुदरत वाला है।

अल्लाह ने यहां अपनी क़ुदरत का भी ज़िक्र किया है कि वह अपनी क़ुदरत-ए-कामिला से सबको औलाद दे सकता है मगर कभी किसी को अपनी हिकमत के तहत बांझ बना देता है।

हमें मालूम हुआ कि बांझपन अल्लाह की तरफ़ से एक आज़माइश है, इस आज़माइश पर मोमिन को सब्र से काम लेना चाहिए। बांझपन बीमारी भी है, यह बीमारी कभी पैदायशी हो सकती है तो कभी अपने हाथों की कमाई भी। आजकल ज़िना आम है, शर्मगाह की हिफ़ाज़त नहीं है, जब एक लड़की ज़िना करती है तो फिर उसके पेट से जाइज़ औलाद कैसे पैदा होगी?

इस हरामकारी पर अल्लाह की मार पड़ती है। इसी तरह यह गुनाह भी आम है कि शादी करके बच्चे नहीं पैदा करते, तरह-तरह की मुनासिब दवाइयां इस्तेमाल कर के नस्ले इंसानी को रोकते हैं, फिर सालों बाद बच्चे की ख़्वाहिश होती है, क्या ऐसी सूरत में क़ुदरत की मार नहीं पड़ेगी? वह तो और भी अल्लाह के ग़ुस्से का शिकार होंगे, जो लड़कियों का इस्क़ात कराती हैं या बिला ज़रूरत बर्थ कंट्रोल करती हैं।

पैदायशी तौर पर आदमी को मर्दाना कमज़ोरी लागे या औरत जिंसी मसाइल का शिकार हो, तो जाइज़ तरीक़े से इलाज करने में कोई हरज नहीं है। गोया बांझपन कभी अल्लाह की तरफ़ से आज़माइश हो सकती है, इस पर एक मोमिन से सब्र-ए-जमील मतलूब है। और कभी पैदायशी बीमारी हो सकती है, उसके लिए जाइज़ तरीक़े से इलाज करने में हर्ज नहीं है। और कभी यह क़ुदरत की मार हो सकती है, इसके लिए सच्चे दिल से तौबा करनी चाहिए और जाइज़ असबाब अपना कर औलाद के हुसूल के लिए अपने रब से सच्चे दिल से दुआ करनी चाहिए।

जिसे औलाद न हो रही हो वह क्या करे?

अल्लाह ने अपने तमाम बंदों के साथ इंसाफ़ किया है, उसके साथ भी इंसाफ़ किया जिसे औलाद दी और उसके साथ भी इंसाफ़ ही है जिसे औलाद नहीं दी। इसलिए औलाद न होने से ईमान और भरोसा और नेक अमल से मुतासिर न हो। हर हाल में अल्लाह की तारीफ़ बजा लाएं। अल्लाह ने मोमिनों को नमाज़ और सब्र के ज़रिये मदद मांगने की तालीम दी है। यक़ीन जानें, जब अल्लाह कोई नेमत छिन लेता है और मोमिन उस पर सब्र से काम लेता है तो अपने रब की तरफ़ से बड़े अज्र का मुस्तहिक़ होता है। हम कसरत से अल्लाह की इबादत

करें और नेक औलाद के लिए उससे आज़िज़ी के साथ गिर्या-ओ-ज़ारी करते हुए दुआ करें। मर्द को दूसरी शादी की ताक़त हो, तो औलाद न होने पर दूसरी शादी कर लेनी चाहिए। दूसरी शादी करना मुश्किल हो, तो अपने नसबी या रज़ाई या ससुराली रिश्तेदारों में जिनके पास ज़्यादा औलाद हो, उनसे एक बच्चा मांग कर ले, पालक बना ले। एक तरफ़ आपको अपने रिश्तेदार की औलाद गोद लेने से ख़ुशी होगी, तो दूसरी तरफ़ औलाद की आरज़ू पूरी होगी। अपने दिलों को औलाद का सुकून दिलाने के लिए अपने समाज में मौजूद यतीम, बेवाओं और मिस्कीनों के बच्चों की ख़िदमत करें, इस पर अल्लाह की तरफ़ से बड़ा अज्र मिलेगा। साथ ही साथ अल्लाह की लिखी तक़दीर पर राज़ी और ख़ुश हो कर उन लोगों में ग़ौर और फ़िक्र करें, जिन्हें अल्लाह ने आपसे ज़्यादा आज़माइश में मुब्तिला किया है, यहां तक कि अल्लाह ने बहुतों को औलाद दे कर बड़ी-बड़ी आज़माइश में मुब्तिला किया है।

आख़िरी पैग़ाम और मुस्लिम अतिब्बा (डॉक्टर) को नसीहत:

आप अल्लाह पर और उसके रसूल पर ईमान लाते हैं, तो उनके अहकाम पर भी चलना पड़ेगा। तिब (चिकित्सा) का पेशा सिर्फ़ दुनिया परस्ती के लिए हरगिज़ नहीं अपनाएं। इस इल्म के ज़रिये जहां क़ौम-ए-

मिल्लत की ख़िदमत करें, वहीं इलाज और मु'आलजा (इलाज) के बाब में अहल-ए-इल्म से हलाल और हराम की पहले जानकारी हासिल करें, फिर मुबाह तरीक़े से बीमारों का इलाज करें। यक़ीनन बहुत सारे हालात आपके पास ऐसे आते होंगे, जहां एक हराम काम करने से लाखों रुपए मिल जाएंगे, मगर ऐसी हराम कमाई से परहेज़ करें, अल्लाह के सामने पेशगी होगी और अपने किए का मुकम्मल हिसाब देना होगा। जान लें, यह दुनिया और उसकी लज़्ज़त व शहवत फ़ानी और लम्हा भर की है, जबकि इसका अंजाम भयावह और देर-पा (देर तक क़ाइम रहने वाला) है। दूसरी बात यह है कि बांझपन आज का बड़ा चैलेंज नहीं है, बल्कि यह चैलेंज यह है कि जिन वजहों पर औरतों में बांझपन फैल रहा है या फैलाया जा रहा है, उनका सदबाब किया जाए।

सड़कों, अस्पतालों और डस्टबीनों में ज़िंदा बच्चे फेंके जाते हैं। सैकड़ों की तादाद में छोटे-छोटे मासूम बच्चे मज़दूरी करने पर मजबूर हैं। हज़ारों की तादाद में यतीमखानों में मौत और ज़िंदगी की कशमकश में पल रहे हैं। लाखों की तादाद में बच्चियां तवाइफ़ बन रही हैं। उन तमाम बच्चों का हल तलाश किया जाए। बिला ज़रूरत सिर्फ़ रुपए के लालच में अक्सर औरत का चाइल्ड ऑपरेशन कर दिया जाता है। फिर 2 से 3 बच्चों के बाद ख़तरा बता कर रहम-ए-मादर निकाल दिया जाता है। इस पर कंट्रोल किया जाए।

ज़रूरतमंद बच्चों की कसरत पैदाइश पर उनकी निगरानी और परवरिश का इंतज़ाम और मोहताज बच्चों की शादी पर मुकम्मल इमदाद सरकारी सतह पर फ़राहम की जाए। पैसे की अदम मौजूदगी की वजह से जो बच्चियां घरों में जवान हो रही हैं या ज़िना का रास्ता इख़्तियार कर रही हैं या ख़ुदकुशी कर रही हैं, उनकी ज़िंदगी बचाई जाए। यही हमारी समाजी चुनौती है। इन्हें नज़रअंदाज़ कर के ग़ैर ज़रूरी कामों पर तवज्जोह दी जा रही है, बल्कि फ़ितरी निज़ाम के साथ खिलवाड़ किया जा रहा है, इसे बंद होना चाहिए।

अल्लाह हमें क़वी तक़वा इख़्तियार करने की तौफ़ीक़ दे और अपनी तौफ़ीक़ से ईमान और अमल-ए-सालेह पर हमेशा गामज़न रखे और सिरात-ए-मुस्तक़ीम पर ख़ात्मा फ़रमाए।

=====================

[88].रियाज़-उल-जन्ना (जन्नत की कियारी)

रियाज़-उल-जन्ना यह दो मुबारक जगह है जो नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के घर यानी हुज्रा आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा से मिम्बर शरीफ़ के दरमियान में है, इसका नाम रियाज़-उल-जन्ना है (जन्नत का बाग़ीचा)।

यह नाम इस लिए पड़ा कि हदीस शरीफ़ में रसूल अल्लाह ने इर्शाद फ़रमाया:

مَا بَيْنَ بَيْتِي وَمِنْبَرِي رَوْضَةٌ مِنْ رِيَاضِ الْجَنَّةِ (رواه البخاري : 1196 و مسلم : 1391)

तर्जमा: मेरे मिम्बर और मेरे घर के बीच वाली जगह जन्नत के बाग़ों में से एक बाग़ है।

मुसनद बज़ार और कुछ दूसरी कुतुब हदीस में यह अल्फ़ाज़ भी आए हैं:

"مَا بَيْنَ قَبْرِي وَمِنْبَرِي رَوْضَةٌ مِنْ رِيَاضِ الْجَنَّةِ"

(मेरी क़ब्र और मेरे मिम्बर के बीच जन्नत का एक कियारी है)।

मुहद्दिसीन की राय यह है कि "क़ब्री" का शब्द कुछ रुवात (बहुत से रावी लोगों) की तरफ़ से ख़ता है जैसा कि शैख़ उल इस्लाम

इब्न तैमिया रहिमहुल्लाह ने कहा: नबी अलैहिस्सलाम से जो साबित है वह यह है:

ما بين بيتي و منبري روضة من رياض الجنة

तर्जमा: मेरे घर और मेरे मिम्बर के बीच जन्नत की एक कियारी है, हक़ीक़त में यही साबित है। लेकिन कुछ रिवायतों ने रूवात बिल मानी किया है और उन्होंने कहा: "क़ब्री"

जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यह बात कही उस वक़्त आप की क़ब्र थी ही नहीं, इस लिए सहाबा-ए-किराम में से किसी ने इस से दलील नहीं पकड़ी जब दफ़्न की जगह के सिलसिले में तनाज़ो' कर रहे थे, और अगर यह उन के पास होता तो उन के लिए तनाज़ो' की जगह में दलील बन जाती । (मज्मू अल-फ़तावा 1/236)

अब यहाँ देखना यह है कि क्या रियाज़-उल-जन्ना से मुराद वाक़ई जन्नत की कियारी है, इस सिलसिले में अहले इल्म के कई अक़्वाल मिलते हैं।

1. इस जगह पर बैठने की सआदत और इत्मिनान जन्नत की कियारियो के मुशाबह है,

2. इस जगह पर इबादत करना जन्नत में दुख़ूल का सबब है,

3. यह जगह आख़िरत में वाक़ि'ई जन्नत का हिस्सा बना दिया जाएगा।

कुछ उलमा ने पहले क़ौल को, कुछ ने दूसरे क़ौल को, और कुछ ने तीसरे क़ौल को तरजीह दी है। मैं इन अक़वाल (विचारों) में से किसी एक को बिना तरजीह दिए बस यह कहूँगा कि असल में तो अल्लाह ही है जो ज़माँ और मकाँ को फ़ज़ीलत और ख़ासियत बख़्शता है, साथ ही यह भी कहना चाहता हूँ कि इसमें कोई शक नहीं कि इस मक़ाम की बड़ी फ़ज़ीलत है, अगर मस्जिद नबवी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम आने का मौक़ा मिले तो यहाँ इबादत, ज़िक्र, अल्लाह से दुआ और अपने गुनाहों से तौबा और अस्तग़फ़ार करना चाहिए। इस जगह पर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से भी ख़ास तौर से इबादत करना साबित है।

यज़ीद बिन अबू उबैद बयान करते हैं कि मैं सलमा बिन उक़्वा रज़ियल्लाहु अन्हु के साथ आता और वह मुसहफ़ वाले सुतून के पास, यानी रौज़ा-ए-शरीफ़ में आकर नमाज़ अदा करते, तो मैंने उन्हें कहा

ऐ अबू मुस्लिम, मैं देखता हूँ कि आप इस सुतून के पास ज़रूर नमाज़ अदा करते हैं! तो वे फ़रमाने लगे: मैंने रसूल करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को देखा कि आप भी यहाँ ख़ास कर नमाज़ अदा किया करते थे। (बुख़ारी: 502: और मुस्लिम: 509)

और इस मक़ाम पर बैठना या इबादत करना आप से तक़ाज़ा करता है कि अपने अंदर तक़्वा पैदा करें, अगर आपको रियाज़ अल-जन्ना आने की सआदत मिली मगर अमल में सुन्नत की पैरवी नहीं बल्कि बिदअत और निय्यत में इख़लास नहीं बल्कि रियाकारी है तो फिर आपको फ़ायदा नहीं पहुंचेगा।

एक अहम बात यह भी अर्ज़ करनी है कि जो लोग इस जगह पर घंटों बैठे रहते हैं और दूसरों को यहाँ आने का मौक़ा फ़राहम नहीं करते वह भी ग़लत करते हैं और उनकी भी ग़लती है जो भीड़ देखकर भी ज़ईफ़ों और कमज़ोरों को तकलीफ़ पहुंचा कर अंदर दाख़िल होते हैं।

अल्लाह तआला हमारे हाल की इस्लाह फ़रमाए और हम सब को इस मुक़द्दस जगह रियाज़-उल-जन्ना में इबादत करने और कुछ देर स'आदत हासिल करने की तौफ़ीक़ बख़्शे। आमीन।

[89].रु-ए-ज़मीन पर अल्लाह की 2 ज़मानते

सब से पहले इस टॉपिक के लिखने का मक़सद बयान कर दूँ ताकि ज़िम्नी पैग़ाम के साथ मेरा असल पैग़ाम भी आम और ख़ास तक पहुँचे। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की वफ़ात का इंकार करके दीन में हज़ारों बिद'आत और ख़ुराफ़ात को दाख़िल कर लिया गया है, बल्कि बिद'अत के रास्ते कफ़्रिया और शिर्किया आमाल भी दाख़िल कर दिए गए हैं और उन आमाल और अफ़आल की अंजाम-देही पर नाज़ और फ़ख़्र है। वफ़ात-ए-नबी के इंकार की नौबत इस तरह पेश आई कि सूफ़ियों के नज़दीक़ सूफ़ी, वली और पीर और मुर्शिद कभी नहीं मरते, हमेशा ज़िंदा रहते हैं। और न केवल ज़िंदा रहते हैं, बल्कि हर किसी की मदद भी करते हैं, लोगों के पास आते-जाते, चलते-फिरते, खाते-पीते और सुनते-देखते नज़र आते हैं। जब ये औलिया और पीर मुर्शिद का हाल है तो फिर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की वफ़ात का इंकार करना पड़ेगा और मानना पड़ेगा कि वह भी ज़िंदा हैं। इस तरह मज़ार की कमाई हलाल करने के लिए नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की वफ़ात का इंकार किया गया है, जबकि दुनिया में किसी को बक़ा नहीं है, चाहे वह नबी हो या वली, सिवा अल्लाह के।

सिर्फ़ अल्लाह की सिफ़त इलाह और अल क़य्यूम है यानी अल्लाह ही एक ऐसी ज़ात है जो हमेशा से ज़िंदा और क़ाइम है, हमेशा बाक़ी रहने वाली और क़ाइम रखने वाली है। अल्लाह के अलावा सारी मख़लूक़ को मौत का मज़ा चखना है। इस पर क़ुरआन और हदीस के बेशुमार दलीलें हैं, उनको यहाँ तवील की वजह से ज़िक्र नहीं करूंगा, बल्कि क़ुरआन की सिर्फ़ एक आयत के ज़िक्र पर इक्तिफा करूंगा। और न ही यहाँ मज़ारात और क़ुब्बे, कश्फ़ और करामात, ग़ैरुल्लाह से मदद, मुर्दों के नाम पर तिजारत, नज़्र और नियाज़ के नाम पर सादा लो-आवाम से माल इकट्ठा करना और इलाज और मु'आलजा के नाम पर औरतों की इज़्ज़त और आबरू से खेलना वग़ैरह का ज़िक्र करूंगा।

सूरह अनफ़ाल में अल्लाह का फ़रमान है:

وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَأَنتَ فِيهِمْ ۚ وَمَا كَانَ اللَّهُ مُعَذِّبَهُمْ وَهُمْ يَسْتَغْفِرُونَ(33)

तर्जुमा: और अल्लाह ऐसा नहीं करेगा कि उनके बीच आपके होते हुए उन्हें अज़ाब दे, और अल्लाह उन्हें अज़ाब नहीं देगा इस हालात में कि वे इस्तग़फ़ार भी कर रहे हों।

क़ुरआन की इस आयत की तफ़सीर में बुख़ारी शरीफ़ में वारिद है:

حدثنا احمد حدثنا عبدالله بن معاذ حدثنا ابي حدثنا شعبة عن عبد الحميد هو ابن كرديد صاحب الزيادي سمع عن أنس بن مالك رضي الله عنه قال: أبو جهل: اللهم إن كان هذا هو الحق من عندك فأمطر علينا حجارة من السماء أو ائتنا بعذاب أليم فنزلت: {وما كان الله ليعذبهم وأنت فيهم، وما كان الله معذبهم وهم يستغفرون. وما لهم ألا يعذبهم الله وهم يصدون عن المسجد الحرام} [الأنفال: 34] الآية.(صحيح البخاري:4648)

तर्जुमा: मुझसे अहमद बिन नज़र ने बयान किया: कहा हमसे उबैदुल्लाह बिन मुआज़ ने बयान किया कहा हमसे हमारे वालिद ने बयान किया उनसे शोबा ने बयान किया उनसे शोबा ज़ियादि अब्दुल हमीद ने जो कुरदीद के साहबज़ादे थे उन्होंने अनस बिन मलिक रज़ियल्लाहु अन्हु से सुना कि अबू जहल ने कहा था कि ऐ अल्लाह! अगर यह कलाम तेरी तरफ़ से वाक़ई हक़ है तो हम पर आसमान से पत्थर बरसा दे या फिर कोई और ही अज़ाब दर्दनाक ले कर आ। इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَأَنتَ فِيهِمْ ۚ وَمَا كَانَ اللَّهُ مُعَذِّبَهُمْ وَهُمْ يَسْتَغْفِرُونَ وما لهم ان لا يعذبهم الله وهم يصدون عن المسجد الحرام.

हालाँकि अल्लाह ऐसा नहीं करेगा कि उन्हें अज़ाब दे इस हाल में कि आप उनमें मौजूद हों और न अल्लाह उनपर अज़ाब लाएगा इस हाल में कि वो इस्तिग़फ़ार कर रहे हों। उन लोगों के लिये क्या वजह कि

अल्लाह उनपर अज़ाब (ही सिरे से) न लाए हालाँकि वो मस्जिद अल-हराम से रोकते हैं।"

इस आयत से यह मालूम होता है कि पूरी ज़मीन पर अल्लाह की दो ज़मानतें हैं: पहली नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का ज़िंदा होना और दूसरी ज़मानत मोमिनों का इस्तिग़फ़ार करना।

जब अबू जहल ने अल्लाह से अज़ाब का मुतालबा किया, तो अल्लाह ने बताया कि जब तक नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ज़िंदा हैं, उस वक्त तक क़ौम पर अज़ाब नहीं आएगा। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़िंदगी में काफ़िर भी अल्लाह के अज़ाब से महफ़ूज़ हो गए थे। अब अबू जहल मर गया और नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम भी अल्लाह के हुक्म से वफ़ात पा गए, तो अल्लाह की पहली ज़मानत रू-ए-ज़मीन से उठ गई।

तिर्मिज़ी मे भी इसकी वज़ाहत है गोकि रिवायत ज़ईफ़ है मगर मानी सही है

عن ابي بردة بن ابي موسى عن ابيه قال: قال رسول الله صلى الله عليه وسلم أَنْزَلَ اللَّهُ عَلَيَّ أَمَانَيْنِ

لِأُمَّتِي : (وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَأَنْتَ فِيهِمْ) (وَمَا كَانَ اللَّهُ مُعَذِّبَهُمْ وَهُمْ يَسْتَغْفِرُونَ) إِذَا مَضَيْتُ تَرَكْتُ فِيهِمُ الاِسْتِغْفَارَ إِلَى يَوْمِ الْقِيَامَةِ.(جامع ترمذی: 3082)

तर्जुमा: अबू-मूसा अशअरी रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: मेरी उम्मत के लिये अल्लाह ने मुझपर दो अमान नाज़िल फ़रमाए हैं

(एक) (وما كان الله ليعذبهم وأنت فيهم) 'तुम्हारे मौजूद रहते हुए अल्लाह उन्हें अज़ाब से दोचार न करेगा,

(दूसरा) (وما كان الله معذبهم وهم يستغفرون) 'जब वो तौबा और इस्तग़फ़ार करते रहेंगे तो भी उनपर अल्लाह अज़ाब नाज़िल न करेगा और जब मैं (इस दुनिया से) चला जाऊँगा तो उनके लिये दूसरा अमान इस्तिग़फ़ार क़ियामत तक छोड़ जाऊँगा।

इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है मानी का असर तोहफतुल अहवज़ी और इब्ने कसीर वग़ैरह और मुत'अदि्दद किताबें ए हदीस व तफ़सीर में मज़कूर है

قال ابن عباس : إن الله جعل في هذه الأمة أمانين لا يزالون معصومين مجارين من قوارع العذاب ما داما بين أظهرهم : فأمان قبضه الله إليه ، وأمان بقي فيكم ، قوله : (وما كان الله

ليعذبهم وأنت فيهم وما كان الله معذبهم وهم يستغفرون. (تحفة الاحوذی شرح حدیث رقم:3082)

तर्जुमा: बेशक अल्लाह ने इस उम्मत में दो ज़मानतें रखी हैं। जब तक ये दो ज़मानतें उनके दरमियाँन हैं, उनकी वजह से उम्मत बराबर अज़ाब से महफ़ूज़ रहेगी। पहला अमान (सुरक्षा) अल्लाह ने उठा लिया और दूसरा अमान तुम्हारे दरमियाँन बाक़ी है। अल्लाह का क़ौल:

وما کان الله ليعذبهم وانت فيهم وما كان الله معذبهم وهم يستغفرون

तर्जुमा: और अल्लाह ऐसा न करेगा कि उनमें आपके होते हुए उनको अज़ाब दे, और अल्लाह उनको अज़ाब न देगा इस हालत में कि वो इस्तग़फार भी करते हों।

ख़ुलासा कलाम यह है कि इस पूरी ज़मीन से अल्लाह की एक ज़मानत उठ गई, वो है नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का वफ़ात पा जाना। यह जान लें कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का इस दुनिया से उठ जाना उम्मत का बहुत बड़ा ख़सारा है। बेहद अफ़सोस है उन लोगों पर जो दुनिया की दौलत हासिल करने के लिए नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की वफ़ात का इंकार करते हैं। इससे ज़्यादा अफ़सोस इस हरकत पर है कि आपकी वफ़ात से पूरी ज़मीन की एक ज़मानत उठ

गई, मगर दुनिया की दौलत और हवस के परस्तार हर साल नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नाम पर जश्न ए ईद मीलादुन्नबी मनाते हैं। अफ़सोस सद अफ़सोस।

एक ज़मानत चली मगर अल्लाह की एक ज़मानत अभी भी पूरी ज़मीन पर बाक़ी है, वो है मोमिनों का इस्तग़फार करना। जो बिद'अती है वो बिद'अत से तौबा कर ले और कसरत से इस्तग़फार करे। जो बदचलन है वो अपने गुनाहों से तौबा कर ले और बक़सरत अल्लाह से इस्तग़फार करे। और जो कुफ़्र और म'आसी में डूबे हुए हैं, वो अपने ईमान की इस्लाह कर लें, अमल-ए-सालेह अंजाम दें और इस्तग़फार को लाज़िम पकड़ें। अल्लाह इस्तग़फार की बदौलत हम पर अज़ाब टाल देगा। आजकल पूरी दुनिया में मुसलमानों की हालत बहुत ना-गुफ़्ता है। इन हालात में मनमानी, नफ़्सियाती ख़्वाहिशात और बिद'अती ख़ुराफ़ात छोड़कर अल्लाह की किताब और सुन्नत-ए-रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ रुजू करना, अपने आमाल को सही करना और तौबा और इस्तग़फार को लाज़िम पकड़ना निहायत ज़रूरी है।

================

[90].रोटी, दरख़्तों और बादलों पर अल्लाह का नाम ढूंढ़ना।

रोटी पर अल्लाह का नाम उभर आया, बकरी के पेट पर अल्लाह का नाम उभर आया, दरख़्तों के पत्तो पर अल्लाह और मुहम्मद लिखा नज़र आया, चाँद पर मुहम्मद लिखा नज़र आया, गाये के सर पे अल्लाह लिखा नज़र आया।

अल्लाह के बंदो, ऐसी पोस्ट शेयर करना बंद कर दो, अल्लाह की वहदानियत के लिए किसी सहारे की ज़रूरत नहीं है, ये नक़्श जो उभरते हैं, उन्हें इस तरह शेयर करने से ग़ैर मुस्लिम लोग हमारा मज़ाक उड़ाते हैं, कहते हैं अगर इस बात से हक़ साबित होता है तो हम कई ऐसी चीज़ें दिखा सकते हैं, जिन पर सलीब का निशान उबर आया। क्या सलीब का निशान देख कर आप लोग अपना ईमान बदल लेंगे, ईमान के लिए इन चीज़ की ज़रूरत नहीं है।

ग़ैर मुस्लिम लोग फ़र्ज़ी वीडियो और फोटो बना कर, यूट्यूब और गूगल पर अपलोड करते हैं, और मुसलमान कमेंट में सुब्हानल्लाह,

माशाअल्लाह अल्लाह लिखते हैं। और वो कहकाहे लगा कर हंसते हैं, के देखो मुसलमान कितने जाहिल हैं?

अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के क़ुरआन से बड़ा कर कोई मो'जिज़ा नहीं हो सकता जो इस दुनिया में आया है। इस बात पर ग़ौर करें कि हम किस तरफ़ जा रहे हैं?

==================

[91].लकड़ी के तख़्त पर नमाज़ पढ़ना कैसा है? और क्या बैड पर नमाज़ पढ़ सकते हैं?

सख़्त चीज़ है जैसे लकड़ी का तख़्त तो उस जैसी चीज़ पर नमाज़ पढ़ सकते हैं।

फोम जैसी चीज़ हो जिस पर पेशानी (माथा) ज़मीन या सतह ज़मीन पर टिक न सके तो उस पर नमाज़ नही पढ़ना है जैसे नर्म गद्दा या मोटा फोमज़मीन पर नमाज़ पढ़ना, या लकड़ी के तख़्त पर नमाज़ पढ़ना या मकान की छत पर नमाज़ पढ़ना या दो मंज़िला मकान पर नमाज़ पढ़ना बराबर है, इसमें कोई हर्ज नही।

=========

[92] लॉकडाउन और घर में तरावीह के मसाइल

इसमें कोई शक नहीं कि बर-वक़्त दुनिया के हालात साज़गार नहीं हैं, ख़ासकर हिंदुस्तान में मुसलमान क़िस्म-क़िस्म की आज़माइशों से गुज़र रहे हैं। हुकूमती ऐलान लॉकडाउन की वजह से रमज़ानुल मुबारक जैसा ख़ैर और बरकत का महीना मुतास्सिर होता नज़र आ रहा है। यही तो माह-ए-मुबारक है जिसमें गुनहगारों को भी ख़ैर और बरकत की सआदत नसीब होती है और सालिहीन को मज़ीद तक़वा और परहेज़गारी अता होती है। अल्लाह हमारे सिरों से आज़माइश टाल दे और माह-ए-मुबारक की सआदतें नसीब फ़रमाए। आमीन

लॉकडाउन की सूरत में मुसलमानों में एक बड़ी बेचैनी तरावीह के सिलसिले में है कि घरों में महदूद हो जाने की वजह से मस्जिद में जाकर जमाअत से तरावीह की नमाज़ नहीं पढ़ सकते हैं। हमारी मुसलमानों की यह बेचैनी वाजिब है और इस मुश्किल वक्त में हम सबको ज़्यादा तौबा और अल्लाह से मदद और दुआ का एहतिमाम करना चाहिए ताकि अल्लाह हम पर और पूरी उम्मते मुस्लिमा पर आसानी फ़रमाए। रहा मसला तरावीह का तो इस सिलसिले में देखते

हैं कि शरियत से हमारे लिए क्या कुछ रहनुमाई और सहूलत मौजूद है?

पहली फ़ुर्सत में तरावीह से मुताल्लिक़ चंद बुनियादी मसाइल ज़हन नशीं करें फिर ज़्यादा बेचैन करने वाले मसले को वाज़ेह करूंगा।

पहली बात यह कि तरावीह वाजिब नहीं है बल्कि मस्नून है, इसी लिए तो रसूल सलल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सहाबा को चंद दिन जमात से तरावीह पढ़ाने के बाद तीसरे या चौथे दिन मस्जिद ही नहीं आए ताकि कहीं उम्मत पर यह फ़र्ज़ ना कर दिया जाए। अगर किसी से चंद दिन या पूरा रमज़ान तरावीह छूट जाए तो अल्लाह के यहाँ जवाबदेही नहीं होगी, मगर पाँच वक्त की नमाज़ों में से एक वक्त की भी नमाज़ बगैर उज़्र (मजबूरी) के छोड़ देते हैं तो इस पर पकड़ होगी।

दूसरी बात यह है कि तरावीह की मस्नून रकात वित्र के साथ 11 है, जैसा कि आयशा रजियल्लाहु अन्हा बयान करती हैं कि नबी करीम सलल्लाहु अलैहि वसल्लम रमज़ान में और रमज़ान के अलावा दूसरे महीनों में 11 रकात से ज़्यादा नहीं पढ़ते थे। इस लिए तरावीह की मस्नून रकात वित्र के साथ 11 ही है। जो लोग 20 रकात तरावीह

मस्नून कहते हैं उनके पास कोई सहीह दलील नहीं है। सहीह दलील से यह बात भी साबित है कि उमर रजियल्लाहु अन्हु ने सहाबा को 11 रकात ही तरावीह पढ़ाने का हुक्म दिया, इस लिए यह कहना कि उमर रजियल्लाहु अन्हु ने लोगों को 20 रकात तरावीह पर जमा किया सही नहीं है।

तीसरी बात यह है कि तरावीह ही तहज्जुद और क़ियाम-उल-लैल है, यानी रमज़ानुल मुबारक में जिस नमाज़ को तरावीह कहते हैं, उसे तहज्जुद और क़ियाम-उल-लैल भी कह सकते हैं। दोनों में कोई फ़र्क़ नहीं है। ऊपर दूसरी बात के तहत मैंने आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की हदीस बतलाई कि नबी करीम सलल्लाहु अलैहि वसल्लम रमज़ान और ग़ैर-रमज़ान में 11 रकात से ज़्यादा नहीं पढ़ते थे। जो नमाज़ नबी करीम सलल्लाहु अलैहि वसल्लम रमज़ान के अलावा दूसरे महीनों में क़ियाम-उल-लैल के नाम से 11 रकात पढ़ते थे, वही नमाज़ रमज़ान में भी अदा फ़रमाते थे। अगर तरावीह और तहज्जुद अलग-अलग मानते हैं तो इसका मतलब हुआ कि नबी ने 3 ही दिन सहाबा के साथ तरावीह पढ़ी और ज़िंदगी में कभी नहीं पढ़ी या जिन 3 या चंद दिनों सहाबा को जमात से तरावीह पढ़ाई, उन दिनों अलग से क़ियाम-उल-लैल भी पढ़ी। हालांकि यह दोनों बातें ग़लत हैं। नीज़ जिन हदीस

से हम तरावीह की फ़ज़ीलत बयान करते हैं, उनमें तो "क़ामा रमज़ान" या "क़ामा लैलता" का लफ़्ज़ आया, यानी जो रात को क़ियाम करे, रात के उसी क़ियाम को तो क़ियाम-उल-लैल कहा जाता है।

चौथी बात यह है कि तरावीह में क़ुरआन ख़त्म करना ज़रूरी नहीं है। तरावीह असल में क़ियाम-उल-लैल है यानी रात में इत्मिनान और सुकून से लंबा क़ियाम करना, चाहे क़िरात जितनी भी हो, अल्लाह क़ियाम-उल-लैल का अज्र देगा। अगर किसी ने तरावीह में 10, 15 या 20 पारे ही पढ़े मगर क़ियाम-उल-लैल का हक़ अदा किया तो बिना शक उसे क़ियाम-उल-लैल का अज्र मिलेगा। और जिसने तरावीह में मुकम्मल क़ुरआन ख़त्म किया मगर नमाज़ में सुकून और ए'तिदाल (तवाज़ुन) नहीं बरता, कौवे की तरह चोंच मारता रहा, ऐसी नमाज़ नमाज़ ही नहीं है। नबी सलल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक सहाबी को जल्दबाज़ी में नमाज़ पढ़ने पर कई मर्तबा नमाज़ दोहराने का हुक्म दिया।

पाँचवीं बात यह है कि मस्जिद में हाज़िर होकर जमात के साथ तरावीह पढ़ना ज़रूरी नहीं है, बल्कि अकेले भी पढ़ सकते हैं और मस्जिद के अलावा घर में भी अदा कर सकते हैं। और याद रखें कि

कोई अकेले भी तरावीह पढ़ता है तो उसको भी उतना अज्र मिलेगा कि पिछले सारे गुनाह माफ़ हो जाएंगे, जिसका वादा रसूल सलल्लाहु अलैहि वसल्लम ने रमज़ान में क़ियाम-उल-लैल से मुताल्लिक़ किया है। इसलिए लॉकडाउन की वजह से ज़्यादा फ़िक्रमंदी की ज़रूरत नहीं है। और हालात की संगिनी की वजह से जब जुमा और फ़राइज़ की जमात साकित हो गई है तो तरावीह सिर्फ़ मस्नून है, जिसके लिए न मस्जिद शर्त है और न ही जमात।

इन चंद मसाइल से आगाही के बाद एक अहम बेचैन करने वाला मसला हल करते हैं। वो यह है कि ठीक है, तरावीह के लिए जमात या मस्जिद ज़रूरी नहीं है, मगर जमात से पढ़ना बड़े अज्र और सवाब का काम तो है। यह बात 100% सही है कि जमात से कोई भी नमाज़ अदा करना अकेले पढ़ने से 27 गुना बेहतर है और फिर एक सही हदीस में है कि जो इमाम के साथ आख़िरी वक्त तक क़ियाम करे तो उसे पूरी रात क़ियाम का अज्र मिलता है (सहीहुन नसाई: 1604)

गोया कि तरावीह अकेले पढ़ने से भी पिछले गुनाहों की माफ़ी का अज्र मिल जाएगा, ताहम रमज़ान बाबरकत महीना है और जमात से सवाब दुगना हो जाता है। इस वजह से आप अपने-अपने घरों में घर वालों

के साथ जमात से तरावीह का एहतिमाम करें। नमाज़ की इमामत के बारे में नबी सलल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

ليؤمكم اكثركم قرآنا.(صحيح النسائی:788)

तर्जुमा:- तुम में से जिसे सबसे ज़्यादा क़ुरआन याद हो वह इमामत कराए।

इस फ़रमान-ए-रसूल की रोशनी में घर वालों को तरावीह पढ़ाएं। याद रहे, मर्द औरतों की इमामत करा सकता है मगर औरत मर्दों की इमाम नहीं बन सकती है। ज़्यादा क़ुरआन याद होने का मतलब यह है कि घर में मसलन 10 लोग हैं और किसी को 1 पारा याद है और उतना किसी को याद नहीं है तो वही इमामत कराए। या किसी को चंद सूरते ही याद हैं और दूसरों को कुछ याद नहीं है तो जिसे चंद सूरते याद हैं वही इमामत कराए।

यहां एक और बात याद रहे कि एक सूरा को एक से ज़्यादा रकात में भी पढ़ सकते हैं, मसलन सूरह इख़लास पहली रकात में पढ़ी गई तो दूसरी रकात में भी पढ़ सकते हैं, इसमें कोई हरज नहीं है। इसका मतलब यह हुआ कि किसी को चंद छोटी सूरते भी याद हों तो वह

भी तरावीह पढ़ा सकता है। एक-एक रकात में एक-एक सूरा पढ़ाए और अगर रकात से कम सूरते याद हों तो एक सूरा दो रकातों में पढ़ाए।

ब-वक़्त ज़रूरत तरावीह में क़ुरआन को देखकर पढ़ना कैसा है?

अब आते हैं एक अहम मसले की तरफ़ कि अगर किसी को क़ुरआन ज़्यादा याद न हो और तरावीह में लंबा क़ियाम और सजदा करना चाहता हो तो क्या वह क़ुरआन देखकर पढ़ सकता है?

इस सवाल का सीधा और मुख़्तसर जवाब यह है कि ज़रूरत के वक्त क़ुरआन देखकर तरावीह पढ़ाना जायज़ और सही है। इसकी दलील यह है कि आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) ने अपने ग़ुलाम को तरावीह पढ़ाने का हुक्म दिया और वह क़ुरआन से देखकर आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) को तरावीह पढ़ाते थे। यह रिवायत सही बुख़ारी में मौजूद है। आयशा (र.अ.) दीन की बड़ी आलिमा और फ़ाज़िला थीं। उनसे सहाबा और सहाबियात दीन सीखते और मसाइल दरयाफ़्त करते थे। ज़ाहिर सी बात है कि उनकी फ़िक़्हात के सामने बाद वाले या इमाम-ए-अरबा की फ़िक़्हात कुछ भी नहीं है। यही वजह है कि किसी भी सहाबी से

आयशा (र.अ.) के इस अमल की मुख़ालिफ़त वारिद नहीं है। यहां तक कि उमूमी तौर पर भी किसी सहाबी ने मुसहफ़ देखकर नमाज़ पढ़ने से मना नहीं किया है। कुछ लोग तीन सहाबा-ए-किराम का नाम ज़िक्र करते हैं मगर सहाबी का कोई असर साबित नहीं है। मुंदरिजा लाइन में उनका ख़ुलासा पढ़ें।

(1) अम्मार बिन यासिर (र.अ.) नमाज़ में क़ुरआन देखकर पढ़ना बुरा समझते थे और उसे अहल-ए-किताब का तरीक़ा बताते थे। यह असर तारीख़-ए-बग़दाद में मौजूद है और तारीख़-ए-बग़दाद के मुहक़्क़िक़ डॉक्टर बशार अवाद मआरूफ़ ने अलमिज़ान (4/507) के हवाले से ज़िक्र किया है कि इसकी सनद में अबू बिलाल अशअरी एक ज़ईफ़ रावी हैं।

(2) सुवाईद बिन हंज़ला (र.अ.) ने एक सहाबा को क़ुरआन देखकर पढ़ते देखा तो उनका क़ुरआन लेकर अलग रख दिया। सुवाईद बिन हंज़ला नाम से एक सहाबी गुज़रे हैं, उनसे हदीस भी मरवी है मगर यहां नाम में तह्रीफ़ हो गई है। अलमसाहिफ़ लिब्ने अबू दाऊद 7054 में सुलेमान बिन हंज़ला अलबक्री है, जबकि यह नाम भी सही नहीं है।

सही नाम सलीम बिन हंज़ला अलबक्रा अस-सादी अल-कूफ़ी है, यह सहाबी नहीं ताबिई हैं।

(3) ((अबदुल्लाह बिन अब्बास (र.अ.) कहते हैं कि अमीरुल मोमिनीन उमर फारूक (र.अ.) ने हम लोगों को हालात-ए-नमाज़ में क़ुरआन देखकर पढ़ने से क़त'अन मना फ़रमा दिया था)) यह रिवायत कंज़ अल-उम्माल और आला-उस-सुनन में है, मगर वहां उसकी सनद नहीं है। साहिबे अलमसाहिफ़ ने इसकी सनद ज़िक्र की है। इस सनद में निहशल बिन सईद नसाफुरी नाम का कज़्ज़ाब और मतरुक रावी है। इमाम बुख़ारी (रहिमहुल्लाह) और इमाम नसाई ने इस पर हरज की है।

इन तीनों में दूसरा सवाल क़ौल सहाबी का नहीं है और बाक़ी बचे सहाबी के 2 अक़वाल ज़ईफ हैं। इसलिए मालूम हुआ कि आइशा (र.अ.) की रिवायत की बुनियाद पर ज़रूरत के तहत नमाज़ में क़ुरआन देखकर पढ़ना जायज़ है। सहाबी का क़ौल और अमल ताबिई पर मुक़द्दम है। इसलिए बाद वालों के अक़वाल नहीं ज़िक्र कर रहा हूँ। अलबत्ता इमामे अरबा की बात करें तो इमाम अबू हनीफ़ा के अलावा इमामे सलासा ने नमाज़ में क़ुरआन देखकर पढ़ने की रुखसत दी है।

यही वजह है कि जब इमाम ज़ह्री से किसी ने सवाल किया कि रमज़ान में क़ुरआन देखकर पढ़ना कैसा है तो उन्होंने बेहतरीन जवाब दिया:

كان خيارنا يقرؤون في المصاحف(المدونة الكبرى /) والمغني لأبن قدامة /)

कि हम में से बेहतर लोग क़ुरआन देखकर पढ़ते थे।

मसलक-ए-अहनाफ़ और नमाज़ में क़ुरआन देखना:

अलग-अलग किताबों में मज़कूर है कि इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक क़ुरआन देखकर पढ़ने से नमाज़ बातिल हो जाती है। यही वजह है कि आज लोगों की शदीद ज़रूरत है कि वो अपने-अपने घरों में तरावीह की नमाज़ क़ुरआन देखकर पढ़ाएँ, क्योंकि कोरोना वायरस की वजह से मसाजिद बंद हैं और हर घर में हाफ़िज़ दस्तयाब भी नहीं हो सकते। मगर फिर भी और उन हालात में भी क़ुरआन देखकर पढ़ने से हनफ़ियों की नमाज़ बातिल हो जाएगी। जब हनफ़ियों को सही बुख़ारी में मौज़ूद आइशा (र.अ.) का हुक्म और ज़कवान का अमल दिखाओ तो उसकी दलील की मुख़्तलिफ़ तावील करते हैं। आप तो जानते हैं कि मुक़ल्लिद क़ुरआन की आयत में तावीलात कर लेगा और उसका मफ़हूम बदल देगा मगर इमाम का क़ौल नहीं छोड़ेगा। यही हाल यहाँ भी नज़र आता है।

आइशा (र.अ.) की हदीस के मुताल्लिक़ अहनाफ़ की एक तावील यह है कि यह हदीस-ए-रसूल नहीं है, असर है यानी सहाबी का ज़ाती अमल है। मैं कहता हूँ कि फिर सही बुख़ारी में मौजूद तरावीह की 11 रकात अमल-ए-रसूल है, उसको छोड़ कर दलील में उमर (र.अ.) का अमल पेश करते हो, वो भी ज़ईफ़, क्या वो असर नहीं है? अहनाफ़ की दूसरी तावील यह है कि ज़कवान का अमल मुतज़ाद और इज्मा-ए-उम्मत के ख़िलाफ़ है। मैं कहता हूँ कि किसी इमाम का मसलक उनके शागिर्द से राइज होता है और इमाम साहब के दो शागिर्द अबू यूसुफ़ और मुहम्मद कहते हैं कि नमाज़ में कुरआन देखने से नमाज़ मुकम्मल हो जाती है, बस कराहत का मसला है, जबकि इमाम अबू हनीफ़ा नमाज़ ही फ़ासिद कर रहे हैं। इसका मतलब शागिर्द ने उसी वक्त भांप लिया कि इमाम साहब का यह फ़तवा ग़लत है लेकिन ग़ाली मुक़ल्लिदीन पकड़े बैठे हैं। इमाम साहब के शागिर्द का भी लिहाज़ नहीं करते, ये लोग भला आइशा (र.अ.) का फ़तवा कहाँ से मानेंगे? इस बात पर कोई हैरत किए बिना नहीं रह सकता कि जब अहनाफ़ सहाबी के क़ौल और काम को दीवार पर मार देते हैं फिर ऐसे लोग इमाम की हर बात की तक़लीद कैसे वाजिब क़रार देते हैं जो ना नबी है, ना सहाबी है और ना ही मासूम?

अहनाफ़ की एक तावील यह भी है कि आइशा (र.अ.) का यह अमल उन अहादीस में से है जिनको उम्मत ने क़बूल नहीं किया। यह सिर्फ़ एक आदमी का अमल है और उसे इमाम बुख़ारी ने ज़िमनन ज़िक्र कर दिया है। अहनाफ़ की इस बेजा तावील में किस क़दर जुर्रत है? अपने इमाम को मासूम समझते हैं, हर बात की तक़लीद वाजिब क़रार देते हैं, वरना निजात नहीं होगी, मगर ख़ैरुलक़ुरून की आलिमा, ज़ाहिदा और फक़ीहा जिनको बरा-ए-नबी का फ़ैज़ हासिल था, उनको कौन-सा रुतबा देते हैं? इस मुनासिबत से इब्न-ए-नुजीम हनफ़ी का क़ौल (जवाला शु'बा वन-नज़ायर में है) बयान करना दिलचस्प होगा कि नमाज़ी क़ुरआन की तरफ़ देख भी ले तो उसकी नमाज़ बातिल हो जाती है, मगर शहवत के साथ औरत की शर्मगाह भी देखे तो नमाज़ बातिल नहीं होती है। उन बातों से आपको पता चल ही गया होगा कि अहनाफ़ दीन के साथ खिलवाड़ करते हैं। उनके यहाँ क़ुरआन और हदीस असल नहीं, अपने इमाम का क़ौल ही असल है, इसलिए उनके फ़तवों और उनके मसाइल से बचकर रहना चाहिए।

ख़ुलासा-ए-कलाम यह हुआ कि हम अपने घर में जमात बनाकर तरावीह पढ़ सकते हैं और जिसे ज़्यादा क़ुरआन याद होगा, वही इमामत

कराएगा। यदि किसी को क़ुरआन ज़्यादा याद न हो और तरावीह में लंबी-लंबी क़िरात करना चाहता हो, तो वह क़ुरआन देख कर क़िरात कर सकता है। लेकिन याद रहे कि मोबाइल से क़िरात न करे बल्कि क़ुरआन (मुसहफ़) से करे क्योंकि मोबाइल मुसहफ़ नहीं है। यह एक ऐसा आलात है जिसमें ख़ैर और शर दोनों हैं। इससे इम्कान है कि क़िरात के दौरान नामुनासिब चीज़ देखने या सुनने को मिल जाए या ध्यान रोज़मर्रा की उन बातों की तरफ़ चला जाए जो मोबाइल से करते और सोचते हैं। और जो लोग मोबाइल को मुसहफ़ करार देते हैं, वे ग़लती पर हैं।

========================

[93].लॉकडाउन और मर्द मर्द और औरतो के लिए एतिकाफ़ का मसला

लॉकडाउन की वजह से जहां बहुत सारे मसाइल पैदा हुए उन्हीं में से एक मसला एतिकाफ़ का भी है। रमज़ान-उल-मुबारक के अफज़ल आमाल में से एतिकाफ़ के लिए भी लॉकडाउन रुकावट बन रहा है। ऐसे में अक्सर हलक़ो से यह सवाल आ रहा है कि अगर मस्जिदों में एतिकाफ़ की इजाज़त न दी गई या लॉकडाउन की वजह से अगर हम मस्जिद में एतिकाफ़ न कर सके तो मजबूरी के तहत इस साल अपने घरों में एतिकाफ़ कर लें, ऐसा करना शरियत की रोशनी में सही होगा?

चुनांचे इस सिलसिले में अहनाफ़ के यहां औरतों के एतिकाफ़ में पहले से सहूलत मौजूद है कि उनके लिए घरों में एतिकाफ़ करना जायज़ है। जब उनके यहां एतिकाफ़ के लिए मस्जिद शर्त ही नहीं, तो मर्द हो या औरत कहीं भी एतिकाफ़ कर ले, क्या फ़र्क़ पड़ता है? कोरोना के सबब मर्दों के लिए भी (औरतों को पहले से आज़ादी हासिल है) घरों में एतिकाफ़ करने से मुताल्लिक़ अहनाफ़ के फ़तवे भी आ चुके हैं।

अहले हदीस वह जमात है जो दलील के मुक़ाबले में किसी अहले हदीस आलिम के क़ौल को भी हुज्जत नहीं मानती सिवाय जदीद इज्तिहादी मसाइल के जहां शरियत ख़ामोश है और इज्तिहाद के लिए शरई गुंजाइश है। एतिकाफ़ के मसले को भी हम दलाईल की रोशनी में हल करेंगे। चुनांचे कुरआन और हदीस के दलील से साफ़ और वाज़ेह तौर पर मालूम होता है कि एतिकाफ़ ऐसी इबादत है जो मस्जिद के साथ ख़ास है। इसको मिसाल से ऐसे समझें कि जिस तरह हज और उमराह मक्का में ही होगा, अगर कोरोना की वजह से मक्का का सफ़र मुमकिन नहीं है तो कोई अपने मुल्क में हज और उमराह नहीं कर सकता। इसी तरह कोरोना या किसी और मजबूरी के तहत मसाजिद बंद होने पर एतिकाफ़ घरों में करना जायज़ नहीं होगा, ना मर्दों के लिए और ना ही औरतों के लिए।

अल्लाह का फ़रमान है:

ولا تباشروهن وانتم عافكفون في المساجد. (البقرة:)

तर्जुमा: और अगर तुम मस्जिदों में एतिकाफ़ बैठे हो तो फिर अपनी बीवियों से मुबाशिरत ना करो।

यहां عاكفون فى المساجد से इस्तिदलाल है कि एतिकाफ़ के लिए मस्जिद शर्त है चाहे मर्द हो या औरत, बग़ैर मस्जिद के एतिकाफ़ नहीं होगा।

आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा बयान करती हैं कि...

فعن عائشة رضى الله عنها أن النبى صلى الله عليه وسلم كان يعتكف العشر الأواخر من رمضان حتى توفاه الله عز وجل ثم اعتكف أزواجه من بعده. رواه (البخارى: ٠ ومسلم:)

तर्जुमा: नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अपनी ज़िंदगी के आख़िरी लम्हे तक रमज़ान-उल-मुबारक के आखिरी अश्रे का एतिकाफ़ करते रहे। फिर उनके बाद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की अज़्वाज-ए-मुतह्हरात भी एतिकाफ़ करती रहीं।

इमाम नववी रहिमहुल्लाह सहीह मुस्लिम की शरह में इस हदीस के तहत लिखते हैं कि एतिकाफ़ मस्जिद के अलावा कहीं भी सही नहीं होगा, इस लिए कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम, आपकी अज़्वाज-ए-मुतह्हरात और सहाबा-ए-किराम मशक़्क़त के बावजूद मस्जिद में ही एतिकाफ़ करते थे। अगर घर में भी एतिकाफ़ जाइज़ होता तो घर में ज़रूर एतिकाफ़ करते, गरचे एक मर्तबा ही क्यों ना

हो, बतौर-ए-ख़ास औरतें, क्योंकि उनकी ज़रूरत अक्सर घरों की ही होती है। (सहीह मुस्लिम शरह नववी)

अबू सईद खुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं कि...

حَدَّثَنَا الْحَسَنُ بْنُ عَلِيٍّ، حَدَّثَنَا عَبْدُ الرَّزَّاقِ، أَخْبَرَنَا مَعْمَرٌ، عَنْ إِسْمَاعِيلَ بْنِ أُمَيَّةَ، عَنْ أَبِي سَلَمَةَ، عَنْ أَبِي سَعِيدٍ، قَالَ : اعْتَكَفَ رَسُولُ اللَّهِ صلى الله عليه وسلم فِي الْمَسْجِدِ فَسَمِعَهُمْ يَجْهَرُونَ بِالْقِرَاءَةِ، فَكَشَفَ السِّتْرَ وَقَالَ : " أَلاَ إِنَّ كُلَّكُمْ مُنَاجٍ رَبَّهُ فَلاَ يُؤْذِيَنَّ بَعْضُكُمْ بَعْضًا، وَلاَ يَرْفَعْ بَعْضُكُمْ عَلَى بَعْضٍ فِي الْقِرَاءَةِ " . أَوْ قَالَ : " فِي الصَّلاَةِ " . (صحيح ابي داؤد:)

तर्जुमा: रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मस्जिद में एतिकाफ़ फरमाया। आपने लोगों को बुलंद आवाज़ से क़िरात करते सुना तो पर्दा हटाया और फ़रमाया: "लोगो, सुनो! तुम में से हर एक अपने रब से सरगोशी करता है, तो कोई किसी को तकलीफ़ न पहुंचाए और ना क़िरात में (या कहा नमाज़ में) अपनी आवाज़ को दूसरे की आवाज़ से बुलंद करे।"

नाफ़े बयान करते हैं:

وقد اراني عبدالله رضى الله عنه المكان الذي كان يعتكف فيه رسول الله صلى الله عليه وسلم من المسجد. (صحيح مسلم:)

तर्जुमा: अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु ने मुझे वह जगह दिखाई जहां पर मस्जिद में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम एतिकाफ़ किया करते थे।

यह सारे दलाईल वाज़ेह करते हैं कि एतिकाफ़ का महल मस्जिद है। यही किताब और सुन्नत की तालीम है। जैसा आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के एतिकाफ़ से वाज़ेह है औरतों के हक़ में भी एतिकाफ़ मस्जिद में ही मशरू है। मस्जिद से बाहर घर में औरतों का एतिकाफ़ सही नहीं है। इस सिलसिले में ऊपर सहीह मुस्लिम की हदीस और इमाम नववी की शरह पढ़ चुके हैं। इससे भी ज़्यादा वाज़ेह सहीह बुख़ारी की हदीस नंबर (2033), हदीस नंबर (2034), हदीस नंबर (2041) और हदीस नंबर (2045) हैं जिनमें मज़कूर है कि एतिकाफ़ की नियत से कुछ अज़्वाज-ए-मुतह्हरात ने मस्जिद-ए-नबवी में अपने-अपने ख़ेमे नसब किए थे।

इम्साल (इस साल) कोरोना की वजह से मसाजिद में एतिकाफ़ करना अम्र-ए-मुहाल (मुश्किल काम) लग रहा है। इस वजह से जो लोग एतिकाफ़ की नियत रखते हैं, अगर उन्हें मस्जिद में एतिकाफ़ की सहूलत मयस्सर ना आ सके तो अपना एतिकाफ़ छोड़ देना चाहिए और यह जान लेना चाहिए कि एतिकाफ़ वाजिब नहीं है जिसके छोड़ने

से गुनाह लाज़िम आएगा, बल्कि मस्नून अमल है और अल्लाह उन्हें नियत के मुताबिक़ पूरा-पूरा अज्र देगा। अज़्वाज-ए-मुतह्हरात के ख़ेमे से मुताल्लिक़ सहीह बुख़ारी मज़कूरा हदीस में है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उस साल रमज़ान का एतिकाफ़ नहीं किया था।

जो लोग कोरोना की वजह से मर्दों के लिए घरों में एतिकाफ़ करना जायज़ क़रार दे रहे हैं, उनकी बात रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तालीमात और अमल-ए-सहाबा के ख़िलाफ़ है। नीज़ यह बात भी ग़लत है कि हर बस्ती में कम से कम एक आदमी एतिकाफ़ करे, वरना पूरी बस्ती गुनहगार होगी और साथ ही औरतों का घरों में एतिकाफ़ करना भी सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से औरतों के घर में एतिकाफ़ से मुताल्लिक़ मसला दरयाफ़्त किया गया तो उन्होंने जवाब दिया कि औरतों का घर में एतिकाफ़ करना बिद'अत है। लिहाज़ा हमें इत्तिबा-ए-सुन्नत को लाज़िम पकड़ना चाहिए और दीन के नाम पर बिद'अत और ख़ुराफ़ात से बचना चाहिए।

=======================

[94].वक़्त की अहमियत (नए साल के पस-मंज़र मे)

जनवरी आते ही पिछला साल पुराना और आने वाला "न्यू ईयर" हो जाता है। इस मौक़े पर पहली जनवरी को दुनियाभर में लोग ख़ुशियाँ मनाते हैं। ख़ुशी मनाने के नाम पर मज़हबी या सामाजिक ख़िदमतें नहीं अंजाम दी जातीं, बल्कि कुफ़्र और मासियत, नाच-गाने, फ़िस्क़ और फुजूर और शराब और कबाब की मस्तियाँ चलती हैं, यहाँ तक कि ज़िना और ऐशो-इश्क तक की जाती हैं। अल्लाह की पनाह ऐसी ख़ुशी और इज़हार-ए-ख़ुशी के फ़वाहिश तरीक़ों से। अगर आप उन लोगों का जाइज़ा लें जो ऐसी ख़ुशियाँ मनाते हैं, तो मालूम होगा कि वे दरअसल वक्त की अहमियत से बेपरवाह और ज़िंदगी के असल मक़सद से बहुत दूर होते हैं।

इस्लाम में वक्त को बड़ी अहमियत हासिल है, इस वजह से इंसानी ज़िंदगी का हर पल और हर लम्हा बहुत ही क़ीमती है। वक्त वो क़ीमती सरमाया है जिस पर आख़िरत में फ़ैसला होगा और हर शख़्स को उसके मुताबिक़ नतीजा मिलेगा। यानी जिस इंसान का दुनियावी वक्त अच्छा होगा, आख़िरत में उसका नतीजा भी अच्छा होगा और

जिसका दुनियावी वक्त बुरा गुज़रा होगा, उसके साथ आख़िरत में भी बुरा ही होगा।

मोमिन और काफ़िर की ज़िंदगी में बुनियादी फ़र्क़ यह है कि काफ़िर दुनिया को ऐश और इशरत और खाने-पीने की जगह समझता है और उसी हिसाब से ज़िंदगी गुज़ारता है, जिसकी सज़ा में अल्लाह उसे जहन्नम में डाल देगा, जबकि मुमिन इस दुनिया को आख़िरत की तैयारी की जगह समझता है और अल्लाह के अज़ाब और जहन्नम से ख़ौफ़ खाकर यहाँ कुफ़्र और गुनाह से बचता और ईमान और अमल-ए-सालेह का काम करता है, जिसके बदले में अल्लाह उसे बाग़ों वाली जन्नत में दाख़िल करेगा। अल्लाह का इर्शाद है:

إِنَّ اللَّهَ يُدْخِلُ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ ۖ وَالَّذِينَ كَفَرُوا يَتَمَتَّعُونَ وَيَأْكُلُونَ كَمَا تَأْكُلُ الْأَنْعَامُ وَالنَّارُ مَثْوًى لَّهُمْ (محمد:12)

तर्जुमा: जो लोग ईमान लाए और उन्होंने नेक अमल किए, उन्हें अल्लाह यक़ीनन ऐसे बाग़ों में दाखिल करेगा जिनके नीचे नहरें बह रही हैं। और जो लोग काफ़िर हुए, वे (दुनिया ही का) फ़ायदा उठा रहे हैं और चौपायों की तरह खा रहे हैं, उनका असली ठिकाना जहन्नम है।

इस आयत पर ग़ौर करते हुए इब्ने अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हु) का यह क़ौल भी सामने रखते हैं, जिसे इब्न ए मबारक (रहिमहुल्लाह) ने अपनी किताब "अज़-ज़ुहद व रक़ाईक़" में ज़िक्र किया है। आप फ़रमाते हैं:

لَيَأْتِيَنَّ عَلَى النَّاسِ زَمَانٌ يَكُونُ هَمُّ أَحَدِهِمْ فِي بَطْنِهِ، وَدِينُهُ هَوَاهُ۔ (حواله: الزهد والرقائق لابن المبارك، بَابٌ: فِي طَلَبِ الْحَلالِ، رقم الحديث: 601)

तर्जुमा: लोगों पर एक ऐसा ज़माना आएगा जिसमें आदमी का अहम मक़सद पेट पालना होगा और उसकी ख़्वाहिश पर चलना उसका दीन होगा।

आज मुसलमानों की हालात पर नज़र डालते हैं तो हमें उनकी ज़िंदगी में मोमिनाना किरदार नज़र नहीं आता, जिसका ज़िक्र अल्लाह ने मज़कूरा आयत में किया है, बल्कि वह तरज़-ए-ज़िंदगी नज़र आती है जिसका ज़िक्र इब्ने अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हु) कर रहे हैं। वाक़ई बिल्कुल वही ज़माना मुसलमानों पर आ गया है, एक तरफ़ हराम और हलाल की परवाह किए बिना लोग पेट भरना ही ज़िंदगी का मक़सद समझ बैठे हैं और दूसरी तरफ़ दुनियापरस्ती, नफ़्सपरस्ती, क़ब्रपरस्ती, शख़्सियतपरस्ती और बिद'अत और गुमराही को दीन का नाम देकर बड़े इख़लास से उन्हें अंजाम दिया जा रहा है।

दुनियापरस्ती ने हमें ज़िंदगी के मक़सद से इस क़दर दूर हटा दिया कि महीनों और सालों की रफ़्तार कैसे गुज़र रही है, इसका एहसास और समझ ख़त्म होता जा रहा है। ऐसा महसूस होना दरअसल क़यामत की एक अहम निशानी है, नबी ﷺ का फ़रमान है:

لا تقومُ السَّاعةُ حتَّى يتقارَبَ الزَّمانُ ، فتَكونُ السَّنةُ كالشَّهرِ ، والشَّهرُ كالجُمُعةِ ، وتَكونُ الجمعةُ كاليَومِ ، ويَكونُ اليومُ كالسَّاعةِ ، وتَكونُ السَّاعةُ كالضَّرمةِ بالنَّارِ(صحيح الترمذي:2332)

तर्जुमा: क़यामत क़ायम नहीं होगी यहाँ तक कि ज़माना क़रीब हो जाएगा, साल एक महीने के बराबर हो जाएगा, एक महीना एक हफ़्ते के बराबर हो जाएगा और एक हफ़्ता एक दिन के बराबर हो जाएगा और एक दिन एक घड़ी के बराबर हो जाएगा और एक घड़ी आग से पैदा होने वाली चिंगारी के बराबर हो जाएगी।

ज़माना क़रीब हो जाने का मतलब यह है कि ज़माने की बरकत और फ़वाइद ख़त्म हो जाएँगे, नुक़सान ही नुक़सान होगा और यह भी मतलब है कि लोग दुनिया में इस क़दर मस्त और मगन हो जाएँगे कि महीनों और सालों की रफ़्तार कैसे गुज़र रही है, इसका एहसास जाता रहेगा। इस बात को मिसाल से इस तरह समझें कि आज हमारे हाथ में इंटरनेट मोबाइल आ गया है, रात या दिन में किसी वक़्त मोबाइल इस्तेमाल करने बैठ जाते हैं तो घंटों कैसे गुज़र जाते हैं, पता

ही नहीं चलता। इंटरनेशनल क्रिकेट टूर्नामेंट और टेस्ट सीरीज़ जो महीनों पर मुश्तमिल होती है, उनकी वजह से न सिर्फ़ खेलने वालों बल्कि देखने, सुनने और इंतज़ामात संभालने वालों के भी कई महीनों बर्बाद हो जाते हैं, जिसका एहसास और इल्म उन्हें नहीं हो पाता। खेल का मतलब होता है कुछ लम्हे या घंटे भर का, मगर महीनों पर मुश्तमिल टूर्नामेंट और सीरीज़ से मालूम होता है कि लोगों ने खेल को ज़िंदगी का मक़सद और दुनिया को खेल की जगह समझ लिया है। इससे ज़्यादा हैरानी उन लोगों पर है जो ज़िंदगी भर के लिए खिलाड़ी बन जाते हैं, यानी उन लोगों की ज़िंदगी खेल तमाशे में ख़त्म हो जाती है। लम्हा-ए-फिक्र है उन तमाम लोगों के लिए जो खेलों में अपनी उम्र बर्बाद करते हैं, चाहे वे खिलाड़ी हों या अमला (स्टाफ़) हों या तमाशाई हों।

वक्त और ज़िंदगी अल्लाह की तरफ़ से हमारे लिए बहुत बड़ी नेमत है, इसकी हिफ़ाज़त और क़दर करना हमारी ज़िम्मेदारी है, मगर इसकी अदायगी में अक्सर लोगों में कमी नज़र आती है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

نِعْمَتَانِ مَغْبُونٌ فِيهِمَا كَثِيرٌ مِنَ النَّاسِ: الصِّحَّةُ والفَراغُ(صحيح البخاري:6412)

तर्जुमा: दो नेमतें ऐसी हैं कि अक्सर लोग उनकी क़दर नहीं करते, सेहत और फ़ुर्सत।

ऐसी ही एक दूसरी हदीस है जिसमें नबी ﷺ ने एक सहाबी को कुछ नसीहतें फ़रमाईं हैं, आप उन्हें नसीहत करते हुए फ़रमाते हैं:

اغتنِمْ خمسًا قبلَ خمسٍ : حَياتَك قبلَ موتِك ، و صِحَّتَك قبلَ سَقَمِك ، و فراغَك قبلَ شُغُلِك ، و شبابَك قبلَ هَرَمِك ، و غِناك قبلَ فقرِكَ(صحيح الجامع:1077)

तर्जुमा: पांच चीज़ों से पहले पांच चीज़ों को ग़नीमत समझो! अपनी जवानी को अपने बुढ़ापे से पहले, अपनी सेहत को अपनी बीमारी से पहले, अपनी मालदारी को अपनी तंगदस्ती से पहले, अपनी फ़राग़त (फ़ुर्सत) को अपनी मशग़ूलियत (व्यस्तता) से पहले, और अपनी ज़िंदगी को अपनी मौत से पहले।

कितनी क़ीमती नसीहत है! जो इन नसीहतों को अपनी ज़िंदगी का हिस्सा बना लेगा, यक़ीनन उसकी दुनिया और आख़िरत संवर जाएगी।

आइए, इख़्तिसार (संक्षेप) में कुछ उमूर की तरफ़ आपकी तवज्जोह कराता हूँ जो वक्त की अहमियत को समझने और उससे फ़ायदा उठाने में मददगार साबित होंगी:

❶ सबसे पहले तो पिछले जीवन और अपने नफ़्स का हिसाब अभी और इसी वक्त करें। सोचें, याद करें और जहां-जहां कमियाँ, कमज़ोरियाँ पाएं, उन्हें दूर करें। हक़ूक़ उल-इबाद से मुताल्लिक़ ग़लतियों का ख़ात्मा उन बंदों से होगा जिनसे मुताल्लिक़ वह ग़लती है, अलबत्ता अल्लाह के हक़ में की गई छोटी-बड़ी हर तरह की नाफ़रमानीयों के लिए सच्चे दिल से तौबा करें। अल्लाह अपने बंदों को बे-पनाह माफ़ करने वाला है। पिछले गुनाहों पर शर्मिंदगी और आने वाली नेकियों का पक्का इरादा करना पहला मक़सद बनाएं।

❷ इंसान गुनाहों की तरफ नफ़्स की ख़्वाहिश की वजह से जाता है और नफ़्स में बुरे ख़याल शैतान डालता है। तो जिस तरह शैतान हमारा बड़ा दुश्मन है, नफ़्स भी इसी तरह बड़ा दुश्मन है, इसलिए जहाँ शैतान से बचना है, उसे अपने ऊपर हावी नहीं होने देना है, वहीं नफ़्स की ऐसी तरबियत करें, उस पर इबादत का इस क़दर बोझ डालें कि नफ़्स आपके क़ाबू में हो जाए।

❸ ऐसे दोस्तों की सोहबत इख़्तियार करें जिनके यहाँ वक्त की अहमियत और ज़िंदगी गुज़ारने का बेहतरीन तरीक़ा हो और बुरी सोहबत से बचें जो वक्त की बर्बादी का बड़ा सबब है।

❹ असलाफ़ की सीरत भी पढ़नी चाहिए, इससे ज़िंदगी में अदब और तरीक़े और ज़िंदगी का एहसास पैदा होगा। मैंने डॉ. मुक़्तदी हसन अज़हरी रहीमहुल्लाह की सीरत में पढ़ा था कि वह बहुत ज़हीन तालिब-ए-इल्म नहीं थे, मगर दो ख़ूबियों की वजह से ज़हीन और फ़तीन साथियों से सबक़त ले गए, एक वक्त की तंज़ीम और दूसरी मुसलसल कोशिश। मैंने अपनी ज़िंदगी में कुछ करने के लिए डॉ. साहब की इन दो ख़ूबियों को अपनाने की कोशिश की और इसके फल का मुशाहिदा किया।

❺ बीमारी से पहले जो सेहत मिली है और मौत से पहले जो ज़िंदगी नसीब हुई है, उसे क़ीमती सरमाया समझ कर अच्छे काम में लगाएं। अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) फ़रमाया करते थे:

إِذَا أَمْسَيْتَ فلا تَنْتَظِرِ الصَّبَاحَ، وإِذَا أَصْبَحْتَ فلا تَنْتَظِرِ المَسَاءَ، وخُذْ مِن صِحَّتِكَ لِمَرَضِكَ، ومِنْ حَيَاتِكَ لِمَوْتِكَ(صحيح البخاري:6416)

तर्जुमा: शाम हो जाए तो सुबह का इंतज़ार न करो, और सुबह के वक्त शाम का इंतज़ार न करो, अपनी सेहत को बीमारी से पहले और ज़िंदगी को मौत से पहले ग़नीमत जानो।

मतलब यह है कि मौत और बीमारी से पहले शाम के वक्त जो काम हो, उसी वक्त कर लो, सुबह का इंतज़ार न करो और सुबह के वक्त जो काम आए, उसी वक्त कर लो, शाम का इंतज़ार न करो।

❻ आदमी अपना वक्त क्यों बर्बाद करता है? उसे ज़िंदगी का असल मक़सद पता नहीं होगा या उसमें ईमान की गर्मी और फ़िक्र-ए-आख़िरत ख़त्म हो गई होगी या वह गुनाहों की तरफ़ झुका होगा या दुनिया के अंदर मशग़ूल होगा या दुनिया को ही सब कुछ समझ लिया होगा कि यह ऐश करने और खेल-कूद करने की जगह है या बुरी सोहबत का असर होगा या नफ़्स और शैतान का उस पर ग़लबा होगा।

ऐसे हालात में हमारे लिए मददगार काम यह है:

① हमें यह जानना होगा कि ज़िंदगी का असल मक़सद अल्लाह और उसके रसूल के अहकाम के मुताबिक़ चलना है, खाना-पीना सिर्फ़ ज़िंदगी की ज़रूरत है, मक़सद नहीं है, इसलिए दिल में दुनिया को चाहने की मोहब्बत नहीं, बल्कि आख़िरत की फ़िक्र होनी चाहिए।

② मौत को कसरत से याद करें जैसा कि रसूलुल्लाह ﷺ ने हमें इसका हुक्म भी दिया है ताकि मौत की फ़िक्र से ईमान में ताक़त और गर्मी

पैदा हो, दिल से गुनाह और दुनिया-तलबी का ख़याल दूर हो और नेक अमल की तरफ़ रग़बत हो।

③ मौत की उस घड़ी और सख़्ती को याद करें जब रूह निकल रही होती है, पास में सारे अहल-ओ-अयाल होते हैं मगर न कोई सख़्ती कम कर सकता है और न ही मौत टाल सकती है। जिस तरह मौत के वक्त अहल-ओ-अयाल और माल-ओ-दौलत कुछ काम नहीं आती, उसी तरह आख़िरत में अपने अमल के सिवा कुछ काम नहीं आएगा।

④ क़ब्रिस्तान की ज़ियारत करें ताकि आख़िरत की फ़िक्र पैदा हो, आख़िरत की तैयारी का ख़याल दिल में आ सके और आने वाली ज़िंदगी के लिए तौशा इकट्ठा करें।

⑤ क़ब्र की मंज़िल से लेकर मैदान-ए-हश्र तक अकेलेपन का एहसास करें, न मरते वक्त कोई साथ दिया, न मर कर कोई दूसरा हमारी क़ब्र में साथ देने के लिए आया और आख़िरत में तो एक-दूसरे को देखकर ही भागेंगे।

⑥ सबसे अहम काम यह है कि हमें हमेशा उस वक्त को याद करना चाहिए जब हमारा हिसाब-किताब होगा और हमसे उम्र के बारे में सवाल होगा। नबी ﷺ का फ़रमान है:

لا تزولُ قدَمَا عبدٍ يومَ القيامةِ حتَّى يُسألَ عن عمرِهِ فيما أفناهُ(صحيح الترمذي:2417)

तर्जुमा:क़यामत के दिन किसी बंदे के दोनों पाँव नहीं हटेंगे यहाँ तक कि उससे यह न पूछ लिया जाए कि उसने अपनी उम्र किन कामों में ख़त्म की।

❼ अल्लाह ने कुरआन में वक्त की क़साम खाई है, कहीं रात और दिन की तो कहीं फ़ज्र और असर के वक्त की। इसकी वजह यह है कि अल्लाह अपने बंदों को वक्त की अहमियत और उसकी हिफ़ाज़त की तरफ तवज्जो दिलाना चाहता है, इसलिए हमें वक्त को अहमियत देनी चाहिए, उसकी हिफ़ाज़त करनी चाहिए और बेमक़सद या गुनाहों के कामों में वक्त लगाने से अल्लाह का ख़ौफ़ खाना चाहिए।

❽ वक्त की तंज़ीम कारी करें, यानी अपने लिए दिन और रात का ऐसा शेड्यूल तैयार करें जिसमें अपने वक्त पर पाबंदी से घरेलू, सामाजिक और दीनी सारे काम अच्छी तरह से अंजाम पाते रहें। मिसाल के तौर पर बहुत से लोग नमाज़ या तिलावत या दुआ या ज़िक्र के लिए बहाना बनाते हैं कि दुनियावी कामों से फ़ुर्सत नहीं है। यह बहाना कुबूल नहीं है। आपने ज़िंदगी को मुनज़्ज़म नहीं किया है। आपने अपने वक्त को इस तरह तर्तीब दी है कि इबादत भी मुक़र्रर औक़ात

में पाबंदी से करें और दुनियावी मामलात और ज़िम्मेदारियाँ भी अच्छे से पूरा कर सकें।

नए साल और आख़िरी पैग़ाम:

नए साल के आने पर लोग इसलिए ख़ुशियाँ मनाते हैं क्योंकि उन्हें यह एहसास हो रहा होता है कि हमने ज़िंदगी की एक बहार मुकम्मल कर ली और हमारी उम्र में एक साल का इज़ाफ़ा हो गया, अब हम एक साल बड़े हो गए हैं, बर्थडे मनाने के पीछे भी यही वजह है। ऐसा सोचने और एहसास करने वाले वे लोग हैं जिनके लिए दुनिया ही सब कुछ है, इसलिए ऐसे लोग दुनिया में बहुत सारा माल कमाने और नफ़्स को आरज़ी (अस्थायी) लज़्ज़त और सुकून पहुँचाने में अपना वक्त बर्बाद करते रहते हैं। सोचने का मक़ाम है कि दुनियावी ज़िंदगी महदूद और मुख़्तसर है जो कि तक़रीबन 60 से 70 साल के दरमियाँन है। अगर कोई एक साल बड़ा होता है तो इसका मतलब यह होता है कि उसकी ज़िंदगी से एक साल कम हो गया, यानी वह एक साल ज़्यादा ज़िंदा रहता, अब एक साल कम ही ज़िंदा रहेगा। नए साल के आने से मालूम हो रहा है कि हम एक साल और मौत के क़रीब हो गए हैं। कितनी हैरानी की बात है कि आदमी की ज़िंदगी का एक

साल ख़त्म हो रहा है और मौत से एक साल क़रीब हो रहा है, फिर भी नए साल का जश्न मना रहा है। क्या ऐसा नहीं लग रहा है कि वह अपनी मौत का जश्न मना रहा है? कितना बेवक़ूफ़ है वह शख़्स जो अपनी मौत का जश्न मनाता है।

मेरे प्यारे भाइयों! समझने की कोशिश करो, यह दुनिया आज़माइश की जगह है, भला आज़माइश की जगह जश्न मनाना कैसे ज़ायज़ है? यहाँ तो रोते हुए ज़िंदगी गुज़ारनी चाहिए, नबी ﷺ का फ़रमान है:

لَوْ تَعْلَمُونَ ما أَعْلَمُ لَضَحِكْتُمْ قَلِيلًا، ولَبَكَيْتُمْ كَثِيرًا(صحيح البخاري:6485)

तर्जुमा: जो कुछ मैं जानता हूँ, अगर तुम भी जानते होते तो तुम हंसते कम और रोते ज़्यादा।

आइये, वादा करते हैं कि अब से नए साल का जश्न नहीं मनाएंगे, बल्कि नए साल के आने पर अपने नफ़्स और आमाल का हिसाब करेंगे और पिछले गुनाहों से तौबा करके आइंदा मुस्तक़िल (नियमित) तौर पर नेक अमल अंजाम देने का पक्का इरादा करते रहेंगे। इन-शा-अल्लाह।

==================

[95].वापसी पर हाजी का इस्तक़बाल

एक आदमी का सवाल है कि उनकी बहन और बहनोई (जीजा) इस साल हज को गए हैं तो क्या वह सब घर वाले वापसी पर उनका इस्तक़बाल करने एयरपोर्ट जा सकते हैं और क्या उनको फूलों का गुलदस्ता पेश कर सकते हैं और उनको तौहफ़े देना और उनके लिए दावत व 'इशाइया (रात के खाने) का एहतिमाम करना कैसा है?

आजकल मुआशरे (समाज) में हज व उम्रा के ताल्लुक़ से ग़लत रस्म व रिवाज चल रहे हैं, हमें इन ग़लत रस्म व रिवाज को ख़त्म करना है, न कि इनको फ़रोग़ देना है। इस काम को हाजी हज़रात और हाजी के रिश्ता-दार हज़रात दोनों मिलकर ख़त्म करेंगे।

आप नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत करीमा देखें कि जब आप सफ़र से वापस लौटते तो पहले मस्जिद जाते, नमाज़ अदा करते फिर मुसलमानों से मुलाक़ात करते। क'अब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं:

كَانَ النَّبِيُّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِذَا قَدِمَ مِنْ سَفَرٍ بَدَا بالمسجد فركع في ركعتين، ثم جلس لِلنَّاسِ

(ابو داؤد : 2773)

तर्जमा : नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब सफ़र से आते तो पहले मस्जिद में जाते और उसमें दो रकअत नमाज़ पढ़ते, फिर लोगों से मुलाक़ात के लिए बैठते।

लेकिन आज हाजियों को क्या हो गया है जो हज तो इस्लाम के नाम पर करते हैं और रिवाज अपने मन से कर रहे हैं और फिर रिश्ता-दार इस रिवाज में हिस्सा बन रहे हैं। आपने जो सवाल किया है कि रिश्ता-दारों का एयरपोर्ट जाना, हाजी का इस्तक़बाल करना, उन्हें फूल माला पहनाना फिर दावत का एहतिमाम करना ये सब फिज़ूल और ग़लत रिवाज हैं हमें इन चीज़ों से बचना चाहिए। हज से वापसी पर हाजी को ख़ुद ही लोगों से मस्जिद में मुलाक़ात करना चाहिए जो कि रसूलुल्लाह सलल्लाहु अल्लैही व सल्लम की सुन्नत है, न कि रिश्ता-दारों को इस्तक़बाल के लिए एयरपोर्ट जाना चाहिए। ख़ुदारा! अपने हज को "हज-ए-मबरूर" बनाएं और शोहरत के कामों से बचें जिससे हज की मक़बूलियत ख़त्म हो जाती है।

=============

[96].वित्र के बाद दो रक'अत पढ़ने का हुक्म

सही क़ौल (कथन) की रोशनी में वित्र की नमाज़ का हुक्म सुन्नत-ए-मुवक्किदा है और यह रात की आख़िरी नमाज़ है। नबी ﷺ ने हमें यह हुक्म दिया है कि रात की सबसे आख़िरी नमाज़ वित्र को बनाया जाए। अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से मरवी है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

اجْعَلُوا آخِرَ صَلَاتِكُمْ بِاللَّيْلِ وِتْرًا (صحيح البخاری:998)

तर्जुमा: वित्र रात की सभी नमाज़ों के बाद पढ़ा करो।

आपका अक्सर मामूल भी यही था, इसलिए हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है उन्होंने कहा:

كَانَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، يُصَلِّي مِنَ اللَّيْلِ، حَتَّى يَكُونَ آخِرَ صَلَاتِهِ الْوِتْرُ (صحيح مسلم:740)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम रात को नमाज़ पढ़ते, यहाँ तक कि उनकी नमाज़ का आख़िरी हिस्सा वित्र होता।

और दूसरी तरफ़ आपका यह भी हुक्म है कि एक रात में दो बार वित्र नहीं पढ़ना है बल्कि एक ही बार पढ़ना है। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

لا وِترانِ في ليلةٍ(صحيح أبي داود:1439)

तर्जुमा: एक रात में दो बार वित्र पढ़ना जाइज़ नहीं।

गुज़िश्ता (पिछली) हदीस से हमें यह मालूम होता है कि रात की आख़िरी नमाज़ वित्र है, इसके बावजूद नबी ﷺ से वित्र के बाद दो रकअत नमाज़ पढ़ने का सबूत मिलता है। इस सिलसिले में कई हदीसें आई हैं, उनमें से कुछ का यहाँ ज़िक्र करता हूँ।

عَنْ أَبِي سَلَمَةَ ، قَالَ: سَأَلْتُ عَائِشَةَ ، عَنْ صَلَاةِ رَسُولِ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ ، فَقَالَتْ: " كَانَ يُصَلِّي ثَلَاثَ عَشْرَةَ رَكْعَةً، يُصَلِّي ثَمَانَ رَكَعَاتٍ، ثُمَّ يُوتِرُ، ثُمَّ يُصَلِّي رَكْعَتَيْنِ وَهُوَ جَالِسٌ، فَإِذَا أَرَادَ أَنْ يَرْكَعَ قَامَ فَرَكَعَ، ثُمَّ يُصَلِّي رَكْعَتَيْنِ بَيْنَ النِّدَاءِ وَالْإِقَامَةِ مِنْ صَلَاةِ الصُّبْحِ(صحيح مسلم:738)

तर्जुमा: अबू-सलमा से रिवायत की, उन्होंने कहा : मैंने हज़रत आयशा (रज़ि०) से रसूलुल्लाह ﷺ के बारे में सवाल किया तो उन्होंने कहा आप तेरह रकअतें पढ़ते थे, आठ रकअतें पढ़ते; फिर (एक रकअत से) वित्र अदा फ़रमाते, फिर बैठे हुए दो रकअतें पढ़ते, फिर जब रुकूअ

करना चाहते तो उठ खड़े होते और रुकूअ करते। फिर सुबह की नमाज़ की अज़ान और इक़ामत के दरमियाँन दो रकअतें पढ़ते।

एक और हदीस में है, सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है उन्होंने कहा:

إنَّ رسولَ اللَّهِ صلَّى اللَّهُ علَيهِ وسلَّمَ كانَ يوترُ بتِسعِ رَكَعاتٍ ، ثمَّ يصلِّي رَكْعتينِ وَهوَ جالِسٌ ، فلمَّا ضَعُفَ : أوترَ بسبعِ رَكَعاتٍ ، ثمَّ صلَّى رَكْعتينِ وَهوَ جالسٌ (صحيح النسائی:1721)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह ﷺ नौ रकअत वित्र पढ़ते थे फिर बैठकर दो रकअत पढ़ते थे, जब आप कमज़ोर हो गए तो सात रकअत वित्र पढ़ने लगे फिर बैठकर दो रकअत नमाज़ अदा करते।

इन दोनों हदीसों से मालूम होता है कि नबी ﷺ वित्र के बाद बैठकर दो रकअत अदा फ़रमाते थे। इसी तरह एक और हदीस में है:

وَعَنْ ثَوْبَانَ عَنِ النَّبِيِّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: «إِنَّ هَذَا السَّهَرَ جُهْدٌ وَثِقَلٌ فَإِذَا أَوْتَرَ أَحَدُكُمْ فَلْيَرْكَعْ رَكْعَتَيْنِ فَإِنْ قَامَ مِنَ اللَّيْلِ وَإِلَّا كَانَتَا لَهُ» . رَوَاهُ الدَّارِمِيُّ

तर्जुमा: हज़रत सौबान रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: यह जागना मेहनत और बोझ

है, जब तुम में से कोई वित्र पढ़े तो दो रकअतें पढ़ ले, अगर रात में उठ बैठा तो ख़ैर, वरना यह रकअतें उसे काफ़ी हैं।

इसको दारमी ने रिवायत किया है। इस हदीस की सनद को शैख़ अल्बानी ने सही कहा है (हिदायत अल-रवात: 1238)

आख़िरुज़्ज़िक्र हदीस के बारे में कुछ अहल-ए-इल्म यह कहते हैं कि यहाँ पर दो रकअत से मुराद यह है कि सफ़र में सिर्फ़ एक रकअत पर ही इक्तिफ़ा न करे बल्कि पहले दो रकअत पढ़े फिर एक रकअत पढ़े, क्योंकि कुछ रिवायतों में "हाज़ा अल-सहर" की जगह "हाज़ा अल-सफ़र" भी आया है जैसे इब्न हिब्बान और इब्न खुज़ैमा वग़ैरह। और दूसरा मतलब वित्र के बाद दो रकअत अदा करना भी है।

अहम यह है कि इन चंद रिवायतों से हमें वित्र के बाद दो रकअत पढ़ने की मशरूईयत मालूम होती है, इसलिए अगर कोई नबी ﷺ की इक्तिदा में वित्र की नमाज़ के बाद दो रकअत अदा करना चाहे तो बिला शुबह वह दो रकअत नमाज़ अदा कर सकता है, मगर इस अमल को मामूल नहीं बनाना चाहिए क्योंकि नबी ﷺ ने यह अमल कभी-कभार किया है। अक्सर मामूल आपका यह रहा कि आपने वित्र को ही रात की आख़िरी नमाज़ बनाया है जैसा कि सुतूर-ए-बाला (लेख के

ऊपर की पंक्तियाँ) में क़ौली और फेली हदीस की रोशनी में बताया गया है।

जिस किसी को रात में क़ियाम-उल-लैल करने का इरादा हो, वह इशा के बाद वित्र न पढ़े, पहले क़ियाम-उल-लैल कर ले फ़िर आख़िर में वित्र पढ़े। हालांकि इस बात की गुंजाइश है कि वित्र पढ़ने के बाद भी नवाफ़िल अदा कर सकते हैं, इसलिए कभी आप वित्र पढ़कर सो गए और रात में क़ियाम-उल-लैल पढ़ने के लिए उठे, तो आप क़ियाम कर सकते हैं। लेकिन चूंकि आपने एक मर्तबा वित्र अदा कर लिया है, तो दोबारा आप वित्र अदा नहीं करेंगे। ऊपर इसकी दलील गुज़री है, और इस बारे में एक सहाबी का अमल भी ज़िक्र कर देता हूँ।

عَنْ قَيْسِ بْنِ طَلْقٍ، قال: زَارَنَا أَبِي طَلْقُ بْنُ عَلِيٍّ فِي يَوْمٍ مِنْ رَمَضَانَ فَأَمْسَى بِنَا وَقَامَ بِنَا تِلْكَ اللَّيْلَةَ وَأَوْتَرَ بِنَا، ثُمَّ انْحَدَرَ إِلَى مَسْجِدٍ فَصَلَّى بِأَصْحَابِهِ حَتَّى بَقِيَ الْوِتْرُ، ثُمَّ قَدَّمَ رَجُلًا , فَقَالَ لَهُ: أَوْتِرْ بِهِمْ فَإِنِّي سَمِعْتُ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ , يَقُولُ:" لَا وِتْرَانِ فِي لَيْلَةٍ" (صحيح النسائي: 1678)

तर्जुमा: कैस बिन तल्क़ कहते हैं हमारे वालिद तल्क़ बिन अली रज़ियल्लाहु अन्हु ने रमज़ान में एक दिन हमारी ज़ियारत की

और हमारे साथ उन्होंने रात गुज़ारी, हमारे साथ इस रात नमाज़ तहज्जुद अदा की, और वित्र भी पढ़ी। फिर वह एक मस्जिद में गए, और उस मस्जिद वालों को उन्होंने नमाज़ पढ़ाई यहाँ तक कि वित्र बाक़ी रह गई, तो उन्होंने एक शख़्स को आगे बढ़ाया, और उससे कहा: इन्हें वित्र पढ़ाओ, मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को फ़रमाते सुना है: "एक रात में दो वित्र नहीं।"

वित्र की नमाज़ के बाद दो रकअत पढ़ने का अब मसला पूरी तरह वाज़ेह हो गया है कि असल तो यही है कि वित्र को ही रात की आख़िरी नमाज़ बनाना है, यही अफ़ज़ल अमल है, इसलिए इसी को अपना मामूल बनाना चाहिए। हालांकि कोई कभी-कभार वित्र के बाद दो रकअत अदा करना चाहे तो वित्र के बाद दो रकअत अदा करना जाइज़ है, और इसी तरह कोई वित्र पढ़ने के बाद क़ियाम-उल-लैल करना चाहे तो क़ियाम-उल-लैल भी कर सकता है, मगर दोबारा वित्र न पढ़े।

===================

[97].वेस्टिज मार्केटिंग में मिम्बर साज़ी का शरई हुक्म

इस वक्त वेस्टिज (vestige) मार्केटिंग नामी नेटवर्क मार्केटिंग का लोगों में बड़ी चर्चा है। कई सालों से यह कंपनी मल्टी लेवल तिजारत के मैदान में काम कर रही है। आवाम की अक्सरियत इस कंपनी पर एतिमाद (भरोसा) रखती है और एक कसीर (बड़ी) तादाद में उससे जुड़कर पैसा कमा रही है। ग़ैर मुस्लिमों की तरह मुसलमानों की भी बड़ी तादाद इस से जुड़कर अपनी माशी हालत बेहतर बनाने में मसरूफ़ है। बल्कि कुछ मुसलमानों का कहना है इस बिजनेस से मुंसलिक (शामिल) होकर हम अपने अहले ख़ाना की किफ़ालत बेहतर अंदाज में कर रहे हैं।

इस्लाम हमें तिजारत करने से नहीं रोकता। इस्लाम माशी हालत बेहतर बनाने से नहीं रोकता और न ही अहले ख़ाना की बेहतर तौर पर किफ़ालत करने से रोकता है। ताहम इस्लाम ने हमें फ़ितरी निज़ाम जिंदगी दिया है जिसमें अल्लाह और उसके रसूल ने तिजारत के साफ़-सुथरे उसूल बताए हैं। यक़ीनन इस्लाम के पाकीज़ा तिजारती उसूल में ही जिंदगी की हक़ीक़ी सआदत, फ़र्द और जमात की असल कामयाबी और दुनिया के साथ आख़िरत की भी भलाई है। इस्लाम हमें कस्ब-

ए-म'आश (रोज़ी कमाने) के लिए मेहनत पर उभारता है, उसे शरफ़ और फ़ज़ीलत का मक़ाम देता है। मेहनत भी जाइज़ तरीक़े से करनी होगी तभी रोज़ी पाकीज़ा और हलाल होगी वरना नाजायज़ तरीक़े से अनथक (लगातार) मेहनत करके हासिल की गई रोज़ी हराम होगी।

वेस्टिज का जितना शोहरा (चर्चा) है उसके बारे में लोगों में और इंटरनेट पर उतनी ही बातें फैली हुई हैं। मैंने उस कंपनी के उसूल और मक़ासिद को जानने की कोशिश की और उसके तरीक़े कार का जाइज़ा लिया तो वही कुछ ख़ामियाँ जो मैंने मल्टी लेवल कंपनी के मुताल्लिक़ रक़बा मज़मून में बयान किया है पाई हैं। क्योंकि यह भी मेंबर साज़ी वाली कंपनी है और ज़ाहिर सी बात है के मेंबर साज़ी के बुनियादी उसूल हैं और हर ऐसी कंपनी में पाई जाएंगी।

इसमें कोई शक़ नहीं कि उस कंपनी के पास अपने कुछ प्रोडक्ट्स हैं जिनके सहारे यह कंपनी चलाई जा रही है। दावा करने वाले मेंबरान ने कुछ 100 की तादाद तो कुछ 200 की तादाद तक बतलाई है। लोगों को नज़र भी आता है कि यह कंपनी अपने प्रोडक्ट की तिजारत कर रही है। इस कंपनी से जुड़ते वक्त कोई फ़ीस वसूल नहीं की जाती, बग़ैर फ़ीस के और बग़ैर कोई शर्त लगाए मेंबर का अकाउंट खोल

दिया जाता है। अब यह मेंबर वेस्टिज से तिजारत करके पैसा कमाना चाहता है। वेस्टिज से जुड़कर माल कमाने के 2 तरीक़े अहम हैं।

1. तो यह है कि जब वह इस कंपनी का मेंबर बना है तो ज़ाहिर सी बात है वह या तो सामान ख़रीदेगा या मेंबर साज़ी करेगा। गो कि यह इख़्तियारी है मगर और कोई ऑप्शन भी नहीं है। सामान ख़रीदने पर कुछ छूट मिलती है और कुछ बोनस पॉइंट मिलते हैं। फिर उस ख़रीदे गए सामान को या तो ख़ुद इस्तेमाल करता है या मार्केट में बेचकर कुछ फ़ायदा कमाना चाहता है।

2. सबसे बड़ा नफ़ा कमाने का तरीक़ा मेंबर साज़ी करना यानी वह लोगों में इस कंपनी और उसकी तिजारत की तश्हीर करके उन्हें उससे जोड़े। किसी ने मिसालन 6 आदमी जोड़े तो उन 6 आदमियों की कंपनी से ख़रीद पर फ़ायदे का कुछ कमीशन जोड़ने वाले को मिलेगा। यह 6 शख़्स फिर अपने साथ 6-6 आदमी को जोड़ते हैं तो उन सब की ख़रीद के फ़ायदे का कमीशन पहले शख़्स को भी मिलेगा। इस तरह जिस क़दर लेवल बनते जाएंगे सारे लेवल के फ़ायदे का कमीशन फ़र्स्ट शख़्स को भी हमेशा आता रहेगा, हत्ता कि वह मर जाए तब भी।

इस मार्केट में अमीर बनने और अचानक ग़रीबी दूर करने का जो न्यू फॉर्मूला लोगों को बताया जाता है उस झांसे में आकर लोग इसका मेंबर बन जाते हैं और एक मर्तबा मेंबर बनने के बाद या तो वह कंपनी का प्रोडक्ट ख़रीदेगा, सामान नहीं ख़रीदने का सवाल ही पैदा नहीं होता क्योंकि मेंबर बना ही जाता है सामान ख़रीदने के लिए वर्ना तिजारत किस काम की। मार्केट रेट से कई गुना महंगे सामान ख़रीदने से मेंबर को फ़ायदा नहीं बहुत ज़्यादा नुक़सान उठाना पड़ता है मगर यह नुक़सान दरअसल अमीर बनने की लालच में बर्दाश्त किया जाता है और इस बात को आम लोगों पर छुपाकर रखा जाता है। जिन चीज़ों की ज़रूरत नहीं वह भी महंगे दामों पर कंपनी से ख़रीदकर मेंबर अपना पॉइंट बढ़ाना चाहता है। यहाँ एक मेंबर, मेंबर नहीं रह जाता, इन्वेस्टर्स बन जाता है फिर भी कंपनी की नज़र में कस्टमर ही कहलाता है। चीज़ों की ख़रीद और फ़रोख़्त से हासिल शुदा पॉइंट कमीशन और छूट मामूली होती है, असल फ़ायदा तो मेंबर साज़ी में है। एक मर्तबा चंद मेंबर बना लिए फिर घर बैठे बिना मेहनत फ़ायदा आता रहता है।

वेस्टिज से मुसलमान भी बड़ी तादाद में जुड़े हैं। उनके जुड़ने की वजह यह ख़ुशफ़हमियाँ हैं कि मरकज़ी जमीयत उलमा-ए-हिंद और दुबई

हलाल मराकिज़ ने इस कंपनी की तसदीक़ की है यानी यह कंपनी हलाल सर्टिफाइड है। यह भी कहना है कि बहुत सारे मुसलमान इससे जुड़े हुए हैं और आज तक मुसलमान उलमा की तरफ़ से इसकी मुख़ालिफ़त नहीं हुई है। ख़ुशफ़हमियों में ज़्यादा इज़ाफ़ा करने वाला दारुल उलूम नदवातुल उलमा लखनऊ का फ़तवा है जिसमें इस बिजनेस को हलाल और उससे मुसलमानों के जुड़ने को जाइज़ कहा गया है।

मैं उन मुसलमान भाइयों को बतलाना चाहता हूँ कि वेस्टिज के ताल्लुक़ से अपनी ख़ुशफ़हमी ख़त्म करें और हलाल तरीक़े से रोज़ी कमाएं। अल्लाह ने ज़मीन बहुत कुशादा बनाई है, इस रु-ए-ज़मीन पर रोज़ी कमाने के लाखों जाइज़ जराए आमदनी हैं।

मुसलमानों की ख़ुशफ़हमियों से मुताल्लिक़ पहली बात यह कि मरकज़ी जमीयत उलमा-ए-हिंद और दुबई हलाल मराकिज़ ने इस वेस्टिज के प्रोडक्ट को हलाल कहा है, यह नहीं कहा कि इस प्रोडक्ट बेचने के तरीक़े भी हलाल हैं। इस बात को समझने की ज़रूरत है। और जहाँ तक नदवा के फ़तवा की बात है तो सवाल करने वाले ने फ़तवा में चालाकी से सवाल किया है, कंपनी के हक़ीक़ी सूरत ए हाल का ज़िक्र

नहीं किया है और मुफ़्ती साहिबान ने भी तहक़ीक़ करके जवाब देने के बनाए जल्दबाज़ी से काम लिया है। बहरहाल, ताज़ा ख़बर के मुताबिक़ नदवा ने पिछले फ़तवे से रुजू कर लिया है और बाद में इस कंपनी से परहेज़ करने की सलाह दी है। दारुल उलूम देवबंद ने भी वेस्टिज से जुड़कर मेंबर साज़ी के ज़रिये फ़ायदा कमाने को जाइज़ नहीं कहा है।

आईये मैं आपको वेस्टिज से जुड़ने की शरई हैसियत बताऊँ अगर आप इस कंपनी का मेंबर बनकर सिर्फ़ सामान की ख़रीद और फ़रोख़्त तक अपने आप को महदूद रखते हैं और किसी क़िस्म की ग़लत तशहीर में हिस्सा नहीं लेते हैं तो यहाँ तक मामला सही है। मगर कोई भी मेंबर मल्टी लेवल कंपनी में मेंबर साज़ी से बाज़ नहीं रह सकता, आख़िर इसी में अमीर बनने का नुस्ख़ा है और इस बात के झांसे में आकर कंपनी में शमूलियत इख़्तियार किया गया है। यह कैसे मुमकिन है कि कोई मेंबर उस कंपनी के सस्ते और बिना काम वाला सामान महंगे क़ीमत में ख़रीदता रहे जबकि बाज़ार में उससे कई गुना सस्ता सामान मौजूद है?

मेम्बर साज़ी के ज़रिए पैसा कमाना पहले लेवल तक तो जायज़ है जिनको ख़ुद से बिला वस्ता कंपनी का सदस्य बनाया है लेकिन जिन्होंने जिन लोगों को सदस्य बनाया है या उनके बाद वाले जिनको सदस्य बनाया है या उनके बाद वाले जिनको सदस्य बनाएंगे उन लोगों के मुनाफ़े से कमीशन लेना जाइज़ नहीं है। शरियत की रू से मुनाफ़े की जाइज़ 3 सूरतें बनती हैं।

(1) या तो हमने कारोबार में रक़म लगाई हो और मेहनत भी करते हों, यह शरीक़त है।

(2) या सिर्फ़ रक़म लगाई हो मेहनत कोई दूसरा करे, यह मुज़ारबत (कारोबार में ऐसी साझेदारी कि माल एक का हो और मेहनत दूसरे की) है।

(3) या बग़ैर रक़म के मेहनत करते हों उसे इजारा यानी मज़दूरी कहते हैं। मेम्बर साज़ी का ताल्लुक़ इस तीसरी क़िस्म से है इस लिहाज़ से अपनी मेहनत की मज़दूरी सिर्फ़ पहले लेवल तक ही जायज़ है, उसके बाद वाले मरहलो का मुनाफ़ा और कमीशन लेना ना जायज़ है।

वेस्टीज की ज़्यादा चंद ख़ामियां आपके सामने रखना चाहता हूँ ताकि इसके नुक़सानों से एक मुसलमान ब-ख़बर रहे और ख़ुद को उस कंपनी से अलग रखे।

(1) दुनियां भर की मल्टी लेवल कंपनियां अपने से जोड़ने के लिए झूठे क़िस्से, बनावटी कहानियां और लफ़्फाज़ी के ज़रिए लोगों को अपना शिकार बनाती हैं, ये कंपनियां अपने मेंबर्स को उसकी ही असल ट्रेनिंग देती हैं कि लोगों को कैसे कन्विंस करना है और किस तरह कंपनी जॉइन करानी है?

गांव वालों को कैसे फंसाना है और शहरी को कैसे लुभाना है? वेस्टीज की हज़ारों वीडियो यूट्यूब पर दस्तयाब हैं जहाँ लोगों को अपना शिकार बनाने की तरह-तरह के फ़ार्मूला बयान किए गए हैं। दुनियां की घटिया से घटिया व्यापारिक कंपनी (जो मल्टी लेवल ना हो) अपना सामान बेचने के लिए ऐसे हर्बे नहीं अपनाती।

(2) यह सही है कि वेस्टीज के पास ज़ाती प्रोडक्ट है बज़ाहिर उसी की तिजारत नज़र आती है और हुकूमत से रजिस्टर्ड कराने के लिए भी कोई न कोई सबूत देना पड़ेगा, यह प्रोडक्ट्स हुकूमत की नज़र में तिजारती सबूत हैं, हालांकि इसके तमाम मेंबर्स की तवज्जो का मर्कज़

असल सिर्फ़ सदस्य साज़ी है, गोया बाराए नाम तिजारत है, उसके पर्दे के पीछे लोगों का माल बातिल तरीक़े से खाया जा रहा है।

(3) कंपनी और चीज़ों की ऐडवर्टाइजिंग में झूठ, धोखा, गुलाम, क्यूगुलेशन और अनोखे ख़्वाब बयान किए जाते हैं यहाँ तक कि दबाव तक बनाया जाता है। इस्लाम में न इस तरह कोई सामान बेचा करने की इजाज़त है और न ही किसी कंपनी की इस तरह विज्ञापन करने की इजाज़त है।

(4) सदस्य साज़ी के ज़रिए एक तरह से पूरे शहर और मुल्क को होस्टेज बनाने की कोशिश है, इस नेटवर्क मार्केट से जुड़ने वाला फिर दूसरे तमाम मार्केट से महरूम हो जाता है या ऐसा भी कह सकते हैं कि शहर और मुल्क को तमाम व्यापार के लिए नुक़सान देह है।

(5) जिस तरह आदमी जुआ खेलता है पैसे लगाता जाता है ताकि कभी न कभी अचानक अमीर बन जाएगा, इसी तरह इसके मेंबर्स लालच में हर महीने ज़्यादा से ज़्यादा कंपनी के प्रोडक्ट ख़रीदते हैं हालाँकि उन्हें उनकी ज़रूरत नहीं होती है, सिर्फ़ लालच उन्हें यह सामान ख़रीदवाता है।

(6) अगर कोई मेंबर कंपनी से ऑनलाइन ख़रीदता है और उस सामान पर क़ब्ज़ा करने से पहले बेच देता है, तो यह सूरत भी जाइज़ नहीं है। इसे मिसाल से ऐसे समझें कि किसी मेंबर ने वेस्टीज का कोई प्रोडक्ट बुक किया, फिर उस सामान पर अपना कब्ज़ा करने से पहले ही किसी दूसरे के हाथ बेच देता है।

(7) वेस्टीज के बहुत ही मोटिवेशनल माने जाने वाले स्पीकर्स शर्मा का कहना है कि एक शख़्स की मौत के बाद भी उसकी बीवी को 17,00,000 का चेक मिला क्योंकि उसने मेंबर्स का जाल बनाया था, गोया मेंबर साज़ी का कमीशन लिमिटेड है। जो मुसलमान भाई यह कहते हैं कि हमें कंपनी सिर्फ़ 8 या 9 लेवल तक कमीशन देती है क्योंकि हमारी मेहनत उन लेवल तक ही लिमिटेड रहती है, सरासर झूठ है। भला एक शख़्स मरने के बाद क्या मेहनत करता है?

(8) मेंबर साज़ी के अलावा लालच में महंगे सामान की ख़रीद पर मेंबर जितना पैसा साल भर बर्बाद करता है, उससे अपनी कोई छोटी-मोटी तिजारत शुरू कर सकता है।

(9) जो लोग समझते हैं कि वेस्टीज के ज़रिए हम अचानक अमीर हो जाएंगे, वे बड़ी भूल में हैं और झूठे लोगों की झूठी तसल्ली में पड़े हुए हैं। वे कम से कम इस कंपनी के सबसे ज़्यादा मशहूर और मोटिवेशनल माने जाने वाले स्पीकर्स जय शर्मा के बयान सुन लें कि कामयाबी के लिए किस क़दर मेहनत चाहिए? जब वेस्टीज के ज़रिए कमाने के लिए उसका मेंबर बनकर अपने पैसे से ऑफ़िस खोलना है, अपने पैसे से प्रोडक्ट ख़रीदना है और थकावट की मेहनत करनी है, तो फिर क्यों न ख़ुद की कोई छोटी तिजारत शुरू कर ले या किसी हलाल तिजारत की एजेंसी ले ले। मुमकिन है आमदनी कम हो, मगर जाइज़ और हलाल तो होगी।

(10) एक बात और आपको बता दूं कि मल्टी लेवल कंपनियों में कामयाबी चंद लोगों को मिलती है। वेस्टीज के मेंबर्स लाख से ज़्यादा हैं और उस कंपनी की वेबसाइट पर 16 लोगों की कामयाबी का मामूली ज़िक्र मिलेगा, बाक़ी नाइन्टीन नाइन हंड्रेड नाइन्टीन थाउज़ेंड नाइन हंड्रेड फोरटीन की कामयाबी का कोई ज़िक्र नहीं मिलेगा। महीनों में लाखों और करोड़ों कमाने वाले 2-1 होंगे, बाक़ी सारे लाखों मेंबर्स निवेश कर रहे हैं और कड़ी मेहनत कर रहे हैं, मगर वह कामयाबी उनके हिस्से में नहीं है। यह दौलत की ग़ैर मुंसिफ़ाना तक़सीम है जो

सरमाया-दाराना निज़ाम में पाई जाती थी, फिर इश्तिराकियत (कम्यूनिज़्म/समाजवाद) ने बराबरी का नारा लगाया और वह भी अपनी मौत आप मर गई। इस्लामी निज़ाम-ए-म'ईशत की ख़ूबी है कि इसमें सरमाया-दाराना निज़ाम की तरह दौलत की ग़ैर मुनासिब तक़सीम है और न ही इश्तिराकियत की तरह मुसावात (बराबरी) का नाक़ाबिले क़बूल दावा। बल्कि इस्लाम उन दोनों के बीच लोगों के बीच अदल के साथ ए'तिदाल और तवाज़ुन भी क़ाइम करता है। अल्लाह का फ़रमान है:

كَيْ لَا يَكُونَ دُولَةً بَيْنَ الْأَغْنِيَاءِ مِنكُمْ (الحشر:7)

तर्जुमा: ताकि तुम्हारे दौलतमंदो के हाथ में ही माल गर्दिश करता न रहे।

इन सारी बातों के बाद आख़िर नतीजा यह निकलता है कि वेस्टीज से जुड़कर मेंबर साज़ी के ज़रिए पैसा कमाना मुसलमानों के लिए जाइज़ नहीं है, लिहाज़ा हमें इससे नहीं जुड़ना चाहिए। हाँ, इस कंपनी से कोई आदमी हलाल फूड या हलाल प्रोडक्ट ख़रीदता है तो इसमें कोई हरज नहीं है।

======================

[98].व्हाट्सएप और क़ुरआनी आयात और अहादीस

लोगों में एक इमेज के ज़रिए यह ख़बर आम है जिसमें यह कहा गया है कि व्हाट्सएप इस्लाम से ख़ारिज कर रहा है।

साथ ही यह कहा गया है कि सऊदी अरब से यह फ़तवा शाए (प्रसारित) किया गया है।

यह बातें बेबुनियाद हैं, इन पर ध्यान न दिया जाए।

अलबत्ता व्हाट्सएप के मुताल्लिक़ दो बातें जो काफ़ी चर्चा में हैं और फैलाए जाने वाले हिंदी इमेज में भी ख़तरनाक बतलाई गई हैं, उनका मैं नीचे हल पेश करता हूँ।

(1) पहला मसला व्हाट्सएप के ज़रिए आयात या हदीस भेजने का है।

इसका जवाब यह है कि

आप आयात या हदीस का तर्जुमा तो लिखकर फॉरवर्ड कर सकते हैं लेकिन किसी आयात या हदीस का मतन रोमन उर्दू में लिखकर फॉरवर्ड न करें। क़ुरआन मजीद को इस लिए कि उसको बग़ैर रस्म उस्मानी के लिखना ममनू है और इस पर उम्मत का इत्तिफाक़ है।

जबकि हदीस को अरबी रस्म के बग़ैर लिखने में उसमें तहरीफ़ के इमकानात निकलते हैं।

(2) दूसरा मसला व्हाट्सएप से या मोबाइल मेमोरी से आयात और अहादीस डिलीट करने का है।

उसका जवाब यह है किऐसा करने में कोई हरज नहीं है, क्योंकि यह एक मजबूरी है, वरना मेमोरी फुल हो जाने पर कोई नया मैसेज नहीं आएगा।

यह ऐसे ही है जैसे आप मोबाइल बंद कर दें, या आप घर के कंप्यूटर से कोई तिलावत वग़ैरह डिलीट कर दें या कंप्यूटर बंद कर दें।

लेकिन याद रहे कि डिलीट करने में नफ़रत या बुग़्ज़ शामिल नहीं होना चाहिए, बल्कि एहतिराम के पेशे नज़र यह काम अंजाम देना चाहिए।

==================

[99].व्हाट्सएप पर संजीदगी और इंज़िबात वक्त की ज़रूरत

सोशल मीडिया का बड़ा फ़ायदा है मगर साथ ही इसके नुक़सानात भी बहुत ज़्यादा हैं। इनमें वक्त का ज़िया (बर्बादी) बहुत ज़्यादा अहम है। वक्तों की पामाली (बर्बादी) से हमारे बहुत सारे उमूर (काम) मुतास्सिर (प्रभावित) होते हैं। हुक़ूक़-उल-इबाद (बंदों के हक़) से लेकर हुक़ूक़ुल्लाह (अल्लाह के हक़) तक मुतास्सिर होते हैं। मेरे इल्म में हम में से शायद कोई ऐसा नहीं है कि जिसका पेशा व्हाट्सएप इस्तेमाल करना हो, ज़रूर कोई न कोई ज़रिया मआश (रोज़गार का साधन) होगा, दिन भर में कोई न कोई घरेलू, समाजी और दीनी मश्ग़ला (व्यस्तता) होगा। ऐसे में अगर कोई रात-दिन सारा-सारा वक्त व्हाट्सएप के इस्तेमाल में लगाता है तो वह ज़िम्मेदारी में कोताही करेगा, पेशे के साथ नाइंसाफ़ी करेगा, घरेली उमूर में वालिदैन के साथ, भाई बहनों के साथ, बीवी बच्चों के साथ ज़्यादती का शिकार होगा, यहाँ तक कि नमाज़ की पाबंदी, फील्ड वर्क और आमाल को औक़ात (समय) के इंज़िबात (बाक़ाइदगी।) के साथ अदा नहीं कर पाएगा।

कई सालों से मैं सोशल मीडिया से जुड़ा हुआ हूँ, मैंने इस मीडिया पर वक्तों का ज़िया बहुत हद तक महसूस किया है, इससे लोगों की ज़िंदगी तबाह होते देखी है, घरों में इफ़्तिराक़ (विभाजन) फैलते देखा है, मआशी (आर्थिक) और मुआशरती (सामाजिक) तौर पर मुतास्सिर होते देखा है, ज़ेहनी तौर पर सख़्ती, हुक़ूक़ की अदायगी में कोताही, ग़ैरों के साथ ताल्लुक़ात और अपनों से बे-ए'तिनाई (तवज्जुह न करना) बरतते देखा है। जो यहाँ ज़्यादा वक्त सर्फ़ करता है उसे फिर कहीं अच्छा नहीं लगता, सारा-सारा दिन और सारी-सारी रात बस इसी को अपना साथी बनाता है, जिस्म (शरीर) भी मुतास्सिर होता है, औक़ात की पाबंदी भी नहीं रहती है, बहुत सारा ज़रूरी काम कल पर टालता रहता है और अचानक बड़ी मुसीबत में गिरफ़्तार हो जाता है। हमेशा नई-नई चीज़ों की तलाश में, नए-नए लोगों से ताल्लुक़ात उस्तुवार (स्थापित) करने में और हर जगह हिस्सेदारी निभाने में ग़लत-सलत काम भी अंजाम देता है, ग़ैर-अख़लाकी (अनैतिक) हरकत (कार्य) भी सरज़द (अंजाम) होते हैं, अख़लाक (नैतिकता) के साथ इमान (धर्म) भी धीरे-धीरे कमज़ोर होने लगता है और नेक कामों की अंजामदेही (क्रियान्वयन) से तवज्जोह (ध्यान) हटती चली जाती है।

मैं अपने तजुर्बात (अनुभवों) की रोशनी में सोशल मीडिया से जुड़े लोगों को नसीहत (सलाह) करता हूँ कि इसका इस्तेमाल कम से कम करें, अपनी ज़िम्मेदारियों और हुक़ूक़-ओ- वाजिबात (अधिकार और कर्तव्य) को अदा करने के बाद करें, अपने वक्तों में से सिर्फ़ फ़ुर्सत के वक्त में ही इसे इस्तेमाल करें बल्कि रात-दिन के किसी एक मुनासिब (उचित) वक्त को मुन्तख़िब (चुनें) करें और सिर्फ़ आधे या एक घंटे तक ही यहाँ सर्फ़ करें। एक बात याद रखें, बहुत से लोग ऐसे ग्रुप से जुड़ना चाहते हैं जहाँ तर्क-ओ-तर्क (मध्यस्थता) हो, जहाँ पोस्टिंग ज़्यादा और सैकड़ों की तादाद में शेयरिंग होती हो, ऐसे लोग ज़्यादा देर तक मैदान में टिक नहीं पाते हैं, किसी भी मैदान में देर तक वही बरक़रार रहते हैं जिनके पास वक्त की पाबंदी, तसल्सुल (लगातार) और संजीदगी (गंभीरता) होती है। दूसरी बात यह है कि सोशल मीडिया से जल्दी-जल्दी ज़्यादा इल्म हासिल करने के चक्कर में बहुत सारे नुक़सानात (हानि) के साथ इनके इल्म में भी पायेदारी (स्थिरता) नहीं होती जो यहाँ जल्दीबाज़ी करते हैं। जो चीज़ जितनी जल्दी आती है वह उतनी जल्दी चली भी जाती है, यानी सोशल मीडिया से जल्दीबाज़ी में हासिल किए गए इल्म जल्दी ही ज़ेहन से रुख़सत (दूर) हो जाते हैं। इस लिए यहाँ औक़ात की पाबंदी के साथ संजीदगी भी ज़रूरी है। बहुतों का मशग़ला (व्यस्तता) होता है किसी आलिम से सवाल किया

अगर फ़ौरन जवाब ना मिला तो दोबारा उससे राब्ता (संपर्क) ही ख़त्म कर लेते हैं, किसी ग्रुप में शामिल हुआ और जवाब में ताख़ीर (देर) हुई या ग्रुप में पोस्टिंग की कमी देखी बाहर हो गए। दीने अमानत (धर्म की ज़िम्मेदारी) में हम ऐसे लोगों को भी संजीदगी का मुज़ाहिरा (प्रदर्शन) करने की नसीहत करते हैं और उन आलिमों को भी नसीहत करते हैं जो जवाब देने में जल्दबाज़ी करते हैं।

ज़रा ग़ौर करें जब किसी फ़तवा कमेटी को कोई सवाल भेजा जाता है तो जवाब की तैयारी में किस क़दर मेहनत, दलील की छानबीन और तहक़ीक़ (अनुसंधान) की जाती है फिर जवाब दिया जाता है। सोशल मीडिया पर बहुत से कम इल्म (ज्ञान) वाले लोग बहुत सारे ऐसे जवाबात (उत्तर) जल्दबाज़ी में नश्र (प्रसारित) करते हैं जो आम लोगों के लिए फ़ितने (फ़साद) का बाइस (कारण) बन जाते हैं और फिर उलमा (विद्वानों) के लिए भी परेशानी का सबब (कारण) बन जाता है।

कल मैंने फेसबुक पर ऐलान किया कि मुझे अपने इल्मी ग्रुप "इस्लामियात" में चंद अश्ख़ास (व्यक्तियों) की ज़रूरत है जिन्हें मेरे ग्रुप से मुंसलिक (जुड़ना) होना है वह मुझे व्हाट्सएप पर मैसेज करें,

फिर क्या था देखते देखते ऐलान के नीचे सैकड़ों नंबर दर्ज हो गए। मैं हैरान कि इन सब का क्या करूं जबकि जितनी तादाद मुझे चाहिए थी उससे ज़्यादा ही व्हाट्सएप पर ही मैसेज मोसूल (प्राप्त) हो गए। फिर अल्लाह से अज्र (इनाम) की उम्मीद करते हुए फेसबुक पर दर्ज किए गए सारे नंबरों को नाम के साथ महफ़ूज़ (संरक्षित) किया, उनके लिए एक नया ग्रुप "इस्लामियात 2" के नाम से तर्तीब (व्यवस्थित) दिया, जब ग्रुप में आ गए तो यहाँ से लोग बाहर निकलना शुरू हो गए। मैंने तो उन्ही लोगों को शामिल किया जिन्होंने शामिल करने को कहा था बल्कि अपने ग्रुप के उसूल (नियम) भी बतला दिया था फिर यहाँ क्या हो गया? नए ग्रुप के सारे ही ऐसे नहीं थे, उनमें से कुछ थे। इन लोगों की इस हरकत से अंदाज़ा लगाया कि ये लोग ग़ैर-संजीदा (असंवेदनशील) थे, सोचते होंगे इस ग्रुप में हंगामा होगा,

पोस्ट पे पोस्ट आएंगी, रात-दिन इसमें लगे रहेंगे मगर मेरा ग्रुप संजीदा हुआ करता है, अपने मन की मुराद पूरी नहीं हुई तो ग्रुप से बाहर होने लगे। यहाँ मुझे हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु के वो झूठे साथी याद आ गए जिन्होंने ख़त (पत्र) भेज भेज कर उन्हें कूफ़ा बुलाया और साथ देने का वादा किया, जब हुसैन उनके पास पहुंच गए तो साथ छोड़ गए।

बहर-कैफ़ (बहरहाल)! संजीदगी अपनाएं, जल्दबाज़ी का कोई काम सही नहीं होता और सोशल मीडिया पर वक्त का बेहद ख़्याल करें। जिस तरह अपने जिस्म का हक़ अदा करना है उसी तरह घरवालों के हक़ के साथ ख़ालिक़-ओ-मालिक का और दुनिया वालों का भी हक़ अदा करें।

====================

[100].शौहर का बीवी पर बिला वजह ज़ुल्म ओ ज़्यादती करना।

सवाल: एक बहन का दर्द भरा सवाल है कि क्या शौहर बीवी को बग़ैर ग़लती के गाली दे सकता है? बिना वजह कोसना, ताने देना, बद्दुआ करना शौहर को इस्लाम ने इजाज़त दी है? वह सज़ा दे, मारे, सताए, और औरत बुत बनी सब कुछ देखती सहती रहे? इस से मुताल्लिक़ इस्लामी हुक्म क्या है हमें इससे आगाह करें। अल्लाह आपको इसका बेहतरीन बदला दे। आमीन।

जवाब: वाक़ई बहुत सारे घरों में मर्दों की हालत ऐसी ही है। अपनी मर्दानगी का इज़हार मैदान-ए-जंग में नहीं बल्कि सिफ़त-ए-नाज़ुक पर करते हैं। बिना वजह औरतों को गाली देना, उन्हें कोसना, मारना, सताना, बद्दुआ करना, धमकी देना ज़ुल्म और ज़्यादती का पेशा बना लिया है। अल्लाह ऐसे ज़ालिमों का सख़्त मुहासबा करेगा। औरत के सब्र और ज़ब्त से फ़ायदा उठाकर बहुत से ज़ालिम लोग तरह-तरह की सज़ाएं भी देते हैं। औरत अपने शौहर का ख़्याल करके मायके में भी कुछ नहीं बताती ताकि अपने घर की और शौहर की बेइज़्ज़ती न हो। ऐसा पाकीज़ा ख़्याल औरत के अंदर ही होता है, मर्दों की अक्सरियत

इस सिफ़त से दूर है। ऐसे लोग वो मर्द हैं जो औरत के मक़ाम-ओ-मर्तबे और उनकी बुलंदी से जाहिल होते हैं।

औरत घर की ही नहीं काइनात की ज़ीनत है, दुनिया से अगर औरत ख़त्म हो जाए तो उसका रंग और रूप ख़त्म हो जाए, ज़िंदगी से औरत चली जाए तो ज़िंदगी सूनी-सूनी और अजीरन सी हो जाए। मर्दों को सुकून और राहत औरत से ही मिलता है, मर्दों के ग़म और ज़िंदगी का बोझ हल्का करने वाली औरत की ही ज़ात होती है। बीमारी से लेकर कामकाज तक हर मोड़ पर सहारा देने वाली औरत है। शादी के बाद इंसान औरत का मक़ाम भूल जाता है, जबकि मालूम होना चाहिए कि यही मर्द जब बिना बीवी के ज़िंदगी गुज़ारे तो लोग उसे नामर्द कहेंगे। औरत ही मर्दों की मर्दानगी की निशानी है, ईमान के मुकम्मल होने का ज़रिया और बुलंद मेयार पर फ़ाइज़ होने में इसका आला किरदार रहा है। जो मर्द कमज़ोर और बेज़बान औरत पर अपना ज़ुल्म ढाते हैं, वो मर्द भी किसी औरत की कोख से निकल कर आए हैं, जिसे मुक़द्दस और मोहतर्म लफ्ज़ 'माँ' कहा जाता है। इसलिए मर्दों को औरतों के हक़ में अल्लाह से डरते रहना चाहिए और उनके हुक़ूक़ की अदाइगी में सुस्ती से बचना चाहिए। नबी ﷺ का फ़रमान है, सहीह मुस्लिम की हदीस है:

فاتقوا الله في النساء

तर्जुमा: ऐ लोगो! तुम औरतों के मामले में अल्लाह से डरो।

(सहीह मुस्लिम: 1218)

एक दूसरी हदीस में नबी ﷺ फ़रमाते हैं:

خيركم خيركم لأهله وانا خيركم لأهلي

तर्जुमा: ऐ लोगो! तुम में सबसे बेहतरीन आदमी वो है जो अपने अहल-ओ-अयाल के लिए बेहतरीन हो और मैं तुम में अपने अहल-ओ-अयाल के लिए सबसे बेहतरीन हूँ।

(सहीह उल जामे: 3314)

इसलिए प्यारे भाइयों! अपनी बीवी को बिना वजह गाली मत दो, उसे बात-बात पर ताने मत दो, कभी ग़लती कर जाए तो प्यार से समझा दो मगर तंज से उसका नाज़ुक सीना छलनी मत करो। ज़ुल्म और ज़्यादती से तो सच्ची तौबा कर लो, अल्लाह हमारे हर अमल से बाख़बर है और आख़िरत में ज़र्रे-ज़र्रे का हिसाब-किताब लेगा।

दूसरी तरफ़ मैं औरतों को भी सब्र की नसीहत करता हूँ। आप यक़ीन करें कि अगर मर्दों के ज़ुल्म के सामने सब्र का पहाड़ बन जाएं तो मर्द आपके सब्र के पहाड़ के सामने बौना नज़र आएगा। औरत के अंदर अल्लाह ने बहुत सी ख़ूबियां रखी हैं, उनमें से एक सब्र के अलावा ख़ूबी यह है कि वो अपने मीठे और दिल मोह लेने वाले अंदाज़ और अदा से शौहर का दिल जीत सकती है। आपका शौहर जिस बात से नाराज़ होता है, उसे दिल पर लेने की बजाय, बात सही हो तो अपनी इस्लाह कर लें, शौहर आप से राज़ी हो जाएगा और बात ख़त्म हो जाएगी। कई बार मामूली सी बात मियाँ-बीवी के दरमियाँन बड़े झगड़े, तलाक़ और जुदाई का सबब बन जाती है। तो आपके हाथ घर की कश्ती है, उसे संभाल कर चलाएं, लाख तूफ़ान आए, आँधी आएं, कश्ती हिचकोले खाए, आप कश्ती को सही से चलाएं। मैं मानता हूँ कि कुछ शौहर बिना वजह बीवी को मारते हैं, गाली देते हैं, बात-

बात पर घर से निकालने और तलाक़ देने की धमकी देते हैं, इन सब हालात में आप सब्र करें, सब्र का बदला जन्नत है। क़ा'ब बिन उज़राह रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया:

الا اخبركم بنسائكم في الجنة؟ كل ودود ولود،اذا غضبت او أسيء اليها [اؤ غضب زوجها]

قالت:هذه يدي في يدك، لا اكتهل يغمض حتى ترضى

तर्जुमा: मैं तुम्हें जन्नती औरतों के बारे में न बताऊं? हर मोहब्बत करने वाली और ज़्यादा बच्चे जनने वाली औरत जन्नत में है। जब वह नाराज़ हो जाए, या फिर उसके साथ बुरा सुलूक किया जाए, या शौहर नाराज़ हो जाए, तो औरत शौहर से कहे: मेरा हाथ तेरे हाथ में है, मैं उस वक्त तक नींद नहीं करूंगी जब तक तू राज़ी नहीं होता।

(अस-सिलसिला अस-सहीहा: 3380)

==========

[101].सफ़ के पीछे अकेले नमाज़ पढ़ना

यह एक अहम मसला है कि अगर अगली सफ़ मुकम्मल हो गई हो और पीछे से कोई अकेला नमाज़ी आए तो वह सफ़ के पीछे अकेले खड़ा हो या फिर अगली सफ़ से किसी को पीछे खींच ले?

बाज़ अहले इल्म ने अगली सफ़ से आदमी खींचने का फ़तवा दिया है तो बाज़ ने सफ़ के पीछे अकेले खड़े होने का।

यहां पहले इस बात का ज़िक्र करना मुनासिब है कि सफ़ के पीछे अकेले खड़ा होना हदीस की रू से मना है।

हज़रत अली-बिन-शैबान (रज़ि०) जो एक वफ़द में शामिल हो कर तशरीफ़ लाए थे उन से रिवायत है, उन्होंने फ़रमाया : हम (अपने इलाक़े से) रवाना हुए (और मदीना मुनव्वरह तक सफ़र किया) यहाँ तक कि हम नबी ﷺ की ख़िदमत पाक में हाज़िर हो गए और आप की बैअत की। हमने आपकी पैरवी में नमाज़ अदा की फिर आप ﷺ के पीछे एक और नमाज़ पढ़ी। आप ﷺ ने नमाज़ मुकम्मल की तो देखा कि एक आदमी सफ़ के पीछे अकेला खड़ा नमाज़ पढ़ रहा है।

(जब वो शख़्स नमाज़ से फ़ारिग़ हुआ तो) अल्लाह के नबी ﷺ उसके पास गए और फ़रमाया : नमाज़ पढ़ो। सफ़ के पीछे (अकेला) खड़े होने वाले की कोई नमाज़ नहीं।

(सुनन इब्न माजाह : 1003)

इस हदीस मे ज़िक्र है कि एक आदमी अकेला सफ़ के पीछे नमाज़ पढ़ा तो नबी ﷺ ने उन्हें नमाज़ दौहराने का हुक्म दिया जो इस बात की दलील है कि सफ़ के पीछे अकेले शख़्स की नमाज़ नही होती।

यहां यह बात भी ज़हन-नशीन रहे कि जब दो आदमी जमाअत बना कर नमाज़ अदा कर रहे हो तो तीसरा आने वाला नमाज़ी हसब सुहूलत या तो इमाम को आगे कर देगा या मुक़्तदी को पीछे खींच लेगा इन दोनों मे जो सहूलियत हो उस पर अमल किया जा सकता है।

अब सवाल पैदा होता है दो से ज़्यादा की जमाअत है और अगली सफ़ मुकम्मल है तो बाद मे आने वाला क्या करेगा?

जिन उलमा ने कहा कि अगली सफ़ से आदमी खींच लेगा उन्होंने एक इमाम और एक मुक़्तदी पर क़ियास (अनुमान) किया मगर यह क़ियास सही नही मालूम होता क्योंकि भरी हुई सफ़ से एक को पीछे खींचने से सफ़ मे नुक़्स पैदा होता है जब कि दो लोगो की जमाअत से एक आदमी खींचने से सफ़ मे ख़लल और नुक़्स पैदा नही होता।

हज़रत इब्न उमर रज़ियल्लाहू अन्हुमा से रिवायत है रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया :

مَن وصلَ صفًّا وصلَهُ اللَّهُ ، ومَن قطعَ صفًّا قطعَهُ اللَّهُ عزَّ وجلَّ(صحيح النسائي:818)

तर्जुमा : जो कोई सफ़ को मिलाएगा अल्लाह तआला उसे (अपने साथ) मिलाएगा और जो सफ़ को काटे (तोड़े) गा अल्लाह तआला उसे काटे (तोड़े) गा।

जैसे من وصل صفا का मानी जो सफ़ मे शामिल हो कर या सफ़ के ख़लल को पूरा करके सफ़ मिलाए और ومن قطع صفا का मानी जो ग़ायब हो कर या ख़ला (ख़ाली जगह) को पुर ना करके या कोई चीज़ रख सफ़ काटे। (عون المعبود : 366/2)

हमे जहां एक तरफ़ यह देखना है कि सफ़ के पीछे अकेले नमाज़ न पढ़ी जाए वहीं यह भी देखना है कि अगली सफ़ से आदमी खींच कर सफ़ मे नुक़्स व ख़लल न पैदा हो।

इस वजह से बाद मे आने वाला आदमी अगर अकेले हो इस हाल मे कि अगली सफ़ मुकम्मल नज़र आए तो यहां एक सूरत तो यह है कि अगर अगली सफ़ के अंदर शामिल होने का इमकान हो तो अगली सफ़ मे शामिल हो जाए।

दूसरी सूरत यह है कि अगर बग़ैर तशवीश (सोच, फ़िक्र) के इमाम के दायीं जानिब खड़ा होने का इमकान हो तो इमाम के दायीं जानिब खड़ा हो जाए (कई सफ़े हो तो नमाज़ीयो के दरमियाँन से गुज़रना तशवीश का बाइस होगा)

तीसरी सूरत यह है कि अगर मज़कूरा बाला दोनों सूरते नज़र न आएं तो सफ़ के पीछे अकेले खड़ा हो जाए, इस हाल मे वह आदमी माज़ूर होगा और उसकी नमाज़ दुरुस्त होगी।

सफ़ बंदी की असल यह है कि लोग मिल मिल कर खड़े हो इस तरह कि दरमियाँन (बीच) मे जगह बाक़ी न रहे गौया सीसा पिलाई हुई दीवार बन जाएं। पहले पहली सफ़ मुकम्मल करे फ़िर दूसरी, तीसरी।

पहली वाली सफ़ो मे किसी तरह ख़ला (ख़ाली जगह) बाक़ी न रहे, आख़री सफ़ मे ख़ला रह जाता है तो इसमे कोई हर्ज नही यानी सफ़ो मे नुक़्स आख़री सफ़ मे होनी चाहिए न कि अगली सफ़ो मे

नबी ﷺ का फ़रमान है :

أتِمُّوا الصَّفَّ المقدَّمَ ثُمَّ الَّذي يليهِ فما كانَ من نقصٍ فليَكن في الصَّفِّ المؤخَّرِ (صحيح أبي داود: 671)

तर्जुमा : पहली सफ़ को मुकम्मल करो फ़िर जो उसके साथ मिलती है और जो कोई नुक़्स हो पस वह आख़री सफ़ मे हो।

ख़ुलासा यह हुआ कि जब दो आदमी मस्जिद मे आए और अगली सफ़ मुकम्मल पाएं फ़िर भी जगह बनाकर उस सफ़ मे शामिल होने की कोशिश करे, और अगर यह मुमकिन न हो और इमाम के साथ दायीं जानिब बा-आसानी खड़े होने का इमकान हो तो इमाम के साथ खड़े हो जाएं वगरना (वर्ना) सफ़ के पीछे अकेले खड़े हो जाए

इस हाल मे मुक़्तदी माज़ूर (विवश) है। सफ़ के पीछे अकेली औरत की नमाज़ दुरुस्त है। इससे यह इस्तिदलाल सहीह नही है

कि मर्द भी सफ़ के पीछे अकेले नमाज़ पढ़े इल्ला (लेकिन) यह कि अगली सफ़ मे शामिल होने की गुंजाइश न हो लेकिन (अगर दो से ज़्यादा आदमी की जमाअत हो तो) अगली सफ़ से आदमी पीछे खींचना सहीह नही है।

~वल्लाहु आलम

===============

[102].सफ़र से लौटने के आदाब और अहकाम

जब हम किसी भी लंबे सफ़र से वापस आते हैं तो अहल-ओ-अयाल से मिलने की ख़ुशी तो याद रहती है मगर इस सिलसिले में कई सुन्नत-ए-नबवी भुलाए रहते हैं। हां, जब हज या उमरा से लौटते हैं तो चंद एक सुन्नत याद रहती हैं मगर उसमें भी इफ़रात-ओ-तफ़रीत के शिकार हो जाते हैं।

आइये सही हदीस की रोशनी में इख़्तिसार के साथ आपकी ख़िदमत में सफ़र से वापसी के आदाब बयान करता हूं ताकि सुन्नतों को ज़िंदा करें और इख़्तिसार से परहेज़ करें।

बुनियादी तौर पर यह ज़ेहन में रहे कि सफर में सउबतों और मुश्किलात का सामना होता है इसलिए रास्ता पुरअमन हो तभी आप सफर करें और सफर के वक्त शर से अल्लाह की पनाह और आसानी के लिए रब्बुल आलमीन से दुआ करें। अब्दुल्लाह बिन सरजिस रज़ि॰ बयान करते हैं:

وعن عبد الله بن سرجس قال: كان رسول الله ﷺ إذا سافر يتعوذ من وعثاء السفر، وكآبة المنقلب، والحور بعد الكون، ودعوة المظلوم، وسوء المنظر في الأهل والمال. (رواه مسلم:1343)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब सफ़र करते तो अल्लाह से पनाह मांगते सफ़र की मशक़्क़तों से और ग़मगीन होकर लौटने से और भलाई के बाद बुराई की तरफ़ लौटने से और अहल-ओ-अयाल में बुराई देखने से।

सफ़र की वजह से एक तरफ़ मुसाफ़िर को परेशानी लाहिक़ होती है तो दूसरी तरफ़ अहल-ओ-अयाल और उसके माल के लिए दिक़्क़त का सामना हो सकता है। इसीलिए शुरू सफ़र में ही रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इन सब चीज़ों में आफ़ियत के लिए दुआ करते थे।

इस बुनियादी बात को ज़हन में रखते हुए सफ़र से लौटने में सबसे पहला अदब यह है कि जिस मक़सद के लिए सफ़र था, उस मक़सद की तकमील के फ़ौरन बाद अहल-ओ-अयाल के पास लौट आया जाए, इसमें ताख़ीर न की जाए। हमारे प्यारे रसूल मुहम्मद सल्लल्लाहु

अलैहि वसल्लम की यही सुन्नत रही है। चुनांचे अबू हुरैरह रज़ि॰ से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

السفر قطعة من العذاب، يمنع أحدكم طعامه، وشرابه ونومه، فإذا قضى أحدكم نهمته من سفره، فليعجل إلى أهله.

तर्जुमा: सफ़र क्या है, गोया अज़ाब का एक टुकड़ा है। आदमी की नींद, खाने-पीने सब में रुकावट पैदा करता है। इस लिए जब मुसाफ़िर अपना काम पूरा कर ले तो उसे जल्दी घर वापस आ जाना चाहिए। (सहीह बुख़ारी: 3001)

सफ़र से लौटने का दूसरा आदाब यह है कि लौटते वक्त उसी तरह दुआ पढ़ें जैसे आपने सफ़र के शुरू में दुआ की थी, कुछ कलिमात के इज़ाफ़े के साथ। चुनांंचा आप सफ़र से लौटने की दुआ इस तरह पढ़ें

اللّٰهُ أَكْبَرُ ، اللّٰهُ أَكْبَرُ ، اللّٰهُ أَكْبَرُ . ثُمَّ يَقُولُ : سُبْحَانَ الَّذِي سَخَّرَ لَنَا هَذَا وَمَا كُنَّا لَهُ مُقْرِنِينَ وَإِنَّا إِلَى رَبِّنَا لَمُنْقَلِبُونَ سورة الزخرف آية 13 14 ، اللَّهُمَّ إِنِّي أَسْأَلُكَ فِي سَفَرِي هَذَا الْبِرَّ وَالتَّقْوَى ، وَمِنَ الْعَمَلِ مَا تَرْضَى ، اللَّهُمَّ هَوِّنْ عَلَيْنَا السَّفَرَ ، وَاطْوِ عَنَّا بُعْدَهُ ، اللَّهُمَّ أَنْتَ الصَّاحِبُ فِي السَّفَرِ ،

وَالْخَلِيفَةُ فِي الأَهْلِ ، اللَّهُمَّ إِنِّي أَعُوذُ بِكَ مِنْ وَعْثَاءِ السَّفَرِ ، وَكَآبَةِ الْمُنْقَلَبِ فِي الْمَالِ وَالأَهْلِ ، آيِبُونَ تَائِبُونَ عَابِدُونَ وَلِرَبِّنَا حَامِدُونَ. "

तर्जुमा: अल्लाह सब से बड़ा है, अल्लाह सब से बड़ा है, अल्लाह सब से बड़ा है। पाक है। वो ज़ात जिसने इस सवारी को हमारे मातहत कर दिया और हम इस पर क़ाबू नहीं पा सकते थे और हम अपने परवरदिगार के पास लौट जाने वाले हैं। ऐ अल्लाह! हम तुझसे अपने इस सफ़र में नेकी और परहेज़गारी माँगते हैं और ऐसे काम का सवाल करते हैं जिसे तू पसन्द करे। ऐ अल्लाह! हम पर इस सफ़र को आसान कर दे और इसकी दूरी को हम पर थोड़ा कर दे। ऐ अल्लाह तू ही सफ़र में दोस्त सफ़र और घर में निगराँ है। ऐ अल्लाह! मैं तुझसे सफ़र की मुसीबतों और रंज और ग़म से और अपने माल और घर वालों में बुरे हाल में लौट कर आने से तेरी पनाह माँगता हूँ।(ज़ुख़रुफ़ 13-14) (ये तो जाते वक़्त पढ़ते) और जब लौट कर आते तो भी यही दुआ पढ़ते मगर इस में इतना बढ़ा देते कि (आइबू-न, ताइबू-न, आइदू-न, आबिदू-न, लिरब्बि-न हामिदू-न) "हम लौटने वाले हैं, तौबा करने वाले, ख़ास अपने रब की इबादत करने वाले और उसी की तारीफ़ करने वाले हैं।" (सहीह मुस्लिम:1342)

सफ़र से लौटने का तीसरा अदब यह है कि रात को बिना इत्तिला दिए अहल ओ आयाल के पास न जाएँ। जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

إذا قدمَ أحدُكُمْ لَيْلًا ، فلا يأتينَّ أَهْلهُ طُرُوقًا ؛ حتى تَسْتَحِدَّ المُغِيبَه ، و تَمْتَشِطَ الشَّعِثَه

तर्जुमा: जब तुम में से कोई रात को आए तो अपने घर में घुसा न चले आए (बल्कि ठहरे) यहाँ तक कि पाकी करे वह औरत जिसका शौहर सफ़र में था और संवार ले वह औरत जिसके बाल परेशान हों। (सहीह मुस्लिम:715)

आज सोशल मीडिया के ज़माने में एक-एक लम्हे की ख़बर मुसाफ़िर और घर वालों के बीच होती है, इस लिहाज़ से किसी वक़्त घर पहुँचने में हरज नहीं है।

सफ़र से लौटने पर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की एक सुन्नत यह भी रही है कि आप जब बस्ती में वापस लौटते, पहले अहल ओ आयाल के पास नहीं जाते, बल्कि मस्जिद जाते और वहां 2 रकात

नमाज़ अदा करते। चुनांचे का'ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं:

كان عليه الصلاة والسلام إذا قدم من سفر بدأ بالمسجد فركع فيه ركعتين ثم جلس للناس

तर्जुमा: नबी ए अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब सफर से आते तो पहले मस्जिद में जाते और उसमें 2 रकात नमाज़ पढ़ते, फिर लोगों से मुलाक़ात के लिए बैठते। (अबू दाऊद: 2773, सहीह अल्बानी)

सफ़र से लौटने पर घर और पड़ोस के बच्चों को पहले शिद्दत का इंतज़ार होता है। इस लिए मुसाफ़िर घर को लौटते तो इस्तक़बाल करने वाले बच्चों से प्यार और मोहब्बत जतलाएं, उन बच्चों में अपने और पड़ोस के भी हो सकते हैं, सब से यकसाँ मोहब्बत करें ताकि किसी को एहसास ए कमी न हो। इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान किया:

لما قدم النبي صلى الله عليه وسلم مكة استقبلته أغيلمة بني عبد المطلب، فحمل واحدًا بين يديه، وآخرَ خلفه.

तर्जुमा: जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मक्का मुकर्रमा तशरीफ लाए (फ़तह के मौक़े पर) तो अब्दुल मुत्तलिब की औलाद ने (जो मक्का में थी) आपका इस्तक़बाल किया। (यह सब बच्चे ही थे) आपने अज़-राह मोहब्बत एक बच्चे को अपने सामने और एक को अपने पीछे बिठा लिया। (सहीह बुख़ारी: 5965)

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के प्यारे साथियों का तरीक़ा था कि जब वे एक दूसरे से मुलाक़ात फ़रमाते तो सलाम और मुसाफ़ा करते और जब सफ़र से लौट कर मिलते तो मु'आनक़ा करते। गोया लंबे सफ़र से लौटने की एक सुन्नत यह है कि मिलने वालों से मु'आनक़ा किया जाए। अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु बयान करते हैं:

كان أصحاب النبي صلى الله عليه وسلم إذا تلاقوا تصافحوا ، وإذا قدموا من سفر تعانقوا

तर्जुमा: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के असहाब जब एक दूसरे से मुलाक़ात करते तो मुसाफ़ा करते और जब सफ़र से वापस आते तो मु'आनक़ा (गले मिलना) करते। (सहीह अत-तरग़ीब: 2719)

आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब गज़वा तबूक़ या ज़ातुर्रिक़ा से वापस हुए तो आपने एक जानवर ज़बह कर के सहाबा-ए-किराम को खिलाया था।

जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है:

ان رسول الله صلى الله عليه وسلم لما قدم المدينة نحر جزورا او بقرة.

तर्जुमा: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब मदीना तशरीफ़ लाए (गज़वा ताबूक़ या ज़ातुर्रिक़ा से) तो ऊंट या गाय ज़बह की। (सहीह बुख़ारी: 3089)

इस हदीस की रोशनी में अहले इल्म कहते हैं कि सफ़र से लौटने की एक सुन्नत यह है कि लोगों की दावत की जाए। चुनांचे इस हदीस पर इमाम बुख़ारी रहिमहुल्लाह ने इस तरह बाब बांधा है: "باب الطعام عند القدوم" यानी मुसाफ़िर जब सफ़र से लौट कर आए तो लोगों को खाना खिलाए (दावत करे)।

और इसी हदीस पर इमाम दावूद (3747) ने इस तरह बाब बांधा है: "باب الطعام عند القدومي من السفر" यानी सफ़र से आने पर खाना खिलाने का बयान

इस लिए जो मुसाफ़िर दावत करने की इस्तिता'अत (ताक़त) रखता हो वह गुलू और फ़िज़ूलख़र्ची से बचते हुए अपने क़रीबियों को दावत कर के खिला सकता है, लेकिन जिसे दावत खिलाने की ताक़त न हो वह दावत न करे। हालांकि एक दूसरे से उल्फ़त और मोहब्बत क़ाइम रखने और उसमें इज़ाफ़ा करने के सबब अपने क़रीबियों और मुलाक़ातियों को मामूली गिफ़्ट पेश कर सके तो अच्छी बात है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है: تهادوا تهابوا.

तर्जुमा: एक दूसरे को हदिया दिया करो क्योंकि इसमें आपस में मोहब्बत में इज़ाफ़ा होता है। (सहीह अदबुल मुफ़रद:462)

हदिया में कोई भारी भरकम चीज़ देना ज़रूरी नहीं है, घर के बच्चों के लिए कुछ टौफ़ीयाँ सही, खजूर का एक दाना सही और हज और उमरा से लौट रहे हैं तो ज़मज़म का एक घूंट पानी ही पेश कर दें। मुलाक़ात

करने वाला हज या उमरा से लौटने वाले के इबादत की क़बूलियत की दुआ दे।

आख़िर में हज और उमराह से लोटने वाले ख़ुश नसीबों से अर्ज़ करना चाहता हूँ कि आपको अल्लाह ने अज़ीम इबादत की सआदत बख़्शी है, अपनी आँखों से अल्लाह के घर का दीदार और उसका तवाफ़ कर के आए हैं। इस वक्त आपको इस बात की ज़रूरत है कि शुक्रे इलाही के साथ अल्लाह से बकस्रत यह दुआ करें कि ऐ अल्लाह! मेरा हज और उमरा को क़बूल फ़रमा। नीज़ हज-ए-मबरूर से सारे गुनाह माफ़ हो जाते हैं जैसे कोई माँ के पेट से पैदा हुआ हो। इसलिए कोशिश करें कि इसी हालत पर मौत आए यानी गुनाहों से धुले धुलाए। इसके लिए आपको क्या करना है?

(1) सफ़र ए हज और उमरा से वापसी पर मुरव्वजा ख़ुराफ़ात और फ़िज़ूल कामों से बचें जैसे घरों की ताज़ियात और ज़ेबाइश (सजावट), भारी भरकम इसराफ़ (ख़र्च करना) और रिया वाली दावत वग़ैरह।

(2) हर उस काम से बचें जिस ने शोहरत और नामवरी हो ताकि आपकी इबादत की हिफ़ाज़त हो, वर्ना शोहरत ए हज जैसी इबादत को

खा लेगी यहाँ तक कि यह जहन्नम में दाख़िल होने का सबब बन सकती है।

(3) जैसे हज या उमराह आपने ख़ालिस अल्लाह के लिए अंजाम दिया, मताफ़, सई, मिना, अरफ़ात, मुज़दल्फ़ा हर जगह उसी से दुआ मांगी, उसी को मक्का मदीना में पुकारा, सारी ज़िन्दगी इसी तरह ख़ालिस अब रब की बंदगी बजा लाएँ, उसके साथ किसी को शरीक न करें और उसी से मांगते रहें, इन शा अल्लाह तौहीद पर ख़ात्मा नसीब होगा और आपका हज क़यामत में काम आएगा। याद रहे, शिर्क सारे आमाल को तबाह कर देता है।

(4) आख़िरी बात यह है कि अब अपने को एक बेहतर इंसान की सूरत में बदल कर ज़िन्दगी गुज़ारे जैसे मालूम हो कि वाक़ई हज और उमरे ने आपको बदल दिया है या हज और उमरे के बाद अब एक अच्छे इंसान बन गए हैं। अल्लाह भी यही चाहता है। आप नेकी की तरफ़ लग गए हैं तो इस जानिब बढ़ते रहें और इसी पर क़ाइम रहें और अल्लाह से हमेशा साबित क़दमी की यह दुआ "يا مقلب القلوب ثبت قلبی على دينك." करते रहें।

अनस रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं:

كان رسول الله صلى الله عليه يكثر ان يقول:يا مقلب القلوب ثبت قلبى على دينك.

तर्जुमा: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अक्सर यह दुआ पढ़ते थे

»يا مقلب القلوب ثبت قلبى على دينك«.

तर्जुमा: ऐ दिलों के उलटने पलटने वाले मेरे दिल को अपने दीन पर साबित क़दम रख। (सहीह तिर्मिज़ी:2140)

==============

[103].सर्दी के मौसम मे मोमिन का मोमिनाँ किरदार

अल्लाह का बे-पाया एहसान और करम है कि उसने हमें मुख़्तलिफ़ क़िस्म के मौसम से लुत्फ़ अंदोज़ होने का मौक़ा मयस्सर फ़रमाया। मुख़्तलिफ़ क़िस्म के ये मौसम इंसानी ज़िंदगी में हुस्न और लताफ़त (ख़ूबसूरती) का इज़ाफ़ा करते हैं। इंसानी फ़ितरत में जल्दबाज़ी और ज़ाहिरी तकलीफ़ पर जज़ा'-फ़ज़ा' (रोना पीटना) करना शामिल है। बिला शुबाह ठंडी में तकलीफ़ और परेशानी है और कभी ये परेशानी बीमारी और कभी जानी और माली नुक़सान का बाइस भी बन जाती है। इस मौसम में हम मुशाहिदा करते हैं कि लोग बीमार पड़ते हैं, अकसर और बेशतर बच्चे सर्दी, खांसी, नज़ला और ज़ुकाम में मुब्तला हो जाते हैं। किसी के लिए यह मौसम जानी नुक़सान का सबब भी बन जाता है। यही वजह है कि इंसान ठंडी की उन ज़ाहिरी परेशानियों को देखता है और इस मौसम को कोसता है, ठंडी को बुरा-भला कहता है और बजाये सब्र करने की तकलीफ़ का इज़हार करता है।

एक मोमिन का ईमान होना चाहिए कि ज़मीन, आसमान, सूरज, चाँद, दिन, रात, सुबह और शाम और ठंडी और गर्मी का ख़ालिक तन-तन्हा (अकेला) अल्लाह है, अल्लाह ने बेहतरीन कारीगरी के साथ हिकमत

और बसीरत के तहत उनको पैदा फ़रमाया है। उसकी बनाई हुई कोई चीज़ बेफ़ायदा और लग़व नहीं है। फ़रमान-ए-इलाही है:

ربنا ما خلقت هذا باطلا .(آل عمران:191)

तर्जुमा: "ऐ हमारे रब! तूने यह बेफ़ायदा नहीं बनाया।"

क़ुरआन ने ज़िक्र किया कि यह बात वह कहते हैं जो हर हाल में खड़े होते, बैठते और करवट बदलते हमेशा अल्लाह का ज़िक्र करते हैं यानी जिनकी ज़िंदगी मोमिना किरदार का परतव (साया) होती है। ज़मीन आसमान का अपनी जगह पर क़ायम रहना अल्लाह की अज़ीम निशानियों में है। रब का फ़रमान है:

ومن آياته ان تقوم السماء والأرض بأمره.(الروم:25)

तर्जुमा: "उसकी एक निशानी यह है कि आसमान और ज़मीन उसी के हुक्म से क़ाइम हैं।"

मोमिन अल्लाह के कलाम पर पुख़्ता भरोसे के साथ यह बात भी कहता है कि अल्लाह ही रात और दिन और मौसम और साल को लाने वाला है। अल्लाह का फ़रमान है:

يقلب الليل والنهار ان في ذلك لعبرة لأولي الألباب.(النور: 44)

तर्जुमा: "अल्लाह ही रात और दिन को रद्दो बदल करता रहता है। आँख वालों के लिए तो इसमें यक़ीनन बड़ी-बड़ी इबरतें हैं।"

इससे यह भी मालूम हुआ कि मोमिना किरदार के हामिल अफ़राद अल्लाह की निशानियों से इबरत पाते हैं। रात और दिन का आना हो, सर्दी और गर्मी का मौसम हो, बहार और ख़िज़ाँ का वक्त हो, बारिश और क़हत साली हो, उन सब में अल्लाह की कुदरत और मस्लहत पर यक़ीन रखते हुए हमेशा नसीहत पाते हैं।

यहाँ एक बड़ी बात जिसे अल्लामा इब्न कसीर रहिमहुल्लाह ने ज़िक्र किया है, बताना मुनासिब समझता हूँ कि आपने अल्लाह की मख़लूक़ात के मुत'अल्लिक़ कहा है कि जो इन चीज़ों का ख़ालिक है दरअसल वही इबादत का मुस्तहिक़ है। इस क़ौल से यह नसीहत मिलती है कि मोमिन लोग अल्लाह की मख़लूक़ात और उसकी निशानियों में ग़ौर और फ़िक्र करके रब की ख़ालिस बंदगी करते हैं और उसके साथ किसी को शरीक नहीं ठहराते। जैसा कि अल्लाह ने तख़लीक़-ए-इंसानी की वजह ही इबादत ज़िक्र किया है। फ़रमान-ए-इलाही है:

وما خلقت الجن والإنس إلا ليعبدون.(الذاريات:56)

तर्जुमा: "और बेशक मैंने जिन्न और इंसान को सिर्फ़ अपनी इबादत के लिए पैदा किया है।"

और सहीहैन में इब्ने मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु से मर्वी है वह नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से पूछते हैं कि अल्लाह के नज़दीक सबसे बड़ा गुनाह कौन सा है तो आप फ़रमाते हैं:

ان تجعل لله ندا وهو خلقك.(صحيح البخاري:7520)

तर्जुमा: "तुम अल्लाह के साथ किसी को शरीक ठहराओ हालाँकि उसी ने तुम्हें पैदा किया है।"

इन तम्हीदी (preliminary) बातों को ज़हन में रखते हुए एक बात यह ज़हन में रखने की है कि ठंडी और गर्मी का सबब जहन्नम का साँस लेना है। अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से मर्वी है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

اشتكت النار إلى ربها فقالت: رب اكل بعضي بعضا فأذن لها بنفسين نفس في الشتاء ونفس في الصيف فاشد ما تجدون من الحر واشد ما تجدون من الزمهرير.(صحيح البخاري:3260)

तर्जुमा: "जहन्नम ने अपने रब से शिकायत करते हुए कहा: ऐ मेरे रब! मेरे एक हिस्से ने दूसरे को खा लिया, लिहाज़ा अल्लाह ने उसे दो साँसों की इजाज़त दे दी, एक साँस सर्दी के मौसम में और दूसरा साँस गर्मी के मौसम में। इस तरह तुम्हें जो सख़्त गर्मी महसूस होती है वह जहन्नम की गर्मी की वजह से है और जो सख़्त सर्दी महसूस होती है वह जहन्नम के ज़महरीर की वजह से है।"

ठंडी और गर्मी की वजह जान लेने के बाद दूसरी बात यह ध्यान देने की है कि इस मौसम में मोमिन का किरदार यह हो कि इस मौसम की तकलीफ़ से बचने का सामान करे और जो कुछ तकलीफ़ इस मौसम में पहुँच जाए उस पर सब्र करे, मौसम को बुरा-भला न कहे क्योंकि इसका बनाने वाला अल्लाह है। मौसम को बुरा-भला कहना अल्लाह को तकलीफ़ देने और बुरा-भला कहने के बराबर है। हदीस-ए-कुदसी है, अल्लाह फ़रमाता है:

يؤذيني ابن آدم يسب الدهر وانا دهر بيدي الأمر أقلب الليل والنهار.(صحيح البخاري: 7491)

तर्जुमा: "आदम का बेटा मुझे दुख देता है, इस तरह कि वह ज़माने को गाली देता है, हालाँकि मैं ही ज़माना हूँ, मेरे ही हाथ में तमाम काम हैं, जिस तरह चाहता हूँ रात और दिन को बदलता रहता हूँ।"

जब यह बात सही है कि ठंडी के मौसम में ख़ास तौर पर शिद्दत की सर्दियों में घर से निकलना भी मुश्किल हो जाता है, ऐसे में वुज़ू करना, तहारत के लिए गुस्ल करना, और मस्जिद आकर पाँच वक्तों की इबादत बजा लाना बज़ाहिर मुश्किल काम है। मगर हक़ीक़ी मोमिनों और नफ़्स पर क़ाबू रखने वालों के लिए इसमें कोई मशक़्क़त नहीं है बल्कि लज़्ज़त और चाशनी है। दरअसल इंसान को उसका नफ़्स ही आसानी में भी मशक़्क़त का अहसास दिलाता है, जबकि कोई शैतानी काम में अगर भारी से भारी मशक़्क़त हो फिर भी उसका नफ़्स हल्केपन का अहसास दिलाता है। ज़रा ग़ौर करें कि इंसान को इंतेहाई ठंडी में किसी भारी काम का बदला बड़ा कर दिया जाए तो अपने काम में कोई मशक़्क़त नहीं महसूस करता, जबकि इबादत उस पर भारी गुज़रती है, वह क्यों? उसकी वजह मोमिना किरदार में कमी और उस पर नफ़्स का ग़ल्बा है।

मोमिन इस काम से ख़ुश होता है जिसमें अल्लाह की रज़ा और ज़्यादा मिक़दार में अज्र होता है और ठंडी में अल्लाह की बंदगी भी ज़्यादा अज्र का बाइस है। अब्दुल्लाह बिन मस'ऊद रज़ियल्लाहु अन्हु ने बयान किया:

قال ابن مسعود ان الله ليضحك الى رجلين رجل قام في ليلة باردة من فراشه ولحافه ودثاره فتوضأ ثم قام إلى الصلاة فيقول الله عز وجل لملائكة: ما حمل عبدي هذا على ما صنع فيقولون ربنا رجاء ما عندك وشفقة مما عندك فيقول فإني قد أعطيته ما رجا وامنته مما يخاف وذكر بقيته.(صحيح الترغيب: 630)

तर्जुमा: "दो शख़्सो को देखकर अल्लाह ख़ुश होता है: एक वह शख़्स जो ठंडी रात में अपने बिस्तर और लिहाफ़ से उठकर वुज़ू करता है, फिर नमाज़ के लिए खड़ा होता है। अल्लाह अपने फ़रिश्तों से कहता है: 'मेरे इस बंदे को ऐसा करने पर किस चीज़ ने उभारा?' फ़रिश्ते कहते हैं: 'ऐ हमारे रब! वह जो तेरे पास है उसकी उम्मीद और तेरे अज़ाब का ख़ौफ़।' अल्लाह कहता है: 'मैंने उसे वह दिया जिसकी उसे उम्मीद थी और उसे उस से महफ़ूज़ किया जिसका उसे ख़ौफ़ था।'"

ठंडी में वुज़ू की तकलीफ़ पर अल्लाह गुनाहों को माफ़ करता और दर्जात बुलंद करता है,

सय्यदना अबू हुरैरा (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "क्या मैं तुम्हें न बताऊं वो बातें जिनकी वजह से अल्लाह गुनाह माफ़ कर देता है और दर्जात बुलंद करता है?" लोगों ने कहा: "क्यों नहीं, या रसूल अल्लाह! बताइये।" आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

إسْباغُ الوُضُوءِ علَى المَكارِهِ، وكَثْرَةُ الخُطا إلى المَساجِدِ، وانْتِظارُ الصَّلاةِ بَعْدَ الصَّلاةِ. فَذَلِكُمُ الرِّباطُ(صحيح مسلم:251)

तर्जुमा: तकलीफ़ और परेशानी के बावजूद पूरा वुज़ू करना (जैसे

बीमारी या ठंड की वजह से) और मस्जिद की तरफ़ ज़्यादा आना और एक नमाज़ के बाद दूसरी नमाज़ का इंतज़ार करना यही रिबात यानी अपने नफ़्स को इबादत के लिए रोकना है।

सही हदीस से साबित है कि जिस इबादत में जितनी मुशक़्क़त होगी, उतना ही अज्र-ओ-सवाब मिलेगा। सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा बयान करती हैं:

أنَّ رسولَ اللهِ صلَّى اللهُ عليه وسلَّم قال لها في عُمرتِها إنَّ لك من الأجرِ على قدرِ نَصَبِك ونفقتِك(صحيح الترغيب:1116)

तर्जुमा: रसूल अल्लाह ﷺ ने मुझसे मेरे उमराह के बारे में फ़रमाया कि तुम्हें अज्र तुम्हारी मशक़्क़त और ख़र्च के मुताबिक़ मिलेगा।

यहाँ यह बात वाज़ेह रहे कि जान-बूझकर अपने नफ़्स को मशक़्क़त में डालने वाला अज्र का हक़दार नहीं है बल्कि वह ख़ुद को हलाक करने वाला है। मशक़्क़त वाले अमल का मतलब है कि ख़ुद उस काम में मशक़्क़त हो, जैसे ठंडे पानी से वुज़ू की तकलीफ़ अज्र का बाइस है

क्योंकि यह ख़ुद की मशक़्क़त नहीं है। लेकिन आग में कूदकर इबादत करना या पानी में डूबकर और ज़ुबान काटकर ज़िक्र करना बनावटी मशक़्क़त है, इससे इंसान हलाक होगा, यह अज्र वाला काम नहीं है।

कुछ सूफ़ियों ने इबादत के वास्ते आँखों में नमक लगाने, कुछ ने ज़िक्र करते समय ज़ुबान काटने, कुछ ने एक टांग पर क़ुरआन ख़त्म किया, यह सब बिला उजरत हलाक करने वाला अमल है।

ठंडी में मशक़्क़त वाले अमल पर अल्लाह की तरफ़ से ज़्यादा अज्र मिलता है। इस वजह से मोमिना किरदार यह होना चाहिए कि ज़्यादा शौक़ के साथ सुजूद बजा लाए। जन्नत भी तकलीफ़ बर्दाश्त करने पर ही मिलेगी। अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है, रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

خفت الجنة بالمكاره، وخفت النار بالشهوات.(صحيح مسلم:2822)

तर्जुमा: "जन्नत घेर ली गई है उन बातों से जो नफ़्स को नापसंद हैं और जहन्नम घेर ली गई है नफ़्स की ख़्वाहिशों से।"

आज मुसलमानों का हाल यह है कि सर्द मौसम में ज़ाती हर काम करते हैं, मादी मफ़ाद से जुड़े मशक़्क़त से पुर काम अंजाम देने में भी

गुरेज़ नहीं करते। यहां तक कि बहुत सारे लोग इस महीने में मुख़्तलिफ़ क़िस्म के खेलों में वक्त गुज़ारते हैं। ताहम इबादत और बंदगी हद दर्जा उन पर भारी गुज़रती है। हद तो यह है कि आम दिनों के बहुत सारे नमाज़ी इस मौसम में सुस्त पड़ जाते और नमाज़ों से गाफ़िल हो जाते हैं। ऐसे में हमारे ईमान के लिए क्या कुछ नहीं करते और मुस्तक़िल ज़िंदगी के मुताल्लिक़ बेपरवाह हो जाते हैं।

ठंडी मोमिनों के लिए मौसमे बहार है क्योंकि इस मौसम में उनके लिए दो वक्त की इबादतों में अल्लाह की तरफ़ से आसानी पैदा कर दी गई है। एक रोज़े की इबादत, उसकी आसानी दिन का

छोटा होना है। दूसरा क़ियाम-उल-लैल की इबादत, उसकी आसानी रात का लंबा होना है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

"الشتاء ربيع المؤمن طال ليله فقامه وقصر نهاره فصامه." (مسند أحمد)

तर्जुमा: "सर्दी का मौसम मोमिन के लिए बहार का मौसम है कि उसकी रातें लंबी होती हैं जिनमें वह क़ियाम कर लेता है और दिन छोटे होते हैं जिनमें वह रोज़े रख लेता है।"

अगरचे इस हदीस पर मुहद्दिसीन ने कलाम किया है मगर हक़ीक़त यही है कि ठंडी में दिन छोटा है और रात लंबी होती है। और इस हदीस के आख़िरी हिस्से की ताईद सहीह हदीस से होती है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

"الغنيمة الباردة الصوم في الشتاء." (صحيح الترمذي: 797)

तर्जुमा: "ठंडा-ठंडा बग़ैर मेहनत के माले ग़नीमत यह है कि रोज़ा सर्दी में हो।"

यही वजह है कि सहाबा-ए-किराम और हमारे असलाफ़ इस मौसम की आमद पर ख़ुश होते और उन दोनों आसानी वाली इबादत का एहतिमाम करते थे।

आज अल्लाह की तौफ़ीक़ से सर्दियों से बचने के लिए सैकड़ों असबाब और वसाइल ज़ुहूर-पज़ीर हुए हैं। वुज़ू और ग़ुस्ल के लिए तुरंत गर्म पानी की सहूलत, जिस्म की हिफ़ाज़त के गर्म कपड़े और जगहों को गर्म करने वाले नए-नए आला मौजूद हैं। लिहाज़ा इबादतों की अंजाम देने में गर्मी पहुंचाने वाले असबाब अपनाने में कोई हरज नहीं है। साथ ही शरियत ने भी पहले हमारे लिए आसानियां रखी हैं। मोज़े

और जुर्राब पर मसह करना और नुक़सान लाहिक़ की सूरत में या पानी की अदम-ए-दस्तयाबी पर तयम्मुम करना जायज़ है।

आख़िर में सर्दी के मौसम में मोमिन भाईयों को मेरा एक पैग़ाम है कि अगर अल्लाह ने आपको मालदार बनाया है और आपको ज़रूरत से ज़्यादा दौलत से नवाज़ा है तो इस मौसम में यतीम और मिसकीन और मोहताज और फ़क़ीर का भी ख़्याल करें। आपके पास सर्दी से बचने के लिए मुख़्तलिफ़ क़िस्म के जैकेट, स्वेटर, लिहाफ़, हीटर और उम्दा-उम्दा गर्म कपड़े मौजूद हैं मगर कितने ऐसे लोग होंगे जो सर्दी से जूझ रहे होंगे। उनके पास बचाव के लिए मामूली सामान भी नहीं होगा। लिहाज़ा अपने बचत माल से मोहताजों की ज़रूरतें पूरी करें। चंद अफ़राद या फ़ैमिली या अपने ही मुफ़लिस रिश्तेदार की मदद करें चाहे पैसे देकर या कपड़े तक़सीम करके, इस्तेमाल किए हुए कपड़े भी दिए जा सकते हैं। कितने ग़रीब इस महीने में सख़्त बीमार हो जाते हैं और इलाज के लिए पैसा नहीं पाते। तलाश कर ऐसे लोगों की भी मदद करें। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

"من فرج عن مسلم كربة فرج الله عنه بها كربة من كرب يوم القيامة." (صحيح مسلم: 2580)

तर्जुमा: "जो शख़्स किसी मुसलमान से कोई मुसीबत दूर करेगा, अल्लाह उससे क़यामत की मुसीबतों में से एक मुसीबत दूर करेगा।"

आख़िर में मैं अल्लाह से दुआ करता हूं कि अल्लाह हमें सहीह तरीक़े से उसकी इबादत करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, हमारे गुनाह माफ़ फ़रमाए और हमें उन लोगों में शुमार फ़रमाए जो उसकी राह में सच्ची मेहनत करते हैं। आमीन।

====================================

[104].सलफ़ियत और सलफ़ी का त'अर्रुफ़ क़ुरआन और हदीस के आइने में

दीन-ए-इस्लाम एक साफ़-सुथरा फ़ितरी निज़ाम-ए-हयात है। इसमें ज़िंदगी गुज़ारने के तमाम तरीक़े पाकीज़ा उसूल मौजूद हैं। दरअसल, इसी दीने में इंसानियत नवाज़ी, सुलह और आश्ती (अमन), इत्तिहाद और इत्तिफ़ाक, अदल और मुसावात, हुक़ूक और मरा'आत, उख़ुव्वत (भाईचारा) और मुहब्बत, सिद्क़-ओ-सफ़ा (सच्चाई और ख़ुलूस), अमन और राहत और इत्मिनान और सुकून मौजूद है। दुनिया के बाक़ी तमाम अदयान (दीन) और मज़ाहिब में फ़ितरत से बग़ावत और ज़िंदगी की पाकीज़ा उसूल और तालीमात से बेज़ारी है। दीने इस्लाम को दूसरे लफ़्ज़ों में सलफ़ियत से भी मौसूम (मुख़ातिब) किया जाता है क्योंकि यही इस्लाम की मुकम्मल ताबीर है।

सलफ़ियत कोई नया फ़िरक़ा और ख़ुद सख़्ता निज़ाम-ए-ज़िंदगी का नाम नहीं, बल्कि क़ुरून-ए-मुफ़ज़्ज़ला के सलफ़ सालिहीन के मनहज पर चलने का नाम है। सलफ़-ए-सालिहीन से मुराद सहाबा, ताबिईन और उनके इत्तिबा यानी रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जिन 3 ज़मानों की ख़ैर और भलाई का ज़िक्र फ़रमाया है। उन ज़मानों के नेक

और सालेह अफ़राद जिन्होंने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के दीने को सही से समझा और उस पर उसी तरह अमल किया जैसे आप ने हुक्म दिया। जो लोग इन असलाफ़-ए-किराम के तरीक़े पर चले उन्हें सलफ़ी कहा जाता है और जो इस से बिछड़ जाए ख़लफ़ में उसका शुमार होगा।

जिस तरह अल्लाह ने क़ुरआन की हिफ़ाज़त फ़रमाई और रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़र्मूदात (हुक्म) की हिफ़ाज़त के असबाब पैदा फ़रमाए, उसी तरह अह्द-ए-रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से लेकर अब तक एक जमात की हिफ़ाज़त करता रहा और क़यामत तक करता रहेगा, जिस जमात का मिशन, नबवी मिशन यानी हक़ (किताबुल्लाह और सुन्नत-ए-रसूल) का दामन थामते हुए, उसी की नश्र-ओ-इशाअत करना और बातिल की तर्दीद में किसी क़िस्म की मुसालहत (मेल मिलाप) न करना है।

चूंकि सलफ़ियत असल इस्लाम का नाम है और सलफ़ी दुनिया वालों पर असल इस्लाम को पेश करते हैं, इस वजह से मनहज-ए-सलफ़ पर चलने वालों को न सिर्फ़ बातिल दीनों की तरफ़ से ख़तरात और मुश्किलात और मुख़्तलिफ़ किस्म के चैलेंज का सामना करना पड़ता

है, बल्कि इस्लाम का लबादा ओढ़े मुख़्तलिफ़ मसलक में बटे मुसलमानों से भी है।

सितेज़ा-कार रहा है अज़ल से ता इमरोज़

चिराग़-ए-मुस्तफ़ा से शरारे बू-लहबी

अल्लामा इक़बाल ने नबवी मिशन से मुतसादिम हर दौर के बू-लहबी जमात की तरफ़ इशारा कर के हक़ बयान किया है और इस हक़ीक़त पर हर दौर की तजुर्बाती और मुशाहिदाती तारीख़ बीन सबूत है जिसे इस तारीख़ी सच्चाई से इंकार से वह त'अस्सुब की ऐनक (चश्मा) उतार कर अपने ही दौर का खुली आँखों से मुआहिदा कर ले।

जो इस्लाम के दुश्मन हैं वह तो इस्लाम दुश्मनी निभाएंगे, मगर हैरत इस्लामी लबादा ओढ़े अपने भाइयों पर है जिन्होंने सलफ़ियों को बदनाम करने, उन्हें माली और जिस्मानी तकलीफ़ पहुंचाने और काफ़िर के लिए उन मुसलमानों के ख़िलाफ़ राह हमवार करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। सलफ़ियों को अंग्रेज की पैदावार क़रार दिया जाता है, उन्हें इंतिहा पसंद और दहशतगर्द जमात के तौर पर ग़ैर-मुसलिमों में

मुत'आरिफ़ किया जाता है। नबी के गुस्ताख़, फ़ज़ाइल-ए-सहाबा के मुंकिर, औलिया की शान घटाने वाला और इमामों की इज़्ज़त ना करने वाला कह कर आम मुसलमानों में नफ़रत पैदा की जाती है। क़ुरआन और हदीस के मानी और मफ़ाहीम बदल-बदल कर सलफ़ियों को दीन में नया फ़िरक़ा बतलाया जाता है और इन सलफ़ियों की किताबें पढ़ने, उनसे ताल्लुक़ात उस्तुवार (मज़बूत) करने यहाँ तक कि मामलात करने से भी मना किया जाता है। वहाबी और ग़ैर-मुक़ल्लिद का ताना गाली के तौर पर दिया जाता है। ख़ैर, जो चाहे आपका हुस्न का करिश्मा साज़ करे।

सलफ़ियत क्या है उपर वाज़ेह कर दिया गया और अब इस सलफ़ियत के पैरोकार कौन हैं, उनकी सिफ़ात क्या हैं क़ुरआन और हदीस की रोशनी में देखते हैं ताकि अवाम पर हक़ वाज़ेह हो जाए। टोलियो में बटे ख़वास (ख़ास लोग) को हक़ीक़त का पता है मगर वो अपनी अवाम पर न हक़ पेश करते हैं और न ही हक़ ज़ाहिर होने देते। इसकी ख़ास वजह यह है कि जब किसी को मालूम हो जाता है कि सलफ़ियत ही हक़ की दावत है और उसे सिर्फ़ अल्लाह और उसके रसूल की पैरवी का ही हुक्म हुआ है तो फिर वह तक़लीदी और फिक़्ही मज़ाहिब से आज़ाद होकर इस सलफ़ी तरीक़े को इख़्तियार कर लेता है।

पहले क़ुरआन से सलफ़ियों के कुछ औसाफ़ बयान करता हूँ:

(1) सिफ़त: वह अल्लाह और उसके रसूल की पैरवी करने वाले हैं:

अल्लाह ने अपनी किताब में बैश्तर मक़ामात पर अपनी और अपने रसूल की पैरवी का हुक़्म दिया है। अल्लाह का फ़रमान है:

أطيعوا الله والرسول لعلكم ترحمون.(آل عمران:132)

तर्जुमा: और अल्लाह और उसके रसूल की फ़रमाबरदारी करो ताकि तुम पर रहम किया जाए।

अल्लाह का फ़रमान है:

فليحذر الذين يخالفون عن أمره ان تصيبهم فتنة اؤ يصيبهم عذاب اليم.(النور:63)

तर्जुमा: सुनो! जो लोग हुक्मे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की मुख़ालफत करते हैं, उन्हें डरना चाहिए कि उन पर कोई ज़बरदस्त आफ़त न आ पड़े या उन्हें कोई दुख की मार न पड़े।

अल्लाह का फ़रमान है:

يا أيها الذين آمنوا أطيعوا الله ورسوله ولا تولوا عنه وانتم تسمعون.(الانفال:20)

तर्जुमा: ऐ ईमानवालो, अल्लाह और उसके रसूल का कहना मानो और उससे रु-गर्दानी न करो हालांकि तुम सुन रहे हो।

अल्लाह का फ़रमान है:

وما آتاكم الرسول فخذوه وما نهاكم عنه فانتهوا.(الحشر:7)

तर्जुमा: और तुम्हें जो कुछ रसूल दे, ले लो और जिस से रोके, रुक जाओ।

इन आयत की रोशनी में वही मुसलमान हक़ पर है जो अल्लाह और उसके रसूल की पैरवी करते हैं। उनकी पैरवी के बिना कोई अमल क़ुबूल नहीं होगा और हमें यह कहने में कोई झिझक नहीं कि अल्लाह और उसके रसूल की पैरवी में सच्चे और पक्के सलफ़ी हैं।

(2) सिफ़त: मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को ही अपना इमाम और पेशवा मानते हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

لقد كان لكم في رسول الله اسوة حسنة.(الأحزاب:21)

तर्जुमा: बेशक तुम्हारे लिए रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ज़िन्दगी में बेहतरीन नमूना है।

कायनात में सबसे अफज़ल हस्ती मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की है। सलफ़ी न केवल इसका अक़ीदा रखते हैं बल्कि अल्लाह के ज़िक्र किए गए फ़रमान के मुताबिक़ अपने इमाम-ए-आज़म भी मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को ही मानते हैं और आपकी सीरत-ए-तय्यिबा के मुताबिक़ अपनी ज़िन्दगी गुज़ारते हैं। जबकि सलफ़ी के अलावा मुसलमानों की तमाम जमात मुहम्मद

सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को छोड़कर किसी और को अपना इमाम मानती है और अपने मनमाने इमाम की तक़लीद को राहे निजात क़रार देती है।

(3) सिफ़त: रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की पैरवी करने में सलफ़ के तरीक़े पर चलने वाले हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

والسابقون الأولون من المهاجرين والأنصار والذين اتبعوهم بإحسان رضي الله عنهم ورضوا عنه وأعد لهم جنات تجري تحتها الأنهار خالدين فيها ابدا ذللك الفوز العظيم.(التوبه:100)

तर्जुमा: जिन लोगों ने सबक़त की (यानि सबसे पहले) ईमान लाए, मुहाजिरीन में से भी और अंसार में से भी, और जिन्होंने बतौर एहसान उनकी पैरवी की, अल्लाह उनसे राज़ी है और वे अल्लाह से राज़ी हैं और उसने उनके लिए बाग़ात तैयार किए हैं जिनके नीचे नहरें बह रही हैं और वे हमेशा उनमें रहेंगे। यही बड़ी कामयाबी है।

यह इम्तियाज़ी सिफ़त सिर्फ़ सलफ़ियों की है कि वे पैरवी मे नबी और सहाबा-ए-किराम के नक़्शे-क़दम पर चलते हैं।

(4) सिफ़त: दीन-ए-हक़ की पूरी तरह दावत देने वाली जमात है। अल्लाह का फ़रमान है:

وممن خلقنا امة يهدون بالحق وبه يعدلون.(الاعراف:181)

तर्जुमा: हमारी मख़्लूक़ में एक ऐसी जमात भी है जो दीन-ए-हक़ की रहनुमाई करती है और उसी के ज़रिए इंसाफ़ करती है।

अल्लाह ने इस आयत के ज़रिए बता दिया कि दीन-ए-मुहम्मदी की पूरी हक़ीकत को पेश करने वाली एक जमात हमेशा क़ाइम रहेगी और वह सलफ़ियों की जमात है। मुख़्तलिफ़ जमातों में बाते मुसलमानों के पास भी तबलीग़ है, मगर अपने-अपने बुज़ुर्गों और इमामों की। दुनिया इस बात पर गवाह है कि मिम्बर और मेहराब से लेकर इज्तिमा और कांफ्रेंस तक सलफ़ी हज़रात सिर्फ़ قال الله और قال الرسول की दावत पेश करते हैं।

(5) सिफ़त: हक़ परस्तों की तादाद कम होती है। अल्लाह का फ़रमान है:

وان تطع أكثر من في الأرض يضلوك عن سبيل الله ان يتبعون إلا الظن وان هم إلا يخرصون.(الانعام:116)

तर्जुमा: और दुनिया में ज़्यादातर लोग ऐसे हैं कि अगर आप उनका कहना मानने लगे तो वे आपको अल्लाह की राह से भटका देंगे। वे सिर्फ़ बे-बुनियाद खयालात पर चलते हैं और पूरी तरह अनुमान पर बात करते हैं। इस मानी की कई आयतें हैं, मगर एक ही आयत से हमें बख़ूबी मालूम हो जाता है कि सीधे रास्ते पर चलने वालों की क़स्रत नहीं होती, बल्कि कमी होती है। इसी लिए हम सलफियों की तादाद दुनिया में थोड़ी है और राय और क़ियास पर चलने वालों की क़स्रत है।

(6) सिफ़त: इख़तिलाफ के वक़्त किताबुल्लाह और सुन्नत-ए-रसूल की तरफ़ लौटने वाले हैं। अल्लाह का फरमान है:

يا ايها الذين امنوا أطيعوا الله وأطيعوا الرسول وأولي الأمر منكم فإن تنازعتم في شيء فردوه إلى الله والرسول ان كنتم تؤمنون بالله واليوم الآخر ذلك خير واحسن تاويلا.(النساء: 59)

तर्जुमा: ऐ ईमान वालो, अल्लाह की और रसूल की फ़रमाबर्दारी करो, और तुम में से जो इख़्तियार वाले हैं, यदि किसी चीज़ में इख़्तिलाफ़ करो तो उसे अल्लाह की तरफ़ और रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की तरफ़ लौटा दो। यदि तुम अल्लाह पर और क़यामत के दिन पर ईमान रखते हो, तो यह बहुत बेहतर है और अंजाम के लिहाज़ से बहुत अच्छा है।

अल्लाह ने मोमिनों को इख़्तिलाफ के वक़्त अपनी तरफ़ और अपने रसूल की तरफ़ लौटने का हुक्म दिया है। जब हम इस सिफ़त को मुसलमानों में तलाश करते हैं तो न तो हनफ़ी में मिलती है, न शाफ़ई में, न मालिकी में, और न ही हंबली में। अगर कहीं यह सिफ़त मिलती है, तो सलफ़ियों में मिलती है।

(7) सिफ़त: इत्तेफ़ाक़ और इत्तिहाद की दावत देने वाले हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

واعتصموا بحبل الله جميعا ولا تفرقوا.(آل عمران:103)

तर्जुमा: और तुम सब लोग मिलकर अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से पकड़ लो और टुकड़े-टुकड़े मत हो जाओ। सलफ़ियों ने हमेशा अल्लाह और उसके रसूल की बातों की तरफ़ लोगों को बुलाया है और यही इत्तिहाद है। जो किताब और सुन्नत के अलावा अक़्वाल-ए-रिजाल और मलफ़ूज़ात-ए-अक़ाबिरीन की दावत दे, वह सरापे इख़्तिलाफ़ और दीन से दूर है, बल्कि दीन में फ़िरक़ा बंदी करने वाला है, और अल्लाह ने इस आयत में फ़िरक़ा बंदी से मना किया है।

क़ुरआन में और भी बहुत से सिफ़ात हैं जिनका ज़िक्र लम्बा होने के कारण नहीं कर पा रहा हूँ। समझने वालों के लिए इतने दलाइल काफ़ी हैं। अब हदीस की रोशनी में कुछ सिफ़ात पर ग़ौर करते हैं।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने 3 ज़मानों में ख़ैर और भलाई की शहादत (गवाही) दी है। इसी सबब इन ज़मानों के नेक लोगों को सलफ़-ए-सालिहीन कहा जाता है। फ़रमान-ए-नबवी है:

خير أمتي القرن الذين يلوني ثم الذين يلونهم ثم الذين يلونهم.(صحيح مسلم:2532)

तर्जुमा: सबसे बेहतर ज़माना मेरा ज़माना है, फिर वे लोग जो उनसे क़रीब होंगे, फिर वे लोग जो उनसे क़रीब होंगे।

जो लोग नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की पैरवी सलफ़-ए-सालिहीन के तरीक़े पर करते हैं, उन्हें सलफ़ी कहा जाता है और मनहज-ए-सलफ़ अपनाने का हुक्म क़ुरआन से भी है। उम्मत-ए-मुस्लिमा के 73 फिरक़ो में बटने वाली हदीस में निजात पाने वाली जमात की पहचान रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने बतलाई है:

ما انا عليه وأصحابي.(صحيح الترمذي:2641)

तर्जुमा: यानी ये वे लोग होंगे जो मेरे और मेरे सहाबा के नक़्श-ए-क़दम पर होंगे।

मनहज-ए-सलफ़ पर चलने वाली जमात की एक अज़ीम पहचान का ज़िक्र करते हुए नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फ़रमाया:

لا تزال طائفة من أمتي بامر الله لا يضرهم من خذلهم أو خالفهم حتى يأتي أمر الله وهم ظاهرون على الناس.(صحيح مسلم: 1037)

तर्जुमा: मेरी उम्मत में हमेशा एक गिरोह हक पर क़ायम रहेगा।

जो कोई उन्हें नुक़सान पहुँचाना चाहेगा, उन्हें नुक़सान नहीं पहुँच सकेगा, यहाँ तक कि अल्लाह का हुक्म आ जाएगा और वे उसी तरह क़ायम रहेंगे।

जब भी सलफ़ियों पर सितम ढाए जाते हैं, उनकी मुख़ालिफ़त की जाती है, उन्हें दहशतगर्द कहा जाता है और बुरे अलक़ाब से पुकारा जाता है, तो यही क़ीमती फ़रमान-ए-मुहम्मदी मुवह्हिदीन को तसल्ली दिलाती है कि घबराओ नहीं, यह तुम्हारे ही शान-ए-शान है जिसकी बशारत ज़बान-ए-रिसालत से दी गई है। यह जमात इख़्तिलाफ़ के वक्त में सुन्नत को थामने वाली और दीन में हर किस्म की बिदअत और ख़ुराफ़ात से अपना दामन बचाने वाली है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का फ़रमान है:

اوصيكم بتقوى الله والسمع والطاعة وان عبدا حبشيا فإنه من يعش منكم بعدي فسيرى

اختلافا كثيرا فعليكم بسنتي وسنة الخلفاء المهديين الراشدين تمسكوا بها وعضوا عليها بالنواجذ واياكم ومحدثات الأمور فإن كل محدثة بدعة وكل بدعة ضلالة.(صحيح ابي داؤد:4607)

तर्जुमा: मैं तुम्हें वसीयत करता हूँ कि अल्लाह का तक़वा इख़्तियार किये रहना और अपने हाकिमों के अहकाम सुनना और मानना चाहे कोई हब्शी ग़ुलाम ही क्यों न हो। बेशक तुममें से जो मेरे बाद ज़िन्दा रहा वो बहुत इख़्तिलाफ़ देखेगा चुनांचे इन हालात में मेरी सुन्नत और मेरे ख़ुलफ़ा की सुन्नत अपनाए रखना, ख़ुलफ़ा जो हिदायत और सीधे रास्ते पर हैं, सुन्नत को ख़ूब मज़बूती से थामना बल्कि दाढ़ों से पकड़े रहना नई-नई बिदअतें और नई घड़ी हुई बातों से अपने आप को बचाए रखना बेशक हर नई बात बिदअत है और हर बिदअत गुमराही है।

चिराग़ लेकर तलाश करें और मुसलमानों का हाल देखें तो अक्सर फ़िरक़ो में बिदअत के अनवा'-ओ-अक़साम पाए जाते हैं, और सलफ़ियत ही एक ऐसा ख़ालिस मोहम्मदी तरीक़ा है जिसमें बिदअत की क़तई कोई गुंजाइश नहीं है। ग़ुरबा की निशानी भी सलफ़ियों में ही पाई जाती है। फ़रमान-ए-नबवी है:

بدأ الإسلام غريبا وسيعود كما بدأ غريبا فطوبى للغرباء.(صحيح مسلم:145)

तर्जुमा: इस्लाम ग़ुरबत और अजनबियत की हालत में शुरू हुआ और अनक़रीब इसी अजनबियत और ग़ुरबत की तरफ़ लौट आएगा। तो ग़ुरबा के लिए ख़ुशख़बरी है।

एक दूसरी रिवायत में ग़ुरबा की वज़ाहत दूसरे अल्फ़ाज़ आई है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) फरमाते हैं:

طوبى للغرباء اناس صالحون في اناس سوء كثير من يعصيهم أكثر ممن يطيعهم.(صحيح الجامع:3921)

तर्जुमा: अजनबियों के लिए ख़ुशख़बरी हो। यह कुछ नेक लोग होंगे जिनके चारों तरफ़ बुरे लोगों की एक बड़ी तादाद होगी, उनकी बात को ठुकराने वाले मानने वालों से बहुत ज़्यादा होंगे।

अकसरियत हक़ पर होने का दावा करने वालों के लिए इसमें इबरत है। अकसरियत बिल्कुल मेयार नहीं है, बल्कि बहुत से नुसूस से मालूम

हो गया है कि हक़ परस्त कम होते हैं और वही निजात पाने वाले हैं। एक आख़िरी सिफ़ात का ज़िक्र कर के इसी पर इक्तिफ़ा करूंगा।

وعن مالك بن أنس مرسلا قال قال رسول الله صلى الله عليه وسلم تركت فيكم أمرين لن تضلوا ما تمسكتم بهما كتاب الله وسنة رسوله. (رواه مالك في الموطأ)

तर्जुमा: मालिक बिन अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) मुर्सल रिवायत बयान करते हैं कि रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फ़रमाया: "मैं तुममें दो चीज़ें छोड़कर जा रहा हूँ, बस जब तक तुम उन दोनों पर अमल करते रहोगे तो कभी गुमराह नहीं होंगे," यानी अल्लाह की किताब और उसके रसूल की सुन्नत।

इस हदीस को शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने हसन कहा है। (तख़रीज मिष्कातुल मसाबिह: 184)

रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने निजात पाने वाली और हर दौर में मौजूद रहने वाली जमात की निशानी यह बतलाई कि वह किताब और सुन्नत को थामने वाली होगी और जो जमात उन्हें छोड़ दे, बर्बादी उसका मुक़द्दर बन जाती है।

क़ामिल तौर पर किताब और सुन्नत को थामने की सिफ़ात भी सिवाय सलफ़ और सलफ़ी के और कहीं मौजूद नहीं है।

मज़कूरा बाला नुसूस किताब और सुन्नत की रौशनी में मालूम होता है कि यह औसाफ़ सलफ़ सालिहीन के हैं और सलफ़ की पैरवी करने वाले अल्फ़ाज़, दीगर सलफ़ के यह औसाफ़ का क़ामिल तौर पर सिर्फ़ सलफ़ियों में मौजूद है। उनका एक दूसरा मशहूर नाम अहलुल हदीस भी है।

कोई माने या न माने मगर मेरा यह मानना है कि अगर कोई जमात दीन-ए-इस्लाम के लिए मुख़्लिस है, वह क़ुरआन और हदीस पर चलने का दावा करती है और वह अपने दावा में सच्ची और पक्की है, तो उस जमात को भी सलफ़ी, अहलुल हदीस और मोहम्मदी कह सकते हैं। मगर क्या आप जानते हैं कि अहले तक़लीद और ख़ास मस्लक की तक़लीद करने वाला ख़ुद को मोहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की तरफ़, सहाबा की तरफ़ और मुहद्दिसीन की तरफ़ निस्बत कर के मोहम्मदी, सलफ़ी और अहलुल हदीस क्यों नहीं कहलवाते? क्योंकि वह क़ुरआन और हदीस की तालीमात से दूर है। भले ही वह दावा भी करें कि हम क़ुरआन और हदीस के मानने वाले हैं, तो वह

अपने दावा में झूठे हैं। सभी जानते हैं कि दावा बग़ैर दलील के बातिल है।

आख़िरी बात पर ध्यान देने की ज़रूरत है, वह यह कि हमारे लिए सलफ़ी या अहलुल हदीस की निस्बत ज़रूरी नहीं थी। अल्लाह ने हमारा नाम मुसलमान रखा है, यही नाम हमारे लिए काफ़ी है। मगर उम्मत ए मुसलिमा में फ़िरक़ा बंदी के सबब तआरुफ़ के तौर पर ख़ुद को ख़वारिज, रावाफ़िज़, क़द्रिया, मुरजिया, जबरिया, जहमिय्या और मो'तज़िला वग़ैरह से अलग करने के लिए इसकी अशद ज़रूरत पड़ गई। साथ ही यह बात भी जानना ज़रूरी है कि सलफ़ सालिहीन की इक्तिदा का मतलब यह है कि अल्लाह और उसके रसूल की पैरवी करने में किताब और सुन्नत के नुसूस (अक़ीदा और सुलूक, इबादत और मामलात) को जिस तरह सलफ़ ने समझा है, उसी तरह समझे, यानी दीन समझने और उस पर अमल करने के लिए सलफ़ हमारे लिए मश'अल-ए-राह (रास्ते की रोशनी) है।

========================

[105].सोशल मीडिया और गुनेहगार आंखें

अल्लाह ने इंसानों के लिए दुनिया में सैकड़ों क़िस्म की नेमतें मुहय्या कराई हैं जिनको अहाता-शुमार में लाना महाल है। ख़ुद इंसान का वजूद उसकी एक अज़ीम कारीगरी और बेश-बहा (क़ीमती) नेमत है। उसने इंसानी जिस्म के अंदर ही न जाने कितनी नेमतें रखी हैं, उनमें से कुछ का हम एहसास तो कर सकते हैं मगर शुमार करना इतना ही मुश्किल है जितना के सारी नेमतों का इदराक और एहसास करना। एक जुमला में अल्लाह ने अपनी नेमतों के बारे में इंसानों को बता दिया कि अगर तुम उसकी नेमतों को गिनना चाहो तो गिन नहीं सकते हो।

नेमतों के इदराक और एहसास का एक नादिर वाक़िआ सऊदी अरब की दारुल हुकूमत रियाज़ में पेश आया और इस क़िस्म के वाक़िआ दुनिया में पेश आते होंगे। वाक़िआ ऐसा है कि एक 78 साल के अर्बी शख़्स को एक अस्पताल ने 24 घंटों का 600 रियाल का बिल पेश किया। वह बुज़ुर्ग बिल देख कर रोने लगा, लोगों ने वजह पूछी तो उन्होंने बताया कि सिर्फ़ 24 घंटों की ऑक्सीज़न का 600 रियाल देना पड़ रहा है जब कि मैं 78 साल से अल्लाह की ताज़ा हवा में सांस ले

रहा हूँ और कोई बिल नहीं अदा किया। क्या तुम्हें मालूम है कि मैं अल्लाह का कितना मक़रूज़ हूँ?.......... सुबहान-अल्लाह

अल्लाह ने हमें एक ख़ूबसूरत सांचे में ढाल कर मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) नेमतों से इस सांचे को मुज़य्यन किया। उन नेमतों में एक अहम तरीन आंखों की नेमत है। इसी आंख से दुनिया की रंगीनियत, उसकी नज़ाकत और हर चीज़ का हुस्न और जमाल देखते हैं और जो इन आंखों से महरूम हो जाए, पूरी दुनिया उसके सामने तारीक बन जाती है। यहां तक कि उसका अपना घर, अपना जिस्म और अपनी जायदाद सब पर अंधेरा छा जाता है। इस नज़ारे में ग़ौर किया जाए तो आंखों वालों के लिए बड़ी इब्रत और नसीहत है, मगर कम ही लोग हैं जो अल्लाह की निशानियों में ग़ौर और फ़िक्र और इब्रत और नसीहत तलाश करते हैं।

وَمِنْ آيَاتِهِ خَلْقُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَافُ أَلْسِنَتِكُمْ وَأَلْوَانِكُمْ ۚ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَآيَاتٍ لِّلْعَالِمِينَ

(الروم:22)

तर्जुमा: "और उसकी निशानियों में से आसमानों और ज़मीन की पैदाइश और तुम्हारी ज़बानों और रंगों का इख़्तिलाफ़ भी है। इसमें यक़ीनन दानिशमंदों के लिए बड़ी निशानियाँ हैं।"

अल्लाह आंखों की नेमत का तज़किरा करते हुए फ़रमाते हैं:

أَلَمْ نَجْعَل لَّهُ عَيْنَيْنِ (البلد:8)

तर्जुमा: "क्या हमने इंसानों के लिए दो आंखें नहीं बनाई?"

दूसरी जगह फ़रमाते हैं:

إِنَّا خَلَقْنَا الْإِنسَانَ مِن نُّطْفَةٍ أَمْشَاجٍ نَّبْتَلِيهِ فَجَعَلْنَاهُ سَمِيعًا بَصِيرًا (الانسان:2)

तर्जुमा: "बेशक हमने इंसानों को मिले-जुले नुत्फ़े से इम्तिहान के लिए पैदा किया और उसे सुनने वाला और देखने वाला बनाया।"

जब अल्लाह ने आंख जैसी अज़ीम नेमत दी है, तो इसके कुछ हुक़ूक़ भी हैं। नबी का फ़रमान है:

وإن لعينك عليك حقا(صحيح البخاري:1874، صحيح مسلم:1159)

तर्जुमा: "यानी तुम्हारे ऊपर आंखों के भी हुक़ूक़ है।"

आंखों का हक़ यह है कि उसे आराम पहुंचाए, उसके ज़रिए क़ुदरत की निशानियों का मुशाहिदा कर के उसके ख़ालिक़ की वहदानियत पर ईमान लाए और ख़ालिस उसकी बंदगी बजा लाए, आंखों को नुक़सान

पहुंचाने वाली चीज़ों से दूर रखे, उन्हें शहवत और फ़हश कामों से बचाए, उन बेशक़ीमती आंखों से सिर्फ़ जाइज़ चीजों को देखे और राह चलते आंखों का हक़ यह है कि निगाह नीचे कर के चले, मगर अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि सोशल मीडिया के ज़माने में आंखों से जितने गुनाह आज सरज़द होते हैं, उतने पूरे जिस्म से नहीं होते हैं। उसी एहसास ने मुझे यह तहरीर लिखने पर मजबूर किया, शायद कोई नसीहत पकड़ने वाला नसीहत पकड़ ले, आंखों की नेमत का हक़ीक़ी एहसास करे और उनका सही इस्तेमाल करे।

शायद बहुत सारे लोगों को मालूम न हो कि ज़िना का सुरूर जिस तरह शर्मगाह से होता है, आंखों से भी होता है। और आंखों का ज़िना बदनगाही, यानी फ़हश या हराम चीज़ों को देखना है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

زِنَا العَيْنِ النَّظَرُ، وزِنَا اللِّسَانِ المَنْطِقُ، والنَّفْسُ تَمَنَّى وتَشْتَهِي، والفَرْجُ يُصَدِّقُ ذلكَ أوْ يُكَذِّبُهُ(صحيح البخاري:6612)

तर्जुमा: "आंखों का ज़िना (ग़ैर-महरम को) देखना है, ज़बान का ज़िना (ग़ैर-महरम से) बात करना है, दिल का ज़िना ख़्वाहिश और शहवत है और शर्मगाह इसकी तसदीक़ कर देती है या झूठला देती है।"

इस हदीस की रोशनी में आज के माहौल और मुआशरे का जाइज़ा लिया जाए तो पता चलता है कि इंटरनेट इस्तेमाल करने वाला आम आदमी आंखों के ज़िना में मुब्तिला है। समाज में पाए जाने वाले फ़हश मंज़र, नंगे कपड़े, स्कूल और बाज़ार और सवारीयों समेत भीड़-भाड़ वाली तमाम जगहों में मर्द और ज़न का इख़्तिलात अपनी जगह। रसूल-ए-अकरम ने अली रज़ि से फ़रमाया:

لا تُتبعِ النَّظرةَ النَّظرةَ، فإنَّ لَكَ الأولى وليسَت لَكَ الآخرَةُ(صحيح أبي داود:2149)

"नज़र के बाद नज़र न उठाओ, क्योंकि तुम्हारे लिए पहली नज़र माफ़ है और दूसरी माफ़ नहीं है।"

इस हदीस का मतलब यह है कि अचानक जब किसी अजनबी औरत पर निगाह पड़ जाए, तो पहली निगाह माफ़ है, लेकिन जान-बूझ कर किसी लड़की पर पहली या दूसरी तीसरी निगाह डालना माफ़ नहीं है। नज़र लम्हा भर की होती है। इस लम्हा भर की नज़र से हमें रसूल ﷺ ने मना फ़रमाया है। इस जगह ज़रा ठहर कर सोचें कि जो जान-बूझ कर मोबाइल से घंटों-घंटों नंगी तस्वीरें और फ़हश वीडियो देखता है, उसकी आंख किस क़दर गुनाहगार और ज़िना-काम है? क्या लोगों को आंखों के इस भयानक ज़िना और संगीन गुनाह के बारे में एहसास है? हरगिज़ नहीं।

लड़कों से चंद क़दम आगे नौजवान लड़कियां फ़हश कामों में मुलव्विस नज़र आती हैं। वह आंखों में मस्नुई पलके लगा कर, एब्रो की ज़ेबाइश कर के और मुनक़्क़श लेंस लगा कर ख़ुद को संवारती हैं और अपनी आंखों से लोगों को ज़िना की तरफ़ दावत देती हैं। ऐसी लड़कियां स्कूल और बाज़ार से लेकर सोशल मीडिया के तमाम चैनल्स पर नज़र आती हैं, ख़ासतौर पर टिक टॉक को लड़कियों ने बेहयाई फैलाने का वसीला बना लिया है।

मेरे नवजवान भाइयों और बहनों! क्या आपको मालूम है कि जिन आंखों को कुछ घंटे और कुछ मिनट के लिए शह्वानी सुरूर पहुंचाते हैं, वही आंखें हमारे लिए ख़ूबसूरत जिस्म को बशमूल आंखें शौलो वाले जहन्नम में ले जाने का सबब बनती हैं। लिहाज़ा आंखों की नेमत का क़द्रदान बने, जिसने यह आंखें दे कर हम पर बड़ा एहसान किया है, उसका शुक्र बजा लाए और उन आंखों का इस्तेमाल इबरत और नसीहत हासिल करने के लिए करें।

आइए देखते हैं कि अल्लाह को कौन सी आंखें पसंद हैं? अल्लाह को वह आंखें पसंद हैं जिनमें शर्म और हया हो और जो झुकी हुई हों, यानी शर्म और हया से झुकने वाली आंखें रब-ए-ज़ुल्जलाल को पसंद

हैं। इसी लिए मोमिनों को निगाहें नीची रखने का हुक्म दिया है। फ़रमाने इलाही है:

قُل لِّلْمُؤْمِنِينَ يَغُضُّوا مِنْ أَبْصَارِهِمْ وَيَحْفَظُوا فُرُوجَهُمْ ۚ ذَٰلِكَ أَزْكَىٰ لَهُمْ ۗ إِنَّ اللَّهَ خَبِيرٌ بِمَا يَصْنَعُونَ

(النور:30)

"मुसलमान मर्दों से कहो कि अपनी निगाहें नीची रखें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करें। यही उनके लिए पाकीज़गी है। लोग जो कुछ करें, अल्लाह सब से खब़रदार है।"

ग़ौरतलब अमर यह है कि पहले अल्लाह ने मर्दों को निगाहें नीची रखने का हुक्म दिया है, फिर अगली आयत में औरतों को भी उस बात का हुक्म दिया है। और शर्मगाह की हिफ़ाज़त से पहले निगाहों की पस्ती का हुक्म एक बड़ी हिकमत पर्दा है। दरअसल तमाम गुनाहों की जड़ आंख है। आंख से ही देखने के बाद दिल में मनसूबा बनाया जाता है और फिर शर्मगाह हराम काम में मुलव्विस हो जाती है। गज़्ज़े-बसर का फ़ायदा अल्लाह ने पाकीज़गी क़रार दिया है, इसलिए जो लोग अपनी निगाहों को पस्त रखते हैं, उनके दिल और दिमाग़ और रूह और क़ल्ब सब बुराईयों से महफ़ूज़ और पाक साफ़ रहते हैं। अल्लाह को वह आंखें पसंद हैं जो उससे डरने वाली और ख़ौफ़ से रोने वाली हों, जैसा कि अल्लाह का फ़रमान है:

إِذَا تُتْلَىٰ عَلَيْهِمْ آيَاتُ الرَّحْمَٰنِ خَرُّوا سُجَّدًا وَبُكِيًّا(مريم:58)

तर्जुमा: "जब उनके सामने अल्लाह रहमान की आयात की तिलावत की जाती है तो वे सजदे में गिर पड़ते हैं और रोने-गिड़गिड़ाने लगते हैं।"

और नबी ﷺ का फ़रमान है:

ليسَ شيءٌ أحبَّ إلى اللَّهِ من قَطرتينِ، وأثَرينِ : قطرةُ دموعٍ من خشيةِ اللَّهِ ، وقطرةُ دمٍ تُهَراقُ في سبيلِ اللَّهِ ، وأمَّا الأثَرانِ فأثرٌ في سبيلِ اللَّهِ ، وأثرٌ في فريضةٍ من فرائضِ اللَّهِ(صحيح الترمذي:1669)

तर्जुमा: "अल्लाह को दो बूँदें और दो निशानियां बहुत प्यारी हैं: एक बूँद जो अल्लाह के ख़ौफ़ की वजह से गिरी और दूसरी बूँद वह है जो अल्लाह के रास्ते में गिरी, और दो निशानियों में एक निशानी वह है जो अल्लाह की राह में लगे और दूसरी निशानी वह है जो अल्लाह के फ़राइज़ में से किसी फ़र्ज़ की अदा की हालत में लगी।"

जो आंखें अल्लाह से डरती और उसके डर से रोती हैं, अल्लाह ने उन आंखों के लिए बड़ा बदला रखा है। नबी ﷺ ने अर्श-ए-इलाही के साया के हक़दारों में जिन सात ख़ुश नसीबों का ज़िक्र किया है, उनमें एक

वह भी है जो तनहाई में अल्लाह को याद कर के रोने लगता है। इसी तरह आप ﷺ ने भी फ़रमाया है:

عَينانِ لا تمسُّهما النَّارُ: عينٌ بَكَت من خشيةِ اللَّهِ، وعَينٌ باتت تحرُسُ في سبيلِ اللَّهِ(صحيح الترمذي:1639)

तर्जुमा: "दो आंखें जन्नत की आग को नहीं छुएंगी: एक वह आंख जो अल्लाह के डर से तर हुई हो और एक वह आंख जिसने राह-ए-जिहाद में पहरा देते हुए रात गुज़ारी हो।"

इसी तरह आप ﷺ का फ़रमान है:

لا يلِجُ النَّارَ رجُلٌ بَكَى مِن خشيَةِ اللَّهِ حتَّى يَعودَ اللَّبنُ في الضَّرعِ ، ولا يجتَمِعُ غبارٌ في سبيلِ اللَّهِ ودخانُ جَهَنَّمَ(صحيح الترمذي:1633)

तर्जुमा: "अल्लाह के डर से रोने वाला जन्नत में दाख़िल नहीं होगा जब तक दूध थन में लौट न जाए (और यह महाल है) और जिहाद का ग़बार और जहन्नम का धुआं एक साथ जमा नहीं होंगे।"

जब हमें यह मालूम हो गया कि आंखें अल्लाह की अनमोल नेमत हैं और हमने जाने-अनजाने में इस नेमत का बहुत ही ग़लत इस्तेमाल किया है, अब हमें क्या करना चाहिए?

पहली फ़ुर्सत में पिछले तमाम गुनाहों से सच्ची तौबा करनी चाहिए। नबी ﷺ ने बताया है कि तौबा करने वाला ऐसे ही है जैसे बेगुनाह आदमी। तौबा के बाद सबसे अहम बात यह है कि हमें यह एहसास रहे कि हर उस नेमत के बारे में हमसे क़यामत के दिन सवाल किया जाएगा जिनका हमने इस्तेमाल किया है, चाहे वह नेमत दुनिया की हो या जिस्म की आंखों के बारे में सवाल किए जाने के मुताल्लिक़ सराहत के साथ क़ुरआन में मौजूद है:

إِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ أُولَٰئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْئُولًا(الاسراء:36)

तर्जुमा: "बेशक कान, आंख और दिल इनमें से हर एक से पूछा जाने वाला है।"

तीसरी बात यह है कि फ़हश चीज़ों के क़रीब भी न जाएं, यानी ऐसा कोई काम न करें जिससे इंसान हरामकारी तक पहुंच जाए। अल्लाह का फ़रमान है:

وَلَا تَقْرَبُوا الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ(الانعام:151)

तर्जुमा: "और बेहयाई के जितने भी तरीक़े हैं, उनके पास भी मत जाओ, चाहे वह आम हो या छिपा।" (सूरह अल-अनआम: 151)

रास्ते चलते हुए निगाहें नीची रखें और मोबाइल इस्तेमाल करते हुए उन तमाम मुक़ामात और जगहों से बचें जहाँ फ़हश चीज़ें मौजूद हैं, मसलन फ़हश वेबसाइट्स, अनजान लड़कियों से दोस्ती, उनसे वीडियो कॉल या इनबॉक्स शह्वानी चैट वग़ैरह।

बज़ारिया मोबाइल तनहाई में आंखों से गुनाह करने वाले यह भूल जाते हैं कि उन्हें उनका ख़ालिक़ और मालिक देख रहा है, बल्कि उनके सारे करनामों को लिखने पर फ़रिश्तों को मामूर कर रखा है। वह सारी बातें जानते और लिखते हैं जो हम अंधेरे या उजाले में अंजाम देते हैं। और एक आख़िरी बात यह है कि हम नेकी की तरफ़ रग़बत पैदा करें, आमाल-ए-सालिहा पर हमेशा की तरह और कसरत बढ़ाएं और फ़राइज़ और वाजिबात में कोताही न करें, ख़ासतौर पर पांच वक्त की नमाज़ों में। आपको वह प्यारी हदीस याद दिलाता चलूं जिसमें मुहम्मद ﷺ ने बताया है कि वुज़ू में चेहरे को धोते वक्त चेहरे का गुनाह मिटा दिया जाता है। आंखें चेहरे का हिस्सा हैं और वज़ू की बरकत से आंखों का गुनाह बल्कि सारे जिस्म का गुनाह माफ़ कर दिया जाता है और वह गुनाहों से पाक हो जाता है।

ऐ अल्लाह! हमारी आंखों की हिफ़ाज़त फ़रमा, इनमें हया और ख़ौफ़ डाल दे जिससे यह झुकी रहे और तेरे ख़ौफ़ से आंसू बहाती रहें। आमीन

सोशल मीडिया और गुनेहगार आंखें

अल्लाह ने इंसानों के लिए दुनिया में सैकड़ों क़िस्म की नेमतें मुहय्या कराई हैं जिनको अहाता-शुमार में लाना महाल है। ख़ुद इंसान का वजूद उसकी एक अज़ीम कारीगरी और बेश-बहा (क़ीमती) नेमत है। उसने इंसानी जिस्म के अंदर ही न जाने कितनी नेमतें रखी हैं, उनमें से कुछ का हम एहसास तो कर सकते हैं मगर शुमार करना इतना ही मुश्किल है जितना के सारी नेमतों का इदराक और एहसास करना। एक जुमला में अल्लाह ने अपनी नेमतों के बारे में इंसानों को बता दिया कि अगर तुम उसकी नेमतों को गिनना चाहो तो गिन नहीं सकते हो।

नेमतों के इदराक और एहसास का एक नादिर वाक़िआ सऊदी अरब की दारुल हुकूमत रियाज़ में पेश आया और इस क़िस्म के वाक़िआ दुनिया में पेश आते होंगे। वाक़िआ ऐसा है कि एक 78 साल के अर्बी

शख़्स को एक अस्पताल ने 24 घंटों का 600 रियाल का बिल पेश किया। वह बुज़ुर्ग बिल देख कर रोने लगा, लोगों ने वजह पूछी तो उन्होंने बताया कि सिर्फ़ 24 घंटों की ऑक्सीज़न का 600 रियाल देना पड़ रहा है जब कि मैं 78 साल से अल्लाह की ताज़ा हवा में सांस ले रहा हूँ और कोई बिल नहीं अदा किया। क्या तुम्हें मालूम है कि मैं अल्लाह का कितना मक़रूज़ हूँ?.......... सुबहान-अल्लाह

अल्लाह ने हमें एक ख़ूबसूरत सांचे में ढाल कर मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) नेमतों से इस सांचे को मुज़य्यन किया। उन नेमतों में एक अहम तरीन आंखों की नेमत है। इसी आंख से दुनिया की रंगीनियत, उसकी नज़ाकत और हर चीज़ का हुस्न और जमाल देखते हैं और जो इन आंखों से महरूम हो जाए, पूरी दुनिया उसके सामने तारीक बन जाती है। यहां तक कि उसका अपना घर, अपना जिस्म और अपनी जायदाद सब पर अंधेरा छा जाता है। इस नज़ारे में ग़ौर किया जाए तो आंखों वालों के लिए बड़ी इब्रत और नसीहत है, मगर कम ही लोग हैं जो अल्लाह की निशानियों में ग़ौर और फ़िक्र और इब्रत और नसीहत तलाश करते हैं।

وَمِنْ آيَاتِهِ خَلْقُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَافُ أَلْسِنَتِكُمْ وَأَلْوَانِكُمْ ۚ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَآيَاتٍ لِّلْعَالِمِينَ (الروم:22)

तर्जुमा: "और उसकी निशानियों में से आसमानों और ज़मीन की पैदाइश और तुम्हारी ज़बानों और रंगों का इख़्तिलाफ़ भी है। इसमें यक़ीनन दानिशमंदों के लिए बड़ी निशानियाँ हैं।"

अल्लाह आंखों की नेमत का तज़किरा करते हुए फ़रमाते हैं:

أَلَمْ نَجْعَل لَّهُ عَيْنَيْنِ (البلد:8)

तर्जुमा: "क्या हमने इंसानों के लिए दो आंखें नहीं बनाई?"

दूसरी जगह फ़रमाते हैं:

إِنَّا خَلَقْنَا الْإِنسَانَ مِن نُّطْفَةٍ أَمْشَاجٍ نَّبْتَلِيهِ فَجَعَلْنَاهُ سَمِيعًا بَصِيرًا (الانسان:2)

तर्जुमा: "बेशक हमने इंसानों को मिले-जुले नुत्फ़े से इम्तिहान के लिए पैदा किया और उसे सुनने वाला और देखने वाला बनाया।"

जब अल्लाह ने आंख जैसी अज़ीम नेमत दी है, तो इसके कुछ हुक़ूक़ भी हैं। नबी का फ़रमान है:

وإن لعينك عليك حقا(صحيح البخاري:1874،صحيح مسلم:1159)

तर्जुमा: "यानी तुम्हारे ऊपर आंखों के भी हुक़ूक़ है।"

आंखों का हक़ यह है कि उसे आराम पहुंचाए, उसके ज़रिए क़ुदरत की निशानियों का मुशाहिदा कर के उसके ख़ालिक़ की वहदानियत पर ईमान लाए और ख़ालिस उसकी बंदगी बजा लाए, आंखों को नुक़सान पहुंचाने वाली चीज़ों से दूर रखे, उन्हें शहवत और फ़हश कामों से बचाए, उन बेशक़ीमती आंखों से सिर्फ़ जाइज़ चीजों को देखे और राह चलते आंखों का हक़ यह है कि निगाह नीचे कर के चले, मगर अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि सोशल मीडिया के ज़माने में आंखों से जितने गुनाह आज सरज़द होते हैं, उतने पूरे जिस्म से नहीं होते हैं। उसी एहसास ने मुझे यह तहरीर लिखने पर मजबूर किया, शायद कोई नसीहत पकड़ने वाला नसीहत पकड़ ले, आंखों की नेमत का हक़ीक़ी एहसास करे और उनका सही इस्तेमाल करे।

शायद बहुत सारे लोगों को मालूम न हो कि ज़िना का सुरूर जिस तरह शर्मगाह से होता है, आंखों से भी होता है। और आंखों का ज़िना बदनगाही, यानी फ़हश या हराम चीज़ों को देखना है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

زِنَا العَيْنِ النَّظَرُ، وزِنَا اللِّسَانِ المَنْطِقُ، والنَّفْسُ تَمَنَّى وتَشْتَهِي، والفَرْجُ يُصَدِّقُ ذلكَ أوْ يُكَذِّبُهُ(صحيح البخاري:6612)

तर्जुमा: "आंखों का ज़िना (ग़ैर-महरम को) देखना है, ज़बान का ज़िना (ग़ैर-महरम से) बात करना है, दिल का ज़िना ख़्वाहिश और शहवत है और शर्मगाह इसकी तसदीक़ कर देती है या झूठला देती है।"

इस हदीस की रोशनी में आज के माहौल और मुआशरे का जाइज़ा लिया जाए तो पता चलता है कि इंटरनेट इस्तेमाल करने वाला आम आदमी आंखों के ज़िना में मुब्तिला है। समाज में पाए जाने वाले फ़हश मंज़र, नंगे कपड़े, स्कूल और बाज़ार और सवारीयों समेत भीड़-भाड़ वाली तमाम जगहों में मर्द और ज़न का इख़्तिलात अपनी जगह। रसूल-ए-अकरम ने अली रज़ि से फ़रमाया:

لا تُتبعِ النَّظرةَ النَّظرةَ، فإنَّ لَكَ الأولى وليسَت لَكَ الآخرَةُ(صحيح أبي داود:2149)

"नज़र के बाद नज़र न उठाओ, क्योंकि तुम्हारे लिए पहली नज़र माफ़ है और दूसरी माफ़ नहीं है।"

इस हदीस का मतलब यह है कि अचानक जब किसी अजनबी औरत पर निगाह पड़ जाए, तो पहली निगाह माफ़ है, लेकिन जान-बूझ कर किसी लड़की पर पहली या दूसरी तीसरी निगाह डालना माफ़ नहीं है।

नज़र लम्हा भर की होती है। इस लम्हा भर की नज़र से हमें रसूल ﷺ ने मना फ़रमाया है। इस जगह ज़रा ठहर कर सोचें कि जो जान-बूझ कर मोबाइल से घंटों-घंटों नंगी तस्वीरें और फ़हश वीडियो देखता है, उसकी आंख किस क़दर गुनाहगार और ज़िना-काम है? क्या लोगों को आंखों के इस भयानक ज़िना और संगीन गुनाह के बारे में एहसास है? हरगिज़ नहीं।

लड़कों से चंद क़दम आगे नौजवान लड़कियां फ़हश कामों में मुलव्विस नज़र आती हैं। वह आंखों में मस्नुई पलके लगा कर, एब्रो की ज़ेबाइश कर के और मुनक़्क़श लेंस लगा कर ख़ुद को संवारती हैं और अपनी आंखों से लोगों को ज़िना की तरफ़ दावत देती हैं। ऐसी लड़कियां स्कूल और बाज़ार से लेकर सोशल मीडिया के तमाम चैनल्स पर नज़र आती हैं, ख़ासतौर पर टिक टॉक को लड़कियों ने बेहयाई फैलाने का वसीला बना लिया है।

मेरे नवजवान भाइयों और बहनों! क्या आपको मालूम है कि जिन आंखों को कुछ घंटे और कुछ मिनट के लिए शह्वानी सुरूर पहुंचाते हैं, वही आंखें हमारे लिए ख़ूबसूरत जिस्म को बशमूल आंखें शौलो वाले जहन्नम में ले जाने का सबब बनती हैं। लिहाज़ा आंखों की नेमत का क़द्रदान बने, जिसने यह आंखें दे कर हम पर बड़ा एहसान किया है,

उसका शुक्र बजा लाए और उन आंखों का इस्तेमाल इबरत और नसीहत हासिल करने के लिए करें।

आइए देखते हैं कि अल्लाह को कौन सी आंखें पसंद हैं? अल्लाह को वह आंखें पसंद हैं जिनमें शर्म और हया हो और जो झुकी हुई हों, यानी शर्म और हया से झुकने वाली आंखें रब-ए-ज़ुल्जलाल को पसंद हैं। इसी लिए मोमिनों को निगाहें नीची रखने का हुक्म दिया है। फ़रमाने इलाही है:

قُل لِّلْمُؤْمِنِينَ يَغُضُّوا مِنْ أَبْصَارِهِمْ وَيَحْفَظُوا فُرُوجَهُمْ ۚ ذَٰلِكَ أَزْكَىٰ لَهُمْ ۗ إِنَّ اللَّهَ خَبِيرٌ بِمَا يَصْنَعُونَ (النور:30)

"मुसलमान मर्दों से कहो कि अपनी निगाहें नीची रखें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करें। यही उनके लिए पाकीज़गी है। लोग जो कुछ करें, अल्लाह सब से खब़रदार है।"

ग़ौरतलब अमर यह है कि पहले अल्लाह ने मर्दों को निगाहें नीची रखने का हुक्म दिया है, फिर अगली आयत में औरतों को भी उस बात का हुक्म दिया है। और शर्मगाह की हिफ़ाज़त से पहले निगाहों की पस्ती का हुक्म एक बड़ी हिकमत पर्दा है। दरअसल तमाम गुनाहों

की जड़ आंख है। आंख से ही देखने के बाद दिल में मनसूबा बनाया जाता है और फिर शर्मगाह हराम काम में मुलव्विस हो जाती है। गज़्ज़े-बसर का फ़ायदा अल्लाह ने पाकीज़गी क़रार दिया है, इसलिए जो लोग अपनी निगाहों को पस्त रखते हैं, उनके दिल और दिमाग़ और रूह और क़ल्ब सब बुराईयों से महफूज़ और पाक साफ़ रहते हैं। अल्लाह को वह आंखें पसंद हैं जो उससे डरने वाली और ख़ौफ़ से रोने वाली हों, जैसा कि अल्लाह का फ़रमान है:

إِذَا تُتْلَىٰ عَلَيْهِمْ آيَاتُ الرَّحْمَٰنِ خَرُّوا سُجَّدًا وَبُكِيًّا(مريم:58)

तर्जुमा: "जब उनके सामने अल्लाह रहमान की आयात की तिलावत की जाती है तो वे सजदे में गिर पड़ते हैं और रोने-गिड़गिड़ाने लगते हैं।"

और नबी ﷺ का फ़रमान है:

ليسَ شيءٌ أحبَّ إلى اللَّهِ من قَطرتينِ، وأثَرينِ : قطرةُ دموعٍ من خشيةِ اللَّهِ ، وقطرةُ دمٍ تُهَراقُ في سبيلِ اللَّهِ ، وأمَّا الأثرانِ فأثرٌ في سبيلِ اللَّهِ ، وأثرٌ في فريضةٍ من فرائضِ اللَّهِ(صحيح الترمذي:1669)

तर्जुमा: "अल्लाह को दो बूँदें और दो निशानियां बहुत प्यारी हैं: एक बूँद जो अल्लाह के ख़ौफ़ की वजह से गिरी और दूसरी बूँद वह है जो अल्लाह के रास्ते में गिरी, और दो निशानियों में एक निशानी वह है जो अल्लाह की राह में लगे और दूसरी निशानी वह है जो अल्लाह के फ़राइज़ में से किसी फ़र्ज़ की अदा की हालत में लगी।"

जो आंखें अल्लाह से डरती और उसके डर से रोती हैं, अल्लाह ने उन आंखों के लिए बड़ा बदला रखा है। नबी ﷺ ने अर्श-ए-इलाही के साया के हक़दारों में जिन सात ख़ुश नसीबों का ज़िक्र किया है, उनमें एक वह भी है जो तनहाई में अल्लाह को याद कर के रोने लगता है। इसी तरह आप ﷺ ने भी फ़रमाया है:

عَينانِ لا تمسُّهما النَّارُ: عينٌ بَكَت من خشيةِ اللَّهِ، وعَينٌ باتت تحرُسُ في سبيلِ اللَّهِ(صحيح الترمذي:1639)

तर्जुमा: "दो आंखें जन्नत की आग को नहीं छुएंगी: एक वह आंख जो अल्लाह के डर से तर हुई हो और एक वह आंख जिसने राह-ए-जिहाद में पहरा देते हुए रात गुज़ारी हो।"

इसी तरह आप ﷺ का फ़रमान है:

لا يلِجُ النَّارَ رجُلٌ بَكَى مِن خشيَةِ اللَّهِ حتَّى يَعودَ اللَّبنُ في الضَّرعِ ، ولا يجتَمِعُ غبارٌ في سبيلِ اللَّهِ ودخانُ جَهَنَّمَ (صحيح الترمذي:1633)

तर्जुमा: "अल्लाह के डर से रोने वाला जन्नत में दाख़िल नहीं होगा जब तक दूध थन में लौट न जाए (और यह महाल है) और जिहाद का ग़बार और जहन्नम का धुआं एक साथ जमा नहीं होंगे।"

जब हमें यह मालूम हो गया कि आंखें अल्लाह की अनमोल नेमत हैं और हमने जाने-अनजाने में इस नेमत का बहुत ही ग़लत इस्तेमाल किया है, अब हमें क्या करना चाहिए?

पहली फ़ुर्सत में पिछले तमाम गुनाहों से सच्ची तौबा करनी चाहिए। नबी ﷺ ने बताया है कि तौबा करने वाला ऐसे ही है जैसे बेगुनाह आदमी। तौबा के बाद सबसे अहम बात यह है कि हमें यह एहसास रहे कि हर उस नेमत के बारे में हमसे क़यामत के दिन सवाल किया जाएगा जिनका हमने इस्तेमाल किया है, चाहे वह नेमत दुनिया की हो या जिस्म की आंखों के बारे में सवाल किए जाने के मुताल्लिक़ सराहत के साथ क़ुरआन में मौजूद है:

إِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ أُولَٰئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْئُولًا (الاسراء:36)

तर्जुमा: "बेशक कान, आंख और दिल इनमें से हर एक से पूछा जाने वाला है।"

तीसरी बात यह है कि फ़हश चीज़ों के क़रीब भी न जाएं, यानी ऐसा कोई काम न करें जिससे इंसान हरामकारी तक पहुंच जाए। अल्लाह का फ़रमान है:

وَلَا تَقْرَبُوا الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ(الانعام:151)

तर्जुमा: "और बेहयाई के जितने भी तरीक़े हैं, उनके पास भी मत जाओ, चाहे वह आम हो या छिपा।" (सूरह अल-अनआम: 151)

रास्ते चलते हुए निगाहें नीची रखें और मोबाइल इस्तेमाल करते हुए उन तमाम मुक़ामात और जगहों से बचें जहाँ फ़हश चीज़ें मौजूद हैं, मसलन फ़हश वेबसाइट्स, अनजान लड़कियों से दोस्ती, उनसे वीडियो कॉल या इनबॉक्स शहवानी चैट वग़ैरह।

बज़ारिया मोबाइल तनहाई में आंखों से गुनाह करने वाले यह भूल जाते हैं कि उन्हें उनका ख़ालिक़ और मालिक देख रहा है, बल्कि उनके सारे करनामों को लिखने पर फ़रिश्तों को मामूर कर रखा है। वह सारी

बातें जानते और लिखते हैं जो हम अंधेरे या उजाले में अंजाम देते हैं। और एक आख़िरी बात यह है कि हम नेकी की तरफ़ रग़बत पैदा करें, आमाल-ए-सालिहा पर हमेशा की तरह और कसरत बढ़ाएं और फ़राइज़ और वाजिबात में कोताही न करें, ख़ासतौर पर पांच वक्त की नमाज़ों में। आपको वह प्यारी हदीस याद दिलाता चलूं जिसमें मुहम्मद ﷺ ने बताया है कि वुज़ू में चेहरे को धोते वक्त चेहरे का गुनाह मिटा दिया जाता है। आंखें चेहरे का हिस्सा हैं और वज़ू की बरकत से आंखों का गुनाह बल्कि सारे जिस्म का गुनाह माफ़ कर दिया जाता है और वह गुनाहों से पाक हो जाता है।

ऐ अल्लाह! हमारी आंखों की हिफ़ाज़त फ़रमा, इनमें हया और ख़ौफ़ डाल दे जिससे यह झुकी रहे और तेरे ख़ौफ़ से आंसू बहाती रहें। आमीन

[106].सोशल मीडिया और गुनेहगार आंखें

अल्लाह ने इंसानों के लिए दुनिया में सैकड़ों क़िस्म की नेमतें मुहय्या कराई हैं जिनको अहाता-शुमार में लाना महाल है। ख़ुद इंसान का वजूद उसकी एक अज़ीम कारीगरी और बेश-बहा (क़ीमती) नेमत है। उसने इंसानी जिस्म के अंदर ही न जाने कितनी नेमतें रखी हैं, उनमें से कुछ का हम एहसास तो कर सकते हैं मगर शुमार करना इतना ही मुश्किल है जितना के सारी नेमतों का इदराक और एहसास करना। एक जुमला में अल्लाह ने अपनी नेमतों के बारे में इंसानों को बता दिया कि अगर तुम उसकी नेमतों को गिनना चाहो तो गिन नहीं सकते हो।

नेमतों के इदराक और एहसास का एक नादिर वाक़िआ सऊदी अरब की दारुल हुकूमत रियाज़ में पेश आया और इस क़िस्म के वाक़िआ दुनिया में पेश आते होंगे। वाक़िआ ऐसा है कि एक 78 साल के अर्बी शख़्स को एक अस्पताल ने 24 घंटों का 600 रियाल का बिल पेश किया। वह बुज़ुर्ग बिल देख कर रोने लगा, लोगों ने वजह पूछी तो उन्होंने बताया कि सिर्फ़ 24 घंटों की ऑक्सीज़न का 600 रियाल देना पड़ रहा है जब कि मैं 78 साल से अल्लाह की ताज़ा हवा में सांस ले

रहा हूँ और कोई बिल नहीं अदा किया। क्या तुम्हें मालूम है कि मैं अल्लाह का कितना मक़रूज़ हूँ?.......... सुबहान-अल्लाह

अल्लाह ने हमें एक ख़ूबसूरत सांचे में ढाल कर मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) नेमतों से इस सांचे को मुज़य्यन किया। उन नेमतों में एक अहम तरीन आंखों की नेमत है। इसी आंख से दुनिया की रंगीनियत, उसकी नज़ाकत और हर चीज़ का हुस्न और जमाल देखते हैं और जो इन आंखों से महरूम हो जाए, पूरी दुनिया उसके सामने तारीक बन जाती है। यहां तक कि उसका अपना घर, अपना जिस्म और अपनी जायदाद सब पर अंधेरा छा जाता है। इस नज़ारे में ग़ौर किया जाए तो आंखों वालों के लिए बड़ी इब्रत और नसीहत है, मगर कम ही लोग हैं जो अल्लाह की निशानियों में ग़ौर और फ़िक्र और इब्रत और नसीहत तलाश करते हैं।

وَمِنْ آيَاتِهِ خَلْقُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَافُ أَلْسِنَتِكُمْ وَأَلْوَانِكُمْ ۚ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَآيَاتٍ لِّلْعَالِمِينَ

(الروم:22)

तर्जुमा: "और उसकी निशानियों में से आसमानों और ज़मीन की पैदाइश और तुम्हारी ज़बानों और रंगों का इख़्तिलाफ़ भी है। इसमें यक़ीनन दानिशमंदों के लिए बड़ी निशानियाँ हैं।"

अल्लाह आंखों की नेमत का तज़किरा करते हुए फ़रमाते हैं:

أَلَمْ نَجْعَل لَّهُ عَيْنَيْنِ (البلد:8)

तर्जुमा: "क्या हमने इंसानों के लिए दो आंखें नहीं बनाई?"

दूसरी जगह फ़रमाते हैं:

إِنَّا خَلَقْنَا الْإِنسَانَ مِن نُّطْفَةٍ أَمْشَاجٍ نَّبْتَلِيهِ فَجَعَلْنَاهُ سَمِيعًا بَصِيرًا (الانسان:2)

तर्जुमा: "बेशक हमने इंसानों को मिले-जुले नुत्फ़े से इम्तिहान के लिए पैदा किया और उसे सुनने वाला और देखने वाला बनाया।"

जब अल्लाह ने आंख जैसी अज़ीम नेमत दी है, तो इसके कुछ हुक़ूक़ भी हैं। नबी का फ़रमान है:

وإن لعينك عليك حقا(صحيح البخاري:1874، صحيح مسلم:1159)

तर्जुमा: "यानी तुम्हारे ऊपर आंखों के भी हुक़ूक़ है।"

आंखों का हक़ यह है कि उसे आराम पहुंचाए, उसके ज़रिए क़ुदरत की निशानियों का मुशाहिदा कर के उसके ख़ालिक़ की वहदानियत पर

ईमान लाए और ख़ालिस उसकी बंदगी बजा लाए, आंखों को नुक़सान पहुंचाने वाली चीज़ों से दूर रखे, उन्हें शहवत और फ़हश कामों से बचाए, उन बेशक़ीमती आंखों से सिर्फ़ जाइज़ चीजों को देखे और राह चलते आंखों का हक़ यह है कि निगाह नीचे कर के चले, मगर अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि सोशल मीडिया के ज़माने में आंखों से जितने गुनाह आज सरज़द होते हैं, उतने पूरे जिस्म से नहीं होते हैं। उसी एहसास ने मुझे यह तहरीर लिखने पर मजबूर किया, शायद कोई नसीहत पकड़ने वाला नसीहत पकड़ ले, आंखों की नेमत का हक़ीक़ी एहसास करे और उनका सही इस्तेमाल करे।

शायद बहुत सारे लोगों को मालूम न हो कि ज़िना का सुरूर जिस तरह शर्मगाह से होता है, आंखों से भी होता है। और आंखों का ज़िना बदनगाही, यानी फ़हश या हराम चीज़ों को देखना है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

زِنَا العَيْنِ النَّظَرُ، وزِنَا اللِّسانِ المَنْطِقُ، والنَّفْسُ تَمَنَّى وتَشْتَهِي، والفَرْجُ يُصَدِّقُ ذلكَ أوْ يُكَذِّبُهُ(صحيح البخاري:6612)

तर्जुमा: "आंखों का ज़िना (ग़ैर-महरम को) देखना है, ज़बान का ज़िना (ग़ैर-महरम से) बात करना है, दिल का ज़िना ख़्वाहिश और शहवत है और शर्मगाह इसकी तसदीक़ कर देती है या झूठला देती है।"

इस हदीस की रोशनी में आज के माहौल और मुआशरे का जाइज़ा लिया जाए तो पता चलता है कि इंटरनेट इस्तेमाल करने वाला आम आदमी आंखों के ज़िना में मुब्तिला है। समाज में पाए जाने वाले फ़हश मंज़र, नंगे कपड़े, स्कूल और बाज़ार और सवारीयों समेत भीड़-भाड़ वाली तमाम जगहों में मर्द और ज़न का इख़्तिलात अपनी जगह। रसूल-ए-अकरम ने अली रज़ि से फ़रमाया:

لا تُتبعِ النَّظرةَ النَّظرةَ ، فإنَّ لَكَ الأولى وليسَت لَكَ الآخرَةُ(صحيح أبي داود:2149)

"नज़र के बाद नज़र न उठाओ, क्योंकि तुम्हारे लिए पहली नज़र माफ़ है और दूसरी माफ़ नहीं है।"

इस हदीस का मतलब यह है कि अचानक जब किसी अजनबी औरत पर निगाह पड़ जाए, तो पहली निगाह माफ़ है, लेकिन जान-बूझ कर किसी लड़की पर पहली या दूसरी तीसरी निगाह डालना माफ़ नहीं है। नज़र लम्हा भर की होती है। इस लम्हा भर की नज़र से हमें रसूल ﷺ ने मना फ़रमाया है। इस जगह ज़रा ठहर कर सोचें कि जो जान-बूझ कर मोबाइल से घंटों-घंटों नंगी तस्वीरें और फ़हश वीडियो देखता है, उसकी आंख किस क़दर गुनाहगार और ज़िना-काम है? क्या लोगों को आंखों के इस भयानक ज़िना और संगीन गुनाह के बारे में एहसास है? हरगिज़ नहीं।

लड़कों से चंद क़दम आगे नौजवान लड़कियां फ़हश कामों में मुलव्विस नज़र आती हैं। वह आंखों में मस्नुई पलके लगा कर, एब्रो की ज़ेबाइश कर के और मुनक़्क़श लेंस लगा कर ख़ुद को संवारती हैं और अपनी आंखों से लोगों को ज़िना की तरफ़ दावत देती हैं। ऐसी लड़कियां स्कूल और बाज़ार से लेकर सोशल मीडिया के तमाम चैनल्स पर नज़र आती हैं, ख़ासतौर पर टिक टॉक को लड़कियों ने बेहयाई फैलाने का वसीला बना लिया है।

मेरे नवजवान भाइयों और बहनों! क्या आपको मालूम है कि जिन आंखों को कुछ घंटे और कुछ मिनट के लिए शह्वानी सुरूर पहुंचाते हैं, वही आंखें हमारे लिए ख़ूबसूरत जिस्म को बशमूल आंखें शौलो वाले जहन्नम में ले जाने का सबब बनती हैं। लिहाज़ा आंखों की नेमत का क़द्रदान बने, जिसने यह आंखें दे कर हम पर बड़ा एहसान किया है, उसका शुक्र बजा लाए और उन आंखों का इस्तेमाल इबरत और नसीहत हासिल करने के लिए करें।

आइए देखते हैं कि अल्लाह को कौन सी आंखें पसंद हैं? अल्लाह को वह आंखें पसंद हैं जिनमें शर्म और हया हो और जो झुकी हुई हों, यानी शर्म और हया से झुकने वाली आंखें रब-ए-ज़ुल्जलाल को पसंद

हैं। इसी लिए मोमिनों को निगाहें नीची रखने का हुक्म दिया है। फ़रमाने इलाही है:

قُل لِّلْمُؤْمِنِينَ يَغُضُّوا مِنْ أَبْصَارِهِمْ وَيَحْفَظُوا فُرُوجَهُمْ ۚ ذَٰلِكَ أَزْكَىٰ لَهُمْ ۗ إِنَّ اللَّهَ خَبِيرٌ بِمَا يَصْنَعُونَ

(النور:30)

"मुसलमान मर्दों से कहो कि अपनी निगाहें नीची रखें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करें। यही उनके लिए पाकीज़गी है। लोग जो कुछ करें, अल्लाह सब से खब़रदार है।"

ग़ौरतलब अमर यह है कि पहले अल्लाह ने मर्दों को निगाहें नीची रखने का हुक्म दिया है, फिर अगली आयत में औरतों को भी उस बात का हुक्म दिया है। और शर्मगाह की हिफ़ाज़त से पहले निगाहों की पस्ती का हुक्म एक बड़ी हिकमत पर्दा है। दरअसल तमाम गुनाहों की जड़ आंख है। आंख से ही देखने के बाद दिल में मनसूबा बनाया जाता है और फिर शर्मगाह हराम काम में मुलव्विस हो जाती है। गज़्ज़े-बसर का फ़ायदा अल्लाह ने पाकीज़गी क़रार दिया है, इसलिए जो लोग अपनी निगाहों को पस्त रखते हैं, उनके दिल और दिमाग़ और रूह और क़ल्ब सब बुराईयों से महफ़ूज़ और पाक साफ़ रहते हैं। अल्लाह को वह आंखें पसंद हैं जो उससे डरने वाली और ख़ौफ़ से रोने वाली हों, जैसा कि अल्लाह का फ़रमान है:

إِذَا تُتْلَىٰ عَلَيْهِمْ آيَاتُ الرَّحْمَٰنِ خَرُّوا سُجَّدًا وَبُكِيًّا(مريم:58)

तर्जुमा: "जब उनके सामने अल्लाह रहमान की आयात की तिलावत की जाती है तो वे सजदे में गिर पड़ते हैं और रोने-गिड़गिड़ाने लगते हैं।"

और नबी ﷺ का फ़रमान है:

ليسَ شيءٌ أحبَّ إلى اللَّهِ من قَطرتينِ، وأثَرينِ : قطرةُ دموعٍ من خشيةِ اللَّهِ ، وقطرةُ دمٍ تُهَراقُ في سبيلِ اللَّهِ ، وأمَّا الأثرانِ فأثرٌ في سبيلِ اللَّهِ ، وأثرٌ في فريضةٍ من فرائضِ اللَّهِ(صحيح الترمذي:1669)

तर्जुमा: "अल्लाह को दो बूँदें और दो निशानियां बहुत प्यारी हैं: एक बूँद जो अल्लाह के ख़ौफ़ की वजह से गिरी और दूसरी बूँद वह है जो अल्लाह के रास्ते में गिरी, और दो निशानियों में एक निशानी वह है जो अल्लाह की राह में लगे और दूसरी निशानी वह है जो अल्लाह के फ़राइज़ में से किसी फ़र्ज़ की अदा की हालत में लगी।"

जो आंखें अल्लाह से डरती और उसके डर से रोती हैं, अल्लाह ने उन आंखों के लिए बड़ा बदला रखा है। नबी ﷺ ने अर्श-ए-इलाही के साया के हक़दारों में जिन सात ख़ुश नसीबों का ज़िक्र किया है, उनमें एक

वह भी है जो तनहाई में अल्लाह को याद कर के रोने लगता है। इसी तरह आप ﷺ ने भी फ़रमाया है:

عَينانِ لا تمسُّهما النَّارُ: عينٌ بَكَت من خشيةِ اللَّهِ، وعَينٌ باتت تحرُسُ في سبيلِ اللَّهِ(صحيح الترمذي:1639)

तर्जुमा: "दो आंखें जन्नत की आग को नहीं छुएंगी: एक वह आंख जो अल्लाह के डर से तर हुई हो और एक वह आंख जिसने राह-ए-जिहाद में पहरा देते हुए रात गुज़ारी हो।"

इसी तरह आप ﷺ का फ़रमान है:

لا يلِجُ النَّارَ رجُلٌ بَكَى مِن خشيَةِ اللَّهِ حتَّى يَعودَ اللَّبنُ في الضَّرعِ ، ولا يجتَمِعُ غبارٌ في سبيلِ اللَّهِ ودخانُ جَهَنَّمَ(صحيح الترمذي:1633)

तर्जुमा: "अल्लाह के डर से रोने वाला जन्नत में दाख़िल नहीं होगा जब तक दूध थन में लौट न जाए (और यह महाल है) और जिहाद का ग़बार और जहन्नम का धुआं एक साथ जमा नहीं होंगे।"

जब हमें यह मालूम हो गया कि आंखें अल्लाह की अनमोल नेमत हैं और हमने जाने-अनजाने में इस नेमत का बहुत ही ग़लत इस्तेमाल किया है, अब हमें क्या करना चाहिए?

पहली फ़ुर्सत में पिछले तमाम गुनाहों से सच्ची तौबा करनी चाहिए। नबी ﷺ ने बताया है कि तौबा करने वाला ऐसे ही है जैसे बेगुनाह आदमी। तौबा के बाद सबसे अहम बात यह है कि हमें यह एहसास रहे कि हर उस नेमत के बारे में हमसे क़यामत के दिन सवाल किया जाएगा जिनका हमने इस्तेमाल किया है, चाहे वह नेमत दुनिया की हो या जिस्म की आंखों के बारे में सवाल किए जाने के मुताल्लिक़ सराहत के साथ क़ुरआन में मौजूद है:

إِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ أُولَٰئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْئُولًا(الاسراء:36)

तर्जुमा: "बेशक कान, आंख और दिल इनमें से हर एक से पूछा जाने वाला है।"

तीसरी बात यह है कि फ़हश चीज़ों के क़रीब भी न जाएं, यानी ऐसा कोई काम न करें जिससे इंसान हरामकारी तक पहुंच जाए। अल्लाह का फ़रमान है:

وَلَا تَقْرَبُوا الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ(الانعام:151)

तर्जुमा: "और बेहयाई के जितने भी तरीक़े हैं, उनके पास भी मत जाओ, चाहे वह आम हो या छिपा।" (सूरह अल-अनआम: 151)

रास्ते चलते हुए निगाहें नीची रखें और मोबाइल इस्तेमाल करते हुए उन तमाम मुक़ामात और जगहों से बचें जहाँ फ़हश चीज़ें मौजूद हैं, मसलन फ़हश वेबसाइट्स, अनजान लड़कियों से दोस्ती, उनसे वीडियो कॉल या इनबॉक्स शह्वानी चैट वग़ैरह।

बज़ारिया मोबाइल तनहाई में आंखों से गुनाह करने वाले यह भूल जाते हैं कि उन्हें उनका ख़ालिक़ और मालिक देख रहा है, बल्कि उनके सारे करनामों को लिखने पर फ़रिश्तों को मामूर कर रखा है। वह सारी बातें जानते और लिखते हैं जो हम अंधेरे या उजाले में अंजाम देते हैं। और एक आख़िरी बात यह है कि हम नेकी की तरफ़ रग़बत पैदा करें, आमाल-ए-सालिहा पर हमेशा की तरह और कसरत बढ़ाएं और फ़राइज़ और वाजिबात में कोताही न करें, ख़ासतौर पर पांच वक्त की नमाज़ों में। आपको वह प्यारी हदीस याद दिलाता चलूं जिसमें मुहम्मद ﷺ ने बताया है कि वुज़ू में चेहरे को धोते वक्त चेहरे का गुनाह मिटा दिया जाता है। आंखें चेहरे का हिस्सा हैं और वज़ू की बरकत से आंखों का गुनाह बल्कि सारे जिस्म का गुनाह माफ़ कर दिया जाता है और वह गुनाहों से पाक हो जाता है।

ऐ अल्लाह! हमारी आंखों की हिफ़ाज़त फ़रमा, इनमें हया और ख़ौफ़ डाल दे जिससे यह झुकी रहे और तेरे ख़ौफ़ से आंसू बहाती रहें। आमीन

===========

[107].सोशल मीडिया के दौर में मुस्लिम औरतो की मु'आशी जिद्द-ओ-जहद

इस्लाम एक फ़ितरी दीन है जो इंसान के तमाम फ़ितरी तक़ाज़ों को मिन-ओ-अन (हूबहू) पूरा करता है। भाग दौड़, जद्दोजहद, इंतज़ाम और इंसिराम (बंदोबस्त) और मेहनत और मज़दूरी एक मर्द के शायाने शान थी तो इस्लाम ने इंतिज़ामी उमूर से लेकर कसब-ए-मा'आश (रोज़ी कमाने) की ज़िम्मेदारी मर्दों के सुपुर्द की ताकि औरतों को घर से न निकलना पड़े और उनको घरेलू ज़िम्मेदारी देकर उसी मक़ाम को लाज़िम पकड़ने का हुक्म दिया।

इस तम्हीद को ज़हन में रखते हुए ज़रा आज के मुस्लिम समाज का जायज़ा लें तो मालूम होगा कि दीगर अक़्वाम की तरह मुस्लिम औरतें भी हर मैदान में मर्दों के शाना बशाना खड़ी नज़र आती हैं। वह कौन सा काम रह गया है जिसे एक औरत अंजाम नहीं दे रही है। क़त'ए नज़र इस से कि औरत भी हर काम कर सकती है, दीनी नुक़्ता ए नज़र से देखें कि क्या इस्लाम औरत को हर काम करने की छूट देता है, औरत को हर मैदान में निकलकर मर्दों के साथ काम करना चाहिए? इसका जवाब यह है कि नहीं। मर्दों के शाना बशाना चलने और हर

मैदान में औरतों के कामकाज की वजह से ज़माने में जो फ़ितने और बुराइयाँ आम हैं हमारी नज़रों से छुपी नहीं हैं इस लिए मुस्लिम ख़वातीन को चाहिए कि अपनी ज़िम्मेदारी और अपनी हदों को समझें और उसी हद में रहते हुए अपनी ज़िम्मेदारियों को निभाएं।

कस्ब-ए-म'आश (रोज़ी कमाने) के ताल्लुक़ से मुस्लिम ख़वातीन अब अपने शौहरों पर मुन्हासिर नहीं रहना चाहती हैं, बल्कि पश्चिमी तहज़ीब में जिस तरह आज़ाद होकर औरतों को कमाते हुए देखा जा रहा है, इसकी नक़ल मशरिक़ी ममालिक की मुस्लिम औरतें भी कर रही हैं जो बेहद अफ़सोसनाक और इस्लाम मुख़ालिफ़ है। यही वजह है कि आज किरदार वाले मुसलमान नहीं, सिर्फ़ नाम वाले मुसलमान बनते जा रहे हैं और ग़ैरों की मुशाबिहत इख़्तियार करने में कोई हर्ज महसूस नहीं कर रहे हैं। दरअसल इस तरह के खुले माहौल ने मुसलमानों में इलहाद और इर्तिदाद का दरवाज़ा खोला और आज बेशुमार लड़कियाँ ग़ैरों की गोद में जा बैठी हैं, रोज़ ब रोज़ यह सिलसिला बढ़ता जा रहा है और जो कभी इस्लाम के पासबान और मुहाफ़िज़ थे वही इस्लाम पर उंगली उठाकर अपनों और ग़ैरों के लिए फ़िस्क और फ़ुजूर और कुफ़्र और ज़लालत का सबब बन रहे हैं। अल-'इयाज़-बिल्लाह मुंदरिजा बाला पस-ए-मनज़र में मैं कहना चाहता हूँ कि मुस्लिम औरतों को

होश का नाख़ून लेना और आज़ादी के नाम पर इज़्ज़त और आब्रू और दीन और मिल्लत का नुक़सान नहीं करना चाहिए। इस सिलसिले में ख़वातीन के सरपरस्त असल ज़िम्मेदार हैं, उन्हें अपने घर की बहन, बेटी, बीवी और बहू को फ़ितने की आमाज-गाहो से दूर रखना चाहिए। ख़ासकर कस्ब-ए-मआश के लिए बिना ज़रूरत घर से बाहर नहीं जाने देना चाहिए।

बिलाशुबाह समाज में ऐसी भी ख़वातीन हैं जिनको मज़दूरी करने की ज़रूरत होती है क्योंकि कोई उनका कफ़ील नहीं होता है। ऐसी ख़वातीन शरई हदूद में रहते हुए घर में या घर से बाहर रहते हुए मज़दूरी कर सकती हैं। वे मज़दूरी करते हुए हर वक़्त यह अहसास रखें कि वे मुसलमान हैं ताकि उन्हें कैसे और किस तरह मज़दूरी करनी है यह पास और लिहाज़ रहे। इसी तरह वे ख़वातीन जिनको नौकरी की ज़रूरत नहीं है फिर भी नौकरी करना चाहती हैं तो नौकरी करना औरत के लिए जाइज़ है। ताहम हालात का दिरासा करें कि जो नौकरी करना चाहती हैं वह इस्लामी एतिबार से जाइज़ है या नहीं, या उस नौकरी की वजह से कहीं वे फ़ितने में मुबतला तो नहीं होंगी या क्या शरई हदूद की पाबंदी करते हुए वे नौकरी कर सकती हैं?

इन सारी बातों का अंदाज़ा लगाएं अगर औरत को हलाल नौकरी मिलती है और उसके करने में शरई तौर पर कोई रुकावट नहीं है और उसमें औरत के लिए दीन के एतिबार से कोई नुक़सान नहीं है तो ऐसी नौकरी करने में हरज नहीं है।

अब चलते हैं मज़मून के असल हिस्से की तरफ़, सोशल मीडिया के दौर में "वर्क फ्रॉम होम" (घर बैठे काम) से जुड़कर कमाने वाली मुस्लिम ख़वातीन की तरफ़। चूंकि ख़वातीन घर में होती हैं और बहुत सी ख़वातीन को घरेलू काम करने के बाद काफ़ी वक्त मिल जाता है या घरेलू काम से फ़ुर्सत न भी मिलती हो तो भी पैसा कमाना चाहती हैं, इस बाबत दो क़िस्म की ख़वातीन पाई जाती हैं।

पहली क़िस्म: एक क़िस्म की ख़वातीन वह हैं जो सोशल मीडिया मसलन फेसबुक, यूट्यूब, इंस्टाग्राम और टिकटॉक वग़ैरह पर नाच-गाने, फ़हश वीडियो और जिन्सी मसाइल की वीडियो बनाकर नश्र करती हैं और अवाम के व्यूज़ की बदौलत पैसा कमाने का सस्ता मौक़ा हाथ आ जाता है।

याद रखें, आप इस तरह से पैसे तो कमा लेंगी मगर एक-एक हरकत का अल्लाह के यहां आपको हिसाब देना होगा और यही नहीं बल्कि

जितने लोग और जब तक आपकी पोस्ट और वीडियोज़ देखते और शेयर करते रहेंगे, उन सब का गुनाह आपके सर जाएगा।

कुछ मुस्लिम लड़कियां जिनमें पढ़ी-लिखी ख़वातीन भी शामिल हैं, वे समझती हैं कि उनकी वीडियोज़ में कोई हरज नहीं है और लोगों की देखा-देखी क़िस्म-क़िस्म की वीडियोज़ बनाकर सोशल मीडिया पर मशहूर होने और पैसे कमाने की ग़र्ज़ से नश्र करती हैं। आप भी इन कामों से रुक जाएं।

चाहे पोएट्री की वीडियो, खाना बनाने की वीडियो, तिब्बी नुस्ख़े की वीडियो हो, घरेलू काम-काज की वीडियो हो, जिन्सी मसाइल की वीडियो हो, पढ़ने-पढ़ाने की वीडियो हो, ये सारी वीडियोज़ आपके लिए तबाही का सबब हैं। याद रखें कि एक औरत सरापा फ़ितने का बाइस है। आप वीडियो में अपना हाथ दिखाते हैं या चेहरा दिखाते हैं या पूरा बदन दिखाते हैं या बग़ैर जिस्म के सिर्फ़ आवाज़ रिकॉर्ड करते हैं, यह सब फ़ितने का सामान है। एक औरत को बग़ैर ज़रूरत के अजनबी मर्दों से बात करने की इजाज़त नहीं है फिर पुरकशिश अंदाज़ में वीडियोज़ बनाकर सोशल प्लेटफॉर्म पर जहां पूरी दुनिया के लोग देख

और सुन सकते हैं नश्र करने की कैसे इजाज़त होगी? ऐ काश मेरी इस बात से किसी बहन को नसीहत मिल जाए।

दूसरी क़िस्म: सोशल मीडिया के माध्यम से कमाने वाली एक क़िस्म की वे ख़वातीन हैं जिनको वीडियोज़ बनाने की ज़रूरत नहीं पड़ती, न ही उसमें आवाज़ रिकॉर्ड करने की ज़रूरत होती है बल्कि सिर्फ़ कुछ देखने या पैसा लगाने या असाइनमेंट बनाने जैसे काम करने होते हैं।

घर बैठे ख़वातीन, विशेषकर ज़रूरतमंद ख़वातीन, इस दूसरी क़िस्म से फ़ायदा उठाकर पैसा कमा सकती हैं मगर इस क़िस्म की नियत के काम के लिए बहुत एहतियात की ज़रूरत है। आप इस तरह का कोई काम करना चाहती हैं तो पहले इस काम की मुकम्मल तफ़सील जानें, फिर इसके बारे में उलमा से रहनुमाई हासिल करें और जब आपको मालूम हो जाए कि यह काम इस्लामी एतिबार से करना जायज़ है, फिर इस काम को करना शुरू करें।

इस सिलसिले में कुछ मुफ़ीद बातों से आपको आगाह करना मुनासिब समझता हूं

(1) वीडियो देखने वाला काम: बहुत सारे काम ऐसे मिलेंगे जिनमें आपसे कहा जाएगा कि आपको कुछ नहीं करना है, बस वीडियो देखना है। वे दरअसल विभिन्न प्रकार के प्रचार होते हैं। इन वीडियो को देखें, लाइक करें और दूसरों को शेयर भी करें। साथ ही इस चैनल को सब्सक्राइब भी करना होता है। इस क़िस्म के काम से जुड़ने के लिए पहले आपसे एक बड़ी रक़म वसूल की जाती है।

इस काम के बारे में आपको सही बात बता दूं कि ऐसा कोई काम न करें जिसमें आपको वीडियो देखना पड़े, लाइक करना पड़े और शेयर करना पड़े और सब्सक्राइब करना पड़े। वैसे भी यह फ़िज़ूल और लावारिस काम है। मज़ीद यह कि ये वीडियो दरअसल तिजारती इदारों के प्रचार होते हैं और आप नहीं जानते हैं कि कौन सी तिजारत हलाल है और कौन सी हराम। इसी तरह उनमें कौन सी फ़र्ज़ी तिजारत है और कौन धोखेबाज़ी है या सूद और हराम काम में मुलव्विस है, पता नहीं चलेगा। नतीजतन प्रचार में कितनी ग़ैर-अख़लाकी और फ़हश तस्वीरें, म्यूज़िक और जानदार की तस्वीरें होंगी। आप अगर उन वीडियो को देखती हैं, लाइक करती हैं, शेयर करती हैं और चैनल सब्सक्राइब करती हैं तो उन वीडियो से मुताल्लिक़ गुनाहों में आप भी शरीक होती

हैं, बल्कि शेयर करके दूसरों को भी गुनाहों की दावत देती हैं। इसलिए वीडियो देखने वाले कामों से दूर रहें।

(2) असाइनमेंट वर्क: आजकल बहुत सारी ख़वातीन (महिलाएं) असाइनमेंट वर्क करती हैं। इसमें पहले एक बड़ी क़ीमत रजिस्ट्रेशन के नाम पर मांगी जाती है फिर ख़ास संख्या में मेंबर को जोड़ना भी होता है, जैसे 7 मेंबर को इस संस्था में से जोड़ना होगा और फिर कुछ लिखने का काम दिया जाता है। इसे तैयार करके संस्था को देना होता है, इसके बदले संस्था मामूली पैसा देती है।

आप इस तरह का कोई भी असाइनमेंट वाला काम न करें जिसमें आपको पहले मोटी रक़म देनी पड़े और 7 या 10 लोगों को जोड़ना भी पड़े। आपसे जो रक़म बन जाती है, आप ने अंदाज़ा लगाया है, हक़ीक़त यह है कि यह संस्था आपके पैसे से कमाती है और उसी कमाई से थोड़ा आपको देती है।

आप असाइनमेंट का सिर्फ़ वही काम करें जिसमें कोई रक़म न लगानी पड़े और कोई मेंबर जोड़ना न पड़े और वह असाइनमेंट वर्क अपने

आप में हलाल भी हो। अगर ऐसा काम न मिले तो इस काम को छोड़ दें।

(3) ख़रीद और फ़रोख़्त का काम: बहुत सारी ऑनलाइन तिजारत और ऑनलाइन शॉप्स हैं। ये तिजारती इदारे लोगों को मौक़ा फ़राहम करते हैं कि उनसे जुड़ कर काम किया जाए यानी उनके सामान को फ़रोख़्त करें या उनके सामान का प्रचार करें। इस क़िस्म की तिजारत में हराम और हलाल की मुख़्तलिफ़ सूरतें हो सकती हैं इसलिए आप जो काम करना चाहती हैं पहले इसकी नियत जानें फिर किसी आलिम से रहनुमाई लेकर ही शुरू करने या न करने का फ़ैसला लें।

बुनियादी तौर पर यह मालूम रहे कि हराम चीज़ का प्रचार करना जायज़ नहीं है और हलाल चीज़ का प्रचार भी ग़लत तरीक़े से यानी झूठ बोलकर या ग़लत सिफ़त बताकर बेचना जायज़ नहीं है। लिहाज़ा ऐसे प्रचार वाला काम न करें जिसमें ग़ैर-शरई पहलू हो। इसी तरह ख़रीद और फ़रोख़्त में एक चीज़ बेचने के बाद जब तक ख़रीदार उस पर कब्ज़ा न कर ले दूसरे से बेचना जायज़ नहीं है।

याद रहे कि जब आप किसी इदारे से नहीं जुड़े हैं और लोगों को उस इदारे का सामान दिखाकर बेचते हैं तो लोग समझेंगे कि आप इन

चीज़ों के मालिक हैं, इस्लाम की रू से यह अमल जायज़ नहीं है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ऐसी चीज़ को बेचने से मना किया है जो हमारी मिल्कियत नहीं है। हां, किसी इदारे से जुड़े हैं तो इदारे का वकील बनकर जिस क़ीमत में बेचने पर इत्तेफ़ाक हुआ है बेच सकते हैं।

वकील के लिए फ़ायदा लेने की दो सूरतें हो सकती हैं। एक सूरत तो यह है कि मालिक कहे मेरा फुलाँ सामान इतने का है, इसमें तुम अपना फ़ायदा रखकर आगे बेचो, मुझे फुलाँ सामान की इतनी क़ीमत चाहिए। दूसरी सूरत यह है कि मालिक कहे तुम मेरे मुत'अय्यन क़ीमत पर सामान बेचो मैं तुम्हें हर सामान पर इतना मुनाफ़ा अलग से दूंगा। यह दोनों सूरतें जायज़ हैं।

(4) ज़ारी ऐप्स या ब्लॉग और वेब के ज़रिये कमाना: बहुत सी ख़वातीन तकनीक का इस्तेमाल जानती हैं तो ख़ुद की कोई एप्लिकेशन बना लेती हैं या वेब या ब्लॉग बनाकर एडसेंस से प्रचार लेकर कमाती हैं। इस मामले में इतना कहूंगा और आप भी इस बात को जानते हैं कि गूगल के ज़रिये आप प्रचार लेते हैं तो अमूमन आपको नहीं मालूम होगा कि जिस तिजारत के बारे में प्रचार है, इस तिजारत की क्या

हक़ीक़त है, इसमें हराम और हलाल का क्या पहलू है। बल्कि अपनी आँखों से इस प्रचार में ही कई ख़ामियाँ और इस्लाम मुखालिफ़ उमूर का मुशाहिदा करती होंगी जैसे मौसिकी, जानदार की तस्वीर, ग़ैर-शरई तिजारत का प्रचार और फ़हश तस्वीर वग़ैरह। इसलिए गूगल से प्रचार लेकर कमाने की कभी न सोचें। इससे बेहतर है मेहनत और मज़दूरी करके कमाएं अगर आपको घरेलू एतिबार से कमाने की ज़रूरत है। इस सिलसिले में मज़ीद मालूमात के लिए मेरे ब्लॉग पर मेरा मज़मून "YouTube की कमाई पर नौजवानों की फ़रीफ़्तगी और इस्लाम" से मुताला करें।

(5) इंवेस्टमेंट प्लान: कमाई करने के बहुत सारे मौक़े इंवेस्टमेंट से ताल्लुक़ रखते हैं। मुख़्तलिफ़ क़िस्म के इदारों में पैसे लगाकर रोज़ाना या महीने की बुनियाद पर उ़मूमन मुअय्यन मुनाफा दिया जाता है। इस किस्म से संबंधित जो भी ऑनलाइन इंवेस्टमेंट इदारे हैं, आप आंख बंद करके इसमें पैसा लगाकर कमाई करना शुरू न करें। पहले इस इदारे की मुकम्मल जानकारी हासिल करें, फिर उन सारी तफ़सील को मुस्तनद आलिम से बताकर रहनुमाई हासिल करें ताकि आपका पैसा हलाल जगह इंवेस्ट हो और आपकी कमाई हलाल हो। बहुत सारे फ्रॉड इदारे होते हैं जो आपसे पैसा लेकर ग़ायब हो जाएंगे, पता भी

नहीं चलेगा और बहुत सारे इदारे हराम तिजारत या सूदी लेन-देन में मुलव्विस होते हैं। उनसे कमाई करना जाइज़ नहीं है। और इसी तरह बहुत सारे तिजारती इदारे हलाल चीज़ों की तिजारत तो करते हैं मगर लेन-देन, मामलात, तरीक़-ए-कार और मुनाफ़े में शरई क़बाहतें होती हैं। इसीलिए किसी भी इंवेस्टमेंट प्लान से जुड़ने से पहले इसके बारे में आगाही ज़रूरी होती है और आगाही के साथ इस इदारे में रक़म लगाना शरअन जाइज़ है कि नहीं, यह भी जानना ज़रूरी है।

(6) नेटवर्किंग मार्केट से कमाई करना: बहुत से क़िस्म के इदारों में पैसा कमाने का एक तरीक़ा मेंबरसाज़ी है। पहले आप एक मख़सूस रक़म देकर इसमें शामिल होते हैं फिर आपको ज़रूरी तौर पर चंद मेंबर बनाने होते हैं। फिर जुड़ने वाले वह सारे भी अपने-अपने लिए चंद मेंबर बनाते हैं, इस तरह मेंबरों का एक जाल बनता जाता है। इसी कारण इसे नेटवर्किंग मार्केट कहा जाता है, जैसे भारत में वेस्टेज मार्केटिंग है। इसी तरह के किसी इदारे से जुड़कर कमाई करना जायज़ नहीं है। इसमें मुत'अद्दिद क़िस्म की शरई ख़ामियाँ हैं। उनको जानने के लिए मेरे ब्लॉग पर "नेटवर्क मार्केटिंग की शरई हैसियत" का मुताल'अ करें।

(7) सोशल मीडिया पर ज़ाती तिजारत: बहुत सी ख़वातीन सोशल मीडिया पर ऑनलाइन अपनी तिजारत भी करती हैं जैसे कपड़ों की और कॉस्मेटिक्स सामानों की। अगर तिजारत हलाल है, यानी आप हलाल चीज़ों की तिजारत करती हैं और तिजारत के उसूल भी जायज़ हैं, तो इस तरह सोशल मीडिया पर तिजारत करने में हरज नहीं है। ताहम इतना ज़रूर याद रखें कि आप एक औरत हैं, औरत फ़ितने का सबब हो सकती है, जैसे-तैसे अपनी तिजारत का प्रचार न करें, जैसे-तैसे तमाम लोगों से बेतकल्लुफ़ राब्ता और बात-चीत न करें और दौलत के हुसूल के लिए दुनिया की देखा-देखी कुछ भी न करती जाएं, बल्कि जो भी करें सोच-समझकर और इस्लामी हुदूद में करें।

मैंने यहाँ पर सिर्फ़ 7 क़िस्म के ज़राए आमदनी का ज़िक्र किया है जबकि आज दुनिया में ग्लोबलाइज़ेशन की वजह से हज़ारों ज़राए मआश पाये जाते हैं। उन सब को यहाँ ज़िक्र नहीं किया जा सकता है। हमारा असल मक़सद वो मुस्लिम ख़वातीन हैं जो घरों में फ़ुर्सत की वजह से और लोगों की देखा-देखी किसी भी तरह से पैसे कमाने की दौड़ में लगी हुई हैं। मक़सद होता है पैसा आना चाहिए, चाहे जिस तरह से हो। यह ग़लत सोच है। अल्लाह ने आप पर किस क़दर मेहरबानी की है, इसमें आपको फ़िक्र-ए-मआश से आज़ाद किया है तो

इसका ग़लत फ़ायदा न उठाएँ, बल्कि अपनी फ़ुर्सत को रब की तरफ़ से ग़नीमत जानकर दीन और ईमान के लिए मेहनत करें। आप वाजिबात की अदा (जिनमें घरेलू और फ़राइज़-ए-दीनी दोनों शामिल हैं) के बाद दीनी किताबों का मुताल'अ करें, जय्यद उलमा के इल्मी बयानात से मुस्तफ़ीद हों, ख़ुद को इबादत और ज़िक्र के लिए मुतफ़र्रे' करें और अपने साथ दूसरों को भी इल्म और अमल की तरफ़ राग़िब करने की जद्दोजहद करें।

आज सोशल मीडिया की बदौलत औरतों में बहुत बे-राह रवि पाई जाती है, उनको राह-ए-रास्त की तरफ़ रहनुमाई का काम करें। आप रोज़ाना एक-एक मुनज़्ज़म शेड्यूल बना लें जिसमें घरेलू काम-काज से लेकर इल्म और अमल और दावत और तब्लीग़ सारे उमूर दर्ज हों और इस शेड्यूल के मुताबिक़ अपने शब-ओ-रोज़ गुजारें। इस तरह आपके औक़ात भी उम्दा गुज़रेंगे और आख़िरत भी संवरती रहेगी। हम सब को ख़ासकर औरतों को हर वक़्त यह हदीस ध्यान में रखना चाहिए। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया: क़यामत के दिन किसी बंदे के दोनों पैर नहीं हटेंगे यहाँ तक कि उससे यह न पूछ लिया जाए: उसकी उम्र के बारे में कि उसे किन कामों में ख़त्म किया, और उसके इल्म के बारे में कि उस पर क्या अमल किया, और

उसके माल के बारे में कि उसे कहाँ से कमाया और कहाँ ख़र्च किया, और उसके जिस्म के बारे में कि उसे कहाँ खपाया (सहीह तिर्मिज़ी: 2417)

अल्लाह तआला से दुआ करता हूँ कि उम्मत की बहनों को दीन की सही समझ अता फ़रमाए और उनके इल्म के मुताबिक़ अमल की तौफ़ीक़ दे। आमीन।

==================

[108].हज का मुख़्तसर और आसान तरीक़ा

(1) मीक़ात (जहां से एहराम बांधा जाता हैं)

एहराम हज या 'उम्रा में दाख़िल होने की निय्यत का नाम है न कि कपड़े कामीक़ात पहुंचकर ग़ुस्ल करें और सिर्फ़ आ'ज़ा-ए-बदन (शरीर के अंग) पे ख़ुशबू इस्ते'माल करें अगर नहाना मुज़िर-ए-सेह्हत (स्वास्थ्य के लिए हानिकारक) हो तो ग़ुस्ल छोड़ दे ग़ैर-ज़रूरी बाल और नाख़ून काटने का त'अल्लुक़ (सम्बन्ध) एहराम से नहीं है उन्हें काटने की हाजत (ज़रूरत) होतो काटे वर्ना (नहीं तो) छोड़ देएहराम का कपड़ा लगाएं मीक़ात पे इज़्दिहाम (भीड़) की वजह से मीक़ात से पहले भी किसी जगह से एहराम का लिबास लगा सकते हैं मगर मीक़ात पे निय्यत करनी ज़रूरी है

हज की तीनों क़िस्म (इफ़राद, क़िरान, तमत्तो') में से किसी एक को इख़्तियार (पसंद) कर के उस की निय्यत करें

इफ़राद की निय्यत: "لبیک حجا"

क़िरान की निय्यत: لبیک عمرۃ وحجا

और तमत्तो' की निय्यत: لبیک عمرۃ

मीक़ात से लेकर हरम तक तलबिया पुकारते चलें तलबिया यह है:

لبیک اللھم لبیک، لبیک لاشریک لک لبیک، ان الحمد والنعمۃ لک والملک لاشریک لک

(2) मस्जिद-ए-हराम (मक्का-मुकर्रमा)

मुतमत्ते': 'उम्रा के लिए तवाफ़ और स'ई करे फिर बाल छोटा कर के हलाल हो जाए

क़ारिन: तवाफ़-ए-कुदूम करे (यह मुसतहब है) और हज व 'उम्रा की स'ई करे

क़ारिन और मुफ़रद एहराम में बाकी रहेंगे और दस तारीख़ को रमी-ए-जिमार (शैतान को कंकरियां मारना) और हल्क़ (बाल मुंडना) या तक़्सीर के बाद हलाल होंगे मगर बीवी तवाफ़ ए इफ़ाज़ा (और अगर स'ई हो तो स'ई करे) ही हलाल होगी

तवाफ़ की कोई ख़ास दु'आ नहीं है जो चाहे सात चक्करों में दु'आ करे अलबत्ता (लेकिन) रुक्न-ए-यमानी और हजर-ए-असवद के दरमियान यह दु'आ पढ़े:

رَبَّنَا آتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِي الآخِرَةِ حَسَنَةً وَقِنَا عَذَابَ النَّارِ۔

सफ़ा व मरवा पे हर चक्कर में तीन तीन बार यह दु'आ पढ़े:

'لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيکَ لَهٗ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ يُحْيِي وَيُمِيتُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْئٍ قَدِيرٌ، لَا إِلٰهَ إِلاَّ اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيکَ لَهٗ أَنْجَزَ وَعْدَهٗ وَنَصَرَ عَبْدَهٗ وَهَزَمَ الْأَحْزَابَ وَحْدَهٗ'۔

(3) मिना (यौमुत-तरविया)

8/ ज़िलहिज्जा को तमत्तो' करने वाला अपनी रिहाइश (निवास) ही से हज का एहराम बांधे

क़ारिन व मुफ़रद अगर हज की निय्यत कर के पहले से ही एहराम में बाकी हो तो उसी हालत (स्थिति) में मिना चला जाए या 8/ ज़िलहिज्जा को हज की निय्यत कर रहे हो तो उस की दो सूरतें है या तो तवाफ़-ए-कुदूम और स'ई कर के मिना जाए या बग़ैर तवाफ़ व स'ई डायरेक्ट (सीधा) मिना चला जाए

एहराम लगाकर मिना की तरफ़ मुतवज्जह हो यहां ज़ुहर, 'अस्र, मग़रिब, 'इशा और फ़ज्र पांच वक़्तों की नमाज़ अपने अपने वक़्तों पे कसर के साथ पढ़े

(4) अरफ़ात (यौम-ए-'अरफ़ा)

9/ ज़िलहिज्जा को तुलू'-ए-आफ़ताब के बाद मैदान-ए-'अरफ़ात पहुंच कर वहां किसी भी जगह ठहरें पहाड़ पे चढ़ना और किसी ख़ास जगह वुक़ूफ़ करने की मेहनत करना ग़लत है

ज़ुहर व 'अस्र की नमाज़ जम' ए तक़दीम (ज़ुहर के वक़्त ज़ुहर और 'अस्र दोनों) के साथ कसर (दो-दो रक'अत) करे

नमाज़ पढ़ कर ग़ुरूब ए शम्स तक दु'आ, ज़िक्र, इस्तिग़फ़ार और तज़र्रु' (मिन्नत) में मसरूफ़ (व्यस्त) रहे

अरफ़ा की सबसे बेहतरीन दु'आ यह है:

'لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيكَ لَهٗ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ'

(5) मुज़दल्फ़ा (शब-ए-'ईद)

ग़ुरूब ए शम्स के बाद मग़रिब की नमाज़ पढ़े बग़ैर अरफ़ात से मुज़दल्फ़ा जाए

वहां पर मग़रिब और 'इशा की नमाज़ एक साथ क़स्र से पढ़े

फिर रात भर आराम करे फ़ज्र की नमाज़ के बाद ज़िक्र-ओ-अज़कार और दु'आ व इस्तिग़फ़ार करे

सूरज तुलू' होने से पहले मिना की तरफ़ कूच करे

कमज़ोर, 'उम्र-रसीदा, मा'ज़ूर और ज़रूरतमंद लोगों के लिए आधी रात के बाद भी मुज़दल्फ़ा जाना जाइज़ हैं

(6) यौम-ए-नहर (क़ुर्बानी का दिन)

10/ ज़िलहिज्जा को फ़ज्र के बाद मिना जाकर पहले एक ही जमरा (जो मक्का से मुत्तसिल (क़रीब) हैं) को तकबीर के साथ सात कंकरी मारे

कंकरी रास्ते या मिना व मुज़दल्फ़ा कहीं से भी चुनीं जा सकती हैं उस की जसामत (size) चने के बराबर हो और उसे धोने की भी ज़रूरत नहीं

हज-ए-तमत्तो' और क़िरान करने वाला क़ुर्बानी करे

रमी-ए-जमरा और हल्क़ (बाल मुंडना) (या यह दोनों या

इन के 'अलावा दो 'अमल) से तहल्लुल अव्वल हासिल हो जाता हैं जिस की वजह से बीवी के 'अलावा सारी पाबंदियां ख़त्म हो जाती हैं और जब एक और चीज़ करलें तवाफ़ या स'ई तो तहल्लुल सानी (यौम-ए-नहर को किसी तीन 'अमल से) या'नी मुकम्मल हलाल हो जाता है इस से बीवी भी हलाल हो जाती हैं

अगर उस ने क़ुर्बानी की रक़म जम'

कर दी है तो बिला-इंतिज़ार उस्तरे से बाल मुंडवाए या क़ैंची से पुरे सर से बाल छोटा करवाएं

मुतमत्ते', क़ारिन और मुफ़रद सभी हज का तवाफ़ (इफ़ाज़ा) करें

मुतमत्ते' हज की स'ई करे क़ारिन व मुफ़रद भी स'ई करे अगर उन्होंने तवाफ़-ए-क़ुदूम के साथ स'ई न की हो

तमत्तो' करने वाले के लिए आज के काम बित्तरतीब रमी, क़ुर्बानी, हल्क़, तक़्सीर, तवाफ़ और स'ई है इन कामों में से कोई आगे या पीछे हो जाए तो कोई हरज नहीं या'नी यह तरतीब (क्रम) वाजिब (ज़रूरी) नहीं हैं

(7) अय्याम-ए-तशरीक़ (रमी-ए-जमरात के अय्याम)

अगर किसी 'उज़्र (मजबूरी) की बिना पर यौम-ए-नहर को तवाफ़ इफ़ाज़ा न कर सके तो अय्याम-ए-तशरीक़ में भी कर सकते हैं यहां तक कि लौटते वक़्त एक ही निय्यत में तवाफ़-ए-इफ़ाज़ा और तवाफ़-ए-विदा' भी कर सकते हैं

दस ज़िलहिज्जा का काम कर के मिना लौट आए और 11,12,13 ज़िलहिज्जा की रात वहीं बसर करे

तीनों दिन तीनों जमरात को

(पहले जमरा-ए-ऊला फिर जमरा-ए-वुस्ता फिर जमरा-ए-'उक़्बा) ज़वाल के बाद सात सात कंकरी मारे

पहले जमरे की रमी कर के क़िबला-रुख़ हो कर लंबी दुआएं करे फिर दूसरे जमरे की रमी कर के क़िबला-रुख़ हो कर लंबी दुआ करे और तीसरे जमरे की रमी के बाद बग़ैर दु'आ रुख़्सत हो जाए

रमी-ए-जमरात अल्लाह की 'इबादत और उसके हुक्म की ता'मील है न कि शैतान को कंकरी मारना इस लिए शैतान नाम देना भी ग़लत है

अगर ता'जील (जल्दी) करनी होतो 12/ ज़िलहिज्जा की कंकरी मार कर ग़ुरूब ए आफ़ताब से पहले मिना छोड़ दे

हज के मज़्कूरा-बाला सारे आ'माल अंजाम देने के बाद जब अपने वतन लौटने लगे तो तवाफ़-ए-विदा' करे और फिर मक्का में न ठहरे

अब आप का हज मुकम्मल हो गया ज़ियारत ए मदीना का त'अल्लुक़ (सम्बन्ध) हज से नहीं है सऊदी के बाहर से आने वाले 'उमूमन ज़िंदगी में एक बार यहां आते हैं तो ज़ियारत ए मदीना से भी मुस्तफ़ीद हो जाए तो बेहतर है

अरकान, वाजिबात और मम्नू'आत के अहकाम (आदेश)

हज के अरकान

(1) एहराम (हज की निय्यत करना)

(2) मैदान-ए-'अरफ़ात में ठहरना (रूकना)

(3) तवाफ़-ए-इफ़ाज़ा करना

(4) सफ़ा व मरवा की स'ई करना

हज के वाजिबात

(1) मीक़ात से एहराम बांधना

(2) सूरज गुरूब होने तक अरफ़ा में ठहरना

(3) 'ईद की रात मुज़दल्फ़ा में गुज़ार ना

(4) अय्याम-ए-तशरीक़ की रातें मिना में बसर (गुज़ारना) करना

(5) जमरात को कंकरी मारना

(6) बाल मुँडवाना या कटवाना

(7) तवाफ़-ए-विदा' करना (हैज़ व निफ़ास वाली औरत के लिए नहीं है)

मम्नू'आत ए एहराम

हालात-ए-एहराम में नौ काम मम्नू' (मना) है जिन्हें महज़ूरात ए एहराम कहा जाता हैं

(1) बाल काटना

(2) नाख़ून काटना

(3) मर्द को सिला हुआ कपड़ा पहनना

(4) ख़ुशबू लगाना

(5) मर्द का सर ढाँपना

(6) 'अक़्द-ए-निकाह करना

(7) बीवी को शहवत (ख़्वाहिश) से चिमटना

(8) जिमा' (मुबाशरत) करना

(9) शिकार करना औरत के लिए दस्ताना (मोज़े) और बुर्क़ा' व नक़ाब मना' है ताहम (फिर भी) अजनबी मर्दों से पर्दा करेंगी

अरकान, वाजिबात और मम्नू'आत के अहकाम

अगर किसी ने हज के चार अरकान में से कोई एक रुक्न भी छोड़ दिया तो हज सहीह नहीं होगी मज़्कूरा-बाला सात वाजिबात में से कोई एक वाजिब छूट जाता है तो हज सहीह होगा मगर तर्क ए वाजिब पे दम देना होगा दम की ताक़त न हो तो दस रोज़ा रखले तीन अय्याम-ए-हज में और सात वतन वापस होने परजो शख़्स ला-'इल्मी (बेख़बरी) में मम्नू'आत ए एहराम में से किसी का इर्तिकाब कर ले तो इस पर कुछ भी नहीं है लेकिन अगर जान बूझ कर इर्तिकाब किया तो फ़िदया (जुर्माना) देना होगा (अगर एक से लेकर पांच तक में से किसी का

इर्तिकाब किया हो) फ़िदया (जुर्माना) में या तो तीन रोज़ा या एक ज़बीहा या छ मिस्कीनों को खाना खिलाना होगा शिकार कर ने की सूरत में उसी के मसल (की तरह) जानवर ज़ब्ह करना होगा 'अक़्द-ए-निकाह से हज बातिल हो जाता हैं अगर तहल्लुल अव्वल से पहले जिमा' कर ले तो औरत व मर्द दोनों का हज बातिल हो जाएगा और अगर तहल्लुल अव्वल के बाद तवाफ़-ए-इफ़ाज़ा से पहले जिमा' (मुबाशरत) करे तो हज सहीह होगा मगर उस का एहराम ख़त्म हो जाएगा वो हुदूद-ए-हरम से बाहर जा कर फिर से एहराम बांधे ताकि तवाफ़-ए-इफ़ाज़ा कर सके और फ़िदया (जुर्माना) में एक बकरी ज़ब्ह करे

============

[109].हज पर जाने से पहले माफ़ी मांगना।

हज पर जाने से पहले पूरे ख़ुलूस के साथ अपने गुनाहों से तौबा करनी चाहिए और आइंदा न करने का 'अज़्म-ए-मुसम्मम (पुख़्ता इरादा) किया जाए। अगर किसी को दुख पहुँचाया हो तो उससे माफ़ी माँगनी चाहिए, किसी का हक़ दबाया हो तो माफ़ी के साथ उसे वापस कर देना चाहिए। हक़दार न मिले तो सदक़ा करना चाहिए, साथ ही नियत रहे कि जब मिलेगा तो वापस कर देंगे।

इस्लाम में हुक़ूक़-उल-इबाद की अहमियत पर बहुत ज़्यादा उभारा गया है, और यह वह हक़ है जिसको ख़ुद बंदा ही माफ़ कर सकता है, वरना अल्लाह माफ़ नहीं करेगा। अगर इसी हालत में दुनिया से चला गया तो आख़िरत में उसकी नेकी मज़लूम को दे दी जाएगी।

रसूल-ए-अकरम (ﷺ) का इरशाद-ए-गिरामी है:

»من كانت عنده لأخيه مظلمةٌ فليتحلَّل منه قبل ألا يكون درهمٌ ولا دينارٌ، إن كان له عملٌ صالحٌ أُخِذ منه بقدر مظلَمته، وإن لم يكن له حسناتٌ أُخِذ من سيئات صاحبِه فحُمِل عليه«

जिस किसी ने अपने भाई पर ज़ुल्म किया हो तो उससे उस दिन से पहले मामला हल कर ले जिस दिन उसके पास दिरहम और दिनार बाक़ी न रहेंगे। अगर उसके पास कोई नेक अमल होगा तो उसके ज़ुल्म के बराबर ले लिया जाएगा और अगर उसके पास नेक अमल न होंगे तो मज़लूम शख़्स की बुराइयाँ उसके खाते में डाल दी जाएंगी।"

और सहीह मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि नबी करीम (ﷺ) ने सहाबा-ए-किराम से पूछा: 'तुम में मुफ़लिस कौन है?'

सहाबा ने कहा: 'जिसके पास दिरहम और दिनार न हों वह मुफ़लिस है।'

आप (ﷺ) ने फ़रमाया:

«المُفلِسُ من أمتي: من يأتي بصلاةٍ وصيامٍ وزكاةٍ، ويأتي وقد شتمَ هذا، وقذفَ هذا، وضربَ هذا، وسفكَ دمَ هذا، وأخذَ مالَ هذا، فيأخُذ هذا من حسناته، وهذا من حسناته، فإن فنِيَت حسناتُه قبل أن يُقضَى ما عليه أُخِذ من خطاياهم فطُرِحَت عليه ثم طُرِح في النار»

मेरी उम्मत का मुफ़लिस वह है जो (रोज़-ए-क़यामत) नमाज़, रोज़े और ज़कात के साथ आएगा। और उस हालत में आएगा कि उसने किसी

को गाली दी होगी, किसी की चोरी की होगी, किसी को मारा होगा, किसी का ख़ून बहाया होगा, किसी का माल खाया होगा। तो उसकी नेकियाँ उनको दे दी जाएंगी। और अगर उनका मामला पूरा होने से पहले उसकी नेकियाँ ख़त्म हो गईं तो उनकी बुराइयाँ उसके हिस्से में डाल दी जाएंगी और फिर जहन्नम में धकेल दिया जाएगा।

जब बंदा हज जैसे फ़रीज़े की अदायगी पर जा रहा हो और उसके ऊपर किसी का हक़ रह जाता हो या उसने किसी को तकलीफ़ दी हो तो हज तो हो जाएगा मगर उसके इस अमल का गुनाह उसके सर बाक़ी रहेगा या दूसरे लफ़्ज़ो में यह कहें कि इस गुनाह की वजह से बहुत से अज्र से महरूम हो जाएगा।

روی مسلم عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ أَنَّ رَسُولَ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ : (تُفْتَحُ أَبْوَابُ الْجَنَّةِ يَوْمَ الِاثْنَيْنِ وَيَوْمَ الْخَمِيسِ فَيُغْفَرُ لِكُلِّ عَبْدٍ لَا يُشْرِكُ بِاللّٰهِ شَيْئًا إِلَّا رَجُلًا كَانَتْ بَيْنَهُ وَبَيْنَ أَخِيهِ شَحْنَاءُ فَيُقَالُ : أَنْظِرُوا هَذَيْنِ حَتَّى يَصْطَلِحَا ، أَنْظِرُوا هَذَيْنِ حَتَّى يَصْطَلِحَا ، أَنْظِرُوا هَذَيْنِ حَتَّى يَصْطَلِحَا).

सहीह मुस्लिम किताब अल-बिर्र वस-सिला, बाब अन-नही अन-अश-शह्ना'ई वत-तहाजर, के तहत रिवायत है कि

रसूल अल्लाह (ﷺ) ने फ़रमाया:

हर जुमा और सोमवार को तमाम आमाल पेश किए जाते हैं, तो उस दिन अल्लाह तआला हर उस आदमी को बख़्श देता है जो अल्लाह तआला के साथ शिर्क नहीं करता, सिवाय उस आदमी के जिसके दरमियाँन और उसके भाई के दरमियाँन अदावत हो। कहा जाता है इन दोनों को छोड़ दीजिए, यहाँ तक कि सुलह कर लें।

(सहीह मुस्लिम 2/317 - 2565)

अल्लाह तआला हमें अमल की तौफ़ीक़ बख़्शे। आमीन

===================

[110].हदीस "मेरी सुन्नत और ख़ुलफ़ा की सुन्नत को लाज़िम पकड़ो": मफ़हूम और तकाज़े

दीने इस्लाम उसी वक्त मुकम्मल हो चुका था जब नबी ﷺ ज़िंदा थे, इस्लाम के मुकम्मल होने के बाद उसमें एक बात भी अपनी तरफ़ से दाख़िल करना नए कामों में से है जिनके बारे में नबी ﷺ ने फ़रमाया कि यह बिद'अत है और हर तरह की बिद'अत जहन्नम में ले जाने वाली है। जब आपके बाद दीन में कोई नया तरीक़ा ईजाद करना, नई बात पैदा करना और किसी तरह की नई फ़िक्र गढ़ना गुमराही है तो फिर हिदायत याफ़्ता ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन और तमाम सहाबा इस मामले में कितना एहतियात करते होंगे? उनके मुताल्लिक़ जो कुछ इख़्तिलाफ़ात देखने को मिलते हैं, वह नुसूस की फ़हम में इख़्तिलाफ़ात और इज्तिहाद का नतीजा हैं। आइए एक मशहूर हदीस का सही माना और मफ़हूम जानते हैं जिसे समझने में बहुत से लोगों ने या तो ग़लती की है या जानबूझकर लोगों में ग़लतफ़हमी पैदा की जा रही है।

<u>हदीस और उसका तर्जुमा:</u>

حَدَّثَنَا أَبُو الْعَبَّاسِ مُحَمَّدُ بْنُ يَعْقُوبَ، ثَنَا الْعَبَّاسُ بْنُ مُحَمَّدٍ الدُّورِيُّ، ثَنَا أَبُو عَاصِمٍ، ثَنَا ثَوْرُ بْنُ

يَزِيدَ، ثَنَا خَالِدُ بْنُ مَعْدَانَ، عَنْ عَبْدِ الرَّحْمَنِ بْنِ عَمْرٍو السُّلَمِيِّ، عَنِ الْعِرْبَاضِ بْنِ سَارِيَةَ، قَالَ: صَلَّى لَنَا رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ صَلَاةَ الصُّبْحِ، ثُمَّ أَقْبَلَ عَلَيْنَا فَوَعَظَنَا مَوْعِظَةً وَجِلَتْ مِنْهَا الْقُلُوبُ وَذَرَفَتْ مِنْهَا الْعُيُونُ، فَقُلْنَا: يَا رَسُولَ اللهِ كَأَنَّهَا مَوْعِظَةُ مُوَدِّعٍ فَأَوْصِنَا، قَالَ: أُوصِيكُمْ بِتَقْوَى اللهِ، وَالسَّمْعِ وَالطَّاعَةِ وَإِنْ أُمِّرَ عَلَيْكُمْ عَبْدٌ حَبَشِيٌّ، فَإِنَّهُ مَنْ يَعِشْ مِنْكُمْ فَسَيَرَى اخْتِلَافًا كَثِيرًا، فَعَلَيْكُمْ بِسُنَّتِي، وَسُنَّةِ الْخُلَفَاءِ الرَّاشِدِينَ الْمَهْدِيِّينَ عَضُّوا عَلَيْهَا بِالنَّوَاجِذِ، وَإِيَّاكُمْ وَمُحْدَثَاتِ الْأُمُورِ، فَإِنَّ كُلَّ بِدْعَةٍ ضَلَالَةٌ

तर्जुमा: अरबाज़ (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने हमें एक दिन नमाज़ पढ़ाई फिर हमारी तरफ़ मुँह कर लिया और वाज़ फ़रमाया बड़ा ही बलीग़ और जामे वाज़ ऐसा कि इस से हमारी आँखें बह पड़ीं और दिल दहल गए। एक कहने वाले ने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! ये तो मानो अलवदाई वाज़ था तो आप हमें किया वसीयत फ़रमाते हैं? फ़रमाया : मैं तुम्हें वसीयत करता हूँ कि अल्लाह का तक़वा इख़्तियार किये रहना और अपने हाकिमों के अहकाम सुनना और मानना चाहे कोई हब्शी ग़ुलाम ही क्यों न हो। बेशक तुममें से जो मेरे बाद ज़िन्दा रहा वो बहुत इख़्तिलाफ़ देखेगा चुनांचे इन हालात में मेरी सुन्नत और मेरे ख़ुलफ़ा की सुन्नत अपनाए रखना, ख़ुलफ़ा जो हिदायत और सीधे रास्ते पर हैं, सुन्नत को ख़ूब मज़बूती से थामना बल्कि दाढ़ों से पकड़े रहना नई-नई बिदअतें और नई घड़ी हुई बातों

से अपने आप को बचाए रखना बेशक हर नई बात बिदअत है और हर बिदअत गुमराही है।

(तख़रीज: सुन्नन अत-तिर्मिज़ी: 2676, अबू दाऊद: 4607, सहीह इब्ने हिब्बान: 5, इब्ने माजा: 43, 44, मुस्नद अहमद: 16694, 16692, मिश्कातुल मसाबिह: 165, अल-मुस्तद्रक आला अस-सहीहैन: 334, सुन्नन दारमी वग़ैरह)

हदीस का हुक्म: जब हदीस बुख़ारी और मुस्लिम के अलावा किसी और किताब में हो तो उसका हुक्म जानना ज़रूरी होता है क्योंकि सहीहैन (बुख़ारी और मुस्लिम) के अलावा तमाम हदीस की किताबों में सही के साथ ज़ईफ अहादीस भी हैं। अरबाज़ बिन सरिया की इस हदीस की सनद में कोई इल्लत नहीं है, इसलिए यह हदीस सहीह है। इस हदीस को शैख़ अल्बानी ने सहीह तिर्मिज़ी, सहीह अबू दाऊद, सहीह इब्ने माजा, अस-सिलसिला अस-सहीहा वग़ैरह में, शैख़-उल इस्लाम ने मजमू' अल-फ़तावा में, इब्नुल मुल्क़न ने अल-बद्रुल मुनीर में, इब्ने हिब्बान ने अपनी सहीह में, हाफ़िज़ इब्ने हजर ने मुवाफ़कतुल ख़बर में, इब्ने अब्दुल बर्र ने जामे बयानुल इल्म में, शुएब अर्नौत ने अबू दाऊद, मुस्नद अहमद, सहीह इब्ने हिब्बान और रियाज़ उस-सालिहीन

वग़ैरह की तख़रीज में सहीह क़रार दिया है। कुछ मुहद्दिसीन ने इसे हसन भी कहा है, बहरहाल यह हदीस क़ाबिल-ए-हुज्जत है।

हदीस की शरह:

इसमें 3 अल्फ़ाज़ की वज़ाहत की ज़रूरत है, पहले उनकी वज़ाहत कर देता हूँ ताकि हदीस का सही मफ़हूम सामने आ सके।

❶ सुन्नत: सुन्नत का लुग़वी मतलब: रास्ता, या तरीक़ा है। मुहद्दिसीन के नज़दीक सुन्नत और हदीस तक़रीबन मुतरादिफ़ हैं। सुन्नत अल्लाह के रसूल ﷺ के अक़वाल, अफ़आल, तक़रीरात और पैदाइशी और इक्तिसाबी औसाफ़ का नाम है। जबकि इन चारों चीज़ों की आप ﷺ की तरफ़ निस्बत हदीस कहलाती है। गोया सुन्नत सिर्फ़ मुहम्मद ﷺ के तरीक़ा-ए-हयात का नाम है।

❷ बिद'अत: लुग़वी तौर पर बिद'अत का मतलब है: किसी चीज़ का ऐसे तरीक़े से ईजाद करना जिसकी पहले कोई मिसाल न हो। जबकि इस्तिलाह में बिद'अत कहते हैं: शरी'अत में कोई नई चीज़ गढ़ लेना जिसकी क़ुरआन और सुन्नत में कोई दलील न हो। सुन्नत का हुक्म इसी हदीस में है "عليكم بسنتى" यानी नबी ﷺ की सुन्नत को हर हाल

में लाज़िम पकड़ना है, चाहे इख़्तिलाफ़ का ज़माना हो या अमन और सुकून का। बिदअत का हुक्म भी इसी हदीस से मिल जाता है:

وَإِيَّاكُمْ وَمُحْدَثَاتِ الْأُمُورِ، فَإِنَّ كُلَّ بِدْعَةٍ ضَلَالَةٌ

तर्जुमा: यानी दीन में नई बात ईजाद करना बिद'अत है और हर बिद'अत गुमराही है और हर गुमराही जहन्नम में ले जाने वाली है।

❸ ख़िलाफ़त: इस हदीस में ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन से मुराद अबू बकर, उमर, उस्मान और अली रज़ियल्लाहु अन्हुम हैं जिनका ज़माना-ए-ख़िलाफ़त 30 सालों का था, जैसा कि सहीह हदीस में मौजूद है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

خلافةُ النبوةِ ثلاثونَ سنةً، ثم يؤتي اللهُ الملكَ، أو ملكَه، من يشاءُ

तर्जुमा: नबुवत वाली ख़िलाफ़त 30 साल रहेगी फिर जिसे अल्लाह चाहेगा (अपनी) हुकूमत देगा।

इस हदीस को शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने सहीह अबू दाऊद (4646) में हसन क़रार दिया है। हदीस के रावी सफ़ीना अबू अब्दुर्रहमान मौली रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की 30 साल की ख़िलाफ़त इस तरह बयान करते हैं:

अबू बकर रज़ियल्लाहु अन्हु के 2 साल

उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु के 10 साल

उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु के 12 साल

अली रज़ियल्लाहु अन्हु के 6 साल

हदीस का मफ़हूम:

अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करने के साथ इस हदीस में इख़्तिलाफ़ और इंतिशार और गुमराही से बचने का इलाज बताया गया है। और वह है कि हर हाल में हाकिम की इताअत की जाए और रसूल ﷺ की सुन्नत को मज़बूती से थामा जाए, इसी तरह अल्लाह की ज़मीन पर उसके दीन को क़ाइम करने वाले ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन यानी चारों ख़लीफ़ा अबू बकर, उमर, उस्मान, अली रज़ियल्लाहु अन्हुम की सुन्नत को थामा जाए क्योंकि ये लोग सुन्नत-ए-रसूल ﷺ पर ही चलने वाले थे। और दीन में नई बातों की ईजाद से बचें क्योंकि हर नई चीज़ बिदअत यानी गुमराही है और हर गुमराही का ठिकाना जहन्नम है।

सुन्नत-ए-रसूल और सुन्नत-ए-ख़ुल्फ़ा:

यहाँ यह सवाल उठता है कि क्या रसूल ﷺ की अलग सुन्नत और ख़ुल्फ़ा-ए-अरबा की अलग सुन्नत है? तो इसका जवाब यह है कि दोनों एक ही सुन्नत का नाम है। जो सुन्नत नबी ﷺ की है वही सुन्नत ख़ुल्फ़ा की भी है, उन्होंने दीन में अपनी तरफ़ से कोई सुन्नत ईजाद नहीं की। जो बाज़ उमूर (कुछ काम) ख़ुल्फ़ा की तरफ़ से नए क़िस्म के मिलते हैं वो उनके इज्तिहादात हैं। ख़ुल्फ़ा-ए-अरबा का बहुत ऊँचा मक़ाम है, अल्लाह ने इन चारों को अशरा-ए-मुबश्शरा में जगह दी है। मगर फिर भी इंसान हैं, इंसान होने की वजह से उनसे या किसी भी सहाबी से ग़लती का इम्कान है। लेकिन इन ग़लतियों की वजह से उनके मक़ाम और रुतबे पर कोई फ़र्क़ नहीं पड़ेगा। जैसा कि नबी ﷺ ने उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु के मुताल्लिक़ फ़रमाया:

ما ضرَّ عثمانَ ما عَمِلَ بعدَ اليومِ مرَّتينِ(صحيح الترمذي:3701حسن)

तर्जुमा: आज के बाद जो भी उस्मान करें, उन्हें कोई नुक़सान नहीं होगा। आपने यह दो बार फ़रमाया। इसे शैख़ अल्बानी ने सहीह तिर्मिज़ी (3701) में हसन कहा है।

ख़ुल्फ़ा की सुन्नत मज़बूती से पकड़े रखने से मुताल्लिक़ मुहद्दिसीन और अहले इल्म की राय:

① अल्लामा नासिरुद्दीन अल्बानी रहिमहुल्लाह ने कहा: ख़ुल्फ़ा की उसी सुननत की इत्तेबा की जाएगी जो नबी ﷺ से साबित है।

(सिलसिला-ए-अहादीस अज़-ज़'ईफ़ा: 1/51-53)

② आलामा संआनी रहिमहुल्लाह ने कहा: ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत से मुराद वही तरीक़ा है जो नबी ﷺ के तरीक़े से मिलाता हो। दुश्मनों से जिहाद करने और शाआइर-ए-इस्लाम को तक़वियत पहुँचाने के लिए यह हदीस हर ख़ुल्फ़ा-ए-राशिद के लिए आम है। इसे शैख़ेन (अबू बकर और उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा) के साथ ख़ास नहीं किया जाएगा। और क़वाइद-ए-शरिया से यह बात मालूम है कि कोई भी ऐसा ख़लीफ़ा-ए-राशिद नहीं है जो नबी ﷺ के तरीक़े से हटकर शरिया जारी करे।

(सबुलुस सलाम: 1/493)

③ इब्ने हज़म रहिमहुल्लाह ने "अल-अहकाम फी उसूल अल-अहकाम" में लिखा है कि इस हदीस में 3 बातों का इमकान है:

ⓐ ख़ुल्फ़ा जिन बातों में इख़्तिलाफ़ करें, सारी बातें सुन्नत समझ कर कर ली जाएँ। और यह मुश्किल है क्योंकि कुछ मुवाफ़िक़ बातें हैं तो कुछ उनके बरअक्स (विपरीत)।

ⓑ या यह कि उन मुख़ालिफ़ बातों में जिसे चाहें इख़्तियार करें तो यह उनकी सुन्नत की इत्तिबा के ख़िलाफ़ है।

ⓒ अब एक ही रास्ता बचता है वह यह कि जिनमें सहाबा का इज्मा है उन्हें ले लिया जाए और ख़ुल्फ़ा का इज्मा सहाबा कइज्मा से अलग चीज़ नहीं है।

④ इमाम शौकानी रहिमहुल्लाह ने "अल-फ़तह उर रब्बानी" में कहा:

सुन्नत ही तरीक़ा है। कहा गया कि मेरा तरीक़ा और ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन का तरीक़ा मज़बूती से पकड़ो। उन ख़ुल्फ़ा का तरीक़ा वही था जो नबी ﷺ का है। वे लोग तरीक़ा-ए-नबवी के बेहद हरीस (लालची) थे और हर चीज़ में सुन्नत पर अमल करते, छोटे-छोटे मुआमलात में भी सुन्नत की मुख़ालिफ़त से हर हाल में बचते तो बड़े मुआमलात का क्या हाल होगा? और जब उन्हें किताबुल्लाह और सुन्नत-ए-रसूल से दलील नहीं मिलती तो तहक़ीक़, मशवरा और तदब्बुर के बाद जो राय ज़ाहिर होती उस पर अमल करते। तो सुन्नत के न होने पर यह राय भी हुज्जत है जैसा कि मुआज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अन्हु की हदीस से वाज़ेह है। {मुआज़ बिन जबल वाली यह हदीस ज़ईफ़ होने की वजह से क़ाबिल-ए-इस्तिदलाल नहीं है}

इन चंद अक़वाल से यह बात सामने आती है कि ख़ुल्फ़ा का तरीक़ा वही है जो नबी ﷺ का तरीक़ा है। अलबत्ता ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन की वो बातें जिनकी सुननत से दलील नहीं या जो क़ुरआन और हदीस के दूसरे दलील से टकराती हों, उसे छोड़ दिया जाएगा लेकिन जिन पर सहाबा-ए-किराम का इज्मा है वह हमारे लिए दलील और हुज्जत है। इसी तरह सहाबा के वो अक़वाल भी हमारे लिए हुज्जत हैं जो शरिया के दलील से टकराती न हों।

ख़ुल्फ़ा की सुन्नत नबी ﷺ ही की सुन्नत है?

सहाबा-ए-किराम या ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन का तरीक़ा वही है जो नबी ﷺ का है। सहाबा ज़िन्दगी के तमाम मुआमलात का हल किताब और सुन्नत में तलाश करते, किसी ख़लीफ़ा-ए-राशिद ने अलग से कोई तरीक़ा ईजाद नहीं किया है बल्कि वे तो हमसे कई गुना ज़्यादा किताब और सुन्नत पर अमल करने के हरीस थे। इस हदीस में मौजूद "सुन्नती" और "सुन्नत-उल-ख़ुल्फ़ा" के अल्फ़ाज़ से कुछ लोगों को यह धोखा हो गया या कुछ लोग जानबूझ कर धोखा खा रहे हैं कि दोनों अलग-अलग सुन्नतें हैं, बल्कि "सुननतुल ख़ुल्फ़ा" से तक़लीद की दलील ली जाती है जबकि यह मतलब बिल्कुल ग़लत है।

इस हदीस को क़ुरआन की एक आयत से समझें, अल्लाह का फ़रमान है:

أَمْ كُنْتُمْ شُهَدَاءَ إِذْ حَضَرَ يَعْقُوبَ الْمَوْتُ إِذْ قَالَ لِبَنِيهِ مَا تَعْبُدُونَ مِنْ بَعْدِي قَالُوا نَعْبُدُ إِلَٰهَكَ وَإِلَٰهَ آبَائِكَ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ إِلَٰهًا وَاحِدًا وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ (البقرة:133)

तर्जुमा: क्या तुम उस वक्त मौजूद थे जब याक़ूब अलैहिस्सलाम की मौत का वक्त क़रीब आया? जब उन्होंने अपने बेटों से कहा कि मेरे बाद तुम किसकी इबादत करोगे? तो उन्होंने कहा कि हम आपके इलाह और आपके बाप इब्राहीम, इस्माईल और इस्हाक़ के इलाह की इबादत करेंगे जो एक ही इलाह है और हम उसके लिए फ़रमानबरदार होने वाले हैं।

याक़ूब अलैहिस्सलाम के बेटों ने जवाब दिया कि हम आपके माबूद और आपके आबा इब्राहीम, इस्माईल और इस्हाक़ के माबूद की इबादत करेंगे, तो क्या याक़ूब अलैहिस्सलाम, इब्राहीम अलैहिस्सलाम, इस्माईल अलैहिस्सलाम और इस्हाक़ अलैहिस्सलाम के माबूद अलग-अलग थे? नहीं, हर्गिज़ नहीं, उन सभी का माबूद एक था। ठीक उसी तरह से ख़ुल्फ़ा की वही सुन्नत है जो नबी ﷺ ने पेश की है।

बिल्कुल यही बात सूरा अल-फ़ातिहा में कही गई है:

اهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ، صِرَاطَ الَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ

पहले "सिरात-ए-मुस्तक़ीम" (सीधा रास्ता) कहा गया फिर उसी "सिरात" को "अन्'अम्ता 'अलैहि" से जोड़ा गया यानी वे लोग जिन पर अल्लाह की नेमत नाज़िल हुई।

एक दूसरी जगह अल्लाह का फ़रमान है:

وَمَن يُشَاقِقِ الرَّسُولَ مِن بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُ الْهُدَىٰ وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيلِ الْمُؤْمِنِينَ نُوَلِّهِ مَا تَوَلَّىٰ وَنُصْلِهِ جَهَنَّمَ ۖ وَسَاءَتْ مَصِيرًا (النساء : 115)

तर्जुमा: और जो रसूल की मुख़ालिफ़त करे बाद इसके कि हिदायत उस पर वाज़ेह हो चुकी और मो'मिनों की राह छोड़कर किसी और राह पर चले तो हम उसे वहीं फेर देते हैं जहाँ वह ख़ुद फिरता है और फिर उसे जहन्नम में पहुंचाएंगे और वह कितना बुरा ठिकाना है।

इसी आयत में रसूल के तरीक़े को मोमिनों का तरीक़ा कहा गया है, इसका मतलब यह हुआ कि ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन का तरीक़ा रसूल का ही तरीक़ा है क्योंकि तमाम मोमिनों को अल्लाह की वह्यी की पैरवी का हुक्म दिया गया है।

इस बात को हदीस-ए-अरबाज़ बिन सरीया से भी आसानी से समझा जा सकता है जिसमें यह बात है कि दीन में नई बात पैदा करना बिद'अत है और हर बिद'अत गुमराही है। भला ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन अपनी तरफ़ से दीन में नई बात कैसे गढ़ सकते हैं जबकि उन्हें मालूम है कि मोमिनों को अल्लाह की वह्यी की पैरवी का हुक्म दिया गया है और रसूलल्लाह ﷺ ने पैरवी के लिए किताबुल्लाह और सुन्नत-ए-रसूल छोड़ा था। फ़रमान-ए-इलाही है:

اتَّبِعُوا مَا أُنزِلَ إِلَيْكُم مِّن رَّبِّكُمْ وَلَا تَتَّبِعُوا مِن دُونِهِ أَوْلِيَاءَ ۗ قَلِيلًا مَّا تَذَكَّرُونَ (الاعراف:3)

तर्जुमा: तुम लोग उसकी इत्तिबा' करो जो तुम्हारे रब की तरफ़ से आई है और अल्लाह को छोड़कर मनगढ़ंत सरपरस्तों की इत्तिबा' मत करो, तुम लोग बहुत ही कम नसीहत पकड़ते हो।

फ़रमान-ए-नबवी है:

تَرَكْتُ فيكم أمرينِ ، لَن تضلُّوا ما تمسَّكتُمْ بِهِما : كتابَ اللَّهِ وسنَّةَ رسولِهِ{أخرجه مالك في الموطأ:2/899)

तर्जुमा: मैं तुम्हारे बीच दो चीज़ें छोड़ रहा हूँ। तुम हर्गिज़ गुमराह नहीं हो सकते जब तक उन दोनों को थामे रहोगे, वह है अल्लाह की किताब और उसके रसूल की सुन्नत।

इस हदीस को शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने मिशकात की तख़रीज में हसन क़रार दिया है।

(तख़रीज मिशकत उल-मसाबीह: 183)

ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन हिदायत याफ़्ता थे, वे दीन के मुआमले में नबी ﷺ की पैरवी करते थे और अपने मन से बिल्कुल भी नहीं बोलते थे। क्या आपको नहीं मालूम कि ख़िलाफ़त के शुरू में कुछ लोगों ने ज़कात देने से इनकार किया तो अबू बकर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया:

واللّهِ لَأُقَاتِلَنَّ مَن فرّق بيْنَ الصَّلَاةِ والزَّكَاةِ، فإنَّ الزَّكَاةَ حَقُّ المَالِ، واللّهِ لو مَنَعُونِي عِقَالًا كَانُوا يُؤَدُّونَهُ إلى رَسولِ اللّهِ صَلَّى اللّهُ عليه وسلَّمَ لَقَاتَلْتُهُمْ على مَنْعِهِ {صحيح البخاري: ٧٢٨٤}

तर्जुमा: अल्लाह की क़सम! मैं तो उस शख़्स से जंग करूंगा जिसने नमाज़ और ज़कात में फ़र्क़ किया है, क्योंकि ज़कात माल का हक़ है। अल्लाह की क़सम! अगर वे मुझे एक रस्सी देने से रोकेंगे जो वे नबी ﷺ को देते थे तो मैं उनसे उनके इनकार पर भी जंग करूंगा।

इर्तिदाद के वक्त अगर अपनी सुन्नत जारी रखते तो उमर रज़ियल्लाहु अन्हु की तरह नर्मी इख़्तियार करते मगर उन्होंने नबी ﷺ की सुन्नत

जारी की। इसी तरह उमर रज़ियल्लाहु अन्हु का वह क़ौल सोने (गोल्ड) से लिखे जाने के क़ाबिल है जिसमें उन्होंने हज्रे अस्वद को चुमते वक्त फ़रमाया था:

أَمَ وَاللهِ، لَقَدْ عَلِمْتُ أَنَّكَ حَجَرٌ، وَلَوْلَا أَنِّي رَأَيْتُ رَسُولَ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يُقَبِّلُكَ مَا قَبَّلْتُكَ

(صحيح مسلم: 1270)

तर्जुमा: हाँ, अल्लाह की क़सम! मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि तू एक पत्थर है, अगर मैंने नबी ﷺ को न देखा होता कि वह तुम्हें चुमते थे तो मैं तुम्हें (कभी) चुमता नहीं।

ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन और सुन्नत-ए-रसूल के बीच इख़्तिलाफ़ का हुक्म:

इसमें कोई शक नहीं कि ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन के कुछ इज्तिहाद सुन्नत-ए-रसूल के मुख़ालिफ़ नज़र आते हैं, इसकी वजह यह है कि हम उन्हें मुज्तहिद मानते हैं। हमारे लिए शारे' (शरियत क़ाइम करने वाले) सिर्फ़ मुहम्मद ﷺ हैं। ग़ोया मासूम मुहम्मद ﷺ हैं और ख़ुल्फ़ा मुज्तहिद हैं, जो मासूम नहीं हैं, उनसे ख़ता का इम्कान होता है। इसी इम्कान के सबब कुछ मुआमलात में इख़्तिलाफ़ नज़र आता है। दीन के मुआमले में जहाँ इख़्तिलाफ़ नज़र आए वहाँ इख़्तिलाफ़ को अल्लाह और उसके

रसूल ﷺ के फ़रमान की तरफ़ लौटाना चाहिए। अल्लाह ने हमें ऐसा ही करने का हुक्म दिया है। फ़रमान-ए-बारी तआला है:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَطِيعُوا اللَّهَ وَأَطِيعُوا الرَّسُولَ وَأُولِي الْأَمْرِ مِنكُمْ ۖ فَإِن تَنَازَعْتُمْ فِي شَيْءٍ فَرُدُّوهُ إِلَى اللَّهِ وَالرَّسُولِ إِن كُنتُمْ تُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ ۚ ذَٰلِكَ خَيْرٌ وَأَحْسَنُ تَأْوِيلًا (النساء:59)

तर्जुमा: ऐ ईमान वालो! अल्लाह की इत्तिबा' करो और रसूल (ﷺ) की इत्तिबा' करो और तुम में से इख़्तियार वालों की। फिर अगर किसी चीज़ में इख़्तिलाफ़ करो तो उसे लौटा दो अल्लाह की तरफ़ और रसूल की तरफ़ अगर तुम अल्लाह पर और क़यामत के दिन पर इमान रखते हो, यह बहुत बेहतर है और अंजाम के लिहाज़ से बहुत अच्छा है।

इस आयत में अल्लाह ने साफ़-साफ़ फ़रमा दिया कि अल्लाह और उसके रसूल की पैरवी करो, किताब और सुन्नत को लागू करने वाले हुक्काम की भी पैरवी करने का हुक्म दिया है और यह नहीं कहा कि इख़्तिलाफ़ के वक्त हाकिम और ख़लीफ़ा की बात छोड़ दी जाएगी, अल्लाह और उसके रसूल की पैरवी की जाएगी।

इज्तिहादी अक़वाल की शर'ई हैसियत:

ऊपर ज़िक्र किया गया कि हदीस कहती है: हर वह कौल, फेल, तक़रीर या सिफ़त जो नबी ﷺ की तरफ़ मंसूब हो। अगर निस्बत सही हुई तो हदीस सही होती है वरना ज़ईफ़ होती है। इस तारीफ़ (definition) में तक़रीर का लफ़्ज़ आया है, इससे मुराद सहाबा का क़ौल या फ़ेल जिसका इल्म नबी ﷺ को हुआ हो और आपने उस क़ौल या फ़ेल पर नाराज़गी का इज़हार नहीं किया बल्कि ख़ामोशी इख़्तियार की। ग़ोया ऐसा कोई अमल सहाबी या क़ौल-ए-सहाबी जिस पर रसूलल्लाह ﷺ ने ख़ामोशी इख़्तियार की हो वह हदीस ही कहलाती है। अगर उस तक़रीरी हदीस की सनद सही हो तो वह दीन में हुज्जत है।

दूसरी बात यह है कि अल्लाह ने सिर्फ़ अपनी और रसूल की इत्तिबा' का हुक्म दिया है, इन दोनों के अलावा दीन में किसी की बात क़ाबिल-ए-हुज्जत नहीं है, अलबत्ता सिर्फ़ वह इज्तिहादी मसाइल जिनमें शरी'अत ख़ामोश हो और सहाबी का क़ौल या फ़ेल सही सनद से साबित हो रहा हो तो उसे इख़्तियार किया जाएगा, इस शर्त के साथ कि वह शरी'अत की किसी दलील से ना टकराता हो, उनका इज्तिहाद बाद वालों के इज्तिहाद से बेहतर है। बल्कि सहाबा के वह अक़वाल जिनमें इज्तिहाद का दख़्ल न हो तो वह मरफ़ू हदीस का हुक्म रखते हैं।

इज्तिहाद का दायरा तो खुला है, उसका दरवाज़ा क़यामत तक खुला हुआ है, नए मसाइल पैदा होते रहेंगे और उलमा-ए-उम्मत उनमें इज्तिहाद करते रहेंगे। जिनका इज्तिहाद दलील से क़वी होगा, इख़्तियार करने में कोई तरदद्दुद नहीं है। चारों इमाम के इज्तिहाद का भी यही हुक्म है। उनके जो इज्तिहाद किताब और सुन्नत के ख़िलाफ़ हैं उन्हें रद्द कर दें। दरअसल उन मसाइल में इमामों का भी यही मौक़िफ़ है। और जो मसाइल किताब और सुन्नत से नहीं टकराते उनमें जिस इमाम का फ़तवा दलील से क़वी मालूम हो, इख़्तियार कर लिया जाए। ऐसा नहीं है कि हम सिर्फ़ एक इमाम के ही इज्तिहाद लेंगे, नहीं। यहां यह बात भी वाज़ेह रहे कि तक़लीद जा़इज़ नहीं है, सारे इमाम हमारे अपने हैं, उन्हें अल्लाह ने दीन में बसीरत और समझ अता की है, इल्म के इस्तिफ़ादा में किसी एक को ख़ास करना दूसरों इमामों की समझ, बसीरत, हिकमत और दानाई से मुँह मोड़ना है। अलबत्ता इमामों की इज़्ज़त करेंगे, उनके इज्तिहाद से फ़ायदा उठाएंगे बल्कि उनके अलावा क़यामत तक जो फ़क़ीह और मुज्तहिद पैदा होते रहेंगे, तमाम से फ़ायदा उठाएंगे। अल्लाह जिसे चाहता है दीन की समझ अता फ़रमाता है।

================

[111].हामिला और मुर्ज़ि'आ रमज़ान के छूटे हुए रोज़े की कज़ा करेगी

हामिला (गर्भवती) और मुर्ज़ि'आ (बच्चे को दूध पिलाने वाली) के छुटे हुए रोज़ों से मुताल्लिक़ अहले इल्म के दरमियाँन इख़्तिलाफ़ पाया जाता है। मैंने इख़्तिसार से इस मसले को बयान करने की कोशिश की है। अल्लाह से दुआ है कि मुझे सवाब और दुरुस्तगी की तौफ़ीक़ दे। आमीन

हामिला और मुर्ज़ि'आ के लिए रोज़ों से मुताल्लिक़ दो हालात हो सकते हैं:

1. या तो हामिला और मुर्ज़ि'आ को रोज़ा रखने में अपने लिए या बच्चे के लिए मशक़्क़त नहीं हो सकती है। ऐसी सूरत में उन्हें रमज़ान का रोज़ा रखना चाहिए।

2. या फिर रोज़ा रखने में उन्हें अपने लिए या बच्चे के लिए मशक़्क़त महसूस हो सकती है। ऐसी सूरत में हामिला और मुर्ज़ि'आ रमज़ान के रोज़े छोड़ सकती हैं और जब मशक़्क़त दूर हो जाए तब रमज़ान के छुटे रोज़ों की क़ज़ा करेंगी।

याद रहे कुछ अहले इल्म ने कहा है कि हामिला और मुर्ज़िआ रमज़ान के छुटे रोज़ों की क़ज़ा नहीं करेगी बल्कि फ़िदया देगी, यह बात सही नहीं है। सही बात यह है कि हामिला और मुर्ज़िआ अगर रमज़ान में मशक़्क़त की वजह से रोज़ा छोड़ती हैं तो बाद में उन रोज़ों की क़ज़ा करेगी। इस बात को दलील से समझने के लिए पहले यह जानना ज़रूरी है कि हामिला और मुर्ज़िआ किस हुक्म में दाख़िल हैं?

हम हामिला और मुर्ज़िआ को ज़ईफुल उम्र (बुज़ुर्ग औरत) के हुक्म में नहीं मान सकते क्योंकि ना इस बारे में शरियत से कोई दलील वारिद है और ना ही मुशाहिदा और तजुर्बा में वे बुज़ुर्ग हैं कि कभी भी रोज़ा नहीं रख सकतीं, बल्कि वे वक़्ती तौर पर रोज़ा रखने से क़ासिर हैं और बाद में रोज़ा रखने की ताक़त रखती हैं। इब्ने माजह की सहीहुल असनाद हदीस पर ग़ौर करके उसका हुक्म जानते हैं। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है:

إن الله عزوجل وضع عن المسافر شطر الصلاة وعن المسافر والحامل والمرضع الصوم .(صحيح ابن ماجه وقال الشيخ الألباني حسن صحيح:)

तर्जुमा: अल्लाह ने मुसाफ़िर के लिए आधी नमाज़ माफ़ फ़रमा दी और मुसाफ़िर और हामिला और दूध पिलाने वाली को रोज़े माफ़ फ़रमा दिए।

अल्फ़ाज़-ए-हदीस पर ग़ौर करें कि वाव-ए-अत्फ़ के ज़रिए नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुसाफ़िर, हामिला और मुर्ज़ि'आ का हुक्म बताया है, जिससे साफ़ मालूम होता है कि यह दोनों रोज़े के बाब में मुसाफ़िर की तरह हैं, यानी जिस तरह मुसाफ़िर को हालत-ए-सफ़र में मशक़्क़त की वजह से रोज़ा छोड़ने की रुख़सत दी गई है और बाद में उन रोज़ों की क़ज़ा करनी होगी, ठीक उसी तरह हामिला और मुर्ज़ि'आ भी मशक़्क़त की वजह से रमज़ान के रोज़े छोड़ सकती हैं और रमज़ान के बाद जब उन्हें मशक़्क़त से राहत मिले तब उन रोज़ों की क़ज़ा करेंगी।

अब मुसाफ़िर की रोज़े की रुख़्सत को क़ुरआनी आयत के तनाज़ुर में देखते हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

فمن كان منكم مريضا أو على سفر فعدة من ايام اخر .(البقرة:)

तर्जुमा: तुम में से जो शख़्स बीमार हो या सफ़र में हो तो वह और दिनों में गिनती को पूरा कर ले।

यानी यह बीमार और मुसाफ़िर को रुख़्सत दी गई है कि वह बीमारी या सफ़र की वजह से रमज़ान-उल-मुबारक में जितने रोज़े ना रख

सके हों, वे बाद में रखकर गिनती पूरी कर लें। (तफ़सीर अहसनुल बयान)

यहाँ पर अल्लाह ने मुसाफ़िर को मरीज़ के साथ ज़िक्र किया क्योंकि दोनों की हालत में मशक़्क़त पाई जाती है, इस लिए दोनों का हुक्म बराबर है। वह यह कि हालत-ए-सफ़र की मशक़्क़त से या बीमारी की मशक़्क़त से जो रोज़े छूट जाएं, उन्हें बाद में (मशक़्क़त दूर होने पर) पूरे किए जाएं।

इब्न माजह की मज़कूरा हदीस और सुरह बक़रा की ऊपर ज़िक्र की गई आयत को मिलाकर देखने से मालूम होता है कि हामिला और मुर्ज़ि'आ मुसाफ़िर के हुक्म में हैं और मुसाफ़िर मरीज़ के हुक्म में है। गोया हामिला और मुर्ज़ि'आ मुसाफ़िर और मरीज़ के हुक्म में हुईं। इस वजह से हामिला और मुर्ज़ि'आ रमज़ान के छूटे हुए रोज़ों की बाद में क़ज़ा करेंगी।

जो लोग कहते हैं कि हामिला और मुर्ज़ि'आ रमज़ान के छूटे हुए रोज़ों का फ़िदया देंगी, उनकी बात सही नहीं है। उसकी एक वजह तो यह है कि वे अहले इल्म हामिला और मुर्ज़ि'आ के हुक्म की वज़ाहत नहीं

करते, दूसरी वजह यह है कि हामिला और मुर्ज़ि'आ को बुज़ुर्ग औरत पर क़ियास करना ग़लत है, उसका ज़िक्र पहले कर चुका हूँ। तीसरी वजह यह है कि फ़िदया के सिलसिले में फ़रमान-ए-रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम में कोई सराहत नहीं मिलती और चौथी वजह यह है कि एक नस की वज़ाहत जब दूसरे नुसूस से होती हो, वहां आसार और अक़वाल मरजूह (कमज़ोर) क़रार पाएंगे। इस वजह से फ़िदया से मुताल्लिक़ इब्न अब्बास वाला असर मरजूह क़रार पाएगा। नीज़ अली रज़ियल्लाहु अन्हु से तो बसराहत क़ज़ा करना मंक़ूल है।

========================

[112].हालत-ए-हैज़ में इस्तिमाल शुदा कपड़े का हुक्म

हमारे मुआशरे में हैज़ वाली औरतों के ताल्लुक़ से बहुत सारी ग़लत फ़हमियाँ पाई जाती हैं। कुछ जगहों पर हैज़ वाली औरत को और उसके जिस्म के कपड़े को इस क़दर नापाक समझा जाता है कि उसके बदन से टच नहीं कर सकते हैं, उसका कोई सामान, मसलन दुपट्टा, ज़ेवरात, बिस्तर वग़ैरह इस्तेमाल नहीं कर सकते यहाँ तक कि हाइज़ा (वह औरत जिसको हैज़ आता हो) को खाना पकाने की इजाज़त भी नहीं होती। यह सब ग़लत बातें हैं।

मालूम होना चाहिए कि हैज़ वाली औरत हुक्म ए नाजिस/नापाक है लेकिन ज़ाहिरी तौर पर उसका जिस्म पाक है और उसके जिस्म का वह कपड़ा भी पाक है जो ख़ुश्क है। एक हदीस की रोशनी में इस मसले को समझने की कोशिश करें।

आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है, उन्होंने कहा:

أمرني رسول الله صلى الله عليه وسلم أن أناوله شيئاً من المسجد فقلت : إني حائض . فقال: تناويلها فانّ حَيْضَتَكِ لَيْسَتْ فِي يَدِكِ.(مسلم شريف:298)

तर्जुमा: - रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुझे हुक्म दिया कि मैं मस्जिद से आप को जा-नमाज़ पकड़ाऊँ। मैंने अर्ज़ की: मैं हैज़ में हूँ। आपने फ़रमाया: हैज़ तुम्हारे हाथ में नहीं है।

इस हदीस से मालूम हुआ कि हैज़ वाली औरत का जिस्म पाक है, इसके हाथ का पकाया हुआ खाना खा सकते हैं। जिस्म के बारे में आपने जान लिया कि हैज़ ज़ाहिरी तौर पर पाक है, अब इसके इस्तेमाल के कपड़ों के बारे में जानते हैं।

हैज़ की हालत में पहने गए कपड़ों के बारे में औरतों में यह ख़्याल पाया जाता है कि उनके कपड़े नापाक होते हैं। बल्कि यहां तक माना जाता है कि हैज़ वाली औरत के जिस्म से कपड़ा छू जाने और पसीना वग़ैरह भी लग जाने से नापाक हो जाता है, लिहाज़ा इसमें नमाज़ नहीं अदा कर सकते हैं। हैज़ का कपड़ा अलग और ख़ास होता है, इस्तेमाल कर के उसे फेंक देना चाहिए।

औरतों के यह ख़यालात ग़लत हैं।

आइये आपको हदीस ए रसूल की रोशनी में सही बात बताते हैं।

अस्मा बिंत-ए-अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हा रिवायत करती हैं:

جَاءَتِ امْرَأَةٌ النبيَّ صَلَّى اللهُ عليه وسلَّمَ فَقالَتْ: أرَأَيْتَ إحْدَانَا تَحِيضُ في الثَّوْبِ، كيفَ تَصْنَعُ؟ قالَ: تَحُتُّهُ، ثُمَّ تَقْرُصُهُ بالمَاءِ، وتَنْضَحُهُ، وتُصَلِّي فِيهِ.(صحيح بخاري: 227)

तर्जुमा: एक औरत ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर अर्ज़ किया, "या रसूलुल्लाह! फ़रमाइए, हम में से किसी औरत को कपड़े में हैज़ आ जाए (तो) वह क्या करे?" आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "उसे खुरचे, फिर पानी से रगड़े और पानी से धो डालें और उसी कपड़े में नमाज़ पढ़ लें।"

सहीह बुख़ारी की एक दूसरी रिवायत पेश करता हूँ, आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रवायत है, उन्होंने फ़रमाया:

كَانَتْ إحْدَانَا تَحِيضُ، ثُمَّ تَقْتَرِصُ الدَّمَ مِن ثَوْبِهَا عِنْدَ طُهْرِهَا، فَتَغْسِلُهُ، وتَنْضَحُ علَى سَائِرِهِ، ثُمَّ تُصَلِّي فِيهِ.

तर्जुमा: हमें हैज़ आता तो कपड़े को पाक करते वक्त हम ख़ून को मल देते, फिर उस जगह को धो लेते और तमाम कपड़े पर पानी बहा देते और उसे पहन कर नमाज़ पढ़ते। (सहीह बुख़ारी: 308)

इन दोनों हदीसों से मालूम हुआ कि हैज़ वाली औरत जिस कपड़े को हैज़ की हालत में इस्तेमाल कर चुकी है, उस कपड़े में जहाँ हैज़ का ख़ून लगा हो, उसको मल कर पानी से धो ले, कपड़ा पाक हो जाएगा। अब उसी कपड़े में वह नमाज़ पढ़ सकती है।

और जो कपड़ा ख़ुश्क हो, उसमें हैज़ का ख़ून न लगा हो, वह पहले से पाक है, उसको धोने की भी ज़रूरत नहीं है, जैसे कमीज़ और दुपट्टा। आम तौर पर इन पर ख़ून नहीं लगता है, सिर्फ़ शलवार में ख़ून लगता है। अगर ख़ुदा न ख़ास्ता क़मीज़ में भी ख़ून लग जाए तो उसे भी धो ले और धो जाने के बाद कपड़ा बिल्कुल पाक है। अब इसमें नमाज़ अदा करने में कोई हरज नहीं है।

हाँ, यह मुमकिन है कि धोने से कपड़े की नजासत दूर हो जाए मगर कपड़े पर ख़ून के निशान लगे रहें तो उन निशानों की वजह से भी

नमाज़ पढ़ने में कोई हरज नहीं है क्योंकि कपड़ा पाक हो गया है, चाहे उस पर निशान क्यों न मालूम होते हों।

कपड़े को ख़ून और उसके निशानात वग़ैरह से महफ़ूज़ रखने के लिए औरतें पैड या लंगोट का इस्तेमाल कर सकती हैं। याद रहे कि अगर हैज़ वाली औरत पैड इस्तेमाल करे और कपड़े पर ख़ून न लगे, तो फिर बिना कपड़ा धोए ग़ुस्ल हैज़ के बाद उसी कपड़े में नमाज़ अदा कर सकती है क्योंकि कपड़े पर नजासत न लगने की वजह से वह पहले से ही पाक है।

अहद ए रिसालत में ख़वातीन हैज़ के दिनों में कुर्सुफ़ (शर्मगाह के मुँह पर रखा जाने वाला कपड़ा या रूई) का इस्तेमाल करती थीं।

मरजाना जो माँ है अल्क़ामा की और मौला है आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा की, से रवायत है, वह बयान करती हैं:

عن علقمة بن أبي علقمة، عن أمه مولاة عائشة أم المؤمنين، أنها قالت: كان النساء يبعثن إلى عائشة أم المؤمنين، بالدرجة فيها الكرسف، فيه الصفرة من دم الحيضة، يسألنها عن الصلاة.

فتقول لهن: «لا تعجلن حتى ترين القصة البيضاء.» تريد بذلك الطهر من الحيضة.

तर्जुमा: औरतें डब्बियो में रूई रख कर आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा को दिखाने को भेजती थीं, और उस रूई में हैज़ के ख़ून की ज़र्दी होती थी। पूछती थीं कि नमाज़ पढ़ें या न पढ़ें? तो आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा कहती थीं: जल्दी मत करो तुम नमाज़ में, यहाँ तक कि रूई देख लो, मुराद यह थी कि हैज़ से पाक हो जाओ। (मुआत्ता इमाम मलिक: 127)

शैख़ अल्बानी ने इसकी सनद को हसन कहा है। (तमामुल मुनाह: 136)

इसलिए बेहतर है कि ख़वातीन हैज़ के दिनों में पैड का इस्तेमाल करें ताकि ख़ून के निशान कपड़े, बिस्तर और ज़मीन पर न लगे। ख़ासकर उन औरतों को ज़रूर पैड इस्तेमाल करना चाहिए जिनमें बहुत ज़्यादा मात्रा में ख़ून आता है।

एक ज़ईफ हदीस में आया है कि हैज़ लगे टुकड़े को दफ़न करना है। आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा से मरवी है:

كان يأمر بدفن سبعة أشياء من الإنسان: الشعر، والظفر، والدم، والحيضة، والسن، والمشيمة، والقلفة.

तर्जुमा: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इंसान की 7 चीज़ों को दफ़्न करने का हुक्म देते थे: बाल, नाख़ून, ख़ून, हैज़ का कपड़ा, दांत, नौ-मौलूद की थैली/पर्दा (जिसमें विलादत होती है) और ख़तना की चमड़ी।

इस हदीस को शैख़ अल्बानी रहिमहुल्लाह ने मुंकर कहा है और मुंकर ज़ईफ हदीस होती है। देखें सिलसिलतुस ज़ईफ़ा: मुंकर, 3263

इस हदीस से लोगों में गलतफ़हमी पैदा हुई कि हैज़ की हालत में पहने गए कपड़े को फेंक देना चाहिए, मगर सही बात यह है कि इस्तेमाल किया हुआ कपड़ा नहीं फेंकना है बल्कि कुर्सुफ़ को दफ़्न करने के लिए कहा गया है और कुर्सुफ़ शर्मगाह पर रखने वाली रूई या टुकड़ा है जिसके बारे में ऊपर आपने जाना है। और दूसरी बात यह है कि यह हदीस इस्तिदलाल के क़ाबिल नहीं है क्योंकि यह ज़ईफ है।

ख़ुलासा कलाम यह है कि हैज़ वाली औरत का जिस्म ज़ाहिरी तौर पर पाक है और उसके जिस्म के साथ वो सारी चीज़ें पाक हैं जो हैज़

के ख़ून से महफ़ूज़ हैं। मिसाल के तौर पर, क़मीज़, दुपट्टा, ज़ेवरात और बिस्तर वग़ैरह, फ़क़त हुक्मी तौर पर हैज़ वाली औरत नापाक होती है। और जिस कपड़े में ख़ून लगा हो, सिर्फ़ वही और उसी मात्रा में नापाक है, बाकी कपड़ा पाक है। और हैज़ से पाक होने पर, हैज़ में इस्तेमाल हुए कपड़े जिनमें हैज़ के दाग-धब्बे और ख़ून लगे हों, उन्हें धोकर साफ़ कर लिया जाए तो उनमें नमाज़ अदा करने में कोई हरज नहीं है। और हैज़ के घर, बिस्तर और सामान वग़ैरह को नापाक समझकर सब को धोना यह ग़लत है। हैज़ की वजह से घर, बिस्तर, सामान और बर्तन नापाक नहीं होते। यही वजह है कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने मर्दों को हैज़ की हालत में जिमा से मना किया है, लेकिन जिमा से दूर रहते हुए बीवी के साथ उठना, बैठना, खाना-पानी और सोना सब जायज़ है, यहाँ तक कि बीवी से किस और किनार भी हो सकता है और उसके जिस्म से जिमा के सिवा फ़ायदा उठा सकता है।

=============

[113].हैज़ की हालत मे क़ुरआन-ए-करीम की तिलावत

अहल-ए-इल्म में इख़्तिलाफ़ के बाइस ख़वातीन में यह मसला काफ़ी तशवीश (परेशानी) का बाइस है कि हाइज़ा औरत क़ुरआन की तिलावत कर सकती है या नहीं कर सकती है, चुनांचे इस सिलसिले में सही और दुरुस्त क़ौल यह है कि हाइज़ा औरत क़ुरआन की तिलावत कर सकती है।

इस मसले को तफ़सील से जानने के लिए आपके सामने वह सारे निकात (पॉइंट्स) पेश करता हूँ जिनकी वजह से दिल को इस बात पर इत्मिनान हासिल होता है कि हाइज़ा औरत भी क़ुरआन की तिलावत कर सकती है।

(1) इस सिलसिले में सबसे बुनियादी मसला यह है कि क़ुरआन महज़ तिलावत की किताब नहीं है, यह दस्तूर-ए-हयात है, इस किताब से हमारे रोज़-ओ-शब (दिन और रात) बल्कि जिंदगी का एक-एक लम्हा जुड़ा हुआ है। हर वक्त इससे हमें मरबूत रहना है, इसमें ग़ौर-ओ-फ़िक्र करते रहना है और इसे समझ कर पढ़ते रहना है ताकि हमें अल्लाह का हुक्म मालूम होता रहे, हिदायत मिलती रहे और हम उस पर अमल करते रहें। इस तरह जब हम नुज़ूल-ए-क़ुरआन के मक़सद पर ग़ौर

करते हैं तो मालूम होता है कि मर्द की तरह एक औरत को भी हमेशा दीन के अहकाम जानने के लिए क़ुरआन पढ़ते रहना चाहिए।

क़ुरआन पर अमल करने के लिए क़ुरआन की तिलावत है ही, उसकी तबलीग़ के लिए भी क़ुरआन को पढ़ने और क़ुरआन सुनाने की ज़रूरत है जैसे नबी ﷺ मुसलमान और ग़ैर-मुसलमान सब पर क़ुरआन पढ़ते ताकि वे अल्लाह के अहकाम को समझें और हिदायत हासिल करें। आपने बादशाहों के नाम जो ख़त लिखा उसमें क़ुरआनी आयतें भी होती थीं। अगर एक काफ़िर बावजूद-ए-नजिस होने के क़ुरआनी आयतों को छू सकता है और पढ़ सकता है तो मोमिना औरत ताहिर होने के बावजूद हैज़ की हालत में क्यों नहीं पढ़ सकती है?

इसी तरह तिलावत-ए-क़ुरआन से जुड़ा एक और मसला है वह यह कि समझ कर कम अज़ कम तीन दिन में क़ुरआन ख़त्म करने की इजाज़त है, नबी ﷺ का फ़रमान है:

لاَ يفقَهُ من قرأَهُ في أقلَّ من ثلاثٍ(صحيح أبي داود:1390)

तर्जुमा: जिसने क़ुरआन तीन दिन से कम में पढ़ा उसने क़ुरआन समझा ही नहीं।

आम तौर पर औरतों को तीन दिनों से ज़्यादा हैज़ आता है, औरतों को इस फासिले में तिलावत से रोकना बहुत सारे ख़ैर से रोकने के बराबर है जबकि तीन दिन में क़ुरआन ख़त्म करने की एक मोमिन को इजाज़त है। इस हदीस से यह मालूम होता है कि मोमिन मर्द और मोमिन औरत को कभी तिलावत छोड़ना ही नहीं चाहिए, हमेशा समझ कर तिलावत करते रहना चाहिए।

इस जगह यह भी हमें ज़हन में रखना है कि औरतों को हैज़ की वजह से "नाक़िसात-उद-दीन" कहा गया है यानी दीन में नाक़िस। नबी ﷺ ने नाक़िसात-उद-दीन की इस तरह वज़ाहत फ़रमाई है: أَلَيْسَ إِذَا حَاضَتْ لَمْ تُصَلِّ وَلَمْ تَصُمْ? (जब औरत हाइज़ा हो तो न नमाज़ पढ़ सकती है न रोज़ा रख सकती है) (बुख़ारी:304) इस तरह हैज़ की वजह से औरतों को दीन का नुक़सान होता ही है, मज़ीद तिलावत-ए-क़ुरआन के अज्र से उनका नुक़सान नहीं किया जा सकता है और नबी ﷺ ने दो ही नुक़सान बताए हैं इसलिए हम अपनी तरफ़ से औरतों के हक़ में तीसरे नुक़सान का इज़ाफ़ा नहीं करेंगे।

दस्तूर-ए-हयात यानी क़ुरआन करीम से मुताल्लिक़ इन बुनियादी चंद निकात से मालूम होता है कि मर्द की तरह एक औरत भी हमेशा क़ुरआन पढ़ती रहे चाहे वह हैज़ की हालत में क्यों न हो क्योंकि दीन

का इल्म लेना हैज़ में भी ज़रूरी है, दीन पर अमल करना हैज़ में भी ज़रूरी है और दीन की तबलीग़ करना हैज़ में भी ज़रूरी है।

(2) हैज़ वाली औरत कुरआन की तिलावत कर सकती है, इस बारे में दूसरी बड़ी दलील यह है कि कुरआन की तिलावत भी ज़िक्र है और एक आदमी हर हाल में ज़िक्र कर सकता है। हज़रत आयशाؓ से रिवायत है, उन्होंने कहा:

كَانَ النَّبِيُّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، يَذْكُرُ اللَّهَ عَلَى كُلِّ أَحْيَانِهِ(सहीह मुस्लिम:373)

तर्जुमा: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अपने तमाम औक़ात में अल्लाह तआला का ज़िक्र करते थे।

अल्लाह तआला ने पूरे कुरआन को ज़िक्र कहा है, इर्शाद बारी त'आला है:

إِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَإِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ(अल-हिज्र:9)

तर्जुमा: हमने ही इस ज़िक्र (कुरआन) को नाज़िल फ़रमाया है और हम ही इसके मुहाफ़िज़ हैं।

इस जगह आप ग़ौर करें कि एक मोमिना औरत पर सुबह-ओ-शाम होते हैं, वह सोती-जागती है और सारे कामकाज करती है। हालत-ए-

हैज़ में भी सारे काम करने पड़ते हैं, हत्ता कि जमी (तमाम) इबादात भी अंजाम देती है सिवाए नमाज़ और रोज़े के। हाइज़ा औरत के मिंजुमला आमाल में सुबह-ओ-शाम और सोने-जागने के अज़कार भी हैं जिन्हें वह रोज़ाना पढ़ती है। इन अज़कार में कितनी आयतें और कितनी सूरतें हैं जिन्हें रोज़ाना कई-कई मर्तबा पढ़ना पड़ता है। जैसे आयतुल-कुर्सी की तिलावत सुबह, शाम और सोते वक्त यानी चौबीस घंटे में तीन मर्तबा पढ़ना है। सूरह इख़लास, सूरह फ़लक़ और सूरह नास सुबह-ओ-शाम और सोते वक्त मिलाकर कुल सत्ताईस मर्तबा (नौ मर्तबा सुबह, नौ मर्तबा शाम और नौ मर्तबा सोते वक्त) इन सूरतों को पढ़ना है। सोते वक्त सूरह बक़रा की दो आयतें, सूरह ज़ुमर, सूरह बनी इस्राईल, सूरह सज्दा और सूरह मुल्क भी पढ़ना मसनून है। आप इन आयतों और सूरतों से अंदाज़ा लगाएं कि एक औरत को हालत-ए-हैज़ में चौबीस घंटे इस क़दर क़ुरआन पढ़ना होता है और इस सिलसिले में कोई मुमान'अत (रोक टोक) साबित नहीं है, न ही किसी अहल-ए-इल्म ने कहा है कि हाइज़ा (हैज़ वाली) औरत इन आयतों और सूरतों को न पढ़े। यहां से यह बात पूरी तरह समझ में आती है कि जिस तरह हाइज़ा औरत तमाम क़िस्म के अज़कार पढ़ सकती है, उसी तरह क़ुरआन की तिलावत भी कर सकती है।

(3) हाइज़ा (हैज़ वाली) औरत क़ुरआन की तिलावत नहीं कर सकती है, ऐसी कोई सरीह और सहीह दलील नहीं है, न ही किसी सहाबिया से इस हालत में क़ुरआन न पढ़ने की दलील मिलती है। हालत-ए-हैज़ में इबादात के ताल्लुक़ से इस्लाम ने जिन आमाल से मुअय्यन तौर पर मना किया है उनमें नमाज़ और रोज़ा है। तिलावत भी इबादत है और हमेशा वाली इबादत है जबकि नमाज़ चौबीस घंटे में पांच बार और रोज़ा साल में एक माह फ़र्ज़ है, अगर हालत-ए-हैज़ में तिलावत-ए-क़ुरआन मना होती तो शरीअत में ज़रूर सराहत के साथ इसकी मुमान'अत होती और अह्द-ए-रिसालत की ख़वातीन से इस हालत में क़ुरआन न पढ़ना मंक़ूल होता है जबकि ऐसा कुछ मज़कूर नहीं है।

ईद की नमाज़ भी नमाज़ ही है इसके बावजूद रसूलुल्लाह ﷺ ने हाइज़ा औरतों को ईदगाह निकलने का हुक्म दिया है, किसी औरत के पास पर्दे का इंतज़ाम न हो तब भी अपनी मुस्लिम बहन के साथ उसके पर्दे में जाने का हुक्म दिया है और फिर हाइज़ा के ईदगाह आने का मक़सद भी और जवाज़ वाला अमल भी बताया है। उम्मे अत्तिया रज़ियल्लाहु अन्हा रसूलुल्लाह से रिवायत करती हुई बयान करती हैं:

فَأَمَّا الْحُيَّضُ فَيَعْتَزِلْنَ الصَّلَاةَ وَيَشْهَدْنَ الْخَيْرَ وَدَعْوَةَ الْمُسْلِمِينَ(صحيح مسلم :890)

तर्जुमा: पस हाइज़ा (मासिक धर्म वाली) औरतें नमाज़ से दूर रहें, लेकिन वे ख़ैर-ओ-बरकत और मुसलमानों की दुआ में शामिल हों। ईद

की नमाज़ के मौक़े पर सिर्फ़ नमाज़ से मना किया गया है और नमाज़ के अलावा जो ख़ैर के काम हैं जैसे ज़िक्र, तिलावत और दुआ वग़ैरह से फ़ायदा उठाने की इजाज़त दी है।

एक दूसरी रिवायत में उम्मे अतिया ही बयान करती हैं:

اَلْحُيَّضُ يَخْرُجْنَ فَيَكُنَّ خَلْفَ النَّاسِ يُكَبِّرْنَ مَعَ النَّاسِ(صحيح مسلم :890)

तर्जुमा: हाइज़ा औरतें भी निकलेंगी और लोगों के पीछे रहेंगी और लोगों के साथ तकबीर कहेंगी।

इस रिवायत से मालूम हुआ कि हाइज़ा औरतें ईद की तकबीरात भी कहेंगी। तिलावत भी ख़ैर का काम और ज़िक्र है। वे मुसल्ली-ए-ईद में तिलावत भी कर सकती हैं। अगर हाइज़ा के लिए ज़िक्र और तिलावत मम्नू होती, तो आप ﷺ इस मौक़े पर जिस तरह नमाज़ से मना किया है, तिलावत से भी मना फ़रमाते।

(4) जिस तरह मर्द को शैतान से ख़तरा है, उसी तरह औरत को भी शैतान से ख़तरा है। बल्कि औरत को मर्द से कहीं ज़्यादा ख़तरा है। इसलिए शैतान के शर से हिफ़ाज़त के लिए हाइज़ा औरत क़ुरआन की तिलावत कर सकती है। बख़ूबी जब औरत को कोई बीमारी लाहिक़ हो

या आसेब (मुसीबत) वग़ैरह का अंदेशा हो, तो क़ुरआन पढ़कर अपने ऊपर दम कर सकती है और हाइज़ा की हालत में किसी दूसरी औरत पर भी क़ुरआन पढ़कर दम कर सकती है। नबी ﷺ मर्ज़-ए-मौत में मु'अव्विज़ात (सूरह इख़लास, सूरह फ़लक़, और सूरह नास) पढ़कर अपने ऊपर दम करते थे और जब आपके लिए बीमारी की शिद्दत में दम करना दुश्वार हो गया, तो सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा आप पर इन सूरतों को पढ़कर दम करती थीं। किसी औरत को जिस्मानी कोई तकलीफ़ हो और वह हैज़ की हालत में हो, तो बिला शक क़ुरआन पढ़कर अपने ऊपर दम कर सकती है, इसमें कोई हरज नहीं है।

(5) हज एक ऐसी इबादत है जिसमें कई क़िस्म के आमाल अंजाम दिए जाते हैं, मगर हाइज़ा वाली को सिर्फ़ तवाफ़ से रोका गया है। हज के दौरान रसूलुल्लाह ﷺ ने सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा को जो हालत-ए-हैज़ में थीं हुक्म दिया:

افْعَلِي كَمَا يَفْعَلُ الْحَاجُّ، غَيْرَ أَنْ لَا تَطُوفِي بِالْبَيْتِ حَتَّى تَطْهُرِي(صحیح البخاری:1650)

तर्जुमा: जिस तरह दूसरे हाजी करते हैं तुम भी उसी तरह (अरकान-ए-हज) अदा कर लो, हाँ, बैतुल्लाह का तवाफ़ पाक होने से पहले न करना।

हज कई दिनों पर मुश्तमिल मुख़्तलिफ़ क़िस्म की इबादतों के मज्मूआ का नाम है। इतने दिनों वाले हज में हाइज़ा को बस तवाफ़ से रोका गया है। बाक़ी वह तमाम आमाल अंजाम देंगी।

ऐसे में यह बात वाज़ेह है कि हाइज़ा ज़िक्र, तलबिया, तिलावत, दुआ जैसे आमाल अंजाम देंगी। जब हाइज़ा हज में तिलावत कर सकती है, तो हज के अलावा दिनों में भी तिलावत कर सकती है।

(6) मोमिन कभी नापाक नहीं होता इसलिए हाइज़ा और निफ़ास की हालत में औरत हुक्मन पाक ही रहती है। नबी ﷺ का फ़रमान है:

إِنَّ الْمُؤْمِنَ لا يَنْجُسُ(صحيح البخاري:285)

तर्जुमा: बेशक मोमिन नापाक नहीं होता।

लिहाज़ा हाइज़ा के लिए क़ुरआन पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है। नबी ﷺ एक मर्तबा आधी रात को सोकर उठे और बिना वुज़ू के सूरह आले इमरान की तिलावत फ़रमाई (सहीह बुख़ारी: 183) इससे यह भी मालूम होता है कि आदमी बिना वुज़ू के भी तिलावत कर सकता है क्योंकि मोमिन की असल तहारत है। जब एक मोमिना औरत हैज़ की हालत में भी पाक है, तो वह क़ुरआन की तिलावत कर सकती है। हां, इस

हालत में शरीअत ने जिन ख़ास इबादतों से मना किया है, उन से रुक जाना है और वह नमाज़ व रोज़ा है।

(7) आज बड़ी तादाद में लड़कियां दीनी तालीम हासिल कर रही हैं। बड़े-बड़े निस्वाँ इदारे चल रहे हैं, जिनमें कई उस्तानी और बे-शुमार लड़कियां ज़ेर-ए-तालीम हैं। अगर हैज़ में क़ुरआन पढ़ने से रोका जाए तो तमाम निस्वाँ मदरसों के निज़ाम-ए-तालीम में एक बड़ा ख़लल पैदा हो जाएगा क्योंकि उस्तानी समेत तमाम लड़कियों को हर माह कई-कई दिन माहवारी आती है। ऐसे में पढ़ने और पढ़ाने का पूरा निज़ाम दरहम-बरहम हो जाएगा यहां तक कि कितनी लड़कियों को इम्तिहान से हाथ धोना पड़ेगा। अल्लाह तआला बनात-ए-आदम पर हैज़ को लिख दिया है जो हर माह मुक़र्रर वक्त पर तमाम ख़ातून को आता है और इसके आने से औरत नजिस नहीं कहलाएगी। वह पाक ही है और क़ुरआन जो दस्तूर-ए-हयात है, पढ़ने-पढ़ाने, अमल करने और फैलाने वाली किताब है, इस को हैज़ में पढ़ने से मना नहीं किया जा सकता है।

(8) साल में एक बार माह-ए-रमज़ान आता है। औरत इस माह भी हाइज़ा होती है यहां तक कि आख़री अश्रे और इसकी ताक़ रातों

(लैलत-उल-क़द्र) को भी कितनी औरत हैज़ में होती हैं। अगर औरत को इन मुबारक दिनों में तिलावत-ए-कुरआन से रोका जाए तो अज्र के एतिबार से औरतों के हक़ में बड़ी महरूमी है। बल्कि नबी ﷺ ने ऐसी औरत को ईद के दिन ईद-उल-फ़ितर की बरकत व सआदत समेटने का मौक़ा दिया है, सिर्फ़ नमाज़-ए-ईद से मना किया है। इससे समझा जा सकता है कि औरत हैज़ की हालत में रमज़ान-उल-मुबारक के बाबरकत लम्हात से मुस्तफ़ीद हो सकती है और वह क़ुरआन की तिलावत कर सकती है। कितनी सारी औरतों पर जुमे का सूरज तुलू होता है और वह हैज़ की हालत में होती हैं, या कभी अश्रे ज़िलहिज्जा हो या यौम-ए-अरफ़ा हो, इन दिनों में कोई औरत हैज़ में हो सकती है। तो सवाल यह है कि क्या औरतों को इन दिनों से फ़ायदा उठाने की इजाज़त नहीं है, क्या ये दिन सिर्फ़ मर्दों के लिए हैं या कह लें कि औरत को सिर्फ़ माहवारी आने से इन दिनों की बरकत से महरूम किया जा सकता है? नहीं। वह नमाज़ व रोज़ा से पहले से महरूम है, बाक़ी इबादतें यानी ज़िक्र, दुआ, तिलावत वग़ैरह कर सकती है क्योंकि इन तमाम मौक़े पर कहीं औरतों के लिए तिलावत की मुमान'अत साबित नहीं है।

हाइज़ा औरत और तिलावत-ए-कुरआन से मुताल्लिक़ आख़िरी नुक्ता:

सुतूर-ए-बाला में जो उमूर ज़िक्र किए गए हैं, उनसे यह बात वाज़ेह होती है कि हाइज़ा को तिलावत-ए-कुरआन से नहीं रोका जा सकता है यानी ब-हालत-ए-हैज़ औरत क़ुरआन की तिलावत कर सकती है, ख़वाह मुअल्लिमा हो, तालिबा हो, क़ारिया हो या आम हाइज़ा औरत हो। सभी औरतें क़ुरआन की तिलावत कर सकती हैं। इस जगह हाइज़ा औरत को एक मशविरा यह देना चाहता हूं कि अगर आप ज़बानी क़ुरआन की तिलावत करती हैं तो इसमें कोई मसला ही नहीं है। लेकिन देखकर मुसहफ़ से तिलावत कर रही है और आप मोबाइल से क़ुरआन पढ़ सकती हैं, तो बेहतर है कि मोबाइल से तिलावत करें ताकि मुसहफ़ छूना न पड़े। मोबाइल में क़ुरआन के एक से एक एप्लिकेशन मौजूद हैं। बड़े-बड़े फॉट में क़ुरआनी ऐप मौजूद हैं, इसलिए आप मोबाइल से या फिर आई-पैड, लैपटॉप या कंप्यूटर से तिलावत करें।

हां, आपके पास मोबाइल से पढ़ने की सहूलियत नहीं हो या मुसहफ़ से ही क़ुरआन पढ़ने की ज़रूरत हो जैसे मुअल्लिमा और तालिबा तो फिर मुसहफ़ से देखकर या हाथ में लेकर भी क़ुरआन पढ़ सकती हैं। ऐसी सूरत में आप अपने हाथ में दस्ताना लगाएं। इमाम बुख़ारी ने अपनी सहीह में "किताब-उल-हाइज़" (बाब-ए-क़िराअत-ए-रजुल-फी-हिज्र-ए-इमरा-ति-ही-वा-ही-हाइज़) के तहत तर्जुमा-ए-बाब के तौर पर एक

وَكَانَ أَبُو وَائِلٍ: «يُرْسِلُ خَادِمَهُ وَهِيَ حَائِضٌ إِلَى أَبِي رَزِينٍ، فَتَأْتِيهِ بِالْمُصْحَفِ، فَتُمْسِكُهُ بِعِلاَقَتِهِ» असर ज़िक्र किया है:

तर्जुमा: अबू वाइल अपनी ख़ादिमा को हैज़ की हालत में अबू रज़ीन के पास भेजते थे और वह उनके यहां से क़ुरआन मजीद जुज़दान में लपेटा हुआ अपने हाथ से पकड़ कर लाती थी।

इमाम बुख़ारी ने इस असर को अगरचे मु'अल्लक़न रिवायत किया है मगर इब्न अबी शैबा ने इसे मौसूलन रिवायत किया है। इस असर से मालूम होता है कि आड़ के साथ हाइज़ा औरत क़ुरआन पकड़ और छू सकती है। जब हाथ से हाइज़ा मुसहफ़ पकड़ सकती है तो ज़बान से पढ़ने में कोई मसला ही नहीं है क्योंकि ज़बान तो पाक होती है, वहां नजासत लगने का अंदेशा ही नहीं है। नजासत लग सकती है तो हाथों को और दूसरे हिस्सों को। बावजूद इसके मोमिन हमेशा पाक होता है।

मुमान'अत के दलाइल का जाइज़ा:

इस जगह इख़्तिसार के साथ उन चंद दलाइल के बारे में भी जान लें जो हैज़ की हालत में तिलावत-ए-क़ुरआन से रोकने के लिए पेश किए जाते हैं।

(1) एक बात यह कही जाती है कि हाइज़ा जुनुबी (नापाक) के हुक्म में है, इसलिए जिस तरह जुनुबी क़ुरआन नहीं पढ़ सकता है, उसी तरह हाइज़ा भी क़ुरआन नहीं पढ़ सकती है। हाइज़ा को जुनुबी के हुक्म में मानना सही नहीं है। जनाबत जब चाहें गुस्ल करके दूर कर लें जबकि हाइज़ा हर माह एक निर्धारित अवधि के लिए आता है, इसे अपनी मर्ज़ी से ज़ाइल (समाप्त) नहीं किया जा सकता है, इसलिए जनाबत और हैज़ में बहुत फ़र्क़ है और दोनों के अलग-अलग हुक्म हैं।

(2) हाइज़ा क़ुरआन न पढ़े इस सिलसिले में जो हदीस पेश की जाती है, वह ज़ईफ़ है। अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

لا يقرأُ القرآنَ الجنُبُ ولا الحائضُ(ابن ماجه :595)

तर्जुमा: जुनुबी और हाइज़ा क़ुरआन न पढ़े।

यह हदीस ज़ईफ़ है, इसे शैख़ अल्बानी ने मुंकिर कहा है।

(देखें ज़ईफ़ इब्न माजा: 116)

इसी तरह ये भी अल्फ़ाज़ हैं: لا تَقرأِ الحائضُ، ولا الجنُبُ شيئًا منَ القرآنِ यानी हाइज़ा और जुनुबी क़ुरआन से कुछ भी न पढ़ें। इसे भी शेख अल्बानी ने मुंकिर कहा है।

(देखें: ज़ईफ़ तिर्मिज़ी: 131)

(3) मुमान'अत के लिए क़ुरआन से एक दलील दी जाती है कि क़ुरआन को पाक लोग ही छूते हैं। आप इस आयत को पिछली दो आयतों से मिला कर देखें तो बात वाज़ेह (स्पष्ट) हो जाती है। अल्लाह का फ़रमान है:

إِنَّهُ لَقُرْآنٌ كَرِيمٌ فِي كِتَابٍ مَكْنُونٍ لا يَمَسُّهُ إِلا الْمُطَهَّرُونَ (الواقعة: 7977)

तर्जुमा: बेशक यह क़ुरआन बहुत बड़ी इज़्ज़त वाला है, जो एक महफ़ूज़ किताब मे दर्ज है, जिसे सिर्फ़ पाक लोग ही छू सकते हैं।

"लायमस्सुहू" में ख़बर दी जा रही है कि इसे पाक लोग छूते हैं और यहाँ "हू" ज़मीर का मर्जा साबिक़ आयत "किताब मकनून" यानी लौह-ए-महफ़ूज़ है और पाक लोग से मुराद फ़रिश्ते हैं। गोया मानी ये हुआ कि लौह-ए-महफ़ूज़ को सिर्फ़ फ़रिश्ते छूते हैं या कुछ लोग "हू" ज़मीर का मर्जा क़ुरआन लेते हैं, इस सूरत में मानी ये होगा कि जो क़ुरआन लौह-ए-महफ़ूज़ में है, उसे पाक लोग यानी फ़रिश्ते ही छूते हैं। इसलिए इस आयत की रोशनी में ये नहीं कहा जा सकता कि कोई बिला वज़ू

तिलावत नहीं कर सकता या हाइज़ा औरत तिलावत नहीं कर सकती है।

सीरत निगारों ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के एक ख़त का ज़िक्र किया है जिसे आपने अम्र बिन हज़म को देकर यमन की तरफ़ भेजा था, इसमें आपका ये फ़रमान है:

لا يَمَسُّ القُرآنَ إلَّا طاهِرٌ(صحيح الجامع:7780)

तर्जुमा: पाक शख़्स के अलावा क़ुरआन मजीद को कोई और न छुए।

यह रिवायत मुवत्ता, दारमी, इब्न हिब्बान, बैहक़ी, दारक़ुतनी और तबरानी वग़ैरह में मौजूद है, इसे मुतअद्दिद (बहुत से) अहल ए इल्म ने ज़ईफ़ कहा है और कुछ ने सहीह भी कहा है। शैख़ अल्बानी भी सहीह क़रार देते हैं।

इस हदीस की रोशनी में ये कहा जाएगा कि हाइज़ा औरत मुसहफ़ देख कर तिलावत करते वक्त हाथ में दस्ताना लगा ले और इस क़ैद के साथ ऊपर मैंने ज़िक्र भी किया है और इमाम बुख़ारी का असर भी पेश किया है।

[114.]हैज़ की हालत में तिलावत से मुताल्लिक़ दीगर मसाइल:

(1) इस तहरीर का ख़ुलासा ये है कि हैज़ वाली औरत ज़ुबानी क़ुरआन की तिलावत करे तो कोई मसला नहीं है, इलैक्ट्रोनिक डिवाइस यानी मोबाइल वग़ैरह से भी तिलावत करे तो कोई मसला नहीं है लेकिन मुसहफ़ हाथ में ले कर तिलावत करे तो हाथ में दस्ताना लगा ले।

(2) हैज़ वाली औरत को क़ुरआन से मुताल्लिक़ कई काम हो सकते हैं मसलन क़ुरआनी आयतों को लिखना, बच्चों को नाज़रा पढ़ाना, क़ुरआन की तजवीद, तफ़सीर या दर्स देना या किसी को उठा कर मुसहफ़ देना या घर की सफ़ाई के वक्त एक जगह से दूसरी जगह क़ुरआन रखना, ये सारे काम हाइज़ा कर सकती है इस बात के साथ कि मुसहफ़ हाथ में लेते वक्त दस्ताना लगा लिया जाए।

(3) हैज़ की हालत में आयत सजदा की तिलावत करे तो वो सजदा तिलावत कर सकती है और सजदा तिलावत के लिए तहारत शर्त नहीं

है, नीज़ ये भी मालूम रहे कि सजदा तिलावत वाजिब नहीं है, कोई छोड़ दे या छूट जाए तो गुनाह नहीं है।

(4) बाज़ (कुछ) ख़ातून मसाजिद में दर्स व तदरीस का काम करती हैं, ऐसे में मेरा मशवरा ये है कि दर्स व तदरीस के लिए मस्जिद से अलग इंतिज़ाम करें या मस्जिद में ही अलग हॉल हो जो नमाज़ से अलग हो, फ़क़्त तालीम के लिए मुख़्तस (ख़ास) हो जहाँ मर्दों की आमद न हो और न किसी क़िस्म के फ़ितना का अंदेशा हो तो कोई मसला नहीं है जैसे मस्जिद में इमाम के लिए या गोदाम के लिए कमरा मुख़्तस होता है। इसकी वजह ये है कि औरतों को हर माह हैज़ आता है और हैज़ वाली औरत को मस्जिद में ठहरना मना है, ताहम मस्जिद के इस हिस्से में औरत ठहर सकती है जो नमाज़ के अलावा दीगर ज़रूरतों के लिए मुख़्तस किया गया हो।

(5) बाज़ ख़ातून कामकाज के वक्त कुरआन की रिकॉर्डिंग घर में चालू कर देती हैं ताकि काम भी करें और तिलावत भी सुनें, ऐसे में हाइज़ा का कुरआन सुनने में कोई हरज (नुक़सान) नहीं है, सय्यदा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा हैज़ की हालत में होतीं और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु

अलैहि वसल्लम आपकी गोद में सर रखकर क़ुरआन की तिलावत किया करते थे।

(6) ऊपर भी ये बात ज़िक्र की गई कि हाइज़ा ख़ुद पर या दूसरों पर क़ुरआनी आयतें पढ़कर दम कर सकती है, कोई मसला नहीं है और इसी तरह जो औरत हैज़ की हालत में हो उस पर भी दम किया जा सकता है।

===============

नोट: इसे खुद भी पढ़ें और दूसरो को भी शेयर करें।

मज़ीद दीनी मसाइल, जदीद मौज़ू'आत और फ़िक़ही सवालात की जानकारी के लिए विज़िट करें।



YOUTUBE LINK KE LIYE CLICK KARE

WEBSITE KELIYE CLICK KARE

MAZEED PDFS KE LIYE CLICK KARE